नवम्बर १९५३

वर्ष ३] राष्ट्रभारती, अक्टूबर १९५३ [अंक ११

'राष्ट्रभारती' बिहार, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना —'राष्ट्रभारती'में, सदश्री डा. बाबूराम सक्सेना, आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्तो वामन पोतदार, स्वर्गीय किशोरीलाल मशरूवाला और उत्तर प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री कन्हैयालाल मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अेक समिति द्वारा १९३६में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है —अि, अी, अु, अू, अे, अै (इ, ई, उ, ऊ, ए और ऐ की जगह) और ख, ण और क्ष (ख, ण और क्ष अक्षरोंके स्थानपर) —सं०]

—विषय-सूची—

(शेष पृष्ठ ३ पर)

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, नवम्बर १९५३ * अंक ११ *

"काकासाहेब"

: श्री गंगाधर अिंदूरकर :

अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके अध्यक्ष श्री नरहरि विष्णु गाडगील अपने परिचितोंमें "काकासाहेब"-अिस नामसे ही अधिक प्रसिद्ध हैं। मैं समझता हूँ कि श्री गाडगील को भी यह नाम बहुत पसंद है। अिसका कारण शायद यह है कि 'काकासाहेब' अिस अभिधानसे व्यक्त होनेवाली आत्मीयता काकासाहेबके सार्वजनिक जीवनमें भी व्याप्त है। अच्छे नेताओंमें गिनती होनेपर भी अव्यवहार्य आदर्शोंका अुच्च आडंबर अुनमें नहीं है, और मोहके कारण जनसाधारणको पतनाभिमुख करनेवाली मानसिक दुर्बलतासे भी वे बहुत दूर हैं। अिसीलिअे "काका" से परिचित लोगोंके मनमें अुनके प्रति आदर और आत्मीयता—दोनों ही भावनाओं हैं। जहाँतक मैं समझ पाया हूँ "काका" के जीवनका आदर्श वह स्वप्नकुसुम नहीं है, जो कभी व्यवहारमें दिखाया ही न दे और न वही है जो बिना किसी परिश्रम तथा बिना आयास प्राप्त हो जाओे। जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें "काका" मध्यममार्गी हैं और वास्तविक अर्थोंमें वे मध्यमवर्गका प्रतिनिधित्व करते हैं।

सन् १९२०में राष्ट्रीय आंदोलनमें भाग लेकर सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश करनेके बाद जिला काँग्रेस कमेटीके मंत्रीपदसे लेकर केंद्रीय सरकारके अेक प्रमुख मंत्रीतक और अब लोकसभाके अेक साधारण सदस्यके

रूपमें "काका" के सार्वजनिक जीवनने बड़े अुतार-चढ़ाव देखे हैं। अुनका विश्लेषण करनेपर मुझे अेक बात बहुत ही महत्त्वपूर्ण दिखायी दी है। जनसाधारणकी तरह वे प्रतिक्षण "शुभ" की आकांक्षा करते हैं और किसी महान व्यक्तिकी तरह 'अशुभ' का मुकाबला करनेके लिअे प्रस्तुत रहते हैं। शायद यही "काका" के सार्वजनिक जीवनमें सफलताकी कुंजी है। अनेक अन्य नेताओंकी तरह जीवनके अुतार-चढ़ावसे अुनका मन कभी भी निराशासे अभिभूत नहीं हुआ।

विचारोंकी स्पष्टता और व्यवहारमें आडंबरहीनता 'काका" की विशेषता है। वे राष्ट्रभाषा प्रचार-सम्मेलनके अध्यक्ष हो रहे हैं, यह समाचार सुनकर मैं नयी दिल्लीमें अुनके निवास-स्थानपर अुनसे मिलने गया था। अेक पत्रकारके नाते मैंने अुनसे पूछा—"आप हिंदीको राष्ट्रभाषाके अुपयुक्त क्यों समझते हैं?" "काका" का अुत्तर बहुत ही संक्षिप्त था—'संविधानने अुसे स्वीकार कर लिया है अिसलिअे अब यह विवाद व्यर्थ है।" विवादमें न अुलझकर कार्यपर ही दृष्टि रखनेकी "काका" की मनोवृत्तिका अुक्त संक्षिप्त अुत्तर अेक सुन्दर प्रतीक है।

पर पाठक भूलसे यह न समझ बैठें, कि संविधान द्वारा स्वीकृति प्राप्त होनेके पहले वे हिन्दीको राष्ट्रभाषाके अुपयुक्त नहीं समझते थे। महात्मा गांधी द्वारा संचालित कांग्रेस-आंदोलनका हिन्दी प्रचार भी अेक प्रमुख अंग था और अिस प्रकार "काका" भी हिन्दी प्रचारके कार्यमें काफी समयसे दिलचस्पी लेते रहे हैं। सन् १९२८-२९ के पूनेके युवक आंदोलनमें 'काका" का प्रमुख हाथ था और अुस समय अुन्होंने स्वयं हिन्दी पढ़ानेके लिअे कुछ वर्ग भी चलाये थे। आगे चलकर १९३४ में प. रा. वैशंपायनके सहयोगसे पूनेमें अेक स्थायी नींव रखी गयी, जो 'हिन्दी प्रचार संघ" कहलायी। आज भी महाराष्ट्रमें हिन्दीका प्रचार करनेवाली यह अेक प्रमुख संस्था है। अिस संस्थाके प्रारंभिक वर्ग "काका" के निवास स्थानपर ही चलते थे। राष्ट्रभाषाके साथ "काका" का संबंध बादमें भी बराबर बना रहा। पूनेमें हुअे राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके तीसरे अधिवेशनका अुद्घाटन भी काकासाहेबने ही किया था।

"काका" को हिन्दी सीखनेके लिअे बहुत प्रयास नहीं करना पड़ा। पूनेके अनल कोंकणस्थ महाराष्ट्र ब्राह्मण कुलमें जन्म होनेपर भी अुनकी जन्मभाषा अेक प्रकारसे हिन्दी ही कही जा सकती है। राजस्थान और मालवेकी सीमापर स्थित मल्हारगढ़ नामक स्थानमें १० जनवरी १८९६ के दिन आपका जन्म हुआ। यह स्थान मध्यभारतके नीमच जिलेमें है। अुस समय आपके पिता वहाँ रेलवेमें थे। अिस प्रकार आपकी प्रारंभिक शिक्षाका श्रीगणेश ही हिन्दी-माध्यमके द्वारा हुआ है।

"काका" की बादकी शिक्षा पूनेके प्रसिद्ध फर्ग्युसन कालेजमें हुअी। पर वहाँ भी आपने हिंदीके साथ अपना संबंध बनाये रखा। १९१६-१७ में सरस्वतीमें प्रकाशित होनेवाले कुछ लेखोंका भावानुवाद 'काका' अनुवादके द्वारा मराठी पाठकोंको चखाते रहे। १९२० में अेल्-अेल्. बी. की परीक्षा अुत्तीर्ण कर आपने जीवनमें अध्ययनका अध्याय समाप्त किया और पूनेमें जिला कांग्रेस कमेटीके मंत्रीके रूपमें आप सार्वजनिक क्षेत्रमें अुतरे। सार्वजनिक जीवनके प्रारंभसे ही 'काका' को हिन्दीमें बोलनेके अवसर बराबर आते रहे।

राजनीतिक नेताका व्यस्त जीवन बिताते हुअे भी काकासाहेबका मराठी-साहित्यमें अपना अेक विशिष्ट स्थान है। विवरणात्मक लेख लिखनेकी अुनकी अपनी शैली है और वह मराठीमें काफी लोकप्रिय भी है। लगभग सभी दल और विचारोंकी पत्र-पत्रिकाअें 'काका' का लेख छापनेके लिअे अुत्सुक रहते हैं और 'काका' भी राजनीतिक पक्षपात नहीं करते। 'केसरी' तथा 'विविधवृत्त' जैसे कांग्रेस विरोधी पत्रोंमें भी 'काका' के कुछ अच्छे लेख प्रकाशित हुअे हैं। दीवाली अंकके निमित्त तो कुछ पत्रोंके लिअे लेख लिखना अुनके लिअे अनिवार्य है और वे स्वयं-स्वीकृत अिस बंधनको सक्रिय-रूपमें भी निभाते रहे। थोड़ा भी अवकाश प्राप्त होते ही अुसका अुपयोग लिखने-पढ़नेमें करना, अुनका स्वभाव है। 'काका" ने राजनीति तथा समाजशास्त्रपर मराठीमें कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं।

हिन्दीमें भी "काका" लिखते हैं। कुछ स्वतंत्र लेखोंके रूपमें और कुछ अपने ही लेखोंका स्वयं हिन्दीमें अनुवाद किया है। अिनमेंसे अधिकांश लेखमालाअें प्रसिद्ध हिंदी दैनिक पत्र हिंदुस्तानमें प्रकाशित हुअे। 'समाज-दर्शन' नामक 'काका" की अेक पुस्तक भी हिंदीमें प्रकाशित हो चुकी है और "हजार वर्षके बाद" नामक दूसरी पुस्तक भी प्रकाशित होनेवाली है। (यह भी प्रकाशित हो गयी है। सं.)

यह प्रसिद्ध है कि 'काका' स्वर्गीय सरदार पटेलके अत्यन्त विश्वासभाजन थे और असीलिअे स्वातन्त्र्य-प्राप्तिके बाद केन्द्रीय मन्त्रिमंडलमें अुनका समावेश हुआ था। गत आम निर्वाचनके बाद, नये मन्त्रिमंडलमें जब अुनका समावेश नहीं हुआ कुछ लोगोंने कहा— 'काका' की लोकप्रियताका सूर्य अब अस्त हो रहा है। यह भी प्रसिद्ध है कि मन्त्री न बननेपर अ'भागके अेक राज्यका राज्यपाल बनना 'काका' ने अस्वीकार कर दिया था। कुछ लोगोंको असमें भी 'काका' की राजनीतिक भूल प्रतीत हुअी। पर मुझे लगता है कि अुक्त दोनों ही बात निराधार हैं। पिछले पौने दो वर्षके संसदीय जीवनमें कांग्रेस दलके साधारण सदस्यकी हैसियतसे 'काका' ने जो कुछ काम किया, अुससे अुनकी लोकप्रियता मन्त्रित्वकालकी अपेक्षाकृत कुछ बढ़ी ही है घटी नहीं। अतअेव असी प्रकार राज्यपालका पद अस्वीकार करनेमें अुनकी आर्थिक हानि भले ही हुअी हो और वह अुपेक्षणीय भी नहीं है पर सार्वजनिक जीवनका मूल्य कभी भी रुपये-आने पाअीमें नहीं आंका जाता। असि प्रश्नका अेक दूसरा पहलू भी है। पूनेके जिन मतदाताओंने श्री गाडगीलको लोकसभामें भेजकर अुनपर विश्वास प्रकट किया था यदि गाडगीलजी केवल अपना लाभ और प्रतिष्ठाका ही विचारकर राज्यपालका पद स्वीकार कर लेते, तो वे मतदाता क्या सोचते! मतदाताओंके विश्वासको निभानेमें कुछ आर्थिक स्वार्थसे मुंह मोडना प्रत्येक निर्वाचित प्रतिनिधिके लिअे आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

केवल अितना ही नहीं केंद्रीय सरकारके महत्व-पूर्ण मन्त्री जैसे अूंचे पदपर रहनेके बाद लोकसभाके साधारण सदस्यका जीवन बितानेका अवसर आनेपर भी 'काका' के अुत्साहमें कोअी कमी नहीं आयी। फिरोजशाह रोडपर ही "काका" के दो जीवन— मन्त्रिकालीन बड़ी कोठीका और आजका छोटे और साधारण बंगलेका— देखकर स्मरण हो आता है भर्तृहरिके अेक वाक्यका— 'क्वचिद्भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यंक शयनम्'। पर असि अवस्था-परिवर्तनसे 'काका' की जीवनकी गति और अुत्साहमें कोअी परिवर्तन नहीं हुआ। पिछले मन्त्रिमंडलके दो अन्य मन्त्रियोंपर नये मन्त्रिमंडलमें न लिये जानेका प्रभाव अितना अधिक रहा है कि दोनोंनेही संसदमें अपने मुंहपर ताला सा लगा रखा है, पर श्री गाडगीलकी हलचलमें पहले जैसा ही अुत्साह और प्रसन्नताका वातावरण है। हां, अुनकी वाणी मन्त्रित्वकालकी अपेक्षाकृत आज कुछ अधिक जनमुखी हो गयी है जो कि स्वाभाविक और अुचित भी है।

जैसा कि मैंने पहले लिखा है 'काका' के मनमें अपने परिचितोंके प्रति आत्मीयताकी अितनी भावना रहती है कि अुनके राजनीतिक विरोधी भी, जो मंचपर अुनको सभी प्रकारकी खरी खोटी सुनानेमें नहीं हिचकते, अुनसे हार्दिक स्नेह करते हैं। असिका अेक कारण और भी है। 'काका' अपने राजनीतिक विरोधियोंको अवसर मिलनेपर मुंहतोड अुत्तर अवश्य देते हैं, पर विरोधीके प्रति अपने मनमें कटुता अुत्पन्न नहीं होने देते। वे अक्सर कहा करते हैं कि अुनके प्रति कही गयी जली-कटी बातोंका संस्कार अुनके मनपर दूसरे दिन भी नहीं रहता। 'काका' का नयी-दिल्ली स्थित निवासस्थान दिल्ली आनेवाले अुनके सभी परिचित मित्रोंके लिअे खुला हुआ है। 'काका' का कभी-कभी विरोध करनेवाले मराठी साहित्यिक राजनीतिज्ञ और पत्रकार भी 'काका' के घरको अपनाही समझते हैं। यह स्थिति जब वे मन्त्री थे तब तो थी ही, पर आज भी है। आजकी परिवर्तित अवस्थामें यह आतिथ्यका बोझ अवश्यही अुनपर कुछ अधिक होता होगा, पर अुन्हें कभी किसीने शिकायत करते नहीं सुना।

राजनीतिक क्षेत्रमें 'काका' भाषाके आधारपर राज्योंके निर्माणके समर्थक हैं और महाराष्ट्रीय होनेके कारण संयुक्त महाराष्ट्रके निर्माणमें अुनकी विशेष रुचि और प्रयत्न होना भी स्वाभाविक है, पर अपनी अिष्ट सिद्धिके लिअे वे आंदोलनवादी नहीं, बल्कि समझौतावादी हैं। पिछले वर्ष हैदराबादमें अुन्होंने असि संबंधमें कहा— संविधानकी चौखटमें रहकरही हमें यह समस्या हल करानी होगी। मारपीट अथवा अुपद्रवोंसे समस्या हल नहीं हो सकती। अन्य प्रांतोंको अप्रसन्नकर किसी अेक प्रांतका कल्याण नहीं हो सकता। अैसा कभी न समझिये कि जो महाराष्ट्रीय नहीं हैं, वे आपके दुश्मन हैं। हमें लोगोंको यह समझाना होगा कि जनतन्त्रके विकासकी ही दृष्टिसे भाषाके आधारपर राज्योंका पुनर्गठन आवश्यक है।

अंतमें 'काका' के जीवनको यदि अेक वाक्यमें अभिव्यक्त करना हो तो यह कहकर किया जा सकता है कि सिद्धांत और व्यवहारका सामंजस्यही 'काका' का जीवन है। असि वर्ष अैसे सभापति नागपुर अधिवेशनके राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनको प्राप्त हुअे, यह अवश्य ही संतोष और सुखकी बात है।

डॉ० भवानीशंकर नियोगी

(संक्षिप्त परिचय)

आन्ध्र देशके स्मार्त ब्राह्मण कुलमें औ० सन् १८८६ में जन्म। मध्यप्रदेशमें, १८६१ में ब्रिटिश सरकारको जमीनका बन्दोबस्त (रेविन्यु सेटलमेंट) करनेके लिअ अंग्रेजी भाषा जाननेवाले कर्मचारियोंकी आवश्यकता पड़ी थी, तब विस प्रदेशमें अिंग्लिश भाषा जाननेवाला नहीं मिलता था। अंग्रेज अमलदारानें अुस समय मछली-पट्टमकी अुनकी फैक्टरीमें काम करनेवाले जिन कुछ अंग्रेजीदां कर्मचारियोंको यहां बुलाया, अुनमें श्री नियोगी जीके प्रपितामह भी आये थे। नाम अुनका 'वैरागी बाबू' था। अिस विचित्र नामका कारण यों बतलाते हैं, कि जब अेक साधु पुरुष अुनके घर आया और माताने बालकको अुसके चरणोंमें रखा तो साधुने "चिरंजीव हो बच्चा" का आशीर्वाद दिया। अेक ही बच्चा, साधुका वचन और माता पिताकी—निष्ठा! बच्चेका नाम 'वैरागी बाबू' ही अुस परिवारमें चल पड़ा।

डॉ० भवानीशंकर नियोगी

श्री नियोगीजीके पिता-महका नाम भी भवानी-शंकर था वे रायपुरमें कमिश्नरके दफ्तरमें सुपरिंटेंडेंट थे। १८८५ में अुनका देहान्त हुआ। जब १८८६ में डॉ सर नियोगीका जन्म हुआ और यही अुस कालमें पहला बालक था, तो पितामहका नाम ही अुनको नाम-करण संस्कारमें दिया गया। जिनके पिता नागपुरके सरकारी सचिवालयमें हेड क्लार्क थे। जब नियोगीजी ८ सालके थे तभी अिनके पिताकी मृत्यु हो गयी। अिनकी माता, जब ये दो ढाअी सालके रहे होंगे, तभी मर चुकी थी। काकापर बालकके पालन-पोषणका भार आ पड़ा। काका सीतारामजी नियोगी (नियोगी यह खानदानी नाम है) कट्टर सनातनी थे और थियासाफिस्ट भी थे। घंटों देवतार्चन और भजन-पूजन चलता। साधु-बाबा वैरागियोंपर अटूट श्रद्धा।

अिधर समाज सुधार प्रेमी छोटे चाचा श्री दुर्गाशंकर नियोगीने विधवा विवाह किया, तो अुन्हें जाति-च्युत किया गया। भाअी-बन्दोंने बहिष्कार किया। डॉ नियोगीकी स्कूलमें पढ़ाअी हुअी। संगतका असर। बीड़ी पीना, स्कूलकी अपनी कक्षासे पलायन कर जाना, ताश खेलना—अिस प्रकारके शरारती चक्करमें आप पड़ गये। चौदह साल-की अुम्र। अिसी समय विवाहके लिये भी परिवारमें आग्रह हो रहा था जब कि मिडिलस्कूलमें ही पढ़ रहे थे। चाचा दुर्गाशंकरके साथ रहनेके कारण बिगड़ोंमें बिगड़े माने जाने लगे। चाचाने अिनकी आदतोंको सुधारा और पढ़वाया। अच्छी सोहबतमें आये। 'मन्मगति मुद मंगलमूला।' मराठीके अुत्तम बोधप्रद ग्रंथोंका पाठ। सार्वजनिक कार्योंमें रुचि जाग्रत हुअी। १९०६ में नागपुरके हिस्लाप कालेजसे बी. अे किया। कुछ कालतक आप नागपुरके पटवर्धन

हाअीस्कूलमें अध्यापक रहे। १९१० में अेम अे, अेल-अेल बी हुअे। वकालतका धंधा आरंभ किया। साथ ही अुस समयके कांग्रेसी कार्यकर्ता स्व० डॉ मुंजे और बैरिस्टर अभ्यंकर आदिके साथ राष्ट्रीय कार्य करते। १९२० की प्रसिद्ध नागपुर कांग्रेसमें डॉ मुंजे मंत्री थे और आप सहायक-मंत्री। १९२१ में अपनी वकालत स्थगित कर दी १९२२ से फिर शुरू की। नागपुरके कअी सांस्कृतिक, सामाजिक, शैक्षणिक कार्योंमें भी तन मन-धनसे संलग्न। शुक्रवारी तालाबके चौराहेपर लोकमान्य तिलक महाराजकी भव्य पाषाणमूर्तिकी स्थापना नियोगीजीके भगीरथ प्रयत्नोंका फल है। अनेक वर्षोंसे आप नागपुरमें अनेक अुच्च शिक्षण-संस्थाओंके जन्मदाता, संचालक, पोषक, प्रेरक रहे हैं और अब भी हैं। आज आप गोरक्षण सभा, सरस्वती महाविद्यालय, लेडी अमृताबाअी महिला महाविद्यालय, स्कूल ऑफ आर्ट तथा प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति नागपुरके अध्यक्ष हैं। १९३३ से १९३६ तक आप नागपुर युनिवर्सिटीके वाअिस चान्सलर रहे और १९३६ से १९४६ तक नागपुर हाअी कोर्टके जस्टिस तथा चीफ जस्टिस रहकर सरकारी सेवासे निवृत्त हुअे। सी आअी अी और 'सर' (नाअीट हुड) की अुपाधियाँ भी मिलीं और विश्वविद्यालयसे अेल अेल डी की पदवी। जब देशमें कांग्रेस-सरकारका राज्य स्थापित हुआ तब कांग्रेसी सरकारका भी नियोगीजीने विश्वास सम्पादन किया। १९४८ से १९५३ तक आप म प्र सरकारके पब्लिक सर्विस कमीशन (लोक-सेवा-आयोग) के अध्यक्ष रहे।

सौभाग्यसे आपकी पत्नी श्रीमती डाक्टर अिन्दिराबाअी नियोगी भी सच्ची सहचारिणी आपको मिली। वे बम्बअी विश्वविद्यालयकी अेम बी बी अेस हैं और कुछ समयतक आप पुणेकी सुविख्यात स्त्री-शिक्षण संस्था कर्वे महिला विद्यापीठमें हाअुस सर्जनका काम करती रही। आज भी अितनी वृद्धावस्थामें श्रीमती अिन्दिराबाअीका कार्यक्षेत्र नागपुरमें बहुत व्यापक है। आप महाराष्ट्रीय हैं।

श्री नियोगीजीका दृष्टिकोण प्रजातंत्री है। सारे भारतकी अखंडताके समर्थक और पॉर्टी पावर पॉलिटिक्ससे दूर रहते हैं। मत मतान्तरों तथा भाषावार प्रान्तोंकी रचनाओंकी धींगाधींगीका आप समर्थन नहीं करते। आपने संस्कृत-साहित्यका विशेषकर मीमांसा, प्राचीन न्याय, पातंजल योग दर्शन, वेदान्त, बौद्ध-दर्शन आदिका मर्मज्ञतापूर्वक गहरा अध्ययन किया है और अुच्च कोटिके संस्कृत विद्वानोंकी सत्संगतिका लाभ अुठाते रहते हैं। आपकी अड़सठ (६८) बरसकी अुम्र है। रोज तीन-चार मील मैदानमें पैदल घूमते हैं। चुस्त, फुर्तीले और कार्यव्यस्त रहते है। श्री नियोगीजी मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन नागपुर अधिवेशनके स्वागताध्यक्ष है।

कन्नड़ साहित्यके अितिहासकी अेक झाँकी

: श्री के. वेंकटरामप्प, अेम. अे., कन्नड़-अध्यापक, मैसूर विश्वविद्यालय :

लगभग पचहत्तर साल पहले स्वय कन्नड भाषा भाषियोको अिस बातका पता नही था, कि कन्नडका साहित्य कितना प्राचीन है, अुसमें कौन-कौन कवि हुअे हैं और अुसकी क्या महत्ता है। अिस दिशामें सबसे पहले काम करनेवाले थे रेवरेण्ड अेफ किट्टल साहब, जो जर्मन थे और मगलोरमें आकर बस गये थे। रेवरेण्ड किट्टल गभीर विद्वान थे और ये भाषा तथा साहित्यके अनन्य पुजारी। जैसेही वे कन्नड भाषाके सौष्ठवसे अवगत हुअे,वैसेही वे कन्नड भाषा अेव साहित्यके अध्ययनमें लग गये। अल्प कालहीमें वे कन्नड भाषा तथा साहित्यके असाधारण पंडित बन गये। साहित्यके रसास्वादनसे तृप्त न होकर किट्टल साहबने कन्नड़के प्राचीन ग्रथोंको खोज अेव प्रकाशनका कार्य शुरू किया। अुनका सबसे महान् कार्य कन्नड-अंग्रेजी कोशका सपादन और प्रकाशन है। अब तक कन्नड भाषाके जितने कोश लिखे गये हैं, अुनमें किट्टलका कोश सबसे बडा और गवेषणापूर्ण है। किट्टल साहबने कोशके प्रकाशनके साथ-साथ "छदोम्बुधि" नामक ग्रथका सपादन करके कन्नड साहित्यके अितिहास-पर अेक गवेषणापूर्ण निबन्ध लिखा, जिससे कन्नड साहित्यके अितिहासपर काफी प्रकाश पडा। अिस दिशामें काम करनेवाले दूसरे महानुभाव थे मि बी अेल् रैस जो मैसूरके प्राच्य-अनुसधान विभागके प्रधान थे। रैस साहबने कअी शिलालेखोंका पता लगाकर जो कुछ प्रकाशित कराया, अुसके द्वारा कन्नडके कअी अेक कवियों और राजाओंके बारेमें बहुत-सी बातोंकी जानकारी प्राप्त करनेमें मदद मिली। मिस्टर रैसने भट्टाकलकके "शब्दानुशासन" के लिअे भूमिका लिखते हुअे कन्नड़ साहित्यके कअी पहलुओंपर प्रकाश डाला। साथ ही मैसूर गजेटियरमें अेक खोजपूर्ण लेख प्रकाशित किया, जिससे अनेक समस्याओंपर विचार करनेमें सुगमता हुअी। रेवरेण्ड किट्टल और रैस साहबने जो कार्य प्रारभ किया था, अुसीका प्राच्य-विभागके सहायक अधिकारी श्री आर नरसिंहाचार्यने अपने हाथमें लिया और आगे बढ़ाया। अुन्होंने अपने अेक बन्धु श्री अेस जी नरसिंहाचार्यके सहयोगसे "कर्नाटक कवि चरिते" नामक बृहद् ग्रथका प्रथम भाग सन् १९०७ में प्रकाशित किया। यह बडे ही दुर्भाग्यकी बात हुअी कि 'कर्नाटक कवि चरिते" का काम समाप्त होनेके पहले ही श्री अेस जी नरसिंहाचार्यका देहान्त हो गया, किन्तु आर नरसिंहाचार्यने अपनी ढलती अुम्रकी परवाह न करके, निरतर परिश्रम कर 'कवि चरिते' का दूसरा तथा तीसरा भाग प्रकाशित किया। अिस प्रकार चार विद्वानोंके अुद्योगके फलस्वरूप कन्नड साहित्यके अितिहासकी रूपरेखा ही नहीं अपितु अेक बृहत् ग्रथ भी प्रस्तुत हो गया; जिससे कन्नडकी प्राचीनता तथा महत्ताका परिचय कन्नड भाषा-भाषियोंको प्राप्त हुआ।

'कर्नाटक कवि-चरिते', कन्नड साहित्यके अितिहासपर अबतक जितने ग्रथ रचे गये हैं, अुनमें सबसे बडा है। अिसमें नवीं शताब्दीसे अुन्नीसवी शताब्दीके अत तकके कवियोंके नाम अुनका काल तथा अुनकी कृतियोंके नाम दिये गये हैं। भूमिकामें कन्नड प्रदेशकी राजनैतिक, भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियोंका वर्णन करते हुअे कन्नड भाषाके विकासका बडा ही रोचक परिचय दिया गया है। लेकिन कवियों और अुनके ग्रथोंकी आधुनिक ढगसे आलोचना नहीं की गयी। पर हाँ, आलोचनात्मक अध्ययनके लिअे काफी सामग्री जुटायी गयी है।

छठी शताब्दीके कअी कन्नड-शिलालेख प्राप्त हुअे हैं; जिनके आधारपर अिस बातका निर्णय हो गया है कि नवी शताब्दीके आरंभमें लिखा हुआ "कविराजमार्ग" कन्नडका आदि ग्रथ है। यह अेक अुच्च कोटिका रीतिग्रथ है। अिसके रचयिता थे राष्ट्रकूट चक्रवर्ती

राजानृपतुग। अब यह मालूम होने लगा कि अिसके पहले ही कन्नडमें साहित्यकी रचना हुआ करती थी। प्राचीनताकी दृष्टिसे भारतीय भाषाओंमें अगर संस्कृतका स्थान सर्वप्रथम है, तो तमिलका दूसरा और कन्नडका तीसरा। कन्नडका साहित्य जितना पुराना है अुतना ही वृहन् और सर्वांग-सुदर भी है। 'कर्नाटक कवि चरिते' में करीब १२०० कवियोका अुल्लेख हुआ है। भाषाकी प्रौढता, काव्य-सौष्ठव रसाभिव्यजना, विषयकी विविधता तथा रचना कौशलकी दृष्टिसे कन्नडका प्राचीन साहित्य दुनियाके किसी भी अूचे दर्जेके साहित्यसे टक्कर ले सकता है। छद, रस, अलकार, व्याकरण आदि भाषा तथा साहित्य-शास्त्र सम्बन्धी कितने ही प्रौढ ग्रथ बारहवी शताब्दीके पहले ही लिखे गये थे।

यह सर्वविदित ही है कि भारतवर्षमे धार्मिक विचारोके प्रचारके लिअे सबसे पहले भगवान् बुद्ध और अुनके अनुयायियोने देशी भाषाओको माध्यम बनाया था। अिस तत्वकी महत्ताको समझकर जैनोने भी बौद्धोका अनुकरण किया। अिन दोनो धर्मोके आचार्यों तथा प्रचारकोने धर्म सम्बन्धी सभी ग्रथोका देशी भाषाओमें अनुवाद किया। कन्नडमें भी धार्मिक तथा साहित्यिक ग्रंथ निर्माण कार्य जैनोने ही सबसे शुरू किया। अिस बातका तो पता नही चलता कि बौद्धोने कन्नडमें ग्रथ रचे थे या नहीं, यद्यपि जैनोके पूर्व ही बौद्ध धर्मका काफी प्रचार कर्नाटकमें हो चुका था।

जिस तरह आजकल विज्ञान (साअिन्स) का बोल-बाला है अुसी तरह प्राचीन कालमें मानव समाजमें धर्मकी प्रबलता थी और अिन धार्मिक भावनाओसे समाज जितना मथित तथा प्रभावित हुआ था, अुतना शायद ही और किसीसे हुआ हो। औसवी पहली-दूसरी शताब्दीसे बारहवी शताब्दी तक कन्नड भाषा भाषियोपर जैन धर्मका काफी प्रभाव पडा। जैनोने अपने धर्मके प्रचारके लिअे कन्नड भाषा और साहित्यको माध्यम बनाया। यद्यपि जैन कवियोका प्रधान लक्ष्य अपने धर्मका प्रचार करना ही था, तो भी अुनके रचे हुअे काव्योमें साहित्यिक सौठवकी कमी नही। अिन जैन कवियोने जैन-तीर्थंकरो तथा आचार्योंकी कथा-थोको ही अपने काव्यकी वस्तु अवश्य बनाया, लेकिन लोगोके जीवनके निकट आने और अुन्हे अपनी तरफ आकर्षित करनेके लिअे पौराणिक कथाओसे भी अपने काव्योको सजाया। अिन कवियोने पौराणिक कथाओमें अवश्य कुछ परिवर्तन कर लिया किंतु कथाओकी रोचकताको वैसे ही बनाये रखा जैसी कि मूल कथाओमें थी। यही कारण है कि अिन जैन कवियोके रचे गये भारत, रामायण और भागवतकी कथाअें कन्नड भाषा-भाषियोके लिअे अुतनी ही प्रिय हैं जितने संस्कृतके काव्य ग्रथ। पम्पका 'विक्रमार्जुन विजय' अथवा पम्प-भारत, रन्नका 'साहिस भीम विजय" कनडके अनमोल रत्न हैं, जिनमें कनडके लोगोके जीवनके रोचक चित्र अकित हैं।

कन्नडका आदिकाल जो नवी शताब्दीसे बारहवीं शताब्दी तक माना जाता है, जैन-कालके नामसे प्रसिद्ध है। अिसका कारण यही है कि अिस अवधिमें कन्नड साहित्यकी श्री वृद्धि करनेमें जैनोका विशेष हाथ रहा। जैन कवि संस्कृत भाषा तथा साहित्यके अच्छे ज्ञाता थ। अिसलिअे यह स्वाभाविक ही था कि कन्नड साहित्यके निर्माणके लिअे संस्कृतका साहित्य प्रेरक शक्ति बन जाय। अिसलिअे अिस कालमें ग्रथोकी भाषा न केवल संस्कृतमय थी बल्कि शैली, छद कथा वस्तु आदि सभी बातोमें संस्कृतका अधानुकरण हुआ। अिस कालकी सबसे बडी विशेषता यह है कि सब ग्रथ 'चम्पू' शैलीमें ही रचे गय। अत अिसको चम्पू काल भी कहते हैं। यह तो स्वाभाविक ही था कि कन्नडके अत्यन्त लोकप्रिय 'त्रिपदि', षट्पदि 'सागत्य', 'रगळे' आदि छदोका प्रयोग कम होने लगा। चूंकि संस्कृतके समृद्ध साहित्यका गहरा प्रभाव कन्नडपर पडा, अिसलिअे भाषामें नयी जान आयी और अभिव्यजना प्रणालीका चरम विकास हुआ। जैसा कि जगत्‌की सभी भाषाओके आरभिक कालकी समस्त रचनाअें पद्यमें ही हुअी हैं अिस समयका सारा साहित्य पद्यमें ही निर्मित हुआ। यहांतक कि सबके सब शास्त्र ग्रथ भी पद्यमें बनें। नृपतुग केशिराज नागवर्म नामक प्रसिद्ध कवियोने अपने लक्षण ग्रथोका प्रणयन पद्यमें ही किया। गणितके महान् पडित

राजादित्यने लीलावती का अनुवाद भी पद्यमें किया। अिसी कालमें कन्नडमें गद्य लिखनेका सूत्रपात हुआ। अैसे गद्य प्रयोमें 'चाण्डराय-पुराण' अुल्लेखनीय है। यद्यपि अिस समय बड़े बड़े कलात्मक प्रौढ़ काव्योंका निर्माण हुआ तो भी समाजके साधारण लोगोंके जीवनके साथ साहित्यका संपर्क नहीं रहा। अिसका कारण यह था कि आमतौरपर अिस कालमें कवि राजाओंके आश्रयमें रहते थे और वे जो कुछ लिखते थे या तो अपने आश्रयदाताओंका यश गानेके लिअ लिखते थे या दरबारके अन्य पण्डितोंके बीचमें वाहवाही लूटनेके लिअ अथवा अपने धर्मके प्रचारके लिअ। अिसका परिणाम यह हुआ कि न बोलचालकी भाषा साहित्यके सृजनके लिअ अुपयुक्त समझी गयी न कन्नडके छंदोंका ही प्रयोग किया गया। लेकिन चम्पू शैलीमें बड़े ही प्रौढ़ काव्य रचे गये जो मौलिकताकी दृष्टिसे संस्कृतके महाकाव्योंके टक्करके बने।

सन १२०० से सन १६०० तकका काल 'वीर शैव काल' माना जाता है। यद्यपि अिस कालमें अन्यान्य धर्मावलम्बियोंने भी साहित्यकी सेवा की, तो भी कन्नड साहित्यमें अेक क्रांतिकारी नूतन युगके निर्माणमें वीरशैव संप्रदायके अनुयायियोंका ही विशेष हाथ रहा। बारहवीं शताब्दीके अंतमें कर्नाटकमें श्री बसवेश्वरका प्रादुर्भाव हुआ जिनके व्यक्तित्वके प्रभावसे समस्त कन्नड भाषा भाषियोंका ही नहीं बल्कि दक्षिणापथके विशाल भूभागके निवासियोंके धार्मिक सामाजिक अेवं नैतिक जीवनमें बड़ी अुथल पुथल मची। बसव तथा अुनके शिष्योंने अपने मतके प्रचारके लिअ बोलचालकी कन्नड भाषाको माध्यम बनाया। बसवकी वाणी 'वचन साहित्य' के नामसे प्रसिद्ध है जो अपने ही ढंगका अेक अनूठा साहित्य है। अिन वचनोंमें न केवल वीरशैव संप्रदायके सिद्धांतोंका निरूपण हुआ, बल्कि बड़ी ही सरल सरस और चुस्त भाषामें भक्ति ज्ञान प्रेम लोकनीति सदाचार आदिका संदेश दिया गया। अिन वचनोंके द्वारा बसवके महान व्यक्तित्वकी गहरी छाप कन्नड जनतापर पड़ी। वचन-साहित्यके निर्माणके फलस्वरूप कन्नड भाषा और साहित्यमें नूतन चेतनाका संचार हुआ। पुरानी रूढ़ियोंका अेक तरफ बहिष्कार हुआ दूसरी तरफ साहित्यमें लोक जीवनका सच्चा चित्र प्रतिबिम्बित हुआ। वचनकारोंकी संख्या दो सौसे भी ज्यादा है जिसमें बसव, अल्लमप्रभु, सिद्धराम चिन्नबसव और अक्कमहादेवी अग्रगण्य हैं।

'वचन साहित्यके साथ साथ अिस कालमें और भी कअी प्रकारकी शैलियां प्रचलित रहीं। हम्पीनगरके हरिहरने गिरिजाकल्याण नामके चम्पूकाव्यकी रचना की और 'रगळे' नामक छंदका प्रयोग करते हुअे कअी ग्रंथ रचे जिनमें शिव भक्तोंका जीवनियां बड़ी ही लोकप्रिय हुअीं। अिस कारणसे हरिहरको 'रगळे कवि' भी कहते हैं। हरिहरके बाद 'रगळे' छंदमें लिखनेकी प्रणाली खूब चल पड़ी। अिसके अतिरिक्त 'षट्पदि' और 'सांगत्य' छंदोंकी शैलियां भी खूब प्रयुक्त होने लगीं। हरिहरके भतीजे और शिष्य राघवांकने 'हरिश्चंद्र काव्य' षट्पदीमें लिखा। कअी अेक वीरशैव कवियों और कुमार व्यास कुमार वाल्मीकि, लक्ष्मीश प्रभृति ब्राह्मण कवियोंने षट्पदी छंदको बड़ी सफलताके साथ प्रयोग करते हुअे कअी महाकाव्योंका निर्माण किया। अिस प्रकार अिस आलोच्य-कालमें संस्कृतके छंदोंका अुपयोग करना कम होने लगा और शुद्ध कन्नडके छंदोंकी अुपयोगिता सर्वत्र बढ़ने लगी। जैसा कि अूपर लिखा जा चुका है अिस कालकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि साहित्य केवल राजदरबारोंकी वस्तु न रहकर, जन साधारण लोगोंके रसास्वादनकी वस्तु बन गया।

जिस तरह वीरशैव भक्तोंने अपने लोकप्रिय वचनोंके द्वारा कन्नड-साहित्यको समृद्ध और जनप्रिय बनाया, अुसी तरह वैष्णव भक्तोंने अपने भजन और कीर्तनों द्वारा कन्नड भाषा व साहित्यको समुन्नत किया। अिन वैष्णव हरिदासोंका काल सोलहवीं शताब्दी तक बराबर चलता है। ये सारेके सारे हरिदास श्री मध्वाचार्यकी शिष्य परंपराके थे जिनमें पुरंदरदास, कनकदास, जगन्नाथदास प्रधान है। अिन संतोंने कर्नाटकमें वही काम किया जो काम अुत्तर भारतमें सूर तुलसी मीरा बाअी आदिने किया। अपने सुंदर भजनों द्वारा अिन हरिदासोंने कर्नाटकमें भक्ति गंगा बहायी और प्रेम ज्ञान वैराग्य, सदाचार लोकनीति आदिका अमर संदेश घर घर तक पहुँचाया। अिस भजन साहित्यके प्रचारसे कर्नाटक संगीतके विकासमें बड़ा सहायता मिली।

अठारहवीं शताब्दीके आरंभमें अेक अत्यंत लोकप्रिय कवि हुअे जिनका नाम था सर्वज्ञ। सर्वज्ञ

(शेष पृष्ठ-संख्या ८०३ पर)

सम्पादकाचार्य बाबूराव विष्णु पराड़कर

: श्री लक्ष्मीशंकर व्यास, अेम. अे. (आनर्स) :

आधी शताब्दीसे भारत भारती और भारतकी सतत साधनामें संलग्न रहनेवाले तथा देशमें क्रांति अेवं अनेकानेक युग-परिवर्तनोंके स्रष्टा और द्रष्टा सम्पादकाचार्य पण्डित बाबूराव विष्णु पराड़कर राष्ट्रकी विभूतियोंमें प्रमुख हैं। विचारों द्वारा देशमें जिन महापुरुषोंने नव जागरण और राष्ट्रीय-चेतनाका स्फुरण किया अुनमें श्रद्धेय पराड़करजीका विशेष अेवं विशिष्ट स्थान है। शब्दोंके अिस जादूगरने देशके लक्ष-लक्ष जनोंको मानवताका पाठ पढ़ाया, अपने अधिकारोंका बोध कराया और बताया है अुन्हें दासत्व शृंखलासे मुक्त होनेका मंत्र। बीसवीं सदीके प्रारम्भसे कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण होकर अबतक लाखों जनोंकी विचार धाराको अुत्तेजित-आन्दोलित करनेवाले अिस सूत्रधारका जितना महान् व्यक्तित्व है अुतना ही महान् है अुसका कृतित्व। देशके समाज, अितिहास और साहित्य-गगनांगनपर अिस महान् तपस्वीकी लेखनीने अपनी अमर छाप अंकित की है। यही नहीं, राष्ट्रभाषा हिन्दीके समाचारपत्रोंका मार्ग-दर्शनकर अुनका मापदण्ड बनाया है। सम्प्रति, देशके हिन्दी समाचारपत्रोंके विकास तथा अुनकी रूपरेखाके वर्तमान रूपका अधिकांश श्रेय अिसी महारथीको प्राप्त है।

सम्पादकाचार्य पराड़करजी

बचपन तथा शिक्षा-संस्कार

महात्माओं, सन्तों, विचारकों तथा साहित्यके प्रवर्तकोंको जन्म देनेवाली अैतिहासिक काशी नगरीमें बालक बाबूराव पराड़करका जन्म कार्तिक शुद्ध षष्ठी मंगलवार, संवत् १९४० विक्रम तदनुसार १६ नवम्बर सन् १८८३ को हुआ। आपके पिताका नाम पंडित विष्णु शास्त्री था। आप बिहारके राजकीय स्कूलोंके हेडपण्डित थे। बालक बाबूरावका नामकरण 'सदाशिव' किया गया था किन्तु पिता स्नेह भावसे अुन्हें 'बाबू' ही पुकारा करते थे। परिणाम यह हुआ कि यही 'बाबू' बाबूराव विष्णु पराड़कर हो गये। आगे चलकर बचपनका 'सदाशिव' नाम अेकदम ही विस्मृत कर दिया गया हो, अैसी बात नहीं। अपने सुदीर्घ पत्रकारिताके जीवनमें पण्डितजीने 'सदाशिव' के नामसे बहुतसे लेख लिखे हैं। अस्तु। बालक बाबूरावकी शिक्षा-दीक्षा सनातनी परिवारके बालका जैसी हुअी। यज्ञोपवीतके पूर्व अुन्हें लंगोटी लगाकर वेदांगका अध्ययन करना पड़ा। बुद्धि पहलेसे ही कुशाग्र रही और अिसके परिणामस्वरूप यज्ञोपवीतके पूर्व ही वेदांग कंठाग्र हो गये, जनेअू हो जानेके बाद आपने वेदका अध्ययन किया। बाल्यकालकी अिस शिक्षाने पराड़करजीके संस्कारोंको सनातनी बनाया और जिसकी छाया अब भी अुनके व्यक्तित्वमें परिलक्षित होती है।

बाल्यकालकी विषम परिस्थितियाँ

आपके पिता श्री विष्णु पराड़कर बिहारके सरकारी हाअीस्कूलमें संस्कृतके हेडपण्डित थे। अिसलिअे परिवार सहित अुन्हें छपरा जाना पड़ा। यहीं बचपनमें बालक बाबूरावको रोमन अक्षरोंका संस्कार कराया गया। कठिनतासे अेक वर्ष बीता होगा कि आपके पिताजीकी बदली अन्यत्रके लिअे हो गयी। यही क्रम देख पण्डित विष्णु शास्त्री अपने परिवारको काशी पहुँचा गये। बालक पराड़कर अपनी माता तथा छोटे

माओके साथ पुन काशी आ गये। श्री विष्णु शास्त्री अिस प्रकार छपरा, मुंगेर, भागलपुरके सरकारी हाअीस्कूलोंमें अध्यापन करते रहे और अिधर बाबूराव पराडकरका शिक्षाक्रम पुन काशीकी गलियोंमें होने लगा। अुस समय बनारसकी दण्डपाणि गलीके निकट अेक स्कूल था, यहीं आप पढने लगे। अिसके बाद आपका नाम हरिश्चन्द्र स्कूलमें लिखाया गया जो अुस समय बुलानालाके निकट मुन्शिया मुहल्लेमें था। अिस समय आपकी संगत काशीके कुछ कबूतरबाज लडकोंसे हो गयी। वे पैसा चाहते थे पर श्री बाबूरावके पास पैसा कहाँ? अेक दिन अुन्हींकी प्रेरणासे श्री बाबूरावको अपनी माताकी अंगूठी चुरानी पडी। अुसे अेक सर्राफके यहाँ बेचा गया। अेक ही दो दिन बाद आपकी माताजीने अुस अंगूठीकी खोज की तो अिस काण्डका रहस्योद्घाटन हो गया। बादमें वह अंगूठी भी सोनारको रुपये देकर प्राप्त कर ली गयी। अिस घटनाकी खबर आपके पिताजीके पास पहुँची जो अुस समय भागलपुर हाअीस्कूलमें हेड पण्डित थे। वे काशी आये और बिना कुछ डाटे-फटकारे चुपचाप बालक बाबूरावको अपने साथ भागलपुर ले गये। भागलपुरके जिस स्कूलमें वे अध्यापक थे, अुसीमें अुनका नाम लिखाया गया। अंगूठी लेकर बेचनेकी घटना श्री बाबूरावजीके जीवनमें परिवर्तनकारिणी रही। अिसी कारण काशीकी गलियोंमें परम स्वतंत्र होकर कबूतर अुडानेवालोंके साथ घूमनेवाले अिस महान् बालकका जीवनक्रम अेक नयी दिशामें परिवर्तित हुआ। अभी श्री बाबूरावजी अिन्ट्रेन्स परीक्षा भी अुत्तीर्ण न हो पाये थे कि आपके पिताका दुखद देहावसान हो गया। परिवारमें बडे होनेके नाते आप-पर अनेक नये भार अेवं अुत्तरदायित्व आ गये। अिन्हीं परिस्थितियोंमें आपने सन् १९०० में अिन्ट्रेन्सकी परीक्षा अुत्तीर्ण की। आर्थिक साधनोंके अभावमें भी आपने अध्ययन न छोडा। अिसका अेक कारण तो यह था कि स्कूल कालेजमें आप अपनी प्रतिभाके बलपर सबके प्रिय छात्र बन गये थे। दूसरे भागलपुरके जमींदार पाडेजीके यहाँ जो आपके पिताजीके शिष्य थे, आपको पारिवारिक स्नेहका वातावरण मिला। अिसलिअे आअी अे कक्षामें भी आपने भागलपुरके टी अेन जुबली कालेजमें अपना नाम लिखाया। अभी आप अिस कक्षाका अध्ययन पूरा भी न कर सके थे कि सन् १९०३ में काशीमें प्लेगका भयंकर प्रकोप हुआ और आपकी माताजी अिस लोकसे चल बसीं। पन्द्रह वर्षके जब आप थे तभी पिताजी परलोकगामी हो गये थे और अब माताजी अिन्हें छोडकर चली गयीं। पिताकी मृत्युके बाद छह-सात वर्षोंमें घरमें जो कुछ था समाप्त हो चुका था। काशी आकर श्री बाबूराव-जीने देखा कि अब पढनेका अवसर नहीं रह गया था। परिवारके पोषणका दायित्व आ गया था और कमाने खानेका प्रश्न सामने था।

छात्रसे गृहस्थ बने

अिसी बीच काशीके सम्भ्रान्त बडे परिवारमें आपका विवाह सम्बन्ध हो [illegible]। यह परिवार अब भी काशीमें विद्यमान है। पंडितजीकी अिस पत्नीके देहावसानके बाद अुनके कभी विवाह हुअे पर स्त्री-सुख जो आपको पहली पत्नीसे प्राप्त हुआ वह किसी अन्यसे नहीं। वे जायीं और रोगका शिकार बनकर चल्ती गयीं। पण्डितजीकी पहली पत्नीकी मृत्यु सन् १९१२-१३ में हुअी। अिस बीच कामकी तलाश जारी थी। और अिसी प्रसंगमें आपको काशीके लक्ष्मीचौतरेके अेक पण्डितजीके ट्यूशन भी करना पडा। आपके श्वसुर भी आपके लिअे कामकी तलाश कर रहे थे और अिसमें सफलता भी मिली। डाक-विभागमें आपको नौकरी मिल गयी और कामपर अुपस्थित होनेका पत्र भी मिला पर सरकारी नौकरी न करनेका आपने निश्चय कर लिया था।

लोकमान्य तिलकसे सम्पर्क

गम्भीर आर्थिक परिस्थितियोंके रहते हुअे भी सरकारी नौकरी न करनेका विचार तथा अुसका श्री बाबूरावपर पहले ही पड चुका था। आपके दूसरे रिश्तेमें लगनेवाले मामा श्री सखाराम गणेश देअुस्कर अपनी बडी लडकीके विवाह-प्रसंगमें काशी आये थे।

श्री सखारामजीने बालक बाबूरावसे बातचीतके अनन्तर प्रश्न पूछा कि अकबर बड़ा था या औरंगजेब? श्री बाबूरावने जैसा अितिहासमें पढ़ा था कह दिया 'अकबर महान्' था। श्री सखारामजीने छूटते ही पूछा—क्यों? अिस 'क्यों'का अुत्तर बाबूरावके पास न था। अिसपर सखारामजीने अुन्हें बताया कि अकबरकी नीतिसे हिन्दू संस्कृतिका अभ्युत्थान कैसे सम्भव था और अुस परिस्थितिमें शिवाजी कैसे अुत्पन्न होते। आपने बताया कि ठीक अुसी प्रकारकी नीति अंगरेजोंकी भी है जो हमारी सभ्यता और संस्कृतिको ही नष्ट कर देना चाहते हैं। यही बाबूरावजीके लिअे राष्ट्रीयता तथा देश-प्रेमका पहला पाठ था। अिस घटनाने आपका दृष्टिकोण ही बदल दिया। अिसके बाद सन् १९०५ में बनारसमें काँग्रेस हुअी तो आप कांग्रेस स्वयंसेवकके रूपमें अुसमें सम्मिलित हुअे। अिसी अवसरपर आपको लोकमान्य तिलकके दर्शन तथा सम्पर्कका सौभाग्य प्राप्त हुआ। लोकमान्य अिन्हें अपने साथ राजनीतिक कार्योंके लिअे ले जाना चाहते थे किन्तु पारिवारिक परिस्थितियोंके कारण बाबूरावजी काशी छोड़कर नहीं जा सकते थे। श्री सखारामजी, बनारस कांग्रेस और लोकमान्य तिलक अिन तीनोंकी प्रेरणा तथा प्रभाव श्री बाबूरावकी जीवनधाराको नयी दिशाकी ओर गतिवान करनेमें सहायक हुअे। आपमें देशप्रेम और राष्ट्रीयताकी भावनाका अुदय हुआ, जिसके परिणामस्वरूप आपने डाक तार विभागकी नौकरी ठुकरा दी तथा राष्ट्रके नव जागरणके महान कार्योंमें प्रवृत्त हुअे। श्री सखारामजीके आदेशानुसार आपने प्रसिद्ध मराठी साप्ताहिक 'केसरी' पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था।

पत्रकारीके क्षेत्रमें

विधाताने श्री बाबूरावको पत्रकारिताके लिअे बनाया था, तो भला वे किस प्रकार तार-विभागकी सरकारी नौकरी स्वीकार करते और किस प्रकार राज-नीतिके क्षेत्रमें लोकमान्यके साथ अुतर पड़ते। अुन्हें तो सरकारी कर्मचारियोंकोही नहीं, सरकार बदलनेके लिअे कार्य करना था। राजनीतिक नेता बनकर भाषणकी अपेक्षा अुनका मार्गदर्शन करा, देशकी कोटि-कोटि जनतामें देशभक्तिकी भावना अुत्पन्न करनी थी। अिसलिअे जब कलकत्तेसे प्रकाशित होनेवाले 'हिन्दी बंगवासी' में सहायक सम्पादककी आवश्यकताका विज्ञापन आपने देखा तो अपने हाथसे आवेदनपत्र लिख भेजा। अिसके साथ किसीकी न तो सिफारिश थी, न कोअी सार्टीफिकेटही था।

श्री हरेकृष्ण जौहर 'हिन्दी बंगवासी'के सम्पादक थे। आवेदन-पत्रकी शैलीसे आप अितने प्रभावित हुअे कि बाबूरावजीको अुस पदके लिअे चुना और बुला भेजा। अुन दिनों दुर्गा पूजाके अवसरपर दैनिक पत्रोंमें अेक सप्ताह और साप्ताहिकोंमें दो सप्ताहकी छुट्टियाँ होती थीं। अुसी वर्ष जौहरजी पूजावकाशमें काशी आये तो बाबूरावजीसे अुनकी भेंट हुअी। जौहरजी आपसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुअे और आपकी लेखन-शैलीकी सराहना की। अिसी बीच बाबूरावजीने अपने मामा श्री सखारामजीको जिनका घर संथाल परगनामें था पत्र लिखा और अुनकी सम्मति मांगी। श्री सखारामजी अुस समय बंगला दैनिक 'हितवादी'के सम्पादक थे और कलकत्तेमेंही रहते थे। अस्वस्थ होनेके कारण वे अपने घर गये हुअे थे। बाबूरावजीका जब अुन्हें पत्र मिला तो अुन्होंने तत्काल सहमति दी और कहा कि कलकत्ता जानेके पूर्व मुझसे मिलने जाओ तथा घरकी ताली लेते जाओ। सन् १९०६ के पूजावकाशके बाद बाबूरावजीने काशीसे कलकत्तेकी ओर प्रस्थान किया। आप 'बंगवासी' में कार्य करने लगे लेकिन रहते थे श्री सखारामजीके निवासपरही। कुछही दिनोंके बाद आपके मामा श्री सखारामजी आ गये। बाबूरावजीकी मामी भी अुनके साथ आयी थीं। अिस प्रकार कलकत्तेमें पत्रकारिताके क्षेत्रमें आप अवतीर्ण हुअे। देशसेवाकी भावना तथा 'केसरी'के अध्ययन-मननके व्यवहारिक प्रयोगका समय अब आ गया था। अुस समय 'बंगवासी'का बड़ा प्रचार था। पर यह पत्र था प्रतिक्रियावादी नीतिका समर्थक। अिससे श्री बाबूरावका चित्त कुछ समयके लिअे हटने लगा, पर अपने मामाके आदेशका पालन करते हुअे वे वहीं कार्य करते रहे।

अध्ययन और मननके वे दिन

'हिन्दी बंगवासी'में सहायक सम्पादकके वेतन रूपमें अुन्हें पच्चीस रुपये मासिक प्राप्त होते थे। वेतन जिस दिन मिलता अुसी दिन मामा सखारामजीकी आज्ञानुसार २० रु० मनिआर्डर बनारस कर देना पडता था और रसीद अुन्हें दिखानी पडती थी। यही क्रम प्रत्येक मास चलता था। पाँच रुपये कपडे-लत्ते अथवा हाथ खर्चके लिअे अपने पास रखनेकी श्री बाबूरावजीको आज्ञा थी। वे सदा अिसका पालन करते रहे। भोजन और निवासकी समस्त व्यवस्था मामा सखारामजीके यहाँ थी ही। पाँच रुपया जो बचता था अुसका अधिकांश भाग कलकत्ता स्थित अिम्पीरियल लाअिब्रेरीके आने-जानेमें व्यय होता था। कार्यालयसे लौटकर आनेपर श्री बाबूरावजीको सखारामजीके आदेशानुसार प्राय नित्य ही अिम्पीरियल लाअिब्रेरी जाकर विभिन्न विषयोंका अध्ययन अेव तथ्य-सग्रह करना पडता था। यह क्रम अितना नियमित हो गया था कि अुक्त देश-प्रसिद्ध पुस्तकालयके पुस्तकाध्यक्षने आपके लिअे स्थायी प्रवेश-पत्र तथा पृथक बैठकर अध्ययनकी समस्त सुविधाअें सुलभ कर दी थी। काशीमें नागरी प्रचारिणी सभाके आर्य भाषा पुस्तकालयमें बैठकर वहाँकी अधिकांश पुस्तकोंको पढ जानेवाले बाबूरावजीने अिम्पीरियल पुस्तकालयमें भी अुसी वृत्तिसे काम लिया। अिसके अतिरिक्त श्री सखारामजी प्रायः नित्य ही अेक न अेक प्रश्न या समस्या सम्बन्धी विवाद छेड देते थे और जिस पक्षका बाबूराव समर्थन करते अुसका वे खण्डन पक्ष ग्रहण करते। अिस प्रकार बाबूरावजीको महान अध्ययन-मननके साथ तर्कशक्ति अेव प्रश्नके दोनो पहलुओंपर व्यापक विचार करनेकी शैलीका अभ्यास हो गया। कलकत्तेमें अुस समय पण्डित गोविन्द नारायण मिश्र तथा पण्डित दुर्गाप्रसाद मिश्र हिन्दीके प्रख्यात विद्वान थे। आप अिनके पास जाकर हिन्दी-लेखनकी शैली तथा व्याकरणकी बारीकियाँ समझने लगे। अिन दोनों विद्वानोंका श्री बाबूरावजीपर अत्यधिक प्रभाव पडा।

क्रान्तिकारी समिति और नजरबन्दी

बीसवी शताब्दीके अुन प्रारम्भिक दिनोंमें बगालके नवयुवक समाजमें गुप्त समितियों और क्रान्तिकारी भावनाओंका व्यापक प्रचार था। श्री सखारामजीके घर अनेक क्रान्तिकारी अेकत्र होने और परामर्श लेने। बाबूरावजीका भी सम्बन्ध अिन्ही दिनों गुप्त समितिसे हो गया जिसका केन्द्र था चन्द्रनगर। अिधर अेक और घटना हुअी। कलकत्तेमें राष्ट्रीय शिक्षाके निमित्त नेशनल कालेजकी स्थापना हुअी और अिसके प्रधान थे श्री अरविंद घोष। अिस सस्थामें विनयकुमार सरकार, राधाकुमुद मुखर्जी जैसे देश-प्रसिद्ध विद्वान अध्यापन कार्य करते थे। श्री बाबूरावजीको भी यहाँ अध्यापन कार्य सौंपा गया। हिन्दी बंगवासीके सम्पादकको यह बात न रुची, फलत बाबूरावजीने पत्रसे अिस्तीफा दे दिया। 'हिन्दी बंगवासी' से पृथक होनेपर आपको साप्ताहिक 'हितवार्ता' के सम्पादक पदपर बुलाया गया। अिस पत्रको आपने राजनीति प्रधान बनाया, जो अुस समयके हिन्दी-पत्रोंकी परम्परामें सर्वथा नवीन प्रयोग था। सन् १९०७ में आपने अिस पत्रका भार सभाला और लगभग चार वर्षोंतक अिसका सम्पादन किया। अिसके बाद नीति सम्बन्धी मतभेदके कारण 'हितवार्त्ता'से पृथक् होकर आप 'भारतमित्र' में चले गये जो दैनिक रूपमें निकलने लगा था और जिसके सम्पादक थे पण्डित अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी। सम्पादन-कार्यके साथ ही साथ आपका सम्बन्ध गुप्त समितियोंसे भी बराबर बना रहा। यह बात छिपी नहीं रही। फलत सन् १९१६ की १ जुलाअीको सरकारने १८१८ के ३ रे रेगुलेशनमें आपको साढे तीन वर्षके लिअे नजरबन्द कर दिया।

'आज' सम्पादकः पराड़करजी

सन् १९२० ओीस्वीमें जब ३॥ वर्षकी नजरबन्दीके पश्चात् श्री बाबूरावजी काशी लौटे तो अुनकी द्वितीय पत्नी यक्ष्मासे पीडित थी। सन् १९१५ में यह विवाह बम्बअीमें हुआ था। विवाहके अेक वर्ष बाद ही श्री बाबूराव नजरबन्द कर लिये गये और जब १९२० में मुक्त होकर आये तो अुनकी पत्नीके स्वस्थ होनेकी कोअी आशा न थी। आते ही आप पत्नीकी सेवा-सुश्रूषामें लगे। किन्तु थोडे ही दिन बाद आपको पुन पत्नी-शोक सहना पडा। अिधरसे आप 'भारतमित्र' में जाने ही वाले थे कि बाबू शिवप्रसाद गुप्तने आपको

रोक लिया और 'आज' निकालनेकी योजना बनायी। मभी सन् १९२० से श्री बाबूराव 'आज के प्रकाशनकी व्यवस्थामें लगे। अिसी सिलसिलेमें आप लोकमान्य तिलकसे मिलने भी गये थे। तिलकसे आपकी यही अन्तिम मुलाकात थी। बनारसमें स्वयंसेवक रूपमें, कलकत्तामें पत्रकार रूपमें और पूनामें अेक नये समारम्भके प्रसंगमें आप अुनसे मिले। तिलकको श्री बाबूरावजी अुस समय अपना राजनीतिक गुरु मानते थे।

अिसी वर्ष जन्माष्टमीके दिन 'आज'का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ और श्री बाबूरावजी श्री श्रीप्रकाशके साथ संयुक्त सम्पादक बनाये गये। अिस समय तक बाबूरावजी अपनी देशभक्ति, क्रान्तिकारी भावनाओं, गुप्त समितियोंसे सम्बन्ध आदिके कारण काफी प्रसिद्ध हो चुके थे। 'आज'के सम्पादक रूपमें तो आपने देशमें राष्ट्रीयताकी अैसी लहर फैलायी कि 'आज' और पराड़करजी समानार्थक हो गये। सन् १९२० से लेकर सन् १९५३ तक थोड़ेसे समयके अतिरिक्त आप निरन्तर 'आज'के सम्पादकके रूपमें कार्य कर रहे हैं। 'आज'के स्वरूप-अंकनके जन्मदाता आपही हैं। आप ही हैं अुसके पालक पोषक और जनताके हृदयमें अुसका प्रतिष्ठापन करनेवाले। आपने जब 'आज'का सम्पादन प्रारम्भ किया तो गान्धीजीका अुदय हो रहा था और अुसीके अेक दो वर्ष बाद देशमें स्वाधीनताका आन्दोलन छिड़ गया। पराड़करजी गान्धीजीके भक्त बने और राष्ट्रको विदेशी आधिपत्यसे मुक्त करानेके लिअे अपनी लेखनीसे जनताके विचारोंमें क्रान्तिकी भावना भरने लगे। आपकी भक्ति, अन्धभक्ति न थी। अिसीका परिणाम था कि अनेक प्रश्नोंपर आपने गान्धीजीकी आलोचना भी की। आपने 'आज' में कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें अध्यक्षीय पदसे दिया गया पूराका पूरा भाषण प्रकाशित करनेकी व्यवस्था की। सन् '२२ और ३० के स्वदेशी आन्दोलनके देशके कोने कोनेके समाचार छापने शुरू किये। दमन-चक्रमें पीसे जानेवाले तथा देशकी स्वाधीनताके निमित्त बलिदान होनेवाले देशभक्तोंके समाचार आपके 'आज'में छपते थे। यही नहीं, अग्रलेख और टिप्पणियों द्वारा आपने देशको, देशकी जनताको और देशके नेताओंका मार्गदर्शन किया। कांग्रेस तथा अुसके सूत्रधार गान्धीजीने अेकबार नहीं अनेकबार 'आज'के परामर्शानुसार ही आन्दोलनकी धारा मोड़ी और अन्तमें विजयी हुअे।

राजद्रोहका मुकदमा

आपपर कअी बार राजद्रोहका मुकदमा चला और कअी बार पत्रसे जमानत मांगी गयी। अुस समय बर्मामें भ्रमण करनेवाले बाबा राघवदासका अेक लेख छापनेके लिअे आपपर मुकदमा चला और छह मासकी कैद अथवा १००० रु० जुर्माना देनेकी आज्ञा हुअी। आपने जेल जाना ही पसन्द किया था वरनें कि घरका सामान आदि कुर्क न करनेका अधिकारियोंसे आश्वासन मिल जाअे। तत्कालीन बनारसके जिला मजिस्ट्रेट श्री ओवेनने अिस प्रकारका आश्वासन देनेसे अिनकार किया। अुधर श्री प्रकाशजी आदिकी सलाह भी यही हुअी कि जुर्माना दे दिया जाअ। यह घटना सन् १९३१ औस्वीकी है।

'रणभेरी' का प्रकाशन

सन् १९३० में राष्ट्रीय आन्दोलनके समय 'आज' से जमानत मांगी गयी। सरकारी आर्डिनेंसके विरुद्ध पराड़करजीने पत्र बन्द ही करना अुचित समझा। पर देशमें स्वाधीनताका संग्राम चल रहा था। जनता तथा नेताओंको राष्ट्रीय आन्दोलनकी गतिविधिसे अपरिचित रखना भी सम्भव न था। अिसीलिअे आपने "आजके" समाचार बुलेटिन साअिक्लोस्टाअिलपर निकाले। जब सरकारने अिसे भी बन्द करनेकी आज्ञा दी तो 'रणभेरी' नामकी गुप्त पत्रिका आप निकालते रहे। यह पत्रिका जनतामें प्रसिद्ध हो गयी थी। पुलिस परेशान थी पर लाचार थी। अुसकी सारी दौड़धूप और छानबीन व्यर्थ जाती थी। अेक दिन चर्चामें श्रद्धेय पराड़करजीसे मैंने पूछा कि आप लोग पुलिसकी नजरोंसे कैसे बच निकलते थे, तो आपने बताया कि यदि हमारी लिपि और लिखावट देखकर पुलिस चाहती तो हमें तत्काल पकड़ सकती थी। पर यह बात अुसके ध्यानमें आयी ही नहीं। 'आज' के पुन प्रकाशनपर आपने राष्ट्रीय आन्दोलनके समाचार ही प्रमुखतासे प्रकाशित

किये। सत्याग्रहियोंकी पूरी सूची 'आज' में छापी जाती रही है। अुस समयके हिन्दी पत्रोंके लिअे यह सर्वथा नवीन और साहसका कार्य था।

पराड़करजीकी देन

श्रद्धेय पराडकरजीके चरणोंमें बैठकर कार्य करनेका सौभाग्य, अिन पंक्तियोंके लेखकको विगत दस वर्षोंसे प्राप्त है। अिस कालमें और अिसके पूर्वके दशकोंमें कुल मिलाकर विगत अर्ध शताब्दीमें अिस महान् साधक और युग-निर्माताकी सेवाअें चिरस्मरणीय रहेंगी। सर्वप्रथम अिस महान् तपस्वीने स्वाधीनता और राजनीतिक स्वतन्त्रताके लिअे जो प्रयत्न किया था वह सफल हुआ, 'आज के अग्रलेखों और टिप्पणियोंने तत्कालीन परिस्थितियोंमें विचारोंकी कैसी क्रान्ति की है, अब भी सहजमें ही जाना जा सकता है। पराडकरजीकी टिप्पणियाँ बड़े-बड़े अंग्रेजी पत्रोंकी टिप्पणियोंको मात कर देती थी और लोग अुनका लोहा मानते रहे हैं, आधुनिक समाचार-पत्रोंमें अग्रलेखोंका वह महत्त्व नहीं रह गया है, जो अुस समय था। अुस समय लोग साँस रोककर 'आज'के अग्रलेख टिप्पणियाँ पढनेको आकुल व्याकुल रहते थे। हिन्दी भाषाके पत्र तत्कालीन समयमें अत्यन्त हेय दृष्टिसे देखे जाते थे, किन्तु पराडकरजीने 'आज' द्वारा हिन्दी पत्रकारिता तथा भारतीय पत्रकारिताको नया मानदण्ड दिया और अुसका स्तर अितना अुन्नत किया कि लोग अिनका लोहा मानने लगे। यही नहीं, हिन्दीके समाचार-पत्रोंके सर्वांग सुन्दर रूपके लिअे 'आज' आदर्श पत्र माना जाता रहा है। यह सब कुछ पराडकरजीका ही चमत्कार रहा है और है आपकी सतत साधना। भारतमें हिन्दीके सभी समाचार-पत्रोंने 'आज'से प्रेरणा ली है और अुससे प्रभावित हुअे हैं, सहज भावसे यह कथन अन्यथा दृष्टिसे न देखा जाना चाहिये। अिन सबके मूलमें श्रद्धेय पराडकरजीकी कठिन तपस्या और साधना निहित है। प्राय लोग पराडकरजीके साहित्यके सम्बन्धमें प्रश्न करते हैं और अुसे पुस्तकोंके रूपमें खोजते हैं। वस्तुत पराडकरजीको 'आज' के सम्पादकीय लेख और सम्पादन कार्यके बाद अवकाश ही कहाँ मिला है कि वे पुस्तकोंका प्रणयन करें। 'आज' के अग्रलेख और बहुत-सी टिप्पणियाँ हिन्दी साहित्यकी स्थायी सम्पत्ति हैं, जिनकी ओर बहुत कम लोगोंका ध्यान अबतक गया है।

राजनीतिक स्वतन्त्रताके लक्ष्यमें सफलता प्राप्त करनेके अतिरिक्त जिस प्रश्नको लेकर 'आज'ने प्रारम्भसे ही आन्दोलन किया वह था कि हिन्दी राष्ट्रभाषा बनायी जाअे। सिद्धान्ततः अुसका यह लक्ष्य भी पूरा हो चुका है। अिसका भी सारा श्रेय पराडकरजीको ही है। पिछले वर्षों हिन्दीकी विशेषता बताते हुअे आप कहते रहे कि प्राय सभी भारतीय भाषाओंमें दूसरी भाषावालोंके लिअे घृणा व्यक्त करनेवाले शब्द हैं पर हिन्दीमें नहीं। अिसके अुदाहरण स्वरूप आप मराठीका 'रागडा', बंगलाका 'खोट्टा' आदि शब्द सम्मुख रखते। 'मिस्टर' के लिअे 'श्री' का प्रयोग सर्वप्रथम 'आज' ने ही चलाया और आज सरकारने भी अिसीको मान्यता प्रदान की है। अिसी प्रकार न जाने सैकडों हजारों नये शब्द 'आज' के स्तम्भोंमें नये गढे गये होंगे, जिनका पहले कहीं पता भी न था, पर अब वे सर्वत्र प्रयोगमें आते हैं। व्याकरण सम्बन्धी आपकी मौलिक धारणाअें हैं, जिन्हें अभी तक किसी हिन्दी व्याकरणमें निबद्ध नहीं किया गया है। यह है 'को' के प्रयोगके सम्बन्धमें। हिन्दी भाषा तथा साहित्यकी अिन्हीं सेवाओंका समादर आपको सन् १९३८ में हिन्दी साहित्य सम्मेलनके शिमला अधिवेशनका सभापति बनाकर किया गया। समकालीन और निकट होनेके नाते व्यक्तिकी विशेषताओंका विवेचन विश्लेषण प्राय. कठिन होता है। अिस स्थितिमें श्रद्धेय पराडकरजीकी विलक्षण और विशिष्ट अनेक विशेषताओंका दृष्टिसे ओझल होना स्वाभाविक है।

श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर—अेक भेंट

श्रीकमलेश

पहले दिन जब अिन्टरव्यूके लिअे समय मांगनेके लिअे गया तो 'आज' के सम्पादक श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर आराम कुर्सीपर बैठे थे। दुबला पतला शरीर ठिगना कद, नंगा बदन, पल्लीदार धोती और निश्छल वार्तालाप सब मिलकर किसी भी व्यक्तिको अुनकी सादगी और तपस्याका भान करानेवाले अुपकरण थे। अिससे भी अधिक चश्मेके भीतरसे चमकनेवाली आँखें सहसा सामने बैठे व्यक्तिको यह अनुभव करा देती हैं कि यह व्यक्ति गहराअी तक देखनेकी क्षमता रखता है। देखते ही बोले— जब मैं किसी मिलने वालेको आते हुअे देखता हूँ तो मुझे विपत्ति सी जान पड़ती है।

अिस अप्रत्याशित शब्दावलीसे मैं चौंक पड़ा। मुझे लगा कि अिस व्यक्तिको व्यर्थ समय बरबाद करनेवालोंसे बहुत पीड़ित होना पड़ा है। लेकिन मैं समय बरबाद करने नहीं गया था। मैं गया था हिंदी-पत्रकार जगतके अेक अनुभवी सम्पादककी जीवन गाथा जानने। अिसलिअे जब मैंने अपना अुद्देश्य बताया तो वे प्रसन्नतापूर्वक अिंटरव्यू देनेके लिअे राजी हो गये और दूसरे दिन तीन बजेका समय निश्चित कर दिया।

अिंटरव्यूका समय तो निश्चित कर दिया था पर अुस समय वे मूडमें थे। अिसलिअे घण्टे डेढ़ घण्टे तक साहित्यकारोंके संस्मरण सुनाते रहे। अुन संस्मरणोंमें अधिकांश संस्मरण आचार्य पं. महावीरप्रसादजी द्विवेदीके थे। अुन संस्मरणों द्वारा द्विवेदीजीकी जाग रूकता और साहित्य सेवाकी लगनपर प्रकाश पड़ता था। स्वयं अुनसे सम्बन्धित अेक संस्मरण मुझे बहुत अच्छा लगा। अुन्होंने कहा— अेक बार अैसा हुआ कि मैं सम्पादकीय लिखने बैठा। लिखनेके लिअे कोअी विषय नहीं सूझता था। बैठे-बैठे पर्याप्त समय बीत गया था और कम्पोजीटर सरपर सवार था। अिस बार मैंने 'क्या लिखें?' शीर्षक सम्पादकीय लिखा। वह आचार्य पं. महावीरप्रसाद द्विवेदीने पढ़ा और दूसरे ही दिन मेरे पास अुनका अेक पत्र आया। अिस पत्रमें मेरे अुस सम्पादकीयकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की गयी थी। अुस समय मुझे द्विवेदीजीकी गुण ग्राहकताका परिचय मिला। यह कहते कहते वे गदगद हो गये।

वे अिसी प्रकार संस्मरण सुनाते रहे। और भी सुनाते परन्तु मैं अुनकी कठिनाअी और मनःस्थितिसे अुसी समय परिचित हो गया था जब मुझे देखकर अुन्होंने मिलनेवालोंको 'विपत्ति' बताया था। अिसलिअे अिच्छा न रहते हुअे भी विदा लेकर चला आया।

दूसरे दिन जब पहुँचा तो अपने पत्रकार जीवनकी कहानी सुनाते हुअे अुन्होंने बताया— मेरा जन्म काशीमें हुआ और बचपन भी काशीमें ही बीता। मेरे चार भाअी और अेक बहन थे। मैं सबसे बड़ा था। पढ़ाअी का रूप अुस समय अुलटा था। आजकलकी भाँति स्कूल (लेज) नहीं होते थे क्लास होते थे। बारह वर्षकी अुम्रमें जब मैं पाँचवें क्लासमें था मैंने अंग्रेजी पढ़ना प्रारम्भ किया। पढ़नेका मुझे अितना शौक था कि बचपनमें ही अठारह पुराण पढ़ डाले थे। कसरत करना और अखाड़ेमें जाना गुण्डापन समझना था पर फुटबाल खेलनेमें बड़ा मजा आता था। अुस मजेकी सजा भी मुझे अच्छी मिली। मेरी हँसलीकी हड्डी टूट गयी।

जब पन्द्रह वर्षका था तब मेरे पिता चल बसे। सन १९०१-२ में प्लेगकी अैसी भयंकर बीमारी फैली कि गलियोंमें मुर्दे बिछे रहते थे। वह बीमारी माँको ले गयी। अुस समय मैं अेन्ट्रेन्समें था। परिवारमें सबसे बड़ा था। काशीमें रहना और बिना माता पिताके सबको सँभालना कठिन कार्य था। अिस कारण नौकरी

करनेकी सोची। सयोगकी बात है कि अुन्हा दिनों स्वदेशी आदोलनके प्राण और हितवादके सम्पादक श्री सखाराम गणेश देअुसकर अपनी बडी लडकीकी शादीमें काशी आये। वे मेरे दूरके मामा होते थे। नवयुवकोंको प्रोत्साहन देना अुनकी विशेषता थी। अुन्होंने मुझसे प्रश्न किया— औरंगजेब अच्छा था या अकबर?

मैंने कहा— अकबर।

अुन्होंने पूछा— क्यों?

मैंने बताया— अितिहासमें असा ही लिखा है।'

अिसपर अुन्होंने मुझे समझाया— 'असा कहना ठीक नहीं है। अकबरको अच्छा लिखनेवाले वे अंग्रेज हैं जो अकबरकी नीतिपर चलकर शताब्दियोंसे भारतको गुलाम बनाये हुअे हैं। अच्छे-बुरेका निर्णय स्वयं करना चाहिये। अकबर छद्मचलन था जब कि औरंगजेब सदाचारी था। अुसने अपने धर्मके द्रोहियोंका ही नाश किया, शत्रुको समदृष्टिसे देखा। अितना ही नहीं अुसने बहुतसे मंदिरोंको दान दिया था जो बहुत दिनतक मिलता रहा।' अुन्होंने मुझे मराठी सीखनेकी राय दी।

अस दिनसे मेरी प्रवृत्ति देश-सेवाकी ओर हुअी यहाँ तक कि मैं अेफ० अे० की परीक्षा भी न दे सका। मैंने कुछ दिन पोस्ट अेण्ड टेलीग्राफमें नौकरी की। लेकिन शीघ्र ही मुझे देअुसकरजीका अेक पत्र मिला जिसमें मुझे बंगवासीमें सहायक सम्पादक होकर जानेको लिखा था। मैं तत्काल कलकत्ते चल दिया। ठहरा भी अुन्हींके यहाँ। वहाँ मुझे खाने-पीनेका कोअी खर्च नहीं करना पड़ता था। फिर राजनीतिकी चर्चा भी वहाँ खूब होती थी। अुस वातावरणमें लाभ अुठाकर मैंने सप्ताहमें तीन दिन अिम्पीरियल लायब्रेरी (अब नेशनल लायब्रेरी) में जाना आरंभ किया। चार महीने बाद मुझे अुसका स्थायी पास मिल गया। जो कुछ मैंने पढ़ा अिसी बीच पढ़ा। घरपर क्रियात्मक राजनीतिक चर्चा और लायब्रेरीमें सैद्धान्तिक ज्ञान दोनों प्रकारसे मेरा मानसिक गठन प्रौढ़ता प्राप्त करने लगा। देअुसकरजीका आनंदवाजियोंसे भी सम्बन्ध था। अिसलिअे मेरा भी अुनसे सम्पर्क हो गया। यह मैंने १९०६ की बात है। देअुसकरजी अुस समय बंगाल नेशनल कालेजमें अितिहास पढ़ाते थे। अुन्होंने मुझसे वहाँ मराठी पढ़ानेके लिअे कहा। बंगवासीके प्रबंधकोंने अिसपर आपत्ति करते हुअे कहा कि 'बंगवासी' में रहते हुअे असा नहीं हो सकता। मैंने अिसपर त्याग-पत्र दे दिया और दूसरे ही दिन हितवार्ताका सम्पादक हो गया। हिन्दी समाचार-पत्रोंमें गंभीर राजनीतिक समावेश हितवार्तासे ही हुआ। 'प्रताप' में गणेशजी तब अच्छा कार्य कर रहे थे। सन १९१० में मैं दैनिक भारत मित्रमें गया जहाँ श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयीसे मेरा साथ हुआ।

सन १९२० में काशीमें श्री शिवप्रसाद गुप्तने 'आज' निकाला और मुझे अुसका सम्पादक बनाया। फलस्वरूप मैं कलकत्ता छोड़कर काशी आया। काशी आनेके दो कारण थे— अेक तो काशी मेरी जन्मभूमि थी और दूसरे बाबू शिवप्रसाद गुप्तका यह कहना था कि हिन्दीके पत्र बंगालसे ही निकलते हैं यू० पी० से नहीं। यू० पी० हिन्दीका क्षेत्र है अतः वहाँसे पत्र निकले और सफलतापूर्वक चले यह नितांत आवश्यक है। 'आज' में आनेपर अेक मित्रने कहा— 'यदि तुम पाँच वर्ष यहाँ टिक जाओ तो मेरी नाक काट लेना।' दस-पन्द्रह वर्ष बाद जब मैं अुनसे मिला तो मैंने अुनसे कहा— देखिये अभीतक मैं 'आज' में हूँ और आपकी नाक भी अपने स्थानपर है।' अिसपर वे लज्जित हो गये। यह मेरे पत्रकार जीवनकी कहानी है। पर मैं यह मानता हूँ कि कोअी अदृश्य शक्ति ही मुझे अिस ओर खींच ले गयी और राजनीतिमें गांधीजीके आनेके बाद तो पत्रकारिता ही मेरा जीवनाधार बन गयी।

लेकिन देअुसकरजीके अतिरिक्त आपके पत्रकारके निर्माणमें किन किन व्यक्तियोंका हाथ रहा? मैंने पूछा।

वे बोले— देअुसकरजीके अतिरिक्त सर्वश्री गोविन्दनारायण मिश्र, दुर्गाप्रसाद मिश्र और अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी प्रमुख हैं। गोविन्दनारायण मिश्रने भाषा तथा साहित्यका दृष्टिकोण और वाजपेयीजीने परिश्रमका जो दान दिया वह मेरे जीवनकी सबसे बड़ी सम्पत्ति है। वाजपेयीजी तो मेरे भाअीके ही सरीखे हैं। आपको आश्चर्य होगा कि जब मैं आनंदवाजियोंसे सम्पर्क रखनेके

कारण जेल गया तो वाजपेयीजीके पिता फूट फूटकर रोये थे। यही नही मरते समय भी अुन्होंने मेरे विषयमें पूछा था।"

पत्रकार कला और सफल पत्रकार बननेका प्रसंग चला तो वे कहने लगे— सफल पत्रकार बननेके लिअ सबसे पहली बात तो यह है कि पत्रकारमें कामकी लगन हो। अुसका हृदय काममें होना चाहिये। केवल नौकरीकी भावनासे काम करके कोअी सफल पत्रकार नही बन सकता। गी बाअी. चिन्तामणि, अमृतलाल चक्रवर्ती, श्री निवासन अिसके प्रमाण हैं कि कामकी लगन पत्रकार बननेमें कितनी सहायक होती है। अिसीलिअे जब कोअी युवक मेरे पास पत्रकार बननेकी अभिलाषा लिये आता है तब मैं अुससे कहता हूँ कि यदि तुममें कामकी लगन होगी तो नौकरी तुमको ढूंढती आअेगी, तुम्हें नौकरी नही ढूंढनी पडेगी। काम करो, फल कभी न कभी अवश्य मिलेगा। दूसरी बात पत्रकारकी भाषाकी है। अुसकी भाषा शुद्ध और मुहावरेदार होनी चाहिये। (पहले मेरा आदर्श श्री गोविन्दनारायण मिश्रकी भाषा थी पर वह जीवित भाषा न थी अिसलिअे मैंने अुसे छोड दिया और अपनी शैली स्वय बना ली।) मेरा विचार है कि भाषा हृदयके भावोंके अनुकूल होनी चाहिये क्योंकि भाषा वही अच्छी है जिसके शब्द कानोंको बुरे न लगें। शैली निर्माणमें जानसनकी भांति मैं भी यही मानता हूँ कि परिश्रमशीलता ही प्रतिभा है। तीसरी बात कभी शान्त न होनेवाली अधिकाधिक जाननेकी भूख है। मुझे स्वय पढनेकी बडी आदत रही है। अच्छी किताब मिली और मुझे दो तीन रात नींद नही आयी, अुसे ही पढता रहा। देअुसकरजी मुझे रोकते थे पर अब मैं अनुभव करता हूँ कि पत्रकारके लिअ अध्ययन अत्यत आवश्यक है। और पत्रकारको थोडा-थोडा सब जानना चाहिये तथा अुसे यह पता होना चाहिय कि अमुक विषय कहाँ मिलेगा। अिस प्रवृत्तिके वशीभूत होकर ही मैं 'गुल्शुन-सहिता' भी पूरा पढ गया था। 'आज' में आनेपर अिसीलिअे मेरा सबसे पहला कार्य यह किया कि 'अेन्साक्लोपीडिया ब्रिटानिका खरीदवाया। कहनेका अभिप्राय यह है कि पत्रकारको 'स्कॉलर' नही होना चाहिये। यदि अैसा होगा तो वह जन साधारण की रुचिकी चीज न लिख सकेगा। लेकिन थोडा जाननेके साथ अुसमें अितनी कला अवश्य होनी चाहिये कि कोअी अुसकी कमजोरी न पकड सके। चौथी बात यह है कि अनुवाद करते समय जिस भाषामें वह अनुवाद कर रहा है अुसकी अुसे पूरी जानकारी होनी चाहिये। अिसका मुझे निजी अनुभव है। मेरी मातृभाषा मराठी है हिंदी नही, अिसलिअे पहले बहुत दिन तक मेरे अनुवादमें मराठीका प्रभाव आ जाता था। वर्षों मैं अनुवादको सही करनेके लिअे दूसरोंसे पूछता रहा और अनुवाद दूसरोंसे कराता रहा। मेरा विचार है कि अिन बातोंको ध्यानमें रखनेवाला अवश्य सफल पत्रकार हो सकता है।

आपके लिखनेका ढंग क्या है?" मैंने चर्चा आगे बढायी।

अुन्होंने कहा—'मैं आज तक होल्डर-दावातसे लिखता हूँ। फाअुन्टेन पेनसे विचार विकृत हो जाते हैं। लिखनेके लिअे डेस्क या टेबुल होना आवश्यक है। अग्रलेख और टिप्पणी लिखनेके लिअे डिमाअी साअिजके कागजके आठवें हिस्सेवाले स्लिप बहुत अच्छे लगते हैं। मैं लाअिनदार कागजपर नही लिख सकता क्योंकि मुझे अैसा लगता है कि लाअिन अेक बाधा बनकर खडी है। बहुधा मैंने रातको लिखा है और दिनको पढा है लेकिन आवश्यकता पडनेपर रात और दिन दोनोंमें भी लिखा है। सन् २३-२४ में चश्मा लिया है तबसे रातको लिखना बन्द कर दिया है। लिखते समय जब मस्तिष्क कुहासेसे ढका जान पडता है तब मैं कोअी अच्छी पुस्तक अुठा लेता हूँ और पढने लग जाता हूँ। पृष्ठ-आधा पृष्ठ पढतेही मस्तिष्क स्वच्छ हो जाता है और मैं लिखनेकी स्फूर्ति अर्जित कर लेता हूँ। अिसके लिअे यह आवश्यक नही कि पुस्तक हिन्दीकीही हो, वह किसी भी भाषाकी हो सकती है। यह देअुसकरजीका मत्र है जो बडा लाभप्रद सिद्ध हुआ।'

पत्रकारोंकी आर्थिक स्थितिपर बातचीत होने लगी तो मैंने अुनसे हिन्दी पत्रकारोंके ट्रेड यूनियनके आधारपर हुअे सगठनका जिक्र किया और कहा कि

अिस समय मुझे तो यही अेक मार्ग पत्रकारोंके हितोंकी रक्षाका दिखायी देता है। पराड़करजी अिसमें अपनी असहमति प्रकट करते हुअे बोले—'ट्रेड हो तो ट्रेड यूनियनकी जरूरत है। हिन्दीमें पत्र लाभकी दृष्टिसे नहीं निकाले गये। अनेक पत्र घाटेमें चले हैं और आज भी चल रहे हैं। अमेरिका और ब्रिटेनकी-सी स्थिति यहाँ नहीं है। वहाँ ट्रेड है अिसलिअे ट्रेड यूनियन भी है। मेरा निजी अनुभव है, जिसके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि मालिकोंको कुछ भी नहीं मिलता। मुझसे खराब स्थिति बहुतोंकी नहीं है पर मैं ट्रेड यूनियनके विरुद्ध हूँ। मेरी दृष्टिमें पत्रकारिता अेक मिशन है। मिशन मानता हूँ अिसीलिअे वृद्धावस्थामें भी मेरी यह दशा है कि मैं बिना पत्रका काम किये बीमार हो जाता हूँ। मुझे लगता है कि जब तक मैं यह काम कर रहा हूँ तभी तक जीवित हूँ।"

यहाँ वे कुछ रुके और सहज आवेशमें आकर कहने लगे—"पत्रकारोंकी जो स्थिति खराब है अुसका कारण है और वह यह कि वे बेकारीके कारण अिस पेशेको अपनाते हैं। पहले अैसी बात नहीं थी। पहले लोग नामके लिअे आते थे। दूसरी बात यह है कि अधिक पत्रोंका प्रकाशन भी बन्द होना चाहिये। चुनावोंके जमानेमें तो बरसाती मेंढककी भाँति पत्र निकलते हैं और पत्रकार-कलाको कलंकित करते हैं। यदि अिसी प्रकारकी स्थिति रहेगी तो पत्रों और पत्रकारोंका स्तर कैसे अूँचा होगा। बीस वर्ष पहले पत्र-सचालकों और पत्रकारोंके सम्बन्धका पता अिससे लगता है कि 'आज' में रहते हुअे मैंने अपना वेतन घटाया था, क्योंकि 'आज' की स्थिति खराब हो गयी थी। अिसपर बाबू शिवप्रसाद गुप्तके आँसू आ गये थे।"

"लेकिन आजके अनेक पूँजीपति पत्र-संचालक बाबू शिवप्रसाद गुप्त नहीं है और अुनकी दृष्टि शोषण की है। अुनमें कैसे सुधार आअेगा ?"

"अिस सम्बन्धमें मैं यही कहूँगा कि पत्रकारोंको अपनी योग्यता और परिश्रम तथा 'मिशनरी स्प्रिट' से पत्र संचालकोंको यह अनुभव करा देना चाहिये कि बिना अुनके काम चलाना कठिन है।"

जब मैंने अुनसे हिन्दी समाचार-पत्रोंकी वर्तमान दशा और भविष्यकी संभावनाओंके विषयमें पूछा तो अुन्होंने कहा—'हमारे आजके पत्रोंका स्तर बंगला, मराठी और गुजरातीके पत्रोंसे अच्छा है। यह 'प्रताप' तथा 'आज' जैसे मिशनरी पत्रोंके कारण ही हुआ है। 'आज' का विश्वास तो अंग्रेजी पत्रोंसे भी अधिक किया जाता है और विरोधी तक अुसकी प्रशंसा करते हैं। भविष्य भी पत्रोंका बड़ा अुज्ज्वल है। कारण, राजनीतिज्ञोंमें ८० प्रतिशत अंग्रेजी न जाननेवाले हैं और हिन्दी पत्रोंको ही अपनाते हैं। पाठकोंकी संख्या भी बराबर बढ़ रही है। यह शुभ चिन्ह है।"

अन्तमें चाय पीते समय कम्यूनिज्मका जिक्र आ गया। अिस विषयमें अुनका मत था कि मार्क्सवादसे मनुष्य मशीन बनता जा रहा है, जिसमें मेरा विश्वास नहीं है। अर्थशास्त्रकी अतिसे, जिसका मार्क्सवाद हामी है, नैतिकताका ह्रास अवश्यम्भावी है। यदि अैसी व्यवस्था आयी तो आदमी आदमी न रहेगा। अिससे आर्थिक नियमोंको मानवीय नियमोंपर आधारित करना अिस देशके लिअे नितान्त आवश्यक है।

जब मैं चलने लगा तो अपनी जिन्दादिलीका सबूत देते हुअे मजाकमें अुन्होंने कहा—"आपने मुझे दोनों रूपोंमें देख लिया। कल दाढ़ी मूँछके साथ देखा था, आज सफाचट। शायद आपको पता नहीं कि टाँग टूट जानेसे पिछले ६-७ महीने बिस्तर पर पड़ा रहता था। हजामत बनवानेमें कठिनाअी होती थी अिसलिअे बनवाता ही न था। अब अच्छा हुआ तो अुसे साफ करा दिया।"

अिसपर मैं हँस पड़ा और प्रसन्न हृदयसे नमस्कार कर चला आया।

मेरी दक्षिण-भारत-यात्राके दस दिन

प्राध्यापक विनयमोहन शर्मा अेम अे

दक्षिणके सम्बन्धमें हमारा ज्ञान कितना सीमित है, कितना अधूरा है! हम हर दक्षिणवासीको जिसकी आकृतिपर श्यामता छायी दीख पडती है मद्रासी कह देते हैं और हर द्राविड भाषाको मद्रासी। कभी भाषा विज्ञानकी पुस्तकोंतकमें तमिळको तामिल लिखा मिलता है। दक्षिणकी भाषाओंका शुद्ध नामोच्चार तक हम नहीं कर पाते और हम कहते हैं भारत अेक है, अविभाज्य है! जिस दक्षिण भारतने आचार्योंने अुत्तर भारतमें पवित्र वैष्णव धर्मका संचार किया, जिसके कारण हिन्दीका भक्तिकाल स्वर्णयुग कहलाया, असी दक्षिणके प्रति हमारी अितनी अुदासीनता चिन्तनीय है। पुरानी सरस्वतीकी फाअिलोंमें राजा रविवर्माके चित्रोंकी बडी प्रतिष्ठा थी, अुनपर हिन्दी कवि भावमयी कविताअें लिखते थे। मनमें बात अुठती थी — रविवर्माका वह कौन देश होगा जहाँ अितनी मोहक कला पनपती है, कौनसे दृश्य चित्रकारके अन्तरमनपर अुल्लासपूर्ण प्रेरणामूर्ति अंकित करते होंगे? लोगोंसे सुना, वह केरल है। फिर जब दर्शनकी ओर थोडी रुचि हुअी तो शंकराचार्यकी जन्मभूमिकी जिज्ञासा बढी। अुसके सम्बन्धमें भी सुना — वह केरल है। वर्षोंसे मन केरलके दर्शनोंके लिअे भीतरही भीतर आकुल था। अिस वर्ष परिस्थितियोंने केरल दर्शनका अवसर ला दिया —

> जो अिच्छा करिहौं मन माहीं।
> रामकृपा कछु दुर्लभ नाहीं॥

हाँ तो १३ अप्रैलको मद्रास अेक्सप्रेससे श्रीमतीजी सहित दक्षिण जा रहा हूँ — गाडी चली जा रही है, गर्मी रंग ला रही है, फूलोंके पेडोंको देखकर पद्माकरकी पंक्ति याद आ रही है —

> किंशुक गुलाब कचनार औ अनारनकी
> डारन पै डोलत अंगारनके पुंज हैं।

यहाँ वहाँ आमोंपर बौर लगा हुआ दिखाई देते हैं और अुनमें छिपी कहीं बौराअी 'कोयलिया की कूक' भी कानमें पड जाती है, पर अिससे तपनमें कमी नहीं मालूम पडती। राम राम करते रात बीती। सबेरा होते ही बजवाडा पर गाडी रुक गयी। कृष्णा नदीका पुल काफी बडा है, नहर भी बडी है। छींद (खजूर)के पेड चारों ओर नजर आते हैं। बाँस या खजूरकी छतवाली झोपडियाँ खडी दिखायी देती हैं। खेतोंकी काली मिट्टी अुर्वरा प्रदेशकी याद दिला देती है। औंटोंके पक्के मकान बहुत कम दृष्टिगोचर होते हैं। प्रातःकाल स्टेशनोंपर फूलोंकी वेणी (मालाअें) बिक रही हैं। सधवा स्त्रियाँ अुन्हें खरीदकर अपने केशोंको सँवार रही हैं। रेल्वे स्टेशनोंपर शुद्ध हिन्दीमें विज्ञप्तियाँ लिखी हुअी हैं। Vegetarian Refreshment room के नीचे शाक अुपाहार गृह अंकित है। हमारे साथ अेक तमिल सज्जन भी यात्रा कर रहे हैं। टूटी फूटी हिन्दी बोल लेते हैं। बातचीतके सिलसिलेमें जब मैंने अुनसे कहा कि त्रावनकोर-कोचीन राज्यमें हिन्दीके प्रति जनताका बडा अुत्साह है। वहाँ युनिवर्सिटीमें भी बहुत बडी संख्यामें छात्र हिन्दी पढते हैं। अिसपर वे बोले — आप जानते हैं वे हिन्दी विषय क्यों लेते हैं? हिन्दीमें अुत्तीर्ण होना बहुत आसान है। दूसरे विषयोंमें अधिक श्रम करना पडता है। तो मैंने कहा हिन्दी सीखना कठिन नहीं है। लेकिन मलयाली हिन्दी सीखकर भी बोल नहीं पाते, केवल लिख लेते हैं। ये महाशय मलियालियोंका श्रेय देनेमें बडे कृपण जान पडे। अिनके द्वारा दक्षिणके कभी स्थानों और व्यक्तियोंका ज्ञान हुआ। बजवाडासे समुद्रसे दस मीलके अन्तरसे गाडी जा रही है। अिधर अुधर बालूके मैदान हैं। खेतोंमें कुअें हैं। नजदीक पानी है। स्त्रियाँ अुतरकर अपनी गगरी भर लेती हैं। यह आन्ध्रका सम्पन्न भाग कहा

जाता है। गाडी किसी स्टेशनपर रुक गयी। अेक भिखारी गाता चला जा रहा है—

" संसारम् प्रेम सुधा नवजीवन सारम्, संसारम् "

यह तेलुगु भाषी भाग है। संस्कृत प्रचुर शब्दावलीसे भिखारीके स्वरका भाव हृदयगम हो जाता है! बडी लोच है अुसके कठमें! अिस ओर कच्चे और पके काजू प्लेटफार्मपर बिकते दिखायी देते हैं। गोल काजू, रसदार, कुछ मीठा पर अधिक कसैला होता है। चूसकर खाया जाता है। भुंजा हुआ काजू सोंधा और स्वादिष्ट लगता है। यद्यपि अिस हिस्सेमें यह बहुत पैदा होता है तो भी सस्ता नही है। जिस प्रकार नागपुरमें संतरे खूब पैदा होते हैं, परन्तु बाहर निर्यात होनेके कारण मँहगे बिकते है, वही हाल यहाँके काजुओंका है। विदेशी अेजेन्ट सब ढो ले जाते हैं। स्टेशनोंपर छोटे पीले केलोंकी घौर भी बहुत दिखलायी देती है। सूर्यास्त होनेके पूर्व ही गाडी मद्रास स्टेशनपर खडी हो गयी। हमें त्रिवेन्द्रम जाना था। अत. हम यहाँसे अुतरकर मद्रासके मीटर गेजके स्टेशन अेगमोर पहुँचे। मद्रास स्टेशनपर अेक अपरिचित तरुणने बडा सौजन्य प्रदर्शित किया। वह हमें टेक्सी कराकर अेगमोर ले गया। टिकटघरमें प्राय सभी महिला कर्मचारिणी थी। अेकने टिकिटकी चिट्ठी काटी, दूसरीने टिकिट दी, तीसरीने टिकिट नम्बर नोट किये और टिकिट कलेक्टरके नाम अेक चिट दी जिससे वह हमें सुरक्षित स्थानपर आसीन कर दे। प्लेटफार्मपर बहुत देरतक त्रिवेन्द्रम अेक्सप्रेस नही आयी। हम प्रतीक्षा कर ही रहे थे कि अेक लुंगी धारी गौर वर्ण महाशय मेरे पास आकर पूछने लगे कि 'आप ही शर्मा हैं न ?" मैंने कहा, "जी हाँ"। 'मेरी साली मीनाक्षीने आपके यहाँ आनेकी सूचना दी थी, मेरे लायक कोओ काम हो तो बताअिये"। मैंने कहा, "विशेष तो कुछ नही है"। फिर भी वे दौडे-दौडे दो चार चपातियाँ, शाक और फल ले ही आये। बडी आत्मीयता प्रदर्शित की। अुनकी साली मीनाक्षी मैसूरमें रहती है। अुन्होंने नागपुरसे हिन्दीमें अेम. अे अुत्तीर्ण किया है। यही अुनकी आत्मीयताका कारण था।

रातभर त्रिवेन्द्रमकी ओर गाडी बढ़ती गयी। प्रात मधुराय (मदुरा) आया। चारों ओर मंदिरोंके दर्शन हुअे। मदुराय मंदिरोंका नगर ही कहलाता है। वेजवाडाके पूर्व जहाँ धरती सूनी और सूखी दिखायी देती थी, वहाँ अुसके बादमें वह हरी-भरी हो जाती है। क्योंकि यहाँ तो—

"मेहा बरसिबो करे रे।
नान्हो नान्हो बूंद मेघ घन बरसे
सूखे सरवर भरे रे।"

अैसे मनोरम दृश्योंको देखकर मनमें अुल्लासकी सीमा नही रह जाती। पर जब यह कल्पना अुठती है कि यह सुन्दरता शीघ्र ही आँखोंसे ओझल हो जाअेगी, तब ये पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं—

" बहुत दिना पै पीतम पायो
बिछुरनको मोहि डर रे।"

त्रावणकोरकी सीमा लगते ही भूमि तृण और जनसकुल हो जाती है। पग-पगपर खेत, खलिहान और छोटे बडे घर दिखलायी देने लगते हैं। हरे पहाड-पहाडियों और मैदानोंको देखकर जी हरा हो जाता है। नारियल, कदली और खजूरके बडे-बडे वन खडे हुअे हैं। हर मकानके आँगनमें नारियलके दस-पाँच पेड लगे हुअे हैं। ताड तमालकी जोडी भी भली लगती है। त्रावणकोरको दक्षिणका कश्मीर कहा जाता है। यहाँ नारियलके पेडके विभिन्न अंगोंसे पूरा मकान बना लिया जाता है। कोलम स्टेशनसे बडी दूरतक समुद्रका जल पृथ्वीके भीतर प्रविष्ट होकर कोचीन 'हारबर' तक जाता है, जिसे 'बेक वाटर्स' कहते हैं। जिसके दोनों ओर नारियलके पेडोंकी कतारे लगी हुअी हैं। लोग नौका और छोटे जहाजोंमें कोचीन तककी यात्रा कर सकते हैं। ससारके रमणीक स्थानोंमें अिसकी गणना है।

मलयाली स्त्रियाँ श्वेत अुज्ज्वल रगकी साडियाँ अधिक पसद करती हैं और तमिल स्त्रियाँ लाल और हरे रगकी। अिस प्रदेशके अधिकाश स्त्री पुरुषोंको देख-कर अैसा ज्ञात पडता है मानो अुन्होंने अपना समस्त सौंदर्य प्रकृति देवीको प्रदान कर दिया है। अिसीलिअे

तो प्रकृति यहाँ अितनी अधिक मनमोहक बन गयी है कि—

ज्यों ज्यो निहारिय नरे ह्वै ननन
त्यो यो खरी निसर सुनिकाअी ।

असा जान पडता है कि यगोनक देखनपर भी हमारे नत्रोकी तप्ति नही होती ।

जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपत भल विद्यापति ।

शामको गाडी त्रिविन्द्रम पहुच गयी यहाँ हिन्दीके पुरान राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचारक प्राध्यापक बन्धुओंसे भेट हुअी । अुनमे सवश्री चन्द्रहासन चिदम्बरम कुमारी जोशुआ विलायुधन पी के केशवन नायर अय्यर अग्रहम आदि तो प्राय हमारे साथ ही रहे अिनकी हिन्दीके प्रति निष्ठा प्रशसनीय है । अिन्होंने अपने सस्मरण हिन्दी प्रचार सभाम हिन्दी सीखनके मधुर अनुभव सुनाय । अिनमे कअी तो राष्ट्रभारती के सम्पादक श्री हृषीकेश शर्माके शिष्य थ जो अपन गुरुके प्रति बडी श्रद्धा भावना रखते थ । आजसे ३५ वष पूव अत्तर भारतके जिन सज्जनोने राष्ट्र सेवा भावनासे प्रेरित होकर दक्षिण भारतमे हिन्दी प्रचार काय किया अुनमे अिनकी बडी ख्याति है—प प्रतापनारायण वाजपेयी प हृषीकेश शर्मा प अवधनन्दन प देवदूत विद्यार्थी प रघुवरदयालु मिश्र प रामानन्द शर्मा प व्रजनदन शर्मा श्री जमुनाप्रसाद । मध्यप्रदेशके दो ही व्यक्ति थ —अक हृषीकेशजी और दूसरे जमुनाप्रसादजी (अिनका देहान्त हो गया है) । अिनके साथ दक्षिणके प हरिहर शर्मा शिवराम शर्माकी भी हिन्दी सेवाअ अत्यन्त मूल्यवान ह । यहाँ लोगोने बतलाया कि या तो अुत्तरसे बहुतसे सज्जन दक्षिणमे हिन्दी कायके सम्बन्धमे आय पर वे अधिक समय तक ठहर नही सके । प रघुवरदयालजी और अवधनन्दनजी तो अब तमिळ प्रान्तमे अितन अधिक अकाकार हो गय ह कि अुन्ह भिन्न प्रान्तीय मानना ही अप्रस्तुत सा है । दोनोका तमिळ भाषापर अच्छा अधिकार है ।

त्रिविन्द्रमम दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार-सभाका काय बडी शीघ्रगतिसे चल रहा है । केरलके ६०२ हाअीस्कूल और अिन्टर कालेजोम हिन्दी पढायी जाती है । त्रावणकोर विश्वविद्यालयम बी अ तक हिन्दी विषयका अध्यापन होता है वहा अिसवष केवल अिन्टर-मीजियट परीक्षाम लगभग पाँच हजार छात्र छात्राअ अच्छिक रूपम हिन्दी विषय लेकर बठी थी । बी अ म पाँच सौ से अधिक विद्यार्थी हिन्दी लेकर ग । यहाँ बी काम और बी अस-सी म भी हिन्दीका अक प्रश्न पत्र अनिवाय है । केरलम सुदूर कन्याकुमारी तक हिन्दीके प्रति जनताम बहुत अुत्साह है । हिन्दीका सस्कार सस्कृतिसे सम्बद्ध हो गया है ।

सभ्रान्त परिवारमें स्त्रियोका हिन्दी सीखना अुतना ही आवश्यक है जितना सगीत और नत्य । अिन दिनो अक विनोदम यहाँ कहा जाता है— हिन्दी ? अरे यह तो लडकियोका विषय है । त्रावणकोर विश्वविद्यालयसे सम्बद्ध प्राध्यापकोम श्री चद्रहासन हिन्दीके पुरान लेखक ह स्व प्रमचन्द और श्री कन्हैयालाल मुशी द्वारा सम्पादित हस म अिनके लेख छपते रहे ह । अिधर दिल्लीके देवनागर म भी अिनके मलयाळम साहित्य परिचयात्मक लेख छप रहे ह । जिन्होंने केरलमे हिन्दी प्रचारका बहुत स्तुत्य काय किया है कुमारी जोशुआजी विश्वविद्यालयके महिला महाविद्यालयकी वरिष्ठ प्राध्यापिका ह । पूण खादीधारी और गाधीवादी ह । वर्धामे गाधीजीके आश्रमम काफी समय तक रह चुकी ह । हिन्दीम अम अ ह । अिन्होंने श्री जिलाचन्द्रजीके सन्यासी श्री रामकुमार वर्माके रेशमी टाअी और श्री पथ्वीनाथ शर्माके अपराधी का मलयालमम अनुवाद किया है । मलयालमम अिन्होंने सेवासदन नामक अुपन्यास भी लिखा है । आप अीसाअी महिला ह और सवथा निरामिष भोजी ह । केरलम कअी अीसाअी परिवार ब्राह्मणकी नाअी सात्विक आहारी ह ।

प्रा चिदम्बरम्ने कअी तमिल कहानियोका हिन्दी अनुवाद किया है । राष्ट्रभारती म राष्ट्रकवि तमिळके सुब्रह्मण्य भारतीके काव्यगीत छप रहे हैं । और प्रतिभा में तमिलकी कहानी क्रमश आ रही है । श्री अय्यरने भी कअी छात्रोपयोगी रचनाअ की है । श्री विलायुधनम भी लिखनकी प्रवृत्ति है ।

त्रिविन्द्रमके बाजारोंमें आपको बहुतसे स्त्री-पुरुष नंगे पैर चलते दिखलायी देते हैं। अिसका कारण यह है कि यहां प्रायः बारहो महीने बून्दा-बांदी होती रहती है। अिसलिअे कीचडसे बचनेके लिअे लोग प्राकृतिक ढंगसेही नंगे पांव चलते हैं। लुंगी, कुर्ता पुरुषोंका और अधिकांश शुभ्र साडी स्त्रियोंका परिधान है। विश्व-विद्यालयके कार्यसे निवृत्त होकर सबसे पहिले मैंने समुद्र दर्शनकी अिच्छा की। प्राध्यापक चन्द्रहासन और विलायुधनके साथ हम हवाअी अड्डेको छूते हुअे समुद्र तटपर गये। यहां समुद्र बडा अुग्र है। खूब आवाज करता है। सामने दूरसे लहरें छोटी-छोटी विन्दियोंके समान हिलती-डुलती चली आ रही हैं। अेकके बाद अेक अूपर अुठती जा रही है, पहाड-सा बना रही हैं। अेकही समयमें न जाने कितने पर्वत बन रहे हैं—मिट रहे हैं। लहरें दौड़ती हुअी चली आ रही हैं, हमारे पैरोंको छूकर न जाने कितनी दूर पीछे चली गयीं। हम अुनमें घिर गये। वे हमें बहाना चाहती हैं, पैर जमीनसे अुखडना चाहते हैं, हम प्रयत्न कर अुन्हें जमाये हुअे हैं, बस क्षणभरहीमें लहरें हमें छोडकर भाग गयीं, हमारे गीले पैर पानीसे दूर हो गये-लगता है लहरें अब नहीं आअेंगी पर कुछही क्षणोंमें फिर टकराकर झोंका आया और हमारे पैरोंपर बिखरकर हमें पुनः घेरकर पीछे और फिर तेजीसे आगे दौड गया। हम लहरें लेनेमें अभ्यस्त हो गये। पैर जमे रहते हैं। लहरें आती हैं—जाती हैं। अब भय नहीं लगता, आनन्द आता है। कुछ फासलेपर मछुअे अपनी नौका लहरोंमें डाल रहे हैं। वह देखो, दो मछुओंने अपनी कश्ती लहरोंमें फेंक दी, वे भयंकर समुद्रमें जाना चाहते हैं। लहरें कश्तीको बार-बार अूपर नीचे कर रही हैं। लगता है, डूब गये। बड़े संघर्षके बाद मछुअे समुद्रकी सतहपर नौका खेते दिखलायी दिये। प्रकृतिपर विजय पाकर ही मनुष्य दम लेता है। सामने बहुतसे मछुओंकी नावें समुद्रमें तैर रही हैं। समुद्र जब कुपित होता है तब न जाने कितने मछुओंकी वह समाधि बन जाता है। यों जब प्रात मछुआ घरसे निकलता है, वह शामको वापस लौटनेकी शपथ नहीं ले सकता। वह समुद्रके गर्भमें निर्दयिनी लहरोंसे खेलता है जो अुसके सरपर मौत बनकर नाचती रहती है।

समुद्र-दर्शनके पश्चात् हम लोग अुस अजायब-घरमें गये जहां समुद्रकी तरह-तरहकी मछलियों, सर्पों, केकडों आदि प्राणियोंको रक्षित रखा गया है। कहा जाता है कि भारतमें यह मत्स्यालय अपने ढंगका अेक ही है। यहांसे हम 'अनन्त शयनम्'का मंदिर देखने गये। मंदिरमें सिला हुआ वस्त्र या जूता पहनकर जाना निषिद्ध है। महिलाओंकी साडी सिला वस्त्र न होनेके कारण मंदिरमें प्रवेश पा सकती है। मंदिरमें मूर्तिकी विशालता दर्शनीय थी। वहां बडा भारी 'हाल' था जहां पहिले हजारों ब्राह्मण भोजन किया करते थे। दक्षिणके विशाल मंदिरोंकी कला अपना अलग ही वैशिष्ट्य रखती है।

त्रिविन्द्रमसे कन्या कुमारीतक लगातार बस्ती होनेसे अैसा जान पडता है मानो त्रिविन्द्रमही पचास मीलतक चला गया हो। अितनी घनी आबादी भारतके किसी भागमें नहीं। मार्गमें गाडीके पंचर हो जानेसे हम अेक निकटवर्ती कुअेंपर गये जहां तमिल स्त्रियां ताडकी बनी हुअी बाल्टीसे पानी खींच रही थीं। अुन्होंने हमें प्यासा अनुमान कर स्वयं पानी पिलाया। अुन्हें हम अजनबियोंको देखकर कुतूहल होता था और हमें अुनके नीचेतक लटके फटे कानोंमें सोनेके कर्णफूल देखकर आश्चर्य होता था। अैसा जान पडता था कि कान अब अधिक भार न सहकर फट ही पड़ेंगे। दक्षिणमें मामूली स्त्रियां सोनेके आभूषण पहनती हैं। सम्भ्रान्त परिवारकी स्त्रियां हीरे, मोती, जवाहरातको काममें लाती हैं। सोना अुनके लिअे हलकी धातु है।

हम सूरज डूबनेके पहिले कन्या कुमारी पहुँच गये। समुद्रतीरपर भव्य दृश्य देखकर आनंदित हो गये। तीन समुद्रोंका मिलन! हमारे सम्मुख हिन्द महासागर, दायीं ओर अरब सागर और बायीं ओर बंगालकी खाडीका जल अुछल अुछलकर तरंगित हो रहा था। बहुतसे नर-नारी समुद्रमें सूर्यास्त देखनेके लिअे अुत्सुक थे, पर बादल सूर्यको रहरहकर ढांप लेते थे। संसारमें यही स्थान है जहां सूर्य समुद्रमें डूबता और समुद्रसे अुगता है। हम सूर्यास्तका दृश्य देखनेके लिअे अस्त-दिशाकी ओर आंख गडाये रहे, पर बादलोंने सूर्यको अपने आंचलसे मुक्त

नहीं दिया धीरे धीरे आकाशमें चन्द्रकी रेखा चमकने लगी। बादल सूर्यको डुबाकर ही छटे। निराश लौटकर हम कुमारी मन्दिरमें पार्वतीके दर्शनके लिये गये। यहाँ भी 'अुघारे बदन जाना पड़ता था। यहाँकी पार्वतीके सम्बन्धमें अेक कथा है कि जब अिनका शिवसे परिणय होनेवाला था, शिवजीकी बरात वहाँ तक नहीं पहुँच पायी। कुमारी पार्वती अुनकी खोजमें चली गयी पर अुनका पता नहीं चला। सवेरा होनेपर ज्ञात हुआ कि शिवजी शुचिन्द्रम् तक आ गये हैं। पर विवाहका मुहूर्त रात ही में था। अतः पार्वतीजीको अुदास होकर अपने निवास-स्थानपर लौट आना पड़ा और तभीसे वे 'कन्या-कुमारी' कहलाकर अिस मन्दिरमें 'वास' करती हैं। मन्दिर समुद्रके किनारे है, जहाँ समुद्रकी शोभा अवर्ण्य है। रातको दूरसे आते हुअे जहाजोंका प्रकाश समुद्रपर तैरता हुआ दीपक-सा जान पड़ता है। कन्याकुमारीसे लौटते समय हमने शुचिन्द्रम्‌के भव्य मन्दिरके दर्शन किये। अिसका 'गोपुरम्' (मन्दिरद्वार) काफी अूँचा है। भीतर काले पत्थरकी विशाल हनुमानकी मूर्ति है। यह मुख्यतः शिवमन्दिर है। शिवका सजीव नादिया भी दर्शनीय है। मन्दिरके अेक प्रस्तर स्तंभकी यह विशेषता है कि अुसे हाथसे ठोकनेपर धीमी धीमी सुरीली आवाज निकलती है 'सरगम' के समान।

त्रिविन्द्रम् जिसे तिरुअनन्तपुरम् भी कहते हैं रातको लौट आये। त्रिविन्द्रम् और कन्याकुमारीके बीचकी भूमि सुपारी काजू केला, नारियल, धान आदिसे अुर्वरा है। समय कम होनेसे मलयालमके कओ साहित्यकारोंसे भेंट नहीं हो पायी। पर यह जानकर हर्ष हुआ कि मलयालम् भाषामें भी तुलसी-कृत रामायणका अनुवाद हो चुका है। मलयालम साहित्यमें यौन-विषयक कृतियोंका चलन अधिक बढ़ा है प्रगति-वादकी भी लहर है।

दूसरे दिन विश्राम कर रातको मदुरा रवाना हो गये। हमारे मित्र प्रा॰ चिदम्बरम्‌ने वहाँके हिन्दी प्रचार सभाके कार्यकर्ताओंको हमारे आनेकी सूचना दे दी थी। त्रिविन्द्रम्‌में चन्द्रहासनके अतिरिक्त श्री पी के केशवन नायर, कुमारी जोशुआ, चिदम्बरम् मारद्वाज और अेब्राहम्‌ने हमारे लिअे बहुत कष्ट अुठाये, जिसके लिअे हम अुनके कृतज्ञ हैं। मदुरामें या मधुराश्रीमें श्री गुरुस्वामी और अुनके सहयोगी श्री रत्नसभापतिने हमें वहाँके दर्शनीय स्थल दिखलाये जिनमें मीनाक्षीका मन्दिर देश प्रसिद्ध है। यह बहुत विस्तीर्ण है जो कओ गोपुरम्‌से घिरा हुआ है। गोपुरम् अूँचा गुम्बदके समान द्वार" है जिसमें अनेक मूर्तियोंमें पौराणिक गाथाअें अंकित हैं। मन्दिरके प्रत्येक खम्भेपर सिंह हाथीके अूपर सवार दिखलाया है। ये बड़ी सजीव मूर्तियाँ हैं। यहाँ अेक हजार खम्भोंवाला बड़ा 'हॉल' है, जहाँ हजारों नर नारी प्रसाद-पान कर सकते हैं। मन्दिरोंकी कलामें प्राचीन भारतीय संस्कृति बोलती है। दक्षिणके मन्दिरोंमें कुछ दाक्षिणात्य सन्तोंकी प्रतिमाअें हैं, जो सम्भवतः कदाचित ६३ हैं। मन्दिरोंमें अिनकी वाणियोंका अध्ययन, मनन होता रहता है।

शामको मदुरामें हिन्दी प्रचार सभामें स्थानीय साहित्यिकोंकी अेक गोष्ठी भी हुअी जिसमें तमिल साहित्यके विद्वानोंने भी भाग लिया। ज्ञात हुआ तमिलके कवि कम्बरकी तुलना तुलसीके साथ हो सकती है। तमिल भाषा सर्वथा अपने पैरोंपर खड़ी हो सकती है, अुसे संस्कृतकी बैसाखी लेनेकी बिलकुल आवश्यकता नहीं। हिन्दीके प्रति यहाँ बड़ा अुत्साह पाया गया। नगरके कओ स्थानोंमें पुरुष और स्त्री-वर्ग चल रहे हैं, जहाँ शिक्षिता महिलाअें पढ़ती पढ़ाती हैं।

वहाँसे रामेश्वरम् धनुष कोटि भी गये। धनुष कोटिसे लंका थोड़े ही फासलेपर रह जाता है। 'अगिन बोट' आती जाती है। यहाँ तीर्थयात्री समुद्रकी लहरोंमें स्नान करते हैं। रामेश्वरम्‌में मन्दिर तो विशाल है पर स्वच्छता नहीं। कओ तीर्थ-कूप हैं, जिनका पानी मीठा है। यहाँ भी हिन्दी जाननेवालोंकी कमी नहीं है। अेक होटलके स्वामी तो धड़ाकेके साथ हिन्दी बोलते थे। वे कओ भाषाओंके जानकार मालूम हुअे। रामेश्वरम् लौटते हुअे हम त्रिचिनापल्ली गये। यहाँ हमने तमिल-नाड हिन्दी प्रचार सभामें श्री अवधनन्दनजीका आतिथ्य ग्रहण किया। यहाँ सभाका हिन्दी कार्य बहुत प्रगतिपर है।

सभ्यताका संकट

: श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर :

[स्व० गुरुदेव कविके अन्तिम जन्मोत्सव समारोहपर दिये हुअे भाषणका सारांश]

आज मेरी अुम्रके अस्सी बरस पूरे हुअे। मेरे जीवन क्षेत्रकी विस्तीर्णता आज मेरे सामने फैली हुअी है। पूर्वतम दिगन्तमें जिस जीवनका आरम्भ हुआ था अुसके दृश्यको दूसरे छोरसे आज निःसक्त दृष्टिसे देख पा रहा हूँ और अनुभव कर पा रहा हूँ कि मेरे जीवनकी तथा सारे देशकी मनोवृत्तिकी परिणति द्वि-टुकड़ाेंमें खण्डित हो गयी है। अिस विच्छिन्नतामें गहरे दुःखका कारण छुपा हुआ है।

'सिविलिजेशन' का—जिसे हमने सभ्यता नाम देकर अनूदित कर लिया है—कोअी सच्चा प्रतिशब्द अपनी भाषामें पाना आसान नहीं। अिस सभ्यताका जो रूप हमारे देशमें प्रचलित था, मनुने अुसका नाम दिया था सदाचार। दूसरे शब्दमें वह कुछ अेक सामाजिक नियमोंका बन्धन था। अिन नियमोंके सम्बन्धमें जो धारणा पुराने समयमें प्रचलित थी वह भी अेक सँकरे भूगोलखण्डमें आबद्ध थी। सरस्वती और दृशद्वती नदियोंके बीचका जो देश ब्रह्मावर्तके नामसे प्रसिद्ध था अुसी देशमें परम्परासे प्रचलित आचारको सदाचार कहा जाता था। अर्थात् जिस आचारकी नींव प्रचलित प्रथापर ही खड़ी थी—चाहे अुस प्रथामें कितनी ही निष्ठुरता, कितना ही अन्याय क्यों न हो। सदाचारके जिस आदर्शको अेक समय मनुने ब्रह्मावर्तमें प्रतिष्ठित देखा था, अुसी आदर्शने क्रमशः लोकाचारका सहारा ग्रहण किया। मैंने जिस समय जीवन प्रारम्भ किया था, अुस समय अंग्रेजी-शिक्षाके प्रभावसे अिस बाह्य आचारके विरुद्ध देशके शिक्षित मनमें विद्रोह फैल गया था। जिस सदाचारके स्थानपर हमने सभ्यताके आदर्शको अंग्रेज जातिके चरित्रके साथ मिलाकर अपना लिया था। हमारे परिवारमें यह परिवर्तन न्यायबुद्धिके अनुशासनपर—क्या धर्ममें और क्या लोकव्यवहारमें—पूर्णतया ग्रहण कर लिया गया था। मैंने अैसी ही भावनाके बीच जन्म लिया था और अिसीके साथ हमारे स्वाभाविक साहित्यानुरागने अंग्रेजोंको अुच्च आसनपर प्रतिष्ठित किया था। यह हुआ जीवनका प्रथम भाग। अुसके बाद ही से कठिन दुःखके बीच परिवर्तन होना शुरू हो गया। मैंने बराबर देखा कि जिन्होंने सभ्यताको चरित्रके अुत्ससे निकाली हुअी वस्तुके रूपमें स्वीकार किया था, वे ही रिपुकी प्रेरणासे किस प्रकार अुसे अुल्लंघन भी कर सकते हैं।

अेक दिन मुझे अेकान्त साहित्य रसके अुपभोगके अुपकरणोंके घेरेसे बाहर निकल आना पड़ा था। अुस दिन भारतवर्षके जनसाधारणकी जो निदारुण दरिद्रता मेरे सामने स्पष्ट हुअी, वह हृदयविदारक थी। सभ्य संसारकी महिमाके ध्यानमें अेकान्त चित्तसे डूबा हुआ था, तब कभी किसी सभ्य नामधारी मानव आदर्शके अितने बड़े निष्ठुर, विकृत रूपकी कल्पना भी नहीं की थी। अन्तमें अेक दिन अिसी विकारके भीतरसे बहुकोटि जनताके प्रति सभ्य जातिकी अपरिसीम अवज्ञा-पूर्ण अुदासीनताको भी देखना पड़ा। भारतवर्ष अंग्रेजोंके सभ्य शासनकी भीमकाय चट्टानको छातीपर रखकर निरुपाय निश्चल होकर नीचे पड़ा रहा। किस प्रकार यूरोपीय जातिकी स्वभावगत सभ्यताके प्रति क्रमशः विश्वास खो गया, अिसीका शोचनीय अितिहास मुझे यहाँ आज दुहराना पड़ा।

सभ्य शासनकी चालनासे भारतवर्षकी जो सबसे बड़ी दुर्गति आज सिर अुठाये है, वह केवल अन्न-वस्त्र-शिक्षा और आरोग्यका शोकावह अभाव ही नहीं है, वह है भारतवासियोंके बीच अत्यन्त नृशंस आत्म-विच्छेद। अिस विदेशी सभ्यताने यदि अिसे सभ्यता कहते हो, हमारा क्या कुछ लूट लिया, यह हम जानते

है ! अुसीके स्थानपर हाथमें दण्ड लेकर अुसने जिसकी स्थापना की है अुसका नाम दिया है Law and order, विधि और व्यवस्था—जो अेकबारगी बाहरकी चीज है, अेक किस्मकी दरबानी मात्र है। पाश्चात्य जातिके सभ्यता अभिमानके प्रति श्रद्धा बनाये रखना असाध्य हो अुठा है। अुसने अपना शक्तिरूप हमें दिखाया, मुक्ति-रूप वह नहीं दिखा सकी। अर्थात् मनुष्य मनुष्यके बीच जो सम्बन्ध सबसे अधिक मूल्यवान् है, जिसे यथार्थ सभ्यता कहा जा सकता है, अुसीकी कृपणताने भारतीयोंकी अुन्नतिका रास्ता बिलकुल बन्द कर रखा है। फिर भी अपने व्यक्तिगत जीवनमें सौभाग्यसे बीच-बीचमें महदाशय अंग्रेजोंके साथ मेरा मिलन हुआ है, जिनका परिचय मेरे जीवनमें अेक श्रेष्ठ अैश्वर्यके रूपमें संचित रह गया है। यदि जिन्हें न देखता और न जानता तो पाश्चात्य जातिके सम्बन्धमें मेरी निराशा कहीं प्रतिवादही न पाती।

भाग्यचक्रके परिवर्तनसे किसी-न-किसी दिन अंग्रेजोंको भारत-साम्राज्य त्याग करके जाना ही होगा। किन्तु अुस दिन वे किस भारतवर्षको—कैसी श्रीहीन दीनताके कूडे कर्कटको अपने पीछे छोडकर जायेंगे! अेकाधिक शताब्दियोंकी शासनधारा जब सूख चुकेगी, तब यह कैसी विस्तीर्ण पङ्कशय्या दुर्विषह निष्फलताका ढोती रहेगी! जीवनके प्रथम आरम्भमें समूचे मनसे यूरोपकी सम्पद-अन्तरकी अिस सभ्यताके दानपर विश्वास किया था। और आज अपनी विदाके दिन वही विश्वास अेकबारगी दिवालिया हो बैठा। आज यही आशा किये हूँ कि हमारी अिसी दारिद्र्यलाञ्छित कुटियामें ही परित्राणकर्ताका जन्म दिवस आ रहा है, प्रतीक्षा किये रहूँगा कि सभ्यताकी दैववाणीको लेकर वह आयेगा, मनुष्यके चरम आश्वासनकी वाणीको वह मनुष्यके कानों-तक पहुँचायेगा—अिसी पूर्व दिगन्तसे ही! आज अुस पारकी ओर यात्रा शुरू कर दी है—पीछेके घाटपर क्या देख आया—क्या छोड आया—अितिहासके तुच्छ अुच्छिष्ट सभ्यताभिमानका कैसा परित्यक्त भग्नस्तूप! किन्तु मनुष्यके प्रति विश्वास खो देना पाप है, अुस विश्वासको अन्ततक रक्षा करूँगा। आशा करूँगा कि महाप्रलयके पश्चात् वैराग्यके मेघमुक्त आकाशमें अितिहासका अेक निर्मल आत्मप्रकाश कदाचित् आरम्भ होगा—अिसी पूर्वाचलके सूर्योदयके दिगन्तसे! अेक दिन फिर अपराजित मानव अपनी विजय-यात्राके अभियानमें समस्त बाधाओंको लांघता हुआ अग्रसर होगा—अपनी महान् मर्यादाको वापस पानेके पथपर! मनुष्यके अन्तहीन प्रतिकारहीन पराभवको चरम मानकर। अुसपर विश्वास करनेको मैं अपराध समझता हूँ।

आज यही कहकर जाअूँगा—प्रबल प्रतापशालीकी क्षमता, मदमत्तता और आत्मम्भरिता भी निरापद नहीं—अिसके प्रमाणित होनेका दिन आज आ गया है, निश्चित रूपसे यह सत्य प्रमाणित होगा ही कि—

"अधर्मेणैधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति॥"

: अनुवादक—श्री मोहनलाल वाजपेयी :

सरस्वती-पुत्रोंके प्रति !

श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन

बात काफी पुरानी है और यू है भी अत्यन्त साधारण। १९३७ म म लगभग अक महीना चटगावम रहा। शायद कुछ अधिक ही। सारा अर्मा मलेरियामे पीडित। अक विहारमे कुछ स्वस्थ होकर दूसरे पासके विहारमें जाता। वहा जाकर फिर गिर पडता। सेवा सुश्रूषाकी कही भी कमी न थी। अक विहारमें तो अक श्रमणने बहुत ही सेवा की।

अक दिन मन कृतज्ञताभिभूत होकर कहा —

श्रमण ! म तुम्हारा कुछ और तो प्रत्युपकार कर नहीं सकता। पढना चाहो तो कुछ पढा सकता हूँ। बोलो क्या पढोग ?

'अग्रजी।'

म अुसे ठीक न सकता था। लेट लेटे बिना पुस्तकके अग्रजी पढानी आरम्भ की। आओ और बी दो शब्द सिखाये अर्थात म और हम। जब तीसरा यू अर्थात तुम याद कराना आरम्भ किया तबतक वह आओ और बी मेंसे अक भूल चुका था। मुझ अच्छी तरह याद है अनेक बार प्रयत्न करनेपर भी म अपने अुस श्रमण बन्धुको तीनो शब्द अक साथ नही ही याद करा सका।

अिस समय जो बात विशेष रूपसे याद आ रही है वह यही कि जिसके दिमागकी यह हालत थी कि अग्रजीके तीन शब्द भी अक साथ न याद रख सके वह भी अग्रजी ही पढना चाहता था !

अिधर कुछ महीने पहले 'जतवन' जाना हुआ। वर्तमान बलरामपुर (जि गोण्डा अुत्तर प्रदेश) के पास जतवन ही वह जगह है जहाँ भगवान बुद्धने अपने जीवनके ४५ वर्षावासोमसे २५ वर्षावास बिताये थ। कभी जहाँ श्रावस्ती जसा बडा नगर बसा था वहाँ आज सहेट महेट नामके दो ग्राम मात्र ह। वहीं जत वनके पवित्र खण्डहरोंमें मेरी अक बर्मी भिक्षुसे भेंट हुआी। वयोवृद्ध अू महिद महास्थविरकी साधनाके परिणामस्वरूप यहा अक जतवन विहार स्थापित है। आप अिसीमें रह रहे थ।

पूछा— यहाँ किस अुद्देश्यसे आये ?'

अग्रजी पढने।

अितने दिनोंके बाद आज म बठा यह सोच रहा हूँ कि जतवन के खण्डहरोंमे भी अग्रजी ही पढने !

यही जिस धर्मोदय विहारमें बठा म ये चन्द सतरे लिख रहा हूँ अक भिक्षु ह जो नेवारी म कविता करते ह कुछ हिन्दी और खासी नेपाली भी बोल लेते ह सामान्य हिन्दी भी समझ और बोल ही लेते ह किन्तु वे अपने ज्ञानको अत्यन्त अधूरा समझते ह क्योंकि अुन्ह अग्रजी नहीं आती !

पिछले बाअीस वर्षमे परिचित अक दूसरे भिक्षु ह जो सिहल बोलते ह बर्मी बोलते ह तिब्बती बोलते ह कुछ पालि तथा कुछ सस्कृत भी जानते ह अच्छी खासी हिन्दी लिखते पढते ह कुछ जापानी भी जानते ह – तब भी अुन्हे अपनी शिक्षा अत्यन्त अधूरी लगती है क्योंकि व अग्रजी पूरी नही जानते।

सच तो यह है किसीको भी कोअी भाषा पूरी नहीं आती अुन्ह खास तौरपर किन्तु चिन्ता अग्रजी की ही है।

अभ्यासके म व्रती हूँ राष्ट्रभाषाका किन्तु आज-कल मुझ यहाँ पढानी पड रही है अग्रजी ही अग्रजी !

अिसम कुछ सन्देह नही कि अग्रेजोने भारतपर अग्रजी लादी, किन्तु लदी हुअी अग्रजी जो आसानीसे अुतर नहीं रही है और कहीं कहीं तो और भी सिरपर चढी चली आ रही है हम स्वीकार करना ही चाहिये कि अिसके मूलमे है अग्रजीकी साहित्यिक शक्ति।

अुस दिन बात चलनेपर 'अंग्रेजी की अकदम अ बी सी डी जाननेवाले अक भाअीने कहा अंग्रेजी जान लेनेसे सब कुछ जाना जा सकता है।

अंग्रेजीकी राजनीतिक-स्थितिकी यदि अुपेक्षा कर भी दें तो भी अंग्रेजी और अंग्रेजी-साहित्यके बारेमें जो यह सामान्य धारणा बनी हुअी है जिससे अभिभूत होकर ख्वाहमख्वाह आदमी अुधर लुढ़क जाता है अुसका लेखा-जोखा तो लेना ही होगा। अपनी अभ्यस्त भाषामें कहूँ तो अुस धारणासे तो लोहा लेना ही होगा।

प्रश्न है कि अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी साहित्यकी अिस धाकके मूल्में क्या है? आप कहेंगे अंग्रेजी साम्राज्यके डेढ़ सौ साल। अुत्तर सही है, किन्तु अधूरा है। क्योंकि प्रश्न फिर पैदा होता है कि अंग्रेजी-साम्राज्यके मूलमें क्या रहा है? स्वीकार करना ही होगा कि अंग्रेजोंका अपना चरित्र। मेरा निवेदन है कि अंग्रेजी साहित्यका भी मूलाधार वह अंग्रेजी चरित्र ही है जिसे हम अंग्रेजी साम्राज्यका मूलकारण मानते हैं।

प्रतिकूल परिस्थितियोंमें हिन्दी सेवियोंने भी हिन्दी की जैसी सेवा की है वह किसी भी साहित्यके साहित्यिकोंके लिअ अभिमान करनेकी चीज है। किन्तु अुधरकी अनुकूलता तो जैसे प्रतिकूलता ही बन गयी है।

कवि अचलकी अक पंक्ति याद आती है—

फूल काटोंमें खिला था सेजपर कुम्हला गया

केन्द्रमें और कअी राज्य सरकारोंसे राष्ट्रभाषा तथा राज्य भाषा हिन्दीके सम्बन्धमें जो घोषणाअें निकलती हैं अुन्हें पढ़कर तबीयत प्रसन्न हो जाती है। काश! हम सबकी वह आँखें ही फूट जाअें जो अुन्हें कार्यान्वित हुआ देखनेकी भी अिच्छा रखता हैं!

स्वराज्यके छह साल बीत गये। आज भी केन्द्रीय सरकारके हर अक मन्त्रालयका लगभग सारा कारोबार अंग्रेजीमें ही होता है। अभी और नौ वर्षोंके बाद तो अुसमें धीरे धीरे परिवर्तन होना आरम्भ होगा! तबतक न जाने किस राजाका राज्य होगा!

केन्द्रीय सरकारकी बात जाने दो। वहाँ बड़े-बड़े लोगोंकी बड़ी बड़ी बातें हैं। क्या आज भी अुन राज्योंकी जो अपनी राज्य भाषा हिन्दी घोषित कर चुके हैं—सरकारोंमेंसे कोअी अक भी सरकार यह कह सकता है कि अंग्रेजी ज्ञानसे सर्वथा शून्य कोअी व्यक्ति अुसके किसी भी महत्वपूर्ण पदको सुशोभित कर सकता है?

कमेटियोंपर कमेटियाँ बनी हैं और बिगड़ी हैं। क्या आज भी हम हिन्दीके किसी अक भी टाअिप राअिटरके बारेमें कह सकते हैं कि यह हिन्दीका टाअिप राअिटर है?

हिन्दी टेलिप्रिंटरोंकी भी चर्चा बीच बीचमें होती है। क्या आज भी हिन्दी टेलिप्रिंटरके अभावमें हिन्दीसे अंग्रेजीमें और पुनः अंग्रेजीसे हिन्दीमें अनुवाद होनेके बाद ही दिल्लीकी किसी प्रेस अजेंसी द्वारा भेजा गया हिन्दी समाचार भी हिन्दी पत्रोंमें नहीं छपता?

यह सब यूं चल रहा है और 'दिग्गज' देवता बीच बीचमें अुपदेश दे देते हैं कि राष्ट्रभाषाके प्रचार कार्यमें जल्दबाजीसे काम नहीं लेना चाहिये।

प्रान्तीय भाषाओंको आगे खड़ा करके अुनकी ओटमें अंग्रेजीके निहित स्वार्थोंको सुरक्षित रखनेका अच्छा ढंग निकल आया है!

सरकारके पास—अुसके शिक्षा विभागके पास—योजनाअें हैं सूचनाअें हैं। कोअी अक भी कार्यान्वित हो पाये तब न?

गैर-सरकारी साहित्यिक संस्थाओंके पास भी योजनाअें हैं किन्तु साधन नहीं। किसी भी शहरकी अक सड़ी सी दूकानके पास जितनी पूंजी होती है अुतनी भी पूंजी हमारे बड़े बड़े प्रान्तीय साहित्यिक अनुष्ठानोंके पास नहीं दिखायी देती।

जिस मध्य प्रदेशकी राजधानी नागपुरमें राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनका पाँचवाँ अधिवेशन हो जा रहा है वहाँके मध्य प्रदेश हिन्दी-साहित्य सम्मेलनकी पाँचवीं मासिक विज्ञप्ति मेरे सामने है— कुल जमा छह पन्नेकी।

अिसी विज्ञप्तिमें सम्मेलनके प्रधान मन्त्री श्री रामगोपालजी महेश्वरीका वक्तव्य पढ़नेको मिला—

यद्यपि अर्थाभावके कारण पीछले दो महीनोंमें विज्ञप्ति प्रकाशित नहीं की जा सकी, तथापि यह सिलसिला जारी रखनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

यह है हमारे अन्तर्प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी पूंजी !

आप यदि साहित्यकार हैं और आपकी अपनी कोअी साहित्यिक कृति है, अथवा आपके किसी मित्रके पास कोअी साहित्यिक रचना है, तो आज आपको अुसे प्रकाशित करनेमें काफी कठिनाअियोंका सामना करना पड़ेगा। कोअी व्यावसायिक पूंजीपति प्रकाशक अुसे निश्चिन्त हो प्रकाशित करना चाहता, क्योंकि अुसे अपनी पूंजीके ही डूब जानेका डर लगा रहता है और कोअी साहित्यिक संस्था अिसलिअे नहीं प्रकाशित कर सकती, क्योंकि अुसके पास पैसा नहीं।

साहित्यिक सौन्दर्यकी दृष्टिसे जो कृति जितनी ही अधिक श्रेष्ठ है, आज दिन अुसके प्रकाशित करनेमें अुतनी ही कठिनाअी है।

प्रश्न गम्भीर है। अिस चक्रव्यूहको कहाँसे और कैसे तोड़ा जाय। हिन्दीको सचमुच कुछ साहित्यिक अभिमन्युओंकी आवश्यकता है।

मेरी विनम्र सम्मतिमें हिन्दी साहित्यकी प्रगतिके जिस संधिस्थलपर आकर हम खड़े हो गये हैं अुसका अेक कारण यह भी है कि समाजका अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग न हिन्दी पढ़ता है, न लिखता है और यहाँ तक कि खरीदता तक नहीं। अिस वर्गके दो हिस्से किये जा सकते हैं—

(१) धनवान किन्तु प्रेमशून्य

(२) ज्ञानवान किन्तु विवेकशून्य।

पहला वर्ग जितने पैसे पान सिगरेटपर ही खर्च करता है अुससे आधे पैसे भी यदि हिन्दी समाचारपत्र खरीदकर पढ़नेमें खर्च करने लगे तो हर हिन्दी समाचारपत्रकी ग्राहक संख्या लाखोंमें गिनी जाने लगे। आठ करोड़की आबादीके जापानका असाही पचास लाख प्रतियाँ रोज छपता है। चालीस करोड़ लोगोंकी राष्ट्रभाषाका कौनसा अेक दैनिक है जो अेक लाखकी भी बात कर सके?

दूसरा वर्ग ज्ञानवान किन्तु सचमुच अत्यन्त विवेकशून्य है। अिसीकी कृपासे कलकत्ते (और दूसरे शहरोंमें भी होगा) में अेक विशेष तरहका साहित्य रस ले लेकर खरीदा जाता है, पढ़ा जाता है, पढ़ाया जाता है। शीशेमें आदमी अपना चेहरा देखना ही अधिक पसन्द करता है। अुन लोगोंके जीवनमें जो कुछ है और जितने अधिक विकृत रूपमें है अगर अुसे साहित्यमें भी देख पाते हैं तो अैसा साहित्य यदि अुन्हें अच्छा भी लगता है तो अिसमें आश्चर्यकी कौनसी बात है?

गज़ब यह है कि कहीं कहीं तो अैसा साहित्य पुस्तकालयोंकी शोभा बढ़ानेके लिअे खास तौरपर रखा जाता है।

वैसे साथ साथ जबतक जनसमूहमें अविवेकका गठबंधन बना रहेगा तबतक अुससे लाभ अुठानेवाले साहित्यिक ठग भी प्रचुर मात्रामें रहेंगे। बुद्धिमान लोग बेवकूफ रहकर नहीं अपना ठग कहलाना अधिक पसन्द करते हैं, किन्तु अैसे ठग बनानेवाले बेवकूफ लोग ही तो हैं।

निस्सन्देह सभी भाषाओंमें सभी तरहका साहित्य है। किन्तु जो साहित्य जिस कोटिका है वह अुस कोटिका ही समझा जाकर अपनी हैसियतसे अूँचा दर्जा तो न पाये।

आजके हिन्दी गद्यका रूप अभी ही नहीं। नयी नयी स्थिति और परिस्थितिसे गुजरना है। अिसमें तनिक सन्देह नहीं कि अुसका और अुसकी साहित्य साधनाका भविष्य अुज्ज्वल है किन्तु चमकनेके लिअे अुसे शायद अभी भी काफी तपना है।

अपने अुन मनीषियोंकी दुर्दशाका तो क्या कहा जाय जिनके पास पढ़नेके लिअे अपेक्षित पुस्तकें नहीं, अुन्हें खरीदनेके लिअे पर्याप्त पैसा नहीं और जिनकी आप लिखी हुअी पुस्तक छापनेको कोअी प्रकाशक तैयार नहीं। राष्ट्रभाषाके सौभाग्यसे तो आज ही जितनी

तपस्या कर रहे हैं कि कुछ न पूछो। अैसे बंधुओंके सम्मुख तो वह सारा समाज अुत्तरदायी है, जिसकी अव्यवस्थाके परिणामस्वरूप हीरे कोयलाके भाव बिकते हैं।

किन्तु साराका सारा साक्षर समाज अैसा ही नहीं है। निस्सन्देह देश दरिद्र है। किन्तु देशकी दरिद्रताके हिसाबसे देखा जाअ तो अिस देशके बहुतसे धनी बहुत धनी हैं। अैसे समय साक्षर लोगोंकी कअी श्रेणियां हैं।

आर्थिक दृष्टिसे विचार करनेपर हमारा ध्यान सबसे पहले देशके कालेजोंके कुछ प्रोफेसरोंकी ओर जाता है। अुनमेंसे अेक वर्ग तो प्रोफेसर बननेके साथ ही जैसे लिखना पढना बन्द कर देता है। अुनके पास हर साल नये बैच नये मूर्ख आते ही रहते हैं। पढने लिखनेकी क्या जरूरत।

जिन्हीं बंधुओंका अेक दूसरा वर्ग है जो अपना अधिकांश समय पाठ्य पुस्तक लिखने छपवाने प्रकाशित कराने तथा अुन्हें भिन्न भिन्न परीक्षाओंके लिअे स्वीकृत करानेमें ही खर्च करता है। यहां अुसका बंधा बंधाया पैसा है। अिनमें काअी कोअी तो स्वयं पुस्तक लिखते तक नहीं। लेड सिपाही नाम सरदारका होता है। पुस्तक किसी विद्यार्थीसे लिखायी जाती है— कुछ मेहनताना दे दिला दिया जाता है। किन्तु विज्ञापित नामकी पूरी कीमत जिसके भरोसे पुस्तक परीक्षा विशेषके पाठ्यक्रममें आती है— प्रोफेसर महोदयको मिलती है।

साहित्यके क्षेत्रमें जहां निन्दा रात्रि पूजा स्पर्धाको धारण किया जाता है यह अेक असा भयानक ब्लैक मार्केट है जिसकी सीमा नहीं!

जिन्हीं सभी बंधुओंसे अनुरोध है कि आपपर कोअी भी दूसरा किसी प्रकारका अंकुश नहीं लगा सकता। अपनेपर रहम करें अपने विद्यार्थियोंपर रहम करें और अपने साहित्यपर रहम करें और कुछ असा करें जिसे लेकर हर हिन्दी प्रचारक हर हिन्दी शिक्षक कुछ अभिमान कर सके।

पढाने लिखानेके पेशेसे बाहर भी पढे लिखे लोगोंकी कमी नहीं। हमारे समाजका यही अेक बड़ा दुर्भाग्य है कि जो पढाने लिखानेके पेशेमें नहीं वे कुछ कहने-सुनने लायक पढते लिखते ही नहीं।

अेक दिन अेक मित्र जापानी टैक्सीमें बैठकर किसीसे मिलने गये। आप भीतर चले गये। टैक्सी बाहर खड़ी रही। लौटकर देखा तो ड्राअिवर भारतीय भवन निर्माण कलापर पुस्तक पढ रहा था।

यूं यह देश संत कबीरका देश है जिस जुलाहेके व्यक्तित्वमें अपनी जीविकाके साधन और अध्यात्मकी असीम ऊंची साधनाका सुन्दर समन्वय हुआ था किन्तु तब भी हमारा आजका कारोबारी व्यवसायी न जाने क्यों कल्याण खरीदकर रखने या देनेसे आगे नहीं बढ पाता?

हमारे योग्य व्यवसायपति चाहें तो अपने ज्ञान और हिन्दी-साहित्यकी वृद्धि अेक साथ कर सकते हैं। किन्तु समाजमें अनेक विषयमें कुछ अैसी निकृष्ट धारणा बन गयी है कि वे कुछ लिखें-पढें भी तो कोअी विश्वास ही नहीं करता कि अुनका अपना लिखा पढा होगा? यह सही भी है कि कभी कभी होता भी नहीं। बिचारे धन कमाअें या ज्ञान? लेकिन वह युग गया जब लक्ष्मीके वाहनका अुल्लू होना अनिवार्य माना जाता था। आज भी यदि वह अुल्लू ही बना रहेगा तो अपने साथ अपने समाज और अपने देशको भी ले डूबेगा।

तीसरा वर्ग है अुन साक्षर लोगोंका जिनका न तो पढना लिखना पेशा ही है और न वे व्यवसायी ही हैं। सामान्यसे अुन्हें सभी सुविधाअें प्राप्त हैं। साधन सम्पन्न हैं। अिस वर्गके लोग भी अपने देशमें यथोचित मात्रामें सरस्वती-आराधन नहीं ही करते। बड़ी-बड़ी नौकरी निर्धारित मासिक आय नियत निश्चित काम और मौज। सरस्वतीके चरणोंमें श्रद्धाके दो फूल चढानेमें क्या कम मानसिक आनन्द है जिसने अिस रसका चस्का हो अुससे पूछो। वह बताअेगा—

हाय कमबख्त। तूने पी ही नहीं।

आप कल्पना कीजिये किसी देशके गवरनरकी और कल्पना कीजिये अुसके पालि पढनेकी और कल्पना कीजिये अुसके पालिग्रन्थोंके सम्पादन और अनुवाद-कार्यकी।

श्री चामस सिंहल (सिलोन) के अैसे ही गवरनर थे।

पालि अंग्रेजी-कोश के रचयिता और 'बुद्धिस्ट अिण्डिया' के प्रसिद्ध लेखक श्री रीज डेविड्स सिलोन सिविल सर्विसके अेक योग्य पदाधिकारी ही थे।

अपने ही देशमें तीस वर्षतक पुराणोंका अध्ययन करके 'भारतीय अैतिहासिक परम्परा' को वैज्ञानिक अितिहासकी भित्तिपर ला खडा करनेवाले श्री डब्ल्यू टी पार्जिटर कलकत्तेके अेक बडे न्यायाधीश ही तो थे।

हमारे अुच्च पदस्थ अधिकारी भी यदि चाहें तो क्या किसी न किसी शाखा विशेषका अध्ययन करके 'राष्ट्रभारती' के चरणोंमें अनेक अमूल्य रत्न समर्पित नहीं कर सकते ?

यहाँ कालिम्पोङ्में प्राय रोज ही अेक साठ वर्षीय महिलासे भेंट होती है जो यूरोपकी कअी भाषाअें मातृभाषावत् बोलती हैं और अिस समय चीनी, तिब्बती और संस्कृतके अूँचे साहित्यिक ग्रंथोंका तुलनात्मक अध्ययन कर रही हैं। अुस दिन अुन्हें अेक चीनी-कोश मिल गया। वे अैसी प्रसन्न दिखायी दीं जैसे कोअी बालक कटी पतंग मिल जानेपर।

मध्यप्रदेशके भूतपूर्व गृह मंत्री पं द्वारकाप्रसाद मिश्रने अपने अवकाशके समयमें 'कृष्णायन'की रचना कर निस्सन्देह सब लोगोंका मार्ग-दर्शन किया। जो अिससे कुछ भी प्रेरणा लेना चाहते हों ले सकते हैं।

गोसाअी तुलसीदासकी अेक चौपाअीके प्रचलित अर्थसे मैं किसी भी तरह सहमत नहीं हो पाया। गोसाअीजी कहते हैं—

"कीन्हे प्राकृत जन गुण गाना
सिर धुनि गिरा लागि पछिताना

[साधारण जनोंका गुणगान करनेसे सरस्वती अपना सर धुन पछताने लग जाती है।]

मेरा निवेदन है कि सरस्वतीका वरद पुत्र जब और जिसके बारेमें भी लेखनी अुठाता है वह साधारण जन रह ही नहीं जाता।

साधारणको असाधारण बनाना ही सरस्वती पुत्रोंकी विशेषता है।

पर्लबर्कका गुड अर्थ अेक चीनी किसानकी कथा-मात्र ही तो है किन्तु माटीका प्रेम काहेको कहीं अन्यत्र अैसी तीव्रताके साथ अभिव्यक्त हुआ होगा ?

हिन्दीमें क्या कुछ है अिसकी सूची भी बहुत लम्बी है, क्या कुछ नहीं है अुसकी सूची और भी लम्बी है। अुस लम्बी सूचीको पूरा करनेके लिअे लेखकों, प्रकाशकों पुस्तकविक्रेताओं सभीके सम्मिलित सहयोगी प्रयत्नोंकी आवश्यकता है।

और आवश्यकता है लक्ष्मी पुत्रोंके आगे आनेकी।

साहित्यकारोंने अिस युगको न जाने हिन्दीका कौनसा युग माना है। मुझे लगता है कि यह हिन्दीका संस्था-युग है। संस्थाअें किसी न किसी अूँचे अुद्देश्यको लेकर दो डग भी आगे नहीं चल पाती कि अुद्देश्य पीछे पड जाता है और पद तथा विचार आगे आकर खडे हो जाते हैं।

प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य सम्मेलनके सभापति न हुअे न सही। वे हिन्दीके अुपन्यास-सम्राट कहला गये।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी कहींके सभापति न बने, न सही, वे हिन्दी गद्य लेखकोंको बना गये।

साहित्यिकको संस्थाका सहयोग मिल जाअे, सोनेमें सुहागा है। अन्यथा कोअी भी संस्था किसी न किसी की छाया-मात्र ही तो होती है।

सरस्वतीके वरद पुत्रोंको ही प्रणाम है।

स्वयं हर जगह दौड़ पकड़ नहीं जाता। पर अुन्होंने अपने कितने ही रंगरूटी अफसर छोड़ रखे थे जो राज्य और बाहरकी सुन्दरियोंको जमा करनेका काम किया करते थे। प्रातःस्मरणीय मर्यादा पुरुषोत्तम रामके पिता प्रातःस्मरणीय मर्यादा पुरुषोत्तम दशरथकी साठ हजार रानियाँ थीं। अिन महाराजाओंकी रानियोंकी संख्या सोलह हजार तक तो नहीं पहुँची थी, लेकिन हजारसे अूपर जरूर थी। चार दर्जनसे अूपर तो अुनकी राजकुमारियाँ थीं और राजकुमारोंकी भी अेक पल्टन बन सकती थी। अिन्हींमेंसे अेक हमारे चरित्रनायक कुमार दुर्जयसिंह भी थे। दनों और भाषाओंके लिअे तो वैकुण्ठवासी महाराजाने अपने अन्तःपुरमें चिड़ियाखाना-सा बना रखा था। चाहे रानियोंकी संख्या कितनी ही हो और अुनमें अपनी सुन्दरता और आयुके कारण कितनी ही कुछ समय तक महाराजाकी चहेती भी रही हों, लेकिन जहाँतक गद्दीका सवाल था, वह कुलीन वंशीय रानीके बड़े पुत्रको ही मिल सकती थी। अिस प्रकार कुमार रिपुजय जेठे होनेपर भी गद्दीसे वंचित रहे और अुनके दर्जनों अनुजोंमेंसे सबसे बड़े महाराज बने। लेकिन वैकुण्ठवासी अन्नदाताने अपने सर्वज्येष्ठ पुत्रके साथ और कुमारों जैसा बर्ताव नहीं किया, जिससे मालूम होगा कि मधुपुरीमें दुर्जयको अुन्होंने दो-तीन नगर और पैदावारवाली काफी जमीन पहले ही से दे रखी थी।

कुमार दुर्जयका रंग साँवला बल्कि कुछ हद तक काला था। वैसे शरीर छह फुटका, बहुत लम्बा-तगड़ा था। रंग कोअी बिगाड़ न कर सकता, यदि रूप अच्छा होता—यह मालूम ही है रंग सुन्दरताकी गारंटी नहीं है। कुमारके भारी भरकम शरीर और अुसके अनुरूप ही सिरमें कुछ थोड़ी मज्जाकी कमी जरूर थी, लेकिन अुनको बेवकूफ हर्गिज नहीं कहा जा सकता था। वह युवराज नहीं थे, दर्जनों कुमारोंमेंसे अेक होनेके कारण हाथखर्च भी अुनको बहुत कम ही मिलता था। जब पिताको रियासतकी सारी आमदनी अपने ही हरमके चलानेके लिअे पर्याप्त नहीं होती, तो कुमार दुर्जयके साथ वह कितनी अुदारता दिखला सकते थे? बड़ी रियासतके आखिर कुमार थे, अिसलिअे कहाँ तक हाथमें संकोच करते? आखिर वह थे भी अेक राजाके साले और दूसरे बहनोअी। दुनियामें बड़े कुमारके तौरपर जानके बाद पिताने अुनके साथ प्रारम्भमें लाड़-प्यार भी अधिक दिखलाया था। अपने मुसाहिब और दूसरे लग्गू-भग्गू भी थे। राज्यसे खर्चके लिअे जागीर मिली हुअी थी, लेकिन अुससे अुनका काम नहीं चलनेवाला था। तब भी पिता जब तक जीवित थे और गोरे अंग्रेज जब तक भारत छोड़कर नहीं गये तब तक कुमार अभी वस्तुतः कुमार थे। मधुपुरीकी सैर और बंगला लेनेका अुनको ख्याल आया। वे वहाँ गये। अुनके साथ तलवार और बन्दूक लिये हुअे अर्दली और मुसाहिब भी थे। पर बंगलेवाली महिलाने दूरसे जब अिस पल्टनको देखा तो वह सचमुच ही डर गयी। डाकू होनेका ख्याल तो अुसको नहीं हो सकता था। क्योंकि डाकुओंकी वर्दियाँ जितनी भड़कीली नहीं हो सकती थीं और न दिन-दहाड़े वे अिस तरह आ ही सकते थे। साथ ही मधुपुरीमें डाका क्या, तब तक कभी चोरी भी नहीं सुनी गयी थी। पीछे जब मालूम हुआ तो वह और अुसकी सहेलियाँ बहुत हँसीं। यह अुस समयकी बात है जब कि मधुपुरी पूरी तौरसे अंग्रेजोंकी थी, अर्थात् वे अुसपर सारे हिन्दुस्तानकी तरह शासन ही नहीं करते थे, बल्कि अुसे अिंग्लैंडका अेक टुकड़ा बनाये हुअे थे। अुस वक्त कोअी गोरा या अधगोरा अिन राजाओंको काले हब्शीसे बढ़कर नहीं समझता था।

(२)

रियासतकी गद्दीपर छोटा भाअी बैठ चुका था, किन्तु थोड़े ही समय बाद आजादी आयी और अुसे भी पेन्शन लेकर अलग होना पड़ा। अुसके दर्जनों भाअियों और बहनोंने भी पेन्शन पायी। कुमार दुर्जय भी खाली हाथ नहीं रहे, बल्कि अपनी दुनियामें पहले आनेके कारण भारत सरकारने अुनके साथ खास रियायत बरती। जागीर अभी हाथसे नहीं गयी थी। नये प्रभु यद्यपि किसानोंको सन्तुष्ट करनेके लिअे जमींदारियोंकी तरह रियासतोंकी जागीरोंको भी अुठानेके लिअे मजबूर थे, लेकिन जागीरदारोंके साथ पूरी तौरसे

मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसात्मक बर्तावके साथ । वर्षोंसे अनके साथ बातचीत हो रही है मोल तोल किया जा रहा है, दाम और बढानेके लिअे जागीरदार कितनी ही बार रूठ भी जाते हैं, फिर अन्हे मनाया जाता है।— शायद नये महाप्रभुओंके समाजवादका रास्ता अिसी ओरसे है। कुमार दुर्जयकी जागीर भी अभी सरकारने अपने हाथमें नही ली थी, लेकिन सरकार सुस्त थी तो किसान अधिक चुस्त थे। कुमारका अपनी जागीरमें अब कोओ रोब नही रह गया था। हथियारबन्द तिलंगोंके साथ भडकीली पोशाकमें जानेपर किसानोपर रोब गाँठनेकी तो बात अलग, वे अनके अपहासके शिकार होते। कारतूस और बन्दूक रखते हुअे भी वे अनका मुँह नही बन्द कर सकते थे, अिसके लिअे बेचारे हाथ मलकर रह जाते। यदि अिस समय वैकुण्ठवासी पिता महाराजा होते! तब तो अेक दो खून कर देनेपर कुमारका कोओ बाल बाँका नही कर सकता था। राज्य और जागीरमें अैसी स्थिति देखकर कुमार साहबने यही पसन्द किया कि अपना अधिकसे-अधिक समय मधुपुरीमें बितायें। पहाड मकडो, बिच्छू या केकडाकी शकलमें फैलते है, अेकके बाद दूसरी टेडी मेडी बाहियाँ फूट निकलती है, और देखनेमें कुछ ही सौ गजोंपरके सामने स्थानपर पहुँचनेके लिअे मील मीलका चक्कर काटना पडता है। अंग्रेजोंने सवा सौ वर्ष पहले जब मधुपुरीको अपने रहनेके लिअे चुना, तो अुस समय वह शीतलताने आकृष्ट हुअे थे। छह-सात हजार फुट अूँचे पहाडोंपर शीतलताके साथ अुस समय घना जंगल भी था, जिसके कारण अिसका सौन्दर्य दूना हो गया था। चार चाँद लगाते अिसके बहुतसे स्थानोंसे सनातन हिमसे आच्छादित शिखर पंक्तियाँ दिखलायी पडती थीं। अंग्रेज प्राय अपने बंगलोंको अैसे स्थानपर बनाना चाहते थे, जहाँसे हिमालय श्रेणियाँ अधिकसे अधिक दिखायी पडें। लेकिन जैसा कि आम तौरस होता है, पहलेवाले बाजी मार ले गये और पीछे आनेवालोंको दूसरे-नंबरपर सतोष करना पडा। अंग्रेज दूकानों और बाजारोंसे मीलों दूरके स्थानोंको अधिक पसन्द करते थे। वहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य भी अधिक था और काले लोगोंकी परछाओं भी कम पडती थी। अेकान्तकी खोजमें कितने ही अंग्रेजोंने अैसी जगहोंमें भी अपने बंगले बनाये, जहाँसे हिमालय श्रेणियाँ नही दिखायी पडती। दूसरे नम्बरके वे बंगले थे, जहाँसे हिमालय नही तो कमसे कम बीस मील दूर नीचेकी समतल भूमि दिखायी पडती थी। तीसरी श्रेणीके बंगले अिन दोनोंसे वंचित थे और हरियालीसे आच्छादित किन्हीं दो पर्वतबाहियोंमें पडते थे। अेक अैसा ही बंगला कुमार दुर्जयके भाग्यमें पडा था। मधुपुरीमें बंगले बनने यद्यपि सवा सौ वर्ष पहले शुरू हुअे, लेकिन अुनकी बहुतायत अेक शताब्दी पहले शुरू हुअी फिर आधी शताब्दी तक तो नये बंगलोंके बनानेमें होड लग गयी थी। अुनकी गति रुकी अिसी समय पहला महायुद्ध आ गया, जिसके बादसे तो अिस मधुर नगरीसे लक्ष्मीही रूठ गयी। बहुतसे अंग्रेज अपने बंगले बेचने लगे और भारतीयोंने विशेषकर राजा महाराजाओं और कुछ सेठोंने, अुन्हें खरीदना शुरू किया। कुमार दुर्जयको भी अिसी समय यह बंगला प्राप्त हुआ था। कहा नही जा सकता पिता महाराजाने खरीदकर अिसे अपने सुपुत्रको दिया था या अुन्होंने खुद खरीदा था। अन्तःपुरमें पैदा होनेवाले बुद्धिके सम्बन्धमें कुछ घाटेमें रहते ही है, अूपरसे अपने सारे काम अपने मुसाहिबों द्वारा कराते हैं, अिसलिअे यदि खरीद-फरोख्तमें वे और अधिक घाटेमें रहे, तो अिसमें आश्चर्य क्या? हिमशिखरों और नीचेकी समतल अुपत्यकाके सुन्दर दृश्योंसे वंचित अिस बंगलेमें आकर अुन्हें अफसोस होना ही था खासकर जब कि *कभी-कभी यह जाड़ोंके आरम्भ तक भी यहाँ रह जाते।* प्राय सारे दिन सूर्यकी किरणोंसे वंचित अिस स्थानकी सर्दीमें अुनको तकलीफ भी होती थी। क्या करें, अब तो ढोल गलेमें पड चुकी थी।

कुँअरानीको अपने बंगलेके गुण अवगुणकी चिन्ता करनेकी फुर्सत नही थी। वे अेक रियासती राजाकी पुत्री थीं और कुमार साहब पिताके अनेकिन दर्जनों कुमारोंमेंसे अेक। कुँअरानीके पास कुछ पैसा भी था, पीहरसे कुछ और भी मिलता रहता था, अूपरसे राज-पुत्री होनेका अभिमान, अिसलिअे वे अपने पतिकी बहुत पर्वा करनेके लिअे मजबूर नही थीं। दूसरी तरफ कुमार भी मर्यादा पुरुषोत्तम अपने पिताजीके कदमोंपर चलनेके

लिअ स्वत अ थ, यदि अुसमें बाधा थी तो यही कि हाथ तग था और अिसीलिअ दूर दूर तक निशाना नही लगा सकने थ। कुँअरानीको दुनिया जहानकी पवा हो भी नही सकती थी क्योकि सबेरे छोटी हाजिरीके समयही अुनकी मेजपर बोतल और चषक आ जाते फिर अुनके प्यालोका ताता करीब करीब रातको सोनके बक्तही खतम होता। अुनका दिमाग चौबीसो घट नशमें चूर रहता। शराबके प्यालोसे गम गलत करती हुअी बचारी कुअरानी अक दिन परलोक सिधार गयी। तब रियासत विलीन हो चुकी थी। यद्यपि कुँअरानी कहनपर कभी अिसपर विश्वास करनके लिअ तैयार नही थी।

कुमारको कुँअरानीके मरनेकी फिकर नही थी। सारे भारतके रजवाडोकी तरह अनके ससुरालपर भी पाला पड गया था, अिसलिअ अुधरसे कोअी आशा नही हो सकती थी। अपनी जो आमदनी थी अुसमें छोटी चादरवाली हालत थी सिर ढाके तो पर नगा पैर ढाके ता सिर नगा। अूपरसे यह सोच सोचकर और भी दिल मरता जाता था कि आमदनीके स्रोत सूखते जा रहे ह और सम्पत्तिका बेंचकर बहुत दिन काट नही जा सकते। अुनक साले राजा जब पहले आते तो खूब हँसी खुशीकी पान गोष्ठी रची जाती और मालूम होता अुनकी दुनियामें कही दु खका पता नही। साले राजा अब अपनी विपताम पड हुअ थ। खच चलानके लिअ अपनी सम्पत्ति बचनके लिअ मजबूर थ। बहनोअीस पहले सालेनही अपन बगलेको बचनक लिअ दौड धूप शुरू करवायी थी। अुस समय अुन्हे अपन बगलक लिअ काफी रकम मिल रही थी लकिन राजा लोग बिना मुसाहिबोके मशोरेके अपनी सम्पत्ति बच नही सकते थ। खरीदारको यदि असी सम्पति लेनी है तो मुसाहिबोके अूपर अच्छा फल चढाना जरूरी है। अिसी गडबडीम राजा साहबका बगला नहा बिक सका और कुछ ही सालो बाद यह देखकर अुनको और अुनके मुसाहिबोको बडी निराशा हुअी कि मधुपुरीके बगलो और कोठियोका दाम अुस समयसे अब आधा भी नही रहा।

कुमार दुरजय 'योग्य पिताके योग्य पुत्र थ, फक केवल परिमाणका था। पिताने अगर अकसे अक कीमती सैकडो कुत्त पाल रख थ तो पुत्र दो चार भी न पाले यह कैसे हो सकता था? अुनके पास यूरोपीय नसलका सबसे बड कुत्त ग्रेट डनका अक जोडा था और अक जोडा खूखार भोटिया कुत्तोका। ग्रेट डेन लम्बाअी अूचाअीमें बहुत बडा होनेपर भी भयकर नहा थ। वे काफी समझदार थ और जानते थ कि मनुष्य हमारा शिकार बननके लिअ नही है। अपरिचित व्यक्तिपर वे कभी भूक भाक देते थ। लेकिन भोटिया जाडकी बात दूसरी ही थी। वे अपन लम्ब बालोके कारण ग्रेट डनसे कही अधिक भारी भरकम दिखलायी पडते, शायद ताकतमें भी ग्रेट डन अुनका मुकाबला नही कर सकते थ। परन्तु बाहरी आदमियोक लिअ काल थ। अुन्हे दखकर या दूरसे अुनकी भयकर आवाज सुनकर लोगोकी रूह कापती थी। कुमार साहबका बगला अक सुनसानसी जगहमें छोटी सडकक किनारे था। यह असी सडक थी, जिसपर बहुत कम लोगोको जानकी जरूरत पडती थी। जो भी अुधरसे गजरता पहलेहीसे देख लेता कि भोटिया कुत्त अच्छी तरह बध ह या नहा। कुमार असे बवकूफ नही थ, कि अपन अिन दरिन्दोको छोड रखते जो बिना काट आदमीको छोड नही सकते थ।

बापकी राजधानी और जागीरके गाँवमे अभी भी कुमारके महल मौजद थ। मधपुरीम सीजन बिताकर अभी वहाँ जाना अुनका बन्द नहा हुआ था विशषकर राजधानीवाले महलमें वे अक्सर अपन जाडोको बिताते थ। अुनके पास यही दो जोड कुत्त नही थ बल्कि घोड दूसरे कुत्त चिडिया हिरन घरपर भी मौजद थ। नौकर चाकर तीनो जगहोम रहते थ—खर्चीला सौदा था। अूपरसे कुमारका अपना जीवन अभी चादरके अनुसार नहा था। खान पीन और दावतोमें सावर्ची बढती जाती थी। मधुपुरीमें कोअी जल्सा या फक्शन होता अुसमें कुमार अवश्य निमन्त्रित होते और वहाँ जाकर वह अपनी सावर्ची भी बिलकुल भूलनके लिअ तयार नही थ। अच्छा अच्छो नसाबोपर अुनका खर्च कम नही हुआ और न कुमार-पुत्र कम हसियतमें रख जा सकत थ। अग्रजोके जानपर भी

अंग्रेजोंका राज्य तो अभी हिन्दुस्तानसे गया नहीं है, अिसलिअे कुमार अपने पुत्रोंको मधुपुरीके अेक अच्छे युरोपियन स्कूलमें पढाते थे। पुत्रियाँ छोटी होनेसे अभी कान्वेन्टमें थीं। धीरे-धीरे पैसेका अितना टोटा पड गया था, कि स्कूलकी फीस तक नहीं दे पाते थे— या यों कहना चाहिये, कि कुमार अुसी खर्चको अदा करना चाहते थे, जिसके लिअे वैसा करना अनिवार्य था। खाने-पीनेकी चीजोंपर भी कुमारका काफी खर्च था, क्योंकि अेक तरफ सभी चीजें महगी थीं और दूसरी तरफ मेहमानोंका आवागमन कम नहीं था। अपने और अपनी नयी प्रियतमाओंके लिअे कपडों और जेवरोंकी भी जरूरत पडती थी। सभी चीजें अुधारपर आती थीं। बनिये अिस बातकी हिम्मत नहीं करते थे, कि अुधार देना बन्द कर दें,क्योंकि अिससे सालमें कुछ रुपये लौट आते थे। अिस तरहके अुधार और बेबाकी कुमारके यहाँ चलती ही रहती थी और कितने ही बनिये तो पता नहीं पाते थे, कि कर्जेकी तमादी लग चुकी है।

लाडूराम मनमाने दामपर कुमारको चीजें दिया करते थे। कभी-कभी नगद रकम भी अुधार दे देते थे, क्योंकि कुमार मनमाना सूद देनेके लिअे तैयार थे। लाडूराम बेचारे १५–२० हजारके आसामी थे। अर्थात् पहिलेके चार-पाँच हजारके। कुमारपर चार हजार रुपया अुधार हो गया। तकाजा करनेका यही फल हुआ, कि कुमारने अुनके यहाँसे चीज खरीदनी छोड दी। कुछ दिनों तक नगद दाम और फिर अुधारपर, अुन्होंने लाडूरामके किसी दूसरे पडोसीको पकडा। आदमियोंके साथ तकाजा करनेसे कोअी फायदा न होते देख लाडूराम अेक दिन स्वयं कुमारके बगलेपर पहुँचे। आँख मूँदकर दूरसे ही अच्छी तरह देखा। दोनों मोटिया कुत्ते आज बगलेके सामने नहीं बधे थे। दिल अब भी डर रहा था, लेकिन अेक पुराने परिचित नौकरने अुन्हें विश्वास दिलाया, कि कुत्ते पीछेकी तरफ हैं। लाडूरामकी जानमें जान आयी। बडे आदमियोंको मनमाने दामपर यों ही सौदा बेचा नहीं जा सकता, अिसके लिअे नौकर चाकरोंकी मुट्ठी गरम करनी पडती है, अतः कुमार साहबके नौकर यदि लाडूरामके साथ महृदयता दिखलानेके लिअे तैयार थे तो वाजिब ही था। लाडूरामके कहनेपर अेक नौकरने जाकर कुमार साहबके पास अरज की—सरकार, अेक आदमी आया है?

—कौन-सा आदमी, बगलेका खरीदार?

—नहीं हुजूर लाडूराम बनिया, पैसोंके लिअे।

लाडूरामका नाम सुनते ही कुमारकी त्यौरी बदल गयी। अुन्होंने अपने नौकरको पुकारकर कहा:

— खियाली, मोटियोंको छोड दे।

कुमारने कुछ अूँची आवाजसे कहा था, जिसकी जरूरत भी नहीं थी, क्योंकि लाडूराम कुमारके कमरेसे बहुत दूर नहीं थे। मोटियोंका नाम सुनते ही लाडूरामके प्राण हवा हो गये। वे अुल्टे पैर जमना नौद हिलाते बाहरकी तरफ लपके तुरन्त ही कुछ गजकी चढाअी शुरू हो जाती थी, लाडूरामको न जाने कहाँसे अितनी ताकत पैदा हो गयी, कि दौडकर चढ गये और फिर सडक पकडकर तब तक दुलकी ही भागते रहे, जब तक कि बंगला ओटमें नहीं चला गया। लाडूरामको अपनी बेवकूफीपर झुँझलाहट हुअी। वकीलसे पूछकर अुन्हें मालूम हो गया था, कि नालिश करनेकी मियाद खतम हो चुकी है। कुमार अिस तरह तकाजेके मारे किसीका ऋण चुका देनेके लिअे तैयार नहीं थे। ज्यादासे-ज्यादा वह यही कृपा कर सकते थे, कि आगेके लिअे अुधार चीजें न मगाअें। किसीको नालिश करनी है तो नालिश करता फिरे। कुमारके अूपर ममनता मोल होना संभव नहीं था। लाडूरामको घर लौटनेपर अुस दिन १०२ डिग्री बुखार आ गया।

(४)

कुमार दुरजयको अब अुधार भी मधुपुरीमें कोअी देनेवाला नहीं था। सभी जानते थे, कि अुनको अुधार देना रुपयेको पानीमें फेंकना है। मधुपुरीमें रहनेपर कुमारका खर्च भी अधिक बढ जाता था। अुन्हें अपने खर्चको कम करनेकी फिकर पैदा हुअी। जागीरके महलको अब अेक तरह अुन्होंने छोड दिया था और अधिकतर राजधानीके महलमें ही रहते थे। वे जानते थे, कि पडोसमें तर होते रहें और अुमसमें दिन काटना मेरे लिअे बहुत मुश्किल होगा, लेकिन मधुपुरीके खर्चेके

था। कुमारको अपने मोटर और जीप चलानेके कौशल पर अभिमान था। अुनके मनमें अुमंग पैदा हुअी मैं भी खाकी वर्दी पहनकर अमेरिकन किसान बन जाअू। कुमारके मुसाहिबने महाराजकुमारसे बातचीत की। महाराज कुमारने पूछा मधुपुरीमें कोठी कैसी और किस जगह है।

कुमारके मुसाहिबने बडे अदबके साथ बतलाया—सरकार वह मधुपुराके अुस मुहल्लेमें है जहाँ केवल साहब लोग रहा करते थे। चार रूम हैं डाअिंग और डाअिनिंग हाल है। बाहर भी चार कमराका प्राअिवेट सेक्रेटरी या मेहमानोंके रहनेके लिअे छोटा सा बंगला है। चारों तरफ हरियाली है बडी सुंदर जगह है।

और वहाँतक मोटर भी जाती है?— महाराज कुमारने पूछा।

मुसाहिबने नम्रतापूर्वक कहा—हुजूर बिल्कुल बंगलेके भीतर तक जीप जाती है, थोडा रास्ता ठीक करनेसे मोटर भी वहाँ तक पहुँच जाअेगी।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि कुमार और महाराजकुमार दोनोंके मुसाहिबान पहलेहीसे बातचीत कर सौदेमें अपना हिस्सा भी निश्चित कर लिया था कुमार दुरजयके पिता भी महाराजा थे अिसलिअे अुन्हें महाराजकुमार कहना चाहिये किन्तु सरलताके लिअे हमने यहाँ अुन्हें कुमार कहा है। महाराजकुमारके मुसाहिबने बीचमें बोलते हुअे कहा

सरकार, मधुपुरीमें यदि आप चली जाअें तो वही बहुत है। वहाँके बंगले आप देखते ही हैं आराम अकान्तता और सुंदरताको देखकर बनाये गये हैं। जीप जानी है यहाँ गनीमत है।

महाराजकुमारने विचार करके दो दिन बाद जवाब देनेके लिअे कहा। विचार क्या करना था वह तो जानते ही थे कि कुमार दुरजयको फार्म क्या अेक रत्न मिलेगा। अितना बडा बंगला मधुपुरीमें अुस चीजके बदले मिल रहा है जिसे मैं किसी दामपर भी बेचनेके लिअे तैयार था। अुसे खरीदनेके लिये क्या न अुत्सुक हो जाते? अुसी जाडेमें अुन्होंने अपने मुसाहिबको बंगला देख आनेके लिअे मधुपुरी भेजा जिसने अुसकी प्रशंसाके पुलंदे बांधे भारी रखते हुअे भी अिस बातको साफ कह दिया था कि मोटर वहाँ हर्गिज नहीं जा सकती। बंगलेकी और बातें सुनकर महाराजकुमारके मुँहमें पानी भर आया। कुमारने भी फार्मको जाकर देख लिया। वे मन ही मन कहने लगे कि महाराजकुमार अपनी नातजर्बेकारीसे अिस सोनेकी चिडियाको हाथसे खो रहे हैं।

अुसी जाडेमें फार्मको मधुपुराकी कोठीसे बदलनेकी बात ही नहीं तय हो गयी बल्कि लिखा पढी भी हो गयी। अब कुमार दुरजय फार्मके मालिक थे। अुनकी मोटर महलसे सत्तर मील दूरपर अवस्थित फार्मकी ओर दौडने लगी। अपने मुसाहिबोंके साथ मिलकर वह भविष्यका प्रोग्राम बनाने लगे। अुन्हें अिस बातकी प्रसन्नता होनी ही चाहिये थी कि सडी-गली कोठीसे पिंड छूटा और अुसकी जगह सोनेकी चिडिया हाथ आयी। सबसे अधिक प्रसन्नता अुन्हें अिस बातकी थी कि अब मधुपुरीके कर्ज देनेवालोंके तकाजेसे पिंड छूटा। मनमें यह ख्याल करके और भी प्रसन्न होने लगे कि फार्मकी प्राप्तिके साथ साथ कर्जके बीस हजार रुपये भी अुसी कोठीके दाममें हैं।

महाराजकुमारके अेक दो आदमी पहले ही आकर मधुपुराके नये बंगलेको तैयार करनेमें लग गये थे। बस होते ही दो चार हफ्ते बाद महाराजकुमार मधुपुरी पहुँचे किन्तु जल्दी अुन्हें अपने नये मकानके देखनेकी बेकरारी भी थी, अिसलिअे जल्दी आ पहुँचे। अंग्रेजोंके शासनमें मधुपुरीमें अड्डेपर ही मोटरोंको रुक जाना पडता था और लाट साहब तथा दो चार और बडे अधिकारियोंको ही मोटरसे अनुकूल सडकोंपर गुजरने दिया जाता था। लेकिन अंग्रेजी राज्यके हट जानेसे अब यह सुभीता हो गया कि कोअी भी कुछ रुपये देकर मोटर-लायक सडकोंपर अपनी मोटर ले जानेके लिअे स्वतंत्र है। महाराजकुमारको मालूम था कि बंगले तक मोटर नहीं जाती अिसीलिअे अपनी जीप लाये थे। परमिट लेकर बंगलेकी तरफ चले लेकिन चार फर्लांग पहले ही जीपको रुक जाना पडा। लोगोंने बतलाया कि आगे जीपका रास्ता नहीं है। महाराजकुमारको कुछ झुंझलाहट पैदा हुअी लेकिन यह समझानेपर कि जीपके जानेमें कुछ मरम्मत करनेकी जरूरत है अुनका टम्परेचर ठीक हो

गया। अुतरकर अपने बगलेकी ओर पैदलही बढे। बगलेको नौकरोंने ठीकठाक कर दिया था। अुसमें अुनको अुतनी शिकायत नही हुअी। सभी चीजें वहाँ पुरानी थी और फर्नीचर भी सख्यामें कम थे, तो अुनका फार्म भी तो कुछ अैसी तरहका था। दो चार दिन रहनेके बाद महाराजकुमारकी कुँअरानी और लडके जगलके भीतर दम घुटनी सी जगहके अिस सुनसान बगलेमे अुकता गये। अुन्होने शिकायत करनी शुरू की। महाराज-कुमारका भी अब मन भर गया। सबसे बडी शिकायत अुनको अिस बातकी थी कि यहाँ जोर भी नही आ सकती। किसी समय अपने टूट फूट घोडको मधुपुरीकी सुन्दर कोठीमे बदलकर वह फूले न समाते थे, समझते थे, मैंने दुरजयका खूब अुल्लू बनाया। लेकिन अब अुन्हें अिस बूढी कोठी और अुसके आसपासका स्थान देखकर मालूम हुआ कि दुरजय बाजी मार ले गया।

महाराजकुमारको अब यह चिन्ता होने लगी, कि अिस कोठीको बेंचकर कोअी और जगह ली जाअे। मधु-पुरीमें अुन्होने कुछ जगहोंपर स्वय घूमकर पता लगाया, तो मालूम हुआ कि २० २५ हजारमें अिससे कही अधिक अच्छी कोठी मिल सकती है और अैसी जगहपर जहाँ मोटर भी पहुँच सकती है। अुन्होने भारी कमीशनका लोभ दे अजेन्टोको कह रखा है कि कोठी बिकवा दें। लेकिन मसूरीका कोअी निवासी आशा नही रख सकता, कि अिस कोठीको कोअी मिट्टीके मोलपर भी लेनेके लिअे तैयार होगा। हजार पाँच सौ फर्नीचरके आ सकते हैं किवाड और जगल थलगसे अुखाडकर बेचे जाअें तो अुससे भी कुछ पैसा मिल सकता है लेकिन अिसमें सन्देह है कि वह कामपर लगाये गये मजूरोंकी मजूरीके लिअे भी पर्याप्त होगा।

क्यों न हो। आखिर तो अुन्हें यह देखना पड़ता है कि अुनके अपने कार्यके स्वार्थ किस ओर रहनेसे पूरे किये जा सकते हैं। यह ब्रिटनमें जितना आज सही है अुतना ही पिछले युगोंमें भी सही था।

यह अंग्रेजी क्रान्तिके समय १७ वीं सदीमें लोगोंने जाना कि ज्ञानका अर्थ प्रकृतिपर मनुष्यकी विजय अथवा फ्रांसिस बेकनके शब्दोंमें **मनुष्यकी जायदादका आराम**। मिल्टन अंग्रेजोंका नामी कवि हो गया है। परंतु अुसका नाम और मान केवल अुसकी कविताके कारण ही नहीं वरन् अुसकी प्रगतिशील राजनीतिक विचारधाराके कारण भी है। अेक नौजवान विद्यार्थीके रूपमें ही अुसने कैम्ब्रिजमें मध्ययुगीन अध्ययनवादके विरुद्ध और अुसके अूपर आधारित शिक्षाके विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलन्द की थी क्योंकि अुनसे सच्चाअीपर पर्दा पड़ता था और आम जनताको सचपनसे दूर किया जाता था। कैम्ब्रिज-विश्वविद्यालयसे शिक्षा प्राप्त करनेके बाद निकलते समय अपने विद्यार्थी जीवनके अंतिम भाषणमें मिल्टनने अेक समयकी कल्पना की थी और वह यों थी " अेक समय आअेगा जब कि मनुष्यकी चेतना अितनी अधिक अुन्नत हो जाअेगी कि अुसकी आत्मा सितारे तक मानने लगेंगे अुसके हुक्मपर जमीन और समुद्र गान लगेंगे और अुसकी सेवामें वायु और तूफानतक लग रहेंगे और अंतमें **माँ प्रकृतिने** अुसके सामने अिस प्रकार आत्म समर्पण कर दिया होगा जैसे कि मानो परमात्माने विश्वका सिंहासन अपनी अिच्छासे छोड़ दिया हो और विश्वके अधिकार कानून और प्रशासन मनुष्यके हाथमें दे दिये गये हों यह ठीक है कि मिल्टनका यह अुच्च विचार ब्रिटनके विश्वविद्यालयोंमें पूरी तरहसे घर नहीं कर पाया परन्तु अुसकी आंतरिक प्रतिष्ठा बनी रही। अुसीके सहारे रायल सोसाअिटीकी स्थापना हुअी। आधुनिक विज्ञानोंके अितिहासकी नींव पड़ी। पीछे जब नये सुधारक लोगोंके लिअे अनुदारपूर्ण भावनाओंके सहारे और धार्मिक परम्पराके कारण ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिजके दरवाजे बन्द हो गये तब अुन्हीं लोगोंने नये रूपमें बेकनकी परंपराओंको कायम रखनेके लिअे और आगे बढ़ानेके लिअे नयी शिक्षा संस्थाअें खोलीं।

ब्रिटनकी डिस्सेंटिंग अकेडमीज़के नौनकौनफौर्मिस्ट संस्थापक लोग जैसे ही थे जिनका १८ वीं सदीमें खूब बोलबाला था। अुनके साथ अुस समयके अधिकतर प्रगतिशील विचारक संबद्ध थे। अिन्हींमें **अिरेसमस डार्विन** थे—कवि चिकित्सक वैज्ञानिक और शिक्षा शास्त्री। अिन्हींकी **जूनोमिया** नामक पुस्तकने विकासवादके सिद्धांतकी सर्वप्रथम स्थापना की। अिन्हींमें **पर्सिवल** थे। मैंचेस्टरके अेक डाक्टर और समाज शास्त्री मैंचेस्टर साहित्यिक और दार्शनिक समाजके संस्थापक जिन्होंने मैंचेस्टरमें अेक विश्वविद्यालय खोलनेका पहला प्रस्ताव रखा था। अिन्हींमें **जौन डाल्टन** थे—मैंचेस्टरके ही जिन्होंने रसायनशास्त्रमें अणु सिद्धांतकी नींव डाली। वैसे ही **जोसेफ प्रीस्टले** थे शिक्षक दार्शनिक और व्यवहारिक वैज्ञानिक जिनका घर बर्मिंघमके चर्चको माननेवालों और राजाके भक्तोंने अिसलिअे जला दिया था और वैज्ञानिक अुपकरणोंको अिसलिअे तोड़ फोड़ दिया था क्योंकि अेक चेतन विचारकके नाते अिन्होंने फ्रांसीसी क्रांतिका समर्थन किया था।

अिन व्यक्तियोंने जिनका जन्म नये औद्योगिक केंद्रोंके अंदर हुआ था अपनी आँखें सदा भविष्यपर रखीं। ये अपने समयके सब नये विचारोंसे केवल सहमत या अवगत ही नहीं थे बरन अुनमें भाग लेनेवाले थे जिन्हें हम आजकी भाषामें क्रान्तिकारी कह सकते हैं। **अुन्होंने फ्रांसीसी क्रान्तिका खुले हाथों स्वागत किया। अुन्होंने सदा विचारों और खोजोंकी स्वतंत्रताके लिअे संघर्ष किया और अिसका सदा विरोध किया कि परंपरागत विचारोंको बिना सवाल किये ही स्वीकृत कर लिया जाअे।** अिसलिअे अिसमें कोअी शक नहीं रह जाता है कि शासक वर्ग अिन संस्थाओंसे और अिन संस्थाओंको चलानेवाले व्यक्तियोंसे क्षुब्ध हो गया। वुकन हैकनी कालेजको **खतरनाक** घोषित कर दिया क्योंकि अुस कालेजके विद्यार्थियोंने टौमपेन जैसे क्रांतिकारीको अपने कालेजमें सम्मानके साथ भोजन करवाया था और अपने लिअे स्वयं सोचनेके अधिकारका खुले-आम प्रतिपादन किया था।

इसी प्रकार स्काटलैंडमें भी जनवादी और अुदारवादी शिक्षाकी परपरायें कायम हुओं। स्काटलैंडके दार्शनिक स्कूल और चिकित्साके स्कूल अपने जमानेमें बडे मशहूर हुअे जो पीछे जाकर आजकी स्कौटिश् यूनिवर्सिटियोंके बडे-बडे विभाग बन गये। यदि आप अुस जमानेके अुदारवादी ब्रिटिश समाजमें शिक्षाकी ओर देखें तो आपको पता चलेगा कि ब्रिटिश शिक्षा शास्त्री लोग स्कौटिश विश्वविद्यालयोंको, अमेरिकामें जैफरसन द्वारा खोले वर्जीनियाके नये विश्वविद्यालयको और बर्लिन और बौनके महान जर्मन विश्वविद्यालयोंको जो १८१३ के बाद जर्मन जनताके संघर्षके फलस्वरूप स्थापित हुअे थे, अपने सामने रखकर देखा करते थे। कहना न होगा कि अपना लन्दनका यूनिवर्सिटी कालेज १८२८ में स्थापित करते समय अुनके सामने युक्त संस्थाअें ही थीं, जो अपनी कहानी आप कहती हैं।

लन्दनके यूनिवर्सिटी कालेजका संस्थापन कोअी आसान काम नहीं था। जिसके लिअे संस्थापकोंको काफी राजनीतिक जद्दोजहद करनी पडी। अुसका परिणाम यह हुआ कि १८३२ के शिक्षा सुधार विधेयकके पारित हुअे बिना अिसे रौयल चार्टर नहीं मिल पाया। ब्रिटेनमें सामाजिक प्रगतिके प्रणेता रूपमें यूनिवर्सिटी कालेज, लन्दनका बहुत बडा स्थान रहा है। यहांपर ही पहली दफे अेक कालेजमें कला, विज्ञान, शिल्प, प्रोद्योग आदिकी शिक्षा बिना धार्मिक आधारके दी जाने लगी। ब्रिटेनके अितिहासमें पहली दफे अेक कालेजमें दर्शनके प्राध्यापकका पद अेक अैसे आदमीको दिया गया जो कि पादरी नहीं था। अिन्हीं सब कारणोंसे अिसमें गणितज्ञ डि मौर्गन, रसायनज्ञ विलियमसन, साहित्यिक मैसन, कवि मिल्टन, समाजशास्त्री बैन्थम, स्टुअर्ट मिल और जौर्ज ग्रोटको मानसिक विश्राम पानेका अवसर दिया। ब्रिटेनकी शासक श्रेणियोंकी घोर टोरी विचारधारापर यह अुदारवादी हमला अिसी कालेजके महान प्राध्यापकोंके कारण संभव हो सका।

लन्दनके यूनिवर्सिटी कालेजसे शिक्षा ग्रहणकर अुन्नीसवीं सदीके अुत्तरार्द्धमें ब्रिटेनके नये पर बडे औद्योगिक केन्द्रोंमें नये-नये विश्वविद्यालय स्थापित किये गये। जिनके प्राध्यापक अेक कदम और आगे बढे। जिनमेंसे बहुतोंने समाजवादी आन्दोलनके साथ अपनेको देखा। प्रोफेसर बीजली कार्ल मार्क्सके दोस्त थे। मैंचेस्टर विश्वविद्यालयके मशहूर प्रोफेसर शौर्लेमर, जिन्होंने अेंगेल्सको रसायन-शास्त्र पढाया था, स्वयं अेक बडे प्रगतिवादी विचारक थे। मार्क्सकी मृत्युके बाद अेंगेल्सने कहा था ' मार्क्सके बाद निःसंदेह शौर्लेमर ही युरोपीय सोशलिस्ट पार्टीमें सबसे प्रमुख व्यक्ति हैं। मैंने जब आजसे बीस साल पहले अुन्हें जाना था तो वे पहलेसे ही कम्युनिस्ट हो चुके थे ' कहना न होगा कि आज ब्रिटेनके विश्वविद्यालयोंमें अेक नहीं वरन कअी शौर्लेमर मौजूद हैं। प्रोफेसर जे डी. बर्नाल, प्रोफेसर हाअीमन लेवी, डाक्टर मौरिस डैब, प्रोफेसर जे बी अेस. हाल्डेन आदि महान विचारक शौर्लेमरकी सुन्दर और स्वस्थ परम्पराके ही अनुगामी हैं। आजके ब्रिटेनमें जो सांस्कृतिक प्रगतिकी अविच्छिन्नता नजर आती है, जो सामाजिक अुद्बोध दिखलायी देता है, अुसका अधिकतर श्रेय अुक्त श्रेणीके ब्रिटिश अध्यापकोंको ही है, जिन्होंने अपनी पदकी सुरक्षापर खतरा मोल लेकर भी, शासक श्रेणीसे वैर करके भी, श्रमिक जनतामें नये ज्ञानकी जडें जमाने रखनेका पूरा और भरसक प्रयत्न किया।

पिछले बीस सालोंमें जो ब्रिटेनमें शान्त सामाजिक-क्रान्ति हुअी है अुसने ब्रिटेनकी श्रमिक श्रेणीके बेटे-बेटियोंको विश्वविद्यालयोंके दरवाजे खटखटानेकी ओर संकेत किया। और आज अुनके अन्दर भी ज्ञानकी पिपासा जैव सांस्कृतिक अुपादानोंको भोगनेकी तीव्र अिच्छा पायी जाती है। ब्रिटेनकी मजदूर सरकारने युद्धोत्तर कालमें यहांके विद्यालयोंका और विद्यालयी शिक्षाका पुनःसंघटन किया है, जिसके अनुसार गरीब घरोंके भी प्रतिभाशाली नौजवानोंको विश्वविद्यालयोंमें जानेका मौका मिल सका है, और फिर बडी-बडी ट्रेड यूनियनोंने अपने सदस्योंके बेटे-बेटियोंके लिअे भी कुछ विशेष छात्रवृत्तियोंका अिन्तजाम किया है। अुसीके साथ पिछले दस सालोंमें शाममें चलनेवाले प्रौद्योगिक और कलामूलक स्कूल और कालेजोंकी अभूतपूर्व वृद्धि भी पैदा हुअी है, जिसमें लाखों कमकर व्यक्ति अपने

फुरसतके समय विशिष्ट शिक्षाओंके लिअे आते जाते हैं। वैसे ही कभी बड़ी बड़ी संस्थाअें बनी हैं जैसे **'वर्कर्स अेजूकेशनल असोसियेशन'** जिनका काम औद्योगिक केन्द्रोंमें समाजशास्त्र, राजनीति, अर्थशास्त्र, प्रौद्योगिक आदि विषयोंपर बड़े बड़े विशेषज्ञों द्वारा भाषणों और कोर्सोंका आयोजन करना है। अिनमें भी श्रमिक जनता बड़े अुत्साहके साथ भाग लेती है।

अिन सबके संश्लेषणने अेक अैसी स्थिति पैदा कर दी है जिससे यहाँकी बुर्जुआ श्रेणियाँ काफी भयभीत होती जाती हैं। वे ज्ञान और संस्कृतिके प्रसारके अिन साधनोंको कम करना चाहती हैं। टोरी सरकारने और अधिकतर टोरी नीतियोंने प्रणाली रूपसे कमकर जनताकी अिन नयी क्षमताओंपर हमला करना शुरू कर दिया है। सरकारकी ओरसे शिक्षापर किया जानेवाला खर्च कम किया जा रहा है। नये स्कूलोंका निर्माण लगभग ठप्प है। हरसाल नये नये विद्यार्थी स्कूलोंमें आते जाते हैं परन्तु अुनके लिअे नये स्थान नहीं। जिस लिअे जिस श्रेणीमें तालीमको जगह मिलनी चाहिये अुसमें पचास शिक्षार्थी बैठाये जाते हैं। कहना न होगा कि ब्रिटेनकी प्रगतिशील विचारधाराओंने अिस प्रवृत्तिका जमकर विरोध किया है।

आम जनतामें ज्ञानके अिस प्रसारने और संस्कृतिके अिस विस्तारने अुनको पुरानी और दकियानूसी विचारधाराको छोड़कर स्वस्थ और जनवादी तर्कवादी विचारधाराओंकी ओर पुरस्सर किया है। यहाँपर भी टोरी विरोध बहुत पक्का है। आज यह सर्वविदित है कि पूँजीवादके गढ़ अमेरिकामें केवल राजनीतिमें ही नहीं वरन् विज्ञानमें भी प्रतिक्रियावादी विचारधाराका बोलबाला है। ब्रिटिश टोरी समाजका अुद्देश्य यह है कि पूँजीवादी व्यवस्थाको बचानेमें अुन विचारधाराओंका खुले आम अुपयोग होना चाहिये। अिसलिअे आज ब्रिटेनके विश्वविद्यालयोंमें **'प्रेतोंका शिकार'** प्रारंभ हो गया है। प्रगतिशील विचारधारा रखनेवाले लोगोंकी नियुक्ति मुश्किलसे ही होती है। क्योंकि आज भी विश्वविद्यालयोंकी शासिका संस्थाओंमें टोरी विचारधाराके लोगोंका, लार्डों और सरके खिताबधारियोंका ही बोलबाला है। वे ही नये प्राध्यापक चुनते हैं। परन्तु ब्रिटेनमें **'प्रेतोंका शिकार'** जरा छिप छुपकर होता है। खुले आम नहीं जैसा आज अमेरिकामें देखनेको मिलता है।

अिसने भी विश्वविद्यालयोंमें अेक संघर्षकी स्थिति पैदा कर दी है जिसके अनुसार अुनमें बहुतोंके लिअे राजनीतिक विचारधाराओंकी परख अनावश्यक करार दी जाने लगी है। केवल योग्यताके ही आधारपर *नियुक्तिका नारा आज ब्रिटेनके सब विश्वविद्यालयोंमें* गूँज रहा है। क्योंकि यह संघर्ष भी विचारकी स्वतन्त्रताका, खोजकी स्वतन्त्रताका संघर्ष है जिसके सहारे वैज्ञानिक शोध कार्यपर गोपनीयताका पर्दा न डालनेकी बात कही जाती है। कहना न होगा कि आजके प्रगतिशील प्राध्यापकगण ही अिस आन्दोलनका नेतृत्व भी कर रहे हैं। और वे जानते हैं कि अुन्हें यदि अपने *संघर्षमें किसीसे सहयोग मिलेगा तो श्रमिक श्रेणीसे ही* जो कि स्वयं टोरी नीतियोंके विरुद्ध है।

अिस तरह हम देखते हैं कि आजके ब्रिटिश विश्वविद्यालय और अिसके महान शिक्षाशास्त्री अपनी स्वर्णिम परम्पराओंके अनुकूल ही ब्रिटिश संस्कृतिकी रक्षा और अुसके विकासमें अुसी तरह दत्तचित्त हैं जैसे अुनके पुरखा १८ वीं और १९ वीं सदीमें थे। यही अुस स्वास्थ्यकी निशानी है जिसके सहारे ब्रिटेनके आगे आज भी ग्रेट [बड़ा] का विशेषण लगाया जाता है और मैं समझता हूँ कि सही तरीकेसे लगाया जाता है।

तमिळ कहानी :

अेकताका अंत

श्री शाण्डिल्यन्

"बदमाश और बहादुरमें कौनसा फर्क है ? दोनो दूसराको मारते-पीटते ही तो है न ?'

वैद्यलिंगमजी पिल्लैने 'बडी हवली' के मालिकसे जो छोटे मालिक' के नामसे मशहूर थे, सवाल किया। गावोंमें नित्य प्रति होनेवाली चर्चाओंमेंसे यह भी अेक है।

यहापर अिस बातका स्पष्टीकरण जरूरी है कि छोटे मालिक सचमुच छोटे मालिक या बच्चे नही थे। अुनेकी अुम्र लगभग छियालीस सालकी होगी। वे अनदानपुरमके सबसे बडे रओस थे। यही कारण है कि अुनका घर भी 'बडी हवली' के नामसे पुकारा जाता था।

अनदानपुरमकी अुस बडी हवलीके मालिक अर्थात् 'छोटे मालिक' के पिता जबतक जीवित थे, तब तक अुनके सुपुत्र सुदरेशन 'छोटे मालिक' के नामसे पुकारे जाते थे। अत बडे मालिककी मृत्युके बाद भी अुनका वही 'छोटे मालिक' नाम स्थायी हो गया। केवल वैद्यलिंगम पिल्लैजीके लिअे ही नहीं, वरन सारे गाववालोंके लिअे भी वे 'छोटे मालिक' ही बन गये थे।

वैद्यलिंगम पिल्लै जब कभी बडी हवेलीके बडे मालिकसे मिलने जाते, तब यही प्रश्न किया करते थे कि 'छोटे मालिक' क्षेम-कुशल-से तो है न ? अब वे ही छोटे मालिक सुन्दरेशन बडे हो गये और सुन्दरम अय्यरके नामसे हस्ताक्षर भी करने लग गये, फिर भी 'छोटे मालिक' की अुपाधि अुनसे अैसी चिपट गयी कि निकाले नही निकलती। हालांकि छाप्वे अेक छोटा पैदा होकर अुस छाप्वे भी बूढ़े भी आ गयी, फिर अय्यर अपने गाववालोंकी दृष्टिमें मार्कण्डेयकी तरह निरन्तर 'छोटे मालिक' ही बन रहे। गांवकी दही दूध बेचनेवाली ग्वालिन भी 'छोटे मालिक' ही कहा करती थी।

वैद्यलिंगमजी पिल्लैके सवालका जवाब छोटे मालिक तुरन्त नही दे पाये। अत, आराम कुर्सीपर पडे ही पडे अुन्होंने अेक करवट बदली और पूछा, क्या पिल्लैजी ! आपको अिसमें अैसा क्या सन्देह हो गया ? फिर निकटवर्ती पानदानको हाथमें अुठा लिया और दो चार पान निकाले तथा अुनमें चूना लगा अुनकी नसें निकालकर घडी की और मुहमें दबा लिया। जब किसी बातका अुत्तर देते न बन पडा तो अय्यर अैसी ही कोअी तरकीब निकाल लेते कि जवाब देनेसे पिंड छूट जाअे। अिस प्रकार चुप्पी साधनेके लिअे स्वयं अपनेपर दफा १४४ जारी करनेसे अय्यरका ख्याल था कि पिल्लैजीको हमने धोखा दे दिया और अुत्तर देनेसे हम साफ-साफ बच गये। हां, अैसे अवसरों पर वे सचमुच छोटे अर्थात बच्चे ही बन जाते थे और जबान नहीं खोलते थे। अगर मजबूर होकर किसी हालतमें बोलना भी पडे तो अैसी तोतली बोली बोलते कि सुननेवालेकी समझमें कुछ न आता। अैसे मौकोंपर अुनका ताम्बूल चर्वण सच्चा मददगार साबित होता।

अय्यरको तो वैद्यलिंगम पिल्लै बचपनसे जानते थे। क्या अिस हालतमें वे आसानीसे अिन बातोंमें पडकर धोखा कैसे खा सकते थे? पिल्लैजी फिर भी अपनी बातपर अडे रहे और पूछा 'छोटे मालिक ! मेरे सवालका जवाब दिये बिना आप पान खानेमें लग गये ! यह क्या ?

छोटे मालिकने अपने होठोंमें आधा हँसी लाकर अिस प्रकार दबाया मानों अुनके सवालका तो अुत्तर मौजूद है परन्तु मुहके अन्दर पानकी पीक अडचन डाल रही है। फिर हू करते हुअे कुर्सीपरसे अुठे और बाहरी बैठककी अेक ओर जाकर मुहका पीक थूका और अंदरकी ओर मुह करके आवाज लगाया, 'अजी, सुनती तो हो ! जरा अेक लोटा पानी लाना कुल्ला कर लू।

प्राप्त हो रहा है !" यह विचार आतेही अुनको नाकसे अेक गरम निश्वास निकल पडी।

सचमुच अन्नदानपुरम् बहुत बड़ा सुन्दर गांव था। प्रकृति माताने यहाँ खुले हाथों अपना सौंदर्य-भण्डार बिखेर रखा था। गांवके पूरबमें अेक बड़ा तालाब था, जिसके चारों किनारोंपर बेनकी केवड़ेके पेड़ लगे थे। तालाबके किनारे शिवजीका अेक मन्दिर था। पश्चिमकी दिशामें, कुमुदके पत्तों और फूलोंसे ढका अेक तालाब था। अुसके तटपर भगवान विष्णुका मन्दिर और अुत्तरमें ग्रामदेवता 'पिडारी'का मन्दिर था। दक्षिणके अेक कोनेमें 'मारि अम्मन' अर्थात् 'महामाया का मन्दिर था। गांवके चारों तरफ हरे लहलहाते खेत थे। बरसातके दिनोंमें गांव अैसा नजर आता था कि जैसे कोअी ग्रामबाला हरे रंगकी मखमली चादर ओढे सुखकी मीठी नींद ले रही हो। कार्तिककी खेती अुस ग्रामबालाको सुन्दर सुनहरी साड़ी पहना देती। पौषके शुरू होनेके पहलेही खेतके चारों तरफ फसलके ढेर लग जाते। अुस समय अैसा मालूम होता कि मार्गशीर्षकी ठिठुरती सर्दीसे बचनेके लिअे, वह ग्रामबाला, मोटी चादरको अुठा, अेक ओर फेंककर अुत्तरायणके सूर्यके गले लग गयी ताकि धूप लेकर सर्दीको भगा दे। अिस मंगलमय कार्यके शुभागमनका स्वागत करते हुअे ग्रामवासी नये धानसे शर्करान्न बनाकर सूर्य भगवानको चढाते, दावतें अुडाते और आनन्दमंगल मनाते। आनन्दोत्सवके अुपलक्ष्यमें बडी धूमधामसे मन्दिरोंमें अभिषेक-आराधना की जाती। किसानके साथी गाय-बैल भी अिस आनन्दमें शरीक होते और अपने गलेकी कलकंठी घंटियोंके कल-कल निनादसे आकाशको भी गुंजा देते। कहनेका मतलब कि 'पोंगल'के त्योहारके दिनोंमें गांवोंमें हँसी-खुशीका अैसा दौर चल पड़ता कि कुछ न पूछो!

अैसे आनन्दमय पोंगल-त्योहार बहुत दूर होते हुअे भी गांव, अपनी सुस्ती भगा देते और अगड़ाअी लेकर अुठ बैठते तथा बड़ी मुस्तैदी अेवं चुस्तीके साथ आनेवाले पोंगलका त्योहारका स्वागत करनेके लिअे तैयार हो जाते। गावोंमें मस्तीका अैसा आलम छा जाता कि बडे जोर और शोरसे खेतोंमें फसल काटना शुरू हो जाता और खलिहानोंमें अनाजके ढेर लगने लग जाते। जहाँ देखो, वहाँ सभी धूल-धूसरित कृषक ही देखनेको मिलते। गांवके सभी मन्दिर साफ किये जाते और मन्दिरोंकी दीवारें चूनेसे सफेद की जातीं।

सब प्रकारके अभिषेकके सामान और खर्चेके लिअे रुपये 'बडी हवेली' होते सब मन्दिरोंको भेजे जाते। "बडी हवेली' के मालिक जातिके अय्यर हैं— जिस कारणसे विष्णुका मन्दिर या पिडारीका मन्दिर अथवा मारियम्मनका मन्दिर किसी सुविधासे अेक रत्तीभी वंचित नहीं रहता। अभिषेक और अुत्सव सबका सारा प्रबन्ध वैद्यलिंगम पिल्लैजीकी देख-रेख ही में होता। अय्यर या पिल्लैके मनमें कभी यह भेद भावना नहीं अुठी कि हम जातिके अय्यर हैं या पिल्लै।

अय्यर अपने आचार-व्यवहारके विषयमें कितने कट्टर थे कि पिल्लैजीके साथ सामने बैठकर भोजन नहीं करते और दृष्टि-दोषसे बचते। पिल्लैजी भी अिस बातको बुरा नहीं मानते तथा अपने मनमें अिस बातके लिअे जगह भी न देते कि हमारे साथ अिस प्रकारका व्यवहार क्यों किया जाता।

आहार-व्यवहारको छोड अन्य सभी कार्योंमें पिल्लैजी अय्यरके अपने घरके और अय्यर पिल्लैके घरके आदमी थे। पिल्लैजीके घरमें किसीकी जरा जरा भी तबीयत खराब होती, अय्यर सहायताके लिअे दौड पडते। अुसी प्रकार अय्यरके घरमें कुछ हो जाता तो पिल्लैजी तबतक चैनकी सांस न लेते जबतक अय्यर अुससे पूर्णरूपसे छुटकारा न पा जाअें। यद्यपि अय्यर और पिल्लैमें अिस कदर अूपरी भेदभाव था कि अय्यर पिल्लैका छुआ ही नहीं, देखा भी नहीं खाते थे और अुनके स्पर्शमें छुआछूत अनुभव करते फिर भी अुन दोनोंमें अितना विशुद्ध प्रेम था कि किसी भी प्रकारकी विषमताका विष न पडने पाता था। कहनेका मतलब कि दोनों दो शरीर अेक प्राण थे।

लेकिन आजकल हम देखते क्या हैं कि वर्तमान पीढी बदल रही है। पुराने जमानेके विपरीत आज अूपरी अेकता बढ गयी है और अन्दरकी अेकता घट गयी है। जिसे देखो, अुसीने चोटीके बाल कटवा डाले हैं,

और तिलक-हीन शुभ्र मस्तकको ही सभ्यताकी निशानी माने हुअे हैं, जैसे-जैसे यह बाहरी अेकता बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे भीतरी वैषम्य विभिन्नता भी बढ़ती जा रही है।

यही हाल अन्नदानपुरका भी था। किसीकी समझमें न आया कि आपसका यह झगड़ा और मनमुटाव क्या? लोग अिस दुविधामें पड़ गये कि क्या करें, क्या न करें? कांग्रेसवालोंने झंडा फहराकर सभायें कीं तो विपक्षी लोगोंने भी कुछ बलवान व्यक्तियोंको अपनी तरफ करके लम्बे-चौड़े भाषण दिलवाये। जिला कलक्टर और तहसीलदारोंने गाँवके मुखियों और पटवारियोंका सहयोग प्राप्त किया और भिन्न-भिन्न प्रकारके प्रचारके चित्रपट दिखलाकर गाँवकी जनताको अपनी सरकारकी ओर आकृष्ट करनेका भरपूर प्रयत्न किया। अिस प्रकारके विभिन्न मतोंके चक्करमें पड़कर जनता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी तथा अपनी बुद्धिके अनुसार दल बाँधकर झगड़े-फिसाद और हाथापाअीपर अुतारू हो गयी। प्राचीन कौटुंबिक प्रेम-बंधन तथा गाँवकी मान-मर्यादा आदि अेक-अेक करके गायब स्वप्न होने लगे और अुनके स्थानपर बदमाशी तथा गुण्डागिरीने अपना आसन जमाया।

मास्टरजी और बलरामके मनमुटाव और हाथा-पाअीकी गहराअीमें अुतरकर देखा जाये तो स्पष्टतया विदित होगा कि अुक्त भावनाका अच्छा हाथ था। लेकिन अुनके अुच्च आदर्शोंपर चलनेवाले वैद्यलिंगम पिल्लैजीके मनमें अिस विषयने बड़ी गहरी चोट पहुँचा दी। अन्न पानेकी आशासे आनेवाले सभी लोगोंको जो अन्नदान-पुरम अन्न बाँटनेमें कोअी कसर अुठा न रखता था, वही दलबंदी और गुटबंदीके दलदलमें फँसकर, कचहरियोंके आश्रयमें जा, पानीकी तरह पैसे बहाये और अपने दानेके लिअे दूसरोंका मुँहताज बन जाये तो क्या हो? — यह विचार वैद्यलिंगम् पिल्लैके मनको दीमककी तरह खाने लगा। आज 'बड़ी हवेली'के अिस छोटेसे फिसादमें वैद्यलिंगमजी पिल्लैको अच्छे लक्षण नहीं दिखायी दिये थे। वे भिन्न-भिन्न प्रकारके विचारोंमें डूबते-अुतराते और लम्बी-लम्बी अुसाँसें लेते हुअे अपने घरकी ओर चले।

\+ + +

गुस्सेसे भरे हुअे फुर्तीसे अन्दर गये तो छोटे मालिक देखते हैं कि बलराम आँगनमें बैठा अपना घाव धो रहा है। अुन्होंने अुसके पास जाकर बड़े प्यारभरे शब्दोंमें पूछा, 'क्यों राम, चोट ज्यादा तो नहीं लगी?"

बलराम अुत्तर देनेके लिअे मुँह खोले-अिससे पहले ही, अय्यरकी सहधर्मिणी, जो अपने बेटेको घाव धोनेमें पानी अुँडेलकर मदद कर रही थीं, बोल अुठीं, 'मैं पूछती हूँ कि अुस दुष्ट लड़केको अितना साहस कहाँसे आ गया? अिस विषयमें आपने पिल्लैजीसे पूछा?"

'जब बाप अितना दुष्ट है, तो पिल्लैजी बेचारे क्या करते?"-अय्यरने पिल्लैजीका पक्ष लिया।

अुनकी पत्नीने अुसका कोअी जवाब न दिया और मौन धारण कर लिया।

"चोट भी ज्यादा नहीं लगी। वह जाने लगा तो अेक कंकड़ अुठाकर फेंक दिया, नहीं तो चोट भी न लगती।"—बलरामने अपने पिताको समझाया।

अुसपर अय्यर बिना सवाल किये, सीढ़ी चढ़कर अूपर चले गये। जब बलराम अपना हाथ-मुँह तथा घाव धो चुका तो अुसकी माताने 'अदिमन्दारै' का पत्ता चिरागपर सेका और चोटपर लगा दिया। थोड़ी ही देरमें खूनका बहना बन्द हो गया।

अगर यही चोट शहरमें किसीके लगी होती तो चार-पाँच बार डाक्टर आते, पगड़ीकी भाँति सिरपर मरहम पट्टीका 'बेंडेज' बाँधते, दो चार 'अेंटी टिटानीस' अिन्जेक्शन देते और अेक बड़ा-सा बिल बनाकर भेज देते और अिस हाथ दे, अुस हाथ ले, की नीतिसे अेक अच्छी खासी रकम अैंठ लेते। पर यहाँ गाँवमें तो अिसका अिलाज अितनी आसानीसे हो गया कि जेबसे अेक पैसा निकालनेकी भी जरूरत न पड़ी।

बलराम फिर यह कहकर कि आज मुझे भूख नहीं है, बाहरी बैठकसे सटा जो कमरा था, अुसमें सोने चला गया।

'अच्छा ! भूख न हो तो जाओ और लेट रहो। मैं अभी दूध गरम करके लाती हूँ।" यह कहती हुआी अुसकी माँ भी रसोअीघरकी तरफ चली गयी।

बलरामका दिल अब चोट या चोटके दर्दसे हट गया और वहाँ चला गया, जहाँसे 'झन झन झनन' करके चूड़ियोंकी आवाज आ रही थी। वह चूड़ीवाली रसोअी-घरके द्वारपर धुंधलकेमें खड़ी थी। बलरामके दिलके साथ-साथ अुसके नेत्र भी अुस ओर लग गये।

कमरेमें लेटनेके बाद बलरामने अुच्च स्वरमें पुकारा, "कोअी दरवाजा तो बंद करो!"

बलरामने यद्यपि 'कोअी' शब्दका ही अिस्तेमाल किया था, फिर भी अुस चूड़ीवालीने समझ लिया कि अुस 'कोअी' शब्दका आशय किससे है? अुसने हंसिनीकी मन्द चालसे चलकर अुसकी आज्ञाका पालन किया और वैसी ही चालसे वापस चली गयी। जब अुसके पैरोंकी नूपुर ध्वनि धीरे-धीरे मन्द पड़कर रसोअीघरकी तरफसे आयी तथा थोड़ी देरमें रुक भी गयी तो बलरामने अटकलसे जान लिया कि वह रसोअीघरमें चली गयी है और सिर पकड़कर अेक लम्बी निश्वास छोड़ी।

\+ \+ \+

'बड़ी हवेली' का परिवार अुतना बड़ा न था। 'बड़े मालिक' के अेकलौते बेटे थे, 'छोटे मालिक'। *बड़े लोगोंकी जायदाद बँटकर छोटे-छोटे टुकड़े न हो जाअें*—अिस कारण, अिसे प्रकृतिकी नियति कहिये या और कुछ। बलराम 'छोटे मालिक' का अेकलौता बेटा था। बड़े मालिक और अुनकी देवीजीकी मृत्यु हो जानेसे, 'छोटे मालिक', अुनकी पत्नी और बलरामको छोड़ परिवारमें कोअी चौथा व्यक्ति नहीं था।

बलरामकी अभी-अभी नयी शादी हुआी थी। *लड़का पोंगलका बरतन चढ़ानेके लिअे अेक हफ्ते पहले ही से मायकेसे ससुराल आ गयी थी।* [तमिल-नाडका यह रिवाज है कि अिस प्रकारके तीज-त्योहारोंमें वधू [illegible] मायकेसे ही ससुराल आ जाओ] वधू तो आन्ध्र-[illegible] सज्जनकी पत्नी थी। लड़का कालेजकी शिक्षा पास हुआ था। पर अितना बड़ा था कि नवीन दम्पती आसानीसे लुक-छिपकर मिल लें। जिनलिअे बलरामके मनमें प्रेम-मिलनकी लहरें और विरह-वेदनाकी हूक अेक साथ अुठने लगी तो आश्चर्य करनेकी कौनसी बात?

मनुष्योंकी रोक-थाम या विघ्न-बाधाअें यद्यपि अिस घरमें अधिक न थी तथापि प्राचीन सभ्यताके पगी अय्यरकी महधर्मिणी अपनी बहूको आँखोंकी ओट न होने देती थीं। अुनका यह खयाल था कि सुहागरातका मुहूर्त चार जनोंके मध्य, जरा धूम-धामके साथ हो तथा बहूके मायकेसे कुछ बरतन-भाड़े और रुपये-पैसे भी मिल जाअें। यही कारण था कि देवोजी बेटे और *पतोहूके बीच दीवार बनी रहती।*

कमरेका दरवाजा खुला तो बलरामने देखा कि हमेशाकी तरह माँ अन्दर आ रही हैं। अुनके मुँहपर वेदनाकी रेखा खिंच गयी। वह करे तो क्या करे!

माँ बलरामके पास आकर बैठ गयी और बोली, "अभी दूध गरम नहीं हुआ है। पार्वतीसे कहा है कि दूध गरम कर लाओ।" यह वाक्य बलरामको अुस दूधसे भी मीठा लगा जो बादमें आनेवाला था।

'मोर होते, तो * भोगी' का त्योहार है। आज तुम सिर फोड़कर आये हो! क्या कहूँ, तुम्हारी बद्धिको!" माँने अत्यन्त अुदास होकर कहा।

'क्या किया जाअे, माँ? क्या तुम चाहती हो कि पुजारीजीके घरका लड़का मारिमुत्तुके हाथों पिटे और मैं चुपचाप हाथ बाँधे खड़ा देखता रहूँ? यह मुझसे नहीं हो सका, माँ!"

'हम लोगोंको अिस प्रकारके लड़ाअी झगड़ोंमें नहीं पड़ना चाहिये। आज-कलका जमाना बहुत खराब है। चोट हल्की लगी जिससे बचे! नहीं तो क्या हुआ होता? त्योहारके दिन तुम बिस्तरपर पड़े रहते। दुखकी मारी अकेली मैं तुम्हारी सुश्रूषा करूँ या

---

* 'भोगी' वह त्योहार है, जो संक्रान्ति यानी पोंगलके पहले दिन मनाया जाता है। अुस दिन लोग तैल अभ्यंग स्नान आदि करते हैं और सुस्वादु मिष्टान्न बनाकर आनन्दसे भोजन करते हैं।

त्योहारका काम समाप्त। भगवानको शत शत धन्यवाद है कि तुमको बाल बाल बचा दिया।

त्योहार-व्योहारकी बात छोड़ो माँ! तुमको मालूम है कि हमारे देशमें कितने लोग अनके दानको तरस रहे हैं? असी हालतमें केवल हमीं त्योहार मनाअें तो कैसे अच्छा होगा?

अरे रे! बस बस! तू फिर अपना वही पुराना देशभक्तिका पचड़ा सुनाने बैठ गया! मुझे तेरी यह बकवास गवारा नहीं। क्या हमारे घर-द्वार नहीं, जमीन जायदाद नहीं? हम चार जनोंके मध्य बसतन्त्रकी बकवास क्या किया करें? तुम्हारी यह ठक्करबाजी किसी दिन आफत ढा देगी।

हम केवल अपना ही काम देखें, दूसरोंका छोड़ दें, असको क्या तुम अच्छा समझती हो माँ? बलरामने माँसे प्रश्न किया।

हाँ अच्छा क्या नहीं? याद रखो तुमने किसीका हाथ पकड़ा है। अगर मेरी बात नहीं मानते तो जाओ जहाँ जाओ खुशीसे जाओ। मैं तुम्हें रोकनेवाली कौन होती हूँ? मैंने शादी करायी, मेरे सिर अुस शादीका पाप जाओ। जिसका फल मुझीको भोगना है न? माँने झुँझलाकर कहा।

असी समय पार्वतीने दायें हाथमें दूधका लोटा और बायें हाथमें साड़ीका लटकता दामन ठीक करते कमरेके अन्दर प्रवेश किया।

क्यों पार्वती! दूध बहुत गरम तो नहीं है?' सासने सवाल किया तो बहूने अस्वीकृतिमें सिर हिलाया और दूधका बरतन सासके हाथमें दे दिया।

अरे! बहुत गरम है, जरा और ठण्डा करो न! सासने बहूको हुक्म दिया।

बहूने खड़े खड़े दूधको जरा ठण्डा करनेके लिअे अिस लोटेसे अुस लोटेमें और अुस लोटेसे अिस लोटेमें अुड़ेलना शुरू कर दिया। अिसी समय बाहरसे किसीने आवाज लगायी "माँजी माँजी!" पुकार सुनकर देवीजी बाहरकी ओर गयीं।

माँके आँखोंके सामनेसे ओझल होते ही बलरामने कहा, बस बस! और ठण्डा करनेकी कोअी जरूरत नहीं। लाओ अिधर।

नववधू लज्जासे जरा कुण्ठित हुअी। फिर अेक कदम आगे बढ़ी और दूधका लोटा पतिकी तरफ बढ़ाया। बाहरी कमरेमें देवीजी और आदमीमें किसी बातपर गरमागरम विवाद खड़ा हुआ और यहाँ कमरेके अन्दर नवदम्पतीमें प्रेमकी जो अन्तरंग बात हुअी वे बाहर सुनायी नहीं दीं।

दूसरे दिन और अुसके दूसरे पोंगलके दिन नव दम्पतीकी घनिष्ठता और भी बढ़ गयी। संक्रान्तिके दिन सवेरे जब बलरामने घरके अन्य लोगोंकी आँख बचाकर अपनी पत्नीसे कुछ छेड़खानी शुरू की तो अुसने कहा "जी जी! न न, मैंने तो स्नान कर लिया है। छूओगे तो सोला बिगड़ जाअेगा। माँने आज मुझे पोंगलकी हाँडी चढ़ानेको कहा है।"

असी चेतावनीसे अुसने बलरामको यह प्रकट कर दिया कि अिस घरकी भावी मालकिन मैं हूँ।

❀ ❀ ❀

वद्यलिंगम पिल्लै अुस दिन अकथनीय दुःख और वेदनाके साथ घरकी तरफ बढ़े। अनके दिमागमें भिन्न भिन्न प्रकारके विचार आये और गये। छोटे मालिक जो अुनको अपने पितासे भी बढ़कर मानते थे और बिना अुनकी राय लिये कोअी काम न करते थे वे ही अुनपर गुस्सा अुतारकर अन्दर चले गये तो वद्यलिंगमजी पिल्लैके मनमें दुःखका कोअी पारवार न रहा। वे असहनीय वेदनासे तिलमिला अुठे। मेरी ही गोदीमें खेले-कूदे छोटे मालिकके मुँहसे असे शब्द कैसे निकले? —अिस बातका दिलमें आना था कि अुनके मन चक्षुके सामने चित्रपटकी नाअी अनुभवजन्य वे दृश्य अुभर आये जिनमें अपनी और बड़ी हवेली की तीन पीढ़ियोंके अटूट सम्बन्ध का दृश्य साफ झलकता था। जब अिस विचार शृंखलाकी कड़ी टूटी तो वद्यलिंगम पिल्लैने अपने दिलको यह कहकर समझाया कि जब हमारे ही घरका लड़का असा आवारा बना फिरता है, तो दूसरोंको दोष क्या दिया

जाओ ? अिस विचारमें पड आखिर मारिमुत्तुको ही अिसका दोषी ठहराया।

फिर अुनकी विचार-शृंखला जुडी तो 'बडी हवेली' के बलराम और अपने घरके मारिमुत्तुके बचपनकी बातें स्मरण हो आयीं— जब वे दोनों बच्चे थे अेक साथ गिल्ली डंडा खेलते थे अेक साथ तालाबमें नहाने जाते थे और पेडकी अूंची डालपर चढकर पानीमें कूदते तैरते और अध्यापककी आंखोंमें धूल झोंककर खेल-तमाशा देखने खिसक जाते थे। अैसे अभिन्न मित्र आज कैसे परमशत्रु हुअे ?— अिस बातपर अुनका ध्यान गया। अुन्होंने गहरे पानी पैठ कर देखा तो मालूम हुआ कि अिन सबका मूल कारण राजनैतिक दलबंदी और गांवमें आनेवाले समाचार-पत्र ही हैं। अतः अुनका गुस्सा अुन दोनोंकी ओर मुड गया।

पिल्लैजीने अनुभव किया कि कौटुंबिक जीवनमें ननदें जितना खलल डालती हैं अुससे दुगुनी तिगुनी गांवके जीवनमें ये पत्र पत्रिकाअें डालती हैं।

पिल्लैजीने अपने आपसे यह प्रश्न कर लिया कि किस परम-पुण्य कार्यकी साधनाके लिअे गांवके पुजारी और ज्योतिषी सुब्बय्यर 'बडी हवेली' के द्वारपर धरना देकर बैठ जाते हैं और पत्रके आते न आते अुसे चीलकी तरह झपटकर अुठा ले जाते हैं ? अच्छा हो यदि पुजारी अपने धर्म कर्ममें निरत रहें और सुब्बय्यर ज्योतिषका अपना कार्य करते रहें ? अपने कामोंसे निवृत्त होनेपर अवकाशके समय अिन पत्र पत्रिकाओंमें माथापच्ची न कर रामायण-महाभारत पढें तो कमसे कम परलोकका रास्ता तो बन जाओ ! यदि अुनमें भी मन न लगे तो किसी मंदिरपर जा बैठें और रामनाम या शिवस्मरण करें ! अुनको रोकता कौन है ?

ज्यों ज्यों अुनकी विचार-शृंखला करवट बदलती तो अुनका सारा गुस्सा चिन्नतंबिपर गया जो पासकी गलीमें रहता था। अुनका यह विचार था कि मारिमुत्तु चिन्नतंबि हीके कारण खराब हो रहा है।

चिन्नतंबि स्वभावसे अच्छे व्यक्ति थे। चूंकि अुनके बुजुर्ग अुनके नाम बहुत बडी जायदाद छोड गये थे और अुनका मन अन्य किसी काममें नहीं लगने पाता था, अिसलिअे अुन्होंने सोचा कि किसी सुगम रास्तेसे थोडा-सा कीर्ति लाभ किया जाओ। तंजोरके कुछ मित्रोंने अुनका नाम * जस्टिस पार्टी में लिखा दिया और गांवकी पंचायतका अुन्हें अेक सदस्य भी बना दिया। जितना ही नहीं अुनके सिरपर अपने दलके अेक मुख्य-पत्रका भी भार मढ दिया।

अिसके बाद ही चिन्नतंबिने समझा कि समाजने अुनके प्रति कैसे-कैसे दुर्व्यवहार और अत्याचार किये हैं ? अुन्होंने अनुभव किया कि अिसका किसी प्रकार परिहार करना चाहिये। अपनी अिन सेवाओंके लिअे अुन्हें अेक शिष्यकी सख्त जरूरत पडी तो अुन्होंने मारिमुत्तुको हर तरहसे काबिल पाया और अुसीको चुनकर अपना चेला भी बना लिया। अुसे कुश्ती लडाना, लाठी चलाना आदि विद्याअें भी सिखायीं। जस्टिस दलके प्रचारके लिअे यह सब जरूरी है— अिस बातका चिन्नतंबिको जितना ज्ञान था अुतना अुस दलके और किसी नेताको नहीं था।

अिस संगतमें पला मारिमुत्तु यह कैसे सहन कर सकता था कि अुसके दादा 'बडी हवेली' की गुलामी करें ? अतः अुस दिन घरमें जब मारिमुत्तु और वैद्यलिंगमें कि लमें मुलाकात हुई तो बडी खलबली मच गयी। वैद्यलिंगम पिल्लैजीकी पत्नीने दरवाजेपर खडी होकर यह दृश्य देखा तो सिर पीट लिया।

मारिमुत्तु जब घरमें दाखिल हो रहा था तब वैद्यलिंगम पिल्लै द्वारके पासके दालानमें आराम कुर्सी पर लेटे थे। मारिमुत्तु सीनेपर पैर रख रहा रहा था कि पिल्लैजीने सवाल किया क्या भैया ! आज अितनी देर क्या हुई ?'

अुनके सवाल करनेके तरीकेहीने यह बता दिया कि गुस्सेका पारा कितना चढा है ? मारिमुत्तुने कोअी जवाब न दिया, चुपचाप खडा रहा। अुसके भी हृदयका तहमें क्रोधकी अग्नि धधक रही थी। फिर भी

---

* दक्षिणमें अेक जमानेमें 'जस्टिस पार्टी' का बोल बाला था। बड बडे प्रमुख सज्जन अिसके सदस्य थे। अंग्रेजोंके शासन कालमें अिस पार्टीने मन्त्रित्व ग्रहण कर कअी अच्छे काम किये।

पिल्लैजीके मुँह लगने या मुकाबला करनेकी हिम्मत अुसे न पड़ी। पिल्लैजीने अुसके मुखपरसे भाव पढ़ लिये कि बातोंकी दशा क्या होगी, ता ताड़ गये कि मारिमुत्तुके हृदयमें भी ज्वालामुखी धुआँ अुगल रहा है। न जाने कब फट पड़े।

"क्यों बे! मैंने तुझसे कितनी बार कहा कि सिरके बाल अिनने लंबे न रखा कर। कटवाकर छोटा करा ले! कुछ सुनता ही नहीं? क्या बात है?" वैद्यलिंगम पिल्लैने पूछा।

वैद्यलिंगम पिल्लैका जब कभी अिस प्रकार चिढ़ जाती तब मारिमुत्तुके घोर विकृत स्वरूपका वर्णन छेड़ा करते। भारतकी प्राचीन संस्कृति तथा सभ्यताकी निशानी चोटीका कटाकर अिस प्रकार बाल कटवाना अुन्हें जरा भी पसन्द न था। बड़ी हवेलीके बलरामने भी जब अिस तरह बाल कटवा लिये तब विवश होकर अुन्हें मारिमुत्तुको क्षमा करना पड़ा।

अेक दिन शहरके कालेजसे बलराम जब बाल कटवाकर लंबा जुल्फा रखे घर आया तो अय्यरकी सहधर्मिणी अुसका यह भेष देखकर आग बबूला हो गयी और कहा "क्यों रे कलमुँहे! यह कैसा भेष बनाया है, जिन बालोंने तेरा क्या बिगाड़ा कि जिनको अिस प्रकार कटवा दिया?" तब अय्यरने बलरामका पक्ष लेकर कहा कि "नाहक क्यों जबान चलाती हो? जब 'वीर शैव' * वैद्यलिंगम पिल्लैके पोते मारिमुत्तुने ही बाल कटवाकर 'क्राप' रख लिया, तो तुम्हारा लाड़ला, जो सन्ध्या-वन्दनतक ठीक तरह नहीं करता, बाल कटवा ले तो धर्म कैसे बिगड़ेगा? अिस प्रकार यदि परस्परविरुद्ध पक्षोंका और मौरूस बदलवाके बुत दोनों कुटुंबोंके बीच मेल मिलानेवाला कोअी काम हो तो वैद्यलिंगम पिल्लैको गुस्सा क्यों न आता?

पिल्लैजीने अुपरोक्त पूर्व-पीठिकाके बाद सीधा आक्रमण करना शुरू कर दिया, "क्यों भैया! मालूम होता है कि तुम्हारे हाथ आजकल लंबे होते जा रहे हैं। क्या यह सब चिन्नतंबिके पढ़ाये पाठ हैं?"

मारिमुत्तुको अुनकी बात समझते देर न लगी। बोला, "मैं पुजारीके घरके लड़केसे बात कर रहा था तो 'चिन्न कुळन्दै' [छोटा बच्चा] को बीचमें पड़नेकी क्या जरूरत थी?"

गाँवमें बलराम 'चिन्न कुळन्दै'के नामसे प्रसिद्ध था। वही नाम मारिमुत्तुने लिया।

'तुम्हारी हिम्मत अितनी बढ़ गयी? तुम अिस घरमें रहना चाहते हो या कुत्तेकी मौत मरना चाहते हो? जानते हो, हमारा कुटुंब कैसा था और कैसा हो रहा है?'

वैद्यलिंगम पिल्लैकी अिस बातका मारिमुत्तुने कोअी जवाब न दिया, "क्यों, चुप खड़े हो? मालूम होता है कि तुम्हारा दिमाग खराब होता जा रहा है।'

'मैं कहता हूँ, बकवास बन्द कीजिये!" मारिमुत्तुके मुँहसे यह वाक्य सुनकर पिल्लैजी हक्के बक्के रह गये। अुन्होंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि मारिमुत्तुके मुँहसे अैसा वाक्य निकल सकता है। वे अत्यन्त दुःखी हुअे। भला लड़का बिगड़ रहा है—अिस विचारने अुनका गुस्सा और भी अुभाड़ दिया। वे बोले, "क्यों, बे! मेरे सामने अैसी बातें करते तुझे शरम नहीं आती? "बड़ी हवेली'का लड़का कैसा पढ़ता है, मालूम है? वैसा पढ़ना तो दूर रहा, बातें करना कहाँसे सीख गया?'

यह कहते हुअे वे अुठकर लपके और मारिमुत्तुके गालपर जोरका अेक तमाचा मार दिया। मारिमुत्तुने तब भी कोअी अुत्तर न दिया। अुसको पिल्लैजीके बदले बलरामपर क्रोध आया, जिसके पहले अुसके हाथों मार खायी थी। मारिमुत्तुने गालपर हाथ फेरते हुअे कहा, "हाँ, हाँ, मुझे मालूम है कि वह कैसा पढ़ता है और क्या पढ़ता है? अब मैं देखूँगा कि अुसकी पढ़ाअी कैसे होती है?"

अितना कहकर वह 'धड़ाधड़' सीढ़ी अुतरता जल्दीसे कहीं चला गया।

पिल्लैजीकी पत्नीने द्वारकी ओटसे झाँककर देखा और कहा, "लड़का तो खाने आया था। अुसको अिस

* 'वीर शैव' वे हैं जो शिवजीके भक्त हैं और अितने अपने धर्ममें कट्टर हैं कि भूलकर भी अपने मुँहसे विष्णुका नाम नहीं लेते। वीर वैष्णव भी अिसी प्रकारके हैं।

तरह खरी-खोटी सुनाकर निकाल दिया। यह आपने क्या कर दिया ?

अितना सुनना था कि पिल्लै रौद्र-रूप धारण कर लिया और कडककर बोले क्या यहाँ भी स्त्री राज चलने लगा। अन्दर जाती हो कि मरम्मत हो ? तुम्हारा लाडला कहीं जानेका नहीं, कुत्तेकी तरह दुम हिलाकर फिर आ जाअेगा।

लेकिन पिल्लैने जो सोचा वह नहीं हुआ। यानी वह भूखे कुत्तेकी तरह दुम हिलाता नहीं आया। दो दिनोंसे पोंगलका त्योहार गाँवमें बडे ठाठ बाठसे मनाया जा रहा था। किन्तु पिल्लैजीके घरमें कोलाहल या कौतूहल नहीं था। अुनका घर शोभा-शून्य दिखायी दे रहा था। वहाँ त्योहारके कोअी आसार न थे।

पिल्लैजी घरसे बाहर ही नहीं निकले। 'बडी हवेली'के छोटे मालिकने दो बार आदमी भी भेजे। फिर भी पिल्लैजी टससे मस न हुअे। मारिमुत्तुकी याद अुनको हरदम सताती रही। पिल्लैजीको बाती बातपर पश्चात्ताप होने लगा कि हमने अपना मुँह नाहक क्यों खोला ? वह जैसा चाहे रहे ! हमें अुससे क्या ? हम तो जीवनकी सन्ध्यामें पदार्पण कर चुके हैं। पिल्लैजीकी पत्नीकी आँखें लडकेके वियोगसे बराबर आँसू बहाती रहीं और अपनी बोलीमें कह रही थी कि फूल जैसे सुकुमार बालकको घरसे भगाकर हम बूढे त्योहार क्या मनावें ? दुःखदर्दसे भरे अपनी पत्नीके मुँहको पिल्लैजीसे सीधी आँखें देखते न बन पडा तो वे भी अुनकी आँखें छिपा मुँह ढाँपकर आठ आठ आँसू बहाने लगे।

× × ×

संक्रान्ति आयी। मार्फ-मुदरै गाँवकी शोभाको बढाकर और भी जगमग जगमग करनेके लिअे अुत्तरायन का सूर्य पूर्व दिशामें अुगा। अन्नदानपुरम अुस दिन अलौकिक सौंदर्यसे शोभायमान था। अुस गाँवमें तीन ही पक्के घर अैसे थे जिनमें चूना पोता जा सकता था। अेक तो 'बडी हवेली' था दूसरा वडिवेलम पिल्लैजीका घर और तीसरा चिन्नतंबिका मकान। बाकी समूचे घर मिट्टी और पत्तेके ही थे। लेकिन अुनकी सजावटमें भी किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं थी। जहाँ-जहाँ फर्श या दीवारकी मिट्टी अुखडी रहती वहाँ-वहाँ काली मिट्टी कोयला और गोबर तीनोंको मिलाकर, अच्छी तरह पीसकर, घरकी बडी बूढी स्त्रियाँ मरम्मत कर देतीं। अैसा करनेपर फर्शकी शोभा कितनी बढ जाती कि कडप्पाके बहुमूल्य पत्थर भी अुनके सामने फीके मालूम होते।

घर मिट्टीके बने होते थे और अुनकी छत भी देशी खपरैलकी थी। — जिसलिअे वे बडे आरामदेह थे। अैसे घरोंमें न तपती गरमी पडती थी और न ठिठुरती सरदी। घरोंमें कहीं भी कूडा-कर्कट देखनेको न मिलता था। घरकी बडी बूढी औरतें जब कोअी काम न रहता तब खुद भाड़-बुहार देतीं। अगर कभी अुनसे यह काम न हो पाता तो अपनी बहुओं और पोतियोंको आदेशपर आदेश देकर करवाकर छोडतीं।

घरकी बडी-बूढी स्त्रियोंकी यह आदत थी कि अपने अवकाशके अवसरोंपर अपनी पोती बच्चियोंको 'मावकल'* से तरह तरहकी चौक पूरना सिखावें और रोज शाम-सवेरे गाँवकी वीथियोंमें अपने घरके सामने चावलके आटेसे चौक पूरें। संक्रांति जैसे शुभ दिनोंमें अपनी सिखायी चौक बडे पैमानेपर पुरवाना।

अन्नदानपुरमकी बडी बूढी स्त्रियाँ अपनी पोती बच्चियोंको आदेशपर आदेश दे रही थीं कि चौक पूरो। जब तक चौक पूरी न हो जाती तब तक नाकों दम करतीं। लडकियाँ भी शुभ दिन आया जानकर, बडे ही

---

* मावक्कल' अेक अैसा पत्थर है जो जमीनपर घिसनेसे खडिया जैसा अुजला रंग पैदा करता है। अुससे बरतन भी बनते हैं। सांभार और रसम जैसी खाद्य सामग्रियाँ अुनमें बनायी जाती हैं। जिनमें नींबू जैसी खट्टी चीजें दूसरे बरतनोंमें पकानेसे बिगड जाती हैं। पर मावक्कलके बरतनोंमें बनानेसे वे चीजें बिगडती नहीं। ये बरतन भी मिट्टीके बरतनोंकी तरह नीचे गिरनेपर टूट जानेवाले होते हैं। टूटे बरतनोंके अुन टुकडोंसे घरकी बडी-बडी स्त्रियाँ बच्चियोंको लकीर खींचकर चौक पूरना सिखाती हैं।

कौतूहलके साथ द्वारपर, द्वारकी चौखटपर, देहलीपर सुंदर सुन्दर चौक पूर रही था।

अन्नदानपुरमकी अस सुंदरताम चार चाँद लगानेके प्रयत्नमें भुवनरायणका मरीचिमाली अपनी सुनहरी किरण रश्मियाँ बिखरता हुआ आकाशपर चढ़ने लगा। पक्षी-समूह अपने नाना प्रकारके कलरवोंसे गाँवको गजा रहे थे। पश्चिमके तालाबमें बालक कूदते तैरते हुए किलोल कर रहे थे। कुमुदकी कलियाँ लड़कोंकी अिस हँसी खुशीको देखकर अपनी पंखड़ियाँ खोल खोलकर हँस रही थी और अनकी हँसी-खुशीमें भाग भी ले रही थी।

केवल वर्दालिगम पिल्लेके घरमें कोअी कौतूहल नहीं था। यह बात बड़ी हवेलीके मालिकके कानों तक पहुँची तो वे खुद पिल्लैजीके घरकी तरफ चल पड़े।

छोटे मालिक जब परोंमें जूता पहन हाथमें छड़ी लिये और कंधेपर अंगोछा डाले बाहर चल पड़े थे तब किसीने यह नहीं सोचा कि वे पिल्लैजीके घरकी तरफ जा रहे हैं।

बड़ी हवेलीके छोटे मालिक तो अेक प्रकारसे अुस गाँवके छोटे मोटे राजा थे। वे किसीके घर नहीं जाते थे। कोअी काम आ पड़ा तो गाँवके लोग ही अनके पास आते। अिसलिअे छोटे मालिक जब वर्दालिगम पिल्लेके घरमें दाखिल हुअे तो सारेका सारा गाँव भौचक्का सा हो गया। किसी किसीको तो अपनी आँखोंपर भी विश्वास नहीं हो रहा था। आमने सामनेके और अड़ोस पड़ोसके लोग बाहर सिर निकालकर देखने लगे कि क्या सचमुच छोटे मालिक हो आये हैं?

अुस वक्त वर्दालिगम पिल्लै बाहरी बैठकमें बैठे पान चबा रहे थे। छोटे मालिकको देखते ही पिल्लैजी अपना अंगोछा बगलमें दबाये झटपट अुठ बैठे।

पिल्लैजी आप बैठिये! खड़े क्यों होते हैं? बैठिये न! कहते हुअे छोटे मालिक अेक ओर बैठ गये। पिल्लैजी बैठे नहीं मौन खड़े रहे।

मैं तो कह रहा हूँ कि बैठिये। पर आप खड़े हैं? जब अय्यरने बहुत आग्रह किया तो पिल्लैजी बैठ गये पर जबान नहीं खोली।

अय्यरने बात समझ ली और स्वयं अिस प्रकार शुरू किया: क्या पिल्लैजी! बादको तो आप अिस ओर आये ही नहीं?

अय्यरकी बातका मतलब अर्थ पिल्लैजी समझे नहीं, असा नहीं हो सकता? अिसलिअे अुन्होंने धीरसे जवाब दिया: क्या करूँ? मनमाने तभी तो आ सकता हूँ!

असा क्या हो गया कि आपका मन बड़ा चंचल हो अुठा? हाँ बच्चोंका झगड़ा हुआ वह तो असी दम भूल जानेकी बात है। अुसको लेकर हम विरोध ठान लें यह हम जैसोंको शोभा देगा? छोटे मालिकने पूछा

बात तो अब बहुत बढ़ गयी छोटे मालिक! वह अब छोटी न रहा।

मारिमुत्तुके सबबसे ही न आप कहते हैं? हाँ हाँ वह तो मुझे मालूम है। पर पिल्लैजी अेक बात है। वह तो अबोध बच्चा है, अनजानमें असने कुछ कर दिया तो अुसके लिअे आपको अितना तूल मचाना अुचित न था? — अय्यरने मारिमुत्तुका पक्ष लेकर यह प्रश्न किया।

अय्यरके मुँहसे निकली अिस बातने वर्दालिगम पिल्लेके दिलको बड़ी शान्ति प्रदान की। अिस झगड़े और फिसादमें छोटे मालिकका दिल नहीं बिगड़ा, यह जानकर पिल्लैजी मन ही मन बहुत सन्तुष्ट हुअे। फिर भी जिस बातने अुनके दिलको वेदनाके फोड़ेका रूप दिया कि पोंगलके अिस पर्वके दिन घरका अुत्तराधिकारी घरमें न रहा। अुनकी आँख छलछला आयी। फिर वे छोटे मालिककी बातोंका अनुमोदन करते हुअे बोले: हाँ मैं तो बड़ा हो गया हूँ न छोटे मालिक! अिसलिअे कब किससे क्या कहना चाहिये और क्या न कहना चाहिये? अिसका विवेक ही जाता रहा!

यह सुनते ही छोटे मालिकका भी दिल पिघल गया। वर्दालिगम पिल्लैजीके आँसूने अय्यरके हृदयको हिला दिया कि अुनकी आँखें भी डबडबा आयीं। फिर भी अुन्होंने दिलमें हिम्मत लाकर कहा: पिल्लैजी! अिसके

लिअ आप रज न कीजिय। आपका और हमारा कुटुंब क्या अलग अलग या दो रा है? आपका दुख हमारा दुख है। आपका दुख मुझस देखा नहीं जाता। चिता त्यागिय। मारिमुत्तुको बुला लानका मैंन बंदोबस्त कर दिया है। परलमक सब अिस्पक्टरको भी खबर द दी है। मारिमुत्तु आ जाअगा जरूर आ जाअगा जरूर आ जाअगा। जहाँ भी हो अुस यहाँ लाकर खडा कर देंग। आप दुख कर और हमारे घरम दूध अुफन-- * यह कहीं हो सकता है?'

अय्यरक मुहस निकले अिन वाक्योंकी सत्यता बादकी घटी घटनाओंन प्रमाणित कर दिया। अय्यर और पिल्ल दोनो बात करत हुअ वहासे चले और बनी हवेली की ओर आय तो देखते क्या ह कि पुलिसके दरोगा बलरामको गिरफ्तार कर हथकडी पहना रह ह और मारिमुत्तु कुछ किताब हाथम लिय जरा हटकर खडा है। अय्यरकी धर्मपत्नी, पतोहू दानो धाड मारकर रो रही ह।

यह दृश्य देखा तो दानोंकी आँखोंक सामन अधेरा छा गया। वेदनायगम पिल्लजी ता अैस पत्थर बन खडे हो गय कि काटो तो खून नहीं। अय्यरन अपनको किसी तरह सभाल लिया और जरा हिम्मतके साथ दारोगाको तरफ बढकर सवाल किया क्या, दारोगा साहब! माजरा क्या है? फिर अुन्होन बलरामकी तरफ आँखें फेरी ता देखा कि बलरामक चेहरेपर केवल अुदासी छायी है और डरका लेश भी नहीं।

छोट मालिक! आपको मालूम हो या न हो सरकारन यह घोषित किया है कि कुछ असी किताबें ह जिन्ह अपन पास रखना बडा भारी जुर्म है। अैसी कुछ किताबें आपके लडकेके पास मिली। अिसलिअ अुन्हें गिरफ्तार किया है। दारोगान अपन कार्यका कारण स्पष्ट करते हुअ कहा।

अय्यरन अपन मनकी पीडा और भीतिको अन्दर ही अन्दर दबात हुअ मारिमुत्तुके हाथोंकी किताबें देखीं। अक बार देहरीकी आडमें खडी अपनी पतोहूको भी देखा। अुनको लगा कि बुद्धि चकरान लगी है और अपनी आँखें अुस ओरस फेर लीं। फिर दारोगाकी तरफ मुडकर अुन्होंने पूछा क्या दारोगा साहब! आज अक दिनके लिअ लडकेको बाहर छोड रखनका कोअी मार्ग नहीं?

'मालिक? आप तो सब जानते हैं? क्या आपको भी कुछ कहना पडगा? अिस विषयमें आप जानत हैं कि मेरा काबू कुछ नहीं। अगर मेरे बसकी बात होती तो आपकी खातिर अैसे अवश्य करता। मारिमुत्तुन अगर यह पता न दिया होता तो क्या मुझ स्वप्नमें भी यह ख्याल होता कि आपके घरमें अैसी किताबें भी हो सकती ह? मेरी क्या मजाल कि अैसा विचार मनमें लाता!'—दारोगान अपनी विवशता दर्शायी।

अुसी समय वेदनायगम पिल्लजीके जीमें जी आया होगा हवास ठिकान हुअ। अुनके दुखका कोअी पारावार न रहा। अुनके हाथपर ही नहीं सारा शरीर दुख और क्रोधके भावावेशमें अैसे काँप अुठा मानो आँधीमें केलेके पत्ते हों। अुनके होठ फडक अुठे। क्रोधसे काँपते स्वरमें अपना पूरा बल लगाकर व गरज अुठे, पाजी! पापी! दुष्ट! आखिर तुम्हीं अिसका कारण बना! अितना कहनेके बाद वे मारिमुत्तुको अैसा घूरन लगे जैसे अुसे कच्चा ही चबा जाअंग।

मारिमुत्तुके अिन वचनोंका अर्थ, कि हाँ, हाँ! मुझ मालूम है कि वह कैसा पढता है और क्या पढता है? अब मैं देखूंगा कि अुसकी यह पढाअी कैसे होती है? स्पष्ट रूपसे पिल्लजीके सामन आ गया।

बलरामने अपने पिताको दिलासा दिया पिताजी! आप क्या अिसकी चिन्ता करते ह? दादाकी खातिर चिन्ता छोड दीजिय। जब मन देश-सेवाका प्रण ठाना

* पोंगल त्योहारके दिन सबस पहले तामिल-गृहस्थके घरमें चूल्हेपर दूधका हाँडा ही चढायी जाती है और दूध अुफनकर अूपर आने तक गरम करत ह। दूधका अुफनना शुभ शकुन माना जाता है। लोग आपसमें पोंगलके दिन मिलते जुलत ह तो आपसमें कुशल प्रश्न जैसी सवालसे करत ह कि क्या आपके घरमें दूध अुफना? अिसस स्पष्ट है कि पोंगलके दिनके यहाँ अन्दर अन्दर धन धान्यसे सपूर्ण हो जाना है और अुसी खुशीमें यह आनन्दोत्सव मनाया जाता है।

था तब भली भाँति जानकर ही ठाना था कि यह सब जिस कायम अवश्यम्भावी है। और जरा गौर करके देखा जाअ तो हमारा यह देश ही अेक प्रकारका कैद खाना है। यहाँ तो यह नहीं बोल सकते वह नहीं बोल सकते। जिस देशमें अितने कड़े कानून हैं वहाँ कोअी घरमें रहे या जेलमें दोनों बराबर है।

जितना सुनना था कि अध्यक्षकी धर्मपत्नी अत्यन्त अुससे आहत हो गयी और आँखोंमें आँसू भरकर भराये स्वरमें बोली क्या बेटा! तुम्हारी बुद्धि फिर गयी क्या जो अैसी बात मुँहसे निकाल रहे हो? पिताजीके सामने भी तो तुमने अपनी रवरबाजी शुरू कर दी? त्योहारके शुभ दिन अैसा हो गया—जिस विचारसे *हमारा हृदय टुकड़े-टुकड़े होता जा रहा है।* अैसी अवस्थामें भी तुम अपनी सनक नहीं छोड़ते। क्या यह तुम्हें शोभा देता है?

बलरामने देखा कि अुसकी पत्नी भी माँके पीठ मुँह ढाँपकर बिलख बिलख रोने लगी तो अुसने दारोगासे कहा अिन्सेक्टर साहब! पाँच मिनटकी मोहलत दीजिये जिससे मैं जिन लोगोंको समझा-बुझाकर आ जाअूँ!'

अिस प्रार्थनाको अिनकार कर देनेका साहस अिन्सपेक्टरको न हुआ। क्योंकि वे जानते थे कि अुस हलकेमें छोटे मालिककी कैसी धाक है! छोटे मालिक ने यदि ठान लिया तो अुनका अुस हलकेसे तबादला करवा दें अैसे किसी तरहसे धकेल सकते थे *जहाँके गुण्डे चालूपन करना और अपनी जानकी खैर मनाना असम्भव हो जाता। अतः अुन्होंने बलरामको* अनुमति दे दी।

बलराम शील सकोच छोड़ सीधे अपनी पत्नीके पास गया और बोला अरे! क्या तुम भी मूर्खोंकी तरह रोने लगी! मेरी अनुपस्थितिके अवसरोंपर जब कि माँको समझा बुझाकर सान्त्वना देनेका भार तुमपर हो अिस तरह रोनेसे काम कैसे चलेगा? तुमने तो वचन लिया था कि देशकी खातिर हर प्रकारके त्यागके लिअे मैं भी तैयार रहूँगी। क्या तुम अपनी वह बात भूल गयी? तुमको तो दृढ़ प्रतिज्ञ वीरपत्नी बननाही शोभा देगा। जिस प्रकार रोना उगना

यह सुनकर अुसका रोना और भी बढ़ गया। वह सिसकियाँ भरती हुअी बोली मुझे अैसी बातका बड़ा दुख हो रहा है कि त्योहारके अिस शुभ दिनमें बिना भोजन किये आपको '

बलरामने अुसका वह वाक्य पूरा करने न दिया और बीचहीमें टोककर बोला आज त्योहार है तो अुससे क्या हुआ? तुम जानती हो आज कितनोंके घरमें दूध अुफनेगा पोंगल यानि मेवा मिश्रीकी पकी खिचड़ी पकेगी? अिस देशमें अैसे कितने लाखों करोड़ों घर हैं जिनको यहाँ घरमें कटोराभर गंजी (भातका माँड) भी मयस्सर नहीं होती मालूम है? कुछ पैसे वाकायदा हराम हुअे अुफन पागल बन और नवद्य लग तो क्या वह काफी होगा? अरी पगली! मैं तो कहता हूँ कि जिसका नाम पागल नहीं। किसी दिन हमारे देशकी समूची जनताका दिल जोशसे भरकर जब अुफनेगा और अुमगेगा कि गुलामीकी जंजीर तोड़ फोड़ डालेगा और देशको आजाद कर देगा। तभी सच्चे मानेमें हम पोंगल मना सकेंगे। स्वतन्त्रताकी अुफनती अुमगती भावना भारतके हर घरमें नित्य प्रति पोंगल अर्थात् खाना बनानेका साधन जुटा देगी। सब साधारणको भरपेट खाना मिले—देशमें अस पोंगलकी स्थापना करनेके लिअे ही हम जैसे लाखों-करोड़ों व्यक्ति देशसेवामें जुटे हैं। तुम दुख करोगी तो मुझे जिस काममें अुत्साह कैसे प्राप्त होगा? तुम अिस काममें अुत्साह मेरा हाथ बटाओ तभी मैं दुगुने अुत्साहसे अुसे कर सकूँगा? ज्यादासे ज्यादा दो सालकी जेल होगी। अुसके बाद तो हम आजाद होकर जरूर मिलेंगे।'

अितना कहकर अुसने अपनी पत्नीके गालोंपर प्रेमसे हाथ फेरा तो पास ही खड़ी अुसकी माँने अुसे देखा अनदेखा करके अपना मुँह फेर लिया।

बलराम बाहरको बाहर आया और दारोगासे बोला, मैं तैयार हूँ। फिर अपने पिताकी ओर मुड़कर कहा 'पिताजी आपने अुस दिन कहा था न कि मुझमें और

पिल्लैमें अेक बातका तर्क वितर्क हो रहा था। अुसका जवाब आज मुझे मिल गया। वह यह है कि देश सेवकोंसे झूठी दोस्ती कर जो अैन मौकेपर पुलिसके हाथमें, पकडवा देता है वह बदमाश है। बहादुर कौन हो सकता है— अिस बातका आप स्वयं निर्णय कर लें।"

यह कहकर वह आगे बढा। दूसरे क्षण वैद्यलिंगम् पिल्लैजीके मनकी गहराओीसे यह विचार अुफनकर अूपर अुठा कि बलराम जैसा सच्चा देशसेवक ही सचमुच बडा बहादुर है, शूरवीर है। अुसके मनमें अुठने-अुमगनेवाला अुत्साह ही देशका सच्चा पोंगल' है।

बस, मनमें अिस विचारका अुभरना था कि वैद्यलिंगम् पिल्लैकी नस फूल गयी और अुनके दिलमें अेक प्रकारके जोशकी लहरें अुठने लगी तो वे मारिमुत्तुकी ओर अुगलीका निर्देशकर गरज अुठे, "अरे, तू ही बदमाश है! मेरे कुलके नामपर बट्टा लगानेवाला कुलागार है। मेरी आँखोंके सामनेसे हट जा! निकल जा यहाँसे!"

अितना कहना था कि अुनका सिर चकराने लगा, आँखें ज्योतिहीन हो गयी और अुनकी वृद्ध जर्जर देह लडखडाकर गिरनेको ही थी कि पास खडे छोटे मालिकने अुनका यह हाल देखा और झट लपककर अपने हाथोंका सहारा देकर पकड लिया। अुन दोनोंके अुस आलिंगन-पाशको, प्रेम-बन्धनको दूर ही दूर खडा अेक खतिहर देख रहा था। अुसने दही बेचनेवाली ग्वालिनसे जो पास ही खडी यह दृश्य देख रही थी, कहा—

"अिन दोनोंके जीवनके साथ-साथ गाँवकी अेकताका अंत समझो। अिनके बाद हमारा गाँव कभी अेकताके सूत्रमें न बंधेगा और आपसमें झगडा-फिसाद करके मर-मिटेगा!"

अुसका वह कथन सत्य हो गया। सुख शांतिमय अुस गाँवमें झगडा-फिसाद फैला और अुस आंधीमें वह गाँव नष्टप्राय हो गया।

(तमिलसे अनुवादक—श्री रा. वीळिनाथन)

सन्त-साहित्यकी अमूल्य विभूति-गुरु ग्रन्थ साहिब

डॉ हरदेव बाहरी

गुरु ग्रन्थ साहिब के साथ गुरु शब्द सम्भवत अिसलिअ है कि अिसमें अनेक सन्त सम्प्रदायोंके गुरुओंकी वाणियाँ संग्रहीत हैं। यह ग्रन्थ स्वयं भी गुरु है। गुरु नानक (जन्म सन् १४६९ अी०)से लेकर गुरु गोविन्दसिंह (मृत्यु सन् १७०८ अी०) तक दस गुरु हुअे हैं। अंतिम गुरुने ग्रन्थ साहिबको ही अपना अुत्तराधिकारी नियुक्त किया—'सब सिक्खनको हुक्म है गुरु मान्यो ग्रन्थ।' तबसे ग्रन्थ साहिबकी गुरुवत् पूजा-सुश्रूषा होती है। अुसका दरबार लगता है अुसे सिंहासनपर विराजमान किया जाता है और रेशमी कपड़े ओढ़ाये जाते हैं—रूमाल चादर दुपट्टे तकिये अित्यादि। सायं प्रातः सिक्ख अुसके चरणोंमें पड़ते हैं और अुसके आगे 'अरदास' (अनुनय विनय) करते हैं। अुसे कड़ाह प्रसाद रुपया-पैसा फल फूल और अन्न वस्त्रकी भेंट दी जाती है। सब सिक्ख गुरु ग्रन्थ साहिबका आशीर्वाद और वरद हाथ चाहते हैं। समय समयपर आनन्द कार्योंमें अंव संकट कालमें—अुसका आश्रय ग्रहण करते हैं। अुसकी आज्ञासे काम होता है। बच्चेका नाम रखना हो कोअी कार्य प्रारंभ करना हो श्रद्धापूर्वक भेंट नजराना लेकर गुरु ग्रंथके द्वारपर आते हैं चँवर झलते हैं सिंहासनके चरण दाबते हैं और गुरु मन्त्रका जाप करते हुअे कोअी पन्ना खोल देते हैं। अिस पन्नेका पहला अक्षर पहला शब्द अथवा पहली पंक्ति गुरु आज्ञाके रूपमें ग्रहण की जाती है। सिक्खोंका विश्वास है कि दसों गुरुओंकी आत्मा ग्रन्थ साहिबमें वास करती है।

गुरु ग्रन्थ या आदि ग्रन्थका संकलन पाँचवें सिक्ख गुरु अर्जन देव (१५६३–१६०६ अी०) ने किया था। अुन्होंने प्रथम चार गुरुओंकी वाणियाँ बड़ी खोज और साधनासे संग्रहीत कीं। अुनका यथाक्रम सम्पादन किया और अुनके साथ अपनी वाणी भी जोड़ी। आदि ग्रंथमें सबसे अधिक पद गुरु अर्जन देवके ही हैं। अुन्होंने भारत भरके सन्तोंकी वाणियोंकी छानबीन की और केवल अुन वाणियोंको अपने संकलनमें स्थान दिया जो निर्गुणिया मतके अनुकूल था। जिन भक्त कवियोंकी वाणी अिस आदर्शसे हीन समझी गयी अुसे नहीं लिया गया। अुदाहरण स्वरूप—पंजाबहीके काह्न छज्जू शाह हुसन पीलू आदिकी वाणियाँ गुरु अर्जनदेवके विचाराधीन रहीं पर आदि ग्रन्थमें नहीं आ पायीं क्योंकि काह्न अपनेको परमेश्वर कहा छज्जूने स्त्रियोंकी निन्दा की अंव शाह हुसन और पीलू निराशावादी थे। गुरु ग्रन्थ साहिबमें छह सिक्ख गुरुओं और १६ भक्तोंकी वाणियाँ हैं। अिनका विवरण अिस प्रकार है—

गुरुओंमें—	प्रथम गुरु नानक के	२९४९ छन्द
	द्वितीय गुरु अंगद के	५७ छन्द
	तृतीय गुरु अमरदास के	२५२२ छन्द
	चतुर्थ गुरु रामदास के	१७३० छन्द
	पंचम गुरु अर्जन देव के	६२०४ छन्द
	नवम गुरु तेगबहादुर के	१९७ छन्द
भक्तोंमें—	कबीर के	११४६ छन्द
	नामदेव[1] के	२३९ छन्द
	रविदास के	१३४ छन्द
	जयदेव के	२ पद
	बेणी के	३ पद
	त्रिलोचन के	४ पद
	रामानन्द का	१ पद
	सेन का	१ पद
	परमानन्द का	१ पद
	सदना का	१ पद

---

१ नामदेव दो हुअे थे—अेक महाराष्ट्रके दूसरे पंजाबके। दोनोंकी वाणियोंको अलग अलग करना अत्यन्त कठिन है।

धना के		४ पद
पीपा का		१ पद
भीखन के		२ पद
फरीद के	१३० सलोक,	४ पद
मीरा [२]		१ पद
सूरदास		२ पद

सिक्ख गुरुओंकी कृतियोंको 'गुरु-वाणी' और अन्य सन्तोंकी कृतियोंको 'भगत वाणी' कहा जाता है। अिनके अतिरिक्त सुन्दरजीका अेक सद् है जिसके छह पद हैं। राय बलवडकी अेक वार और भाओ मरदानाका अेक 'शब्द' है। अन्तिम भागमें ११ भट्टोंके १२३ सवैये हैं जो सिख-गुरुओंकी स्तुतिमें लिखे गये हैं।

अुपरिलिखित सूचीमें नवें सिक्ख गुरु, तेग बहादुरजीका नाम देखकर पूछा जा सकता है कि पाँचवे गुरुके बाद नौवें गुरु ही की वाणी क्यों ली गयी, दूसरे गुरुओंकी वाणीको क्यों स्थान नहीं मिला? अिस सम्बन्धमें किंवदन्ती है कि गुरु अर्जनदेवने स्वयं भविष्य-वाणी की थी कि हमारे सकलनमें केवल गुरु तेग बहादुरकी कृतियोंको स्थान मिलेगा। ६ ठे, ७ वे और ८ वे गुरुकी वाणियाँ मिलती ही नहीं। १० वे गुरु गोविन्दसिंह बहुत अच्छे कवि थे, लेकिन अुनकी वाणी भी आदि ग्रन्थमें नहीं है। अुनका सग्रह 'दशम ग्रन्थ' के नामसे प्रसिद्ध है।

सन् १६०४ ओ में गुरु अर्जनदेव द्वारा सकलित आदि ग्रथकी हस्तलिखित प्रति हरिमन्दिर, अमृतसर, में रख दी गयी थी। यह प्रति अब करतारपुर (जिला जालन्धर) में पडी है। वर्षमें अेक बार अिनके दर्शनोंके लिअे लाखो सिक्ख यहाँ जमा होते और चढावे चढाते हैं। महाराजा रणजीतसिंहने दर्शन करते समय अेक बडी जागीर चढावेके रूपमें भेंट की थी जिसका अुपभोग आज भी गुरु अर्जनदेवके वशज कर रहे हैं। अिस प्रतिमें मीराका पद कलमसे काटा हुआ है।

मूल ग्रन्थकी दो प्रतिलिपियाँ और भी थीं जिनपर गुरु अर्जनदेवके हस्ताक्षर ले लिये गये थे—अेक मागट (जिला गुजरात) में और दूसरी दमदमा साहबमें। मागटवाली प्रति-लिपिका देशके बँटवारे (१९४७) के बाद क्या हुआ, कुछ ज्ञात नहीं, दमदमेवाली प्रतिलिपि अहमदशाह अब्दालीके समयसे अुपलब्ध नहीं, परन्तु जो मुद्रित ग्रन्थ अिस समय प्रचलित है वह अिसीका सस्करण है।

गुरु ग्रन्थ साहिबका क्रम अिस प्रकार है—

१ जपुजी—गुरु नानक-कृत—जिसमें मिलोंरा मूलमन्त्र, १ ओंकार सतनाम करता पुरखु निरभउ निरवैर अकाल मूरति अजूनी सैभ गुर प्रसादि भी है।

२ सोदर—गुरु नानक कृत। जिसमें पाँच शब्द (पद) हैं।

३ सो पुरखु—गुरु रामदास-कृत। जिसमें चार पद हैं। जपुजीका पाठ प्रातः तथा सोदर अेव सोपुरखुका पाठ सायकालमें करते हैं।

४ सोहिला—गुरु नानक-कृत। जिसमें चार पद हैं। पाठ रातमें सोनेसे पहले किया जाता है।

५ राग, निम्नलिखित ३१ राग प्रयुक्त हुअे हैं—सिरी, माझ, गअुडी, आसा, गूजरी, देवगधारी, बिहागडा, वडहसु, सोरठि, धनासरी, जैतसिरी, टोडी, बैराडी, तिलग, सूही, बिलावलु, गौड, रामकली, नटनाराअिन, माली गउडा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरअु, बसतु, सारग, मलार, कानडा, कलिआन, प्रभाती, जैजावती।

अिनके अतिरिक्त छह राग सयुक्त होकर प्रधान रागोंके साथ आये हैं—ललित, आसावरी, हिंडोल, भोपाली, विभास, दीपकी।

अिन रागोंमें निम्नलिखित काव्यरूप मिलते हैं—सबद, अष्टपदियाँ, छन्द और वार। अन्य वाणियोंके नाम ये हैं—पहरे, वणजारा, बारहमासा, दिन रैणि, करहले, बावन अखरी, सुखमनी, थिती, बिरहडे, पट्टी, घोडियाँ,

---

२ मीराका पद मुद्रित प्रतिमें अुपलब्ध नहीं होता।

अष्टाहणियाँ आरती कुचज्जी सुचज्जी गुणवंती वार सत अनंदु, सद्द ओअंकारु सिद्धगोष्ठी अंजलियाँ सोहिले। ये वाणियाँ प्राय अष्टपदियोंके बाद आती हैं।

रागोंमें गुरुवाणी पहले और भगत वाणी उसके पश्चात आती है। सिक्ख गुरु सभी अपने शब्दोंके अंतमें नानक नाम लिखते हैं अतः उनकी वाणीके साथ क्रमशः महला १ महला २ महला ३ महला ४ महला ५ और महला ९ का संकेत रहता है। भगत वाणीमें प्रत्येक भक्तका अपना नाम आता है।

६ भोग जिसके अंतर्गत सलोक (दोहे) गाथा फुनहे और चउबोले हैं।
७ सलोक फरीद।
८ सवये सिरीमुखवाक।
९ भट्टोंके सवये—पहले पाँच गुरुओंकी स्तुतिमें।
१० अतिरिक्त सलोक।
११ सलोक महला ९।
१२ मुंदावणी।
१३ रागमाला।

पृष्ठोंकी कुल संख्या १४३० है। मुद्रित ग्रंथ साहिब हिन्दीमें हो चाहे गुरमुखीमें २०×३०/८ हो १८×२२/८ हो २०×३०/४ हो २२×२९/४ हो और चाहे १८×२२/२ हो कोई साइज हो पृष्ठों और पंक्तियोंकी संख्या वही रहती है– टाइपका अंतर इस हिसाबसे रहता है कि प्रत्येक संस्करणका कोई पृष्ठ ले लें एक ही शब्दसे प्रारंभ होगा।

किस भावको प्रगट करनेके लिए किस रागका प्रयोग हुआ अभी इस विषयपर विशेष खोज नहीं हुई। रागमालामें ६ प्रधान राग, ३० रागिनियाँ और ४८ उनके पुत्र = कुल ८४ राग गिनाये गये हैं। पर गुरु ग्रंथमें केवल ३० रागोंके प्रयोग हुए हैं। इसका कारण अवश्य होगा। पुरातन रागोंमें भैरव दीपक मालकौंस, जोग आदि अत्यंत प्रसिद्ध रागोंमें वाणियाँ नहीं हैं। इसका कारण यह जान पड़ता है कि इनसे असामान्य शांति ताप उदासी अथवा आल्हादकी उत्पत्ति होती है। ये गुरु ग्रंथके भाव मण्डलके अनुकूल नहीं पड़ते। जोगियोंको सम्बोधन करनेवाले पद रामकलीमें और मुसलमानोंको उपदेश देनेवाले पद आसा सूही अथवा तिलंगमें लिखे गये हैं। इसका कारण यह है कि ऐसे ही राग क्रमशः जोगियों और मुसलमान फकीरों द्वारा अधिक प्रयुक्त होते थे।

गुरु ग्रंथकी रचनामें संगीत शास्त्रका बहुत ध्यान रखा गया है और घर, ताल स्थायी, अस्थायी अन्तरा गत जत धुन आदिके संबंधमें पूरे-पूरे संकेत दिये गये हैं। काव्यमें संगीतकी सूक्ष्मताओंके महत्त्वको आज बहुत कम लोग समझते हैं।

यह बात विशेषतया उल्लेखनीय है कि गुरुवाणी तथा भगत वाणीमें प्रयुक्त छंदोंमें लोक-छन्दोंको देख कर यह प्रश्न उठ सकता है कि जिन्हें आज साहित्यिक छंद कहते हैं क्या वे भी मूलमें और विशेषतया उस समय लोक गीतों ही के छंद तो नहीं थे? गुरु ग्रंथमें प्रयुक्त सिठणियाँ सोहाग घोड़ी आदि आज भी विवाहोंके अवसरपर पंजाबमें गाये जाते हैं। सत्युगपर वण और अलाहणियाँ आज भी लोक-प्रचलित हैं। बारहमासा, थिती वार सद्द आदि पंजाबके प्रसिद्ध लोक छंद हैं। सोहिला प्रत्येक शुभ अवसरपर गाया जाता है। दुपदे, चउपदे अष्टपदियाँ दोहरा आदि छन्द भी पुराने लोक गीतोंमें मिलते हैं। संत साहित्य लोक साहित्यका ही एक विशिष्ट रूप माना जाय तो अनुचित न होगा। अतः इसमें लोक छंदों लोकोक्तियों और लोकभाषाका व्यवहार स्वाभाविक ही है। हमारा विश्वास है कि सवैया झूलना कवित्त दोहा सोरठा चौपाई आदि छन्द लोक-साहित्यकी देन हैं— वहींसे ये छंद गुरुओं और भक्तोंको प्राप्त हुए हैं।

गुरु ग्रंथ साहबकी भाषा एक रूप नहीं है— एकरूपता थी भी असंभव। जयदेव बंगालके नामदेव सेन और त्रिलोचन महाराष्ट्रके कबीरदास और रविदास भोजपुरी प्रदेशके भीखनजी अवधके धन्ना राजस्थानके नानक अंगद और फरीद लहंदी प्रदेशके अन्य सिक्ख गुरु पंजाबी प्रदेशके थे। इनकी वाणियोंमें प्रादेशिकता स्पष्ट है। परन्तु इस विविधताके बीचमें भाषाकी एकता देखकर आश्चर्य होता है। गुरु नानक और भक्त कबीरकी भाषामें विशेष अंतर नहीं त्रिलोचन और गुरु अर्जनकी भाषा एक-सी लगती है। इससे कहा जा सकता है कि कम-से-कम १५ वीं– १६ वीं शताब्दी तक राष्ट्रभाषाका स्वरूप प्रतिष्ठित हो गया था—और वह राष्ट्रभाषा हिन्दी ही थी जिसमें मराठी बंगाली भोजपुरी अवधी गुजराती राजस्थानी, पंजाबीका पुट होते हुए भी स्वरूपकी एकता निश्चित थी। गुरु ग्रंथ साहिबमें सन १६०४ से सुरक्षित चली आती हुई भारत भरके लोक-नायकोंकी वाणियाँ हिन्दीकी

व्यापक मान्यता और सर्वग्राह्यताका जोरदार प्रमाण अुपस्थित कर रही हैं।

अुद्धरण —

अंतर मलि निरमलु नहीं कीना बाहरि भेख अुदासी।
हिरदै कमलु घटि ब्रह्म न चीन्हा काहे भअिआ सनिआसी॥
भरमे भूली रे जैचंदा। नहीं नहीं चीन्हिआ परमानंदा॥

(त्रिलोचन)

अेक अनेक बिआपक पूरक जत देखअु तत सोअी।
माअिआ चित्र बिचित्र बिमोहित, बिरला बूझै कोअी॥
सभु गोबिंदु है, सभु गोबिंदु है, गोविन्द बिन नहिं कोअी।
सूतु अेकु मणि सत सहस जैसे, ओत पोत प्रभु सोअी॥

(नामदेव)

ना मै जोग धिआन चितु लाअिआ।
बिन बैराग न छूटसि माअिआ॥
कैसे जीवनु होअि हमारा।
जब न होअि राम नाम अधारा॥
कहु कबीर खोजअु असमान।
राम समान न देखअु आन॥

(कबीर)

तुम चंदन हम अिरंड बापुरे, संगि तुमारे बासा।
नीच रूख ते अूँच भअे हैं, गंध सुगंध निवासा॥
माधअु सत संगति सरनि तुम्हारी।
हम अअुगन तुम अुपकारी॥

(रविदास)

बेडा बंधि न सकिओ बंधन की वेला।
भर सरवर जब अूछले तब तरन दुहेला॥

(फरीद)

अेक बूंद जल कारनै, चात्रिक दुखु पावै।
प्रान गअे सागरु मिलै, फुनि कामि न आवै॥
प्रान जु थाके थिरु नहीं, कैसे बिरमावअु।
बूडि मूअे नअुका मिलै, कहु काहि चढावअु॥
मै नाहीं कछु हअु नहीं किछु आहि न मोरा।
अअुसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा॥

(सधना)

दुख सुख दोअू सम करि जानै, बुरा भला संसार।
सुधि बुधि सुरति नामि हरि पाअिअै,
सतसंगति गुर पिआर॥
अहिनिसि लाहा हरि नामु परापति गुरु दाता देवणहारु।
गुरमुखि सिख सोअी जनु पाअे,
जिसनो नदरि करे करतारु॥
काअिआ महलु मंदरु घरु हरि का,
तिस महि राखी जोति अपार॥
नानक गुरमुखि महलि बुलाअिअै, हरि मेले मेलणहार॥

(नानक)

अैसा नामु रतनु निरमोलकु पुंनि पदारथ पाअिआ।
अनिक जतन करि हिरदै राखिआ,
रतनु न छपै छपाअिआ॥
हरिगुन कहते कहनु न जाअी। जैसे गूंगे की मिठिआअी।
रसना रमत सुनत सुखु स्रवना, चित चेते सुखु होअी।
कहु भीखन दुअि नैन संतोखे, जहँ देखा नहँ सोअी॥

(भीखन)

हरि दरसन कअु मेरा मनु बहु तपतै
जिउ त्रिखावंतु बिनु नीर।
मेरे मनि प्रेमु लगो हरि तीर।
हमरी वेदन हरि प्रभु जानै, मेरे मन अंतर की पीर।
मेरे हरि प्रीतम की कोअी बात सुनावै, सो भाअी सो बीर॥
मिलु मिलु सखी गुण कहु मेरे प्रभु के,
सतिगुर मति की धीर।
जन नानक की हरि आस पुजावहु
हरि दरसनि सांति सरीर॥

(रामदास)

बिसरि गअी सभ तात पराअी,
जबते साध संगति मोहि पाअी।
ना को बैरी नाहीं बिगाना
सगल संगि हम कअु बनि आअी॥
जो प्रभु कीनो सो भल मानिअु, अेहु सुमति साधु ते पाअी।
सभ महि रमि रहिआ प्रभु अेकै,
पेखि पेखि नानक बिगसाअी॥

(अर्जुनदेव)

मनकी मनही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी कालि गही॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन पूरन सभ मही।
अवर सगल मिथिआ अे जानहु भजन रामको सही॥
फिरत फिरत बहुते जुग हारिअु मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरिआ, सिमरत कहा नहीं॥

(तेगबहादुर)

हिन्दीमें नगरवर्णनात्मक साहित्य

' मुनि श्री कान्ति सागर :

गजल अरबी भाषाका शब्द है। अिसका अर्थ छदका अेक प्रकारका न होकर, काव्यका अेक प्रकार है। फारसीमें अिस शब्दका प्रयोग प्रेम-वर्णन-परक काव्यके साथ अेक विशिष्ट प्रकारसे सम्बद्ध ज्ञात पडता है। यहाँपर जिन नगरवर्णनात्मक गजलोंका अुल्लेख किया जा रहा है वे छद विशेषके रूपमें आ अुपस्थित हुअी हैं। तात्पर्य यह कि वर्णनका जो तरीका अख्तियार किया गया, वह सर्वथा गजल शब्दके अुपयुक्त है। वर्णनात्मक काव्योंके लिअे अिस छद या ढगका सर्वप्रथम प्रयोग जैन कवि जटमल नाहरने अपनी लाहोरकी गजलमें किया है और परवर्ती अन्य कवियोंने अिसका अनुकरण किया। अिस प्रकारकी रचनाअें हमें दो रूपोंमें मिलती हैं। अेक तो स्वतत्र नगरवर्णनात्मक काव्योंके रूपमें तथा पुरातन आचार्योंको विशेष प्रसगोंपर प्रेषित विज्ञप्ति-पत्रोंमें। अुपलब्ध साहित्यसे तो यही प्रकट होता है कि प्रथम अिस प्रकारकी रचनाअें स्वतत्र हुआ करती थी, बादमें विज्ञप्ति पत्र लेखकोंने अिस परम्पराको अपनाया, क्योंकि वैसे पत्रोंमें अिसकी आवश्यकता अधिक रहती थी। छद, राग और सिलोका आदि शब्दान्तर्गत नगरवर्णनात्मक साहित्य भी प्रचुर परिमाणमें अुपलब्ध होता है।

गजलोंकी पूर्व परम्परापर प्रकाश डालते हुअे पुरातत्त्वाचार्य मुनि श्री जिन विजयजी लिखते हैं —

' अिस प्रकारके स्थलोंके वर्णनकी पद्धति भारतमें बहुत प्राचीन कालसे चली आ रही है। पुराणकारोंने अिसका माहात्म्य नामसे व्यवहार किया है और जैन ग्रन्थकाराने अिसका कल्प नामसे व्यवहार किया है। काशी-माहात्म्य, प्रयाग-माहात्म्य, गया माहात्म्य, श्री-स्थल माहात्म्य अित्यादि नामसे सैकडोंही स्थानोंके अैसे माहात्म्य वर्णन पुराणोंमें लिखे हुअे मिलते हैं। पुराणोंकी दृष्टि धार्मिक है, अिसलिअे अुनके वर्णनमें प्रधानतया स्थानोंका दैवी-माहात्म्य बतलाया गया है और अुनके अगभूत जो नदी, सरोवर, देवस्थान और पूजनीय वृक्षादि हैं अुनकाही विशेष वर्णन किया गया है। अिन माहात्म्य-वर्णनोंमें कहीं-कहीं कुछ प्राकृतिक वर्णन और कुछ अैतिहासिक स्मरणका भी थोडा बहुत अुल्लेख मिल जाता है। जैन ग्रन्थकारोंके कल्पात्मक स्थान वर्णन भी प्राय अिसी धार्मिक दृष्टिको सामने रखकर लिखे हुअे होते हैं और अुनमें भी विशेषतया स्थान या तीर्थका माहात्म्य बतलाया गया है परन्तु साथमें अुनमें कुछ अैतिहासिक अुल्लेखोंकी अुपलब्धि भी अधिक परिमाणमें पायी जाती है। जिनप्रभसूरिका 'विविध तीर्थ कल्प नामका ग्रथ अिस विषयका मुख्य अुदाहरण भूत है। पुराणोंको और कल्पग्रन्थोंकी पद्धतिका अनुकरण पिछले देशी भाषाके कवियोंने भी किया। अुन्होंने भी लोक भाषामें अैसी स्थल-वर्णनात्मक और तीर्थमाहात्म्य विषयक अनेक रचनाअें की। अिन्हीं रचनाओंकी जैसी ये गजलात्मक कृतियाँ समझनी चाहिये। अन्तर अिनमें अितना है कि ये कृतियाँ माहात्म्यकी दृष्टिसे नहीं किन्तु केवल मनोरजन और स्थल परिचयकी दृष्टिसे लिखी गयी हैं।

या तो पुरातन कथात्मक ग्रन्थोंमें और कतिपय अैतिहासिक ग्रन्थोंमें नगर वर्णन विस्तृत रूपमें पाया जाता है। पर अुनकी सीमा है। कवि अपरिमित रस सृष्टिका ही ध्यान रखता है। गजलके लेखकोंने सार्वमत अपना दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक तथा सार्वजनिक रखा है। अिनेकपादृन भले ही नूतन ज्ञात होती हो पर वर्णनात्मक परम्परा बहुत प्राचीन है।

गजलोंकी अुपलब्धि ·

आजसे १४ वर्ष पूर्वकी बात है। मुझे चातुर्मास बम्बअीमें करना था। अुस समय अनन्तनाथजीके पुरातन हस्तलिखित ग्रन्थ व्यवस्थित किये जा रहे थे। मुझे भी कुछ योग देना पडा था। अुस समय मैंने अैतिहासिक

कृतियोंपर विशेष रूपसे ध्यान दिया। जो महत्वकी लगती अुसकी प्रतिलिपि भी कर लेता था। चित्तौड़, अुदयपुर, बंगाल, सूरत और बड़ौदाकी गजलें तथा कोठागाका छन्द आदि रचनायें वहींपर प्राप्त हुअीं। अिनमेंसे कुछ मैंने भारतीय विद्याभवनके तात्कालिक सर्वेसर्वा मुनि श्री जिनविजयजीको बतायीं। वे भी प्रसन्न हुअे। अैसी रचनाके संग्रहका महत्व मुझे समझाकर प्रोत्साहित किया। बम्बअीसे अुन्होंने मुझे अपने पूज्य गुरुमहाराज श्री अुपाध्याय सुखसागरजी महाराजके साथ नागपुर आना पड़ा। चातुर्मास वहीं हुआ। यहाँके और कामठीके ज्ञान-भंडारोंकी जाँच करनेपर मुझे अेक गुटका मिल गया। जो वि स १८३५ का था और अिसके लेखक यति दौलतराम थे, जो कामठीके अितिहास-प्रेमी यति थे। अिसमें अुपलब्ध गजलोंकी नकलें थीं ही, साथ ही नागौर मरोट, बीकानेरकी गजल और पालनपुर छंद अुपलब्ध हुआ। नागपुरके बाबू पारसप्रताप कोठारीके और बालापुर निवासिनी श्राविका चंदन बहनके संग्रहके फुटकर पत्रोंमें गजलोंकी प्रतिमायें मिल गयी हैं। प्राप्त गजलोंमेंसे [1]अुदयपुर, [2]बंगाल, [3]लाहोर और [4]चितौड की गजलें मैंने प्रकाशित करवा दी थीं। सूरतकी गजल स्व० मोहनलालभाअी देसाअी 'जैनयुग' (वर्ष ४) में तथा बड़ौदाकी गजल प० लालचन्दभाअी गांधी "सुवास" में प्रकट कर चुके हैं।

बीकानेरवासी श्री अगरचन्दजी नाहटाने लिखनेपर अपने संग्रहकी कतिपय गजलें मुझे भेजीं। बादमें अिन्हीं दिनों मैंने लाहोर, सांगोर, बीकानेर, अुदयपुर, गिरनार, आगरा, चितोड़, मरोट, बंगाल, पाटन, बड़ौदा, डीसा सूरत कापरडा आदिकी गजलोंके आदि अन्त भाग तथा अुनपर कुछ आवश्यक विवेचन लिख "जैनोनु गजल साहित्य" शीर्षक निबन्ध लिखा, जो फार्बस गुजराती सभाके त्रैमासिकमें प्रकट हुआ था। आगे चलकर प्राप्त गजलोंमेंसे चुनी हुअी, मेरे द्वारा सम्पादित गजलें श्रीनगर वर्णनात्मक हिन्दी-पद्य संग्रहमें प्रकट हुअीं। अिस बीच बुद्धिप्रकाशमें मेवाडपर अेक प्रशस्ति प्रकट हुअी थी जो वर्णनकी दृष्टिसे बहुत ही सुन्दर तथा भावपूर्ण थी। नाहटा बधुओंने अिस बीच अपनी खोज जारी रखी और जो-जो गजलें अुन्हें नवीन मिलती गयीं वे मुझे बराबर भेजते रहे, क्योंकि मेरा विचार था कि अुनका सामूहिक प्रकाशन होना चाहिये, मैंने प्रारंभ तो किया था, पर अर्थके अभावमें वह कार्य आगे न चल सका।

गजलोंकी शैलीसे प्रभावित होकर अिनकी जैसी चालमें नगरवर्णनके अतिरिक्त अन्य प्रकारकी रचनायें भी बनी अेव अिस चालसे भिन्न अन्य छन्दोंमें नगर-वर्णनात्मक गजलें बनीं। अुन छंदोंमें--पद्धरी, कवित्त, छप्पय आदि तो गजलके अन्तमें प्राय: मिलते हैं। अुपर्युक्त पंक्ति वर्णित रचनाओंके अुदाहरणस्वरूप क्रमश: अिन रचनाओंको रखा जा सकता है, सुन्दरी गजल, हनुमान गजल, पालनपुर छंद, मेवाडका छंद, जैसलमेरका सिलोका, गुजरात वर्णन, खलोंकी अुत्तमता और नीचता, कोठारा[1] (कच्छ) का छंद, पूर्वदेश वर्णन छंद, देशान्तरी छंद, फलवर्द्धिका छंद आदि-आदि।

प्रस्तुत गजलोंका अैतिहासिक महत्व :

श्रमण परम्पराका अितिहास तथा कला विषयक प्रेम कितना व्यापक था, वह आजके युगमें शायद ही बतानेकी आवश्यकता रहती हो। जैन साहित्यकी विभिन्न शाखाओंके अवगाहनसे स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि अुसके प्रणेताओंने आत्मलक्षी संस्कृति पोषक विचारोंको स्वात्म अनुभवसे लिपिबद्ध तो किया ही, साथ ही साथ लोक चेतनाको अुद्बुद्ध करनेवाले लौकिक तत्वोंकी भी अुपेक्षा नहीं की। यही कारण है कि आज जैन-साहित्यके प्रयासमें,

१ भारतीय विद्या भा १ अंक ४ पृष्ठ ४१३
२ भारतीय विद्या भा० १ अंक ४ पृष्ठ ४१३
३ जैन विद्या भा अंक १ पृष्ठ २५-३१
४ फार्बस गुजराती सभा त्रैमासिक भा० ५ अं ४ पृष्ठ ४५८-४७२

१ किसी यतिने घनघोर अप्रसन्न वायुमंडलमें अिसकी रचना की है। अिसमें वहाँके जैनोंको खूब गालियाँ दी हैं। कोठाराका छंद अपशब्दोंका कोष है।

ज्ञान भडारामें अितिहासकी बहुमूल्य सामग्री प्रचुर परिमाणमें अुपलब्ध होती है। प्राय प्रत्येक शताब्दीमें जन मुनियान अैतिहासिक साहित्यकी भी रचना की। १६वी शताब्दी पूर्वकी अैसी रचनाअें सस्कृत प्राकृत और अपभ्रशमें मिलती ह—अुन दिनो अिन भाषाओका अितना व्यापक प्रचार था कि सामान्य जनता भी कुछ न कुछ तो समझ ही लेती थी। तदनतर भाषाने करवट बदली। कवियाने भी अपने माध्यमम परिवतन किया। अन्त विषय भी बदला। मुगलोके समागम पूव सचित अितिहास केवल पुन जाग्रत ही नही हुआ अपितु अुसमें नवीन सस्कार भी प्रविष्ट हुअ। फलस्वरूप गजलोकी सृष्टि होने लगी। भले ही अिन गजलोका वण्य विषय मनोरजनात्मक ही क्या न हो पर अिनमें अैतिहासिक तथ्य भी है। अिमलिअ भाषा और साहित्यिका सौन्दय न होने हुअ भी गवेषणाके क्षत्रमें अिन्हे स्थान प्राप्त है। अिन नगर-वणनात्मक गजलोमें अुसका पूरा अितिहास भलेही न आता हो पर साधन सामग्रीकी दृष्टिसे अिनका महत्व विशष है।

समुपलब्ध गजलाको मैने अपन दृष्टि-कोणसे पढन समझनकी चेष्टा की और गजलवर्णित स्थान तथा विषयका समथन, तात्कालिक अन्यान्य अैतिहासिक साधनो द्वारा किस सीमा तक होता है अिस तुलनामूलक पद्धतिका भी अपनानका लघु प्रयास किया कारण सिद्धाचल गिरिनार और पाटन आदिकी गजलोमें जिन जिन महत्वपूण जैन अजैन स्थानाके अुल्लेख आय ह अुनका समर्थन तीथमालाओमें तो होता ही है कुछ अक स्थानोका समथन पुराण तक करते ह। कतिपय पद्योमें किवदतियाँ भी अुपलब्ध होती ह।

गजलोमें शुद्ध अितिहास भले ही अुपलब्ध न होता हो पर अैतिहासिक तथ्याका सग्रह अवश्य रहता है। अुस स्थानपर अुस समय कौन राजा था? शासित प्रदेशकी सीमा कितनी विस्तृत थी? अिसमें कौन कौनसे नगर मुख्य थ? अुनके तात्कालिक क्या नाम थे और बादमें कैसे परिवतन हुआ? नगर और देशमें किन किन वस्तुओका व्यापार होता था? स्थानीय कौनसी वस्तु प्रसिद्ध थी? वहाँपर दर्शनीय तथा अैतिहासिक अव धार्मिक कौन-कौनसे स्थान थ और अुनके साथ किस प्रकारकी जनश्रुतिया जुडी हुअी ह आदि। नगरक कूप वापिका और जलाशय प्रधान खाद्य नगरके प्रमुख नागरिक और राजकमचारी बाजार राजा तथा अुनके परिवारके सदस्य वहाँके खण्डहरोका परिचय वहा बसनवाली जातियाँ और अुनके व्यवसाय तथा सामाजिक प्रथाअें आदि अनक महत्वपूण बातोका सग्रह असी गजलोमें रहता है जो अन्यत्र शायद अुपलब्ध न हो। भौगोलिक दृष्टिसे भी अिनका अपना महत्व है। असी कृतियोको यदि नगरोका गजटियर कह तो अत्युक्ति न होगी।

अधिकाश गजलोके रचयिता प्राय जैन या यति ह। १७ वी शताब्दीस २० वी शती तक अिस प्रकारकी पद्यनिर्माण पद्धति सुरक्षित रही। धार्मिक नियमानुसार जैन मुनि अधिक समय तक अक स्थानपर, बिना विशष कारणके नही रह सकते। वे पदल चलते है किसी भी स्थितिम वाहनका अुपयोग नही करते अत पाद विहार अनिवाय है। सास्कृतिक प्रचारकी विशुद्ध भावनासे अिन्हे भारतके सब प्रदेशामें भ्रमण करना पडता था जहा जनोका निवास हो। अत वे नगर देश ग्रामोसे खूब परिचित थ। अुनम अैतिहासिक दृष्टिकोण था प्रत्यक वस्तुको हृदयकी आखसे दखकर समुचित मूल्याकनकी क्षमता थी वे प्रकृति सुषमाके मौलिक तत्वाका सयम द्वारा जीवनमें आत्मसात कर चुके थ, जनकल्याण और सास्कृतिक लोक-चेतना कैसे जाग्रत हो यह अुनक जीवनका दृष्टि बिन्दु था। अिन्ही अुदात्त भावनाओने अुन्हें अिस ओर आकृष्ट किया। अनुभूतिको कविताके द्वारा व्यक्त करनको अुत्प्रेरित किया। रचयिता जन मुनि थ। परन्तु अुनकी दृष्टि विशाल अुदार और समत्वकी भावनापर प्रतिष्ठित होनके कारण प्रत्यक साम्प्रदायके साथ न्याय किया गया। गिरिनारकी गजलमें दखेंग कि अजन तीथस्थानोका अुल्लख भी जनयति कितन सम्मानके साथ करता है। प्रत्यक्ष अनुभवजन्य ज्ञानका परिपाक गजलो द्वारा हुआ है। य वितरम्त साधन ह। हिन्दी राजस्थानी भाषाके अैतिहासिक साहित्यमें जैन श्रमणोकी यह मौलिक देन है।

गजलका पूरा चिन पाठक तथा अन्वयकके खयालम आ सके झिमलिअ आगरा और वाकानरकी गजल ज्या की त्या द रहा हू। आतरिक्तके आदिम तथा अन्त मात्र अव अनिहासिक परिचयन ही सतोष करना पड रहा है।

गजलाका प्रान्तवार विभाजन चिन प्रकार किया जा सकता है —

(१) पजाब—लाहार निगार।

(२) अुत्तर प्रदेश—आगरा।

(३) सिंध—मरोट गजल।

(४) राजस्थान—अुदयपुर, चित्तौड वाकानर सावत नागार मडता जाधपुर कापरडा पाली और आबू।

(५) गजरात—डामा पाटन सूरत खमायत जबूसर सिनार वडौदा बम्बअी अहमदाबाद।

(६) सौराष्ट्र—पोरबन्दर सिद्धपत्र पालीताना, भावनगर गिरिनार मागरोल।

(७) बगाल—बगालकी गजल पूरब दशका वर्णन।

(८) मध्य भारत—अिन्दौर।

अुपयुक्त विभाजनसे नो स्पष्ट है कि वम्य गजलाका मुख्य स्थान पश्चिम भारत ही रहा है। दूरवर्ती जिन नगरापर जिन विद्वान यतियान गजल लिखीं व भी पश्चिम भारतीय यति थ। केवल चातुर्मास व्यतीत करनके लिअ व वहाँ गये थ। तात्कालिक वर्णनसे पट्टाम भी अनुमस कुछ्वरा तात्कालिक भौगालिक अनिश्चित सिद्ध होता है।

जिन कवियान रचनाकाल सूचित किया है और जिनका नहा है अुनका आनुमानिक समय स्थिर किया जा सका है। व सब रचनाअें क्रमिक ढगम दी ह पर अिनम ३-४ रचनाय असी ह जिनम न लखकन अपना नाम दिया। और न रचनाकाल ही निर्दिष्ट है—असी रचनाअ अन्तमें दी गया ह।

य १-२ गजल आगराक विजय धम लक्ष्मी-ज्ञान मदिरम कविके हाथकी लिखी विद्यमान ह।

भाषा

गजलाकी भाषामें फारसी भाषाके शब्दाकी प्रचुरता है अब राजस्थानाका भी खूब सम्मिश्रण है, जो स्वाभाविक है। सौराष्ट्रस सम्बद्ध रचनाअोंमें कहीं कहा ठठ काठियावाडी शब्द भी मिल जात ह तो कहीं कहा ठठ खडाबाली के प्रयोग भी अुपलब्ध ह। रचनाअें अुर्दू-साहित्यसे मिलती जुलती है, तो अुर्दू भाषाका प्रभाव पडना भी अस्वाभाविक नहीं। अुदाहरणार्थ मरोटकी गजलाको ही ल, भारतीय साहित्यमें रचनाके अन्तमें लखनकाल देनका विधान है और अरबी फारसीमें रचना काल ग्रथके पूर्व। द्वितीय टाका प्रभाव स्वरूप मरोट गजलम विद्यमान है। जिसमें लखकन रचनाकाल शुरुम दे दिया जब कि भारतीय परम्परानुसार अन्तमें देना चाहिय था। जहा भाषाका विचार किया जाता है वहाँ छद भी अनुपक्षणीय नहीं। मूलत सभी कवि-पर गजल निर्माताओंन फारसी शब्द परम्पराके साथ छदाको भी अपनाया जसे रेखता और गजल। गजलमें आप दखग दाह, चौपाअी आदि भारतीय छद मिलेंग। अैसा लगता है कि कवियोंन विषय तथा भाषामूलक छन्दाको अपनाया।

हिन्दी राजस्थानी और अुर्दू मिश्रित य रचनाअें भाषा विज्ञानकी दृष्टिस या शुद्ध साहित्यकी दृष्टिस कुछ भी महत्त्व नहा रखतीं पर लोक-साहित्य और अैतिहासिक तत्त्वकी दृष्टिस अुपक्षणीय ह। हाँ किसी किसी रचनामें भाषाक साथ भावमूलक सौन्दर्य ह पर कवि अिस परम्पराको अन्त तक निभा नहा सका। किसी रचनामें चन्द शब्द सुदर रहनस वह रस-सृष्टि नहा हो सकती जिसके लिअ तो अुसमें प्रचड प्रवाह शान्तिरव और पाण्डित्य चाहिय। म नहीं समझता कि गजलक अधिकाश प्रणता ख्यातिप्राप्त साहित्य-सवी रह हो।

समालोचकोंसे मरा विनम्र निवेदन है कि व गजलाकी भाषापर अधिक ध्यान न दकर अुनके अन्य विषयपर ध्यान दें।

गजल प्रति परिचय

जिन जिन प्रतियाम प्रस्तुत निबन्ध मनरूप धारण कर गया अुनमेंसे अुपरन्त प्रतियाका परिचय देना अत्यत आवश्यक है।

(१) लाहौर गजल—

ट्रा्म गुटकेमें लाहौर अुदयपुर चितौड और मरोटकी गजल लिखी ह। वह मरे सग्रहम सुरक्षित ह। पुष्पिका अिस प्रकार है —

सवत १८३५ वर्षे शाक १७०० मश्रीका प्रवतमान मासोत्तम भाद्रमास शुक्ल पक्ष ७ तिथो चद्रवासर श्री मरोटका है। खरतर आचाय-गच्छ पण्डित प्रवर गुरुजी श्री १०७ श्रीर भाणजी तत्सिष्य मुख्य (स्य) अनवासा प प्र श्री टाहामल्जी तसिष्य प प्र दौलतराम मुनिना लिपी चक्र अिय पुस्तिका ॥

दाहा (दूहा)

जब लग सुरिज चन्द्रमा जब लग जमी आकास।
तब लग अिह पोथी सदा रह अमारे पास ॥१॥

अिह पोथी चितरजनो बाँच ज्यो चितलाय।
पढ्यां गुण्यां सुख अूपजे अिह कहे दोलतराय ॥२॥

नाहटा सग्रहकी लाहौरका गजलके बाद जटमल-कृत 'स्त्रीगजल' दी है। अुसके अन्तमें यह प्रशस्ति है—

'सवत १७६५ रा हरमरमध्ये पदमा ॥

मरे सग्रहमें तान प्रतियाँ लाहौर गजलकी ह। सुन्दर ह, पर लिपिकाल नहा है।

(२) चितौडकी गजल—

जिसकी तो अनक प्रतिया विभिन्न भडारामें पायी जाती ह पर नाहटाजीके सग्रहका प्रति सव प्राचीन है। लखनकाल है —

सवत १७८९ माह सुदि १ दिने लिखते रिणी नगर मध्य द० भाग्य समुद्रण ॥छ॥

लिपि सुन्दर तथा सुपाठ्य है। अिसीम अुदयपुर गजल भी है।

(३) अुदयपुर गजल—

सवप्राचीन प्रतिका प्रशस्ति न २ में दी है। दो प्रतियाँ मरे सग्रहमें भा ह।

(४) आगरा गजल—

४ पत्रकी यह प्रति कहा-कहा दीमकके द्वारा नष्ट हो चुकी है और अिसका प्रति अन्यत्र होनकी सूचना अिन पक्तियाक लिखन समय तक नहा मिली। प्रति कविन स्वय अपन हाथम लिखी है।

(५) बगालकी गजल—

मन अनन्तनाथजीके वम्बअीवाल ज्ञान भडारसे प्रतिलिपि की थी अुसीक सहारे मन अिसे यहा लिया है। परन्तु आज १४ वष पूर्वकी बात है अत प्रति परिचय विस्मृत हो चुका है। प्रतिका आना समव नहीं। अत अितनसे ही सतोष करना पडगा। हाँ नाहटाजीके सग्रह (कलकत्ता) म अिसकी प्रतियाँ ह।
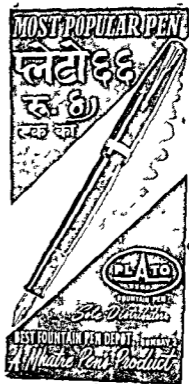
(६) गिरनार गजल—

गिरनारकी गजलकी प्रति नाहटाजीके संग्रहकी है। प्रति अति सामान्य है और कुछ खंडित भी थी। क्योंकि नाहटाजीने कुछ पंक्तियां स्वहस्तसे लिखकर प्रति पूर्ण की है। लिपि सामान्य है। पत्र २ है।

(७) पाटनकी गजल—

पाटन गजलकी अब प्रति अभी अभी मुझे वाला पुरवासी चन्दन वहनके कुछ खण्डित पत्रोंमें प्राप्त हुअी। लेखन प्रशस्ति अिस प्रकार है—

॥ संवत १८९४ अमन विजयन लपिकृत वालापुर ॥

अिसके लेखक वालापुरमें ही रहते थे। आपने वहांपर रहकर सैकडो ग्रन्थोंको अपने हाथसे लिखकर नाम भंडार स्थापित किया। बालापुरमें पाटनवाले ही अधिकतर हैं अतः पाटनके प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है। बाबू अगरचन्द नाहटाके संग्रहमें भी पाटनकी गजलकी ३ प्रतियाँ हैं जिनका परिचय अिस प्रकार है—

प्रति १— पत्र संख्या १० प्रशस्ति—

अिति श्री नरसमुद्र पाटणनी गजल संपूर्ण श्री रस्तु ॥ श्री ॥ सं १८७५ मिति माह वदि ४ लिखत ॥

प्रति २— पत्र सं ५ अिसकी लिपि बहुत सुन्दर स्वच्छ और सुपाठ्य है। अिसका लेखक भी पटु जान पडता है। अिस प्रतिकी सबसे बडी विशेषता यह है कि हाशियेमें पचासों पाठान्तर लिखे हुअे हैं। कहीं कहीं तो मूल प्रतिके पाठोंमें ही परिवर्तन किये गये हैं। जिन स्थलोंपर तो मुझे यही लगता है कि अिसकी प्रतिलिपि करनेवाला या तो कविका ही परम्परागत शिष्य या निकटवर्ती कोअी यति रहा होगा जब तो वह जितना अधिकारपूर्ण संशोधन कर सका। जो भी हो सम्पादकको बहुतसा श्रम उसने हलका कर दिया। अंतिम प्रशस्ति अिस प्रकार है—

॥ अिति श्री नरसमुद्र परणनी गजल सम्पूर्ण ॥ सं १८०२ वर्षे मा सु १० गुरुवासरे लखीतं ॥

मेरा तो ख्याल है अुपर्युक्त प्रतिका आदर्श यही प्रति है।

प्रति ३—यह प्रति भी अुपर्युक्त प्रतिके समान है। पत्र सं ६ है। तीनों प्रतियोंकी लिपि तो प्राय समान है। संभवतः अेक ही परम्पराके लेखकोंकी भिन्न भिन्न लिपियाँ हों तो क्या आश्चर्य !

(८) डीसानी गजल—

अिसकी भी अेक प्रति नाहटाजीके संग्रहमें प्राप्त हुअी है। प्रति बडी सुन्दर और छह पत्रोंकी है। अिसमें भी पाठान्तर प्रचुर है। मूलमें भी पाठान्तर परिवर्तित किये गये हैं। पाटन और डीसाके पाठान्तरका लेखक भिन्न नहीं जान होता कारण लिपि-साम्य स्पष्ट है। अिसके अतिरिक्त जो छोटे मोटे स्थान हैं वे भी फुटकर पत्रोंमें स्फुटाकार कुण्डलियोंके रूपमें मिले हैं, कुछेक लम्बे चौडे विज्ञप्ति पत्रोंमें संग्रहीत हैं। अतः अुनका विस्तृत परिचय देना समुचित प्रतीत नहीं होता।

भाषा विषयक परिवर्तन जितना शीघ्र लोक साम्य साहित्य विषयक कृतियोंमें होता है अुतना साहित्यमें नहीं। गजल अेक प्रकारका लोक-साहित्य ही है पर निर्माण होनेके बाद बहुत शीघ्र व लिपिबद्ध हो गयीं—कअी तो कविका ही लिखी हुअी है—अतः भाषा विषयक अधिक परिवर्तन न हो सका। भाषा विज्ञानके आधारपर हिन्दीके वीर गाथाकालीन ग्रन्थोंके अध्ययन तथा अुनके सम्बन्धमें विद्वानों द्वारा जो भारी भूलें हुअीं, अुनका अेक यह भी कारण है कि जब जो रचना बनी वह तत्काल या अुसी शताब्दीमें न लिखी जाकर कअी वर्षों तक मौखिक परम्पराके रूपमें जावित रही फिर बादमें लिपिबद्ध की गयी। यदि किसी भाषाका मूल आदर्श न माना जाता तो शायद अितनी भूलें न होतीं। अिसका फल यह हुआ कि भाषा विषयक परिवर्तन अितने अधिक हो गये कि मौलिकता खोजना कठिन हो गया। पर जैन साहित्यकी रचनाओंके लिये यह बात नहीं है। गजल तो बिल्कुल अपवाद है।

व्यासका आक्रोश

: आचार्य श्री स ज भागवत :

अूर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति माम् ।
धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्मः किं न सेव्यते ॥

—महाभारत

समाजके आरम्भसे ही समाजके प्रतिभाशाली पुरुष सतत यह स्वप्न देखते आये हैं कि आदर्श समाजकी रचना किस प्रकार की जाये । कवियोंने आदर्शोंका चित्र खींचा, सुधारकोंने आदर्शकी ओर ले जानेवाले आचार बतलाये, वीरोंने आदर्शोंकी मूर्तताके लिअे अपने प्राणोंका भी बलिदान कर दिया, तो भी आदर्श अभी प्रत्यक्षसे अतिशय दूर—कल्पनाके अन्तरालमें ही रहते आये हैं ।

भारतीय संस्कृतिके पवित्र काव्य रामायण और महाभारतमें जीवनके दो आदर्श दिखलाये गये हैं । आदर्श-मानव चित्रित करनेमें रामायणमें वाल्मीकिकी प्रतिभा खर्च हुअी है और महाभारतमें व्यासने अपनी समस्त बुद्धिका अुपयोग करके जीवनका सामाजिक आदर्श अुपस्थित किया है । वस्तुत अिन दोनों आदर्शोंका परस्पर दृढ सम्बन्ध है, क्योंकि यद्यपि आदर्शभूत समाजके निर्माणके लिअे असामान्य व्यक्तियोंकी आवश्यकता है, तो भी आदर्श-समाजमें ही आदर्श-मानव निर्मित होना सम्भव है । अिस कारण समाजके सब व्यवहार आदर्श-जीवन निर्माण करनेकी दृष्टिसे चलानेके लिअे आदर्शोंकी व्यावहारिक साधनाकी प्रधान रूपसे आवश्यकता है ।

व्यवहारके नित्य और महत्वके प्रश्न अर्थ तथा काम हैं । मानवी-जीवनकी पूर्णताके लिअे भारतीय ऋषियोंने 'मोक्ष' शब्दका अुपयोग किया है । जीवनका प्रत्यक्ष स्वरूप अर्थ-काममें है और अुसका परोक्ष स्वरूप मोक्षमय-आनन्दमय है । भारतीय द्रष्टाओं तथा समाज सुधारकोंका यह परम्परागत विश्वास है कि जीवनके अिन प्रत्यक्ष और परोक्ष स्वरूपोंमें चाहे कुछ भी विरोधका आभास क्यों न हो, परन्तु अुनमें वैर नहीं है और अुन्होंने अर्थ-काम अेवं मोक्ष अिन द्विविध अंगोंके साधनके रूपमें केवल अेक धर्मकी साधनाको प्राधान्य दिया है । 'धर्म' शब्दसे जीवनकी सर्वांगीण साधनाका बोध होता है । प्रस्तुत लेखके आरम्भमें अुद्धृत किये गये महाभारतके प्रसिद्ध श्लोकमें भी 'धर्म' शब्दका यही अर्थ सूचित किया गया है । धर्म-साधनासे मोक्षसिद्धि होती है, अिस विषयमें कभी किसीने सन्देह प्रकट नहीं किया, फिर भी अर्थ-कामकी जो सिद्धि धर्माचरणसे होती है अुसके विषयमें बहुत मतभेद दर्शाया जाता है । परन्तु भारतीय विचार-सरणिमें यह सिद्धान्त सर्वमान्य समझा गया है कि धर्मसे ही अर्थ-कामकी सिद्धि होती है । यदि यह ध्यानमें रख लिया जाये कि 'धर्म' का अर्थ 'न्याय' है तो यह विदित होगा कि भारतका अुक्त सिद्धान्त प्रायः जगत्मान्य है । यदि समाजके व्यवहार कभी भी सबके लिअे सुखकर होना है, तो यह आवश्यक होगा कि जिन सब व्यवहारोंका आधार न्यायबुद्धि हो । सुख और न्यायमें तत्वतः विरोध नहीं । परन्तु जब सुखका स्वरूप सकुचित हो जाता है अुस समय अुस सकुचित सुख अर्थात् स्वार्थका न्यायसे विरोध हो जाता है । सबके चिरस्थायी सुखका वास्तवमें, न्यायसे कोअी विरोध नहीं । परन्तु सामाजिक अितिहासके अध्ययनसे यह प्रकट होता है कि समाजमें अभी भी यह न्यायनिष्ठा सुदृढ रूपसे स्थापित नहीं हुअी, अिसीलिअे व्यासके समान ज्ञानी और 'सर्वभूतहिते रत' महान् पुरुषोंको दुखपूर्ण आक्रोश करना पडा है ।

समस्त महाभारतका निरीक्षण करनेसे यह बात सहज ही ध्यानमें आ जाती है कि व्यासका यह आक्रोश कितना यथार्थ था । धर्मका सस्थापन करनेकी प्रतिज्ञा पूरी करनेके अुद्देश्यसे अवतीर्ण भगवान् श्रीकृष्णके चरित्रका प्रत्यक्ष परिणाम, समाजसाफल्यकी दृष्टिसे, हमें क्या दिखता है ? जिन यादवोंके कुलमें श्रीकृष्णका

जन्म हुआ, वे लोग अुन्हींके सामने मदिरामत्त होकर नष्ट हो गये। 'यादवी' शब्द अुसका स्मारक है! पितामह भीष्मने अपने वैयक्तिक सुखजीवनका होम करके जो कुलसेवा की, सम्भवत अुसके ही फलस्वरूप अुन्हें अपने कुलका सर्वनाश देखना पडा और विदुर जैसे स्थितप्रज्ञ ज्ञानी सतको, अपना अुपदेश निरर्थक होते देख, जगत्कल्याणकी अिच्छा होते हुअे भी, अपने स्थानमें दुखी होकर बैठना पडा। स्वत 'महाभारत' कार व्यासके अन्तिम अुद्गार आरम्भमें दिये ही गये हैं।

यह बात नहीं है कि यह अनुभव केवल भारतीय विचारकोको ही आया हो। योरोपीय सस्कृतिके अग्रभागमें दीप्तिमान सार्केटीज और प्लेटोकी भी कथा अैसी ही है। सार्केटीजने यह आग्रहपूर्वक प्रतिपादित किया था कि जीवनका सौख्य विचारोंकी शुद्धतापर अवलम्बित है। जिस कारण अुसे विष-प्याला पीना पडा। प्लेटोकी कथा तो अिससे भी करुणाजनक है। अुसने अपनी विशाल प्रतिभासे सामाजिक जीवनके सपूर्ण आदर्शोका निर्माण करके अपने सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ 'रिपब्लिक' के द्वारा यह तथ्य तत्कालीन जगत्के सामने अुपस्थित किया कि जीवनका परमसत्य जाननेवाले ज्ञानी पुरुषोंके हाथोंमें ही समाजका शासनसूत्र होना चाहिये। अुसका यह सिद्धात आज भी विश्व-मान्य है। परन्तु अुसका स्वयंका अनुभव शोचनीय है। तत्त्वज्ञके राजा होनेकी अपेक्षा राजाका तत्त्वज्ञ होना सुलभ होगा, अिस कल्पनासे अुसने सिराक्यूजके राजाको, अुसके निमत्रणपर, अपना प्रथम शिष्य मान लिया। परन्तु राजाको यह प्रतीत हुआ कि तत्वज्ञ होना असुविधाजनक है। अिस कारण अुसने अुस प्रसिद्ध जीवनाचार्यको गुलामके रूपमें बेच डाला! वहाँ किसी मित्रकी दयासे वह बेचारा किसी प्रकार अपने प्राण बचाकर स्वदेश वापस आया।

प्राचीन चीन देशके प्रसिद्ध ज्ञानी पुरुष कान्-फू-त्से ने भी समाज-धारणाके सम्पूर्ण दर्शनकी रचना की थी। अुसे यह बडी आशा थी कि यदि कोअी राजपुत्र मेरा शिष्य होना स्वीकार कर ले ना मैं अपने दर्शनके अनुसार अुसके जीवनकी रचना कर सकूँगा। परन्तु अुस समयके राजा आपसमें प्राणघातक युद्ध करनेमें अितने व्यस्त थे कि अुन्हें कान-फू-त्से की ओर ध्यान देनेका अवकाश ही नहीं मिला। अुसकी मृत्युके समय अुसके शिष्योंने अुससे पूछा 'आपकी आन्तरिक अिच्छा क्या है?' कहा जाता है कि अुसने ये अुद्गार प्रकट किये थे कि मुझे अन्त तक अैसा राजपुत्र नहीं मिला जो मुझे अपने दर्शनका प्रयोग करनेका अवसर देता। यह बात मेरे हृदयको बहुत दुख दे रही है।

प्राचीन अीरानी लोगोंके धर्म सस्थापक जरदुष्ट्रकी भी कथा अिसी प्रकार मजेदार है। अिस महापुरुषमें समाज-सौख्यकी दिव्यदृष्टि थी और प्लेटोव कान्-फू-त्से के समान ही अुसकी बहुत दिनोंसे यह महत्वाकाक्षा थी कि वह किसी राजाका गुरुत्व करे। अेक राजाको निरुपाय होकर जरदुष्ट्रका शिष्य बनना पडा। कारण, अुस राजाका घोडा अकस्मात बीमार पड गया। जरदुष्ट्रको अश्वविद्या मालूम थी। अिस कारण अुसने अिस अवसरका अुपयोग करके अपना गुरुत्व अुसके अूपर लाद दिया।

आधुनिक यूरोपके 'यूटोपिया' (आदर्श समाज) ग्रथके कर्ता सर टामस मूरको राजाके हाथसे मरना पडा और अुस ग्रथके नामसे 'यूटोपियन' यह अवहेलनादर्शक विशेषण अग्रेजी भाषामें रूढ हो गया।

आदर्श-वादियोंकी अिस नामावलीमें अिच्छानुसार वृद्धि की जा सकती है। जगके सब साधुसंत सदा ही यह कहते आये हैं कि मनुष्योंको धर्मशील बनना चाहिये। बहुतसे लोगोंका विचार है कि अीसा अथवा बुद्धका अुपदेश सन्यासवादका था, परन्तु अुनके अुपदेशोंका प्रत्यक्ष अवलोकन करनेपर यह कहना पडता है कि यह विचार ठीक नहीं। अीसाके 'Kingdom of Heaven' का अर्थ 'Kingdom of Righteousness' है। यह बात अुन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कही है। अर्थात अुनका 'स्वर्गीय राज्य' 'धर्मराज्य' ही था। अुनका मुख्य सिद्धात यही था कि 'तुम धर्म और न्यायके अनुसार आचरण करो। तब तुम्हें जीवनके अैहिक सुख भी सरलतापूर्वक प्राप्त होंगे।' यह सिद्धान्त पूर्वोक्त भारतीय सिद्धान्तसे बिलकुल मिलता है, परन्तु अिसी सिद्धान्तके लिअे अीसाको वध-स्तम्भपर चढना पडा! अिसी प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि गौतम बुद्धका

अष्टांगमार्ग केवल संन्यास जीवनके लिअे ही है। यह स्पष्ट है कि सामाजिक जीवनका वही आधार है। वैशालीके वज्जी लोगोंको अुन्होंने जो सात प्रसिद्ध नियम बतलाये अुनका अुपदेश अुन्होंने समाजमें धर्मराज्य प्रस्थापित करनेके साधनके रूपमें ही किया।

अिस्लामी धर्म संस्थापक महम्मद पैगम्बर तथा यहूदी धर्माचार्य मोजेस ये दोनों महापुरुष कर्मयोगी ही थे। अुन्होंने प्रधानतः अरब और अिस्रायल जातियोंके लोगोंकी समाज-रचना की, परन्तु अुन दोनोंने अपने सामाजिक आदर्शोंकी सिद्धिके लिअे धर्म-साधनाका ही अुपदेश किया। अिस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यासके अिस सिद्धांतको कि **"धर्म ही अर्थ-काम सिद्धिका अेकमात्र साधन है"** सार्वत्रिक मान्यता प्राप्त है। परन्तु अैसा होते हुअे भी प्रत्यक्ष व्यवहारमें धर्मबुद्धिसे आचरण करनेवाले व्यक्तियोंका वर्ग अभीतक अल्प ही दिखता है। सामाजिक सुधारकी दृष्टिसे यह अेक रहस्यमय घटना समझना चाहिये।

यदि हम आधुनिक युगके समाज सुधारकोंके प्रयत्नोंको देखें तो अैसा नहीं मालूम होता कि यह रहस्य समझ लिया गया। आधुनिक कालमें न्यायकी प्रस्थापनाके लिअे राजकीय, आर्थिक, शैक्षणिक अित्यादि विविध क्षेत्रोंमें अनेक क्रांतिकारक प्रयोग हुअे हैं। अिन नाना विध प्रयोगोंमें अन्य कितने भी भेद दिखें तो भी अुनमें यह सिद्धान्त सर्वत्र अंगीकृत किया हुआ दिखता है कि सामाजिक-व्यवहारोंके न्यायबुद्धिपर आधारित होनेसे ही समस्त समाजको सुख और सन्तोषकी प्राप्ति हो सकेगी। तो भी ये प्रयत्न अुल्लेखनीय रूपसे सफल हुअे प्रतीत नहीं होते।

यह कल्पना अति प्राचीन कालसे प्रचलित रही है कि मनुष्य बुद्धिवादी प्राणी है और अुसकी बुद्धिमें सत्यको जाननेकी शक्ति है। ज्ञान ही मनुष्यका अलंकार है, यह सिद्धान्त हमारे यहाँ मान्य था। और ज्ञान ही सद्‌गुण है, यही साक्रेटीजका सिद्धान्त था। आधुनिक कालमें पाश्चात्य देशोंमें बुद्धिपूजाका पुनरुज्जीवन बड़े अुत्साहसे किया गया, परन्तु अिस बुद्धिपूजाकी श्रद्धा प्रत्यक्ष व्यवहारमें, अिस समय बहुत अंशोंमें, विफल प्रतीत होती है। प्रख्यात अंग्रेज लेखक जार्ज बर्नार्ड शाका अनुभव बहुत अुद्‌बोधक है। बुद्धिवादी अिंग्लैण्डमें पैदा हुअे अिस प्रतिभाशाली पुरुषको तरुणावस्थामें अैसा प्रतीत हुआ कि यदि समाजके सब वर्गोंमें पर्याप्त ज्ञानका प्रसार किया जाअे तो समस्त अन्याय और विषमताका अपने आप अंत हो जाअेगा। अिसलिअे अपनी वाणी और कलमकी सहायतासे शाने अिंग्लैण्डकी अखिल जनतापर ज्ञानकी मूसलधार वर्षा की। तथापि अुसे यह स्पष्ट हो गया कि समाजकी क्रियाशून्यता कम नहीं हुअी। अुसे यह दिखा कि लोगोंकी विशेष प्रवृत्ति व्याख्यान प्रवचन सुनने अथवा निबन्ध पढ़नेकी ओर न होकर रंगभूमिकी ओर होती है। यह समझनेपर अुसने अपने विचारोंका प्रचार करनेके लिअे रंगशालाका आश्रय लिया और मनोरंजनके लिअे अेकत्रित सब स्त्री-पुरुषोंको ज्ञानी बनानेका निश्चय किया। परन्तु २४ वर्षोंसे अधिक समय तक यह नयी साधना करनेपर भी शा को अिष्टसिद्धि नहीं प्राप्त हुअी। अन्तमें अुसने निराश होकर यह नाटकीय घोषणा की कि, प्रचलित मानवप्राणी आदर्श समाजके निर्माणके लिअे स्वभावसेही अपात्र है और आदर्श समाजके निमित्त नवमानव', 'अतिमानव निर्माण करनेकी योजना करनी चाहिये।' बुद्धिवादके पुरस्कर्ताकी यह स्पष्ट घोषणा है। अिसका निष्कर्ष यह है कि मनुष्यमें बुद्धिकी अपेक्षा भावनाओं और विकारोंका अधिक प्राधान्य है और तर्क बुद्धिसे प्राप्त ज्ञान मनुष्यकी संकल्प शक्तिको जाग्रत नहीं कर सकता। आजकल पाश्चात्य विचार-धारामें बुद्धिवादके विरुद्ध प्रतिक्रिया आरम्भ हुअी दिखती है। मनुष्यके जीवनपर विकारोंका प्रभुत्व रहता है और अुसकी बुद्धिपर भी विकारोंका आधिपत्य होनेके कारण बुद्धिवाद नामके अंतर्गत सत्यके विकृत दर्शनकाही प्रसार होता है। यह बात बहुतसे विचारकोंके ध्यानमें आने लगी है। अनेक लेखकोंने जिस आशयके विचार व्यक्त किये हैं कि यद्यपि मनुष्यको स्वयंके सुखकी जिज्ञासा होती है तो भी अुसकी सामान्य प्रेरणाअें बहुधा बुद्धिविरोधी और बहुत अंशोंमें दुःख निर्माणका ही कारण होती हैं। अुदाहरणार्थ बर्ट्रेण्ड रसलने अपने विविध ग्रंथोंमें सुखी समाज निर्माण करनेकी अनेक कल्पनाओंका विवेचन

किया, परन्तु अतमें हताश होकर अुसने ये अुद्गार प्रकट किये हैं कि 'मनुष्य स्वयं अपने विनाशकी योजना करनेवाला प्राणी है।'

सामाजिक ध्येयवादके विफलतापूर्ण अितिहासकी यह कहानी कितनी ही करुणाजनक क्यों न हो, फिर भी मानवी अंतःकरणका पूर्णताकी ओर खिंचाव मनुष्यको कभी सम्पूर्ण रूपसे निराश नहीं कर सकता और आज तकके प्रयोगवीरोंको कितनीही असफलता क्यों न प्राप्त हुआी हो, नये प्रयोगवीर नये अुत्साहसे अग्रसर हुअे बिना नहीं रह सकते। अितनाही नहीं, बल्कि प्रत्येक असफलता मनुष्यके ध्येयवादको अधिकाधिक शुद्ध करती जाअेगी। सृष्टिके अितिहासमें मानव संस्कृतिके प्रयोगका आरम्भ हुअे बहुत थोडा समय हुआ है। यदि सापेक्ष दृष्टिसे देखा जाअे तो मानव-समाज अभी बाल्यावस्थामें ही है। अपने जीवनकी आतरिक प्रेरणाओंका अुसे यथार्थ आकलन नहीं हुआ है। अिस कारण अुसे सुखकी अिच्छा होते हुअे भी, सुखका मार्ग स्पष्ट रूपसे नहीं दिखता और यदि अुसे दिखेभी तो वह अुसपर स्थिर रूपसे नहीं चल सकता। मानव हृदयमें पूर्णताकी जो प्रेरणा है वह अुसके दैवी अंशकी द्योतक है। परन्तु अभी अुस दैवी अंशकी अुसके अखिल जीवनमें प्रभुता स्थापित नहीं हुआी है। जैसा कि खलील जिब्रानने अपने 'Prophet' नामक ग्रंथमें कहा है—

> 'Much in you is still man,
> And much in you is not yet man,
> But a shapeless pigmy that
> Walks asleep in the mist,
> Searching for its own awakening '

मनुष्यमें अभी अमानव अंश ही बडे प्रमाणमें विद्यमान है और दीर्घ तपस्याके पश्चात ही यह अंश मानवताका स्वरूप ग्रहण कर सकेगा। रवीन्द्रनाथने कहा है, कि विधाताके हाथमें काल अनंत है। अुसे जल्दी नहीं है।

> 'प्रतीक्षा करिते जानो शतवर्ष धरे
> अेकटि पुष्पेर कलि फुटाबार तरे
> चले तव धीर आयोजन।'

विधातामें विकासकी प्रतीक्षा करनेकी शक्ति होती है। अेक पुष्पकली खिलानेके लिअे अुसकी तैयारी सैकडो वर्षोंसे मन्द गतिमें चलती है। परन्तु मनुष्यमें धैर्य नहीं होता। अुसे फलके आस्वादकी आतुरता होती है, अिसीलिअे वह अत्याचारी और अश्रद्धालु बनने लगता है। यदि ध्येयवादीको किसीका भय है तो वह स्वयं अुसीके हृदयकी अुतावलीका है। मानवी-पूर्णताका कार्य किसी अेक व्यक्तिका नहीं। वह विधाताका विश्वकार्य है। वह यथा समय सफल हुअे बिना नहीं रह सकता। यदि ध्येयवादी पुरुषने अपने हृदयकी प्रेरणासे सत्यनिष्ठ रहकर अपनी शक्तिके अनुसार स्वकर्तव्य किया तो समझना चाहिये कि अुसका कार्य पूरा हो गया। तात्कालिक फलके मोहसे अुसे अपनी श्रद्धाका नाश करना अुचित नहीं। अिसी अर्थमें ही अनासक्ति-योगका अुपदेश सभी तत्वज्ञोंने किया है।

यदि न्याय तथा सुखमें तत्वतः विरोध न हो, तो आज नहीं कल, सामाजिक जीवनमें अिस सिद्धांतका सबको विश्वास अवश्य होना चाहिये। परन्तु यह विश्वास स्थापित होनेके लिअे समाजको अनेक आघात सहन करने पडेंगे। अुसके हृदयके अुन्मादी-विकारोंको विवेकांकित होनेके लिअे कदाचित अनेक आपत्तियोंसे गुजरना पडेगा। समाजके ज्ञानी व्यक्तियोंको समाज-दुःखके सम्बन्धमें कितनी ही दया क्यों न मालूम हो, फिर भी अपेक्षित समाज-व्यवस्था त्वरित मूर्तस्वरूप नहीं धारण करेगी। केवल शाब्दिक अुपदेशोंसे विशेष कार्य नहीं होगा, अितना ही नहीं, अपितु प्रत्यक्ष अुदाहरणसे भी शीघ्र कोअी भारी परिवर्तन होनेकी सम्भावना नहीं। फिर भी ध्येयवादी लोगोंकी कृतियों तथा अुक्तियोंसे समाजके अन्तर्मनपर सतत शुभ संस्कार होते रहते हैं और अन्तमें अुन्हींके कारण समाजका हृदय-परिवर्तन होगा। समाज सुखके लिअे समाज-शुद्धिकी आवश्यकता है, और सामाजिक शुद्धिके लिअे समाजमें मगल-भावनाओंके सतत आवाहनकी आवश्यकता है। अिस कारण, यद्यपि 'बुडतो हे जन न देखवे डोळा, म्हणोनी कळवळा' अुत्पन्न होना आवश्यक गुण है, तो भी समाज हितके लिअे भी 'पिटून काढिती या लोका' की वृत्ति कभी भी अुपकारक नहीं होगी।

कारण किसी भी हिंसात्मक साधनसे समाजके अन्तर्मनकी शुद्धि नहीं होती, उसके विपरीत अहंकार और अविवेककी ही वृद्धि होती है। यह समझनेका कोई कारण नहीं कि हिंसाका अर्थ केवल शारीरी-शक्तिका उपयोग है। नैतिक मूल्योंकी श्रेष्ठता प्रतिपादित करनेमें यदि अवहेलना और असहिष्णुताको अंगीकार किया गया तो हिंसाका ही आश्रय लेना हुआ। इस कारण समाज शुद्धिके प्रयत्नोंमें दंडधारी राजा, कर्मठ शास्त्रज्ञ *अथवा सुधारकके शस्त्रकोर सदा विफल होते आये हैं* और अक्रोधसे क्रोधका, साधुतासे असाधुताका अथवा अहिंसासे हिंसाका प्रतिकार करनेवाले प्रेममय संतोंको ही समाजके मानसिक जीवनमें अटल पद प्राप्त हुआ है।

सामाजिक ध्येयवादके इतिहासमें यह एक विरोधाभास नित्य देखनेमें आया है कि बुद्धिमान तथा साधनसम्पन्न वर्ग ध्येयजीवनसे धीरे-धीरे भ्रष्ट होता जाता है। उसकी न्यायबुद्धि मलिन अथवा विकृत होने लगती है और उसकी जीवनश्रद्धा भी लुप्त हो जाती है। परन्तु बुद्धिहीन तथा साधनहीन सामान्य जनतासे चाहे ध्येयवादका आचार सर्वांशमें न सधे फिर भी उसके हृदयमें ध्येयवादी पुरुषोंके विषयमें भक्ति रहती है और सामाजिक सत्ययुगकी प्रतिष्ठापनाके *सम्बन्धमें श्रद्धाका दीप कभी नहीं बुझता। यह स्पष्ट है कि सामाजिक-न्याय-प्रस्थापनापर ही व्यावहारिक सुरक्षा निर्माण अवलम्बित होनेके कारण सामान्य जनताके लिये यह श्रद्धा अपरिहार्य है।*

प्रत्यक्ष जीवनकी अर्थ-काम-प्राप्ति और परोक्ष जीवनकी मोक्ष सिद्धि इन दोनों अंगोंका साधन धर्म ही है। प्रत्यक्ष और परोक्ष ये एक ही जीवनके दो अंग हैं। ये दोनों अंग तत्त्वतः अविरोधी ही होने चाहिये। धर्मका संशोधन तथा संस्थापन करनेवाले जीवनाचार्य मोक्षके अंतरंगकी ओर स्वभावतः ही अभिमुख होनेके कारण उनके सम्बन्ध-धर्ममें धर्मसाधना निष्काम तथा निरपेक्ष जीवन-वृत्ति हो जाती है। उसीमें उन्हें निरतिशय आनन्दका लाभ होता है और उनमें सहज ही यह इच्छा उत्पन्न होने लगती है कि यह आनन्द अपने बन्धुओंको भी उपलब्ध कराया जाय। सामान्य लोगोंको अपने व्यावहारिक जीवनके अर्थ-काम विषयक प्रश्नोंको हल करनेके लिये धर्मका, न्यायका आश्रय लेना पड़ता है। इस कारण वे व्यावहारिक साधनके रूपमें उन जीवनाचार्योंके उपदेशोंका आदर करते हैं। फिर भी सम्पूर्ण अहिंसासे जीवनके सब व्यवहार सिद्ध करके दिखानेवाला श्रेष्ठ जीवनाचार्यका अभी निर्माण होना शेष है और व्यवहारोंका मोक्षसे *मेल दिखलानेवाला धर्म भी अभी सिद्ध होना है। इस* दृष्टिसे देखनेपर यह कहनेमें कोई हानि नहीं कि सत्याग्रहका मार्ग सम्पूर्ण जीवन धर्मका एक महान् प्रयोग है और म० गांधी इस धर्मके पहिले आचार्य हैं। लोकनायक अणेने महात्माजीको उपरोक्त श्लोक बतलाकर अहिंसा धर्मकी विफलता सिद्ध करनेका प्रयत्न किया था। इसपर म० गांधीने जो उत्तर दिया वह सच्चे ध्येयवादियों द्वारा यत्नपूर्वक हृदयमें रखा जाने योग्य है। लोग अर्थ-काम प्राप्त करनेवाले धर्मका सेवन क्यों नहीं करते? म० गांधीने व्यासके आक्रोशका यह अर्थ किया कि व्यासके उद्गारोंसे धर्मवादकी आवश्यकता ही सिद्ध होती है और समाज-कल्याणकी चिन्ता करनेवाले धर्मका ही अनुसरण किया जाना चाहिये। आदर्श समाज निर्माण करनेवाले प्रत्येक ध्येयनिष्ठ साधकको, इसी विचारसे, अपनी श्रद्धा जीवित रखनी चाहिये तथा *अपने स्वधर्ममें ध्येयशुद्धिके निमित्त मरण स्वीकार करनेके* लिये भी तैयार रहना चाहिये क्योंकि ऐसा ध्येयवादी प्रयत्न तात्कालिक चाहे असफल दिखे परन्तु जीवनको अंतिम सफलताकी ओर ले जानेकी शक्ति अवश्य रखता है।

(मराठीसे अनुवादकः— श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट)

कहावत और न्याय

प्राध्यापक श्री कन्हैयालाल सहल अेम अे

सन १८७७ की डा० Buhler की काश्मीर रिपोर्टमें 'न्याय' शब्दका प्रयोग परिचित अुदाहरणोंसे निकाले हुअे अनुमान के अर्थमें किया गया था। कर्नल जेकबने न्याय के पर्यायके रूपमें Maxim शब्दका ग्रहण किया था किन्तु अिस पर्यायसे वे सन्तुष्ट नहीं थे। अुन्होंने तो केवल बड़े बड़े विद्वानों द्वारा न्याय के अर्थमें गृहीत Maxim शब्दको देखकर ही अिसे अपनाया था अन्यथा अुनकी मान्यता थी कि अंग्रेजी भाषामें 'न्याय' के अर्थको पूर्णतः व्यक्त करनेवाला कोअी अुपयुक्त शब्द है ही नहीं। अुन्होंने न्याय के अन्तर्गत दृष्टान्त नियम और अधिकरण तीनोंका सन्निवेश किया था। अंग्रेजीका Maxim शब्द अितना व्यापक नहीं कि वह अुक्त तीनों प्रकारके अर्थोंका वाचक बन जाअे। अिसलिअे जेकबके मतानुसार तो 'न्याय' शब्दका अंग्रेजी अनुवाद न करके अंग्रेजी भाषामें भी अिसे ज्योंका त्यों ग्रहणकर लेना चाहिये। *

हिन्दी शब्दसागर"के सम्पादकोंकी दृष्टिमें न्याय वह दृष्टान्त-वाक्य है जिसका व्यवहार लोकमें कोअी प्रसंग आ पड़नेपर होता है। यह कोअी विलक्षण घटना सूचित करनेवाली अुक्ति है जो अुपस्थित बातपर घटती हो। न्याय के पर्यायके रूपमें सम्पादकोंने कहावत शब्दका भी प्रयोग किया है। जैसे न्याय या दृष्टान्त वाक्य बहुतसे प्रचलित चले आते हैं और अुनका व्यवहार प्रायः होता है।

"संस्कृतमें लौकिक न्यायके अन्तर्गत बहुसंख्यक सूत्र अेसे समयके या अेसे पण्डितोंकी लोक-विश्रुत कहावतें हैं। अिनमें जो युक्तिमूलक दृष्टान्त हैं वे किसी अेक समयके नहीं भिन्न भिन्न परिस्थितियोंमें पड़कर बुद्धिमानोंको जो सच्चे अनुभव हुअे अुन्होंने अुन्हें सूत्रबद्ध करके जनताको सौंप दिया। जनताने अुनको अुपयोगी समझकर अपना लिया। अिसी प्रकार मुक्त भागियोंके कितने ही सच्चे हृदयोद्गार लोकोक्तियोंके रूपमें प्रचलित हो गये। +

संस्कृत-साहित्यमें सहस्रों स्थलोंपर न्याय का प्रयोग हुआ है। अिनका व्यवहार अधिकतर टीका टिप्पणी, समालोचना व्याख्या शंका समाधान आदिमें देखा जाता है। ध्यानपूर्वक मनन करनेसे यह सर्वदा स्पष्ट हो जाअेगा कि न्याय में किसी घटना, किसी कहानी अथवा किसी विशेष अर्थके बृहत् भाव-सूत्र रूपमें गुम्फित रहते हैं। देखनेमें छोटे लगें, घाव करें गम्भीर वाली अुक्ति यहां अक्षरशः चरितार्थ होती है। न्याय आकार प्रकारमें तो बहुत छोटा होता है पर भाव बहुत गंभीर रहता है। पूर्व समयमें मुद्रण-यंत्रके अभावके कारण सूत्र पद्धति प्रचलित थी और अिसीसे लोकोक्तियां भी 'न्याय' शब्दके नामपर सूत्र रूपमें ग्रथितकर दी गयी थीं। प्रयोगमें न्याय शब्द भी जुटा रहता है। यथा, घुणाक्षरन्याय काकतालीयन्याय पंकप्रक्षालनन्याय स्थालीपुलाकन्याय। न्याय शब्दका व्यवहार कभी अुपमा कभी नियम कभी सिद्धान्त कभी अुक्ति कभी कहानी तथा कभी विशेष कार्यके अर्थमें होते पाया गया है। प्रसंगानुसार अर्थव्यंजना होती है। प्रत्येक न्यायमें विशेष भावकी व्यंजना रहती है और ध्वन्यात्मक रूपसे अिसका प्रयोग होता है।"[१]

संस्कृतके बहुतसे निबन्धोंमें 'लोकप्रसिद्धयुक्ति' को न्यायकी संज्ञा दी गया है।[२]

---

* लौकिक न्यायाञ्जलि तृतीया भाग पृष्ठ २

+ मालवी कहावतें भाग १ का प्राक्कथन प० रामनरेश त्रिपाठी पृष्ठ २

१ संस्कृत लोकोक्ति-सुधा (श्री जाडेश्वरशरण) पुस्तक परिचय (ख) और (ग) पृष्ठ

२ लोकप्रसिद्धयुक्तिन्याय (भूमिका भुवनेश लौकिक न्याय साहस्री)

लोकोक्ति और न्याय दोनों अेक ही हैं अथवा जिन दोनोंमें अन्तर है अिसपर विचार करना आवश्यक है। न्यायके स्वरूपका विवेचन करनेसे निम्नलिखित तथ्योंपर प्रकाश पड़ता है—

१ अनेक न्याय अैसे हैं जो केवल पदात्मक हैं। "मात्स्य न्याय", "टिट्टिभ न्याय" आदि अुदाहरणस्वरूप रखे जा सकते हैं। विश्वमें शायद ही कोअी अैसी लोकोक्ति हो जो केवल अेक पदमें समाप्त हो जाती हो। छोटी-से-छोटी लोकोक्तिके लिअे भी कम से कम दो पद आवश्यक हैं। ट्रेंचके मतानुसार voll, toll जर्मन लोकोक्ति दुनियाकी सबसे छोटी कहावत है।

२ बहुतसे न्याय अथवा अधिकांश न्याय अैसे हैं जो द्विशब्दात्मक हैं और जिनका सम्पूर्ण वाक्यकी भाँति प्रयोग नहीं होता। अुदाहरणार्थ कुछ न्याय लीजिये— अजाकृपाणी न्याय, अन्धगज न्याय काकतालीय न्याय, कूपमण्डूक न्याय, जामातृ शुद्धि न्याय आदि। अुक्त सभी न्यायोंके मूलमें कोअी न कोअी कथा मिलती है जिसको जाने बिना अिन न्यायोंका स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। बहुत सी कहावतें भी अैसी होती हैं जिनके पीछे कोअी न कोअी कथा पायी जाती है, किन्तु कहावत सामान्यतः सम्पूर्ण वाक्यकी भाँति प्रयुक्त होती है, दो-दो शब्दोंके पदांशकी तरह नहीं। कहावती रूपमें क्रियाका कभी-कभी अभाव होनेपर भी क्रिया सदा गम्य रहती है।

३ कुछ न्याय अैसे हैं जिन्हें लोक-प्रसिद्ध अुपमाओंका नाम दिया जा सकता है। अूषरवृष्टि न्याय, करस्थामलक न्याय, चक्रभ्रमण न्याय, अरण्यरोदन न्याय, अजागलस्तन न्याय आदि अुदाहरणस्वरूप रखे जा सकते हैं। कहावती अुपमाओंके भी अुदाहरण मिलते हैं किन्तु लौकिक न्यायोंमें जिस प्रकारकी अुपमाओंका प्राचुर्य दृष्टिगत होता है।

४ अनेक न्याय अैसे भी अुपलब्ध हैं जिन्हें यदि लोकोक्ति अथवा कहावतका नाम दिया जाअे तो किसी प्रकारका अनौचित्य नहीं दिखलायी पड़ता। नीचे जो अुदाहरण दिये जा रहे हैं अुनमें लोकोक्तिके सभी लक्षण मिलते हैं—

(क) अर्के चेन्मधु विन्देत किमर्थं पर्वतं व्रजेत्। यदि समीप ही मधु मिलता हो तो पर्वतपर जानेसे क्या प्रयोजन ?

(ख) भक्षितेपि लशुने न शान्तो व्याधिः। लहसुन खानेपर भी रोग शान्त न हुआ। जैकबने अिस न्यायके लिअे Maxim शब्दका प्रयोग न कर Proverb शब्दका प्रयोग किया है।

(ग) वरं सांशयिकान्निष्कादसांशयिकः कार्षापणः। अनिश्चित निष्ककी अपेक्षा निश्चित कार्षापण श्रेष्ठ है।

(घ) वरमद्य कपोतः श्वो मयूरात्। कलके मयूर (मोर) से आजका कपोत (कबूतर) अच्छा। वात्स्यायन कामसूत्रके द्वितीय अध्यायमें ग और घ सम्बन्धी अुक्तियों का प्रयोग हुआ है, जिन्हें जैकब भी proverbs कहना ही अुपयुक्त समझते हैं।

(ङ) अन्धस्यवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे। जो अन्धेके सहारे लगा है अुसे पद-पदपर गिरना पड़ता है। अिस न्यायका प्रयोग भामतीमें हुआ है जहाँ अिसका "आभाणक" शब्द द्वारा अुल्लेख किया गया है। "तथा चाभाणक अन्धस्यवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे।"

(च) सर्वं पदं हस्तिपदे निमग्नम्। हाथीके पैरमें सब पैर समा जाते हैं।

(छ) शीर्षे सर्पो देशान्तरे वैद्यः। सर्प सिरपर और वैद्य देशान्तरमें।

(ज) विक्रीते करिणि किमङ्कुशे विवादः। हाथी बिक जानेपर अंकुशका विवाद कैसा ?

(झ) पुत्रलिप्सया देवं भजन्त्या भर्तापि नष्टः। पुत्र प्राप्तिकी अिच्छासे देवताकी अुपासना करती हुअीका पति भी नष्ट हो गया।

(ञ) वराटकान्वेषणे प्रवृत्तश्चिन्तामणिं लब्धवान्। *कौड़ीकी तलाश करते हुअे चिन्तामणि हाथ लग गयी।* कबीरकी साखियोंमें अिसका निम्नलिखित रूप अुपलब्ध होता है।

"चौहटे चिन्तामणि चढ़ी, हाडी मारत हाथ।"

५ कुछ न्याय ऐसे भी हैं जिनके कहावती रूप आज भी उपलब्ध होते हैं। उदाहरणार्थ—

(क) गोमहिषीन्याय।

एक राजस्थानी लोकोक्तिमें कहा गया है कि "गायकी भैंसके लागे और भैंसकी गाय के लागे ?" अर्थात् गायका भैंससे क्या सम्बन्ध और भैंसका गायसे क्या सम्बन्ध ?

(ख) तरक्षडाकिनीन्याय। इसी न्यायका प्रतिरूप "डाकण और जरख चढी" राजस्थानी भाषामें उपलब्ध है।

६ जैकब द्वारा सग्रहीत और सम्पादित "लौकिक न्यायाजलि" म कहीं-कहीं न्यायके स्थानमें "निदर्शन" और "नियम" शब्दका प्रयोग हुआ है। यथा—

(क) तम प्रकाशनिदर्शनम् अर्थात् अधकार और प्रकाशकी युगपत् स्थितिका दृष्टान्त।

(ख) तैलकलुषितशालिबीजादकुरानुदयनियम।। अर्थात् तैलसे कलुषित शालि बीजके अकुरित न होनेका नियम।

७ कहीं-कहीं प्रश्नोत्तरके रूपमें भी न्यायोंके उदाहरण मिलते हैं। जैसे—

(प्रश्न) जागर्ति लोको ज्वलति प्रदीप
सखीजन पश्यति कौतुकं मे।
कपर्दकमात्रं कुरु कान्त धैर्यं
बुभुक्षित किं द्विकरेण भुक्ते ?

(उत्तर) जागर्तु लोको ज्वलतु प्रदीप
सखीजन पश्यतु कौतुकन्ते।
कपर्दकमात्र न करोमि धैर्यं
बुभुक्षित न प्रतिभाति किंचित्।।

लौकिकन्यायाजलि प्रथमो भाग।
वही पृष्ठ ८८
भुवनेशलौकिक न्याय साहस्री पृष्ठ १८५।
वही पृष्ठ २३१

भुवनेश लौकिकन्यायसाहस्रीके सपादकने "बुभुक्षित किं द्विकरेण भुक्ते" और "बुभुक्षित न प्रतिभाति किंचित्"की न्यायोंमें गणना की है।

८ न्यायोंमें एक आभाणक-न्यायकी गणना की गयी है। 'वराटकान्वेषणे प्रवृत्तश्चिन्तामणि लब्धवान्' इसे आभाणक-न्यायके अन्तर्गत रखा गया है। आनद घनकृत कुथुनाथ-स्तवन भी इस सम्बन्धमें द्रष्टव्य है, जहाँ कहा गया है—

"रजनी वासर वसती ऊजड़, गयण पयालो जाय।
साँप खाय नै मुखडूं थोथो, ए ऊखाणो न्याय।।"

साँप दूसरेको काटता है किन्तु उससे साँपका पेट नही भरता। इसे "ऊखाणो-न्याय" या "आभाणक-न्याय" कहा गया है।

९ कुछ कवियोंकी उक्तियाँ भी ऐसी हैं, जिन्हें "न्याय" के अन्तर्गत कर लिया गया है। उदाहरणार्थ-

(क) छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति (विष्णु शर्मा)

(ख) सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृता (श्रीमद्भगवद्गीता)

"न्याय" के उक्त स्वरूपोंको देखनेसे स्पष्ट है कि सस्कृत साहित्यमें "न्याय" शब्द अत्यन्त व्यापक है। इसके अंतर्गत लोक प्रचलित पदार्थों, प्रसिद्ध उपमाओं विश्रुत दृष्टान्तों, सूक्तियों तथा आभाणकों अथवा लोकोक्तियों सभीको स्थान मिल गया है। बहुतसे न्याय ऐसे हैं जिन्हें "कहावत"की सज्ञा दी जा सकती है। अनेक न्याय ऐसे हैं जिन्हें पारिभाषिक दृष्टिसे "लोकोक्ति" तो नहीं कहा जा सकता किन्तु जो सूत्र शैलीमें ग्रथित ऐसे पद-समुच्चय हैं जो अपनेमें गभीर अर्थ छिपाये हुए हैं। दार्शनिक ग्रन्थोंके भाष्योंमें इस प्रकारके न्यायोंका प्रचुर प्रयोग हुआ है। "योगादूढिर्बलीयसी" जैसे अनेक शास्त्रीय न्याय भी हैं जो कहावतोंकी अपेक्षा सिद्धान्त, नियम आदिके अधिक सन्निकट हैं।

यही कारण है कि कहावत और न्यायके अपेक्षित विवेचनमें शास्त्रीय न्यायोंको जानबूझकर छोड दिया गया है।

कलाचार्य श्री पंधे गुरुजी

: श्री रामेश्वरदयाल दुबे, अेम. अे., साहित्यरत्न :

"यदि कोअी फ्रांस-निवासी 'लुव' के चित्रालयकी बात नही जानता, या कोअी अँग्रेज लंडनकी नेशनल गेलरीसे अपरिचित होता है तो वह अपने समाजमें सस्कारहीन गिना जाता है। परन्तु अिसे भारतका दुर्भाग्य ही कहना चाहिये कि भारतवासी कला, कलाकारों और कलाप्रेमियोंकी चर्चा करना केवल निठल्ले बेकार और आरामतलब मनुष्योंका ही काम समझ बैठे हैं।"

गुजरातके प्रसिद्ध कलाकार श्री रविशंकर रावलजीके अिन शब्दोंमें कलाके प्रति हमारी अुपेक्षाकी करुण कहानी कही गयी है।

किन्तु यह आजकी कहानी है, अतीतकी नही। कला और कलाके प्रति प्रेमकी दृष्टिसे हमारा अतीत कम गौरवशाली न था। भारतीय कलाकारोंकी वे विभिन्न कृतियाँ, जिनमें अुनके हृदयका रंग छलका था, आज भी विद्यमान हैं, और यदि हम चाहें तो अुनका रसास्वादनकर आत्मविभोर हो सकते हैं। अुन महान कलाकार कवियोंके काव्य ग्रंथ, चतुर चित्रकारोंके रुचिर चित्र, पत्थरोंमें मृदुताको अंकित करनेवाले मूर्तिकारोंकी मूर्तियाँ, अीट-पत्थरके सहारे सौन्दर्यकी सृष्टि करनेवाले शिल्पियोंके शिल्पकौशल्य आज भी हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। किन्तु अुन सबको हमारी ममता नहीं, अुपेक्षा मिल रही है। काश, हम सब अिनका सही-सही मूल्यांकन कर पाते, अुनके प्रति आदर और श्रद्धा व्यक्त करना सीख पाते!

अतीतको हम थोडी देरके लिअे छोड भी दें, तो भी वर्तमानके कुछ कलाकार अैसे महान् हैं जो किसी कोनेमें पडे रहकर अपनी अनवरत साधनाके द्वारा कलाकी भव्य सेवा करते जा रहे हैं। अिस अर्थ-प्रधान युगमें भी, अिन कलाकारोंने अपना सम्पूर्ण जीवन अेकमात्र कलाकी अुपासनामें अर्पण कर रखा है। वर्तमान युगके अैसे कलाकारोंमेंसे कुछका परिचय जनताको प्राप्त हो चुका है, किन्तु अभी अनेक अैसे व्यक्ति हैं जिन और जिनकी कला-साधनाका ज्ञान बहुत ही थोडे व्यक्तियोंको है। तिलक राष्ट्रीय विद्यालय खामगांव (जिला बुल्ढाना मध्यप्रदेश) के आचार्य मौन साधक, कलाकार श्री पंधेगुरुजी अुनमेंसे अेक हैं। नीचेकी पंक्तियोंमें अुनका संक्षिप्त परिचय देनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

कलाचार्य श्री पंधे गुरुजी

कलाकार पंधेगुरुजीका पूरा नाम श्री मुकुन्द श्रीकृष्ण पंधे है। आपका जन्म १२ फरवरी १९०३ को नरसिंहपुर जिला होशंगाबादमें अेक मध्यम-वर्गीय ब्राह्मण परिवारमें हुआ था। पंधेगुरुजीके पिता श्रीकृष्ण अप्पाजी पंधे बडे ही अुदार तथा धर्मभीरु व्यक्ति थे। सन्त महात्माओंके प्रति वे विशेष श्रद्धा-भाव रखते थे, और हृदयसे अुनका स्वागत किया करते थे।

पंधेजीका परिवार सुख-समृद्धिसे सम्पन्न था। बाल-बच्चोंसे भरा हुआ घर अभावोंसे वंचित था। अैसे ही सुन्दर तथा धार्मिक वातावरणमें कलाकार पंधे गुरुजीका शैशवकाल बीता।

पन्चेगुरुजीकी प्राथमिक शिक्षा नरसिंहपुर तथा होशंगाबादकी शालाओंमें हुअी। किन्तु यदि सच कहा जाअे तो अुनकी सच्ची शिक्षाका प्रारम्भ प्राकृतिक सौन्दर्यसे सम्पन्न नर्मदा नदीके अुस तटपर हुआ, जहांकी हरी-हरी झाड़ियाँ झूम झूमकर हृदयको हरा कर देतीं और नर्मदा नदीकी लोल लहरे जीवनको सरस बना देती हैं। प्रकृति प्रागणकी यह रंगशाला बालक पन्चेको अितनी आकर्षक प्रतीत होती कि वह शाला न जाकर नर्मदा नदीके रेतीले तटपर कछुअे और मछलियोंके चित्र बनाना अधिक पसन्द करता था।

प्रकृति सौन्दर्यके प्रति अिस आकर्षणका अेक स्थायी प्रभाव श्री पन्चेगुरुजीके जीवनपर पडा। शहरकी भीड़-भाड़से अुन्हें अरुचि है और अपने हाथों लगाये पेड़-पौधोंके बीच अपने कला भवनमें रहकर कलाकी साधनामें अुन्हें विशेष आनन्द मिलता है।

किसे ज्ञात था कि नर्मदा नदीके तटपर चिकनी मिट्टीसे कछुअे और मछलियाँ बनानेवाली छोटी अुंगलियाँ ही आगे चलकर मिट्टीमें सौंदर्य भरकर कलाकी प्राण-प्रतिष्ठा किया करेंगी? खामगांवके कला-भवनमें निर्मित होनेवाली सुन्दरतम कला-कृतियोंका आरम्भसूत्र नर्मदातटके अुन बाल-खिलौनोंमें मिलेगा, जो टूट-टूटकर भी अेक कलाकारका निर्माण कर रहे थे।

अपनी प्राथमिक शिक्षा समाप्त करनेके पश्चात अपने पिताजीके साथ बालक पन्चेको नागपुर जाना पडा। अिसलिअे आगेकी पढ़ाओका प्रबन्ध नागपुरमें ही हुआ। सन् १९१९ में आपने मेट्रिक पास की। कालेजमें अिन्टरका दूसरा वर्ष चल रहा था। राष्ट्र-पिता पूज्य महात्माजीका असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। अुथल-पुथलके अुस अैतिहासिक दिनोंकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्रत्येक युवकके हृदयमें अेक द्वंद्व अुठ खड़ा हुआ था। वह क्या करे? अपने स्वार्थोंकी पूजा-साधनामें लगा रहे या देशकी बलिवेदीपर प्राण-बलिदान करे? श्री पन्चे गुरुजीके मनमें भी मथन चलता रहा। अन्तमें, जैसा अेक सहृदय, भावी कला-कारके लिअे स्वाभाविक था, श्री पन्चेजीने देश-सेवाका पथ अपनाया। वे कालेजको ही नहीं, घर-परिवारको भी अन्तिम नमस्कार करके असहयोग आन्दोलनमें शामिल हो गये।

श्री पन्चे गुरुजीके जीवनकी यह पहली मोड़ थी। अिस नयी दिशाकी ओर जानेके लिअे अुन्हें दो बातोंसे प्रेरणा मिली। सन् १९२० के नागपुर कांग्रेस अधि-वेशनमें स्वयंसेवक बनकर आपने काम किया था। अुसी समय लाला लाजपतरायकी सेवा-सत्संगका लाभ आपको प्राप्त हुआ। लालाजीके जीवनसे आप विशेष प्रभावित हुअे। अिसलिअे जब आप गांधीजीके असहयोग आन्दोलनमें कूदे तब आजन्म अविवाहित रहकर देश-सेवा तथा आमोद्धारकी दृढ़ प्रतिज्ञाके साथ ही कूदे थे। और आज भी हम देखते हैं कि श्री पन्चेजी अुसी तन्मयता, अुसी निष्ठा और अुसी श्रद्धाके साथ दोनों कार्योंमें लगे हुअे हैं।

युवावस्थापर भावनाओंका राज्य रहता है। पंचेजीको धार्मिक वातावरणका लाभ मिला ही था, मनमें यह विचार आया कि ीश्वरकी कृपा प्रसादके बिना लोक सेवा या देश-कार्य नहीं हो सकता। अुसी अुद्देश्यसे आप रामकृष्ण मिशनमें सम्मिलित हुअे और ीश्वर-भक्तिके साथ जन-सेवाका कार्य करने लगे। धीरे धीरे वैराग्यकी भावना हृदयमें स्थान पाती गयी। सन्यासी बनकर जीवन बितानेका निश्चय करनेका विचार हुआ। नागपुरके निकट रामटेक तीर्थमें रहकर कुछ समयके लिअे आपने भगवा वस्त्र भी धारण किया था, किन्तु मनमें अन्य विचारोंकी भी आँधियाँ चल ही रही थीं। स्वतन्त्रता संग्रामका अेक सक्रिय सिपाही बनना अथवा केवल कर्मोपासक बनकर जीवन बिताना? अन्तमें देश भक्तिके प्रति आकर्षणकी विजय हुअी। फलतः मुळशी सत्याग्रहमें आपने भाग लिया।

अुन दिनों सत्याग्रही और जेलका घनिष्ठ सम्बन्ध था। यरवडा जेलमें आपको बहुत समय तक रहना पडा। यहाँ आप सेनापति बापट, शंकरराव देव और महात्मा गांधीके निकट सम्पर्कमें आये। सेनापति बापटके ज्वलन्त देश-प्रेम, अटूट सेवा भाव तथा असीम त्यागने

आपको विचार स्पष्ट प्रभावित किया। पूज्य बापूके प्रवचनोंका लाभ तो नित्य मिलता ही था। उनके उस त्यागमय तपस्यामय वातावरणमें बापूके सान्निध्यमें जीवनकी साधना उनके चरणोंमें आपको स्वर्ण अवसर मिला। सर्वस्व समर्पणकी भावना यहीं पल्लवित पुष्पित हुआ।

सन १९२३ में आप यरवडा जेलसे मुक्त हुआ। अेक सज्जनोंकी सलाहपर आपने विलायत भ्रमणका विचार किया कुछ प्रयत्न भी किया किन्तु जिस सफर पर आप सफल न हो सके। जिधर बचपनसे ही कलाके प्रति जो सहज आकर्षण था वह अपनी ओर खींच रहा था। बम्बओ पहुंचकर आपने बम्बओ स्कूल आफ आर्टसमें प्रवेश पानेका प्रयत्न किया किन्तु यहाँ भी आपको सफलता न मिली।

बम्बओ स्कूल आफ आर्टसके प्रांगणमें घटनेवाली घटना साधारण न थी। पंड्ये गुरुजी जैसा सच्चा कला प्रेमी नवयुवक बड़ी श्रद्धाके साथ अुक्त स्कूलके प्रिंसिपलके पास प्रवेश पानेकी जिज्ञासा लेकर गया था। किन्तु अुनकी वेशभूषाको देखकर ही गोरा प्रिंसिपल भड़क अुठा। क्योंकि पंड्येजी खादीधारी थे।

स्वाभिमानी भारतीय होनेके कारण श्री पंड्येजीको जो अुत्तर अेक गोरे प्रिंसिपलसे मिला वह जिस प्रकार था—
You po itical lunat c ! get out of my Art school otherWise I shall call my chaparası to drive you out

स्वतंत्र भारतके नव नागरिक दासताकी अुस विभीषिकाकी कल्पना भी न कर सकेंगे जो अुन दिनों हमारे देशके घर घरमें व्यक्तियोंके लिए नित्य अनुभवकी बात थी। किन्तु यह भी कम गौरवकी बात न थी कि अुन दिनों देशका नव युवक समाज अिस दास्य भावनाके विरुद्ध अेक तीव्र विद्रोहका भाव लेकर अुठ खड़ा हुआ था और अुसीका यह शुभ परिणाम है कि आज हम मुक्त गगनके तले स्वतंत्र वातावरणमें साँस ले रहे हैं—हम स्वतंत्र हैं।

श्री पंड्येजीने बम्बओके अुस कला भवनमें फिर पैर तक न रखनेका निश्चय किया। आप मध्य प्रान्त लौट आये। अुन दिनों नागपुरमें झंडा-सत्याग्रह चल रहा था। श्री पंड्येजीने अुसमें भाग लिया और फल स्वरूप फिर अुन्हें जेल जाना पड़ा। स्वातंत्र्य संग्रामके अेक निष्ठावान सिपाही होनेके कारण आन्दोलनोंमें सक्रिय भाग लेना और जेल जाना ही प्रायः अुन दिनों आपका कार्यक्रम रहा करता था। अिसलिये आपकी कला पिपासा अतृप्त ही बनी रही।

सन १९२८ में कुछ मित्रोंके आग्रहसे आपने सामगाँव तिलक राष्ट्रीय विद्यालयमें काम करनेका निश्चय किया। बहुत दिनोंके उच्छ्रंखलमय जीवनके पश्चात अेक स्थिर जीवनकी यहीं प्रारम्भ हुआ। श्री पंड्येजीने अनुभव किया कि वे यहीं अुस प्रकारका अेकान्त वातावरण प्राप्त कर सकेंगे जिसकी आवश्यकता कला साधनाके लिये हुआ करती है।

यह कहना ठीक ही होगा कि श्री पंड्ये गुरुजीकी कला साधनाका वास्तविक प्रारम्भ सामगाँवके राष्ट्रीय विद्यालयसे ही हुआ। और यही वह विद्यालय है जिसमें अुन्होंने अपने स्वप्नोंको साकार रूप देनेका प्रयत्न किया। श्री पंड्ये गुरुजीने अपनेको अिस राष्ट्रीय विद्यालयमें अिस तरह खपा दिया कि आज अुनसे और अुनके विद्यालयसे विलग नहीं रह गया है।

अपनी साधनाके प्रारम्भ कालमें श्री पंड्ये गुरुजीने भारतके प्रधान प्रधान कलाकारोंसे परिचय प्राप्त किया तथा अुनकी कला पद्धतियोंका अध्ययन किया। अध्ययन और आत्म प्रेरणाके आधार पर कलाके विविध रूपोंकी अुपासना चलती रहा।

सन १९३०-३२ के आन्दोलनमें अपनी देशभक्तिके फलस्वरूप आपको फिर जेल जाना पड़ा। वहाँसे मुक्त होनेपर आपने दक्षिण प्रान्त तथा श्री लंकाकी कला यात्रा की। द्राविड शिल्प कलासे आप विशेष प्रभावित हुअे और वहाँकी मूर्तियोंका आपने अच्छा अध्ययन किया। सामगाँवके कला भवनमें आपके द्वारा निर्मित नटराजकी दिव्य और भव्य मूर्तिका दर्शन भाव विभोर बनाये बिना नहीं छोड़ता।

अजंता और अलोराके कला मन्दिरोंका भी आपने बड़ी श्रद्धासे अध्ययन किया है। आपने अुत्तर भारतमें भी घूम घूमकर विभिन्न स्थानोंकी कला दुनियाको देखा

है। हिमालय-यात्रामें आप शुभ प्रकृति देवीके निकट सम्पर्कमें आये जो कलाकारोंको नव-स्फूर्ति और नव-रचनाकी मंजुल प्रेरणा दिया करती है।

वर्तमान भारतीय कलाकारोंमें आप सबसे अधिक शान्तिनिकेतन-निवासी श्री नन्दलाल बोससे प्रभावित हुअे। श्री पन्धेजीको अुनसे कला सम्बन्धी अेक विशेष दृष्टि प्राप्त हुअी है।

कांग्रेस अधिवेशनोंके साथ होनेवाली अनेक प्रदर्शनियोंमें आपने काम किया है। अिन्हीं मौकोंपर आप कला विषयपर बापूके निकट सम्पर्कमें आये और अुनकी प्रेरणासे ग्रामीण कलाओंके पुनरुद्धारकी ओर आपका ध्यान गया। अिस दिशामें आज तक आपने स्पृहणीय प्रयत्न किया है। राष्ट्रीय क्षेत्रमें आपकी कलाका विशेष आदर है। हैदराबादमें हुअे कांग्रेस—अधिवेशनके अवसरपर आपहीने प्रदर्शिनी तथा पंडाल आदिके द्वारोंको अपनी कला-सृष्टिसे सुन्दर रूप दिया था, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा सभीने की थी।

खामगांवका तिलक राष्ट्रीय विद्यालय, जिसे अेक 'कलाधाम'की संज्ञा दी जा सकती है, श्री पन्धेगुरुजीकी कल्पनाओंका मूर्त रूप है। दिन प्रतिदिन अुसे आकर्षक बनानेका अुनका प्रयत्न जारी रहता है। अिस विद्यालयके प्रति अुनकी ममता भी थोड़ी नहीं है, किन्तु यह ममता अुनके कर्तव्य-मार्गमें बाधा नहीं बना करती। व्यापक मानव-जीवनकी ओर दृष्टि रखने और जननी जन्म भूमिके प्रति अगाध प्रेमके कारण सन ४२के आन्दोलनमें आप चौथी बार जेल गये। अिस बार जबलपुर जेलमें सेठ गोविन्ददास, व्यौहार राजेन्द्रसिंह, लक्ष्मणसिंह चौहान आदि देशभक्त साहित्यकारोंके सम्पर्कमें आये। श्री पन्धेगुरुजी जेलमें रहे अथवा जेलके बाहर, कला सम्बन्धी अुनका अध्ययन और मनन सदैव चलता रहा। 'अेक भारतीय आत्मा' श्री पंडित माखनलालजी चतुर्वेदीके कलाविषयक विचारोंके जाननेका शुभ अवसर खामगांवके विद्यालयमें ही आपको मिला, जहां वे अतिथि होकर अनेक दिन रहे। अमरावती निवासी डाक्टर पटवर्धनजीकी सक्रिय सहानुभूति यदि आपको न मिली होती, तो आपकी कलाकृतियां समाजके सामने न आयी होतीं। डाक्टर साहबके द्वारा ही नेताजी सुभाषचन्द्र बोसका आशीर्वाद आपकी कला-साधनाको प्राप्त हुआ था।

श्री पन्धे गुरुजीकी जीवन-प्रवृत्ति राजनीतिकी ओर नहीं है। फिर भी, जब तक देश पराधीन था, राजनैतिक संग्राम जीवन कार्यका अेक अंग बन जाना अनिवार्य था। प्राणवान कला-अुपासक अिन संघर्षोंसे भागकर किसी अेकान्त कोनेमें बैठकर अपनी कला-निर्मिति कैसे कर सकता था?

किसीने ठीकही कहा है कि "कलाकी प्रेरणाका श्रोत जीवनके संघर्षमें है। संघर्षमें सत्, शिव और सुन्दरको ढूंढकर अुसे शब्द, स्वरनाद, वर्ण-छटा आकार रूपमें प्रकट करना कलाकारका काम है। वह दुनियाके प्रमुख शान्ति दूतोंमेंसे अेक है। "Composer, Sculptor, painter poet, prothet—these are the peace makers of the World' अिनके हाथोंसे जन्म पायी हुअी कला, अिनके हृदयमें भरी हुअी अपार शान्ति प्रेमकी धारा बहाती है, जो द्वेष, मत्सर, क्रूरतासे जली-भुंजी मानवताकी भूमिका सिंचनकर अुसे हरी-भरी करती है।

मनुष्यके जीवनमें संस्कारोंका अेक महत्वपूर्ण स्थान है। श्री पन्धे गुरुजीको अपने प्रारम्भिक जीवनमें जो सात्विक तथा धार्मिक वातावरण मिला, अुसने आपके जीवनपर गहरी छाप डाली। कला विषयक आपके विचार अुसी सात्विक प्रभावकी छायामें विकसित हुअे हैं।

कलाके सम्बन्धमें आपने जो अपने स्पष्ट विचार अपने अेक पत्रमें व्यक्त किये हैं, अुनको यहां अुद्धृत करनेका लोभ सम्वरण नहीं कर पा रहा हूँ।

"कलाको मैं सम्प्रदायकी चीज नहीं मानता। वह निर्मल शुद्ध जलके समान पवित्र है। धर्म, पंथ, सम्प्रदायकी अनुयायी कला अपना सत् स्वरूप प्रकट नहीं कर सकती। कला और कलाकारके लिअे देश, धर्मकी सीमा अुचित नहीं।

कला राष्ट्रकी अक अमूल्य निधि है। समाज और राष्ट्रका हृदय कलाद्वारा पहचाना जाता है। असलिअ कलाकारको अिस अमल्य राष्ट्रनिधिको भ्रष्ट होने नहीं देना चाहिअ। व्यक्ति समाज राष्ट्र-अिनका सम्बन्ध कलाद्वारा जोडा जाता है। अिसलिअ कला और राष्ट्र अभिन्न है।

अपनी कला-दृष्टिके सम्बन्धमें आगे आपने लिखा है—

सौभाग्यवश मेरी जीवन ध्येय दृष्टि सात्विक *आत्म तथा कला-साधना देनेवाले महान पुरुषोंके प्रत्यक्ष* सान्निध्यमें प्राप्त हुओ है। पूज्य पिताजीकी दार्शनिक *प्रवृत्तिका प्रभाव भी स्पष्ट ही है।*

अक बार अिन पंक्तियोंका लेखक तिलक राष्ट्रीय विद्यालयमें ही बैठा श्री गुरुजीसे कला चर्चा कर रहा था। कला सम्बन्धी प्रारम्भिक प्रेरणाओंकी बात करते हुअ अन्होंने बताया कि— मेरी माताजी कला शब्दको न जानती होंगी किन्तु वे कलाकी आत्माको पहचानती थीं। अक दिन मैं नहाकर घर पहुचा। भूख लग रही थी। असलिअ जल्दीमें अपनी गीली धोती आगनके तारपर योंही बेढग तौरसे फेला दी। रसोअीघरमें बैठी माँने यह देख लिया। वे वहांसे अठकर आयीं और बड़े प्रेमसे मुझे बतलाया कि धोती अिस प्रकार तिरछी बेढगी नहीं डाली जाती है। फिर अन्होंने धोतीकी किनारीसे किनारीको मिलाकर बराबर किया और मुझसे पूछा —अब अच्छी लगती है या पहले अच्छी लगती थी?

कलाकी शिक्षा मेरी असी दिन प्रारम्भ हुओ थी।

श्री पध गुरुजी बहुमुखी प्रतिभाके कलाकार हैं। शाविड मूर्ति तथा शिल्पकलाकी ओर आपकी विशेष अभिरुचि है। चित्रकलाके प्रति भी आप रुचि रखते हैं विशेषरूपसे आप अजन्ता पद्धतिकी कलाके अपासक हैं। चित्रकलाके जितने प्रकार हैं सभीमें आपने कौशल प्राप्त किया है। संगीत (गीत वाद्य नृत्य) अक प्रकारसे आपके जीवनका मानसिक सात्विक दैनिक आहार बन गया है। साहित्यके भी आप प्रेमी हैं। मराठी साहित्यके आप ज्ञाता हैं ही राष्ट्रभाषा हिन्दीका अध्ययन भी आपने बड़ी श्रद्धासे किया है। राष्ट्रभाषाके प्रचार कार्यमें आप अपना सक्रिय सहयोग दिया करते हैं।

तिलक राष्ट्रीय विद्यालयको कलाधाम की संज्ञा दी जा चुकी है किन्तु वास्तवमें यह अक विद्यालय है और असा विद्यालय है जहां सच्चरित्र राष्ट्रीय वृत्तिके *भावी नागरिक तैयार किये जाते हैं श्री पधगुरुजी* ही अिस विद्यालयके प्रधान आचार्य भी हैं अन्हींकी देख रेखमें बालकोंका शिक्षण होता है।

कॉंग्रेसके राष्ट्रीय शिक्षा सम्बन्धी प्रस्तावके आधारपर तिलक राष्ट्रीय विद्यालय खामगावकी स्थापना १९२१ में हुओ थी राष्ट्रीय शिक्षाका आदर्श रखते हुअ गत ३० वर्षमें यह संस्था राष्ट्र निर्माणका स्तुत्य कार्य करती आ रही है। विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनोंमें अिस संस्थाके विद्यार्थियों और शिक्षकोंने भाग लिया था। जात पाँत-पंथ रहित प्रखर राष्ट्रीयता तथा प्रजातन्त्रकी शिक्षा देकर स्वावलम्बी नीतिमान राष्ट्र सेवक नागरिक निर्माण करना अिस संस्थाका पावन अद्देश्य है।

विद्यालयको देशके सभी नेताओंने भेंट देकर गौरव तथा आशीर्वाद दिया है अिस संस्थासे पूज्य महात्मा गांधीका निकट सम्बन्ध रहा है विद्यालयको प्रान्तीय सरकारका भी सक्रिय सहयोग प्राप्त है।

अिसी विद्यालयके प्रागणमें श्री पध गुरुजीका वह भव्य कलाभवन स्थित है जहाँ अक मौन साधकके रूपमें कलाके विविध रूपोंकी अपासना वे गत ३० वर्षसे कर रहे हैं। अिस कला भवनकी स्थापत्य कला बडी ही आकर्षक और प्रभाव डालनेवाली है। स्थापत्य सम्बन्धी भारतीय विभिन्न शैलियोंका बडा ही मनमोहक समन्वय अिस भवनमें प्रस्तुत किया गया है। कला भवनके अूपरी भागमें जो अक विशाल हाल है संगीत नृत्य वाद्य नाट्यके लिअ अपयोगमें आता है और असके नीचेके भागमें जो अक प्रकारसे गर्भ गृहसा है चित्रकला तथा मूर्तिकलाकी प्राण प्रतिष्ठा होती है।

असॉमिया रामायण

: प्रो० रंजन, अेम. अे. :

'राष्ट्रभारती'के माध्यमसे दक्षिणका श्रेष्ठ साहित्य हिन्दी पाठकोंके सम्मुख नियमित रूपसे आने लगा है। प्रत्येक अंकमें तमिल अथवा तेलुगुके ललित-साहित्यको पढ़नेका सौभाग्य पाठकोंको मिलता रहता है। और अिस प्रकार दक्षिणी-साहित्य (तमिल, तेलुगु, मल्यालम और कन्नड)के अनेक अमूल्य पत्र हिन्दीके माध्यमसे देशके अुत्तरी कोनेतक पहुँच रहे हैं। प्रान्तीय-साहित्यकी अुच्चतम रचनाओंको अिस प्रकार विभिन्न माध्यमोंसे और विशेषकर राष्ट्रभाषाके माध्यमसे सम्पूर्ण देशकी सम्पत्ति बना देना, आजकी अेक बडी आवश्यकता है। देशकी कअी अेक अन्य भाषाअें, बंगला, गुजराती और अुडिया भी हिन्दीके झरोखोंसे जनताके सामने आयी हैं, परन्तु असमिया (असॉमिया) साहित्यके विषयमें हिन्दीमें बहुत कम अथवा कुछ भी नहीं लिखा गया। जिससे पता चलता है कि असॉमिया भाषामें देशको देने लायक कुछ है ही नहीं। हमारे असमिया भाअियोंकी यह अुदासीनता स्थानक साहित्यके विकासमें बडी बाधक सिद्ध हुअी है। अिस बार अपने असम-भ्रमणके समय मैंने असॉमियाके कअी अेक पंडितोंसे अिस विषयमें चर्चा की। पर अुनकी अुदासीन वृत्तिको देखकर बड़ा क्षोभ हुआ। अन्य भाषाओंके समानही असमियामें अनेक अमूल्य ग्रन्थ भरे पडे हैं, पर हिन्दीवाले अुनके विषयमें कुछ भी नहीं जानते। अैसे लोक-प्रचलित ग्रन्थोंमें सर्व प्रथम स्थान सन्त शंकरदेव रचित 'कीर्तन' को प्राप्त है। असम प्रान्तमें 'कीर्तन'का वही स्थान है जो अुत्तर प्रदेशमें तुलसी-रामायणको और महाराष्ट्रमें सन्त तुकारामके अभंगको। यह पुस्तक असम प्रान्तके प्रत्येक हिन्दू-घरकी सज्जित है।

सन्त शंकरदेव द्वारा रचित 'कीर्तन' के बाद दूसरा लोकप्रिय ग्रंथ माधव कन्दली द्वारा विरचित रामायण है। बहुतसे अुत्तर भारतीय हिन्दी भाषियोंकी यह धारणा है कि हिन्दीकी तुलसीकृत रामायणही प्रान्तीय भाषाओंकी सबसे प्राचीन रामायण है, जिससे गलत धारणा दूसरी नहीं हो सकती। वाल्मीकि रामायणके बाद प्रान्तीय भाषामें सर्वप्रथम तमिलमें रामायणकी रचना हुअी थी। अिसके पश्चात असम प्रान्तमें आजसे लगभग १२०० वर्ष पूर्व असॉमियामें माधव कन्दलीने वाल्मीकि रामायणके आधारपर असमिया रामायणकी रचना की।

भारतीय साहित्यकी दो प्रधान मणियाँ महाभारत और रामायण किसी-न-किसी रूपमें आज प्रत्येक प्रान्तीय साहित्यमें अुपलब्ध हैं। अनेक कारणोंसे अपनी बौद्धिक प्रतिष्ठाके बावजूद महाभारत अुतना लोक-प्रिय नहीं हो सका जितनी कि रामायण। यों रामायणकी कथा भारतीय प्रान्तीय साहित्यमें वाल्मीकि द्वारा रचित *संस्कृत रामायणसे ही आयी*, परन्तु अपनी भावना, परंपरा और प्रान्तके अनुरूप प्रान्तीय रामायणकी कथा भी मूलसे बहुत भिन्न हो गयी है। असमी *लोक-जीवनमें* राम, कृष्ण वैसे ही गुथे पडे हैं जैसे अुत्तर प्रदेशमें। थोडा अन्तर अवश्य है और वह यह कि वर्तमान भक्ति-पद्धतिके अुन्नायक हैं सन्त शंकरदेव और अुनके अिष्ट देव हैं कृष्ण। अिसलिअे असममें आज भक्तिके प्रतीक प्रधानतया कृष्ण माने जाते हैं। परन्तु अपने कीर्तनमें स्वयं सन्त शंकरदेवने कृष्णको रामका ही रूप बताकर रामकृष्णके अेक होनेकी घोषणा कर कृष्णके साथ रामके प्रति भी भक्तिकी प्रतिष्ठा कर दी है।

भारतीय संस्कृति और परंपराका प्रतिनिधित्व करनेवाली कअी अेक रामायणें आज असमिया भाषामें अुपलब्ध हैं। रामायणोंके जितने प्रकार शायद किसी प्रान्तमें देखनेको नहीं मिलेंगे। ३-४ पद्य-रामायणोंके अलावा जनताके विचार अेक रामायण केवल गद्यमें है। नाटकके रूपमें भी अेक रामायणकी रचना असमिया विद्वानोंने की है। जैसा कि अूपर अुल्लेख किया गया है, आर्य भाषाओंमें असमिया-रामायणके पूर्वकी रचना

कोअी भी नहीं। तुलसीकृत रामायणसे असके निर्माणका काल १५० वर्ष पूर्व है। असमियाकी अिस 'रामायनी', (रामायण) के रचयिता श्री माधव कन्दली थे, जिन्होंने असमिया छन्दमें वाल्मीकि रामायणका रूपान्तर सा किया है। तुलसीदासने अिसके १५० वर्ष बाद अपनी रामायण जनताको भेंट की। श्री माधव कन्दलीके बाद असममें रामायण लिखनेकी अेक बाढ़-सी आती है। विभिन्न कवियोंने कवितामें, गद्यमें, गीतोंमें, कीर्तनमें, रामायणकी रचना की। परिणामस्वरूप आज असमियामें रामायणके पाँच रूप प्राप्त हैं। और प्रत्येककी शैली, कथा और छन्द अलग-अलग हैं। परन्तु मूल कथाका स्रोत सबने वाल्मीकिको ही माना है।

१४ वीं शताब्दीमें जब स्वामी रामानन्दने राम-भक्तिका प्रचार देशमें शुरू किया तबसे असममें रामायण लेखन द्वारा राम-भक्तिकी प्रतिष्ठाकी लहर फैली। रामानन्दके शिष्योंने अुत्तरी भारत और मध्यभारतमें रामभक्तिका प्रचार किया। यही लहर देशमें घूमनेवाले आसामी धार्मिक व्यक्तियोंके द्वारा असममें पहुँची। और अिस प्रकार असममें रामायणके प्रथम रचयिता कविवर माधव कन्दलीका काल १४ वीं शताब्दीका अन्तिम भाग माना जा सकता है। अपने समकालीन राजा महा-माणिक्यचन्दकी प्रार्थनापर अुन्होंने रामायणकी रचना शुरू की। सत शंकरदेवने अपने अुत्तर काण्डमें अुन्हें अपना पूर्वगामी और दोषशून्य कवि माना है। श्री बारपने द्वारा लिखित 'कथा गुरु चरित' में अेक स्थानपर अैसा अुल्लेख है जिससे पता चलता है कि श्री राघवाचार्य सत शंकरदेवके शिक्षक श्री महेन्द्र कन्दलीके समकालीन थे और महेन्द्रकन्दली श्री माधवकन्दलीके शिष्य थे।

जिस समय श्री माधवने असमियामें रामायण लिखना आरम्भ किया, अुस समय देशकी किसी दूसरी भाषामें कोअी रचना अुपलब्ध नहीं थी जिसके आधारपर वे असमिया भाषामें अपनी रचना करते। अिसलिअे अुन्होंने सीधे संस्कृतके 'आदि काव्य'में व्यवहृत छन्दको ही अपनी रचनाका आधार माना। अिस विषय में स्वयं श्री कन्दलीका कथन है कि महाकवि वाल्मीकिने अनेक छन्दोंमें रचना की। मैंने बड़ी सावधानीसे अुन्हें पढ़ा और अपने ढंगसे जो कुछ समझ सका, अुसे संक्षिप्त रूपमें अिस रामायणमें लिया है। अैसा कौन है जो अुनके समस्त रसोंको समझ सके? और अिसलिअे 'रामायनी' में कवि माधव कन्दली आवश्यकतानुसार कुछ जोड़ देते हैं, कभी कुछ कम कर देते हैं। कवि अेक स्थानपर कहता है कि आदि काव्यके शब्द अीश्वरके वाक्य नहीं वरन् वह भी अेक मानव-कृति ही है, अतः यदि मैं अपनी रचनामें कोअी हेर-फेर करता हूँ तो लोगोंको नाराज नहीं होना चाहिये।

माधव कन्दलीकी रामायणमें केवल ५ काण्ड थे—अयोध्यासे लेकर लंकाकाण्ड तक। आदि काण्ड और *अुत्तर काण्डके बारेमें कहा जाता है कि वे शायद* खो गये हैं। और बहुत बादमें महादेव और सत शंकर-देवने आदि और अुत्तर काण्डोंको माधव रचित रामायणमें जोड़ा है। बहुतसे लोगोंका विचार है कि माधव कन्दलीने जान-बूझकर ये दो काण्ड छोड़ दिये, लेकिन अुनकी रचनामें कअी स्थानोंपर सात काण्डोंका अुल्लेख मिलता है, जिससे पता चलता है कि शायद अुन्होंने सातों काण्डोंकी रचना की है। असमिया भाषामें अुपलब्ध अन्य रामायणोंमें भी अिन दो काण्डोंका समावेश नहीं किया गया।

माधव कन्दली द्वारा लिखित रामायणकी विशे-षताओंको संक्षेपमें अिस प्रकार रखा जा सकता है—

(१) प्रकृतिके वर्णनमें अुन्होंने स्थानीय दृश्योंको, व्यक्तियोंके कार्योंका विशेष वर्णन किया है। अुनकी भाषामें वेग है और अुसमें अुचित स्थानीय *मुहावरों, कहावतों, रूपकों और अलंकारोंका वर्णन* बड़े सम्यक ढंगसे किया गया है। कुछ अलंकार अुन्होंने मूलसे लिये हैं, कुछ स्थानीय भाषासे और कुछ अपने आप बनाये हैं। दृश्योंका वर्णन बड़ा सजीव और नाटकीय है। भिन्न-भिन्न वर्णनोंके अनुसार अुन्होंने अलग-अलग छन्दोंको चुना है। रूपक और अुपमाके विषयमें वे कभी कभी मूलसे दूर चले जाते हैं। और अैसे अुल्लेखोंमें अुनके युगका प्रभाव स्पष्ट झलकता है। अुदाहरणके लिअे वे राम और अुनके राजमहलकी तुलना

कैलाशसे करते हैं। माधव कन्दलीके समयमें असममें शैव विचार धाराकी प्रधानता थी, जिसीलिअ वैकुंठके स्थानपर अुन्होंने कैलाशको चुना। अिसके अलावा कओ अैसे स्थान हैं जहाँ अुनका वर्णन 'आदिकाव्य' से भिन्न है। चित्रकूटका वर्णन, सुग्रीवके आदेशपर सीताकी खोज, मधुवनमें हनुमानकी रावणसे मुठभेड और लंका-दहनके वर्णन अैसे ही हैं।

कुछ स्थलोंके वर्णन बडे मार्मिक और सुन्दर हैं - कवि भरतके चित्रकूट जाते समय निषादके मनकी दशाको बडे स्वभाविक ढंगसे प्रस्तुत करता है—

" जितो धज दण्ड पताका देखिया,
जानो लोहो सरपत,
अनहतु नहि रामाक मारिते
असिला भाओ भरत।'
' कैकेयी मातार हते राघवर
करिला राज्य नैरास।"

अर्थात्—जितने अस्त्रशस्त्रोंसे सज्जित सेना और ध्वज-दण्डोंको देखकर निषाद सोचता है कि निश्चय ही रामको मारनेके लिअे भरतने अितनी सेना सजायी है। कैकेयी माता रामको मारकर निष्कंटक राज्य करना चाहती है।

अिसी प्रकार परशुराम-रामसंवाद तुलसीकी रामायणसे सर्वथा भिन्न है। यहाँ परशुरामके आपको पीटने और लक्ष्मणके आपका पनपनेका कोअी अवसर ही नहीं आता।

" क्षत्रियधर्म अनुसरि आछा महाभाग,
आमाक तोमार केन अैन महाराग।
वयमासे अुचित धर्म हौवम तोमार,
किसक करिला तुमि ताक परिहार।'
" धर्म अैरी अधर्म करय जितो नर,
ताक दण्ड करिबे लागय बरबिदर।

अर्थात्—राम कहते हैं कि हे महाभाग क्षत्रियधर्मका अनुसरण करना आपका धर्म है। अैसी अवस्थामें मेरे और आपके बीचमें झगडेके लिअे कोअी स्थान ही नहीं। आपके धर्मको त्यागा कैसा है। आप अुन कैसे छोड रहे हैं? अपने धर्मको छोडकर जो व्यक्ति अधर्म करता है अुसे दण्ड देना क्षत्रियका धर्म है।

रामके वन चले जानेपर दशरथका विलाप बडा करुण हुआ है—

' मरन कालत रामने देखिलो तोक।
यम कवलको गेले नेराजि बोहो शोक।
शुना वाक्य कौशल्या नकराँ हृदिखेद।
तोमार आमार अैवे भैल परिच्छेद।
चौधय बरषि रामे बनवास तरि
पुनरपि असिवन्त अयोध्या नगरी।
स्वर्ग हन्ते येहेन आसिव सुरराजे।
लोके वेढ़िवेक जे देवता समाजे।
ताक देखिवाक कपालत भाग्य नाजि।
पुत्रशोके हेरा मोर प्राण फुटि याजि।"

अर्थात्—मरते समय रामको देखनेकी अिच्छा लेकर मैं जाअूँगा। मेरी अिस अिच्छाको यम-लोकमें चले जानेके कारण शोकमें बदलना पडेगा। अैसा सुनकर पत्नी कौशल्यासे अुनने शोक न करनेकी प्रार्थना की और कहा कि तुम्हारी और हमारी जीवन-यात्रा अब पूरी हो चुकी। १४ वर्षके पश्चात् राम जब वनसे लौटकर आयें तो अयोध्याके नरनारी अुन्हें अपने बीच पुन देखकर स्वर्गसे आते समय जैसे सुरराजको देवता घेर लेते हैं वैसे अुन्हें घेर लेंगे। अुस अवस्थामें रामको देख सकनेका भाग्य अपने नहीं है अैसा दशरथ कहते हैं और कहते हैं कि पुत्र-शोकसे मेरे प्राण शेष नहीं रहेंगे।

(२) गीतरामायण

नीलाचलके निवासी श्री दुर्गावरने संक्षिप्त रूपमें गीत रामायणकी रचना की। यह कवि कूच बिहारके विश्वसिंहके राज्यकालमें (१५१५-४०) में हुअे थे। अिस गीत रामायणमें ७० रागोंका समावेश है। कुछ छन्दोंमें माधव कन्दलीका प्रभाव झलकता है।

परन्तु दृश्योंके चयन और तथ्योंको जन-मनोविज्ञानके अनुकूल ढालनेमें अिनकी अपनी मौलिकता है। डा बी कान्तदने अपने प्राचीन असमिया साहित्यमें अिस रचनाको वाल्मीकिकी रामायणका जन-संस्करण कहा है। अिस रचनाके भी आदि और अुत्तर पर्व नहीं हैं। यह रचना सर्वप्रथम स्वर्गीय विश्वचन्द्र द्वारा ३०

वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआी थी और आज यह अप्राप्य है। अिस रचनामें स्थल स्थलपर कविकी मौलिकता झलकती है —

(१) जंगलमें राम सीता अपना समय पासर खेलकर व्यतीत करते हैं। (२) अिसी समय सीताजी स्वर्ण हिरन देखती हैं और अुसे जीवित पकडकर लानेके लिअे रामसे आग्रह करती हैं ताकि वे अुसे अपने पास पाल सकें। (३) चित्रकूटमें राम अुदास रहते हैं लेकिन सीताने जंगलमें अयोध्याका निर्माण कर दिया है। राम, सीता और लक्ष्मण वसंतोत्सवमें डूब जाते हैं और होली खेलते हैं। ठीक अिसी समय रावण आकर सीताको ले जाता है।

गीत रामायण आरंभिक असमिया साहित्यका अेक नमूना है। अिसे केवलागीतकी श्रेणीमें रखा जा सकता है।

अनन्त कन्दलीकी 'रामायण'

दुर्गावरके पश्चात् अनन्त कन्दलीने रामायणकी रचना की। ये संत शंकरदेवके शिष्य और समकालीन थे। अनन्त कन्दलीने माधव-कन्दलीकी रचनाको ही हाथमें लिया और अधिकांशमें अुनकी रचनासे ही वर्णन और छन्दोंको अुधार लिया है। कहीं-कहीं अुन्हें संक्षिप्त कर दिया है कहीं-कहीं विस्तार दे दिया है। अुन्होंने अपने काव्यमें भगवती-तत्त्वका विशेष रूपसे अुल्लेख किया है, अुन्होंने स्पष्ट कहा है —

> "माधव-कन्दली विरचिला रामायण
> ताक सुनि आमार कौतिक करे मन
> रामार सामान्य संत कथा यथावत्
> भाजन्य गुनजत न भैला अेकत।

अर्थात्— माधव कन्दलीने रामायणकी रचना की। अुसे सुनकर मेरा मन भी कुछ लिखनेको अुत्साहित होता है। रामके जीवनके सभी तत्वोंपर कौन प्रकाश डाल सकता है? परन्तु अभी तक अुनके भक्ति पक्षपर विस्तारसे नहीं लिखा गया अिसलिअे भक्ति पक्षके वर्णनके लिये मैं प्रयत्न करता हूँ।

अनन्त कन्दली और अुनके गुरु शंकरदेवके लिअे रामकृष्णमें भिन्न और कुछ नहीं थे। अिस प्रकार अुसमें भक्ति पक्षका समावेश कर अिसे समयके अनुरूप अेक धार्मिक ग्रंथका रूप दे दिया है। अिसमें कअी स्थानोंपर अुन्होंने अपनी विशेषता प्रदर्शित की है —

> "रामायण कथा पदे निबन्धिलो
> भगवत चरचा, करो
> हरि कथा बिने दुघोर कलित
> तरि तेके हो स्वारो।"

मैंने रामायणके तत्वोंका वर्णन छन्दोंमें किया है और अैसा करनेमें मैंने भागवतका अुल्लेख किया है क्योंकि कलि-कालमें बिना हरि-नामके कोअी मुक्ति नहीं पा सकता।

अनन्त कन्दली तुलसीके समान रामको अीश्वर मानते हैं। वन जाते समय वे सीतासे कहते हैं —

> "भरत हैबेक राजा
> पालिबेक सबे प्रजा
> तातो मोरकिछो चिन्ता नाम
> यटेकेसे मार सोक तजिलो माकत लोक
> सुभरन्टे प्राण फुटि जाय
> यहेन अयोध्यापुरी अर यत्ता नर-नारी
> सब मोर परम भक्त।"

अर्थात्—भरत राजा होकर प्रजाकी रक्षा करेंगे। मुझे अिसकी चिन्ता नहीं। मेरे दुःखका कारण यह है कि मैंने अपने भवनोंको छोड़ दिया यह विचार मेरे हृदयको विदीर्ण कर देता है। अयोध्याके समस्त नर-नारी मेरे भक्त हैं।

माधव कन्दलीसे भिन्न अनन्तकन्दलीने राम महलकी अुपमा वैकुंठसे दी है। अिस रामायणमें कहीं-कहीं व्यक्तिगत अुल्लेख भी मिलते हैं। कविने अपने जन्म और ग्रामके विषयमें भी कुछ छन्द लिखे हैं।

अुपरोक्त तीन रामायणोंका असमिया-साहित्यमें विशेष महत्व है, परन्तु राम-चरित कहनेकी प्यास आसाममें बड़े जोरसे प्रकट हुआी थी। अिसलिअे अिन तीन रामायणोंके अतिरिक्त भी कुछ अन्य रचनाअें अिस दिशामें हुआीं जिनमें खास-खासके नाम अिस प्रकार हैं —

(४) 'श्रीरामकीर्तन' अिसके रचयिता श्री अनंत ठाकुर थे। अिनका जन्म शंकरदेवके बाद चौथी पीढ़ीमें हुआ था। भाषा, पद्धति आदिकी दृष्टिसे यह रामायण अुपरोक्त रामायणोंसे भिन्न है। 'रामकीर्तन' का रचना-काल १५७४ शाक संवत माना जाता है।

(५) कथा-रामायण— यह रामायण शुद्ध गद्यमें लिखी गयी है। अिसका रचनाकाल १६ वीं शताब्दीका मध्य माना जाता है। श्री रघुनाथ महन्त अिसके लेखक थे। अिसी लेखकने अेक दूसरी रामायण अवधूत-रामायण' भी, लिखी है। अिसकी भाषा बिलकुल जनताकी बोली है।

(६) नाट्य रामायण— लोक अिच्छा और जन-प्रचारकी दृष्टिसे संत शंकरदेवने सर्वप्रथम रामायणको नाटकका रूप दिया। 'सीतास्वयंवर' और 'रामविजय' नामसे अुन्होंने रामायणके अनेक प्रसंगोंको लेकर नाटक लिखे हैं।

बंगलाका पहला अुपन्यास

: श्री मन्मथनाथ गुप्त :

बंगालमें अंग्रेजी शिक्षाके प्रवर्तनके साथही साथ अुपन्यास साहित्यका आविर्भाव हुआ। यों तो कहनेके लिअे यह कहा जा सकता है कि भारतमें भी पहले अुपन्यास होते थे, पर सच्ची बात यह है कि न केवल भारतमें, बल्कि सभी देशोंमें पूंजीवाद और छापाखानेके साथ-साथ आधुनिक अर्थमें अुपन्यासोंका आरम्भ हुआ।

यों तो रामायण, महाभारतमें भी अुपन्यासका मजा आता है, पर वे पद्यमें हैं। यदि हम संस्कृत गद्य साहित्यकी ओर दृष्टिपात करें, तो कथा सरित्सागर, वेताल पचविंशति, दशकुमार चरित, कादम्बरी तथा बौद्ध जातकोंमें अुपन्यासके कअी अुपादान मौजूद हैं। अवश्य अिन ग्रन्थोंमें वर्णनके आडम्बरके नीचे अक्सर कहानी दबकर रह गयी है। बौद्ध जातकोंमें फिर भी कुछ गनीमत है, क्योंकि अुनमें राजाओंसे अुतरकर साहित्यकी वस्तुको बहुत कुछ मध्यमवर्गमें लाया गया है और वर्गोंका भेद अुनका स्पष्ट नहीं है। फिर भी अिन सबकी कहानियोंमें अूलजलूल बातोंके साथ-साथ वास्तविक घटनाअें अिस प्रकार मिलायी गयी हैं कि आधुनिक पाठक अुसे सहन नहीं कर सकता। अनैसर्गिक अप्राकृतिक या अतिप्राकृतिक बातोंकी भरमार है।

पंचतंत्र अिनसे बिल्कुल भिन्न प्रकारका साहित्य है। यदि कहा जाअे कि पंचतंत्र सारे विश्व-साहित्यमें अनोखा है, तो कोअी अनुचित न होगी। केवल औसापकी कहानियाँ अुसके कुछ पास फटकती हैं, यद्यपि यह भी अेक मत है कि औसापकी कहानियाँ पंचतंत्रसेही अुत्पन्न हैं। पशुपक्षियोंकी बातचीतके जरियेसे जीवन सम्बन्धी मोटी-मोटी बातें बता देनेकी ओरही लेखकका ध्यान है, अुसमें चरित्र चित्रण या नाटकीय गुण-अुत्पादनका कोअी प्रयास नहीं। कहानी तो महज अेक बहाना है, लेखकका अुद्देश्य नीतिकी शिक्षा देना है। अवश्य विष्णु शर्माने अिससे अधिक कुछ दावा भी नहीं किया। अुन्होंने तो साफ कह दिया है कि कथाके मिससे बालकोंके लिअे नीतिशिक्षादानही अुनका अुद्देश्य है। बाल साहित्यके रूपमें पंचतंत्र हमेशा आदर प्राप्त करेगा, पर अुपन्यास-साहित्यसे जो रस मिलता है, अुसमें अुसकी आशा करना सर्वथा व्यर्थ है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, हमारे प्राचीन साहित्यमें जातक साहित्यही अुपन्यासके सबसे नजदीक है। अुस युगकी बहुत-सी घटनाओंका जिससे परिचय प्राप्त होता है। अुसमें अतिरंजन और कपोल कल्पनाकी मात्रा अपेक्षाकृत कम है।

जब बंगलाका निजी अस्तित्व कायम हो गया, तो अुसमें भी बहुत कुछ संस्कृतकाही सिलसिला चला, पर बंगलामें अुस प्रकार शब्दाडम्बरपूर्ण समासबहुल रचनाकी गुंजाअिश नहीं थी। अिसके अलावा बंगलाकी रचनाअें पंडितोंके लिअे न होकर साधारण लोगोंके लिअे थीं, अतअेव रचना कुछ सरल अवश्य हो गयी, फिर भी ढाँचा तो वही रहा और अुपाख्यानोंका रुख भी धार्मिकही रहा।

महाप्रभु चैतन्यपर जो पुस्तकें लिखी गयीं, अुनमें रामकृष्णकी जगह चैतन्यको बैठाया गया, फिर भी बातें वही रहीं। अिस सम्बन्धमें बल्कि कलकत्ता विश्वविद्यालयके द्वारा संग्रहीत मैमनसिंहके गीत आधुनिक अुपन्यासके अधिक निकट हैं। अिन गीतोंका रचनाकाल सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी माना गया है। अिन गीतोंके आविष्कारसे बंगला-साहित्यकी अेक लुप्त कड़ीका पता लगा है। कृत्तिवास, काशीराम, मुकुन्दराम और भारतचन्द्रमें जो खामी है, वह अिनके आविष्कारसे बहुत कुछ पाटी जा चुकी है। अिन गीतोंमें छोटे-छोटे अुपाख्यान भी आते हैं। अिनमें अुस समयके समाजके बहुत सजीव चित्र मिलते हैं। अिन गीतोंके सम्बन्धमें सबसे बड़ी बात यह है कि अिनमें परम्परागत वर्णनशैलीको

वस्तुपूर्वक हटाकर जो चीज जैसी है अुसे अुसी रूपमें देखनेकी चेष्टा है। प्रेमिक प्रेमिकाओंकी बातचीत या व्यवहारमें कृत्रिमता लानेकी चेष्टा न कर अुन्हें अधिकसे अधिक स्वाभाविक बनानेकी चेष्टा की गयी है। यदि बंगला साहित्यमें अंग्रेजीसे स्वतन्त्र कोओ अैसा साहित्य है जो आधुनिक अुपन्यास साहित्यके बहुत करीब है तो वह ममनसिंहके गीत हैं।

अिनके अतिरिक्त बंगला साहित्यमें अरबी फारसी सूत्रसे आये हुअे हातिमताअीकी कहानी लैला मजनूं चहारदरवेश गुल बकावली आदि कहानियां भी मौजूद थीं। अिन कहानियोंका प्रचार हिन्दू मुसलमान सभी घरोंमें था।

बंगालमें समाचारपत्रोंका आरम्भ हुआ अुसीके साथ साथ अुपन्यास साहित्यका भी सूत्रपात हुआ। १८२१ में समाचार दर्पणमें बाबू नामसे अेक रेखा चित्र छपा। दो अंकोंमें यानी २४ फरवरी और ९ जूनके अंकोंमें यह रेखा चित्र सम्पूर्ण हुआ। अिसमें अुस युगके अेक धनीपुत्र तिलकचन्द्रका चित्रण था। यह धनीपुत्र मुसाहबोंसे घिरे रहते हैं अुन्हें न तो कोओ शिक्षा मिली और न अुनमें कोओ चरित्र बल है। तिलकचन्द्र अपने अंतरकी शून्यताको बाहरी आडम्बरसे ढकनेकी चेष्टा करते रहते हैं। अुनकी अेक चिन्ता यह भी है कि मुसाहबोंमें अुनकी अिज्जत बनी रहे। नतीजा यह है कि वे शुरूसे आखिरतक हास्यास्पद बने रहते हैं। यह रेखा चित्र पाठकोंके मनोरंजन और साथ ही नसीहतके लिअे लिखा गया था।

मालूम होता है बाबू रेखाचित्र बहुत प्रसिद्ध हुआ अिसलिअे १८२३ में प्रमथनाथ शर्माने नवबाबू विलास नामसे अेक रचना प्रकाशित की जिसके सम्बन्धमें यह बताया जाता है कि यह बंगलाका पहला अुपन्यास है। प्रमथनाथ शर्माका असली नाम भवानी चरण वन्द्योपाध्याय था। अैसा भी अनुमान है कि शायद बाबू के भी यही लेखक थे। वे समाचारचन्द्रिका और सम्वाद कौमुदी नामके दो पत्रोंके सम्पादक थे और हिन्दू समाजके स्तम्भ माने जाते थे। नवबाबू विलास को बाबू का ही अेक परिवर्द्धित संस्करण कहा जा सकता है। अिसमें भी अुन्हीं बातोंका चित्रण था जिनका चित्रण बाबू में था। अिसका अुद्देश्य भी समाजसुधारमूलक था।

अिन दोनों रचनाओंमें चित्रित बाबू अुस समयके समाजकी अेक विशेष अुपज थी। अुसकी सारी आमदनी जमींदारीसे आती थी पर पहलेके युगमें जमींदारोंपर जो थोड़ा बहुत रोब था वह अुसके शहरमें आ कर बस जानेसे मिट गया था। धन अुड़ानेके अुपाय पहलेके मुकाबलेमें अधिक थे अिसीसे बाबू चरित्र बना।

१८५७ में प्यारेचांद मित्रका अलालेर घरेर दुलाल प्रकाशित हुआ। मजेकी बात यह है कि यह भी अुसी विषयको लेकर चला। १८६२ में कालीप्रसन्न सिंहने हुतोम पेंचार नक्शा लिखा वह भी अिसी विषयपर था। मालूम होता है कि अुस युगके बुद्धिजीवी धनियोंकी अुच्छृंखलतासे बहुत परेशान थे।

अलालेर घरेर दुलाल पहलेके धनी पुत्रोंसे विशिष्ट अिस अर्थमें था कि अुसका नायक मिस्टर शेरबोनके स्कूलमें गया था अिसलिअे अुसने कुछ अंग्रेजी शब्द और टीमटाम अपनायी। अुस समयका सुन्दर चित्र अुसमें आ जाता है। चरित्र चित्रणकी दृष्टिसे वह अुपन्यास बादके अनेक अुपन्यासोंसे अच्छा है। अिसमेंसे अेक चरित्र ठग चाचा है। झूठ वादे करनेमें और चालाकीमें वह अेक अैसा चरित्र बन जाता है जिसे भुलाना असंभव है। कोओ चरित्र नाकसे बोलता है तो कोओ किसी ढंगसे वाक्योंकी रचना करता है। कोओ गवाससे पीड़ित है अिस प्रकार यह अेक सफल व्यंग्यात्मक रचना है। अिस अुपन्यासकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अिसमें वागाडम्बरपूर्ण भाषा छोड़कर बोलचालकी भाषा अपनायी गयी। अिससे भी बड़ी बात अिस अुपन्यासके बारेमें यह है कि यह बंगलाका पहला अुपन्यास है। अैतिहासिक दृष्टिसे कुछ भी कहा जाय साहित्यिक दृष्टिसे यहींसे बंगला अुपन्यासका सूत्रपात होता है। फिर तो वह अेक अनवरत धारामें चलने लगता है।

"अलालेर घरेर दुलाल" में अंग्रेजी शिक्षाकी प्रथम प्रतिक्रियाके चित्र मिलते हैं। श्री श्रीकुमार बनर्जीके अनुसार अिस पुस्तकमें १७७५ से लेकर १८२५ तकके बंगाली समाजका चित्र मिलता है। अभी तक अंग्रेजी-शिक्षा जातीय जीवनमें मज्जागत नहीं हुअी थी, अभी तक अिस बातका प्रबल संघर्ष चल रहा था कि यह रहे या वह रहे। अिस कारण ये अुखाड पछाडका वातावरण था और चूंकि अभी तक यह तय नहीं हुआ था कि कितना रहेगा और कितना जाअेगा, अिसलिअे वातावरणमें विक्षोभ और आलोडन मचा हुआ था। अुस समय यह तो निर्णीत-सा हो चुका था कि पाश्चात्य रंग-ढंग और विचारधारा बल्कि विचारशैलीकी विजय होगी, पर अभी न तो प्राचीन और अर्वाचीनका कोअी समन्वय होते दिखाअी पडा था और न दोनों अेक दूसरेपर पूरी तरहसे हावी हो सके थे।

यहांपर यह बात स्पष्ट कर दी जाअे कि जिन लोगोंने पाश्चात्य सभ्यताकी चकाचौंधमें आकर अुसकी बुरी-भली सब बातें अपना ली, स्वाभाविक रूपसे अुन लोगोंने बंगला छोडकर अंग्रेजी अपनायी, नतीजा यह कि बंगला-साहित्यमें वे अपनी कोअी निशानी नहीं छोड गये। हां, अैसे लोगोंमें माअिकेल मधुसूदन थे, जिन्होंने अीसाअी धर्म ग्रहण किया और अंग्रेजीमें काव्य रचना करनेकी ठानी, पर कुछ अैसा संयोग हुआ कि भीतर-भीतर वे बंगलासे प्रेम करते थे और अन्त तक अुन्होंने अंग्रेजीको तिलांजलि देकर बंगला अपना ली। अिसी प्रकार श्री राजनारायण बसुको बुढापेमें होश आया और अुन्होंने अपने यौवनकी आनन्द प्रभावित लीलाओंकी कहानी व्यंग्यात्मक रूपसे लिखी। पर किसीने अुपन्यासमें अुस धाराका प्रतिनिधित्व नहीं किया, जिसने पाश्चात्य सभ्यताके सामने साष्टांग दण्डवतकर आत्म-समर्पण कर दिया था। अुपन्यास-साहित्यमें यह पहलू अज्ञात ही रह गया।

फिर भी "अलालेर घरेर दुलाल" और बादके बहुतसे अुपन्यासोंमें जिस संघर्षका चित्र हमारे सामने आता है, अुससे हम अुस युगके सामाजिक मन्थनका बहुत अच्छी तरह अनुमान कर सकते हैं। यह बात कही गयी है कि "आलालेर घरेर दुलाल" के लेखक जीवनके बहुत व्यापक रूपको अपनी सत्तामें प्रस्फुटित नहीं कर पाये, पर अुन्होंने जो सामाजिक चित्र हमारे सम्मुख पेश किया है, वह बहुमूल्य है।

कन्नड़-लिपिकी अुत्पत्ति और वर्णमाला

: श्री गुरुनाथ जोशी :

भारतमें अति प्राचीन कालसे लिपिका प्रयोग चला आ रहा है। डा० बनर्जीने महासाहस करके हरप्पा और महेंजोदाड़ोका पता लगाया। वहाँ जो अवशेष मिले हैं, अुनपर जो लिपि अंकित है वह चित्र-लिपि है। अुस चित्र-लिपिसे मिलती-जुलती कोअी लिपि भारतमें अब तक अुपलब्ध नहीं हुअी। यही भारतकी सबसे प्राचीन लिपि है। अिस लिपिको कोअी अभीतक अच्छी तरहसे नहीं पढ़ सका। अिस चित्र लिपिको अगर छोड़ दें तो भारतमें सबसे प्राचीन लिपियाँ दो हैं — (१) ब्राह्मी, (२) खरोष्ठी। खरोष्ठी अरमय्य लिपि है और अिसके शिलालेख बहुत कम मिलते हैं। ब्राह्मी लिपिके लेख ही अधिक मिलते हैं। यह सुनकर सबको आश्चर्य होगा कि यह ब्राह्मी लिपि ही अुत्तर और दक्षिणकी सभी भाषाओंकी लिपियोंकी जननी है। यह बात तब स्पष्ट मालूम हो जाअेगी जब अुत्तर और दक्षिणकी लिपियोंका अध्ययन किया जाअेगा। यह भी विदित होगा कि अुत्तरकी ब्राह्मी लिपि और दक्षिणकी ब्राह्मी लिपिमें थोड़ा-सा अन्तर है।

डा० गायीने धारवाड़ आकाशवाणी केन्द्रपर १९५३ मार्चकी ५ वीं को दक्षिण भारतकी लिपियोंपर भाषण देते हुअे कहा था कि अी० पूर्व ४५ वीं सदीसे अी० सन् ८ वी सदी तक भारत भरमें ब्राह्मी लिपि ही प्रचारमें थी। अुसके अुपरांत अुसमें स्थूल रूपसे दो भाग किये गये—अुत्तरी और दक्षिणी। लिपि विशारदोंने दक्षिणकी लिपियोंको ६ या ७ भागोंमें विभक्त किया है —पश्चिम शैलीकी लिपि, मध्यप्रदेशकी लिपि, कलिंग लिपि कन्नड़ तेलुगु लिपि तमिळ और वट्टेळुत्तु लिपि। ये लिपियाँ कालक्रमसे परिवर्तित होती गयीं और विशेषताअें प्राप्त करती गयीं। कन्नड़ तेलुगु लिपिका बंबअी, कर्नाटक, हैदराबाद (दक्खिन) का दक्षिण भाग, मैसूर, मद्रासका पूर्वोत्तर भाग अिन प्रदेशोंमें अी० सन ५ वीं सदीसे प्रचारमें था। अिसके विकासमें ३ या ४ अवस्थाअें हैं —५ से ८ वीं सदी तक, ८ से ११-१२ वीं सदी तक, अुससे अुपरान्त विजयनगरके राजाओंके काल तक। ८ वी सदीसे १४-१५ वीं सदी तक कन्नड़-तेलुगु लिपिका प्रयोग कन्नड़ अेवं तेलुगु दोनों भाषाओंके लिअे किया गया है। अिसलिअे अिसका कन्नड़-तेलुगु लिपि नाम पड़ा। विजयनगर साम्राज्यके पश्चात् कन्नड़ और तेलुगुके लिअे अलग अलग लिपि बन गयी। पर आधुनिक कन्नड़ लिपिमें बिल्कुल थोड़ा-सा अंतर है। तेलुगु-कन्नड़ लिपि अेक दूसरेके निकट है।

मैसूर रियासतमें हल्मिडि नामक अेक ग्राममें अेक शिलालेख मिला है जो अबतक अुपलब्ध कन्नड़ शिला-लेखोंमें सबसे प्राचीन माना जाता है। डा० श्यामशास्त्रीके अनुसार अिस शिलालेखका समय अी० सन् २८० है, पर ल्यूअी रिसके अनुसार ४ थी सदीका अंत है और डा० थेम्स् अेच कृष्णके अनुसार अी सन् ४५० है। अिस शिलालेखकी प्रथम पन्द्रह पंक्तियोंमें गुहालिपिका अर्वा-चीन रूप दिखायी पड़ता है। अिस शिलालेखकी लिपिके बारेमें मैसूर आर्कियालाजिकल' विभागके अधिकारीने कहा है--The Writing of the inscription at least in the first fifteen lines is in a very late form of the cave alphabet which has not yet fully developed into the early Kannada of the Chyalukyan and Ganga inscriptions.

अुपरोक्त बातोंसे हम अिस परिणामपर पहुँचते हैं कि कन्नड़ लिपिकी अुत्पत्ति ब्राह्मी लिपिसे हुअी और वह अुत्पत्ति अी० सन् २८० से ६५० के बीचमें हुअी होगी। कन्नड़ लिपिका विकास आप आगेके चित्रमें देख सकते हैं।

ಅ = अ
ಇ = इ
ಈ = ई
ಎ = ए
ಓ = ओ
ಕ = क
ಚ = च
ಜ = ज
ಡ = ड
ತ = त
ನ = न
ಪ = प
ಮ = म
ಯ = य
ರ = र

वर्णमाला

कन्नडकी वर्णमाला भी नागरी वर्णमालाके अनुसार ही है, पर थोड़ा सा अन्तर है। स्वर और व्यंजन पूर्ण हैं, स्वरोंमें ह्रस्व तथा दीर्घके भेदको दिखानेवाले संकेत भी हैं, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, अनुस्वार, विसर्ग और सभी वर्णोंको सूचित करनेवाले चिह्न भी हैं, व्यंजनाक्षरोंसे स्वरोंका सुन्दर संयोग है और आर्य और द्राविड भाषाओंकी ध्वनिको अच्छी तरह व्यक्त भी किया जा सकता है।

कन्नड वर्णमालाका परिचय देवनागरी लिपिमें प्राप्त करानेका प्रयत्न करें।

कन्नडमें कुल १४ स्वर हैं जिनमें ६ ह्रस्व हैं और ८ दीर्घ।

ह्रस्व स्वर— अ इ उ ऋ, ए, ओ

दीर्घस्वर — आ, ई, ऊ ॠ, ए, ऐ ओ औ

व्यंजनोंमें दो प्रकार हैं—वर्गीय व्यंजन और अवर्गीय व्यंजन और क्रमशः जिनकी संख्या २५ और ९ है।

वर्गीय व्यंजन— (स्वरका मिलाकर) —

क ख ग घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म

अवर्गीय व्यंजन— (स्वरके साथ) —

य, र, ल, व, श, ष, स, ह ळ

अयोगवाह— अयोगवाह २ हैं — अनुस्वार और विसर्ग। कन्नडमें अनुस्वारको हिन्दी अक्षरके आगे दी जाती है, जैसे क०=कं ख०=खं। विसर्गकी दो बिन्दियाँ जैसे हिन्दीमें लिखी जाती हैं वैसे ही कन्नडमें भी लिखी जाती हैं, जैसे कः=कः खः=खः।

कन्नड वर्णमालामें १४ स्वर ३४ व्यंजन, २ अयोगवाह, कुल ५० मूलाक्षर हैं। पर ऋ ॠ लृ कन्नडमें प्रयोग किये जानेवाले संस्कृत शब्दोंमें आते हैं। महाप्राणोंके मिले हुए शब्द और श, षकारके शब्द कन्नडमें कम प्रयुक्त किये जाते हैं। पर आजकलकी अधिक संस्कृत मिश्रित शैलीमें इनका ज्यादा मात्रामें उपयोग किया जाता है। न तो कन्नडमें ज्ञ की तरह और क्ष तो क्ष की तरह ही लिखा जाता है।

व्यंजनोंके आगे स्वर चिह्न मिलाकर हिन्दीकी तरह गुणिताक्षर या बारहखड़ी भी बनायी जाती है।

स्वरोंको छोड़कर व्यंजन लिखनेका तरीका भी है, जैसे क=क्, ग=ग्।

कन्नडमें उपरोक्त 'ए' ह्रस्व स्वरका उच्चारण इसी प्रकार किया जाता है, जैसे 'एक्का' शब्दमें एको किया जाता है पर शब्दके एकारको। ह्रस्वस्वर 'ओ' का उच्चारण इसी प्रकार किया जाता है, जैसे कोतवाल मोहन, मालूम शब्दोंमें ओकारको किया जाता है। ए दीर्घस्वरका उच्चारण इसी प्रकार किया जाता है, जैसे 'एक' शब्दमें ए का किया जाता है और दीर्घस्वर ओ का उच्चारण इसी प्रकार किया जाता है जैसे मोहन, गोरा आदि शब्दोंमें ओ का किया जाता है।

जिसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्व 'ए' और 'ओ' का अुच्चारण अेक मात्रिक और दीर्घ ए और ओ का अुच्चार प्लुत (त्रिमात्रिक) होता है और कन्नडमें यह भेद दिखानेके लिअे अलग अलग स्वर-वर्ण हे।

"कन्नड सशोधन सस्था" (Kannada Research Institute) के तत्वावधानमें कन्नड पडित श्री म प्र. पूजारने कन्नड व्याकरणपर जो दो व्याख्यान दिये, वे कहते हैं कि कन्नड वैयाकरणी केशिराजने 'शब्दमणिदर्पण' में अक्षर प्रकरणमें कहा है कि कन्नड भाषाके स्वरूपकी कल्पना देनेके लिअे अे (ह्रस्व) ओ (ह्रस्व) स्वर, महाप्राण अक्षर, र, ड ळ आदि सहायक होते है।

केशिराजने अक्षरोत्पत्तिके बारेमें कहा है कि शब्द अेक द्रव्य है वह शुभ्र रगका है वह तुरहीका सा होता है, हमारे कठसे बाहर निकलनेवाली ध्वनि अुस शब्दद्रव्यका कार्यरूप है। किन्तु शब्द सामान्य ध्वनि-रूपका हो या अक्षररूपका, यह यहाँ विचारणीय है कि शब्द द्रव्य कैसे ? अगर शब्द द्रव्य हो तो गुण चाहिये। श्वेत रूप अुसका गुण है। जैनोकी राय है कि पुद्गलस्कघोके आघातसे ध्वनि पैदा होती है। अुनके अनुसार कर्म केवल क्रिया नहीं, पुद्गलरूप है। 'ज्ञानावरणीय' आदि पुद्गलकर्म आत्माको घेरते हैं। अिन विचारोके जैनोके पहले जो हुअे हैं, वे कहते हैं कि शब्द अेक गुण है और वह द्रव्याश्रित है। शब्दगुणक आकाशम्। आकाश शब्द गुणका है। जैसे गध पृथ्वीका गुण है जैसे शीतस्पर्श जलका गुण है वैसे शब्द आकाशका गुण है। आधुनिक वैज्ञानिक भी शब्दको द्रव्य (Matter) नही कहते। पर यह तो चर्चात्मक विषय है।

केशिराज अक्षरोमें दो प्रकार करते हैं— श्रावण और चाक्षुष। चाक्षुष अक्षर कैसे ? यह भी विचारणीय है। क्योकि चाक्षुष अक्षर जो हैं वे अक्षर-चित्र हैं, न कि अक्षर। केशिराजके अनुसार अक्षरोंकी सख्या ५२ है और अुनमें ९ प्लुत और र (ड) ळ (देशी अक्षर) जोड दें तो ६३ अक्षर होते हैं। अगर प्लुतोको छोड दें तो ५७ अक्षर हो जाते हैं। पर कालानुक्रममें कुछ अक्षर हट गये और अब अूपर दिये हुअे ५० मूलाक्षर कन्नडमें हैं।

पडित पूजारजीका कहना है कि निम्नलिखित विषयोका कन्नड शिक्षा ग्रथमें समावेश होना चाहिये—

(१) अकारका अुच्चारण सामान्यत शब्दोके अतमें यदि वह हो तो विस्तृत होता है—अुदाहरणार्थ—बद, हाद माडिद। अिसलिअे कुछ लोग बदा, होदा, माडिदा लिखते हैं। यह गलत है। शब्दोके मध्यमें अकारका अुच्चार सकुचित होता है। (२) ऋ और लृ का अुच्चारण भी कअी लोग रु और लु की तरह करते हैं। (३) जिव्हामूलीय (अुदा–प्रात काल), अुपध्मानीय (अुदा –पय पान) का ठीक अुच्चार। (४) महाप्राणोंका अुच्चार। (५) सानुनासिक यवल घटित शब्दोका अुच्चार। (६) ह्य, ह्व ह्ल ह्न ह्म आदिका अुच्चार। (७) द्वित्ताक्ष रोका लिखना। (८) शिथिल द्वित्ताक्षरवाले शब्दोका अुच्चार। (९) नित्य शिथिल द्वित्ताक्षरके शब्दोका अुच्चार।

कुछ अग्रजी, फारसी अक्षरोके लिअे भी कन्नड लिपिमें सकेतोकी आवश्यकता है। अितनी आवश्यकताके बावजूद भी तमिळ और वट्टिळुत्तुको छोड, दक्षिणकी सभी लिपियाँ सर्वोत्तम हैं जिनमें अेक कन्नड लिपि भी है।

परकीया

: श्री पी. वें. राजमन्नार :

'पात्र'

ब्रह्मानन्द . अेक अध्यापक
प्रभा . ब्रह्मानन्दकी पत्नी
सत्यं और मोहनराव : ब्रह्मानन्दके मित्र
कृष्णराव डाक्टर
गाडीवान

(अेलूरमें ब्रह्मानन्दके घरका अेक कमरा जो ड्राअिंगरूम कहला सकता है। बीचमें अेक मेज है, जिसके चारो ओर चार कुर्सियाँ पडी हैं। अेक कोनेमें पलंग बिछा हुआ है। दूसरे कोनेमें अंदर जानेका द्वार। दाहिनी ओर बाहर जानेका द्वार।

ब्रह्मानन्द और सत्य बैठे बातें कर रहे हैं। ब्रह्मानन्द अेक स्कूलमें अध्यापक है। अुम्र लगभग ३० है। सुगठित शरीर है। लेकिन मुख तेजोहीन, बुझे-हुअे चूल्हेके समान। सत्य भी अुसका समवयस्क है। कुशल व्यवहारिक-सा दीखता है। मद्रासमें किसी कम्पनीका अेजेन्ट है। किसी कामसे अेलूर आया हुआ है। सिगरेटका धुंआ छोड रहा है।)

ब्रह्मानन्द :—क्यों भाअी सत्य ! तो तुमको यहाँ आये तीन दिन हो गये। अब मेरी याद आयी ?

सत्यं —नहीं भाअी ! जिस दिन आया था अुस दिन अितना थका था कि कहीं हिलनेकी अिच्छा भी नहीं हुअी। कल काम पूरा करके जब यहाँ आनेको निकला कि रास्तेमें अचानक मोहनराव मिला। अुसे देखे बहुत दिन हो गये थे। मैंने कहा, "वाह भाअी, कितने दिनों बाद मिले।" "हाँ भाअी ! आज तो अच्छा दिन है। अिसलिअे अुचित रीतिसे आदर सत्कार करना चाहिये। चलो होटलमें चलें। बडी भूख लगी है। दावत दोगे ?" अुसने कहा।

जब अुसने अिस प्रकार भोलेपनके साथ पूछा तो मैं कैसे रोकता। खैर, होटलमें गये। अुसके बाद गपशप......आज तुम्हारे स्कूलमें छुट्टी है, अिसलिअे जल्दी चला आया।

ब्रह्मानन्द :—अरे ! मोहन अिस शहरमें है। यहाँ रहते हुअे अेक दिन भी मुझसे मिलने नहीं आया। बडी गहरी दोस्ती थी।

सत्यं :—था तो अिसी शहरमें। आज भी रहेगा शायद। लेकिन क्या ठिकाना ! दस दिन कहीं अेक जगह रहना पडे तो प्राण छोड देगा।

ब्रह्मानन्द :—अेक ही दिन सही। अुसको मालूम है कि मैं अिस शहरमें हूँ। तीन महीने पहले अुसने अपना खंड-काव्योंका अेक संग्रह भी भेजा था।

सत्यं .—(कुछ सोचकर) क्या अुसे मालूम है कि तुम्हारा विवाह हो गया ?

ब्रह्मानन्द —क्यों नहीं, मेरी स्त्री भी तो मछलीपट्टणम्‌की है। अुसीके शहरकी।

सत्य —तो मुझे अेक कारण दिखायी देता है। अुसने सोचा होगा कि तुम अपनी पत्नीके साथ सुखमय जीवन बिताते हो फिर अुसका जैसा आदमी सद्‌गृहस्थके यहाँ क्यों जाअे।

ब्रह्मानन्द :—अरे ! भाअी ! तुम भी अजीब बात करते हो। हाँ, मुझे मालूम है कि अुसे शराब पीनेकी आदत कालेजके दिनोंसे ही है, लेकिन अितनी-सी बातके लिअे—

सत्यं :-(हँसकर) तो तुम अुसका पूरा अितिहास नहीं जानते। तुमको मालूम है कि अुसकी शादी हुअी ?

ब्रह्मा :—(नकारात्मक रूपसे सिर हिलाता है।)

सत्य —बचपनमें ही हो गयी। पत्नीने आनके तीसरे दिन ही अुसन कहा तुम्हारे साथ जीवन बिताना मृत्युके समान है। तुमन कोअी अपराध नही किया। तुम चाहो तो किसी दूसरेसे शादी कर लो। मुझे कोअी अुज्र नही। म पिताजीसे कह दूगा कि मेरी जायजाद तुमको दिया दें।

अुसन पिताजीसे भी यही कहा और अक महीनके अन्दर ही अन्दर निदराकवालोकी * बहूको मगा ले गया। अुसके पिताजी बड कट्टर सनातनी विचारके ह। यह देखकर मारे क्रोधके जल अुठ और अपनी जाय जादका आधा हिस्सा बहूको दे दिया। बाकी ट्रस्टियोको सौंपकर महावार सौ रुपय मोहनरावको देनका प्रबन्ध किया। अिसके बाद बचारेन स्वगकी राह ली।

ब्रह्मा —अितना काण्ड हुआ! तो मोहन अब अुसीके साथ

सत्य — भाग्य अच्छा था कि शीघ्रही अुस बहूकी भी मृत्यु हो गयी। बचारीन न जान कितनी तकलीफें अुठायी। लेकिन मोहन तो कहता है कि अुसको बडा सुख था।

ब्रह्मा —अुसके बाद?

सत्य —निरतर भ्रमण। होटलामें खाना और स्टेशनोंके छप्परोमें सोना। हाथमें पसा रहनपर मदिरालय या वेश्यालयमें अुसका ठिकाना रहता। अिस हालतमें अुसने यदि यह समझा हो कि तुम्हारे समान प्रतिष्ठित जीवन बितानवालेके यहाँ जाअू तो तुम्हे न जान कैसा लग तो आश्चय क्या?

ब्रह्मा —बचारा रोटी कमे कमाता है?

सत्य —कहा न पिताजीके वसीयतनामेके अनुसार ट्रस्टीवाले माहवार अुसको सौ रुपय देते ह जो दस बारह दिनामें ही अुड जात ह। अुसके बाद जीवन अक दैनिक समस्या है। किसी तरह महीना पूरा हो जाता है। कल मेरे साथ होटलमें खाया। हो सकता है कि अब तक फाका ही कर रहा हो। बुद्धि ठिकानें रही तो लिखता अद्भुत है। अुसका हमारे समाजमें कोअी स्थान नही। क्यो? क्या सोच रहे हो?

ब्रह्मा —कितना ब्रिलियेंट था कालेजमें। बचारेपर तरस आता है। अुसका भूखा रहना मुझसे नहीं देखा जाता। जानते हो अब कहाँ होगा?

सत्य —निश्चित रूपसे नही, क्या?

ब्रह्मा —मरा होटल जाना अच्छा न होगा। अुसको यहाँ ले आओग तो अक दिन हमारे साथ रहेगा। पेटभर खा पी लेगा। मुझ भी अक तरहका सन्तोष होगा?

सत्य —म कोशिश करूँगा (अुठकर) लेकिन तुम्हारी पत्नी क्या कहेगी। यह भी सोचा ह? मेरी माँ अपनी बहूसे कहा करती हैं कि तुम्हारी स्त्री बडी पतिव्रता ह। असे लफगको घरमें देखकर न जान वह क्या कह बठ। और तो और सारा अपराध मेरे सिर पडगा।

ब्रह्मा —कोअी डर नही। मेरी अिच्छा ही अुसकी अिच्छा है।

सत्य — (हँसता और कुछ गुनगुनाता है।) यद्यपि दो ह तन तो भी मन अक ह मन— अच्छा भाअी अब जाता हूँ।

ब्रह्मा — हाँ भाअी। अुसको लिवा लाना भूलना नही।

सत्य —अच्छा। (जाता ह।)

ब्रह्मा —(चुपचाप कुछ सोचता रहता ह।)

(प्रभाका प्रवेश। ब्रह्मानन्दकी पत्नीका पूरा नाम प्रभावती है। गहुँआ रग अुमर बीस वषकी ह लेकिन प्रौढ़ा-सी दीखती है। बडी-बडी आँखें जिनमें बडी गम्भीरता हैं जिसको अुसका पति भी नही देख सकता। पतिसे—)

प्रभा —क्या सोच रहे हो?

ब्रह्मा —क्या? तुम्हारे ही बारेमें?

---

* वश या घरका नाम है जिससे किसी परिवारकी पहिचान होती है।

प्रभा —(हँसकर) सच ? मुझे मालूम नहीं था कि आप मेरे बारेमें सोचते। बीमारीके समयके सिवाय..

ब्रह्मा —मतलब।

प्रभा —कुछ नहीं। आश्चर्यकी कोअी बात नहीं। रोज हम जिस खाटपर सोते हैं, अुसके बारेमें कभी सोचते हैं, क्या ? जब अुसकी मरम्मतकी जरूरत पडती है तभी हम अुसके सम्बन्धमें सोचते हैं न। (प्रभा बातें करती हुअी कोअी न कोअी काम करती रहती है। मेजपर चीजें ठीक करती है। कैलेण्डरमें तारीख बदलती है और रद्दी कागज टोकरीमें डालती है।)

ब्रह्मा —तुम भूलती हो। तुम्हारे ही सम्बन्धमें मैं सोच रहा हूँ।

प्रभा —मेरा हृदय घबडाता है। कहिये न क्या है।

ब्रह्मा —मेरे सहपाठी मोहनरावको जानती हो ? तुम्हारेही गाँवका है।

प्रभा —(चौंकती है, फिर सम्भल जाती है।) हाँ।

ब्रह्मा —बडा बुद्धिमान है। कला-प्रेमी और कवि भी।

प्रभा —पत्रिकाओंमें कभी-कभी अुसकी कविता देखा करती हूँ। लेकिन आप किसलिअे पूछ रहे हैं ?

ब्रह्मा —अुसके जीवनकी सारी कहानी क्या तुम जानती हो ? पत्नीको त्याग देना, किसीके साथ भाग जाना, मधुपान और भ्रमण अिस प्रकार अुसका सारा जीवन विचित्र और निकम्मा बन गया है। कैसा होनहार था परन्तु कैसा गुण्डा-सा बनकर बदनाम हो गया है वह बेचारा—(अेकदम रुककर) प्रभा ! क्या तुम डरती हो कि मैं भी अैसा ही बन जाअूँगा ?

प्रभा —नहीं।

ब्रह्मा —क्यों ?

प्रभा —(जरा हैरानीसे) बदनाम होना भी क्या सबके लिअे आसान है ?

ब्रह्मा —(तमाचा लगा-सा तडफडाता है। फिर सम्भल जाता है।) मोहन अब अिसी शहरमें है।

प्रभा —(गुस्सेसे) जाने भी दीजिये अिस पचडेको। (जरा शान्तिसे) यही आप मेरे बारेमें सोच रहे थे ?

ब्रह्मा —अितनी जल्दी क्यों ?

प्रभा —अच्छा। माफ कीजिये।

ब्रह्मा —मोहनको लिवा लानेके लिअे सत्यको भेजा है कुछ खिलाने-पिलानेके विचारसे। अब सोचमें हूँ कि तुम हँसी अुडाओगी। सत्यने कहा शायद तुम्हारी स्त्री आपत्ति करे, अिसपर मैंने कह दिया कोअी डर नहीं, मेरी अिच्छाही अुसकी अिच्छा है। अब देखें देवीजीकी क्या आज्ञा है।

प्रभा —आपने कह दिया न, अब मुझसे क्यों पूछते हैं। आप अपने मित्रोंके साथ खा-पीकर सुखसे रहें तो मुझे क्या आपत्ति होगी ?

ब्रह्मा —अच्छा, अब तो जान बची। (थोडी देर शान्ति रहती है।) प्रभा। मोहन मछलीपट्टणम्‌में भी पीता था ना। अब तो और अधिक पीता होगा। बहुत बुरी आदत है।

प्रभा —(चुप रहती है।)

ब्रह्मा—निरशनवालोंकी लडकीको तुम जानती हो ना। अनेक कष्टोंके बाद बेचारीने जान दे दी। तबसे लेकर वह बहुत वेश्यालोलुप हो गया है। अुसका पिता कितना कट्टर सनातनी था। कितना धर्मपरायण था। अैसे पिताका बेटा न जाने अैसा क्या निकला ?

प्रभा—(अस्पष्ट रूपसे) शायद अिसीलिअे अच्छा अब अन्दर जाना है, बहुत काम पडा है। (जाती है।) (ब्रह्मानन्द अुठकर टहलने लगता है। अंदर जाकर अेक नया टेबिल-क्लाथ लाकर मेजपर बिछाता है। अुसके चारों ओर तीन कुर्सियाँ रखकर अेक और कुर्सी जरा दूर रखता है। फिर न जाने क्या सोचकर अुसे भी मेजके पास रखता है।)

(सत्यका प्रवेश)

ब्रह्मा—अरे ! अकेले क्यों आये ? क्या मोहन लापता हो गया ?

सत्य —(चिन्तित स्वरसे) नहीं। शिसी शहरमें है। लेकिन वह यहाँतक आनेकी परिस्थितिमें नहीं है।

ब्रह्मा —क्या बीमार है?

सत्य —हाँ बीमारी ही है। बेहद पियक्कड है। अब वह शितना बेहोश है कि किसीको पहचान भी नहीं सकता। या तो शून्य दृष्टिसे देखता है या आँखें बंद कर लेता है। सारा शरीर शितना गर्म है मानो बुखार चढ़ा हो। मेरी समझमें नहीं आता कि क्या किया जाअे। यहीं अुस होटलमें पड़ा है।

ब्रह्मा —यह सब कैसे हुआ?

सत्य —तुम बिल्कुल भोले हो, ब्रह्मानंद! अैसे लोगोंकी हरकतें तुम नहीं समझ सकते। किसी पत्रिका-वालेने पैसा भेजा होगा। बस! और क्या? पैसा खतम होनेतक पिया होगा।

ब्रह्मा —तो फिर क्या किया जाअे?

सत्य —डाक्टरको दिखाना चाहिये। किसी अच्छे स्थानमें सुरक्षित रूपसे रखनेका प्रबन्ध करना चाहिये बेचारेको देखने दया आती है। हमारा गाँव होता तो सीधे अपने ही घर ले जाता। लेकिन वह रेल-पर सफर करनेकी हालतमें नहीं है।

ब्रह्मा —यदि यहीं ले आअें तो?

सत्य —शिससे और क्या अच्छा होगा?

ब्रह्मा —गाड़ीमें ले आओ।

सत्य —नहीं क्या तो कन्धेपर ले आना होगा पलंग तैयार रखो।

ब्रह्मा —हाँ, हाँ। (जोरसे) प्रभा! ओ प्रभा!

(सत्य चला जाता है। प्रभाका प्रवेश कालिख लगे हाथोंसे)

प्रभा —चाय लाअूँ? (और किसीको न पाकर) अकेले अपने ही लिअे ना?

ब्रह्मा —देखो प्रभा! सत्य कहता है कि मोहन बड़े खतरेमें है। बुखारसे बेहोश हो गया है। बड़ी बुरी आदत है।

प्रभा —शराब पीनेकी?

ब्रह्मा —हाँ। मुझे दया आती है, प्रभा, शिस शहरमें अुसका अपना कोअी नहीं।

प्रभा —तो ठीक है। जाकर देखिये। चाय पीकर जाअिये। लाअूँ?

ब्रह्मा —मेरे देखनेकी क्या जरूरत? अपने घरमें ही बुला लें, ठीक हो जानेके बाद चला जाअेगा।

प्रभा :—(कठोरतासे) हरगिज नहीं।

ब्रह्मा :—(आश्चर्यसे) क्यों?

प्रभा —अस्पतालमें भर्ती करवा दीजिये; नहीं तो और कहीं रखिये।

ब्रह्मा :—प्रभा! तुम यह क्या कह रही हो? आज नौकरानीको यहीं रखो। यदि तुम नहीं चाहती तो कल ठीक हो जानेके बाद भेज दूँगा।

प्रभा —(कठोरताकी जगह कातरतासे) नहीं जी! मैं प्रार्थना करती हूँ। नहीं। मेरी बात मानिये। आप जाकर देख आअिये। चाहे तो कुछ रुपये दे दीजिये। सत्यनारायणजी भी हैं। अुनको लौकिक व्यवहार अच्छी तरह मालूम हैं।

ब्रह्मा —(गुस्सेसे) मुझे भी मालूम है। मैं निरा भोंदू नहीं हूँ। क्या समझती हो तुम? स्कूलका मास्टर हूँ तो भी अपने घरका मालिक मैं भी हूँ। यह मेरा घर है। मेरा आँगन है। क्या अपने घरमें अपने दोस्तको अेक दिन रखनेका भी मुझे अधिकार नहीं? तुम तो पतिव्रता होकर मेरे अधिकारकी अवहेलना करती हो।

प्रभा —(बहुत कातरतासे) राम! राम! अपनी जबानपर अैसी बात ला सकती हूँ? मैंने तो प्रार्थना की। क्या पतिसे प्रार्थना करनेका भी पत्नीको अधिकार नहीं? फिर प्रार्थना करती हूँ यह विचार छोड़ दीजिये?

ब्रह्मा —नहीं छोडूँगा। नहीं छोडूँगा। तुम जो कुछ भी कहो, कितनी ही प्रार्थना करो, नहीं मानूँगा।

प्रभा .—(निराशासे) तो ठीक है। जहाँतक हो सका, कोशिश की। मेरी बात नहीं मानते, अब मैं क्या करूँ। समझूँगी दुर्भाग्य है।

ब्रह्मा —कुछ भी समझो। ले आनेको सत्यको मना है। डाक्टर भी आअगा। प्रभा! अरुचिकर काम समझकर आनाकानी तो नहीं करोगी?

प्रभा —क्या मुझपर अितना विश्वास नहीं।

ब्रह्मा —(कन्धेपर हाथ रखकर) क्या नहीं मैंने तो यही कहा था। तो फिर देखो अुसे पलगपर लिटाअेंगे।

प्रभा —अच्छा। (अन्दर जाकर तकिये, चादर वगैरह लाकर शय्या तैयार करती है) (ब्रह्मानन्द मेजको अेक ओर सरकाकर पलगके पास दो कुर्सियाँ डालता है।)

(सत्य और गाडीवान दोनों तरफसे पकडकर मोहनरावको अन्दर लाते हैं। मोहनकी आँखें मुँदी हुअी है। लम्बे लम्बे काले बाल भालपर बिखरे हुअे हैं। लम्बा चेहरा और नुकीली नाक, घनी भौंहें पतले और सूखे कपोल। होठ बार-बार टेढा हिलता है। कुछ मैला महीन कुर्ता और पाजामा पहने हैं।)

सत्य —ब्रह्मानन्द! क्या अभी पलगपर?

ब्रह्मा —(आश्चर्यसे देखता हुआ) हाँ। (सिर हिलाता है)

(सत्य और गाडीवान दोनों मोहनको पलगपर लिटाते हैं। प्रभा अन्दरसे अेक शाल लाकर ओढाती है)

गाडीवान —सरकार। मैं जाअू?

सत्य —(पैसे देकर) हाँ जाओ। जाते समय अेक बार डाक्टर साहबको याद दिला दो।

गाडी० —जी हाँ! (जाता है।)

(सत्य और ब्रह्मानन्द बिना कुछ बोले अेक-दूसरेको देखते हैं। बादमें दोनों पलग और देखते हैं। प्रभा, मोहनके सिरपर बाल ठीक करती है।)

प्रभा —(माथेपर हाथ रखकर) बापरे! कितना गरम है! बहुत बुखार है। युडकुलोनमें भिगोकर रुमाल मस्तकपर रखूँ?

(कोअी जवाब नहीं देता। प्रभा अन्दर जाकर अेक रुमाल युडकुलोनमें भिगोकर मोहनके मस्तकपर रखती है। चित्रमें डाक्टर आता है।)

कृष्णराव —हलो ब्रह्मानन्द! गुडअीवनिंग सत्य!

ब्रह्मा —डाक्टर! (पलगकी ओर दिखाते हुअे) मोहनराव हमारा मित्र है। सत्य अिस हालतमें देखकर अुसे यहाँ ले आया है।

(डाक्टर पलगके पास जाकर मोहनकी परीक्षा करता है। थर्मामीटरसे देखकर)

डाक्टर —कोअी खास बीमारी नहीं। बुखार तो है, लेकिन वह भी अेक लक्षण है। आॅल्कोहॉल ज्यादा पी जानेसे कभी-कभी सन्निपात भी हो जाता है। रातभर पानीके सिवाय और कुछ भी खानेको मत दीजिये। सत्यम्! मेरे साथ आओ। दवा दूँगा। अेक डोज अभी देना और अेक डोज सुबह देना। यदि ज्यादा बकबक हो तो नींदके लिअे स्लीपिंग ड्राफ्ट भेजूँगा सो देना, कलतक बिल्कुल ठीक हो जाअेगा। गुडनाअिट।

(डाक्टर और सत्य जाते हैं।)

(प्रभा पलगके पासवाली कुर्सीपर बैठती है।)

ब्रह्मा —(धीरसे) प्रभा!

प्रभा —क्या?

ब्रह्मा —जा गोव सो भार जान! बडी दयासे साथ घरमें रखनेको कह दिया। लेकिन तकलीफ अुठानेवाली तुम हो। मैंने सोचा नहीं! मुझे क्षमा करो प्रभा!

प्रभा —नहीं-नहीं, आप भूलते हैं! कामकी वजहसे मैंने नहीं मना किया था। यह भी कोअी काम है, मेरे लिअे? जब आपको टाअिफाअिड हो गया था तो बीस दिन तक नर्सके समान काम किया था— याद नहीं है? (जब ये बातें हो रही थीं अुसी बीच मोहन करवट बदलता हुआ कुछ बडबडाता हुआ हाथ हिलाता है। बातें करती हुअी प्रभा मोहनका हाथ दबाती है।)

ब्रह्मा.--कुछ ठीक होनेपर किसी तरह भेज दूंगा।

प्रभा --वे भी क्या रहेंगे जी ?

ब्रह्मा --(अुत्तर जँचा नहीं। लेकिन कुछ भी नहीं कह पाता)

प्रभा --अन्धेरा हो रहा है। जरा दीपक जलाअिये।

ब्रह्मा.--(दीपक जलाता है) प्रभा! तुम मोहनको अच्छी तरह जानती हो?

प्रभा:--मतलब ?

ब्रह्मा --तुम्हारे ही गाँवका है न। जानती भर हो या कुछ परिचय भी है।

प्रभा --कभी कभी हमारे घर आया करते थे। मेरे पिताजी अिनसे कविता पढनेको कहा करते थे।

ब्रह्मा --हाँ। अच्छा पढता था। होस्टलमें----(कुछ सोचता है, चुप रहता है) तुमको पहचानता है।

प्रभा --(सूखी हँसी हँसकर) अिस प्रश्नका जवाब मैं कैसे दे सकती हूँ।

ब्रह्मा --हाँ ठीक है।

(बातचीत रुक जाती है। ब्रह्मानन्द टहलता रहता है। अितनेमें सत्य दवाकी शीशियाँ लेकर आता है। शीशियाँ मेजपर रखते हुअे।)

सत्य --देखो, अिस शीशीकी दवा अेक डोज अभी देनेको कहा। दूसरा डोज कल सुबह दे सकते हैं। अिस शीशीमें अेक डोज है। सो जाअे तो देनेकी जरूरत नहीं। नहीं तो बकझक करनेपर देनेको कहा है। (प्रभा अुठकर पहली शीशी लेकर अेक ग्लासमें दवा अुडेलती और पिलाती है।)

सत्य --अव्वल दर्जेकी नर्स हैं!

ब्रह्मा --देर हो गयी। सत्य। अब तुम जाओ।

सत्य --कल सुबहकी गाडीसे मुझे जाना है। विदा। मोहनकी हालत लिखिअेगा।

ब्रह्मा --हाँ, जरूर।

(सत्य जाता है)

प्रभा --जाकर भोजन कर आअिये।

ब्रह्मा --और तुम ?

प्रभा --अुपवास तो नहीं करूँगी। मैं बादमें पाअूँगी।

ब्रह्मा --ठीक है। (अंदर जाता है।)

प्रभा --(सदर दरवाजा बन्द कर आती है)

(मचपर दीपक बुझाकर फिर जलाअें कुछ व्यवधानकी सूचना देनेके लिअे)

\+ \+ \+

(आधी रातका समय। मोहन पलंगपर सोया हुआ है। और कोअी नहीं है। पहले अस्पष्ट रूपसे बातें सुन पडती हैं और बादमें स्पष्ट हो जाती हैं।)

मोहन --ओह! प्यास! ज्वाला, रक्त ज्वाला, रक्तकी धारा, होम-कुण्डमें रक्तधाराअें। लाल लाल जीभोंके समान लपटें। खून। ओह! दर्द! (आँखें खोलकर देखता है।)

(प्रभाका प्रवेश जो मोहनकी आवाज सुनकर आयी है। वह पलंगके पास खडी हो जाती है)

मोहन --(आँखें बन्दकर) देखो प्रभा! राक्षसोंने क्या किया है?

प्रभा:--(चौंक पडती है।)

मोहन:--मेरे सीनेमें बर्छी मार दो, प्रभा। मेरी हृदयेश्वरी! अब मेरे हृदयमें खून नहीं। अुसे कुण्डमें अुडेल दिया गया है। लो देखो! अुनको भगा दो। अपने हाथोंसे वह खून मेरे हृदयमें भर दो। (आँखें खोलता है। अेक क्षणतक प्रभापर दृष्टि गडाकर देखता है।) कौन हो तुम?

प्रभा --प्रभा। आपकी हृदयेश्वरी!

मोहन --(पागलके समान देखते और हसते हुअे) राक्षसी! तुम्हें मालूम नहीं, मेरी प्रभा मर गयी। मुझे मालूम है, तुम्हींने मार डाला। देखो मैं पुलिसमें रिपोर्ट करता हूँ। (अुठना चाहता है।)

प्रभा --(फिरसे लिटाकर) प्रभा मर नहीं गयी। आप सो जाअिये।

मोहन —(बात सुननेकी हालत नहीं है।) प्यास, प्यास, दावाग्निकी ज्वालाअें, लपटें !!!

प्रभा —(पानी पिलाती है।)

मोहन —आओ हो। फिर आओ हो? अच्छी तरह देख लेने दो। (आँखें बंद कर लेता है।) दो-अेक चुम्बन। (होठोंसे चूमनेकी आवाज करता है।) ओह! कितनी मधुरता! सुधा मधुर है, मधु मधुर है, दधि मधुर है, तुम्हारे होठ मधुरातिमधुर हैं। (जोरसे) हाय! मेरी प्रभाको वह राक्षस बलात्कारसे......ओह! कितना घाव किया है। (हाथोंसे अपनी छाती पकड लेता है।)

प्रभा —(हाथ खोलकर भुजाअें पकडती है) कोअी नहीं है। आप डरिये नहीं। सो जाअिये।

मोहन —(आँखें खोलकर) राक्षसी! अब भी है। मुझपर नजर लगी है? मेरी प्रभाका खून करके मुझसे शादी करेगी? जा-जा। (आँखें बंद कर लेता है।)

प्रभा —(कुछ स्मरण करके अुठकर दूसरी शीशीकी दवा पिलाती है।)

मोहन —विष, विष हलाहल है। नीलकंठके गलेका हलाहल। तुमको कैसे मिला डाक्टर! (आँखें खोलकर) मुझे मालूम है, डाक्टर! शिवको मारकर अुनका विष लाये हो? अब तो शिव ताण्डव नृत्य नहीं करेगा? (पागलके समान हँसता हुआ) हिः! हमारा मुब्बू भी शिवका ताण्डव-नृत्य करता है तमिल गानेके साथ। गाअूँ? "कालै तूकि निराडुम् देव मे" बाकी शेष गाना नहीं आता। क्यों हँसता है वे? तेरा सिर फोडकर टुकडे-टुकडे कर दूँगा। पेट चीर डालूँगा। (जम्हाअी लेता है।) अरी प्रिये! मेरोपर क्या चली जाती हो? धूमज्योति सलिल मरुता—(फिर जम्हाअी। आँखें झपक जाती हैं।)

प्रभा —(माथेपर बिखरे बाल ठीक करती है। थोडी देर देखकर धीरे धीरे ललाट ही चूमती है और अहिस्ता-अहिस्ता चली जाती है।)

(फिर मच्छर मंडराया)

(दूसरे दिन सुबह लगभग साडे नौ बजेका समय। मोहन अभी सोया हुआ है।)

प्रभा —(प्रवेश करके पलंगके पास खडी होकर अुसके माथेपर हाथ रखकर देखती है। गरमी नहीं है।)

मोहन :—(जागता है) कौन है? कहाँ हूँ मैं?

प्रभा :—यहीं। धीरे-धीरे सब कहूँगी। जी कैसा है?

मोहन —कुछ नहीं, ठीक है (सिर हिलाकर) सिरमें थोडा सा दर्द है। क्या यह अस्पताल है और तुम नर्स हो?

प्रभा —(हँसकर) अेक तरहसे नर्स ही हूँ। यह, आपके बचपनके मित्र ब्रह्मानन्दजी रावका मकान है।

मोहन —(अेकटक देखता है अुसकी ओर। झट कुछ याद आता है।) देखो! तुम वेंकटशास्त्रीजीकी बेटी प्रभा हो न?

प्रभा —हाँ! अब अिनकी पत्नी हूँ।

मोहन —हाँ! ब्रह्मासे शादी की है न। कहाँ है ब्रह्मानन्द?

प्रभा —स्कूलका समय हो गया है। भोजन करके कपडे पहन रहे हैं। अभी आअेंगे।

मोहन —मास्टर है? कालेजके दिनोंसे ही हम लोग अुनको मास्टर साहब कहते थे। बहुत अच्छा है।

प्रभा :—(मुस्कराती हुअी) खूब! पत्नीसे पतिका सर्टिफिकेट स्वीकृत कराना चाहते हैं?

मोहन —अब भी अुतनी ही नटखट हो (अेकटक देखता हुआ) बचपनसे अब अधिक सुन्दर दीखती हो।

प्रभा —मैं कैसे जानूँ?

मोहन —क्या ब्रह्मानन्द नहीं कहता।

प्रभा —स्कूलके मास्टर क्या हर रोज अपनी पत्नियोंका वर्णन करते हैं?

मोहन —(अच्छा धीरे-धीरे अुठकर दीवारके सहारे बैठता है।) मैंने रातमें बडा घृणित बर्ताव किया होगा। लेकिन मैं अिस दुनियामें था ही नहीं। माफ करो। शराब बहुत बुरी चीज है।

प्रभा --हाथ मुँह धोकर काफी पीजिये। बेसिनमें पानी लाती हूँ।

मोहन --ना मैं ही आ जाऊँगा। (अुठनेका प्रयत्न करता है।)

प्रभा --नहीं! आप बहुत कमजोर हैं। (मोहनकी भुजाओं पकड़कर बैठाती है। मोहन झट प्रभाके हाथ पकड़कर अपने नजदीक खींचकर चूम लेता है।)

मोहन --पाप किया है। क्षमा करो, प्रभा!

प्रभा --(सब कुछ भूल जाती है।) नहीं-नहीं। (मोहनका सिर पकड़कर चूम लेती है। अुसी समय ब्रह्माराव प्रवेश करता है। जो कुछ हुआ है वह सब देखा तो नहीं लेकिन थोड़ी सन्देह हृदयमें अुथल पुथल मचाने लगता है जिसे प्रकट नहीं होने देता।)

ब्रह्मा --क्या मोहन जगा है? कैसा है।

प्रभा --(अपनी घबराहट छुपाती हुआी) हाँ! अभी जागे हैं। सिरमें दर्द बताते हैं। अुठते गिर पड़े।

ब्रह्मा --मोहन! आज कुछ आरामकी जरूरत है। लेट ही रहो।

मोहन --ब्रह्मानन्द! मेरे और आरामके बीचमें काफी दूरी है। बहुत धन्यवाद अनाथकी रक्षा की जो तुमने!

ब्रह्मा --सत्यने बताया तुम बड़ी बुरी हालतमें हो, अिसलिअे झट यहाँ लानेको कहा।

मोहन --क्या अब सत्य यहाँ आअेगा?

ब्रह्मा --नहीं! वह सुबह ही चला गया।

मोहन --धन्यवाद। लेकिन मुझे बिदा दो भाओ। काफी पीकर चला जाऊँगा।

ब्रह्मा --नो, नो। (कुछ सोचकर) खैर, मेरे स्कूलसे लौटनेके बाद देखा जाअेगा। अच्छा मैं जाता हूँ। तुम प्रभाको नहीं जानते?

मोहन --हाँ, बचपनका थोड़ा परिचय है। हम दोनों मछलीपट्टणमके हैं।

ब्रह्मा --हाँ, वही तो। मेरा समय हो गया है, मैं जाता हूँ। (जाता है।)

प्रभा --मैं पानी, पेस्ट आदि लाती हूँ। (जाती है।)

मोहन --(दोनों हाथोंसे सिर पकड़कर आँखें बंद कर लेता है।)

(पर्दा गिरता है)

\+ + +

(पर्दा अुठता है शामके चार बजेका समय। प्रभा पलंगपर बैठी है। मोहन अिधर-अुधर टहलता है।)

मोहन --हो गया! चाहसे ज्यादा भी हो गया। स्वप्नलोकसे अब यथार्थकी दुनियामें अुतरना चाहिये। प्रभा! अब अेक घंटेमें जा रहा हूँ।

प्रभा --हाँ, घंटेमें जा रहे हैं?

मोहन --(पहले नहीं समझता लेकिन बादमें समझकर झट) क्या कहा?

प्रभा --यही कि अेक घंटमें जा रहे हैं।

मोहन --मतलब?

प्रभा --कवियोंको सीधी-सादी भाषा मालूम नहीं होती। अेक घंटेमें हम तुम दोनों जा रहे हैं, यही मेरे कहनेका मतलब है।

मोहन --प्रभा! पगली-सी बात करती हो। तुम स्वप्न संसारसे अभी बाहर नहीं आयी?

प्रभा --स्वप्नलोक और यथार्थ संसारका निर्णय करनेकी मुझे जरूरत नहीं। मैं आपके साथ-साथ चल रही हूँ। मैंने अपना सब सामान ठीक कर लिया है। अुनके बनवाये जो गहने हैं वही, छोड़ दिये हैं। क्या यह सब सपना है?

मोहन :--नहीं, प्रभा नहीं!

प्रभा --क्या? पापका काम समझकर?

मोहन --नहीं!

प्रभा --समाजके डरसे।

मोहन --नहीं!

प्रभा --मित्र-द्रोहके डरसे?

मोहन --नहीं!

प्रभा --तो क्या यह समझकर कि मुझे तकलीफ होगी? क्या यह समझकर कि बिना घर बारके कभी-कभी खाने पीनेकी भी मुझे तकलीफ अुठानी पड़ेगी? मुझे अिसका डर नहीं।

मोहन --नहीं।

प्रभा --क्या यह समझकर कि आपकी आजादीमें बाधा डालूँगी?

मोहन :--नहीं, प्रभा, नहीं।

प्रभा —(तीखेसे) तो मालूम हो गया। मुझसे प्रेम नहीं। (खड़ी हो जाती है।)

मोहन —हाय! कितना भूलती हो? प्रेमके कारण ही मैं प्रार्थना करता हूँ कि अैसा न करो।

प्रभा —(सूखी हँसी हँसकर) प्रेमके कारण?

मोहन :—(जल्दीसे प्रभाके नजदीक आकर) हाँ, प्रेमके कारण ही। वह प्रेम असाधारण है, अपूर्व है, पवित्र है कृष्णसे राधाका-सा प्रेम है। प्रभा! मोह और वासनामें पड़कर अुस प्रेमको मलिन न होने दें? मोह क्षणिक है। प्रेम अमर है।

प्रभा —प्रेमके कारण ही मैं आपके साथ आ रही हूँ। मोहके कारण नहीं।

मोहन —मैं नहीं मानता। क्योंकि मोह फल चाहता है। प्रेम फलातीत है। सफलतामें मोह नष्ट होता है। प्रेमके अनुभवके लिअे सफलता हैही नहीं। अिसलिअे अुसका नाश कभी नहीं होता।

प्रभा —निराकवालोंकी पतोहू कमलाने आपके साथ आकर क्या आनन्दका अनुभव नहीं किया?

मोहन —नहीं! मोहकी आगमें भस्म हो गयी। थोड़ेसे सुखका अनुभव किया होगा लेकिन आनन्दका अनुभव नहीं किया। आनन्दकी सीमा नहीं है। अुसमें न अूँचाअी है और न निचाअी।

प्रभा —अपने प्रेमीको देह और आत्माका समर्पण करनेसे अधिक क्या कोअी आनन्द स्त्रीके लिअे है?

मोहन —फिर भूलती हो। आत्मार्पण करो। मैं मना नहीं करता। जिस क्षण तुम देहको भी अर्पित करोगी अुसी क्षण अुसका मूल्य कम हो जाअेगा। प्रभा, तुम मेरी देवी हो। अपना देह मुझे अर्पित करके साधारण स्त्री बन जाओगी?

प्रभा —तो अिस प्रेमका अनुभव कैसे किया जाअे?

मोहन —प्रेमका अनुभव निष्काम कार्य है। प्रेम अिच्छा नहीं, जो पूरी हो। प्रेम और भक्तिके लिअे तृप्ति नहीं है। अनुभव करनेसे अुनमें वृद्धि होती है। यही अिसका रहस्य है।

प्रभा —मुझे कुछ नहीं मालूम। बड़ी व्यथा हो रही है।

मोहन —मुझे मालूम है। किसीको मारनेके समय दर्द जरूर होता है। तुम मोहनको मारनेका प्रयत्न करती हो, अिसलिअे तुमको व्यथा होती है।

प्रभा —(आवाज सुनकर) वे आ रहे हैं।

(ब्रह्मानन्दका प्रवेश)

ब्रह्मा —(दोनोंका रंग-ढंग देखकर घबराता है।) मोहन! . कैसे हो?

मोहन — देखते हो ना! बिल्कुल भी के अब तक तुम्हारी स्त्रीको अपने लेक्चरसे हैरान करता रहा। अब विदा दो। मुझे समझमें नहीं आता कि तुम दोनोंको धन्यवाद कैसे दिया जाअे?

ब्रह्मा —अरे! बस अिसीके लिअे .. .. तो जाओगे?

मोहन —तुम्हारे स्कूलसे लौटनेतक मैंने रहनेको कहा न। अिसलिअे अबतक रहा।

ब्रह्मा —तब तो ठीक है। जबसे बटुआ निकालकर अेक दस रुपयेका नोट देता है।

मोहन —नहीं! माफ़ करो!

ब्रह्मा —तुम्हारी मर्जी। (नोट जेबमें रख लेता है।)

मोहन —(प्रभासे) अब विदा दीजिये। आपकी दया और प्रेम नहीं भूल सकता। ब्रह्मानन्द! विदा। फिर न जाने कब मिलेंगे?

ब्रह्मा —(प्रभासे) दरवाजेतक पहुँचा आता हूँ।

(मोहन और ब्रह्मानन्द जाते हैं।)

प्रभा —(पहले निश्चेष्ट होकर खड़ी रहती है। बादमें पलंगपर बैठकर हाथोंसे अपना मुँह ढँक लेती है।)

(ब्रह्मानन्दका प्रवेश)

ब्रह्मा —(प्रभाके पास आकर पलंगपर बैठता है और अुसके कंधेपर हाथ रखकर) प्रभा, तुम्हारी बात नहीं मानी। तुमको बहुत तकलीफ़ दी।

प्रभा —(फूटफूटकर रोनेकी आवाज सुन पड़ती है। सब निस्तब्ध।)

[पटाक्षेप]

(तेलुगुसे अनुवादक – श्री चा. सूर्यनारायण मूर्ति, बी. अे., साहित्यरत्न)

सन्यासी कवि लोष्ठक भट्ट

श्री प्रभात शास्त्री साहित्याचार्य, साहित्यरत्न

महाकवि मन्खक [१] ने श्रीकण्ठचरित नामका अक महाकाव्य लिखा था। अिस काव्यका पच्चीसवाँ सर्ग अैतिहासिक दृष्टिसे बडा महत्वपूर्ण है। अिस सर्गमें कविने अपने भाअी लकककी सभाको सुशोभित करनेवाले विभिन्न शास्त्रके प्रकाण्ड पण्डितोंका वर्णन बडे मनोरंजक ढंगसे किया है। लकक काश्मीरके तत्कालीन राजा जयसिंहके सान्धिविग्रहिक मंत्री थे। कालके दुष्प्रभावसे जिस काव्यमें वर्णित नन्दन रम्यदेव रुय्यक श्रीगर्भ मण्डन श्रीकण्ठ गर्ग देवधर नाग त्रैलोक्य दामोदर जिंदुक जल्हण श्रीगोविन्द कल्याण भट्ट श्रीवत्स स्यानन्द पद्मराज श्रीगुण लक्ष्मीदेव जनकराज प्रकट गुप्त आनन्द सुहल महाकवि शम्भु गोविन्दचन्द्र, जोगराज अपरादित्य आदिमेंसे कुछ ही ग्रन्थकारोंके नाम और कृतियोंसे हम अिस समय परिचित हैं।

मन्खकने अिसी परम्परामें कविवर लोष्ठक देवका वर्णन किया है। अिन्हींका दूसरा नाम लोष्टक भट्ट है। अिनके सम्बन्धमें अिन्होंने केवल तीन अनुष्टुप लिखे हैं जिससे पता चलता है कि [२] लोष्टक संस्कृतके सिद्धहस्त कवि और छह भाषाओंके अधिकारी विद्वान थे। अिन्होंने संस्कृतमें व्युत्पत्तिपूर्ण कअी ग्रन्थोंकी रचना की थी। समयके कुचक्रमें वीणापाणि वाणीके अिस वरद पुत्र कविके सारे ग्रन्थ लुप्त हो गये। अिस समय अकमात्र कृति [३] दीनाक्रन्दनस्तोत्र प्राप्य है।

कविकी जन्मभूमि प्रकृतिकी विलासस्थली काश्मीर थी। अिनके पिताका नाम रम्यदेव अथवा देवरम्य था। अपने पिताकी चर्चा अिन्होंने दीनाक्रन्दन स्तोत्रमें की है। अक रम्यदेवका उल्लेख श्रीकण्ठ चरितके पच्चीसवें [४] सर्गमें है। ये ही रम्यदेव अिनके पिता थे अथवा अिनसे भिन्न कोअी रम्यदेव थे यह निर्णय करना कठिन है। जिनके नामके साथ भट्ट लगा रहनेसे प्रतीत होता है कि ये जातिके ब्राह्मण थे। दीनाक्रन्दन स्तोत्र शिवजीके सम्बन्धमें लिखा गया है। अिससे यह सिद्ध होता है कि ये शैव मतके अनुयायी थे। अपनी तरुणाअी काश्मीरकी सुरम्य भूमिमें बिताकर अन्तिम समयमें संन्यासी होकर काशीवासी हो गये थे। लककके सभापण्डितोंमें अिनका नाम चर्चित होनेके कारण अिस कविका जन्मकाल १०८० अी के आसपास सिद्ध होता है क्योंकि लकक काश्मीरके राजा सुस्सलदेव तथा अुनके पुत्र जयसिंहके सान्धि

---

१ निर्णयसागर प्रेस बम्बअीसे मुद्रित

२ देखिये—

> वाग्देवतालिनीलोलाप्लुतपक्ष्मतिचातुरीम्।
> वदनाम्बुजे यस्य षड्भाषाऽधिशेरते॥
> खलानां यः प्रबन्धेषु दृढव्युत्पत्तिवर्मसु।
> प्रोद्यच्चोद्यमया दूरे कुण्ठिता अिव पत्त्रिणः॥
> कतिचिल्लोष्टदेवस्य तस्यतिमुखतोऽभणोत।
> श्रीलकक प्रतिप्रीतचारुचाटुरसा गिरः॥
>
> श्रीकण्ठचरित २५ सर्ग

३ निर्णय सागर प्रेस बम्बअीसे काव्यमाला गुच्छकके छठवें भागमें प्रकाशित।

४ देखिये—

> निस्तुषीकृतवैदुष्यः स्मयमासयसह्नते।
> घत प्रणतिपारम्यं रम्यदेव तमस्वत॥
>
> श्रीकण्ठचरित २५ सर्ग

५—देखिये—

> निवेशिने सुस्सलभूविडौजसा
> स्वयं गरीयस्यपि सान्धिविग्रहे।
> विधाय चक्रं स्वयशोमयीं लिपिं
> स लिल्लखगस्य विमुद्रमाननम्॥
>
> श्रीकण्ठचरित ३ सर्ग

विग्रहिक मन्त्री थे। अितिहासकार जयसिंहका शासन-काल ११२९ औी से ५० तक मानते हैं।

अिन्हें अपनी कृतिपर अत्यधिक आत्मविश्वास था। अिनकी रचनाअें अत्यधिक दुरूह होती थीं। मङ्खकने अिनका परिचय देते हुअे अिनके ग्रन्थोंके सम्बन्धमें 'यत्प्रबन्धेषु दृढव्युत्पत्तिवर्मसु' लिखा है—अर्थात् जिनके ग्रन्थ सुदृढ ज्ञानरूपी कवचके समान हैं। बडे दुर्भाग्यकी बात है कि अिनके वे सब ग्रन्थ अिस समय नहीं मिलते, जिनके सहारे साहित्य-जगत् अिनके पाण्डित्य और प्रतिभासे पूर्णरूपेण परिचित होता। अिनका शास्त्रीय ज्ञान बडा व्यापक था। [1] महान् सम्भ्रान्त परिवारमें जन्म लेकर अिन्होंने भी वाङ्मय रूपी विशाल पारावारका हनूमान्के समान सन्तरण किया था। अिसीसे अिन्हें कुछ लोग लोष्ट सर्वज्ञ कहते थे। 'सूक्तिमुक्तावली' प्रणेता दाक्षिणात्य जल्हणने तो 'लोष्टक भट्टकी अपेक्षया 'लोष्ट सर्वज्ञ'के नामसे ही कवि-काव्य-प्रशंसा प्रकरणमें अिनके दो श्लोक अुद्धृत किये हैं, अुनमेंसे अेक अिनकी दर्पोक्ति है—

प्रकृत्यैवातिवक्रेण, गुणदैर्घ्यं वितन्वता।
मया शरासनेनैव, वाणो दूरं निरस्यते॥

स्वभावसे ही टेढे और डोरीको फैलाये हुअे धनुष द्वारा जैसे बाण दूर फेंक दिया जाता है, अुसी तरह प्रकृतिसे ही वक्रोक्तिपूर्ण रचनाका अभ्यासी तथा काव्यमें गुणके महत्त्वका विशेषरूपसे विस्तारक मैंने भी (अपनी कृतियोंके महत्त्वको), वाणको दूर फेंक दिया है।

अिससे प्रतीत होता है, कि कविवर बाणके समान लोष्टक ओज, माधुर्य और प्रसाद अिन तीनों गुणकी अभिव्यक्ति-पूर्ण रचनामें अत्यधिक दक्ष थे। सम्भवतः बाणकी कादम्बरीके समान अिन्होंने कोअी गद्य काव्य लिखा हो।

सूक्तिमुक्तावलीके अुसी प्रकरणमें अरसिक श्रोताओंसे सम्बन्धित अिनकी व्यथाभरी दूसरी रचना देखिये—

केचिद्गर्वगलग्रहेण विषमद्वेषज्वरेणापरे,
केचिन्मौर्ख्यमलेन सततममीलन्ति शान्तोत्तरा।
तद्भो[1] मन्दिरभित्तयो, भवत नस्सूक्तेषु सभ्या पुनः
तत्पाठे वरमस्तिवो 'धम्' 'धम्' प्राय किमप्युत्तरम्॥

कुछ श्रोतागण गर्वरूपी गलग्रहसे ग्रसित हैं और कुछ भीषण विद्वेष-ज्वरसे प्रपीडित हैं, दूसरे अपनी निन्दनीय मूर्खताके कारण विवश हैं। अिसीसे ये लोग (सूक्ति सुननेके बाद) सदा मौन रहते हैं और अुत्तर देनेमें अिन्हें सकोच होता है। अतः मदिरके दीवालो; मेरी सूक्तियोंके श्रोता तुम्हीं हो जाओ। फिर तो सूक्ति-पाठके समय तुम्हारा (प्रतिध्वन्यात्मक) धम्, धम् जैसा कुछ अुत्तर तो (मौनावलम्बनकी अपेक्षा) अच्छा रहेगा।

अपनी कृतियोंकी विडम्बना करनेवाले अिन व्यक्तियोंके प्रति अिन्होंने कितना तीखा और मीठा व्यंग्य किया है। जान पडता है कि अिन कविको अपने जीवन-कालमें तत्कालीन विद्वत्समाज द्वारा अच्छा सम्मान नहीं मिला।

लोष्टकका व्यक्तिगत जीवन भी दुःख दर्द भरी कहानीसे ओत प्रोत है। अिन्होंने 'दीनाक्रन्दन स्तोत्र'की रचना यद्यपि भगवान् शंकरकी स्तुतिमें की है, किन्तु अिसे अिनकी आत्मकथा कहें तो अत्युक्ति न होगी। पन्ने, ममम, पाठकके मनको ने स्पर्श, शो, ऐसा, ही, देखे, हैं, जहाँपर कवि अपने व्यक्तिगत जीवनके सम्बन्धमें कुछ कहने लगता है—

मोहात्कृत परिणयोप्यनयो महीयान्,
मूल समस्तभवबन्धनदुर्गतीनाम्।
यस्मादुदेत्य दुरपत्यजननेन सृष्टः
स्नेहोऽस्मि वेष्टित अिवोत्कटनागपाशैः॥
सन्तोषणाय विदुषाऽपि मया समस्तमौ-
चित्यमुज्झितवताऽस्तवता कुवृत्यम्।
द्वारि श्ववल्लुठितमेव कदीश्वराणाम्।
सोढावमानशतविक्लवमानसेन॥

'दीनाक्रन्दन' से

१— अभ्रशो जन्मवशे सुमहति विहितो
वाङ्मयाब्धौ हनूम—
त्सरम्भो.....................।

दीनाक्रन्दनसे

मैंने मोहवश सासारिक मार्गे बन्धन और दुर्गतिका प्रधान कारण अनीतिपूर्ण विवाह भी कर लिया, जिससे उत्पन्न हुअे दुष्ट पुत्रोंने स्नेह जालसे मुझे भयकर नागपाशकी तरह घेर लिया है।

अुन दुष्ट (पुत्रों)के पालन-पोषणके लिअे विद्वान् होते हुअे भी मैंने अुचित और अनुचितका परित्याग करके तथा निन्दनीय कृत्योंका सहारा लेकर सैकडों अपमानोंसे विक्षुब्ध हृदय होनेपर भी बुरे राजाओंके दरवाजोंपर कुत्तेकी तरह पूछ हिलायी है।

कविने अिन श्लोकोंमें कष्टपूर्ण अपने घरेलू जीवनके सबन्धमें सकेत मात्र किया है। लोष्टकने अपने विवाहको 'अनीतिपूर्ण' बतलाया है। अिससे आभास होता है, कि अिन्होंने किसी तरुणीके प्रेमपाशमें फँसकर अन्तर्जातीय अथवा पारिवारिक अभिभावकोंकी अिच्छाके विरुद्ध प्रेम विवाह कर लिया हो। मेरी समझमें अनीति-पूर्ण विवाहका यही अभिप्राय हो सकता है। यह बात सत्य है कि कवि* की कभी प्रेमिकायें थी। अुन्होंने चक्करमें अिनका कुछ समय व्यतीत हुआ। अिनके लड़के भी अयोग्य थे, जिनके भरण-पोषणके लिअे अिन्हें बुरे राजाओंके राजदरबारकी शरण लेनी पड़ी। 'कदीश्वराणाम्'से किस राजाकी ओर अिनका अिशारा है, अिसका निर्णय करना कठिन है। 'कदीश्वराणाम्' के बहुवचनसे यह भी ध्वनित होता है, कि अिस स्वाभि-मानी कविको अपने परिवारके पालन-पोषणके लिअे अेक ही नहीं, कभी राजाओंके यहाँ जाकर दरबारदारी करनी पड़ी और अन्तमें अिनकी किसीसे नहीं बनी। यह तो निश्चित है, कि ये मङ्खकके भाओी लङ्कककी सभामें जाते थे। लङ्कक राजा तो नहीं किन्तु राजमत्री थे। अिन्होंने लङ्ककी चाटुकारीमें कुछ श्लोक लिखे है, जिनकी सख्या ग्यारह है। अुन श्लोकोंको 'श्रीकण्ठ चरित' काव्यके पच्चीसवें सर्गमें मङ्खकने अुद्धृत किया है। अुदाहरणार्थ—

मार्गे परस्य पथि वाक्यकथाप्रधानाम्,
मानस्य वर्त्मनि च कन्दलितामिवेक ।
राज्ञेव मन्त्रिवरलङ्कक ! भूषितदेव्या
सर्वाधिकारपदवीमधिरोपितोऽसि ॥

दीनाक्रन्दन'स

व्याकरणमें न्यायशास्त्रकी तर्कपूर्ण वाक्यावलीमें तथा सम्मानके क्षेत्रमें हे मत्रिवर लङ्कक ! देवी सरस्वती द्वारा राजाके समान अभिषिक्त होकर (आप) प्रत्येक क्षेत्रमें अधिकारपूर्ण स्थानपर बैठा दिये गये है।

कविको किस प्रकार कुछ अर्थलाभके लिअे अपने स्वाभिमानको तिलाजलि देकर 'लङ्कक सब शास्त्रोंके पंडित है" अिसकी घोषणा कर देनी पड़ी। हालाँकि सस्कृत साहित्यमें अिनका बनाया हुआ अेक अनुष्टुप् भी नहीं पाया जाता। किन्तु अपत्या अिनके भाअीकी गणना सस्कृतके अच्छे कवियोंमें होती है।

पद मानवको मदोन्मत्त बना देता है। लङ्कक मत्री थे। मत्रीभी प्राचीनकालमें अेक छोटा-मोटा राजा होता था। सस्कृतकी अेक कहावतके अनुसार 'स्तुतिप्रिया सन्ति च मन्त्रिलोका' अर्थात् मत्री लोग खुशामद पसन्द होते है। अिस परिस्थितिमें सस्कृतके स्तुतिवादी समा लोचकोंने जिस बाणभट्टके सबन्धमें[1] "कुछ लोग श्लेषात्मक रचनामें, कुछ शब्दोंके गुम्फनमें, कुछ रसकी अभिव्यक्तिमें, कुछ अलकारकी भरमारमें, कुछ सुन्दर अर्थके प्रकटीकरणमें तथा कुछ कथाके वर्णनमें कुशल होते हैं, किन्तु बड़े आश्चर्यकी बात है कि महाकवि बाणभट्ट तो गम्भीर कवितारूपी विन्ध्य-वनमें चतुरताके साथ भ्रमण करनेवाले तथा महान्कवि कुजरोंके मस्तकको विदीर्णकर्ता, वज्ररूपी सिंहके समान हैं" लिखकर बाणको कविकुजरोंके पराजेता बताया— अुसी बाणको अपने आगे कुछ न समझनेवाले तथा छह छह

---

*— देखिये-

'मैयस्यालुठित चिर चरणयो स्त्रीणां गुरूणां न तु ।
'दीनाक्रन्दन' से

१-श्लेषेकेचन शब्द गुम्फ विषये केचिद्रसे चापरेऽ-
लङ्कारे कतिचित् सदर्थं विषये चान्ये कथावर्णने ।
आ ! सर्वत्रगभीरधीरकविताविन्ध्याटवी चातुरी-
सचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पचानन ॥

भाषाओंके प्रकाण्ड पण्डित लोष्टककी लक्ष्यसे अन्तमें अनशन हो गयी। जो कुछ भी हो अिस कविका जीवन महान् संघर्षात्मक था, अिसमें अणुमात्र भी संदेह नहीं। सम्भवत जीवनके अिन्ही संघर्षोंने अिन्हें अपनी जन्मभूमि काश्मीर छोड़कर काशीमें सन्यासीका जीवन व्यतीत करनेके लिअे विवश किया हो।

मेरी तो धारणा है, कि यदि ये काशी न आये होते तो साहित्य-क्षेत्रमें अिनके अस्तित्वकी पूर्णरूपेण समाप्ति थी। अिन्होंने काश्मीरमें जिनन ग्रंथ लिखे, अुनमेंसे अिस समय अेक भी नहीं मिलता। काश्मीर सदियोंसे राजनीतिक अुथल-पुथलका मुख्य केन्द्र रहा। असम्भव नहीं, कि वहाँकी वसुन्धराने अिनके रत्नग्रंथोंको भी अपने अन्दर धारणकर लिया हो। 'दीनाक्रन्दन स्तोत्र' की रचना तो अिन्होंने काशीमें रहकर की थी। अिसीसे यह ग्रंथ बच भी गया।

अब अिस कविकी कुछ रचनाओंका आनन्द लें। कवि आशुतोष शंकरसे निवेदन कर रहा है—

दुर्वारसंसृतिरुजा भृशकादिशीक--
स्त्वामोषधिपतिभृत सुकृतैरवाप्य।
आवेदयामि यदहं तवतन्निदान
तत्राऽवधेहि मृप्मा कुरु मय्यवज्ञाम्॥
'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे

कठिन सांसारिक रोगोंसे (अत्यधिक परेशान होकर) भयके साथ तेजीसे भगा हुआ मैं औषधिपति ('चन्द्रमा') धारी तुमको पूर्वजन्मके पुण्य प्रभावसे प्राप्त करके (तुमसे) जो निवेदन कर रहा हूँ, तुम्हारा अुसके निदान (मूलकारण) की ओर ध्यान जाना चाहिये। हे भगवान् (शरणागत) अिस (जन) का तिरस्कार न करें।

अिस श्लोकमें 'औषधिपति' शब्दमें अत्यधिक चमत्कार है। संस्कृतमें औषधिपति वैद्यको भी कहते हैं। रोगी परेशान होकर वैद्यके पास रोगके निदानके लिअे जाता है और आशा करता है कि वह अुसे रोगसे मुक्त कर दे। अिसी प्रकार यदि सांसारिक रोगोंसे परेशान होकर लोष्टक भट्ट औषधिपतिधारी शंकरसे मुक्ति प्राप्ति करनेकी अिच्छा करता है तो यह अनुचित माँग नहीं।

अेक श्लोकका और रस लें। सारी तरुणाई तरुणियोंके कोमल भुजपाशकी छायामें व्यतीत करनेवाला अतअेव नैतिक दृष्टिसे समाजके सामने महान् अपराधी यह कवि सच्चाअीके साथ अपने अिस अपराधको स्वीकार करता हुआ शंकरसे सहायताकी याचना कर रहा है —

भ्रष्टोऽस्मि यद्यपि सतां चरितात्तथापि।
मां त्रातुमर्हसि कृतान्तभिया श्रयन्तम्।
नो साधवो विदधते सदसद्विवेकम्,
प्रह्वेषु विह्वलतया शरणागतेषु॥
'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे

हे भगवन् यद्यपि मैं साधुजनोंके चरित्रसे गिर गया हूँ अिसपर भी यमराजके भयसे आपकी शरणमें मैं आया हूँ। आप मेरी रक्षा करनेमें समर्थ हैं, क्योंकि परेशान होकर आये हुअे विनम्र शरणागतके विषयमें बड़े लोग सज्जन और दुर्जनका विचार नहीं करते।

कवि कितनी सीधी-सीधी भाषाके सहारे तर्कपूर्ण शैलीमें अपनी महायताके लिअे भगवान् शंकरसे हठ कर रहा है। अैसा प्रतीत होता है कि कोअी वकील जजके समक्ष अपने अभियुक्तको छुडानेके लिअे वकालत कर रहा हो।

राजदरबारोंकी चमक दमक, साहित्यिक-साधना तथा घरेलू अन्य समस्याओंमें सर्वदा व्यस्त रहनेके कारण कविको कभी भी भगवान् शिवकी सेवाका सुअवसर तो मिला नहीं। अिस दशामें क्षणिक सेवाके बलपर किसीसे कुछ पानेकी आशा करना कहाँ तक युक्तिसंगत है—अिसे कवि अपनी आलंकारिक शैलीमें दृष्टान्त देकर युक्तिपूर्ण सिद्ध करनेका प्रयत्न कर रहा है—

पूर्वं न चेद्विरचिता तव देव! सेवा,
तेनैव मेऽद्य हससे भगवनो मनागिम्।
किं प्रागतस्तु अिति प्रतिपन्नमूल-
च्छाय गतश्रमरुज न तरु करोति॥
'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे।

हे देव मैंने (जिसके) पूर्व तुम्हारी सेवा नही की। सम्भवत जिसीसे सकटमें पडे हुअे जिस व्यक्तिकी (तुम) रक्षा नही करते (यह अुचित नही है)। क्या वृक्ष, पहलेसे स्तुति न किये जानेपर अपने तले छायाके लिअे आये हुअे (बटोही) जनोकी थकावटको दूर नही करता ?

अिस श्लोकमें भट्टजीने अेक वृक्षका दृष्टान्त अधिक विचारके पश्चात् दिया है। यदि चेतनाहीन तरु पहलेसे अपरिचित पथिकाको शीतल छाया प्रदान करके अुसकी सहायता करता है, तो भगवान्! आप तो तरुकी अपेक्षा चेतनाशील है और आपका नाम आशुतोष (शीघ्र सन्तुष्ट होनेवाला) भी है– अत यातनामय जीवनयापन करनेवाले अिस दीनहीन जनकी प्रार्थना सुनकर अिसके कष्टको अवश्य दूर कर।

कवि भगवान् शकरके प्रेममें अपने सुध-बुधको भूलकर कितना तन्मय हो जाता है और अुसके मनकी क्या स्थिति है ?

> द्वारे लुठामि करुणं प्रलपामि शभो !
> वाञ्छामि चुम्बितमयो परिरम्यचत्वाम् ।
> वातूलतामुपगतोऽस्मि तवानुरागात्,
> हा दु सहस्त्वयि ममैव दृढोऽनुराग ॥
> 'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे।

हे भगवन्! मैं (तुम्हारे) दरवाजपर लोट रहा हूँ, (बडी) कारुणिक स्थितिमें विलख रहा हूँ और अुसके बाद तुम्हे पकडकर चूमनेकी अिच्छा करता हूँ। (अिस तरह) तुम्हारे प्रेममें मैं बातूनी-सा हो गया हूँ। क्या करूँ तुममें मेरा यह घनिष्ठ प्रेम तो अधिक असह्य होता जा रहा है। अैसा आभास होता है, कि कवि अपने आराध्य देव भगवान् शकरके प्रेममें अर्ध विक्षिप्त-सा हो गया है। अिष्टदेवके घनिष्ठ प्रेममें विक्षिप्त होना सच्चे भक्तका लक्षण है। जिस दशामें कविका बातूनी हो जाना स्वाभाविकही है।

राजसी शान शौकतसे रहनेवाले भगवान् विष्णुकी अुपासनाको छोडकर यह राजदरबारी कवि दिगम्बर शकरका अनन्य भक्त क्यों हो गया—जिसे पढ़िये —

> दिव्योत्तरीयभृति कौस्तुभरत्नभाजि,
> देवेऽपरे दधतु लुब्धधियोऽनुबन्धम् ।
> रूप दिगम्बर मखऽनुमुऽच्छ
> भावत्कमेव तु वतेश मम स्पृहार्यं ॥
> 'दीनाक्रन्दन' स्तोत्रसे।

सुन्दर दुपट्टा और कौस्तुभमणिकी मालाधारी भगवान् विष्णुका (कुछ प्राप्तिकी आशासे) अन्य लोभी जन (भले ही) अनुसरण करे, (पर) दिगम्बर आपका रूप जो अखण्डित नरमुण्डकी मालासे सुशोभित है—बडी प्रसन्नताके साथ मैं अुसीकी अिच्छा करता हूँ।

भट्टजीका यह स्तोत्र शिवजीके प्रति अिनकी अिसी प्रकारकी असीम-भक्ति और अटूट भाव धाराके द्योतक भावनाओसे ओतप्रोत है। सस्कृतमें स्तोत्रका भी विशाल साहित्य है। अिस कविके प्रदेशके निवासी जगद्धर भट्ट केवल "स्तुति कुसुमाजलि" लिखकर सस्कृतके महाकवियोमें[1] परिगणित किये जाते हैं। लोष्ठकका यह स्तोत्र भी अपने सफल शब्द विन्यास तथा हृदयस्पर्शी, स्वाभाविक अर्थगरिमाके बलपर सस्कृत-साहित्यका अमूल्य रत्न है।

अिनकी कुछ फुटकल रचनाअें भी सुभाषित ग्रन्थोमें पायी जाती हैं। काश्मीरी विद्वान् वल्लभदेव द्वारा सकलित[2] 'सुभाषितावली' में अुपर्युक्त स्तोत्रसे अेक श्लोक[3] 'कस्यापि' करके अुद्धृत है। बगाली पडित श्रीधरदासके[4] सदुक्तिकर्णामृतम् नामक सग्रहात्मक सुभाषित पुस्तकमें भी अिनका अेक श्लोक मिलता है। साहित्यिक दृष्टिसे सदुक्तिकर्णामृतम्में सग्रहीत अिनके अेक ही श्लोकका अत्यधिक महत्व है। श्रीधरदास बगालके विद्याप्रेमी राजा लक्ष्मण सेनके दरबारसे

---

१ निर्णय सागर प्रेस बम्बअीसे प्रकाशित।

२ अेजुकेशन सोसायटी प्रेस बाकुला बम्बअीसे प्रकाशित।

३—देखिये—

सुभाषितावलीका तीन हजार पाँच सौ छब्बीसवाँ श्लोक तथा दीनाक्रन्दनस्तोत्रका बाअीसवाँ।

४ मोतीलाल बनारसीदास (काशी) के यहाँसे प्रकाशित।

सबधित थे। 'सदुक्तिकर्णामृतम्'का[5] रचनाकाल १२०५ औ है। अिस ग्रन्थमें अिनकी कृति आ जानेसे यह सिद्ध होता है कि भट्टजी अपने जीवनमें ही अखिल भारतीय ख्यातिके कवि हो गये थे। यदि यह बात न होती तो १०८० औ के आस-पास समुत्पन्न अिस कविकी कृति वैज्ञानिक यातायात तथा मुद्रणालय सबधी सुविधाओंसे रहित प्राचीन कालमें कश्मीरसे बगाल अितनी जल्दी कैसे पहुँच गयी? सदुक्तिकर्णामृतम् सग्रहीत अिनका श्लोक अिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। किन्तु अिस कर्णामृतमकी अग्रेजी भूमिकामें अिसके विद्वान् सपादक डा० हरदत्त शर्मा अेम अे, पी-अेच डी. द्वारा अिस कविके बारेमें "नो अिन्फारमेशन" लिखा हुआ देखकर मुझे महान् आश्चर्य हुआ।

५ शाकेऽब्द सप्तविशत्यधिकशतोपेतदशशते शरदाम्।
श्रीमल्लक्ष्मणसेनक्षितिपस्य रसैकविशेऽब्दे॥
सवितुर्गत्या फाल्गुनविशेषु परार्थहेतवेऽकुतुकात्।
श्रीधरदासेन 'सदुक्तिकर्णामृतम्' चक्रे॥

—सदुक्तिकर्णामृतम्; ३२८ पृष्ठ।

डा महोदयकी अिस प्रकारकी विज्ञप्तिको अिस प्रेस-युगमे देखकर अुनकी परिश्रमशीलतापर तरस आता है। यदि अुन्होंने तनिक भी श्रम किया होता तो अिस प्रकारकी प्रमादपूर्ण बात न कहते।

लेख समाप्ति करनेके पूर्व पाठकगण कश्मीरसे बगालकी शस्यश्यामला भूमिमें पहुँची हुअी वर्षा वर्णन विषयक अुस कृतिको पढनेका कष्ट करें।

> व्याप्यान्तरीक्षककुभावनुभूभृदग्र,
> सान्द्रान्धकारगहनासु निशासु गर्जन्।
> संधीक्ष्यते विरहिण क अिह भ्रियन्ते
> वर्षासु विद्युदुरुदीपिकयेव मेघ॥
>
> 'सदुक्तिकर्णामृतम्' से।

वर्षाकी ऋतुमें पहाडकी चोटियोके पास आकाश और दिशाओंको घेरकर घने अन्धकारसे भरी हुअी रातमें गरजते हुअे मेघ अुस प्रदेशमें दीपकके समान चमकती हुअी बिजुलीके सहारे दिखलायी पड रहे हैं। अैसे समयमें (शायद ही) कोअी वियोगी जीवित रह सकता।

प्रेसका भूत

श्री प्रो हरिमोहन झा अेम अे

अुस दिन पडित गोनौर झाको अस दशाम देखकर म आश्चयचकित रह गया। यही वे पडितजी ह जो सदा नानसे लाल धोतीपर रेशमी चादर और महम पानका बीडा रख चलते थ। वही आज फटी धोतीपर मला कुचला गमछा रख हुअ ह ओठ सूख हुअ ह। जिन बालाम चमेलीका तेल चपचप करता रहता था अुन्हीसे अभी धूल अुड रही है।

मन पूछा—पन्तिजी आप तो बहुआअिन-साहिबाकी डयोढीम रहते ह न ?

पडितजी बोले—रहना था। परन्तु अब नही।

मन पूछा—सो क्यो ?

वे बोले—भाग्य !

मन कहा—आपकी तो खूब चल्ती थी। बल्कि अुस जगहके कर्ता धर्ता विधाता सब कुछ आप ही थ। फिर असी हालत क्यो ?

पडितजी बोले—यह सब ठीक है। बहुआअिन साहिबाकी मुझपर असीम कृपा रहती थी। यहातक कि स्टटकी तरफस लाखराज ब्रह्मोत्तर भी मिला था। मेरे रहने और भी कितन लोगोको वत्ति मिला करती थी। परन्तु अब कुछ नही —

बहिर्याति यदा लक्ष्मी
गजभुक्त कपित्थवत।

मन पूछा—सो क्यो पडितजी ? कुछ न कुछ कारण तो अव य होगा।

पडितजी बोले—कारण सोचिय तो कुछ नही और नही तो है बहुत कुछ। परन्तु अिस जगह बाते करना ठीक नही होगा ! अुस घाटपर चलिय।

हम लोग गगाजीके अकान्त घाटपर आय। पडित जीन गमछसे चबूतरा साफ किया। फिर मुझ नजदीक बिठाकर कहने लग—बात यह हुअी कि बहुआअिन साहिबाको अपनी वशावली छपानकी अिच्छा हुअी। यह काम मुझ सौंपा गया। मन अपन जानते जहाँतक हो सका खूब बढा चढाकर अुनकी प्रशसा लिखी। अुनके कुल परिवारम जो जो हो गय ह सबका गुणानुवाद किया। पढकर सुनाया तो बहुत प्रसन्न हुअी। आशा थी कि ग्रथ छप जानपर दरबारसे अितना पुरस्कार मिलेगा कि ज म भरके लिअ सारा दु ख दारिद्र्य मिट जाअगा। परन्तु हुआ ठीक अिसके विपरीत !

मेरी अुत्सुकता और बढ गयी।

पूछा—सो कसे ?

पडितजी बोले—मन वह सब अक प्रसमें छापनके लिअ दिया। आप तो जानते ही ह कि हम लोग पडित आदमी ह। कल-पुजकी बात विशष समझते नही। अुसन कहा कि—अक महीनम छापकर भिजवा दूगा। ५००) रुपय लगग।

रुपय दरबारसे मिले ही थ। मन अिस ख्यालसे कि अच्छी तरहसे छाप देगा रुपय अग्रिम ही दे दिय।

सोचा कि जबतक यह छपता है तबतक जरा वृन्दावनकी ओर घूम आअू। झूलनका समय था। मनम हुआ जरा कृष्णका रास देख आअू। परन्तु भाअी ! वही मरा काल बन गया।

मन पूछा—क्या पडितजी ! क्या प्रसन घोखा दिया ? समयपर नही छापा ? पडितजी बोले—आह ! यह बात होती तो क्या था ! परन्तु म जबतक वृन्दावनसे लौटकर आअू-आअू तबतक पुस्तक छपकर दरबारमें पहुच गयी।

मन कहा—तब कसी चिन्ता ? पन्तिजी बोले—अरे बाप ! सुनिय भी तब न ? म दरबारमें पहुँचा नही कि अन्दर हवेलीम बुलाया गया। अक ओर बहु आअिन साहिबा बठी थीं दूसरी तरफ अुनकी माँ। दोनोका चेहरा क्रोधसे तमतमाया हुआ ! यह दृश्य देखते ही मेरा तो प्राण सूख गया !

बहुआजिन कडककर बोली—आप जिस पत्तेमें खाते हैं अुसीमें छेद करते हैं ? असीलिअे दरबारसे वृत्ति मिलती थी ?

मैंने हाथ जोडकर कहा—सरकार, मुझसे कौनसा अपराध हुआ है ?

वे डाँटकर बोली—हम लोगोंके बारेमें जैसी-तैसी बातें छपवा आये और अब अनजान बन रहे हैं ?

मैंने भयका भाव बतलाते हुअे पूछा—कौनसी बात सरकार ? वे बोली—मेरे नामके पहले "वारागना" शब्द जोडते हुअे आपको शर्म नहीं आयी ?

तबतक अुनकी माँ डाँट-फटकार करने लगी—क्यों जी ! मेरे पिताजी 'वहलमान' (गाडीवान) थे ?

बहुआजिन चमकती हुअी बोली—और मेरे पिताजी मुर्गाके प्रेमी थे ? रण्डीकी अुपासना करते थे ?

अितनेमें न जाने किधरसे मैनेजर साहब फट पडे—क्यों जी ! मैं स्टेटको "लाहेब" (सत्यानाश) करता हूँ ? आपपर मुकदमा क्यों नहीं चलाया जाअे ?

मेरी तो सिट्टी-पिट्टी गुम ! मुँहसे आवाज ही न निकली।

बहुआजिन बोली—अितने दिनोंसे जिस दरबारका नमक खाते रहे, अुसके प्रति यह कर्त्तव्य अदा किया ? जाअिये, आजसे आप बरखास्त !

मैनेजर बोले—और अूपरसे मानहानिका दावा भी आपपर किया जाअेगा। हर्जानाकी नालिश भी !

मैं बहुत रोया-धोया। परन्तु सब व्यर्थ। बहुआजिन साहिबाने मेरे आगे किताब पटक दी और कहा—देखिये तो, ड्योढीके बारेमें आपने क्या लिखा है ? अिसे जो भी पढेगा क्या कहेगा ?

जो कुछ छपा था वह देखकर मैं भी काँप अुठा !

मैंने पूछा—क्या सब छप गया ?

पण्डितजी बोले—क्या कहूँ ? अैसा बेवकूफ छापाखाना था, कि पंक्ति-पंक्ति अशुद्ध छाप दी। "वीरागना" को 'वारागना', 'पहलवान'को 'वहलमान', 'दुर्गा'को 'मुर्गा', 'चंडी' को 'रंडी' ! मैंने लिखा था—"स्टेटकी तरक्की मैनेजर साहेब करते हैं।" सो "साहेब" को "लाहेब" कर दिया। बुच्चीकी प्रशंसामें लिखा था कि "ड्योढीमें बुच्चीकी शोभा देखकर लोग मुग्ध हो जाते हैं।" अुस जगह अैसी सर्वोक्ती बात छप गयी कि क्या कहूँ ? मेरे भाग्यका ही दोष !

मैंने पूछा—तब क्या हुआ ?

पण्डितजी बोले—मैंने कहा कि मैं अपने खर्चसे शुद्धि-पत्र लगा देता हूँ। परन्तु यह अुन लोगोंको मजूर नहीं हुआ। क्योंकि अनेक स्थानोंपर अत्यन्त अश्लील बातें छप गयी थी।

मैंने पूछा—वह क्या ?

पण्डितजी बोले—सभी बातें बोलने योग्य नहीं। मैंने अेक जगह लिखा था पण्डित-गुणीको 'डेरा' मिलता है। सो 'केरा' (केला) छप गया। अेक जगह था कि मैनेजर साहेब महिला विद्यालयके लिअे चंदा जमा कर रहे हैं। परन्तु मेरे फूटे भाग्यसे छप गया 'फंदा', जिसने अनर्थ कर दिया।

मैंने पूछा—तब अन्तमें क्या हुआ ?

पण्डितजी बोले—होगा क्या ? विधवाका दरबार ! लोगोंने बटा-चटा दिया। मुझे जो कुछ मिला था सब छीन लिया गया। बहुत हाथ-पैर पटकनेपर मुकदमा वापिस ले लिया गया।

मैंने पूछा—तो अब क्या कर रहे हैं ?

पण्डित गोनौर झा नस्य लेते हुअे सिर पीटकर बोले—करूँगा क्या ? अेक प्रेसमें प्रूफ संशोधकका काम मिल रहा है, सो करूँ या नहीं यही सोच रहा हूँ। आपकी क्या राय है ?

मैंने कहा—पण्डितजी, और जो चाहे कुछ कीजिये, परन्तु यह काम तो नहीं कीजिये। नहीं तो आपकी कृपासे कितने 'साहेब' 'लाहेब' हो जाअेंगे, 'पण्डित' 'खण्डित' हो जाअेंगे, 'अबला' 'प्रबला' हो जाअेंगी, 'अभुता' 'प्रभुता' बन जाअेंगी। 'वैश्य' को 'वेश्या' और 'वर-वधू' को 'वार-वधू' होते क्या देर लगेगी ? कितनी 'सुन्दरी' 'छुछुंदरी' बन जाअेंगी। यदि आपको दया हो तो यह काम न कीजिये।

पण्डितजी बोले—ठीक कहते हैं। जहाँ जरा भी आँखें चूकीं कि 'सूत्र' से 'मूत्र' हो जाअेगा। यह काम हम लोगोंके लायक नहीं। जिसको चावलका कण चुननेका अभ्यास हो वही प्रूफ-रीडरी करे।

मैंने कहा—अच्छा तो अब आज्ञा मिले। मेरी भी अेक पुस्तक प्रेसमें छप रही है, श्रीमान बाटजू साहबकी प्रशंसामें लेख है। कहीं आपकी वकावलीवाली गति हो गयी तो अनर्थ ही हो जाअेगा।

[मैथिलीसे अनुवादिका—श्रीमती सीता सिन्हा]

अीश्वर

बंगला : श्री काजी नजरुल अिस्लाम :

के तुमि खुँजिछ जगदीशे भाअि आकाश पाताल जुड़े
के तुमि फिरिछ बने जगले, के तुमि पाहाड़ चूड़े ?
हायऋषि-दरवेश,

बूकेर मानिक बूके धरे तुमि खोज तारे देश-देश।
सृष्टि रयेछे तोमा पाने चेये तुमि आछ चोख बूजे,
स्रष्टार खोंजो—आपनारे तुमि आपनि फिरिछ खुँजे,
अिच्छा-अन्ध ! आँखि खोलो, देख दर्पणे निज काया,
देखिबे, तोमारि सब अवयवे पड़े छे ताँहार छाया।
शिहरि अुठोना, शास्त्रविदेर करोनाक वीर, भय—
ताहारा खोदार खोद् "प्राअिभेट सेक्रेटारी" तनय !
सकलेर माँझे प्रकाश ताँहार, सकलेर माँझे तिनि !
आमारे देखिया आमार अदेखा जन्मदातारे चिनि !
रत्न लअिया बेचा केना करे वणिक सिन्धु कूले—
रत्नाकरेर खबर ता बले पूछो ना ओदेर भूले
अुहारा रत्न बेने,

रत्न चिनिया मने करे ओरा रत्ना करे ओ चेने !
डूबे नाअि तारा अतल गभीर रत्नसिन्धुतले,
शास्त्रना घेंटे डूब दाओ सखा, सत्यसिन्धु-जले।

हिन्दी : श्री कैलासविहारी सहाय :

कौन खोजते तुम अीश्वरको भटक-भटक अम्बर-पाताल ?
ढूँढ ढूँढ जगल-पर्वतमें, सखे, हुअे तुम व्यर्थ बेहाल।
हाय ऋषि दरवेश !

अुरका मानिक अुरमें ही था खोज रहे थे देश-विदेश।
सृष्टि तुम्हारी ओर देखती, आँख मूँद तुम करते ध्यान।
स्रष्टाका कर खोज, हाय, तुम निजका ही करते सधान।
अिच्छा-अन्ध ! आँख तो खोलो, देखो दर्पणमें काया,
देखोगे अपने सर्वांगोंपर पड़ती अुसकी छाया।
सिहरो मत, मत डरो देख *शास्त्रज्ञोंका दुर्जेय प्रभाव,*
अरे, खुदाके 'प्राअिवेट सेक्रेट्री' हैं क्या ये महानुभाव !
सबमें है आलोक अुसीका, सबमें वह सत्ता है व्याप्त
मुझे देख मेरे स्रष्टाका परिचय प्राप्त करो पर्याप्त।
सिन्धु किनारे रत्न वणिक रत्नोंका करते क्रय विक्रय
किन्तु भूलकर भी मत पूछो रत्नाकरका तुम परिचय।
रत्न बेचते हैं ये सब—बस रत्नोंकी करते पहचान,
और समझते हैं वे मनमें, रत्नाकरका हमको ज्ञान।
डूबे हैं वे नहीं कभी रे अतल रत्न-सागर तलमें,
शास्त्रोंको मत मथो, सखे, डुबकी लो सत्यसिन्धु-जलमें।

गीत

: श्री गिरधर गोपाल, अेम. अे. :

तुमने मुझको देखा मेरा भाग खिल गया।
मेघ छटे सूरज निकला हिल अुठीं दिशाअें,
दूर हुअीं पथसे बाधा मनसे चिन्ताअें,
तुमने अंक लगाया मेरा शाप धुल गया।
केंचुल छूटी आज नया मैं रूप रहा धर
ज्योति हृदयके भीतर ज्योति हृदयके बाहर,
तुम मुस्काअे सपनोंको आकार मिल गया।
धरतीके नूपुर नभकी बाँसुरिया बाजे,
मेरे आगे खुलतेसे जाते दरवाजे,
तुम कुछ बोले मुझको जीवन सार मिल गया।

गीत

: श्री 'नीरज', अेम. अे. :

परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया।

युग-युगसे निर्जीव शिला बन लेटी थी मिट्टीकी काया,
पथराअी सी चपल पुतलियाँ, ओठों पर हिम था जम आया,
फिर भी अुस दिन धड़कन बन छू गया हृदय जब प्यार तुम्हारा
विरह बिखरकर अश्रु बन गया, मिलन विहँसकर हास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

मुर्दा था साहित्य, कलाओं पर थी मौन अुदासी छायी,
जब तक ओ! मेरे करुणाकर! तुमको याद न मेरी आयी,
आधीरात मगर जिस दिन तुम मेरे लिअे सिसककर रोये
सब कवियोंका काव्य रच गया, सब जगका अितिहास बन गया।
तुम सोये सो गयी निशा तब, तुम जागे तो हुआ सवेरा,
सूरज भाल-सिन्दूर बन गया, अंजन-बन हो गया अंधेरा,
अधरों पर जो काल-फूल था खिला, वही जीवन-अुपवनमें—
झरझर कर पतझार बन गया, खिल-खिलकर मधुमास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

अेक वायुके झोंके सा बन भटक रहा जग-जीवन सारा,
कहीं न कोअी नीड़ मिला विश्राम, न कोअी संग-सहारा,
पर जिस दिन अतृप्त संसृतिकी सूनी प्यासी युग-बाहोंमें—
सिमट गये तुम धरा बन गयी, बिखर गये आकाश बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

तुमने क्या कर दिया कि गाने लगा आज मिट्टीका ढेला,
लगा दिया क्यों अिस नदिया पर अितनी नौकाओंका मेला,
तुम क्या हो, कैसे हो—है कुछ ज्ञात नहीं, बस यही पता है—
जन्म दे गया मोह तुम्हारा, और मरण सन्यास बन गया।
परस तुम्हारा प्राण बन गया, दरस तुम्हारा श्वास बन गया॥

मोहिनी अवतार

श्री लहरी, अेम अे

चिर अुदयके भोरसे
अमित आभाका सरल
नित्य नूतन, प्रति निमिप धुलता हुआ—
रूप लेकर, वर्ण लेकर
सुधा लेकर, स्वर्ण लेकर
सृष्टिके प्रति प्राणमें धुलता हुआ—
अेक निर्मल सत्य लेकर,
चिर अपावन, नित्य पावनके बहकते—
दो चरण धर—
आ गयी अुस छोरसे;
मर्त्यके वैपम्यमें रमती हुअी, थमती हुअी,
अधरपर टुक हँसीके छन्द-सी
अरुणिमामें झूमती, गोधूलिमें जमती हुअी,
टहलती आयी अमावस मन्द सी,
झरझरित, अुफनते, फेनिल, धुमड़ते,
ज्वार पूरित, अचल, अस्थिर, गहन-स्वरमें अुमड़ते,
निस्सीम लहरोंकी हिलोरोंमें, थपेड़ोंमें,
अुतरती आयी विहँसती-सी, विलसती-सी,
री चिरन्तन, केलिमयि!
गरजते जीवन अुदधिके तीरपर
आये चिर-अकल्पित प्रेयसी!
नृत्यमें डूबी, ठुमुकती-सी,
कटि किंकिणीमें गमकती-सी,
नूपुरोंमें घुँघुरुओंमें छमकती सी
कौन? हो तुम देवि, दानवि, रूपसी, रमणी,
विधात्री, वारुणी, वेश्या कि दुर्गा हो?
कि निपट निर्लज्जा, छलाकुल राक्षसी,
छद्मके सौन्दर्यकी साकार प्रतिमा?
ओ! अपरिचिते! कुछ तो कहो!
हास-रोदनके बदलते रागमें,
प्रीति, मिलनेके, विरहकी आगमें,
नैराश्यके नीरव तमावृत विजनमें,
चोटकी बौछारपर स्वप्निल, सजल
मदिर आशाके लहकते बागमें,
कौन हो? कविते, कलामयि! नर्तकी?
शिवा? अबला? विध्वसनी प्रलयकरी हो?
आज वाणीका हुआ है रुद्ध स्वर!
कहती नहीं क्यों? बोल दो!
प्रभजनके अूर्ध्वगामी वेगमें
अधके विकराल ताडवमें,
ज्वारमें, ज्वरमें, निपट भूचालमें,
गाज-सी गिरती सतीकी लाजमें,
ठिठुरी, बुभुक्षित, दलित, घूर्मित
अस्थिकी सुसकारती, भभरी हुअी आवाजमें
कौन हो? मगलमयी! लाछना जननी!
सुदरी, कल्याणि, कल्पना-सरसी!
सहज सरला हो कि क्या हो—
कहो तो—
तुम्हारा ध्यान मैं कैसे करूँ?
अिधर जीवन है, अुधर वह मरण भी,
दुख भरा है—
लहरता है यह—
कि जीवन घुल रहा है।
घहरता है यह—
कि जीवन धुल रहा है।
ठहरता है यह—
कि जीवन तुल रहा है।
फहरता है यह—
कि जीवन खुल रहा है।
साँस आती है—
कि जिसका दर्श आता है।
साँस जाती है—

कि जिसका वश चलता है।
साँसके आयातमें निर्यातमें
मैं तुम्हारी करुण मुद्राका,
तरुण मुद्राका
करुण मुद्राका
तुम्हारी मटकती-सी भंगिमाका,
तुम्हारी चटकती-सी रंगिमाका,
कुतूहल-पूर्ण कौतुकका
अनाहत वरद चितवनका
अमृत पीता हूँ,
विष नहीं पीता ! कहूँ ?
जब अभावोंमें निरन्तर आप जीता हूँ।
कभी सहसा परस पाकर
छिपा जाता हूँ—
जिसमें दुखसे कि जो भरपूर है।
दूर हैं सुखका—
कि सुख, दुखसे डरा है—
छलकता है ये—
कि जीवन पल रहा है।
ढलकता है ये—
कि जीवन ढल रहा है।
छलकता है ये—
कि जीवन छल रहा है।
झलकता है ये—
कि जीवन जल रहा है।
साँसके टुक तानपूरेपर
नृत्यकी हर झलका, हर तालका,
हर भावके भँवरे, सजे
थिरके, थमे, गूँजे, बने,
घनघनाते—
खोजते—
हर ख्यालका,
प्रतिघात पाता हूँ कि गाता, गुनगुनाता-सा,
मेघके अतर-अतलमें,
लहरने मन्थनकी संवेदनाका
राग करता है कि नूपुरके स्वरोंमें—
मैं तुम्हारे नृत्यके उपकरण-सा,
छनकता हूँ नित्य तेरे चरण-सा।

गीत जयके !

: श्री भवानीप्रसाद तिवारी, अेम. अे.

डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके।
मलय अनुनयके, प्रणयके, लय प्रलयके!

* * *

चल पड़ी पतवार तट छूटा सुहावन
अेक सुधि-सम्बल सहेजे परम पावन
रुक नहीं पाये लगन-बन्धन हृदयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके

* * *

लहर पर चालना तरी, पथ है अजाना
पवनके झोंके चले तो चल जाना
पल गया मधुर्य दो पलमें विनयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके

* * *

दृग दिखाये ढूँढ़ने जीवन-सहारे
नहीं मिल पाये नगीचके किनारे
सुन पड़े मझधारमें तब स्वर अभयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके।

* * *

मलय अनुनयके, प्रणयके लय प्रलयके
डूबकर मैंने लिखे हैं गीत जयके!

सीढ़ीका पत्थर

: श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव, अेम. अे :

जिस पत्थरसे देव बने तुम
अुस पत्थरका मैं टुकड़ा हूँ !

मेरी छातीपर चढ़कर दुनियाँ पैरोंकी धूल झाड़ती,
लोट तुम्हारे चरणोंमें आँसू से भीगे फूल चढ़ाती
आँख मूँदकर मानवकी परवशता गीत्र तुम्हारे गाती,
मन्दिरके आगे मेरी ममता अपना मुँह खोल न पाती !
कंधोंपर वैभवकी सत्ता लेकर
मैं चुपचाप खड़ा हूँ !

जिस दिनसे मानवने मानवका शासन स्वीकार किया है,
पत्थरने पत्थरसे निर्मित अपना कारागार किया है !
जिस दिनसे मानवने अपनी जड़ताको साकार किया है,
पत्थरने पत्थरपर चढ़कर मन्दिरमें अवतार लिया है !
अंधकारमें पड़कर तुम कुछ बने
और कुछ मैं बिगड़ा हूँ !

मानव मनमाना है चाहे जिसको वह भगवान बनाये,
वह शरीर केवल पत्थर है जिसके वशमें प्राण न आये !
मैंने अपने जीवनमें तुमसे कोअी वरदान न पाये,
पत्थर होकर भी तुम अपने पत्थरको पहचान न पाये !
टूट फूटकर `किसी लिअे
लज्जामें अपनी स्वय गड़ा हूँ !

त्याग असुन्दरता-अपनापन तुम चाहे जितने सुन्दर हो,
अरे अनश्वरता-अभिनेता, आखिर तो तुम भी नश्वर हो !
बाहरसे मैं जो कुछ हूँ तुम छिपे हुअे मेरे भीतर हो,
मैं पत्थरका पत्थर हूँ, पर तुम पत्थरके आडम्बर हो !
विद्रोही बनकर मैं कितनी बार
सीढ़ियोंसे अुखड़ा हूँ !

पहाड़ी सुंदरी

: श्री आरिफ :

१. नेरे पोशन छुय छलित, सुलि आसे दुरदानिसे,
   विगनी वनवुन साज, यन्दराउन छक्से वायानिसे।
२. तार कोज़मह डह राबधि, जुनि नॉविथ यान मेंज़,
   मौरकन मेंज़ चूनि, जिर-जिर आसी-ख असमानिसे।
३. बोलि रग-र छय कनस, मेंज सोज़ नौ-र मेंज़ मनम,
   मेंज़ वनस हेरि शबनमम, सपय ज़ाती-ख पद्मानिसे।
४. रेश त गुपने विरह कयम, सुन्ज़ बेराह चानिये हरि छीठ,
   मीयठ करि करि नियेठ नरि बोना डियडये तम्बलानिये।
५ सोत कदम तुल, कोत गसुन छुसी, बोज़से वनै फेर वुय,
   गयमम छुसी सदरस जु छल, दोनवन छहन दीशानिसे।
६. नाजनीनी दीन कम छुक, कीन रोम छुसी सीन माफ़,
   छुक बेयन हुन्द मल छलान, छुसी दाग मा आरानिसे।
७ तह दी हेयन आवम, ममर वॅनी खोत मग्र विपरम अन्दर,
   रावह रावख क्याज़ी वॅल, आसुन पनुनु जानानिसे।

अनुवाद :—

[ऐ प्रियतमा, तुम जंगली फूलोंका मुंह धोकर सबेर-सबेर ही आ गयी हो। तुम अप्सराओंके गीत गाती हो और झिङ्गका स्वर्गीय संगीत हो।

तारोंने अपनी किरणोंसे चन्द्रमाको स्नान कराया और तू नाचती-गाती पृथ्वीपर प्रकट हुई।

भिन्न भिन्न बोलियोंकी गूंज तेरे कानोंमें गूंज रही है और हृदयमें नित नयी पीडाओंको समोये हुये तू बहती रहती है। तूने शबनमके साथ ही बीच जगलमें जन्म लिया।

ऋषि और गवाल्ने क्यों अभीतक तेरे ऊपरी किनारा पर मौजूद हैं ? मैदानी प्रदेशोंमें तुमने पुन्यआत्मा ध्वनियोंको अपने पानीको चूमने दिया और तुम्हारा संयम टूट गया।

धीरेसे पग बढाओ, तुम्हें जाना कहाँ है ? अच्छा तो यह है कि तुम लौट आओ। समुद्र दो भागोंमें बँट गया है, और दोनों भागोंपर मस्ती छाई हुई है।

तुम्हारे विचार कितने निर्मल हैं ? डाह और द्वेषसे रहित तुम्हारा हृदय कितना सुकोमल है ! तुम औरोंकी मलिनता दूर करती हो, किन्तु तुम्हारे आँचल पर कोई धब्बा नहीं है।

पानीको तहमें बैठ लेने दो। अभी इसमें बडी तीव्रता है। इन भँवरोंमें क्यों पडना चाहती हो ? ऐ प्रियतमा, तुम अपना व्यक्तित्व क्यों मिटाना चाहती हो ?]

अनुवादक — घनश्याम सेठी

(शेषांश पृष्ठ ७९६ के आगे)

त्रिपदी नामक छन्दमें नीति धर्मकी अनूठी बातें सुनाकर कन्नड़ साहित्यका भण्डार अलंकृत किया। सर्वज्ञ आशु कवि थे और अुनकी सूक्तियाँ लोकोक्तियोंकी भाँति आजकल भी जनताकी जीभपर नाचती रहती हैं।

कर्नाटकका लोकजीवन कितना सुसंस्कृत और मधुर है, अिसका परिचय कन्नडके ग्राम गीतोंके द्वारा मिलता है। यद्यपि रचयिताओंके नाम धाम आदिका पता नहीं चलता तो भी ग्रामगीत बड़ी ही प्रचुर मात्रामें मिलते हैं। भाषाकी सरसता, रचना चातुर्य, विषयकी विविधताकी दृष्टिसे कन्नडके ग्राम्यगीत अुत्तम साहित्यके अंतर्गत आ जाते हैं। अिन गीतोंको महत्ताको समझकर अब कअी लेखकोंने अिस दिशामें काम करना आरम्भ किया है और अिस लोक साहित्यकी आलोचना और मूल्यांकनके लिअे सामग्री जुटानेका बीडा अुठाया है।

कर्नाटकके राजाओंके दरबारोंमें कन्नडके कवियोंका सदा आदर रहा और प्रोत्साहन भी मिलता रहा। मान्यखेटके राष्ट्रकूट राजा व विजयनगरके राजा कन्नडकी श्रीवद्धिमें भरपूर योग देते रहे। राष्ट्रकूट राजा नृपतुंग स्वयं कवि थे। तलप और अरिकेसरी प्रभृतिने कवियोंको प्रोत्साहन देकर काव्य रचनाकी परम्परा चलायी। चाअुण्डराय जैसे सेनापतियोंने भी ग्रंथ रचकर साहित्य प्रेमका परिचय दिया। बसव भी कुछ समयतक बिज्जळ नामक राजाके यहाँ सेनापति थे—असी जनश्रुति है। विजयनगरके राजाओंने अपने शासन कालमें ललित कलाओंकी वद्धिके लिअे कैसा प्रोत्साहन दिया था, यह बात अितिहास प्रसिद्ध है ही। तिरुमलने विजयनगरके दरबारमें रहकर ही भारत जैसे अति लोकप्रिय काव्यकी रचना की। किंतु जैसे ही विजयनगरका वैभव सूर्य डूब गया वैसे ही बहुत से छोटे मोटे राजा जहाँ-तहाँ सिर अुठाने लगे और कन्नड देश छिन्न भिन्न होकर बँट गया तथा देशमें सर्वत्र अशांति बढ़ी जो साहित्यके विकासमें बाधक सिद्ध हुअी।

मैसूरके नरेशोंके अभ्युदयके साथ साथ फिरसे कन्नड साहित्यका वृक्ष हराभरा होने लगा। मैसूरके चिक्कदेवराय स्वयं कवि थे और अुन्होंने गीत गोपाल नामक भक्ति रसपूर्ण ग्रंथ रचकर कर्नाटकमें भक्ति साहित्यकी परम्परा फिरसे चलायी। चिक्कदेवरायके दरबारी कवियोंमें तिरुमलार्य प्रमुख थे, जिन्होंने चिक्कदेवरायकी वंशावली नामक अेक ग्रंथ गद्यमें और अप्रतिमवीर चरिते नामक अलंकार ग्रंथ पद्यमें रचकर अपनी बहुमुखी प्रतिभाका परिचय दिया। अिनके अतिरिक्त अिस कालके कवियोंमें सिंगराय और चिक्कुपाध्यायके नाम अुल्लेखनीय हैं। सिंगरायका लिखा हुआ मित्रविंदगोविंद अपने ही ढंगकी अेक सुन्दर कलाकृति है। चिक्कुपाध्यायकी प्रतिभा बडी ही प्रखर थी। अुन्होंने जितने ग्रंथ लिखे हैं, अुतने शायद ही अबतक और किसी कन्नडके कविने लिखे हों। अिनके सभी ग्रंथोंमें वैष्णव सम्प्रदायोंके तत्वोंका प्रतिपादन हुआ है। विष्णु पुराण, दिव्य सूरि चरिते अिनके रचे हुअे ग्रंथोंमें अति मुख्य हैं। चिक्कदेव रायके अन्तःपुरमें होनम्मा नामक अेक दासी थी जो महलके साहित्यिक वातावरणमें रहनेके कारण स्वयं बडी भावुक बन गयी थी। असने हृदिबन्देय धर्म नामक अेक रसपूर्ण काव्य सांगत्य छन्दमें रचा, जिसमें स्त्री पुरुषके सम्बन्धका अनूठे ढंगसे निरूपण किया गया है। अिस प्रकार चिक्कदेव रायके कालमें कन्नड साहित्यको अेक नयी स्फूर्ति मिली। अिस कालकी अेक विशेषता यह थी कि या तो अधिकांश कवि ब्राह्मण थे या ब्राह्मण धर्मसे प्रभावित थे। अिसलिअे सन १६०० से सन १९०० तकका काल ब्राह्मण कालके नामसे प्रख्यात हुआ। चिक्कदेव ओडेयरके अुपरांत मुम्मडि कृष्णदेवराय गद्दीपर बैठे। अिनके समयमें पूर्ववत् ही कन्नडके लिअे प्रोत्साहन मिलता रहा। स्वयं कृष्णदेवरायने श्रीकृष्ण वाणी विलास भारत नामक अेक वृहत् काव्यका निर्माण किया। अिसी राजाके दरबारमें केम्पुनारायण नामक अेक कवि थे, जिन्होंने जनप्रिय मुद्राराक्षस का कन्नडमें अनुवाद किया। चामराज ओडेयरके प्रोत्साहनसे फलस्वरूप कअी संस्कृत नाटकोंका अनुवाद हुआ। बसवशाली जो चामराज ओडेयरके दरबारी कवि थे संस्कृत नाटकोंका अनुवाद करनेके कारण अभिनव कालिदासके नामसे मशहूर हुअे। अिनका अनूदित शाकुंतल नाटक अति लोकप्रिय है। अिनकी देखा देखी कविओंने संस्कृत नाटकोंका कन्नडमें अनुवाद करनेका कार्य शुरू किया।

अुन्नीसवीं शताब्दीके अंतमें कन्नडका आधुनिक काल शुरू होता है। अंग्रेजी भाषा और साहित्यके सम्पर्कमें आनेके कारण कन्नड साहित्यकी सर्वतोमुखी अभिवृद्धि हुअी। आधुनिक कन्नड साहित्यके विकासकी गतिविधिका अितिहास काफ़ी रोचक और बड़ा है।

कन्नड़से अनुवादक—श्री प्रो हिरण्मय अेम अे सा र.

सिन्धी लघुकथा :

देशभक्त मारवी

: श्री दौलतराम शर्मा :

भारतवर्षने अैसे-अैसे अनोखे रत्न पैदा किये हैं जिनकी मिसाल संसारमें ढूंढनेसे बहुत कम मिलती है। मारवी भी अुन रत्नोंमेंसे अेक थी। जिसकी गाथा प्रेम, तप, त्याग, रूप-लावण्य और शील आदि सद्गुणोंसे पूर्ण है। हम भारतवासी अुपरोक्त गुणोंके लिअे स्त्री जातिकी शिरोमणि सीताका स्मरण करते हैं। मारवी भी पुण्य-स्मरण योग्य है। दोनोंमें अन्तर अितना ही है कि अेक राजा मिथिलेशकी राजकन्या, दशरथकी राजवधू और राजा रामचन्द्रकी राजरानी, तो दूसरी अेक गरीब किसानकी बेटी, गरीबकी मँगेतर और अेक अत्याचारी नवाब द्वारा कुअेंपर पानी भरते समय अपहरण की हुअी अबला थी। दोनोंको बन्दी जीवन बिताना पडा। रावणकी अशोक वाटिकामें अेकको, तो दूसरीको जालिम नवाबकी कैदमें। अेकको मुक्ति मिली असंख्य वानरोंकी सेनाके सरदारों हनुमान, सुग्रीव, अंगद आदि द्वारा तो दूसरीको बन्दी जीवनसे छुटकारा मिला अपने त्याग, तप और शान्तिसे।

विजय पा लेनेके बाद, जहाँ राजा रामचन्द्रने सीताको अेक धोबीके वचन मात्रसे त्याग दिया था, तब रावण जीवित न था, जो अुस धोबीके गालपर जोरका थप्पड जमाता और बताता कि सीता सती है, निर्दोष है, वहाँ मारवीके पतिने अुसपर शंका की और जब यह बात नवाबके कानोंतक पहुँची तो, वह सेनाको लेकर पहुँचा और मारुसे सबके सामने अुसको अपनी पूज्य बहन बनाया।

रमणी रत्न मारवीके चरित्रको सिंधके अनेक कवियों और लेखकोंने गद्य-पद्यबद्ध किया है। मीर जाहिर मुहम्मदने भी जिसने सिन्धका अितिहास १६२१ में लिखा, अिस घटनाका अुल्लेख किया है। बादके लेखकोंने, जो कुछ लिखा, जान पडता है, अिसी अितिहासका आधार लेकर लिखा। यह बात भी प्रसिद्ध है कि नवाब खान-खानान जब सिन्धके अेक मुख्य नगर ठट्ठाको अपने अधिकारमें कर लिया, तो वह कअी सरदारोंको लेकर अकबरके दरबारमें पहुँचा। वहाँ मारवीका जिक्र आया। तब खानखानाने अेक कविसे कहा कि बादशाहको मारवीका चरित्र सुनाओ। कविने बादशाहको खुश करनेके लिअे कुछ मनगढन्त बातें शुरू कीं, जिसपर अकबर सख्त नाराज हुआ। तब आये हुअे सरदारोंमेंसे मिरजा जानीबेग नामक सरदारने बादशाहको सारी सच्ची घटना कह सुनायी, जिसे सुनकर अुनकी आँखोंमें आँसू भर आये।

कहते हैं कि शाह अिनायत पहले कवि थे, जिन्होंने अिस घटनाको सिन्धीमें अवतरित किया और शाह अबदुल लतीफको सुनाकर अुनमें प्रेरणा भरी कि वे 'मारवीके गीत' कहें। ये गीत आज समूचे सिन्धमें बडे प्रेम और दर्द भरे दिलके साथ गाये जाते हैं। अुनकी वह रचना 'शाजो रसालो' के नामसे प्रख्यात है और जिसमें "सुर मारवी" नामक अेक बाब (अध्याय) है, जिसमें सारी घटना बडे ही मार्मिक ढंगसे वर्णित है। घटना अिस प्रकार है —

अुमर सूमरो नामका अेक नवाब अमरकोटमें राज्य करता था। अुसके राज्यके मलीर नामक अेक गाँवमें पालन नामका अेक पनिहार रहता था। माँडवी नामकी अुसकी स्त्री थी। दोनों पति-पत्नी पशुपालनका काम करते थे। आज भी प्राय: अुस जिलेके बाशिन्दोंका धन्धा पशुपालन ही है। भाग्यसे अुनके अेक पुत्री हुअी, जो कविके शब्दोंमें अितनी सुन्दर थी कि अुसका वर्णन असम्भव है। पद्मिनीके समान शरीरका रंग, बिजलीकी तरह, प्रकाश सूर्य जैसा, अैसी परम सुंदर लडकी पाकर मारू लोग प्रसन्न थे और अुस बालिकासे प्रेम करने लगे, अिसलिअे अुसका नाम मारवी पड गया। वह सयानी हुअी।

पालनका नौकर मारवीपर मोहित हो गया। वह चाहता था कि मारवीकी शादी अुससे कर दी जाअ। मगर पालनको यह मजूर न था और लडकीकी मँगनी अपने अक स्वजातीय नौजवानके साथ कर दी। फोग अिससे नाराज होकर अमरकोटके अुमर सूमरोके दरबारमें पहुँचा और प्रार्थना की कि वह अुमरसे अकांतमें कुछ अर्ज करना चाहता है। दरबार बरखास्त किया गया और फोगने अुमरके आगे मारवीकी अपूर्व सुंदरताका वर्णन किया और अुसे अिस बातके लिअ तैयार किया कि वह मारवीको भगा लाअ। अुमर जो प्रजाका रक्षक बना हुआ था भक्षक बन गया। वह अपने साथियों और फोगको साथ लेकर डाकू लुटेरोंकी तरह अुस किसान सुंदरीका अपहरण करने चल पडा।

\+ + + +

प्रातःकालका समय था। शीतल हवा बह रही थी। सूरज आसमानकी सीढियोंपर चढनेकी अभी अँगडाअियाँ ले रहा था। मलीर गाँवके किसान अभी जागे न थे। अुस समय दो औरतें कुअेपर पानी भर रही थीं। अुनमेंसे अक परम सुंदरी मारवी थी। अितनेमें कुछ दूरसे कुछ ओठी (राहगीर) अुस तरफ आते दिखायी दिये।

मारवी कुछ डरी तो सहेलीने ढाढस बँधाया कि डरती क्यों हो? ज्यादासे ज्यादा वे लोग हमसे पानी माँगेंगे। हम अुनसे देश देशांतरके समाचार पूछेंगे। अितनेमें वे लोग कुअेके पास आ पहुँचे। फोग बडा कमीना था। औरतोंको अकेला पाकर अुसने नवाबको अिशारा किया। नवाबने असा सुंदर रूप यौवन कभी जीवनमें देखा न था। कुछ क्षण तक वह अकटक मारवीके रूपरसका पान करता रहा। फिर अुसने अपनेको सँभाला। मारवीसे पानी माँगा और पानी पीनेके लिअ अपने अूँटको जमीनपर बैठाया। ज्यों ही मारवी पानी पिलाने पास आयी कि नवाबने अपनी बाहुओंमें पकडकर अूँटपर बैठा लिया और अमरकोट लाकर अपने राजमहलोंमें बंद कर दिया।

\+ + +

अिधर जब यह मारुओंने सुना कि अुनकी अिज्जत आबरूपर अिस प्रकार हमला हो रहा है तो वे ददसे चीख अुठे, कोअी बराबरीका होता तो दो दो हाथ निपट लेते पर जब बाड ही खेतीको खाना शुरू कर दे तो बेचारी खेती क्या करे। प्रजाका रक्षक ही भक्षक भस्मासुर बन गया! गरीब किसान लाचार पस्त हिम्मत होकर घर पर बैठ गये। लाज भी गयी और लोकहँसी भी हुअी।

अुधर मारवी जब राजमहलमें बंद हुअी तो अुसने सत्याग्रह किया। अुमर रोज समझाता लालच दिखाता पर अुस लडकीपर कुछ भी प्रभाव न पडा। वह हर वक्त घरकी मिट्टी घरके पशु घरके लोग सखी-साथिनोंको यादकर-करके रोती रहती। कअी दिन कअी महीने गुजर गये। दशा बहुत बुरी होती गयी। बालोंमें कंघी नहीं की नहाया नहीं। कपडे फटे चिथडे हो रहे हैं। कपडे बदलनेको कहा जाता है तो अुसका अक ही जवाब होता है कि जो कपडे अुसके देशमें नहीं बने अुन्हें पहनना तो दूर वह हाथ भी न लगाअेगी।

खाने पीनेकी बढिया चीजें चाँदी सोनेके थालमें सजाकर अुसे ललचाया जाता है मगर वह अुन मीठे मिष्टान्नसे जहरको लाख अच्छा समझती है और रोकर कहती—मेरे माता पिताका घोर अपमान हुआ है। मैं मर गयी होती तो अनकी बेअिज्जती न होती।

\+ + +

वह मेघोंकी बौछार द्वारा पक्षियों द्वारा और हवाओं द्वारा अपने मारुओंको संदेशा भेजती है। पर अुसकी हाय पुकार कोअी नहीं सुनता।

अुमर मारवीको महलसे जलमें डाल देता है। काराकी नाना यातनाअें सहती है आशाअें टूट जाती हैं। अुसे आशा थी वह दिन आअेगा। अुमर अपनी करनीपर पछताअेगा तब मैं अपनी अिन आँखोंसे अपना गाँव घर कुटुंब-कबीला और प्यारी सहेलियोंको देखूँगी। अुसने अन्न जल तक छोड दिया और अुसका चाँद सा मुखडा पीला पड गया। अिस तरह मृत्यु शैयापर पडी मारवीको देखकर अुमरका हृदय पिघल अुठा। अुसका जी भर आया। वह पश्चात्ताप करने लगा कि मैंने बडा नीच काम किया— अक बेगुनाह औरतको सताया। अुस नीच फोगके कहे में आकर अपनी प्रजा अबलाको सताया।

अक दिनकी भी देर न कर नवाब अुमर ने मारवीको अुसके मँगेतरको खुशी खुशी सौंप दिया और अुसने अुन दोनोंसे माफी माँगी।

अुत्कलका—'यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दासकाठिया'

: श्री अनुसूयाप्रसाद पाठक :

यह देखा जाता है कि आनन्दका अुपभोग करना ससारमें जीव मात्रके लिअे अेक जरूरी वस्तु बन गयी है। यहाँ तक कि पेड पौधोंतकमें भी अिस विषयके रसको रसास्वादन करनेकी क्षमता है। सुख दुख व्यक्त करनेके भाव है—और अुनकी भाषा भी है। रात और दिनके प्रकृति परिचालित कार्य-कलापके अन्दर, कौन किससे प्रेम करता है, कौन किसे देखकर खुश होता है और किसे देखकर दुखी– यह कमल और कुमुदिनीके भावोंसे जाना जा सकता है। अेक सूर्यको देखकर हँसता है, खुश होता है तो दूसरा दुखी होता है। जो दिनमें सूर्यको देखकर दुखी होता है वही रातको चन्द्रमाको देखकर खुश भी होता है। अुस समय सूर्य प्रेमी अपना मुख लटका लेता है। चकौडे आदिके पत्ते शाम होते ही मुरझा जाते हैं। तरोअी आदिके फूल शामको ही खिलते हैं, मुस्काते हैं। अुसकी 'वह चितवन कुछ और है जेहि बस होत सुजान"—अिस प्रकारके आनन्द और शान्ति-पूर्ण वायुमण्डलमें नीरव-रव करते जो अपना जीवन बिताते हैं, अुनका भी समाज है और साहित्य है। शाम-सबेरे चिडियोंकी चहक और मींगुरोंकी झकार, अुनके कार्य कलापका निदर्शन नहीं तो और क्या है? और व्यक्ति तथा समाजके कार्य कलापका चित्रण ही तो साहित्य है।

साहित्यिक जीवन बितानेके लिअे यही जरूरी नहीं, कि जो साक्षर हो, साहित्यिक रसका रसास्वादन करनेके वे ही अधिकारी हों। अिसके लिअे दिल, दिमाग और अनुभूतिकी भी आवश्यकता है।

जब पेड़-पौधों तकमें अिस प्रकार साहित्य चर्चा होती है, तो नरोंमें और भी अधिक क्यों न होगी?

अिस प्रकारका लोक-साहित्य भारतके प्रत्येक प्रान्तमें, गाँव तथा नगरोंमें है। गाँवोंमें रामायण, महाभारत, भागवत तथा सत्यनारायणकी कथा, देवी-देवोंका पूजन-गायन तथा अुनके कार्योंकी चर्चा और आलोचना अेक प्रकारकी साहित्य-चर्चा है।

अुत्कल प्रान्त अन्य प्रान्तोंकी अपेक्षा अिस कलामें अत्यन्त निपुण अुतरेगा, कम नहीं। कारण, भजन-पूजन, संगीत-वाद्य और पुराण पाठ आदिके अलावा यहाँ साहित्य-चर्चा करनेके अनेक साधन गाँव-गाँवमें हैं। और फिर अैसी चर्चाअें अैसे व्यक्तियोंके जरिये की जाती हैं जिनको मामूली अक्षर-ज्ञान है, अधिकांशोंको तो वह भी नहीं। "यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दास काठिया" अुत्कलकी अपनी विशेषताअें हैं। यात्राको हम रामलीलाके साथ जोड सकते हैं। लेकिन साधारणतः यह भिन्न है। किसी अेक राजाके चरित्रको लेकर अुसके जीवनकी घटनाओंको, अुसकी भाषामें व्यक्त किया जाता है। यह रातके ९–१० बजेसे शुरू होती है, तो सबेरे ४ से ७ तक खतम होती है। ग्रीष्म-ऋतु अिसका समय है। अिसके लिअे खास किसी मचकी आवश्यकता नहीं होती यह तो आकाश-वितान-तले, प्रकृतिकी गोदमें हुआ करता है। कभी-कभी चन्द्रमा अिस अुत्सवको देखकर हँसता है तो कभी घनान्धकार। अुस समय आकाशमें चमकनेवाले असख्य तारा-गणोंको देखकर तम और अिन्द्र तथा गौतममुनिके सम्वादकी साहित्यिक या पौराणिक कथाकी कल्पना की जा सकती है। लेकिन जब यात्राकारियोंकी ढोलकी और मृदग बजते हैं, तो दर्शकोंकी कल्पना अुधर थोडे ही जाती है। वह तो निस्तब्ध अँधेरी निशाके शान्त वातावरणमें निकलते हुअे अलनिदूर विषनिजसे टकराकर सभा जाती है—अेक नवीन गमक गमका कर।

यात्राके कलकार अधिकांश 'बाअुरी' होते हैं, जो हरिजनोंकी जातियोंमें अेक है। बालकसे बूढे तक अिसमें भाग लेते हैं। ये लोग स्त्री-पुरुषोंका अभिनय बड़े ही सुन्दर ढगसे करते हैं। ये अपने अपने कार्यमें अैसे दक्ष होते हैं कि अुसीमें तल्लीन हो जाते हैं। नारीका अभिनय करते-करते नारीमय बन जाते हैं। और अुन्हें साधारण कालमें भी किसी औरतके साथ बातचीत करते

देखेंगे, तो देखते ही पहचानेंगे कि स्त्री है या पुरुष। यह व्यवहार, चालढाल और भाव-भंगीसे कभी भाँप न सकेंगे— कि यह कौन है।

बाल-गतिके शिकार बनकर बेचारे कुछ नारीवेश धारण कर कलकत्ते आदि नगरोंमें ढोलकी बजाकर नाचते, गाते और अपनी जीविका अुपार्जित करते हैं।

पाला—यात्रासे भिन्न है। अिसमें ५-७ आदमी होते हैं, अिनके वेश भी विचित्र होते हैं। अेक मुखिया (गायक) होता है, जो काव्य छन्दोंका नाना प्रकारसे अर्थ करता और अुन्हें गाता है। बाकी अुसके सहायक होते हैं। कुछ बाजा बजाते और कोई लम्बा स्वर बनाकर अुस गायनमें मधुर ध्वनि तथा मुखियाके अर्थमें हुँकारी भरते हैं। यात्राकी अपेक्षा अिसमें साहित्यिक आलोचनाकी आवश्यकता अधिक होती है। अर्थकी व्यंजना, शब्दाडम्बर, कलात्मक अुक्ति-चातुर्य मुखकर होता है। ये छन्दोंके अर्थ करनेमें निपुण होते हैं। अिसका यह अर्थ नहीं, कि अिनकी आलोचना साहित्य-भण्डारकी चिरस्थायी प्रामाणिक वस्तु समझी जाती है, फिर भी अुनकी मजेदार हास्य रसात्मक काव्य चर्चा सुननेके लिअे अच्छे-अच्छे साहित्यिक लालायित रहते हैं। समय समयपर अिस कलाके लिअे अिनकी कद्र भी होती है।

अिस दलका सहारा और धंधा कुछ नहीं है। जगह-जगह बुलाये जाते हैं और धन पानेपर जाते हैं। धर्म और त्यागका अुपदेश अिनके सामने जीविका-निर्वाहका प्रश्न होता है। अिनका कार्य ४-६ घंटेसे अधिक नहीं होता।

आरम्भिक अुपासना अिनकी अपनी कला है। संगीतज्ञ जिस प्रकार तमूरा और तबला मिलाते-मिलाते श्रोताओं, दर्शकोंमें रस पैदा करता है ठीक अुसी प्रकार अिनकी आरम्भिक प्रार्थनाका हाल है। प्रार्थनाके अन्तमें झट मुखिया आ जाता है और कहींसे भाषाके पदको पकड़कर अर्थ गान शुरू कर देता है।

गोटिपुआ—*'गोटिपुअ' अेक प्रकारका बालकोंका* संगीतमय नाच है। अुसमें बालक नाना प्रकारके नृत्य करते हुअे जनताका मनोरंजन करते हैं। दिन भरके थके माँदे कर्म-क्लान्त व्यक्ति खिन्न मन लिये जीवन-यापन किया करते हैं और कभी-कभी मनोरंजनार्थ "गोटिपुआ" नाचका आयोजन करते हैं। जिसमें संगीत-कला, वाद्यकला तथा नृत्यकला प्रधान वस्तु मानी जाती है। अिसकी मूर्च्छनायें दिलको हरा करती हैं। थोड़ी देरके लिअे क्लान्ति दूर होकर मनमें हरियाली लहराने लगती है। आनन्द मग्न दर्शक वृन्द अपने-अपने घर लौटते हैं। अिसे हम ललित कलात्मक साहित्य चर्चा कह सकते हैं।

दासकाठिआ—ये अेक प्रकारके कथा वाचक हैं। पात्र दो होते हैं। अेक गायक दूसरा अुसका सहायक। ओड़िआ सारला महाभारतके १६ अुपाख्यान जो, संस्कृत महा-भारतमें नहीं हैं, अिनकी गायनकी मुख्य वस्तु है। आख्यानोंको रोचक बनानेके लिअे अन्यान्य कवियोंकी सुन्दर कवितायें भी अिसमें जोड़ी जाती हैं। महा-भारतकी अेक विशेषता है, कि अुसमें अनेक सुन्दर मौलिक कहानियाँ हैं। दासकाठिआ दल अिन्हें तिकोई बाजा बजाकर रोचक ढंगसे गाता है। अिनके ताल, राग और साज बाज आकर्षक होते हैं। बीच-बीचमें विश्राम हास्योत्पादक सामाजिक कथा भी कहते जाते हैं। जब केवल गायक सुस्तानेका अिशारा करता है, तब अुसका सहायक लोकोड़ा बजा बजाकर— 'जै हरि हरि राम नवीन सुन्दर श्याम'—भजन गाकर जनता तथा भक्त-मण्डलीका मनोरंजन करता है।

अिनका सम्मान सभी श्रेणीके लोगोंमें होता है, लेकिन अुत्कलके ग्रामोंमें ये बहुत सम्मान और धन पाते हैं।

अूपर यात्रा, पाला, गोटिपुआ और दासकाठिआका *जो अति संक्षिप्त परिचय दिया गया है वह* अुत्कलके ग्रामोंकी देन है। यात्रा और बालकोंका नाच तो मेलोंमें भी हुआ करता है लेकिन अिसे भी अुत्कलकी देन मान लेना अुदारता और सभ्यताका सम्मान ही समझा जावेगा।

मेरा तो विचार है—अिन चार प्रकारके मनोरंजन साधनोंका भारतके सभी प्रान्तोंमें प्रचार होना चाहिये।

तुच्छ !

: श्री प्रबोध सान्याल :

[बंगला]

मासराबे दिदिमार माडा पाओआ याय।
तारं घुम नेअि, घुम तार आसे ना।
तिनि डाकेन, जेगे आछो मा, विनु ?
ओदिक थेके अुत्तर आसे केन, मा ?
तोमार मने आछे ओ महलेर कोनेर घरे सेअि
वोष्टमदेर ? की गानअि गाअितो तारा।
अेखनो काने शुनछि।
मा बलेन, सब मने आछे।
दिदिमा बलेन सेअि मेयेटाके कोत्थेके येन धरे
अेनेछिल। की मारधरअि करतो।
मेयेटार आचार व्यामार किन्तु भालोअि छिल।
मा बलेन पोडारमुखिर ज्ञानबुद्धि छिलना किछु।

ओअि पर्यन्तअि। दिदिमाओ चुप, मायेर ओ आर कोनो माडा नेअि। पोडारमुखिर कथाटा आमिओ बिन्तु भुलिनि। मेयेटार नाके तिलक, हाते अुल्कि लेखा हरे कृष्ण, माथार खोंपाय बेलफुलेर माला, चोख दुटोय येन घुमेर भाव, परने थान कापड, मेयेटार साडा-भोदा गा, मेअि गा थेके चन्दनेर गन्ध पेतुम। कीर्तनेर कलि थाकतो तार मुखे दिनरात, आर से गान गाअिले आमादेर अंदरे मजलेर हात देके काज पडे येतो। अेकदिन बाडी छेडे तारा चले गेल, किन्तु तार माथुरेर गान सेअि थेके अेअि बाडीर बुकेर तलाटाके टनटनिये तुलतो। कीर्तनेर मेअि कान्ना रेखे गेछे ओअि कोनेर घरेर हाओआ-याय।

ओरअि पाशेर घरेर सेअि बेपुन कलेजे पडा फ्रमी मेये दुटोके मने पडे। तारा वयसे अनेक बड़। तादेर बापेर नाम रमाकान्त काकाटिया। तारा आसामेर लोक, अेखाने अेसेछिल लेखापडार सुविधेर जन्य। मने पडछे कोनो दिन कथा बलेनि तारा। तारा सम्भ्रान्त तारा शिक्षित, तादेर पोषाकेर आभिजात्य। काछा-काछि गिये दाडियेछि दयार चोखे देखे सरे गेछे निजेदेर मध्ये विद्रूपेर हासि हेसेछे निजेदेर भाषाय, किन्तु सम्भ्रमेर चक्षे ओदेर देखेछि। दुजने पारतुम की घृणाकी कृपा आमादेर ओपर। की कठिन हासि मारानो थाकतो ओदेर मुखे। गोलाप फुलेर मतन चेहारा, किन्तु येन गुडनो रंगीन कागजेर फुल। ओदेर चोख दिये आमरा निजेदेरअि देखतुम, आमरा की काङाल, की अकिंचन, की निर्बोध। यतदिन तारा छिल ओअि बड घरे, ततदिन ओदेर घृणा करे बेडियेछि।

[हिन्दी]

अनुवादक : श्री मन्मथनाथ गुप्त

[श्री प्रबोध सान्याल बंगलाके प्रसिद्ध अुपन्यासकार हैं। अुन्होंने बहुतसे अुपन्यास लिखे हैं। कभीके

फिर भी बन चुके हैं। नीचेकी पंक्तियाँ तुच्छ नामके अेक संग्रहसे हैं जिनमें दो स्त्रियोंका वर्णन है।]

आधी रातके समय नानीकी आहट मिलती थी। अनको नींद नहीं नींद नहीं आती थी वह पुकारती थी—बेटी बिनु जाग रही हो?

अिधरसे अुत्तर जाता था—*क्या माँ बात क्या है?*

—तुम्हें याद है अुस हिस्सेके कोनेके कमरेमें जो वैष्णव रहते थे? क्या खूब गाने गाते थे। अब भी जैसे सुन रही हूँ।

माँ कहती थी—सब याद है।

नानी कहती थी—न जाने कहाँसे अुस लड़कीको पकड़ लाये थे। और अुस पर कितनी मारपीट करते थे। पर लड़कीकी चालचलन अच्छी ही थी।

माँ कहती थी—जन्मसेही में ज्ञानबुद्धिका अभाव था।

यहीं तक (बात होकर रह जाती थी)। नानी भी चुप हो जाती थी, और माँ की भी कोअी आहट नहीं मिलती थी। (कथित) जन्मसेहीकी बात मैं भी नहीं भूल सका था। अुस स्त्रीकी नाकपर तिलक बना रहता था, हाथ पर हरेकृष्ण गुदना गुदा था, जूरमें बेलाकी माला लटकती रहती थी अुसकी आँखोंमें जैसे (हर समय) नींद बनी रहती थी, बिना किनारेकी सफेद साड़ी पहनती थी अुसका बदन साधा-सादा (लावण्य युक्त) था और अुससे चन्दनकी (भीनी-भीनी) गंध आती रहती थी। अुसकी जीभपर हर समय कीर्तनकी अेक कड़ी बनी रहती थी और वह जब गा अुठती थी तो हमारे अिधरके लोग काम छोड़ कर खड़े हो जाते थे। अेक दिन वे मकान छोड़कर चले गअे पर (जिससे क्या) अुसके गानेके तरसे अिस मकानके अन्तस्थलमें बराबर अेक हूक सी पैदा करते हैं। कोनेके कमरेकी हवामें वे मानो कीर्तनकी अुस टीसको छोड़ गये हैं।

अुसीके बगलके कमरेमें रहनेवाली बेथून कालेजकी छात्रा-दो बड़ी लड़कियाँ भी याद आती। अुनकी अुम्र बहुत काफी थी। अुनके पिताका नाम रमाकान्तका कटिया था। वे आसाम की थीं और यहाँ पढ़ने-लिखने की सुविधाके लिअे आयी थीं। स्मरण आ रहा है कि किसी भी दिन अुन लोगोंने हमसे बातचीत नहीं की। वे सम्भ्रान्त और शिक्षिता थी, (तिसपर) कपड़े लत्तोंका आभिजात्य था। कभी कभी मैं पास जाकर खड़ा हुआ, तो वे अनुकम्पाकी दृष्टिसे देखकर दूर हट जाती थी। वे आपसमें अपनी भाषामें विद्रूपकी हँसी हँसती थी, फिर भी हम अुन्हें अिज्जतकी निगाहसे देखते थे। हम समझ पाते थे कि हमारे वे कितनी घृणा और कितनी कृपा रखती थीं। अुनके चेहरेपर कैसी कठोर हँसी रहती थी। गुलाबके फूलकी तरह चेहरे थे पर (जैसे बनाअे रहती थी कि) सूखे रंगीन कागजके फूल मालूम होते थे। अुनकी आँखोंमें हम अपनेको ही देखते थे हम कितने कंगाल कितने अकिंचन कितने निर्बोध थे। जबतक वे अुस बड़े कमरेमें थी, तबतक हम अुनकी घृणाके पात्र बने रहे।

अिस अंकके सम्बन्धमें :

'राष्ट्रभारती'का यह "सम्मेलन विशेषांक" हम अपने प्रेमी पाठकोकी सेवामें अत्यत विनय और आदर पुरस्सर अुपस्थित करते है। अिस अकमें जो कुछ भी अच्छाअी आ सकी है, वह 'राष्ट्रभारती' के शुभेच्छु सहृदय-समर्थ लेखको अेव सुरुचि-सम्पन्न पाठकोकी सद्भिलाषा और हार्दिक सहयोगका फल है। सन्त तुलसीके शब्दोमें कहें—'राम निकाअी रावरी है सब ही को नीक'। जो कुछ त्रुटियाँ रह गयी है वे हमारी अयोग्यताके ही कारण रह गयी। हम जैसा विशेषाक निकालना चाहते थे, हमें खेद है, वैसा नही निकाल सके। क्षमध्वम्! 'राष्ट्र-भारती'लोकप्रिय अन्तरप्रान्तीय समग्र भारतीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करनेवाली पत्रिका है। प्रत्येक सुरुचिके शिष्ट पाठकको अुसकी अपनी सुरुचिकी सामग्री अिसमें पढनेको मिलती है।

'राष्ट्रभारती' को पढनेसे पाठक अन्दाज लगा सकते है कि किस नीति-रीतिसे, किस भावनासे, हम भारतकी राष्ट्रभाषा, राजभाषा, हिन्दीकी सेवा करना चाहते है। जिस हिन्दीको अमीर खुसरो, कबीर, तुलसी, सूर, नानक, रहीम और रसखानकी अमृतमयी वाणीका बल मिला हो; और जिसे भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र, दयानन्द, गान्धी, महावीर प्रसाद और प्रेमचन्दकी समस्त चेतना और जीवन-साधनाकी शक्ति मिली हो—अुस हिन्दीमें हम कविकुलगुरु रवीन्द्र गुरुदेव, वल्लात्तोल, सुब्रह्मण्य भारती, खाडेकर, विश्वनाथ सत्यनारायण, कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, मेघाणी, बेन्द्रे, जोश मलीहाबादी, अमृताप्रीतम, बरुआ, अुडियाके अपने कुजविहारीदास आदि-आदि महानुभाव, जो शब्दो और अर्थोमें अुनकी चेतना व्यक्त करते हैं; जिन-जिन भाषाओंका प्रतिनिधित्व करते है, भारतके जन-जनकी बोली बँगला, मराठी, गुजराती, असमिया, अुडिया, अुर्दू, काश्मीरी, पजाबी, तेलुगु, तमिल, कन्नड, मलयालम आदि भारतीय भाषाओंका सम्पूर्ण सबल लेकर समूचे समन्नत राष्ट्रकी अेक भाषाका रूप देना चाहते है। 'राष्ट्रभारती' को राष्ट्रका हम अैसा स्वच्छ सुन्दर दर्पण बनाना चाहते है, जिसमे राष्ट्रभाषा अपना स्वस्थ अेवं सुन्दर मुखबिम्ब निहार सके।

हमारा विश्वास है, अेक राष्ट्र-भाषाके विना, सारे राष्ट्रकी अेकता हो नहीं सकती, भारत अुन्नत राष्ट्र बन नही सकता, सुख, शान्ति और शोभा राष्ट्रमें नही आ सकती।

अिस अकमें, श्री बाबूराव विष्णु पराडकरजीका, काका साहब गाडगीलजीका सक्षिप्त परिचय हम दे सके है, जो भारतकी विभूतियोमेंसे है। अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके अधिवेशनमें श्रद्धेय पराडकरजीका सम्मान और माननीय काका साहब गाडगीलजीकी अध्यक्षता,

–दोनों बातें, देशका और हिन्दीका, महान् सम्मान करना है। राष्ट्रभक्त बाबू श्रीप्रकाशजी और डॉ पट्टाभि सीतारामय्या अिस आयोजन, राष्ट्रीय-यज्ञ समारम्भके अुद्घाटक, अुद्घोषक हैं। समस्त हिन्दी जगत् अुनपर अपना स्नेहादर सिंचन करता है।

जिस महात्माने, जिस राष्ट्रपिताने हमें यह धन्य-दिवस दिया, हमें दृष्टि दी, हमारी आँखें खोली हम अुनके ऋणसे अुऋण कदापि नही हो सकते।

चर्चाका स्वागत :

गत सितम्बरकी 'राष्ट्रभारती' के अंकमें भाषा विज्ञानाचार्य डॉ० सिद्धेश्वर वर्माजीका अेक पत्र हमने प्रकाशित किया था। वह पत्र "साहित्यावलोकन" (साहित्य भवन लिमिटेड प्रयाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक) के लेखक श्री विनयमोहन शर्माको लिखा गया था। वह पत्र हमारे पास श्री सिद्धेश्वरजी द्वारा दिल्लीसे सीधे ही प्रकाशनार्थ प्राप्त हुआ था। अुसमें साहित्य सम्बन्धी कुछ प्रश्न अुठाये गये हैं, जिनपर *पाठकोंके मतका हम सहर्ष स्वागत करेंगे।*

स्पष्टीकरण :

श्री अनिलकुमार 'साहित्य रत्न' ने अुक्त अंकमें प्रकाशित सम्पादकीयमें ऋषि दयानन्द सरस्वतीके सम्बन्धमें लिखी हुअी पंक्तिकी ओर हमारा ध्यान खींचा है। स्पष्टीकरण यही, कि ऋषिका जन्म गुजरात सौराष्ट्रके अेक छोटेसे देहात टंकारा नामक गांवमें हुआ था। अिसलिअे वे जन्मना गुजराती, मातृभाषा अुनकी गुजराती, देश गुजरात, कर्मभूमि यों अुनकी सारा भारत ही, किन्तु पंजाब और अुत्तर प्रदेश तो विशेष रूप में।

ह० शा०

अँग्रेजीका मोह :

अभी पटनामें भारतीय हिन्दी-परिषद्‌के अधिवेशनमें दिये गये अपने अध्यक्षीय भाषणमें अुत्तर प्रदेशके राज्यपाल साहित्य वाचस्पति श्री कन्हैयालाल मा. मुन्शीने अँग्रेजीको अति शीघ्रतासे दूर करनेकी प्रवृत्तिके विरुद्ध चेतावनी दी है। अुनका कहना है कि अिससे भाषा सम्बन्धी प्रान्तीय भावनाओंको अुत्तेजन मिलेगा, हमारी राष्ट्रीय भावनाअें दुर्बल होंगी और विज्ञान आदि *विषयोंका शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त करनेमें असुविधाअें* तथा अडचनें पैदा होंगी। अिसका अर्थ यह नही कि वे हिन्दीका प्रचार नही चाहते। वे कहते हैं कि हिन्दीका प्रचार अुत्साहपूर्वक किया जाअे, साहित्य तथा अुसकी शास्त्रीय ग्रंथ समृद्धि बढायी जाअे और अिसके लिअे जितना भी बन पडे, प्रयत्न किया जाअ, परन्तु अँग्रेजीको निकाल बाहर करनेकी बात करना अुपयुक्त नही।

अँग्रेजीके पक्षमें श्री मुन्शीजीका अिस तरहका कथन कोअी नयी बात नही है, परन्तु *अिस समय अुन्होंने जिन जोरदार शब्दोंमें यह* कहा है, अुससे अुनका यह विचार बडी चर्चाका विषय बन गया है। यह स्वाभाविक है कि अुनका अिस तरह अँग्रेजीका पक्ष लेना, किसी भी राष्ट्रभाषा-हिन्दीके प्रेमीको अखरेगा। यह नही, कि अुनकी दलीलोंमें कुछ तथ्य नही, बहुत कुछ तथ्य है। अंग्रेजी ब्रिटिश साम्राज्यकी भाषा थी और वह साम्राज्यकी भाषाके रूपमें ही हिन्दपर लादी गयी थी। अिसलिअे जब हम यह कहते हैं कि भारतके स्वतन्त्र हो जानेके बाद, अब जहाँ पहले अँग्रेजी चलती थी, वहाँ राष्ट्रभाषा हिन्दी चलनी चाहिये, पहले हाअीस्कूल तथा कालेजोंमें अँग्रेजीमें पढ़ाअी होती थी, तो अब हिन्दीमें होनी चाहिये,

अदालत तथा कचहरियोंमे भी अँग्रजीका स्थान हिन्दीको मिले, तो अिसका परिणाम यह होता है कि लोग अँग्रेजीके साथ जिस प्रकार साम्राज्य-वादका सम्बन्ध जोडा करते थे, अुसी प्रकार हिन्दीके साथ भी साम्राज्यवादका सम्बन्ध जोडने लगते है। अिससे हिन्दीको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है।

प्रान्तीय भाषाओंके साहित्यिकों तथा राज-नीतिक पुरुषोंको अपनी-अपनी भाषाओंको समृद्ध बनानेका और अुन्हे अूँचा-से-अूँचे पद दिलानेका मोह हो, तो अुसे हम अनुचित नही कहेगे। अिन लोगोंको भय है कि यदि सब स्थानोपर हिन्दी ही का अुपयोग होने लगा तो अुनकी मातृभाषाको अुचित स्थान नही प्राप्त हो सकेगा और वह समृद्ध न बन सकेगी। अिस भयके कारण भाषा-कीय प्रान्तीय भावनाअें जोर पकडती जा रही है, जो हमारी अेक राष्ट्रीयताके लिअे बडी ही खतरनाक चीज है, अिसमें सदेह नही।

हिन्दी अँग्रजीकी तरह अितनी समृद्ध भी नही कि अुसके द्वारा सभी प्रकारके विषयोंका सम्पूर्ण अध्ययन किया या कराया जा सके। अिसके लिअे हमें किसी विदेशी भाषाकी सहायता लेनी ही पडेगी और क्योंकि हमारे शिक्षित वर्गकी शिक्षा अबतक अँग्रेजीमें हुअी है, अिसलिअे अँग्रेजी ही हमारे लिअे विशेष अुपयोगी हो सकती है—यह बात भी निर्विवाद मानी जाअेगी।

हमें यह भी नही भूलना चाहिये कि हम अेक सक्रान्तिकालमें है। सक्रान्तिकालमें अैसी अनेक कठिनाअियाँ और समस्याअें अुपस्थित होती है, जिनका सुलझाना कठिन ही नही, असम्भव प्रतीत होता है। कभी तो अैसा लगता है कि अुन्हे जितना सुलझानेका प्रयत्न किया जाअेगा, वे अुतनी ही अधिक अुलझने पैदा करेंगी। श्री मुन्शीजीका यह सुझाव अवश्य स्वागत करने योग्य है कि हमें हिन्दीके प्रचारपर, अुसको समृद्ध बनानेपर ही अधिक जोर देना चाहिये। किसी भी रचनात्मक कार्य प्रवृत्तिमे 'यह नही करना चाहिये' कहनेके बदले 'यह करना चाहिये', कहना ही अधिक अुपयोगी होता है। अुससे कार्य करनेकी प्रेरणा मिलती है और नाहक विरोध नही पैदा होता।

परन्तु आजकल बार-बार अँग्रेजीकी प्रशसा सुननेको मिलती है और मनमें सदेह होता है। श्री मुन्शीजीके भाषणने भी अिसी प्रकारका सदेह पैदा किया है। अँग्रेजीकी अितनी प्रशसा और अुसको रखनेके आग्रहके पीछे क्या भावनाअें कामकर रही है—अिसका अनुमान किया जा सकता है। अँग्रेजी भारतकी राष्ट्रभाषा, आतर-प्रान्तीय व्यवहारकी भाषा नही बन सकती—अिसे स्वीकार कर लेनेके बाद भी जब बार-बार अँग्रेजीके महत्वकी बात कही जाती है, अुसे बनाये रखनेकी चर्चा भी कुछ लोग करते है, तब यही शका होती है कि वे केवल अपना या अपने स्तरके लोगोंका ही विचार करते है, राष्ट्र या राष्ट्रकी जनताका वे विचार नहीं करते। जनता, जनताकी शिक्षा, जनताके हृदयके भाव—अिन सबका यदि विचार किया जाअे, तो अँग्रेजीकी प्रशसा और अुसके बनाये रखनेकी दलीले केवल सारहीन ही नही, विकृत दृष्टिकी भी प्रतीत होगी।

भारतीय संघके राज्योंका पुनर्विभाजन :

मद्रासमें भाषानुसार प्रान्त रचनाके प्रश्न-पर भारतके प्रधान-मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरूने अपने विचार बडी स्पष्टता पूर्वक प्रजाके सम्मुख रख दिये। काँग्रेसने कअी वर्षोंसे भाषा-नुसार प्रान्त रचनाके सिद्धान्तको स्वीकार किया

हुआ है। परन्तु आज असके लिअे जिस प्रकार आन्दोलन चलाया जा रहा है और अैसी पुनर्रचना बहुत जल्दी करनेपर जो जोर दिया जा रहा है, वह अवश्य चिन्ताका विषय है। श्री नेहरूने स्पष्ट कहा है—'मै केवल भाषा-नुवृत्त प्रान्तोका ही विचार करनेके लिअे तैयार नही हूँ। लेकिन मैं अिसी वक्त सारे भारतका विचार करनेके लिअे तैयार हूँ— सारी बातोको ध्यानमें रखकर और भाषा सम्बन्धी सास्कृतिक और अन्य बातोको दृष्टिमें रखकर विभिन्न राज्योका पुनर्गठन कैसे किया जाअे—यह सोचना है, जिससे कमीशन भारतके लोगोके सामने पूरी तसवीर पेश कर सके।"

'भाषानुसार प्रान्तरचनाका सिद्धान्त हमारी दृष्टिको सकुचित बना देता है और हमें भारतके प्रति कम तथा अपने राज्यो या प्रान्तोके प्रति अधिक सजग बनाता है। अगर अिसका यही नतीजा हो, तो यह बुरा नतीजा है। हम सबसे पहले और सबसे ज्यादा ध्यान सम्पूर्ण राष्ट्रका होना चाहिये। अिसे ही राष्ट्रीय चेतना कहते है, वरना आम लोग सकुचित और प्रान्तीय दृष्टिवाले बन जाते है। भले हम भारतके किसी भी हिस्सेसे क्यो न हो, जब हम भारतके बाहर जाते है, तब हममें भारतका स्याल ही ज्यादा मजबूत होता है। लेकिन अगर आप अपने राज्य, जिले या शहरका विचार करते रहे तो देशकी भावना अितनी मजबूत नही हो सकती। मैंने हमेशा यह महसूस किया है कि भारतकी स्वतत्रता प्राप्त करनेके बाद दूसरी मजिल-भावना और मनो-वैज्ञानिक आधारपर अिस अेकताकी सिद्धि होगी।

"मै भारतके लोगोको अुनके दिमागो, आदतो या विचारोको अेक साचेमे ढालनेकी जरा भी अिच्छा नही रखता। अैसा करना घातक होगा। मै चाहता हूँ कि भारतकी समृद्ध-विविधता कायम रहे और भारतका हर हिस्सा अपनी आदतो और जीवन तथा विचारोकी विविध पद्धतियोके अनुसार अपना विकास करे। लेकिन अुसे भारतीय अेकताके नकशेका जरूर स्याल रखना चाहिये। अगर हम अिस दृष्टिमे अिस महत्वपूर्ण समस्यापर विचार नही करेगे, तो अेक मजबूत राष्ट्रके रूपमे आगे नही बढ सकेगे। अिसके फलस्वरूप अतीतमें हमने जो बुरे दिन देखे है, वैसे ही फिर देखने पड सकते हैं।

अेक से अधिक लिपि सीखो :

बम्बअीमे हिन्दुस्तानी प्रचार सभाके अुत्सवमे भाषण करते हुअे राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र-प्रसादने कहा कि भारतीय सविधानमें अेक लिपि-नागरी लिपिको स्वीकार किया है, फिर भी अुर्दू लिपि सीख ली जाअे, तो अच्छा है और दक्षिण भारतकी भी कोअी अेक लिपि सीख लेनी चाहिये।

आज हमारे यहाँ अनेक लिपियाँ प्रचलित है, अिसको स्वीकार करना होगा। बलपूर्वक हम किसी लिपिको हटा भी नही सकते है। अैसी परिस्थितिमें जो लोग जनतामें काम करना चाहते है, अुन्हे नागरीके अलावा दूसरी लिपियाँ भी सीखनी पडेंगी और जो लोग स्वेच्छासे अैसा करेगे, वे धन्यवादके पात्र होगे। परन्तु प्रश्न यह है कि सविधानमे केवल नागरी लिपि स्वीकार की गयी है तो अुसीका सर्वत्र प्रचार क्यो न किया जाअे? कुछ समय पहले प० जवाहरलाल नेहरूने भी, आसाममे अुन्हे जो अनुभव हुआ, अुसपरसे यह कहा था कि भाषाअे विभिन्न प्रदेशोकी विभिन्न रहनेपर भी, यदि अुन सबकी अेक लिपि हो, वे अेक नागरी लिपिमें लिखी जाअे, तो बहुत

सुविधा होगी। यदि अैसा हो तो जिसका अेक परिणाम यह भी होगा कि विभिन्न भाषा भाषी जनताका अेक दूसरेसे सम्पर्क बढेगा और वह अेक दूसरेके अति निकट आ सकेगी। जिस दिशामें कुछ प्रयत्न भी हो रहे है, लेकिन ये प्रयत्न बहुत ही नगण्य है। जिनके लिअे संगठित और बडे पैमानेपर प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है। परन्तु जबतक सभी प्रान्तके लोग अपनी-अपनी लिपिका मोह छोडकर केवल नागरी लिपिको अपनानेके लिअे तैयार नही होंगे, तबतक हमें दूसरी लिपियाके सीखनेका कुछ-न-कुछ प्रयत्न करना ही होगा—जिसमें सन्देह नही।

हिन्दी-भवन-दिल्ली :

यह हर्षका विषय है कि दिल्लीमें हिन्दी-भवनकी स्थापना हो गयी। हम अुनका स्वागत करते है। कअी दिनोंसे जिसकी चर्चा हो रही थी, परन्तु अब अुनकी नींव पड गयी और वह नींव डाली गयी है भारतके केन्द्रीय-नगर दिल्लीमें। दिल्लीमें हिन्दीके विद्वानो तथा प्रेमियोकी कमी नही और दिन दिनों पार्लमेंट या विधान-सभाकी बैठक होती है, अुस समय वहाँ भारतके अच्छे-से-अच्छे हिन्दीके विद्वान तथा हिन्दी प्रेमियोकी अुपस्थिति रहती है। हिन्दीका प्रचार और अुसको समृद्ध बनानेके लिअे साहित्य-निर्माण-कार्य दोनों प्रकारके कार्य आज अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी-भवन द्वारा ये दोनो कुवार रूपसे सम्पादित हो सकेंगे। हम आशा करते हैं कि हिन्दी-भवन जिन दोनो प्रकारके कार्योमें मार्गदर्शकका काम करेगी। प्रचारका कार्य तो कुछ संस्थायें अच्छी तरहसे कर ही रही है। परन्तु सबकी अपनी-अपनी मर्यादा होती है। प्रचार-कार्य अैसा कार्य है, जिसमें छोटे-बडे सब योग दे सकते है, परन्तु अुनमें काम लेनेवाला कोअी हो। १५ वर्षमें केन्द्रीय सरकारके सब विभागोमें हिन्दीको अुसका अुचित स्थान दिलाना हो, तो दिल्लीमें ही बहुत काम है। ३५००० से अधिक भारत सरकारके हिन्दीतर-भाषी कर्मचारी है, जिन्हें हिन्दी सिखानेकी आवश्यकता है। हिन्दी-भवन जिस दिशामें बहुत कुछ कर सकता है।

परन्तु प्रचार कार्यसे कही अधिक महत्वका कार्य है 'साहित्य-निर्माणका' और यह कार्य अैसा है कि अुसे सब लोग कर भी नही सकते। जिस कार्यको तो हिन्दीके सम्पन्नाय साहित्यिक ही कर सकते है और हिन्दी-भवनको तो अैसे ही लोगोंका विशेष सहयोग मिलेगा। यह भी कह सकते है कि यह संस्था अैसे लोगोंकी ही होगी। यदि वे सब राष्ट्रके नामपर, हिन्दी तथा हिन्दके समृद्धिके नामपर कुछ अपने श्रमका तथा प्रतिभा का दान करे, तो यह सब कभी आशाओंसे सफल हो सकता है।

—मो० भ०

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे   अर्धवार्षिक ३॥)   अेक अंकका मूल्य १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं !

'राष्ट्रभारती' का तीसरा वर्ष जनवरी ५३ से ही शुरू हो चुका है। तीसरे वर्षका यह ग्यारहवाँ (नवम्बर मासका) अंक आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु. मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी पी और रजिस्ट्री चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पडोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती सुन्दर साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अवश्य अपना सहयोग बढावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिये दस आना मात्र।

पता :— व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन !

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी चौडी नहीं होनी चाहिये, कृपया अिसका खयाल रखें। आपके हार्दिक सहयोगके लिअे राष्ट्रभारती बहुत आभारी होगी।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो, और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्रद्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें; तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिये टाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें —

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशकः— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस,— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा।

'राष्ट्रभारती बिहार, राजस्थान मध्यभारत हैदराबाद और भोपाल राज्यके शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअ स्वीकृत हो चुकी है।

[सूचना — राष्ट्रभारतीमें सवश्री डा बाबूराम सकसेना आचार्य काका कालेलकर, महामहोपाध्याय दत्ता वामन पोतदार स्वर्गीय किशोरलाल मशरूवाला और अुत्तर प्रदेशके वर्तमान राज्यपाल श्री क०मा०मुन्शीजी आदि विशेषज्ञोंकी अक समिति द्वारा १९३६ में निर्णीत नागरी लिपिका प्रयोग होता है —अि आ अु अू अ, अै (इ ई उ ऊ ए और ऐ की जगह) और ल ण और क्ष (ऌ ण और क्ष अक्षरोंके स्थानपर) —स०]

—ःविषय-सूचीः—

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे अर्धवार्षिक ३॥) अेक अंकका मूल्य १० आना

पता:— प्रचार ... हिन्दीनगर वर्धा (म० प्र०)

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ३ * वर्धा, दिसम्बर १९५३ * अंक १२ *

राष्ट्रभाषा हिन्दी : "बहता नीर"

: डॉ बलदेवप्रसाद मिश्र, डी. लिट. :

जबसे हिन्दी राजभाषा घोषित हो चुकी है, तबसे विचारकोंका ध्यान अिसपर और अधिक केन्द्रित हो गया है। वस्तुतः वह राष्ट्रभाषा तो थी ही, भले ही राज्यकी ओरसे अुसकी अधिकृत घोषणा न हुअी हो। परन्तु घोषणा हो जानेके बाद अब अुसकी ओर प्रत्येक प्रान्तके विचारकोंका ध्यान विशेष आकर्षित हो गया है।

पहिले तो हिन्दी और अुर्दूकी खींचतान थी और भारतीय राष्ट्रभाषाके अिन दो रूपोंको अेकमें मिलानेके लिये हिन्दुस्तानीके सृजनकी ओर विचारकोंका ध्यान गया था। परन्तु वह बात कुछ चल न पायी। बात यह है कि लोकभाषा कोअी "कूप जल" तो है नहीं, वह तो "बहता नीर" है। अिसलिअे वह तो नैसर्गिक गति ही से आगे बढेगी। जन-साधारण जिसे चला दे, वही भाषा है। लोकभाषा कहीं किसी विशेषज्ञोंकी समितिमें गढी नहीं जाती। यदि कुछ लोगोंने भगीरथ प्रयत्न करके अुसे गढ लिया, तो जन साधारणपर अुसका मढना और भी कठिन व्यापार समझिअे। गढी हुअी भाषा शब्द कोशोंमें अपनी बहार भलेही दिखाती फिरे, परन्तु कोअी विधान, कोअी व्याकरण, कोअी कोश, अुसे जन-साधारणपर मढ नहीं सकता, जबतक कि जन-साधारणकी रुचि स्वतः अुस ओर प्रवृत्त न हो जाये। अुर्दूकी शब्दावलीके बहुतसे विदेशी शब्द अैसे थे, जो अपने साथ विदेशी संस्कार भी लिये हुअे थे, अतअेव "हिन्दुस्तानी" के नामसे अुन शब्दोंको ग्रहण कर लेना, अर्थकी जगह अनर्थ पैदा कर सकता था। गुरु वशिष्ठ कभी अुस्ताद वशिष्ठ नहीं हो सकते और न महारानी सीता कभी बेगम सीता हो सकती हैं। विचारकोंने यह बात समझी, अिसीलिअे अुन्होंने अपना वह हठ छोड दिया और यह निश्चय कर दिया कि हिन्दीका वही रूप राज-भाषा और राष्ट्रभाषाके रूपमें मान्य होगा जो अुसका परम्परागत रूप है और अुसकी खास प्रकृति तथा प्रवृत्तिके अनुकूल है।

अिस निर्णयकी अेक प्रतिक्रिया भी हुअी। कुछ लोगोंने अिसीलिअे अब संस्कृत निष्ठतापर जरूरतसे ज्यादा जोर देना शुरू किया और संस्कृतके आधारपर अनेकानेक अप्रचलित नये-नये शब्द गढने प्रारंभ किये। हिन्दी केवल संस्कृतके व्याकरण अथवा संस्कृतके कोशका ही आधार लेकर नहीं चली है। वह देशज बोलियों

और द्रविड भाषाओंसे भी तो प्रभावित है। वह वास्तविक अर्थमें राष्ट्रभाषा है। अतअेव जिस प्रकारके अेकांगी गढे हुअे शब्द भी जन-साधारणपर पूरी तरह मढे नहीं जा सकेंगे। नये-नये भाव, नये-नये सूक्ष्म विचार, नयी-नयी परिस्थितियोंके अनुकूल नये-नये व्यक्तीकरण, नये-नये शब्दोंकी अपेक्षा अवश्य रखते हैं। अतअेव अिनके लिअे नये-नये शब्द अवश्य गढे जाअें, परन्तु अिस प्रकारकी गढनके लिअे हिन्दीकी प्रकृति और प्रवृत्तिका ध्यान अवश्य रखा जाअे तभी वे शब्द जनता द्वारा ग्राह्य होंगे। अिस प्रकृति और प्रवृत्तिका असली निर्णय होता है जनता जनार्दन द्वारा, न कि कोशकारों, वैय्याकरणों अथवा शब्द-निर्माताओं द्वारा। ये लोग नये-नये शब्द बनाकर जन-साधारणके सम्मुख रख दें, जनता अुस शब्दावलीमेंसे लोक-भाषाके अनुकूल शब्दोंको आप ही ग्रहण कर लेगी और शेषको विस्मृतिके गर्भमें ढकेल देगी।

प्रत्येक प्रान्तवासी राष्ट्रभाषामें अपनी-अपनी भाषाओंका योगदान देनेको अुत्सुक हो रहे हैं। यह भी स्वाभाविक ही है। राष्ट्रभाषा सभीकी भाषा है, अिसलिअे प्रान्त-भाषाअें अपनी-अपनी अभिव्यञ्जनाके सुंदरसे सुन्दर शब्द और प्रयोग क्यों न अिस भाषाको अर्पित करें। हमारा तो अनुमान है कि अिसमें किसी प्रकारके डरकी कोअी बात नहीं। भगवती भारतीके मंदिरमें प्रत्येक भारतीय अपनी श्रद्धाके पुष्प अर्पित करनेको स्वतन्त्र है। देवताको जो फूल ग्राह्य होंगे, वे ही वहाँ टिके रहेंगे, शेष कुम्हलाकर अलग हो जाअेंगे। बरसाती बाढ़में सभी दिशाओंसे सभी तरहकी चीजें प्रवाहमें बहकर आती हैं, परन्तु कुछ दिनोंके बाद "बहता नीर" आवश्यक सुरसको आत्मसात करता हुआ अपनी नैसर्गिक निर्मलता फिर धारण कर लेता है और बाढ़की अनावश्यक वस्तुअें आप-ही-आप अिधर-अुधर विलीन हो जाती हैं।

कबीरका दोहा अिस मौकेपर कितना चुस्त बैठ रहा है। वे कहते हैं—

"भक्ति भाव भादों नदी सबै चलीं घहराय,
सरिता सोअि सराहिये जो जेठ मास ठहराय।"

हिन्दीमें भी जिस समय विदेशी शब्दोंकी, संस्कृत कोश और संस्कृत व्याकरण द्वारा गढे हुअे शब्दोंकी, प्रादेशिक शब्दों तथा प्रयोगोंकी बाढ़ आ रही है। यह स्वाभाविक ही है। अिससे घबरानेकी कोअी जरूरत नहीं। यह तो समयका तकाजा है। परन्तु आगामी कलके अिसके स्वरूपमें अिस मटैली बाढ़का गंदलापन आप-ही-आप दूर हो जाअेगा और अुस बाढ़के स्वच्छ तत्वोंको आत्मसात करते हुअे यह अपनी स्वाभाविक प्रकृति और स्वाभाविक प्रवृत्तिके अनुसार जेठमासकी सरिताकी तरह निर्मल कल्याणकारी रूप प्रदर्शित करेगी, अिसमें कोअी संदेह नहीं।

बहते नीरकी धाराको अेकदम अुलटना असंभव कार्य है। अुसकी विशिष्ट प्रकृति अुसीकी होकर रहेगी। अुसके बहावकी प्रवृत्तिको भी न पहचानना, अुसके वास्तविक लाभसे अपनेको वंचित रखना ही है। चतुर किसान वही है जो अुसकी विशिष्ट शक्ति और अुसके बहावका विचार रखता हुआ, अुसमें यत्र-तत्र संशोधन करता जाता है, जिससे वह देशके विविध-क्षेत्रोंको और अच्छी तरह हरा-भरा करती चले। जो लोग राज-भाषाके विषयमें परिवर्तन और संशोधनकी अिच्छा रखते हैं, अुन्हें अिस सिद्धान्तका ध्यान अवश्य रखना चाहिअे। राजभाषा हिन्दी जीवनी शक्तिसे ओत-प्रोत है। वह निस्संदेह अेकदम जीवित भाषा है। जीवनका अर्थ ही है कि अनुकूल शब्दावलीका संग्रह किया जाअे और अनुपयुक्त शब्दावलीका त्याग किया जाअे। जीवित शरीर अपने पोषणके लिअे अनुकूल खाद्य लेता ही रहता है और अनुपयुक्त वस्तुअें त्यागता ही रहता है। हिन्दी भाषा नूतन शब्दावलीकी विरोधिनी न होगी; चाहे वे देशज हों या विदेशज। यही तो अुसके जीवटके लक्षण हैं। परन्तु अितना अवश्य ध्यान रखा जाअे कि अुसकी प्रकृति और प्रवृत्तिके विरुद्ध नयी नयी गढी हुअी या खींच-खाँचकर अेकत्र की हुअी शब्दावलियोंका बोझ अुसपर लादा न जाअे। यदि कहीं कोअी अैसी चेष्टा की गयी, जिसके कारण अुसका स्वरूप ही बदल जानेकी संभावना हो, तो निश्चय है कि अैसी शब्दावली अथवा प्रयोगावलीका बोझ शीघ्र ही बरसाती कूड़े-कचरेकी तरह कुछ ही दिनोंमें आप-ही-आप अदृश्य हो जाअेगा।

[राजनादगाँव।

कूर्पासक

आचार्य चन्द्रबली पांडे, अम अ

अतीतके अध्ययनका जिन्ह चसका है अुन्हे जिस बातका पता है कि कूर्पासक का ठीक ठीक रूप अभी हमारी आँखके सामन न आ सका और आया भी तो यह कहना अत्यन्त कठिन हो गया कि वास्तवमें यही असका वास्तविक रूप है। विचारके लिअ लीजिअ डा मोतीचन्द्रजी जसे वेष ममज्ञकी यह वाणी—

अमरकोश और अनुसहारमें तो यह शब्द स्त्रियोकी चालीके लिअ आया है, पर यहा तो अुसे योद्धा पहनते थ। लगता है कूर्पासक आध बाँहवाली मिजअी अथवा कोअी गजीनुमा वस्त्र रहा हो। अजताके भित्तिचित्रोमें वहुधा सिपाही अैसा वस्त्र पहन दिखाये गये ह। ※

स २००७ विक्रमकी यह मीमासा अपने विषयमें बहुत कुछ आप ही बोल रही है। कूर्पासक' का ठीक पता नही अनुमानसे जो सिद्ध होता है वह सामने है। अुसको दृष्टिमें रखकर देखें यह कि अतीतके दूसरे विचारक डा वासुदेवशरण अग्रवालका विचार क्या है। आप बडी खोजके बाद लिखते ह—

कूर्पासकका पहनावा गुप्त कालम खूब प्रचलित रहा होगा। अमरकोशने कूर्पासकका अर्थ चोल किया है। कूर्पासक थोड भदसे स्त्री और पुरुष दानोका पहनावा था। स्त्रियोके लिअ यह चोल क ढगका था और पुरुषोके लिअ फतुअी या मिजअीके ढगका। असकी दो विशेषताअें थी—अक ता यह कटिसे अूचा रहता था और दूसरे प्राय बिना आस्तीनका होता था। वस्तुत कूर्पासक नाम असीलिअ पडा क्योंकि असमें आस्तीन कोहनियोसे अूपर ही रहती थी। मूलमें कूर्पासक भी चीनचोलकका तरह मध्य-अेशियाकी वेशभूषामें ही प्रचलित था और वहीसे अिस देशमें आया। कूर्पासकके जोडकी आधुनिक पोशाक वास्कट है। अेशियाके शिष्टाचारके अनुसार वास्कट सबसे अूपर पहननेका वस्त्र माना जाता है जब कि पश्चिमी नियममें वास्कट भीतर पहननेका वस्त्र है। समस्त मगोलिया प्रदेश चीनी तुर्किस्तान और पश्तून प्रदेशोमें भी फतुअी पहननेका रिवाज सार्वदेशिक था और वह अपने आपमें पूर्ण और सम्मानित पहनावा माना जाता था। फतुअी या फितूरी शब्द या कब्जा अब चालू अेक ही मूल पहनावेके नाम और भेद ह। वही पहनावा गुप्तकालमें कूर्पासक नामसे प्रसिद्ध था। ※

कूर्पासक के प्रसगमें डा अग्रवालने बहुत कुछ कह दिया। क्या कुछ कह लिया ? जिसका समाधान ठीक ठीक कर पाना सरल नही। आपहीका कथन अिसी प्रसगमें यह भी है—

'जसा कहा जा चुका है कूर्पासक स्त्री और पुरुष दोनोका पहनावा था। अजताके लगभग आठ दजन चित्रोमें स्त्रिया बिना आस्तीनकी या आधी बाँहकी चोलिया पहने ह जिनमें कअी रगोका मेल दिखाया गया है। अेक ही चोलीमें पीठका रग कुछ और है और सामनेका कुछ और। औंध-नरेशकृत अजता पुस्तकके फलक ७२ में यशोधरा बिना आस्तीनका कूर्पासक पहने ह जिसपर बाँकनकी बुदकियाँ पडी ह। फलक ७७ में रानी और कअी अन्य स्त्रियाँ कूर्पासक पहने ह। अेक चित्रमें पीठकी ओर कत्थअी और सामने लाल रगमें कूर्पासक रगा गया है और अुसपर भी बडी बुदकियाँ डाली गयी ह। फलक ७५ (गुफा १)के चित्रमें नर्तकी पूरी बाहका दुरगा कूर्पासक पहने है। फलक ७७ (गुफा १७ दपनीका मधुपान दृश्य) में झारी लिये हुअ यवन स्त्री आधी बाँहका कचुक कूर्पासक पहने है। (पृष्ठ ३२७)। अब समझ तो लें कि कूर्पासक वस्तुत है क्या। वास्तवमें वह बिना बाँह का पहनावा है या 'पूरा बाँह

※ (प्राचीन भारतीय वेशभूषा पृ १६१)

※ (नागरी प्रचारिणी पत्रिका स २००९ वि पृष्ठ ३२६-७)

अथवा 'आधी बाँह' का ? डा अग्रवाल तो तीनोंको ही 'कूर्पासक' कहते हैं न ? अुनका मुख्य कथन है—

"अेक तो यह कमरसे अूँचा रहता था और दूसरे प्राय बिना आस्तीनका होता था।"

और अिसीके साथ है टिप्पणी भी—

"'चोली दामनका साथ है' अिस मुहावरेका तात्पर्य यही है कि कटिभागमें जहांसे नीचे दामन या लहँगा शुरू होता है, वहींसे अूपर चोली प्रारभ होती है। चोली और दामन दोनों मिलकर पूरा वेश बनता है, अत दोनोका साथ अनिवार्य है।"

स्थिति कुछ भी हो। डा अग्रवालका यह कथन मननीय है—

"वस्तुत कूर्पासक नाम अिसीलिअे पडा, क्योकि अिसमें आस्तीन कोहनियोसे अूपर ही रहती थी।"

तो फिर 'कूर्पासक' के विवेचन और प्रयोगमें अिसकी अुपेक्षा क्यो की जाअे ? स्मरण रहे। अुदीच्य कवि आर्यश्यामिलकका कथन है—

> कर्णद्वयावनतकोञ्चनतालपत्रा
> वेष्यन्तलग्नमणिमौक्तिकहेमगुच्छा।
> कूर्पासकोत्कचितस्तनबाहुमूला
> लाटी नितम्बपरिवृत्तदशान्तनीवि ॥ १०३॥

—(पादताडितक भाण, सन् १९२२ औ)

जी। 'कूर्पासकोत्कचितस्तनबाहुमूला' से स्वय स्फुट है कि 'कूर्पासक' वस्तुत है क्या वस्त्र जो अुसकी खोजमें अितनी मनमानी व्याख्या हो रही है। 'स्तन-बाहुमूला' से स्पष्ट ही है कि वह यथार्थमें अिसी प्रदेशका आच्छादन है। अुसे सक्षेपमें वक्षस्थलका वस्त्र कह सकते है। नाभिप्रदेश तक अुसकी गति नहीं। कवि-कुलगुरु कालिदास कहते हैं—

> मनोज्ञकूर्पासकपीडितस्तना
> सरागकौशेयकभूषितोरव।
> निवेशितान्त कुसुमै शिरोरुहै
> विभूषयन्तीव हिमागम स्त्रिय ॥८॥

—(अृतुसहार, पचम सर्ग)। अर्थात् —

श्री सीताराम चतुर्वेदीजीका अिसका 'नागरी' अनुवाद है—

"सुन्दर चोलियोंसे अपने स्तन कसे हुअे, जाँघोंपर रेशमी कपडे पहने हुअे और बालोंमें फूल गूँथे हुअे स्त्रियाँ अैसी लग रही हैं, मानो जाडेके स्वागतका अुत्सव मनानेके लिअे सिंगार कर रही हों ॥८॥" (कालिदास ग्रन्थावली)।

आर्यश्यामिलकने 'कूर्पासकोत्कचितस्तन-बाहुमूला' में 'कूर्पासक' का जो अुपयोग किया है वह सर्वथा कविकुलगुरुके 'मनोज्ञकूर्पासकपीडितस्तना' के साथ है और खुलकर बता रहा है कि यह कसा-कमाया परिधान है कुछ ढीलाढाला पहनावा नहीं। कविकुलगुरुने पहले भी कहा था—

कूर्पासक परिदधाति नखक्षताङ्गी व्यालम्बिनी-लललितालककुञ्चिताक्षी। अुनका पूरा श्लोक है—

> अन्या प्रियेण परिभुक्तमवेक्ष्य गात्रं
> हर्षान्विता विरचिताधरचारुशोभा।
> कूर्पासकं परिदधाति नखक्षताङ्गी
> व्यालम्बिनीलललितालककुञ्चिताक्षी ॥

यह हेमन्त की स्थिति है। अिसका अर्थ है—

"नखोंके घावोंसे भरे हुअे अगोवाली और लटकती हुअी सुन्दर अलकोंसे ढकी हुअी आँखोंवाली अेक दूसरी स्त्री, अपने प्यारेसे अुपभोग किये हुअे शरीरका देख देखकर बडी मगन होती हुअी अपने अधरोंको फिर पहलेकी नाअी सुन्दर बनाकर अपनी चोली पहनने लगी है ॥१७॥" (वही)।

ध्यान देनेकी बात है कि कालिदासने 'हेमन्त' और 'शिशिर' अर्थात् जाडेके दिनोंमें ही 'कूर्पासक' का व्यवहार किया है। अन्यथा 'वसन्त' की स्थिति तो अुनके यहाँ यह है—

> कुसुम्भरागारुणितैर्दुकूलै
> नितम्बबिम्बानि विलासिनीनाम्।
> तन्वंशुकै कुङ्कुमरागगौरै
> रलक्रियन्ते स्तनमण्डलानि ॥५॥

"कामिनियोंने अपने गोल-गोल नितम्बोंपर कुसुमके लाल लाल फूलोंमें रंगी रेशमी साड़ी पहन ली है और स्तनोंपर केशरमें रंगी हुआी महीन कपड़ेकी चोली पहन ली है ।।५।।"

किन्तु यह आवश्यक नहीं कि 'अमुक का अर्थ 'चोली' ही किया जाअे। वह केवल वस्त्रखंड मात्र भी हो सकता है। 'कूर्पासक' की भाँति वह 'अुत्कंचित-स्तनबाहुमूला' का रूप किसी रमणीको नहीं दे सकता। नहीं 'कूर्पासक' कवच' का काम करता और 'रतिरण' के योग्य ठहरता है। यही कारण है कि अिसे रणवीर भी धारण करते हैं। डा. मोतीचन्द्रजीका यह भी कथन है—

"अजंताके 'सिंहल युद्ध' नामक चित्रमें घुड़सवार आधी बाहोंवाले कूर्पासक और जाँघिया पहने हैं। अिस कूर्पासकके गले और मुहरियोंपर गोटें लगी मालूम पड़ती हैं (आ. ३१२)।" (वही, पृष्ठ १९१)।

और सच तो यह है कि डा. वासुदेवशरण अग्रवालकी खोजका विषय ही है यही पुरुषधारी 'कूर्पासक'। आप लिखते हैं—

"राजाओंका अेक वर्ग नाना रंगोंसे रंग हुअे चितकबरे कूर्पासक पहने हुअे था (नानाकषायकर्बुरैं कूर्पासकै, २०६)।' (वही, पृष्ठ ३२६)।

अिसके आगे अुन्होंने जो कुछ कहा है अुसका बहुत कुछ अंश पहले आ गया है। अुससे 'कूर्पासक' की स्थिति कहाँ तक स्पष्ट होती है, अिसे पाठक स्वयं देख सकते हैं। हमारी समझमें तो 'कूर्पासक' का सच्चा संकेत वही है, जिसका पता आपस्तम्बमिलकने अपने 'भाष्य' में दिया है। अुसे आज 'अँगिया' कहना कहाँतक ठीक होगा कह नहीं सकता। हाँ, जितना विदित अवश्य है कि अुसका अुपयोग है 'स्तनबाहुमूल' को 'कवचित' करनेमें, फिर वह चाहे स्त्रीका यह प्रदेश हो, चाहे पुरुषका।

[काशी ।

सहनशीलता

"सहनशीलता अुच्च स्वभावका भूषण है। सहनशक्ति सबको नहीं मिलती। 'कुशब्द' को केवल सहनशील सत्पुरुष ही सहन कर सकते हैं। दूसरे नहीं सहन कर सकते। सहनशीलता अहंकारको त्यागने और दीनताको ग्रहण करनेसे प्राप्त होती है। जो दंभ और अहंकारका त्यागकर दीन तथा सहनशील बन जाता है, अुसीको भगवान सफलता देते हैं। जिस प्रकार अुत्तम पुरुष विनीत होते हैं, अुसी प्रकार दुष्टजन अुद्धत दुर्विनीत होते हैं। अच्छे लोग खलके वचनोंको अैसे निर्विकार भावसे सहते रहते हैं, जैसे पर्वत वर्षाकी बूँदोंके आघात सहते रहते हैं। क्षमा जो सबसे अच्छा धर्म है, सहनशीलताकी सहचरी है। सत्पुरुष सहनशीलता और क्षमाको कभी नहीं छोड़ते और निन्दासे हर हालतमें भी विचलित नहीं होते।"

—"संतवाणी"

सत्य और रीति-रिवाज

: महात्मा भगवानदीन :

बिल्कुल छोटे बच्चेका पता नहीं, पर बड़े बच्चेसे लेकर वृद्ध तक अेक खास कमजोरी लिये हुअे हैं। यह कमजोरी सत्यको सहन नहीं। यह कमजोरी अितनी फैल गयी है कि सत्यकी लाख मेहनत करनेपर भी कम नहीं हो पाती। रिजका नामकी अेक घास होती है। जान वरोंके लिअे अुसे बोते हैं। अुन अेक तरफसे काटें तो दूसरी तरफसे बढ़ने लगती है। यह कमजोरी अैसी घासकी तरह अेक तरफ कटती और दूसरी तरफ अुग आती है। अिस कमजोरीका नाम है सहज विश्वास। रीति रिवाज अिस सहज विश्वासकी सन्तान है।

न कभी सहज विश्वास आदमीको छोड़ सकेगा और न रीति-रिवाज। सत्यकी यह कोशिश नहीं कि रीति रिवाज खतम हों। रीति रिवाजके बढ़नेसे सत्यका कोअी नुकसान नहीं। सत्यको धक्का पहुँचता है अुस समय, जब रीति-रिवाजको यह कहकर अपनाया जाता है कि अगर ये न किये जाअें तो कोअी अैसी आफत कुटुम्ब या समाजपर आ जाअेगी जो हटाये न हट सकेगी। सत्य अिस वहमको दूर कर देना चाहता है। वहम अँधेरा है सत्य प्रकाश है। ये दोनों अेक जगह नहीं रह सकते। सत्य जीवनमें प्रसन्नता लाता है वहम अुस प्रसन्नताका रस चूस लेता है फिर जो कुछ आदमीके हाथ पड़ता है, वह छूँछ होती है। गन्नेकी खोअी और बादामकी खलकी तरह अुस छूँछमें मिठास और चिक नाअी रहती तो है पर अितनी नहीं जिससे आदमी पूरा पूरा लाभ अुठा सके। अगर अुसको वह खोअी और खल बिल्कुल न मिली तो कुछ बुरा तो होगा, पर अितना बुरा न होगा जितना खोअी और खल मिल जानेसे होता है। क्योंकि अुनके मिलनेसे अुन मिठास और चिकनाअीका स्वाद आता है तबीयत नहीं भर पाती तृष्णा जाग अुठती है। वह अुसे पहलेसे ज्यादा दुबला कर देती है। सत्यकी कोशिश है अुसके सहज विश्वासको ठीक करे और रीति रिवाजोंका पूरा मिठास और पूरी चिकनाअी आदमीको मिलने दे।

जब रीति शुरू होती है तब अुसे रीति नहीं कहा जाता। वह किसी रीतिकी जगह लेती है, अिसलिअे रीति कहा जाता है। रीतिके माने हैं किसी कामके ढंगको बहुतोंका अपना लेना और बहुत दिनोंतक अपनाये रखना। जो ढंग आज निकला है अुसे रीति रिवाज कैसे कहा जा सकता है? नये ढंगको अेकदम रीति-रिवाज नाम क्यों दिया जाने लगा? अिस सवालका जवाब सीधा है। सगठित समाजमें कोअी ढंग कानूनके जरिये अेक दिनमें जारी किया जा सकता है। जिस तरह आमतौरसे लम्बे लिफाफे चलते थे, अेकदम चौकोर चल पड़े तब चौकोर लिफाफोंके बारेमें यह कह देना बेजा नहीं कि आजसे चौकोर लिफाफेका रिवाज हो गया। रीति-रिवाजके माने बदल गये। रीति रिवाज जिस वक्त शुरू हुअे थे, अुस वक्त समाज सगठित न था, या था तो अितना सगठित न था कि अपने हुक्मसे काम करनेके किसी ढंगको अेकदम बदल सके। होता यह था कि किसीने अेक ढंग अपनाया, अुसका समाजमें फैलनेमें समय लगता था, दिनोंमें ढंग रीति रिवाज नाम पाता था।

किसी देशका समाज आजकल कुछ बातोंको छोड़ — जिनका सरकारी कानूनसे सम्बन्ध है, किसी बातमें साराका सारा अेक रीति रिवाजमें बंधा मिलेगा। हर देशका समाज अनेक टुकड़ोंमें बँटा हुआ है।

चार वर्णोंकी बात पहलेसे चली आ रही है, अुनमें तो समाज बँटा है ही, पर अुन चारमेंसे हर अेक चार-चार और आठ आठमें बँटा हुआ है। आज जितनी जातियाँ हैं सबके अलग-अलग रिवाज हैं। यानी सबके रहन सहनके अलग-अलग ढंग हैं। समाजी मामलोंको छोड़ दिया जाअे, सिर्फ सरकारी मामलोंको लिया जाअे, अुनके भी ढंग सब जगह अेक-से नहीं हैं। हर प्रान्त अपने ढंगोंके

लिअे स्वाधीन है। कुछ बातोंमें अेक ही प्रान्तका हरअेक जिला अपने ढगके लिअे स्वाधीन है। यही हाल तहसील तालुको, परगना और गांवोका है।

समाजी और सरकारी कामोका अलग-अलग ढग यह साबित करता है कि हर जगहके रीति रिवाज अलग-अलग हैं। अलग अलग यो है कि हर जगहका हवा-पानी अलग-अलग है। अेक ढग दूसरी जगह नहीं बैठ सकता। राजपूतानेमें जहाँ रेतके टीले हैं और दूर दूरतक रेत फैला हुआ है, काम करनेके जो ढग सोचे जाअेंगे वे पजाबमें नहीं सोचे जा सकते। पजाबमें बडी और कभी छोटी नदियाँ बहती हैं। यही हाल अुत्तरप्रदेशका है। वहाँ भी नदियोंकी कमी नहीं। पजाब और अुत्तरप्रदेशमें काम करनेके ढग बिलकुल अलग रहेंगे। अब राजपूतानेके ढग, पजाब या अुत्तरप्रदेशके ढगोमे मेल न खाअें और राजपूतानाके आदमी अपने सहज विश्वासको लेकर पजाब और अुत्तरप्रदेशवालोंसे झगड बैठे या समझें कि वे अुनके विपरीत ढगोंको अपनाकर कोअी अनीति कर रहे हैं तो यह कितनी बुरी बात होगी? किन्तु हो रहा है अैसा ही। सत्य अिस आपसी झगडेको मिटा देना चाहता है। झगडा मिटानेका नुस्खा बडा अच्छा आता है पर लोग अुस नुस्खेके अिस्तमालमें बडी गडबडी कर जाते हैं। नुस्खा अुस कागजके परचेको कहा जाता है जिसपर कोअी हकीम कुछ दवाअी लिख देता है और यह भी लिख देता है कि यह दवा किस तरह तैयार की जाअेगी और किस तरह काममें लायी जाअगी। अब अगर कोअी आदमी नुस्खेके अुस कागजको ही दवा समझकर खा ले तो अिसमें हकीमका क्या दोष? ठीक अिसी तरह सत्य अेक रिवाजके ढगको बदलता है और अुसकी असलियत समझा देता है पर लोग अुस ढगको अपना लेते हैं और अपने सहज विश्वासको अुसके साथ नत्थी कर देते हैं। वही ढग नया होनेपर पुराने ढगकी तरह मिठास और चिकनाअी खो बैठता है।

सत्य अिस बातपर जोर नहीं देता कि रीतिरिवाज बदल डालो। अुसका जोर अिस बातपर है कि रीति रिवाजकी असलियत जान लो। यह ठीक है जैसे ही आदमीको किसी रिवाजकी असलियतका पता चला वैसे ही वह अुसे छोड बैठेगा। क्योंकि बहुत कम रिवाज अैसे हैं जिनकी असलियत आज कायम रह गयी है। अुदाहरणके लिअे अगर कोअी रिवाज अुस वक्त बना था जिस वक्त हमारे देशमें रेल न थी तो वह रिवाज आज कैसे रह सकेगा अगर अुसकी असलियतको लोग समझ जाअें। सत्य जबरदस्ती नहीं करता। सत्य हमें बल देता है हमें जगाता है हमारे मस्तकको विचारकी आजादी देता है हमारे ज्ञानको साफ करता है और हम सच्चा ढग सोचने, अुसपर अमल करनेकी हिम्मत देता है।

सारे रीति रिवाज जन्म, विवाह और मौतके चारो तरफ घूमते हैं। अगर अिन तीनोंको ठीक ठीक समझ लिया जाअे तो रीतिरिवाजोंके पीछे रहनेवाले जिस सहज विश्वासने मिथ्या और अन्धविश्वासका रूप ले लिया है वह ठीक हो जाअे और फिर रीतिरिवाज, जो आदमीपर सवारी गाठे हुअे है, आदमीकी सवारीमें आ जाअें, और जीवन-यात्रामें गति और प्रसन्नता आ जाअे।

जन्म अिससे ज्यादा कुछ नहीं कि वह आदमी जो अभीतक बीजकी तरह जमीनके अन्दरसे बाहर निकलनेके लिअे जोर लगा रहा था अकुरके रूपमें बाहर निकल आया। पेडका जमीनसे रिश्ता बना रहता है। यानी अुसकी जड अकुर निकलनेके बादसे बडे होने तक जमीनके अन्दर रहती है। आदमीके मामलेमें अैसा नहीं होता। आदमी या अुसी जैसे प्राणी अपनी मांसे अेकदम सम्बन्ध छोड देते हैं पर अुनको भी आगे बढनेके लिअे भोजन पानेकी खातिर मांसे सम्बन्ध जोडना पडता है। अिसलिअे किसी अशमें आदमी पेडसे मिलता है। बहुत पेड अैसे हैं जो अपने फूल और फल गिरा देते हैं पर अुनके फल फूल गिरानेको जन्म नाम नहीं दिया जाता, क्योंकि वह गिरकर बढते नहीं। पडके अकुरको जन्म नाम दिया जाता है क्योंकि वह बढता है। पेडोंसे लेकर आदमीतक सबके जन्मपर नजर डाली जाअे तो अैसा मालूम होगा, प्रकृतिने अुनकी कोमलताको ध्यानमें रखकर अुनको बचाये रखनेके लिअे काफी प्रबन्ध किया

है, बाहरी आफतोंसे बचानेके लिअे सब प्राणियोंमें अैसी भावना पैदा कर दी है जिसकी वजहसे वह अुन कोमल देहधारियोंको कमसे कम सतानेकी सोचते हैं। सत्य चाहता है, प्रकृतिके अुन कोमल देहधारियोंकी रक्षा करनेमें मदद की जाअे, और आदमी अिस बारेमें अपने सहज विश्वासको मैला न होने दे। जन्मके कोमलपनको ध्यानमें रखकर जो कुछ किया जाअे, ठीक है; और जो किया जाअेगा वह सत्य होगा।

विवाह अिसके सिवाय और कुछ नहीं कि प्राणीके अन्दर जो अेक विशेषता है कि वह अपने पीछे अपने जैसे प्राणी छोड जाता है, अुस विशेषताको बनाये रखे, सृष्टि रचनाको सुखसे चलनेमें प्रकृतिकी मदद करे। विवाह अेक अैसी रस्म है जो आदमीकी अपनी सूझ है, क्योंकि और प्राणियोंमें विवाह जैसी रस्म नहीं पायी जाती। आदमी पशुओंको पालता है और जो पशु पूरी तरह आजाद नहीं हैं अुनके गर्भाधानका प्रबन्ध करता है। अुस गर्भाधानको विवाह नाम दिया जा सकता है। वैदिक कालके शुरू-शुरूमें या मानव समाजके बालपनमें विवाह नामकी कोअी चीज न थी। विवाहका सम्बन्ध गुलामीसे है। विवाह आदमीकी दासताकी निशानी है, आदमीके पतनका चिन्ह है। जैसे-जैसे आदमी समाजके बन्धनोंमें ज्यादह ज्यादह जकडता गया, वैसे वैसे विवाहके कायदे सख्त होते गये और वैसे वैसे आदमीका वासनापरसे काबू हटता गया। आज भी जिन्हें जंगली जाति नामसे पुकारा जाता है, वह वासनाके लिहाजसे दूसरी जातियोंसे बहुत अच्छे हैं। मनुष्य समाज अपनी आजादी खोकर जब सामाजिक बन्धनमें फँसा तब वह अितना आजाद था कि अुसे किसी तरहके विवाहकी जरूरत न थी, अुसकी वासनाअें काबूमें थीं पर समाजके साथ रहकर खाने पीनेका सुभीता हो जानेसे वह अपनी वासनाका सतुलन खो बैठा।

समाजको अुसके बन्धन सख्त करने पडे। सबसे पहले समाजने आदमीको बाँधनेके लिअे अुससे यह आजादी छीनी कि वह गर्भाधानके मामलेमें पूरा स्वाधीन न होगा। आजके पालतू पशु भी कहाँ आजाद हैं? गर्भाधानका रिवाज बदलकर विवाह नाम ले बैठा। यह है विवाहकी असलियत।

गर्भाधान नामी विवाह आज सुहाग-रात नामसे मौजूद है। गर्भाधानके अुस वक्तके रिवाज जब अुसका सस्कार नाम था, कभीके नष्ट हो गये। सुहाग-रातकी रीतियाँ अब वे नहीं रहीं। सुहाग-रात खतम हो रही है। यह खतम हुअी कि गर्भाधान नामी विवाह अेकदम खतम। गर्भाधान संस्कार अुन दिनों ज्यादा जोर पकड गया था। जब दो-दो तीन-तीन बरसकी लडकियोंकी शादी चल पडी थी। अुस वक्त अिसकी जरूरत थी, अब नहीं। सौ, दो सौ, पाच सौ बरसमें, अगर मनुष्य समाज अितना समझदार हो गया कि वह अपनी वासनाओंपर काबू रख सके और अितना आजाद हो गया कि वह दुनियाभरसे अपना नाता जोड ले और मेल मुहब्बतसे रहने लगे, तो विवाहकी रस्म खतम हो जाअे। हमारा खयाल है, मनुष्य समाज जिस जगलीपनसे निकलकर आजकी सभ्यता तक पहुँचा है, अेक दिन पूरा सभ्य होकर अुसी जगलीपनको अपना लेगा जहाँसे वह चला था। यह अेक अलग विषय है, पर यहाँ अितना साफ कर देना जरूरी है कि मनुष्य जब फिर जगली बनेगा तब वह जगली न होगा। बहुत सस्कृत और सभ्य होगा, अुसका आत्मा समझकर साफ हो चुका होगा। वह जिस जगलीपनको मूर्खतावश अपनाये था, नुकसान कर रहा था, आगे बढनेसे रुका हुआ था, अब अुसी जगलीपनको सोच-समझकर अपनाअेगा और मेल मोहब्बतके साथ दूसरे चक्रकी तैयारी करेगा। अुस चक्रकी अगली मंजिल क्या होगी, अुसके बारेमें कुछ कहना बेकार है। हमारे कामकी अितनी बात है कि विवाहकी असलियत सिर्फ अितनी है कि मनुष्य जैसा प्राणी अपने पीछे, अपने जैसे और अपनेसे अुन्नत प्राणी छोड सके। बस, अितनी बातको ध्यानमें रखकर हमें विवाह करनेके ढग अपनाने चाहिअें।

मौतका मतलब है, शरीरका बेकार हो जाना। मनुष्य समाज जब बालक था, तब किसीके मर जानेपर न रोता था, न अुस मरे हुअे आदमीके बारेमें कुछ सोचता था। बदरमें अपने छोटे बच्चेके लिअे मोह है, मादा अपने मरे बच्चेके सल्लडको छह-छह महीने गलेसे लगाये फिरती है, पर बडे बन्दरोंकी मौत हो जानेपर बन्दर समाज मरे बन्दरके लिअे न रोता है, न कुछ और

करनकी सोचता है। कअी किताबोंमें हमने पढा है कि कहीं-कहीं कुछ खास तरहके बन्दर किसीके मर जानका शोक मनाते हैं। हो सकता है यह बात ठीक हो, पर शोक मनानेवाले बन्दर अुस मरे हुअे बन्दरके बारेमें और ज्यादह नहीं सोच सकते।

मनुष्य समाजमें मुर्दोको दफन करन जलानेका रिवाज बहुत पीछे चला। कुछ रिवाज असे है जो पहले थे, पीछे बन्द हो गये फिर चल पडे फिर बन्द हो गये। कुछ रिवाज अैसे हैं जो कहीं कहीं बन्द हो गये कहीं कहीं जारी है। वे रिवाज ये है — मुर्दोंको बहा देना मुर्दोंको जलाकर बहा देना मुर्दोंको जानवरोंको खिला देना। बहा देनेका रिवाज जलाने और दफन करनेके पहलेका है। अिसको आदमीने प्रकृतिसे सीखा। डूबनेपर आदमी मरकर अूपर तैरने लगता था। अुसको जानवर खा जाते थे। बहा देनेका रिवाज मुर्देके प्रति मोह होनेसे जँचा नहीं। अुसे दफन करने और जलानेका रिवाज अपना लिया गया। जलानेके रिवाजके बाद और नये तजुर्बे हुअे। और अुन तजुर्बोंके बलपर अुसने गर्भवती औरतों जहर खाये हुअे सांपके काटोंको जलानेकी जगह बहानेका रिवाज शुरू किया। जानवरोंको खिलानेका रिवाज पारसियोंको छोड और कहीं नहीं रह गया। अुनमें यह रिवाज किन मनोभावोंको लेकर मौजूद है अुनको हम यहां नहीं लिखना चाहते। यहां सिर्फ अितना कहना चाहते है कि मरनेके बाद आदमीका जिस्म मिट्टी हो जाता है अुस जिस्ममें और मिट्टीमें कोअी अन्तर नहीं करना चाहिअे। यह अन्तर रहेगा ही कि आदमीके देहकी मिट्टी सडने लगती है आदमियोंमें बीमारी पैदा करती है पर यह बात तो गाय भैंस कुत्ते बिल्लीकी देहके साथ भी है। आदमी जिस तरह कुत्ते बिल्लियोंकी देहके लिअे सोचता है वैसे ही आदमीकी देहके लिअे सोचे। सत्य चाहता है आदमी मुर्देकी देहको मिट्टी समझे। अैसा समझकर अुसको फेंकने या ठिकाने लगानेके तरीके सोचे। अुसके साथ बेमतलबकी भावना जोडकर तरह-तरहकी बेतुकी बातें सोचकर, अपना मन गदला न करे। सहज विश्वासको अन्धविश्वास और मिथ्या विश्वासके जालमें न फँसाअे।

सत्य और सुख दुख'' अध्यायमें कहा जा चुका है कि दुख कोअी बुरी चीज नहीं। दुनियाके कम दुख दर्द अैसे है जिनमें बचनेकी जरूरत है। बहुत तो आदमीको सुख पहुँचानेके लिअे है। बच्चा पैदा होनसे पहले जो दर्द मांको होता है वह अुसीको ज्यादा तकलीफ देता है जो तन्दुरुस्त नहीं होती। जिनका जीवन प्राकृतिक होता है अुनको बहुत मामूली तकलीफ होती है। अिस मामूली और प्राकृतिक तकलीफको लेकर समाजमें सकडों वहम खडे हो गये है। जहां जरा तकलीफ हुअी कि घर वाले दौडे किसी ओझाके पास और लगे अुससे झाड फूंककी प्रार्थना करने। अगर बहू सासकी प्यारी हुअी तो वह भी अुतारा अुतारती है देवताओंके नामपर अठावा अुठाकर रखती है और अगर कहीं वह पहलौटी गर्भवाली हुअी तब तो न जाने क्या क्या तूफान खडे हो जाते है। बहुत तकलीफ होनेपर दवा दारू कम चलते है मन्तर जन्तर ज्यादा। हम जब छोटे थे तब मोहल्लेमें आये दिन झाड फूंकका तमाशा देखनेको मिलता था। अेक बार अेक औरतको बेहद तकलीफ थी अुसके लिअे अेक पंडितने यह किया—

अेक कांसेकी थाली मंगायी थोडा गेरू मंगाया, अुस गेरूको पानीमें घोला। गेरूके रंगसे थालीमें अेक चक्रव्यूह बनाया और थालीमें थोडा पानी डालकर अुस औरतको पिला दिया जिसको दर्द हो रहा था। पीनेके कुछ देर बाद दर्द कम हुआ और थोडी देरमें अुसे बच्चा हो गया।

चक्रव्यूह बनाना हमने सीख लिया। और अेकसे ज्यादा बार हम भी अिस कामके लिअे बुलाया गया और सफलता मिली। जब हम कुछ बडे हुअे और जन्तर मन्तरसे हमारा विश्वास अुठ गया तब हमने अुस कामको छोड दिया। तीस बरसकी अुमरमें हमें किसी वैद्यककी किताबमें यह लिखा मिला कि कांसेकी थालीमें गेरू पिला देनेसे दर्द कम हो जाते है और बच्चा पैदा होनेमें आसानी होती है। रहा चक्रव्यूह अुसके बारेमें समाजने यह विश्वास फैला रखा कि अुसके देखनेसे बच्चा पैदा होनेमें आसानी होती है। यह मिथ्या विश्वास और दवा मिलकर कभी कभी कुछ काम कर जाते है, कभी-कभी बिलकुल नहीं।

चक्रव्यूहके मिथ्या विश्वासने समाजको यह नुकसान हुआ कि गेरू, जो दवा थी, अुसकी तरफसे लोगोंकी नजर हटकर चक्रव्यूहकी तरफ चली गयी। और गेरूकी शोध अेकदम पीछे पड़ गयी। अगर चक्रव्यूहका मिथ्या विश्वास न होता तो गेरूपर वैज्ञानिक खोजबीन की जाती और अुन खोजबीनसे हो सकता है समाजको लाभ पहुँचा होता।

अिसी सिलसिलेमें यह लिख देना ठीक होगा कि मलेरिया बुखारमें पीपलके पत्तेपर राम कोअी जन्तर लिखकर बुखार अुतारनेका रिवाज आजतक मौजूद है। कोअी-कोअी नासमझ जन्तरको महत्व देकर गरजकी बजाय बेगारसे जन्तर लिख देते हैं। अगर मिथ्या विश्वासको महत्त्व न मिला होता तो अिस तरहकी भूल कभी न होती।

मिथ्या विश्वासकी मददसे अैसे मौकेपर दाअियाँ खूब फायदा अुठाती हैं, और अैसे मौकेपर घरके सभी लोग घबराये हुअे होते हैं और वह सब करनेके लिअे तैयार होते हैं, जो अुन्हें करनेके लिअे कहा जाअे। दाअी जो बच्चा जननेके कामकी मुखिया होती है, अुसकी बात कैसे टाली जा सकती है। अुस वक्त जो अुतारा, अुपाय बताया जाता है किया जाता है।

बच्चा पैदा करनेका काम औरत करती है, अैसा नहीं भार पशु करते हैं। पशुओंके बच्चे जंगलमें होते हैं और आदमीके बच्चोंसे कअी गुना तन्दुरुस्त होते हैं। कअी जंगली जातियाँ अैसी हैं जिनके बच्चे जंगलमें पैदा होते हैं वे भी शहरी बच्चोंसे ज्यादह तन्दुरुस्त होते हैं।

जन्मके रीतिरिवाजोंके बारेमें अब ज्यादा कहनेकी जरूरत नहीं, सिर्फ अितना समझ लेना काफी है कि हर जन्तर-मन्तरके पीछे कोअी-न-कोअी विज्ञानकी सचाअी छिपी रहती है। जितनी सचाअी होती है अुतना फायदा होता है, जितना अुसके साथ मिथ्या विश्वास रहता है अुतना नुकसान होता है। अुस नुकसानसे न व्यक्ति बचता है न समाज। अिसी सिलसिलेमें अेक आपबीती सुनिअे —

सन १९२३ में नागपुरमें झण्डा-सत्याग्रह जोरसे चल रहा था। स्वयंसेवकोंका अेक शिविर खुला हुआ था। वहाँ किसी स्वयंसेवकको बिच्छूने डंक मार दिया। किसीने कह दिया, हम बिच्छूका मंत्र जानते हैं। हमारे पास खबर पहुँची। हम मंत्र नहीं जानते थे,— पर स्वयंसेवकोंके सरदार होनेके नाते हम अुनके साथ चल दिये, जो हमें बुलाने आया था। डेरामें पहुँचकर हम बिच्छू काटे स्वयंसेवककी अुसी तरह झाड़-फूंक करने लगे जैसे मंत्रवादी करते हैं। हमने कअी बार बिच्छूका जहर अुतारते मंत्रवादियोंको देखा था। हमें अभी आधा मिनिट न हुआ था कि अेक मंत्रवादी आ पहुँचे। जैसे ही लोगोंने अुनके आनेकी खबर दी हमने छुट्टी ली। वह काम नये आये हुअेको सुपुर्द कर दिया। जब हम जाने लगे तो नये सज्जन बोले, आप ठीक कर रहे थे, मेरी क्या जरूरत थी। हम हैरान हुअे क्योंकि हम मंत्र जानते न थे। हमने अब यह किया कि झाड़फूंकका काम नये आदमीके सुपुर्द किया और हम खड़े-खड़े देखने लगे। थोड़ी देरमें जहर अुतर गया। हम नये मंत्रवादीके साथ-साथ बाहर आये, बोले, हम मंत्र नहीं जानते, आपने कैसे कहा ठीक कर रहे थे। वह भले आदमी थे। बोले, मंत्र कुछ नहीं होता, बात यह है कि जब बिच्छू डंक मारता है तब अुसके जहर चढ़नेको, कोअी दवा भले रोक सके मंत्र हर्गिज नहीं रोक सकता। मंत्र जहर अुतार सकता है। जहरको पूरी तरह चढ़ने देना ही होगा। मंत्रवादी अपनी अिस कमजोरीको बचानेके लिअे किसी-न-किसी तरह अितनी देर जरूर कर देते हैं कि वह अुस वक्त पहुँचे जब जहर पूरा चढ़ चुका हो। अुनके लिअे अुतारनेका काम रह जाता है। अुतारनेके लिअे यह करना पड़ता है कि पहले अुस आदमीका ध्यान अपनी तरफ करे जिसे बिच्छूने काटा हो। फिर अपने मनमें कुछ गुनगुनाकर अुससे कहना होता है, जिस जगह काटा है अुसको दिलके खिलाफ पटका दो जिससे दिलका खून जोर मारकर नीचेकी तरफ जानेकी जल्दी करे। अुस पटकेका नतीजा यह होता है कि तकलीफ या जहर नीचे अुतरना शुरू हो जाता है। दस-पाँच बार अिस तरह करनेसे तकलीफ अुस जगह तक आ जाती है जहाँ बिच्छूने डंक मारा होता है। अुस तकलीफको मिटानेके लिअे मंत्रवादी

गरम नमकसे सेकनेकी सलाह दे देता है। बताअिअे मंत्र क्या रहा? मंत्रवादी जहर न अुतारता तो जहर अपने आप नीचे अुतरता, हाँ, थोड़ी देर लगती। प्रकृतिने हर प्राणीमें दिलके खिलाफ हाथ-पाँव झटकनेका प्रबन्ध कर रखा है। आप देख सकते हैं। जैसेही बच्चेके हाथमें कोअी भिण्ड डंक मार दे वैसेही वह बच्चा अेकदम हाथ झटकना शुरू कर देता है। यही है बच्चेका अपना अिलाज आप करना।

मंत्रवादी पैसे कमानेकी खातिर लोगोंमें मंत्रकी श्रद्धा जगाते रहते हैं, अुसकी वैज्ञानिकताको छिपाये रखते हैं। यह बात आपसे छिपी हुअी नहीं कि हर मंत्रवादी जब किसीको मंत्र सिखाता है तब अुसकी शर्त होती है कि वह अुस मंत्रको किसीको न बताअे। अिस सिलसिलेमें अेक और सुन लीजिअे।

फीरोजाबादमें अेक आदमी था। वह हमपर बड़ी श्रद्धा रखता था, हमको गुरु मानता था। अेक दिन हम मंत्रोंके खिलाफ बोल रहे थे। वह आदमी मौजूद था। जब हम अपनी कह चुके और सब चले गये, वह बड़ी श्रद्धाके साथ बोला, महाराज, आपकी बात मैंने सुन ली, पर मैं खुद अेक मंत्र जानता हूँ अुससे चमत्कार मैं आपको दिखा सकता हूँ। हमने कहा, दिखाओ। अुसने मंत्र पढ़ना शुरू किया और अपनी जाँघमें अेक जगह सुअी खोप दी। बोला, देखिअे, यह है कि नहीं मंत्रका चमत्कार, मेरे खून नहीं निकला। हम बोले, क्या तुम हमारे कहनेसे मंत्र पढ़े बिना सुअी खोप सकते हो? वह बोला जरूर, हमने कहा खोपो। अुसने वैसा ही किया और खून नहीं निकला। यह तमाशा देखकर वह अेकदम भक्तिमें आकर हमारे पाँवपर गिर पड़ा। बोला, ठीक है मंत्र कुछ नहीं होते और पूछ बैठा फिर यह मामला क्या है? खून क्यों नहीं निकलता? हमने अुसे बताया जब तुम अपने हाथसे खालको खींच लेते हो तो खूनकी नसें नीचे रह जाती हैं और सुअी अुस जगह जाती है जहाँ नस नहीं है, फिर खून कहाँसे निकलेगा?

यह बात हमने अिसलिअे लिख दी कि हर रीति-रिवाज और मंत्रके पीछे श्रद्धाके घटाटोपमें विज्ञानका अंग छिप जाता है और अुससे बहुत नुकसान होता है। अिससे बचना हरेकका काम है।

विवाहकी रस्में अैसी तरहकी हैं। किसी रस्ममें कोअी जरूरत छिपी हुअी है किसीमें कोअी वैज्ञानिकता और कुछ अैसी रस्में हैं जिनमें दोनोंमेंसे अेक नहीं। वह लोगोंने पैसा कमानेके लिअे गढ़ ली हैं। आदमीके विश्वासकी कमजोरीसे आदमी खूब फायदा अुठा रहा है।

विवाहमें आरतीकी रस्मको ले लीजिअे। यह रस्म मंदिरोंमें खूब चलती है। अिसमें होता यह है कि थालीमें और चीजोंके साथ साथ अेक जलता दीपक रहता है। अुसको थाली समेत दो तीन बार अुस आदमीके दायें-बायें करते हैं जिसका आरता करना होता है। अिस रस्मकी तहमें जरूरत छिपी हुअी है। अब यह रस्म बिलकुल बेकार है। जरूरत यह है कि जितने पुराने मंदिर हैं, अुनकी वेदियाँ अैसी जगह बनी हुअी हैं जहाँ करीब-करीब चौबीसों घंटे अंधेरा रहता है पुजारी दियेकी रोशनीमें मूर्तिका शृंगार करता है। अुसे कभी-कभी अपने शृंगारको जाँचनेके लिअे दीपकको आँखके सामनेसे हटाकर दायें-बायें करना होता है। अैसा किये बगैर वह मूर्तिके दोनों तरफके शृंगारकी पूरी जाँच नहीं कर सकता। विवाह शादियोंमें आम तौरसे रस्में रातको होती हैं और दुल्हे-दुल्हनको सजानेका काम भी अुसी वक्त होता है। आरतेकी रस्म हमेशा सजानेके बाद की जाती है जब यह रस्म चली थी तब वह रस्म न थी, कलाकारकी जरूरत थी। अब वह रस्म है और सिवाय नुकसानके कोअी फायदा नहीं। अब दिनमें खुले मैदानमें आरता किया जाता है और अुसी तरह दिया जलाकर किया जाता है जिस तरह अंधेरेमें या रातमें।

रस्मोंके सिलसिलेका सिलसिला अैसा है कि अुसके लिअे अेक अलग किताबकी जरूरत है। पर दो-अेक रस्मोंका जिक्र करके हम पढ़नेवालोंमें अैसी भावना जगा देना चाहते हैं कि वे अपने आप ही रस्मोंकी परख कर सकें।

विवाहके अवसरपर कूड़ी यानी घूरा पूजनेका रिवाज है। वह भी अेक जरूरत है। गाँवमें शायद

आज भी अुसकी जरूरत हो। शहरोंमें वह बिलकुल बेकार चीज है। कूडी या घूरा अुस जगहका नाम है, जहां मुहल्लेभरका कूडा जमा रहता है। अुसको पूजनेका रिवाज है। पूजाके और काम छोडकर असली काम यह होता है, वहां अेक जलता हुआ दिया रखा जाता है। यह दिया ही असली जरूरत है। यह अिसलिअे होता है कि रातके वक्त बाहरसे आये बराती यह जान लें कि यहां कूडा पडा है और भूलसे अपने पांव अुसपर न रखें। दिनमें दियेकी जरूरत नहीं, पर, अगर घूरेकी पूजा दिनमें हुअी, तब भी दिया रखा जाअेगा। दिया रखना कभी जरूरी और अक्लमंदीका काम था, आज गैरजरूरी और बेवकूफीका काम है।

यों तो शृंगार रोज ही सब करते हैं, पर विवाहके अवसरपर वह रस्मके तौरपर किया जाता है और आजकल वह अितना भद्दा मालूम होता है कि शहरमें रहनेवालोंकी आंखें अुसे देखना पसन्द नहीं करतीं। जिस तरह मेंहदी रचाना, काजल लगाना, रालीसे चेहरेको रंगना, हाथमें कलावा बांधना अित्यादि कुछ रस्में जरूरतसे हैं, कुछमें वैज्ञानिकता छिपी है, कुछ लोभकी अीजाद हैं, कुछमें ये तीनों मौजूद हैं। काजलको ले लीजिअे, अुसमें वैज्ञानिकता ना यह है कि वह दवा है, आंखोंको रोशनी देता है। अुसके लगानेकी बात वैद्यकके हर ग्रंथमें मिल सकती है। जरूरत यह है कि वह शृंगारका अंग बन गया है और काली आंखें खूबसूरतीको और बढा देती हैं। यह दूसरी बात है कि काजल बेवकूफीसे लगाकर खूबसूरतीको बढानेकी जगह घटा दिया जाअे। काजलकी बजाय सुरमा ज्यादा ठीक रहेगा। क्योंकि वह सलाअीसे लगाया जाता है। वह अुतना ही लगता है जितना जरूरी होता है। लोभकी अीजाद यों है कि काजल लगानेवालीको कुछ पैसे मिलते हैं। अिसलिअे वह दिनमें लगाया जाने लगा। जरूरतके लिअे दवाके तौरपर काजल रातको लगाया जाता है। काजल लगाकर सो जाना जरूरी है, तभी वह फायदा करता है। पर रस्मसे और फायदेसे क्या लेना-देना? रस्मके माने है अैसे काम जहां अक्लको दखल न हो। अब रह गया अिस रस्मका धोखा, काली आंखें तन्दुरुस्तीकी पहचान हैं। पूरे तन्दुरुस्त आदमीकी आंखें कम काली होंगी। बीमार आदमीकी आंखें अपना कालापन अेकदम खो बैठती हैं। काजल अिसलिअे भी लगाया जाता है कि लोगोंको धोखा दिया जा सके। और बीमार आंखोंको तन्दुरुस्त आंखोंका रूप दिया जा सके। अिस सिलसिलेमें पढनेवालोंके मनमें कुछ और सवालात अुठ सकते हैं। पर अगर वे जरा कोशिश करें तो अपने सवालका जवाब खुद सोच सकते हैं। अुदाहरणके लिअे कुछ आंखें नीली होती हैं, कुछ पीली। पर हिन्दुस्तानमें वैसी आंखें बहुत कम मिलती हैं। अुन आंखोंके पलक काले होते हैं। वह भी काली अच्छी लगती हैं। हिन्दुस्तानी आंखोंकी वैसी आदत है, अिसलिअे अुन आंखोंको काजल सुन्दर बना देता है।

रीति रिवाजोंने हमारी अकलको अेकदम पीछे डाल दिया है। कुछ नासमझ आदमियोंके हाथोंमें अैसी सत्ता दे दी है कि वह समझदारोंपर शासन करने लगते हैं। रीति-रिवाजके मामलेमें बिरादरीके अनपढ और मूर्ख लोग रस्मोंकी याददाश्तके बलपर किसीपर रोब जमा बैठते हैं। कभी-कभी अिन रस्मोंको लेकर तरह-तरहके झगडे खडे हो जाते हैं। कअी रस्में अैसी हैं जो घर-घरमें अलग-अलग तरह मनाअी जाती हैं। अुस वक्त तो बडी मुश्किल हो जाती है, जब किसी विवाहमें अेक ही रस्म लडकेवालेके यहां अेक तरह मनाअी जाती हो और लडकीवालेके यहां दूसरी तरह। दोनोंमें, जो जोरदार होता है, अुसीकी रस्म चलती है। अगर दोनों बराबरके हुअे तो या तो दोनों रस्में होती हैं या दोनोंकी कोअी खिचडी तैयार कर ली जाती है।

विवाहकी अनगिनत रस्में हैं। अुन सबपर यहां लिखा जा सकता, पर अितना ही याद रखना काफी है कि रस्में हमारे अूपर अधिकार न जमा पाअें, अुनपर हमारा अधिकार रहे। वे जरूरत लिहाजसे बदलती रहें। अिसमें शक नहीं कि रस्में बदलती रहती हैं, बदलती रही हैं, और बदलती रहेंगी। पर क्या ही अच्छा हो अगर अुन रस्मोंको हम सोच-समझकर बदलें। सोच-समझकर बदलनेसे रस्में हमारे कामकी चीज बन सकेंगी, अपने आप बदली हुअी रस्में हमारे काममें अडचन बनी रहेंगी।

सन् १९०३ का जिक्र है। हमारे अेक दोस्तके बूढ़े बापकी मौत हुअी। अुनका बाप अितना बूढ़ा था कि शोक मनानेकी जरूरत न थी। अुधर हमारा दोस्त रस्मोंके मामलेमें अितना अुदार था कि किसी रस्मको अपनानेके लिअे तैयार। ये दो बातें मिलकर अेक अजब रूप ले बैठीं। मुर्देकी रथी बनानेसे जलानेतक कदम कदम रस्मोंका सवाल अुठा। हमारे पढनेवाले अक बात और नोट कर लें कि हमारे दोस्तके बापकी रथी ले जानेमें जितने आदमी शामिल थ उनमें अेक भी अैसा न था जिसकी अुमर ३०-३५ से अूपर हो। हमारे दोस्तके घरमें कोअी बुढ़िया न थी। कोअी अैसा न था जो किसी खास रस्मपर जोर देता। नतीजा यह हुआ कि जो रस्म जिसने बतायी हमारे दोस्तने की और करीब करीब सब निभ गयी। अब मुर्देको चितापर रखनेकी घडी आयी। यहाँ मुश्किल पडी। हमने कहा, हमारे यहाँ मुर्देको चितापर लिटाया जाता है यानी पेटके बल। कुछ लोग बोले नहीं चित लिटानेकी रस्म है। यह सुनकर हमारा दोस्त हँस पडा और बोला, भाअी अब मेरे बाप तुम सबके बाप, तुम जैसा चाहो करो। रस्मपर चल पडी बहस, हमारी दलील थी कि पेटके बल लिटानेमें बुद्धिमानी है, सूझ-बूझ है, वैज्ञानिकता है और शिष्टता, चित लिटानेमें हमें कोअी अैसी बात नजर नहीं आती। पटके बल लिटानेमें सूझ बूझ यह है कि पेटकी तरफका हिस्सा मुलायम है, जल्दी आग पकडेगा और आदमीका चेहरा जो आग जलनेसे बुरा रूप लेगा वह लोगोंकी नजरोंमें न आ सकेगा। शिष्टता यह है कि वह अंग नीचे रहते हैं जिनको आम तौरसे छिपाये रखनेका रिवाज है। वैज्ञानिकता यह है कि मुर्दा आग लगनेपर जो अूपरकी तरफ उठता है, अब नीचेकी तरफ जाअेगा। और चिताके बिगडनेका डर न रहेगा। टाँगोंका घुटनेसे नीचेका भाग अूपरको अुठेगा और वह अपने आप आगमें जा पडेगा। अिसलिअे यह रस्म ठीक है। पर अिस रस्मवाले हम अकेले थे और बाकी सब थे चित लिटानेकी रस्मवाले। हम हार गये। आखिर यह तय हुआ कि पहले पट लिटाया जाअे और फिर चित, वैसा ही किया गया।

मुर्देकी मिट्टीको ठिकाने लगानेकी रस्में अनगिनत हैं। नयी-नयी रस्में भी चल पडी हैं। कलकत्तेमें अिंजनमें जलानेकी रस्म है। कहीं-कहीं बिजलीसे जलानेकी रस्म है, पर अमीतक मुर्देसे अितना मोह नहीं छूटा कि अुसका कुछ अुपयोग कर लिया जाअे, जिस तरह गाय-भैंसोंका। अिस मामलेमें सुधार होनेमें सैंकडों बरस लगेंगे। जो सुधार अबतक हुअे हैं अुन सबमें जरूरतके लिहाजसे लोग काफी आगे बढे हैं पर मोहके लिहाजसे वहींके वहीं हैं। सुना था, लडाअीके मौकेपर किसी डॉक्टरको मुर्दोंके अुपयोगकी बात सूझी थी, अुपरसे वैसा करनेसे रोक दिया गया। अुसे यह डर दिखाया गया कि अगर अैसा किया गया तो अिस अुपयोगकी खातिर आदमी अैसे ही मारे जाने लगेंगे जैसे पशु पक्षी। मुर्दोंका अुपयोग न हो सका।

अिसी सिलसिलेमें कपाल क्रिया नामकी रस्मका थोडा जिक्र कर देना ठीक होगा। अिस रस्ममें यह होता है कि जब मुर्दा काफी जल चुका होता है तब बाँससे अुसकी खोपडी फोड देते हैं। अिसकी तहमें सूझ बूझ है, जरूरत भी है। अुस वक्त अिसकी बहुत ज्यादा जरूरत है जब चिताके आसपास औरतें या बच्चे हों। गर्भवती औरतको जलानेका रिवाज नहीं है। वजह यह है कि कभी-कभी गर्मी पाकर पटमेंसे बच्चा निकलकर चितासे दूर जा पडता है। अुससे लोगोंके घबरा जानेका डर रहता है। ठीक अिसी तरह आदमीके खोपडीके अंदरका भेजा कभी कभी अितना गर्म हो जाता है कि वह खोपडीको आवाजके साथ तोडता है और अुसके टुकडोंको दूरतक फेंकता है, अिसलिअे खोपडीको जान बूझकर तोड दिया जाता है ताकि भाप निकलनेके लिअे रास्ता बन जाअे और खोपडी अिधर-अुधर छिटकनेका डर न रहे। अिसीका नाम कपाल क्रिया है।

रस्म रिवाजोंको अपनी सीमासे बाहर नहीं जाने देना चाहिअे। चाहिअे यह कि समय समयपर रस्म रिवाजोंकी जाँच पडताल होती रहे, अुनमें कमी बेशी होती रहे और वे कभी अैसी न बन पाअें जो हमारे विश्वासपर अन्धविश्वास बनकर जमी रहें।

[नागपुर।

स्व० सुब्रह्मण्य भारतीके कान्हा-गीत

• प्रो के अेस. चिदम्बरम, अेम. अे, 'मारद्वाजन' •

६. कान्हा मेरे सद्गुरु

पुन्नाग-वराळि रागम (तिस्रजाति अेकताल)

गय अिस गीतमें, राष्ट्रके महाकवि भारतीने अदभुत तथा भक्ति रसका आश्रय लेकर अपने आराध्य कृष्णका वर्णन, सदगुरुके रूपमें किया है। अुनका कहना है—

शात्तिरगळ पल तेडिनेन् अगु
शर्कंयिल्लादन शर्कंयाम् पळ
गोत्तिरगळ् शोल्लु मूडर्तम्-पोय्मै-
क्कूडयिल् अुण्मै किडैक्कुमा ?—नेञ्जिल्
नात्तिर अन्द वर्हैयिलु-जा
माय अुरुन्दिडल् वेण्डुमे-अेनु
आत्तिर निन्ड्रदनिडै-नित्त
आयिर तोल्लैहळ् शून्दन ॥ १ ॥

'मैंने कभी शास्त्रोंको खोज कर डाला। अुनमें अैसी कोअी बात नही दिखायी दी, जो शंकास्पद न हो। निःशंक निरारण कर लेनेकी कोअी बात अुनमें हो—अिसीमें शक है। आखिर वे हैं क्या? प्राचीन गोत्रोंकी गाथा बघारनेवाले मूढोंकी झूठ-मूठकी बातों रूपी कूड़ करकटका टोकरी ही तो हैं! अुनके जरिये सत्यकी प्राप्ति कैसे सम्भव है? अिस अुधेड़बुनमें लगे रहते हुअे भी मेरे हृदयमें हमेशा यह अुत्सुकता प्रबल हो रहा है कि येनकेन प्रकारेण, जगकी मायाकी पहचान पा लेनी चाहिअे। अिस प्रयत्नमें लगते हो मुझे नित्य हजारों मुसीबतोंने आ घेरा।"

नाडु मुळुदिलु चुट्रि नान्-पल
नाट्कळ् अलैन्दिड्ड पोदिनिल्-निरं-
न्दोडु यमुनैक्करैयिल्-तडि
अून्डिच्चेन्ड्रार् आर् कियवनार् ओळ
कूडु मुहम् तडियुनान्-कुडि
कोण्ड विरियु जटैकळ्-वेळ्ळ
ताडियु कण्डु वणंगियेँ-पल
सर्गति पेशि वरहैयिलु, . ॥ २ ॥

दुनिया भरका चक्कर लगाते हुअे, कभी दिन भटकते बीते। अेकबार देखा, जल प्रवाह-शोभित यमुनाके किनारे-किनारे, अेक वृद्ध सज्जन, लाठी टेकते हुअे चले जा रहे थे। मैं अुनके पास गया। अुनका अुज्ज्वल मुख, स्वच्छताके आगार रूपी नयन, शुभ्र जटा-जूट तथा सफेद दाढी आदि देख, अुन्हें प्रणाम किया। मैं फिर, अुनसे कभी बातें करता चला। अितने ही में, . . "

अेन्नुळत्तार्व आरिन्दवर्-मिह
अिन्बुड्रु रैत्तिडलायिनर्-"तम्बि,
निन्नुळत्तिर्कुत्तहुन्दवन् चुडर्
नित्तिय मोनत्तिरुप्पवन् अुयर्
मन्नर् कुलत्तिल् पिरन्दवन्-वड
मामधुरैप्पति आळ्हिन्ड्रान् कण्णन्
तन्नैच्चरणेन्ड पोवैयेल् अवन्
सत्तिय कूरुवन्' अन्ड्रनर् ॥ ३ ॥

"अुन्होंने मेरे मनकी चाह भाँप ली और प्रेमपूर्ण स्वरमें कहा—'रे भाअी अुत्तरमें, महान् मथुरापुरीका शासन कर रहा है अेक 'कान्हा'—नामधारी राजा। वह बालक, तुम्हारे विचारोंके अनुकूल है। वह अूँचे राजकुलमें पैदा हुआ था पर अब वह अुज्ज्वल नित्य समाधिमें लीन है। तुम अुसकी शरणमें जाओ तो वह तुम्हें सत्यका परिचय करा देगा।'

मा मधुरैप्पतिसेन्ड्रु नान् अु
वार्हिड्ड कण्णनैप्पाड्रिय अेन्ड्रन्
नाममुमूर करत्तुमे शोल्लि
नल्मै तरहेन वेण्डिनन्-अवन्

कामनॅप्पोन्ड वडिवमु अिळ
काळॅयर् नट्पु पयक्कमु केट्ट
भूमियॅक्काक्कु तोपिलिले ॲन्द-
प्पोदु शेलुत्तिड् चिन्तॅयु ॥ ४ ॥

'मैं तुरन्त अुस सबसे बडी मयूरापुरीमें जा पहुँचा। काहाके दर्शन किये। अपना नाम धाम बताकर मनोरथ व्यक्त किया और कुशल प्रदान करनेकी प्रार्थना की। पर कामदेव जैसा अुसका सुन्दर रूप नवयुवकोंके साथ अुसकी मैत्री और चाल चलन बिगडी हुअी भूमिके शासन करनेका अुसका काम, अुसकी चिन्ताशीलता

आडलु पाडलु कण्डु नान्-मुन्नर्
आट्करयिनिल कण्डदोर् मुनि
वेड धारिर्त किपवरॅक् कोल्ल
वेण्डु अन्ट्रुळत्तिल् अॅण्णिनेन्- विट
नाडु पुरिन्दिडु मन्नवन् कण्णन्
नाळु कवलॅयिल् मूपहिनोन् तवप्-
पाडु पट्टोक्कुं विळंगिडा अुण्मॅ
पाथिवन अेड्डन कूरुवान् ?' ॥ ५ ॥

(तथा) नाचने गानेमें कौशल देखने ही मेरे मनमें हुआ कि यमुनाके किनारे मुनि वेषधारी जो बूढ़े मिले अुन्हें मार ही डालना चाहिअे- मैंने मन-ही मन सोचा 'अिस छोरेसे देशका शासक यह काहा, जो कि हमेशा चिन्ता मग्न ही दीखता है कैसे मुझे सत्यका परिचय दे सकेगा ? जो बड बड तपस्वियों तकके लिअे अज्ञात है तत्सबंधी बातें यह पार्थिव कैसे बता पाअेगा ?

अॅन्ट्रु करुदि अिरुन्दिट्टन् पिन्नर्
अन्नॅत्तनि अिड कोण्डु पोय्-' निन्नॅ
नन्ड्रु महवुह ! मैन्दन ! -पर
ज्ञान अुरॅत्तिडक्केटपनी नेज्जिल्
ओन्ड्रु कवलॅ अिल्लामले चिन्तॅ
अुन्ट्र निरुत्तिवकळिप्पुट्रे तन्नॅ
वे ट्रु मरन्दिडु पोयदिनिल अगु
विण्णे अळक्कु अरिवु तान् ! ॥ ६ ॥

'मैं यह सोचता ही रहा कि वे मुझ कहीं अकान्तमें ले चले और कहने लगे— बेटा तेरा कुशल हो ! अुस परम ज्ञानकी बात सुनो। हृदयको चिन्तासे अछूता रखकर बिलकुल निश्चिन्त हो। बडी अकाग्रतासे मनको स्थापित कर आनन्द मग्न हो अपने आपको जीतकर, जब तुम सुध बुध भूल जाओ, तन्मय हो जाओ तभी अुधर विस्तृत आकाश भरको नापनेवाली बुद्धि हो जाती है।

"चन्दिरन् जोति अुडॅयदाम अदु
सत्तिय नित्तिय वस्तुवाम्-अदॅच्
चिन्तिक्कु पोदिनिलवन्दु तान्-निन्नॅच्
चेर्न्दु तपुवि अरुळ शेयु-अदन्
मत्तिरत्तालिव् अुलहेला-वन्द
मायक्कळिप्पेरु कूत्तक्काण- अिदॅच
चत्तत पोय्-अॅन्ट्रैत्तिडु-मठच्
चात्तिर पोय्' अॅन्डु तळ्ळडा ! ॥ ७ ॥

'चन्द्र ज्योतिष्मान है। वह सत्य है अेक नित्य वस्तु है। जभी तुम अुसका सोचो तत्क्षण वह तुम्हारे पास आ जाता और तुम्हें गले लगाकर कृपाकी वर्षा कर देता है। अिस विश्वभरमें अुसकी मंत्र शक्तिसे दृश्यमान मायाके रास नर्तन देखो। जो अज्ञानमय शास्त्र कहते हैं कि यह दुनिया सत्य मिथ्या है वे शास्त्र ही सचमुच असत्य हैं, अुन्हें तुम दुत्कार दो।

आदित्तनिप्पोरुळ आहु ओर-कडल्
आर कुमिवि अुयिहळाम्-अदच्
चोदियॅरिवॅमु ज्ञायिर-तन्नॅच्
चूळ्न्द कदिर्हळ् अुयिहळाम्-अिंगु
मोदिप्पोरुळहळ अॅवॅयुमे—अदन्
मेनियिल् तोण्ड्रिडु वण्णगळ्—वण
नीति अरिन्दि वम् अॅळ्दियॅ—ओर
नेमॅत्तोपिलिल् अियगुवार् ॥ ८ ॥

आन्तिम श्रेष्ठ वस्तु जो समुद्र है अुसमें अुमडते हुअे बूँद बूँद भी जीव हैं। ज्योतिकी खान अुस सूर्य चारों ओरसे बिखर पडनेवाली किरण भी तो जीव हैं। अिधर दूसरी जो जो चीजें विद्यमान हैं अुनकी आकृति पर चमकनेवाले रंगविधान कभी प्रकारके हैं। अुनको

रीति-नीति समझकर आनन्दित हो, किसी सोधे-सादे काममें लगकर जो प्रयत्नशील होते हैं .. "

"चित्तत्तिले शिव माड्वार—अिगु
शन्दु कळित्तुलहाळुवार्—नल्ल
मत्त मदवेकळिर पोल्—नडं
वाग्दिरमान्दु तिरिहुवार्—'अिगु
नित्त निहप्वदनंतुमे—अेन्तै
नीण्ड तिरवल्लाल् वर—अिन्व
शुद्ध सुख तनि आनन्दम्'—अेनव्
चन्दु कवलेंहळ् तळ्ळिये .. ॥९॥

'(वे ही) अपने चित्तमें शिवको पाते हैं। अिधर वे मिलजुलकर सानन्द विश्वभरका शासन करते हैं। मदमस्त हाथीकी-सी चाल अपनाकर वे गर्वसे घूमते फिरते हैं। वे समझते हैं—'अिधर विश्वमें दिन-ब दिन जो कुछ होता है, वह सब कुछ हमारे परम पिताकी अनन्त कृपाके फलस्वरूप, मधुर शुद्ध सुख व श्रेष्ठ आनन्द मात्र है। अिसलिअे वे दूसरी समग्र चिन्ताओंको दूर कर डालते हैं।"

'जोति अरिविल् विळगवु—अुयर्
शूच्चिच मतियिल् विळगवु—अर
नीति मुरै वधुवामले—अेन्द
मरम् भूमितोयिल् शेय्दु—कले
ओदिप्पोरळियल् कण्डु ताम—पिरर्
अुट्टिडु तोल्लैहळ् माट्रिये—अिन्व
मोदि विपिरक्कु विधियिनार्—पेण्म
मोहत्तिन्, शल्वत्तिल्, कीर्तियिल् ..॥१०॥

"तव अुनकी बुद्धि बड़ी अुज्ज्वल हो जाती है। नय-तत्त्वयुक्त मतिमान हो जाते हैं वे। धर्म-नीतिकी रीतिमें अविचल वे हर तरहके लौकिक कामोंमें लगे रहते हुअे भी कलाका अध्ययनकर, स्वयं अर्थशास्त्र-विचक्षण हो दूसरोंकी समग्र दुख बाधाओंको दूर करनेमें लग जाते हैं। कामकी लहर मारनेवाली दृष्टि युक्त हो, वे स्त्री, मोह सम्पत्ति, कीर्ति... .."

"आडुदल् पाडुदल् चित्तिर—कवि
आदि अिनैय कलैहळिल्—अुळ्ळ
ओडुपट्टेन्ड् नडप्पवर्—पिरर
अीन निले कण्डु तुळुळ्ळवार्—अवर्
नाडु पोरुळहळ् अनेत्तंयु—चिल
नाळिनिल् अेय्दप्पेरहुवार्—अवर्
काडु पुदरिल् वळरिनु—देय्वक्
कावनमेन्ड्र्दप्पोट्रलाम.. ... ॥११॥

"नृत्य, गीत, चित्रकला, कविता आदि अितरेतर कलाओंमें मन लगाये रहते हैं। दूसरोंकी हीन दशा देख तड़प अुठते और अुनकी चाहकी समग्र सम्पत्तिकी प्राप्ति कुछही दिनोंमें करा देनेके अुपाय कर देते हैं। चाहे वे किसी जंगल या झाड़ीमें गुजरते हों, वे प्रदेश दैवी नन्दन-वन जैसे आदरणीय हो जाते हैं।"

"ज्ञानियर् तम् अियल् कूरिनेन्—अन्द
ज्ञान विरैविनिल् अेय्दुवाय्"—अेन
त्तेनिल्नियं कुरलिले—कण्णन्
शोप्पवु अुण्मै निले कण्डेन्—पण्डं
अीनमर्गिदक्क नवेलाम्—अेङ्डन्
अेहि मरैन्दतु कण्डिलेन्—अदि
वान तनिच्चुडर् नान् कण्डेन्!—अदन्
आडल् अुलहेन नान् कण्डेन्! ॥१२॥

"मैंने ज्ञानियोंके स्वभावकी बातें कहीं। अुनका वही ज्ञान तुम्हें भी शीघ्र अुपलब्ध हो जाअे!" कान्हाने, मधु मधुर स्वरमें जो कुछ कहा, अुनके सुनने मात्रसे मैं सत्यकी असली स्थिति समझ गया। पुराने हीन मनुष्योंके स्वप्नका जो कुछ प्रभाव मेरे मनपर पड़ा हुआ था, वह अब जाने क्या हुआ, कहाँ गया! बुद्धिका श्रेष्ठ प्रकाश मात्र मैंने अब देखा। और देखा विश्व भरमें अुसके नृत्यको।'

नीमाड़ी सन्त सिंगाजी और अुनका साहित्य

: श्री कृष्णलाल 'हंस', अेम अे, साहित्यरत्न :

सन्त सिंगाका जन्म १५७४ वि स में खजूरी नामक ग्राममें हुआ था, जो मध्यभारतीय नीमाड़ जिलेमें है। अिनके पिताका नाम भीमा तथा माताका नाम गौरीबाअी था। ये जातिके गौली थे। कुछ दिनोंके पश्चात् अिनके पिता मध्यप्रदेशीय नीमाड़के हरसूद नामक ग्राममें बसे। अेक दिन जब ये अपने किसी सम्बन्धीके निमन्त्रणपर जा रहे थे तब मार्गमें अिनकी सन्त मनरंगीरसे भेंट हो गयी और अुनकी वाणीसे प्रभावित होकर अिन्होंने अुनसे दीक्षा देनेका आग्रह किया। पर अुन्होंने अुस समय दीक्षा देना स्वीकार न किया। अन्तमें रामनगर जाकर अिन्होंने अुनका शिष्यत्व स्वीकार किया। ये अपने गुरुके बड़े आज्ञाकारी थे। बिना अुनकी आज्ञाके कोअी कार्य न करते थे। आरम्भमें अिन्होंने सन्यास लेनेका हठ किया, पर गुरु मनरंगीरने कहा कि "अेक सच्चे भक्तको सन्यास लेनेकी आवश्यकता नहीं वह अपने घर, अपने परिवारके साथ रहकर भी अीश्वरको पा सकता है। तुम गृहस्थ रहते हुअे भी अपनेको संसारसे विरक्त समझो और घर, स्त्री, पुत्रादिको अीश्वरकी वस्तु समझते हुअे आत्मदेवका ध्यान करो।" सिंगाजी अपने घर आ गये, और अुसी दिनसे संसारसे विरक्त होकर आत्मामें निवास करनेवाले प्रभुके ध्यानमें मग्न हो गये।

सन्त सिंगाके जीवनसे सम्बन्धित अनेक चमत्कार-पूर्ण घटनाअें सुनी जाती हैं। खेमदासने 'सिंगाजीकी परचुरी"में लिखा है कि अेकबार अिनकी भैंसें चोर चुरा ले गये। घरभरने अिन्हें अुनका पता लगानेको कहा, पर अिन्होंने कोअी ध्यान न दिया। अन्तमें माताके नाराज होनेपर ये चुरायी गयी भैंसोंके केड़े और केड़िया (भैंसके बच्चे) लेकर जंगलकी ओर चले गये और कुछ ही समयके पश्चात् भैंसोंके साथ घर लौट आये।

अेक बार अिनके परिवारने अिन्हें मान्धाताकी यात्रा करनेके लिअे अपने साथ चलनेको कहा। अिन्होंने अुत्तर दिया कि 'आदि ओंकार' तो हमारे घटमें ही निवास करते हैं अुनके दर्शनको मान्धाता जानेकी आवश्यकता नहीं। अन्तमें अिनका परिवार अिनसे नाराज होकर मान्धाता चला गया और तीसरे दिन वहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँचनेपर परिवारवालोंने देखा कि सिंगाजी अेक नावमें बैठे नर्मदामें विहार कर रहे हैं। खेमदासने अिसी प्रकारकी और भी कुछ घटनाअें अुनकी 'परचुरी'में लिखी हैं।

बहुत दिनोंतक हरसूदमें रहनेके पश्चात सिंगाजी पीपल्या ग्रामको चले गये। वहाँ ठाकुर हरजू नामक अेक पटेलने अिनके निवासकी व्यवस्था कर दी। खेमदासने लिखा है कि यहीं भगवानने अिन्हें अेक सन्यासीके रूपमें दर्शन दिये और सिंगाजीने अुनसे पुनः जन्म ग्रहण न करनेका वरदान प्राप्त किया। यह पीपल्या ग्राम बाणगंगाके तटपर बसा बतलाया गया है। आजकल अिस ग्रामके समीप जो वेण नदी बहती है, वही अुस समय बाणगंगा कही जाती थी।

'परचुरी"में लिखा है कि अेक दिन अिनके पास कुछ सन्यासी आये और अिनसे दूध पिलानेको कहनेपर अिन्होंने कहा कि स्त्री दूध दुहकर लानेके लिअे गयी है, आप कुछ समयतक बैठें। पर सन्यासी बहुत भूखे थे, वे वहीं चले गये, जहाँ अिनकी स्त्री दूध दुह रही थी। अिन्होंने दुहा हुआ सब दूध पी लिया और सिंगाजीकी स्त्री जसोदा रीता बर्तन लिये घर आ गयी, पर अुसने जैसे ही रीता बर्तन अपने सिरसे अुतारकर नीचे रखा, दूधसे भरा पाया।

सत सिंगाने अपने जीवनके अंतिम दिन पीपल्यामें ही बिताये। जब अिनका मृत्युकाल समीप आया, तब अिन्होंने अेक शिष्यको रामनगर भेजकर गुरु मनरंगीरसे

शरीर त्याग परमधाम जानेकी आज्ञा मांगी। आज्ञा प्राप्त होते ही अिन्होंने अपने परिवार और शिष्य मंडलको सूचना दे दी। अिन्होंने स्नान किया और अपने मस्तकपर चन्दनका तिलक लगा ध्यानस्थ हो गये और अिस प्रकार अपनी आत्मामें स्थित निराकार ब्रह्मका ध्यान करते हुअे श्रावण शुक्ल ९ को परमधाम सिधारे।

खमदासने संवत १७८८ वि में गुरु सिंगाजी द्वारा दर्शन देने तथा अपना सब चरित्र सुनानेका अुल्लेख किया है। तदनुसार खमदास लिखित "सिंगाजीकी परचुरी" सिंगाजी द्वारा बतलायी गयी बातोंपर आधारित कही गयी है।

सिंगाजीका साहित्य

काव्य रचनाकी दृष्टिसे संत सिंगा नीमाडी लोक साहित्यके अेक सर्वश्रेष्ठ लोककवि हैं। ये वास्तवमें 'लोककवि' हैं। जिनके पद नीमाडी भाषी क्षेत्रके अतिरिक्त मध्य प्रदेशके होशंगाबाद, बैतूल, छिंदवाडा जिलों और मध्यभारतके भी कुछ मालवी भाषा क्षेत्रमें सुने जाते हैं। संत सिंगा और अुनके पदोंके प्रति अिस क्षेत्रकी ग्रामीण जनताकी अटूट श्रद्धा है। वे प्रत्येक अुपवास व्रत और त्योहारोंके अवसरपर गाये जानेवाले भजनोंमें अिनके पदोंको प्रमुख स्थान देते और झूम झूम कर गाते हुअे भक्ति विभोर हो जाते हैं। हम संत सिंगाके पदोंको विषयकी दृष्टिसे निर्गुण स्वरूप-वर्णन, ब्रह्म और जीवकी अेकता, पाखंड-खंडन, अुलटबानी, रहस्यवादी रूपक, विरक्त भावना, सतगुरु महिमा तथा विनयके पदोंमें विभाजित कर सकते हैं। अुदाहरणार्थ प्रत्येक विषयसे संबंधित अेक-अेक पद देखिअे —

निर्गुण ब्रह्म —

निरगुन ब्रह्म है न्यारा, कोअी समझो समझन हारा ॥
खोजत ब्रह्म जलमें[1] सिरानो[2], मुनिजन पार न पावे।
खोजत-खोजत निवजी थाके असो अपरम्पारा ॥ १॥
वेद कहे अरु अगम बानी सुरता[3] करो विचारा।
काम क्रोध मद, मत्सर व्यापे, झूठा कल्प[4] पसारा ॥२॥

———

१ जन्म २ बीत गया ३ समझदार, ४ संसार।

त्रिकुटी महल[5] में अनहद[6] बाजे होत सबद झनकारा।
सुकमन[7] सेज सुन्न[8] में झूले,
सोहम[9] पुरुष हमारा ॥३॥
सहसत्री[10] निसदिन रटे, रैन दिवस अिक सारा।
रिखि-मुनि और सिद्ध चौरासी
तैंतिस कोटि पचिहारा ॥४॥
अेक ब्रह्मकी रचना सारी जाका सकल पसारा।
सिंगाजी भर नजरों देखें, वो ही गुरू हमारा ॥५॥"

अिस पदकी विचार धारा हिन्दीके संत-साहित्यकी ही विचारधारा है। कबीरकी त्रिकुटी महल, अनहद सुकमन सेज आदिकी कल्पना हमें सिंगाजीके अिस पदमें भी अुसी रूपमें मिलती है। भाषा-साम्य भी स्पष्ट है।

ब्रह्म-जीवकी अेकता

'मैं तो जानू साअीं दूर है, मुझे पाया हो नेडा[11]।
रैनो रही सामरत[12] भअी, मुझ आसरा तेरा ॥
तुम तो सोना हम गहना, मुझ लगा है हाका।
तुम बोले हम देह धरी, बोले कअी रंग भाका[13] ॥
तुम चंदा हम चांदनी[14], रैनी[15] अुजियाला।
तुम सूरज हम घामला[16], सांअी चौंजुग[17] पुरिया ॥
तुम तरवर हम पंछिडा[18], बैठे अेकहो डाला।
चोच मार फलभाजिया[19], फल अमृतसारा ॥
तुम दरियाव हम माछली बिम्बास[20]का रहना।
देह गली मट्टी भअी, तेरा तुज-में[21] समाना ॥
तुम विरछ[22] हम बेल है, मूलसे लपटाना।
कहे सिंगा पहिचान ले, दरियाव ठिकाना[23] ॥'

यही भाव व्यक्त करनेवाला संत कबीरका अेक पद देखिअे—

———

५ दोनों भौंहोंके बीचका स्थान (आज्ञाचक्रका मध्य भाग) ६ ब्रह्मांडमें होनेवाला शब्द, ७ सुषुम्ना, ८ शून्य (ब्रह्मांड), ९ जो हमारी आत्मामें है, १० शेषनाग ११ समीप १२ सामर्थ्य १३ भाषा १४ चांदनी, १५ रात्रि १६ धूप १७ चारों युग १८ पक्षी १९ फोड़ा २० हमेशा २१ तुझमें, २२ वृक्ष, २३ संसार रूपी समुद्रमें रहनेका स्थान।

'माधव जलमें पियास न जाअि।
जल महि अगनि अुठी अधिकाअि ॥
तू जलनिधि हमु[1] जलका मीनु।
जल महि रहमु जलहिबिनु खीनु[2] ॥
तू पिंजर हमु सुअटा तोर।
जमु मजार[3] कहा कर मोर ॥
तू तरवर हमु पखी आहि।
मद भागी तेरो दरसन नाहि ॥
तू सतगुरु हमु नअुतनु चेला[4]।
कहि कबीर मिलु अंतकी बेला।

दोनों संत कवियोंकी अपने आराध्यके प्रति अनन्यता प्रशंसनीय है। भक्त और भगवानकी यह अकरूपता हिंदीके अन्य भक्त कवियोंके काव्यमें भी विद्यमान है।

पाखंड खंडन

कबीरकी तरह संत सिंगाने भी अुपासना और भक्तिके नामपर किये जानेवाले आडम्बरोंको पाखंडकी संज्ञा दी है।

संत सिंगाजीने कोनने देव-पूजा, तुलादान, शिवलिंगपूजा आदि सनातन कर्मकांडोंको ही नहीं पर नाथ पंथियोंकी धार्मिक क्रियाओंकी भी निंदा कर अुन्हें पाखंड बतलाया है। सिंगाकी दृष्टिमें अपनी आत्मामें निवास करनेवाले 'बिनादेहीके साहब' की पहिचाननेका प्रयत्न ही मुक्तिका साधन है।

अुलटवासी —

कबीरकी तरह सिंगाने भी कुछ अुलटवासी पद रचे हैं। अुनका निराकार ब्रह्मपर रचित अेक पद अिस प्रकारका है—

'फूल नजदीक नजर नहिं आवे
सतगुरु बिन कौन बतावे ॥
बिना पाल[5] को सरवर कहिये
लहरी अुठकर आवे ।
बिना चोंचको हंसा कहिये
मोती चुग चुग खावे ॥
बिना बीजको बीरछ[1] कहिये
डाल नवी नवी[2] आवे ।
बिना पंखको पंछी कहिये
अुडि अकासको जावे ॥
बिना पत्रकी बेली कहिये
छाव नजर नहीं आवे ।
बिना फूल फल लागा अुनको
कोअी साधुजन पावे ॥
अुलट ज्ञान कोअी बिरला बूझे
और न बूझे कोअी ॥
कहे जन सिंगा सुन भाअी साधू,
चौरासी छूट जावे ॥

अिस अेकही पदमें अिस लोकगायक संत कविने कितनी सुंदरतासे अदृश्य अजन्मा और निराकार ब्रह्म तथा अुसकी आश्चर्यमयी विविध लीलाअें अुपस्थित कर दी हैं।

रहस्यवाद —

कबीर हिन्दी काव्य जगत्में रहस्यवादके प्रथम स्रष्टाके रूपमें प्रसिद्ध हैं। अुन्होंने निर्गुण ब्रह्मोपासनाके विस्तारके साथ जिस रहस्यवादको जन्म दिया अुसके प्रभावस्वरूप तत्कालीन अनेक संत कवियोंका आविर्भाव हुआ। अुन सभीने निर्गुण काव्य धाराको मूल्यवान योग प्रदान किया पर अुनमेंसे अधिकांश कबीरकी तरह अपने काव्यमें रहस्यवादको स्थान देनेमें पूर्ण सफल न हो सके। मध्यप्रदेशके अेक अनुतन कोनेमें निर्गुण भक्तिकी मस्तीमें मस्त संत सिंगाके अनेक अैसे पद प्राप्त हैं जिनमें कबीरकालीन अनेक कवियोंसे कहीं अधिक स्पष्ट और प्रौढ़रूपमें रहस्यवादके दर्शन होते हैं। अुदाहरणार्थ अुनका अेक पद देखिअे—

कोअी देखो दरियावकी लहरी
सतगुरु सोधा हेरी[3] ॥

---

१ मैं २ अुदास ३ बिल्ली (नीमाडीमें माजर मराठीमें माजर और संस्कृतमें मार्जार कहते हैं।), ४ नया शिष्य ५ तट।

१ वृक्ष, २ नयी ३ ढूंढना।

अिस दरियावमें सात समुन्दर[1],
बीच गर्येब[2]की डेरी[3] ।
डेरी अन्दर अलख[4] विराजे,
जहाँ सुरत[5] लाग रही मेरी ॥
अिस दरियावमें बाजा[6] बाजे,
बाजे आठों पहरी ।
ताल पखावज बाजे झाजरी,
बसो बाजे गयरी[7] ॥
बिना पेडको[8] वृक्ष कहिये,
डाल पत्त ना फेरी ।
रूप रेख वाको कछु नाहीं,
फिरी रह्यो चहुफेरो ॥
अगम अगोचर पद पाया भाओ,
क्या पूछोरे मेरी ।
कहे जन सिंगा सुनो भाओ साघू,
निरभय माला[9] फेरी ॥

रूपकः—

सत सिंगाके पदोंमें कुछ बडे सुन्दर रूपक भी मिलते हैं। कबीर तथा तत्कालीन सन्त कवियाने भी कुछ रूपकोंकी रचना की है। सत सिंगाका अेक खेती विषयक रूपक देखिअे—

"खेती खेडो[10] हरिनामकी
जा में[11] घासे[12] लाभ ॥
पापका पालवा काटजे,
काढो बाहेर राल ।
कर्मंशी कासोंमें घाडजो[13]
खेती चोखी भाय ।[14]
मन पवन दोओ बलदिया[15]
सुरतो[16] रास लगाय
प्रेम पिराणो[17] कर धरचो,
ज्ञान आर लगाय ॥
ओटग[18] बरबर जूपजो,[19]
सोहग[20] सरतो[21] लगाय ।
मूल मत्र[22] बीज बोवजो[23]
लड झुमड[24] याय ॥
सतको माल्यो[25] रोपजो,
धरम पेंडी[26] लगाय ।
ज्ञान गोला चलावजो,
सूवा अुडि जाय ॥
दयाकी दावण रालजे,
भवरी[27] फेरा[28] न होय ।
मुगता[29] बिचारो सिंगा आपणी,
आवागमन नो होय ॥

अिस पदमें सन्त सिंगाने खेतीके रूपक द्वारा मुक्तिकी साधना बतलायी है। वे कहते हैं "हरि-नामकी खेती करनेमे ही लाभ होगा। सिंगाकी यह खेती बडी विचित्र है। अच्छी फसल होनेके लिअे खेतमें अूगा-नीदा पहिले साफ कर देना पडता है। बिना अुसे अुखाडकर बाहर फेंके खेत बोने योग्य नहीं होता। सिंगाजी कहते हैं—"पापरूपी घास-पात अुखाडकर बाहर फेंक दो।" घास-पातके सिवाय खेतमें काँस नामक अेक गहरी जडावाली घास भी होती है। कर्मकाडको ही सिंगा काँस कहते हैं। वे कहते हैं "कर्मकाड रूपी काँस भी जडसे अुखाडकर निकाल दो, तब कही अच्छी खेती हो सकेगी। मन और श्वास हीं दोनो बैल हैं, जिन्हें आत्माकी रस्सीसे बांधकर प्रेमके पिरानेसे हाको। लेकिन प्रेमका पिराना अैसा वैसा न हो; अुसमें ज्ञानकी आर (लोहकी पतली नुकीली कील) लगी हो।" कितनी सुन्दर है अिस अपढ लोक-कविकी कल्पना। अुसकी अिस कल्पनामें जो महान अध्यात्म भरा हुआ है, बडे-बडे दर्शन शास्त्रियोंके लिअे भी दुर्लभ है।

---

१ समुद्र, २ अदृश्य ब्रह्म, ३ निवास, ४ न दिखलायी देनेवाला, ५ ध्यान, ६ अनहद नाद, ७ गहरी, ८ पीड, ९ ब्रह्मकी माला जिसे फेरनेपर कोअी भय नहीं रहता, १० करो, ११ जिसमें, १२ हागा, १३ निकाल दो, १४ होना, १५ बैल, १६ ध्यान।

१७ बैल हाकनेकी लकडी (पिराना), १८ निर-हकार, १९ जोतना, २० ब्रह्ममय आत्मा, २१ सरवा (खेतीके काममें आनेवाला अेक औजार), २२ बीज मत्र (ओम्), २३ बोओो, २४ हरी भरी घासें, २५ मल्ला (क्यारियाँ), २६ मेड २७ ससार, २८ आवागमन, २९ मुक्ति, मोक्ष।

नागपुर]

गद्दार

: श्री रामराजसिंह :

गद्दारके असली माने होते हैं—भेदिया, घात करनेवाला अथवा समयपर खिसकनेवाला। लेकिन जहाँ तक गद्दारके अपने काम गद्दारीसे तात्पर्य है वहाँ द्रोहात्मक और हिंसात्मक नही और क्रोधात्मकभी नही, बल्कि वहाँ गद्दारकी कायरता, काहिली और अधम-ताले है। गद्दार अिसलिअे गद्दारी नहीं करता कि अुसे मजा मिलता है, या कोअी विशेष लाभ होता है, वरन् वह गद्दारी अिसलिअे करता है कि वह अधम है, अुसमें दृढ़प्रतिज्ञता नही, वह कष्ट सहन नही कर सकता, अत अुसकी आत्मा गवाही दे देती है। जब कभी अेक विश्वसनीय व्यक्ति गद्दारी करते देखा या पाया जाता है, तो अुसके अन्यान्य बन्धु-बान्धवो और स्वजनों तथा प्रिय जनोंको अेक अप्रत्याशित धक्का-सा लगता है। लेकिन कभी-कभी तो अैसा देखनेमें आया है कि स्वयं गद्दारभी अपनी करतूतसे अनभिज्ञ और अपरिचित रहता है, यहाँ तक कि गद्दारी करनेके पहले तक वह नही जानता कि वह क्या करने जा रहा है। किन्तु करनीके पश्चात् अुसे कम दुख, सवेदना और पश्चात्ताप नही होता।

मनुष्य अन्यान्य प्राणियोसे जिस प्रकार अधिक विवेकी और चिन्तनशील है, अुसी प्रकार वह घोर पापी, अन्यायी और क्रोधीभी है। 'क्रोध पाप कर मल' का मत्र जपनेवाले अिसानने क्रोधकी सीमाभी पार कर दी है। कहनेको तो पशुओंम हिंसकता और बर्बरताका दुर्गुण प्रचुर मात्रामें है, लेकिन अहिंसाके पुजारी बननेवाले मानवने और सहिष्णुताका आडम्बर दिखलानेवाले अिन मर्मज्ञ नरोने अपनी सारी कलअी खोल कर रख दी है। जब जब अितिहास बदलता है वह अपने पीछेकी तरहही बिना किसी प्रकारके रद्दोबदलके अेक नये रूपमें मार्ग प्रशस्त करता हुआ आगे बढ़ता है। (History repeats itself) और किस राजा (क्योंकि अितिहासमे राजा अथवा राज्यसम्बन्धी वर्णन रहता है) ने किस अवसरपर कैसे धोखा खाया था, अुसने दूसरेको अपने जालमें किन किन अुपायोसे फँसाया आदिको जानते और अुससे शिक्षा प्राप्त करते अथवा लाभ या हानिकी जानकारी रखते हुअेभी मनुष्य धोखा खाता, असफल होता है और मुँहकी खाता है। क्या अेक पक्षके लोग दूसरेके किसी विशेष व्यक्तिको फोड लेते हैं और किस प्रकारसे अुसका अुचित अनुचित लाभ अुठाते हैं! कोअी कहता है कि अमुकने गद्दारी की, लेकिन गद्दार अपनी स्थितिको अवश्य समझनेकी कोशिश करता है।

गद्दारके समय समयपर अनेक माने होते हैं। अुसे चुगलखोर, द्रोही, भेदिया कान भरनेवाला और हाँ हुजूरी करनेवालाभी कह सकते हैं। दासी मन्थरा गद्दारिन कुटनी थी, विभीषण गद्दार अपने पक्षका भेदिया था, मानसिंह अपनी जातिका गद्दार (द्रोही) था और ध्रुवका पिता अुत्तानपाद भी गद्दार (विवश) था। अिस तरह विभिन्न स्थलोपर अिनके नाना रूप मिलते हैं। गद्दारी करनेसे कुछ लाभ तो जरूरही होता है। लेकिन अिस कारण वैयक्तिक जितना सुख मिलता है, प्राय अुससे कअी गुना सामूहिक रूपसे विनष्ट होता है। और अक्सर यह होता है कि गद्दार किसी अेक दो को नही ले बैठता बल्कि समूचे का समूचा दल और जातिही वह विनष्ट करके छोडता है। यह कितना सभव है यह तो गद्दारकी अुग्र हिंसक भावनाओंपर आधारित है। जितनीही अुसकी बदलेकी भावना तीव्रतर होगी, अुतनाही अधिक सफाया वह कर सकता है। गद्दार निम्नलिखित कारणोसे प्रेरित होता है।

मानसिक दुर्बलता

कहीं कहीं यह देखनेमें आता है कि किसी पुत्र या दल विशेषमेंसे कोअी अेक अिसलिअे अलग हो जाता है कि अुसका मानस स्थिर नहीं रह पाता। अपने दलकी

गुप्त बातोंका रहस्यभी विपक्षवालोंके सामने प्रकट करनेमें वह कुछ हानि नहीं समझता। वैसा कर देनेके बाद वह भलेही पश्चात्ताप करे, लेकिन अस्थिर बुद्धिके कारण अुत्पन्न होनेवाली आपदाओंसे वह लाख चेष्टा करनेपरभी नहीं बच पाता। वह अपनी अेक मानसिक कमजोरीको छिपानेके लिअे नाना प्रकारका मिथ्या प्रयास करता है।

प्रलोभन

रुपये-पैसे, जमीन-जायदाद और पदका प्रलोभन पानेसे भी अेक पक्षका कोअी मनुष्य किसी समय गद्दारी कर सकता है। अुस समय अपनी स्वार्थ-सिद्धिके आगे अुसको अपनी संस्था, जाति, अपने देश या अपने राष्ट्रके हितका ध्यानभी नहीं रहता। और वह यह भी नहीं समझता कि अिस प्रलोभनसे वह कितने लोगोंके हितोंका गला घोंट रहा है। अिस आर्थिक-युगमें साधारणतया अिसी किस्मके गद्दार पाये जाते हैं, जो बहुजनहितायको तिलांजलि देकर और दूसरोंके हितोंका गला घोंटकर अपने सुखके लिअे, स्वार्थके लिअे, सबकुछ करनेके निमित्त अपना नैतिक स्तर पतित करनेमें नहीं झिझकते। प्रलोभनकी बात विरक्तेद्वारा पहले अुठायी गयी, यह तो गद्दार और विपक्षवालोंके मनकी अवस्थितिपर निर्भर है। किन्तु गद्दारकी मन स्थिति तो अुसी समय विचलित हो जाती है, जब अिस किस्मकी कोअी बात अुठ भर जाती है।

प्रताड़ना

यों तो चोर पकड़े जाने और पुलिसके हवालातमें कोड़े-पर-कोड़े खानेपरभी अपने हमराहियोंका भेद और नाम नहीं बताता, किन्तु यहभी सत्य है कि मारके आगे भूतभी भागता है। अत यह निर्विवाद है कि प्राणोंकी परवाह करनेवाले अिस गद्दारोंकी बातको ध्यानमें भी नहीं लाते। प्राणका सौदा अितना सस्ता नहीं है! बेंत-पर-बेंत कसकर जमा देने और खरचारियोंके खींचे जानेकी पीड़ा पकने चोरोंका भी मुंह खोलवा देती है। कहनेका तात्पर्य यह है कि वह व्यक्ति नहीं बोलता, वरन् शारीरिक पीड़ा और यातनाओंसे वह बोलनेपर बाध्य किया जाता है। किन्तु साथ-ही-साथ, अिसमें कुछ सन्देह नहीं, कुछ अैसेभी जीव हैं, जो अपनी गुरुता और महानताको अपने प्राणोंसे अधिक मूल्यवान समझते हैं।

अनबन

कभी-कभी किसी दलमेंसे कोअी अेक व्यक्ति न पटनेके कारण अलग हो जाता है अथवा दलके अन्य व्यक्ति अुसको किसी कमजोरीसे अुसको निकाल देते हैं। अिसका प्रभाव अुसके मानसपर बहुत बुरा होता है; वह बदला लेनेको सोचता है। अतः स्वभावतया वह अपने विपक्षियोंकी शरण जाता और अपनी पोल-पट्टी खोल देता है। अिस प्रकारकी घटनाअें आर्थिक बाँट-बँटवारेकी खींचातानीसे ही अधिक होती हैं। बड़े-बड़े डाकुओंका दल अिसी कारण पकड़में आ जाता है।

सहानुभूति

विद्रोहियों और ध्वंसक-क्रान्तिकारियोंमेंसे अपने विपक्षोंके किसी अेकके प्रति जब सहानुभूतिकी भावना घर कर लेती है, तो वह अुसको रक्षार्थ पत्र या अन्य किसी साधनसे सूचना दे देता है। फिर क्या पूछना, सहानुभूतिका पात्र वह व्यक्ति अपने दलों या अपने पक्षमें अिसकी जानकारी करा देता है। परिणाम-स्वरूप अुसके प्रतिपक्षियोंकी सारी योजनाअें निष्फल हो जाती हैं और वे पकड़में भी आ जाते हैं। अिंग्लैंडके कैथोलिकोंका १६०५ अी० के 'गन प्लाट'का भेद अैसेही खुला और वे विफल तो हुअे ही; पकड़कर मारभी डाले गये।

अिसके अतिरिक्त कुछ गद्दार स्वभावतया क्षुद्र प्रकृतिके होते हैं। जिनमें तो अपना हित हो, या न हो दूसरोंका अहित करनेके लिअेही गद्दारी करते हैं। मंथरा वैसीही थी। कुछ नेकनाम गद्दार अपने पक्षकी कुरीतियों-दुर्नीतियों और अत्याचारोंको पसन्द न कर विपक्षियोंको अपने सारे भेद बता देते हैं। विभीषण अिसी प्रकारके भेदिये थे।

कहनेका मतलब यह है कि वास्तविक गद्दारभी वही है जो अपने राष्ट्र, जाति, और समाज-देशके हितोंका गला घोंट दे, जो अपना अुल्लू सीधा करनेके लिअे अपने स्वजन-प्रियजनोंको धोखा दे, और जो केवल मजा लेनेके लिअे दो पक्षोंको भिड़ा दे।

[कलकत्ता।

जुम्मा भिश्ती

श्री 'धूमकेतु'

['धूमकेतु' गुजरातके श्रेष्ठ कहानीकार —कहानी संसारके स्रष्टा हैं। भावात्मक मर्मस्पर्शी शैलीमें आधुनिक कहानियोंका सूत्रपात अुन्होंने किया— राजनैतिक अैतिहासिक सामाजिक, सांस्कृतिक सभी प्रकारकी कहानियोंका। अुनकी दर्जनों कहानियोंके अनेक भाषाओंमें अनुवाद हुओ। अुनकी 'पोस्ट आफिस' कहानी बड़ी ही हृदयस्पर्शी मानी गयी है। अेक सिद्धहस्त सफल अुपन्यासकार हैं वे और निबंधकार भी। धूमकेतुकी 'जुम्मा भिश्ती' अेक दर्दभरी छोटी-सी कहानी है। कलाकारने अपने भिश्ती और अुसके जीवन साथी प्यारे भैंसेके सच्चे प्रेमको बड़े मार्मिक तथा कलात्मक ढंगसे सभी देशों और सभी कालोंके लिअे अमर बना दिया है। — सं]

आनंदपुर गाँवके अुस छोरपर अेक कोनेमें तीन झोपड़ियाँ चलते फिरते राहगीरोंका ध्यान अपनी ओर खींचती थीं। पुराने अूँच-अूँचे घने जिमलीके वृक्षोंकी झुरमुट छाया अुनपर पड़ती थी। पासहीमें गंदी गटर दुर्गंधकी धारा और फैलाती और कभी कभी तेज हवा धूलके गुब्बारे अुड़ाती। वर्षोंसे बमरम्मत झोपड़ियोंकी खिड़कियाँ हवाके थपेड़ खातीं—जो फटे पुराने टाटके टुकड़ों और पुराने बाँसकी खपच्चियोंसे बनी हुओ हमेशा खुली रहतीं।

अंदर अेक टूटी हुओ पुरानी चारपाओपर बैठा हुआ जुम्मा भिश्ती अपना हुक्का गुड़गुड़ाया करता। दुनियाके बदलते रंग देखे थे अुसने। सोने चाँदीके बरतनोंसे लेकर टूटी फूटी हँडिया तकके दिन देखे थे। अपनी बचपनकी यादके धनी माता पिताके लाड़-प्यारके वे दिन अुसे याद थे। हुक्का गुड़गुड़ाते वह सोच रहा था अुन दिनोंकी बातें जब वह झूमते हाथीपर बैठकर शादीमें दुलहिन लेने ससुराल गया था। और आज?

शौकके लिअे अुभरती जवानीमें जुम्मानें अेक भैंसा पाला था। दहेजमें मिली हुओ वस्तुओंमेंसे वह अेक था। वह अुसे वेणु कहकर पुकारता था।

दुनिया कितनी अूपर चढ़ी और कितनी नीचे गिरी आज सिर्फ दो जीव ही बचे थे—जुम्मा और वेणु दो जीवन-साथी —पक्की दोस्तीके नमूने। हाँ, वेणुका नाम कुछ विचित्र जरूर लगेगा पर जब लक्ष्मी और यौवन जुम्मापर प्रसन्न थे कओ दोस्त थे अुसके दोस्तोंमें अेक साहित्य रसिक हिन्दू मित्र मंसेका नाम वेणु रख दिया था और जुम्मानें अुसे अपना लिया था।

जुम्मा आज गरीब है। अुसके पास सिर्फ बचे हैं ये झोपड़े और अुसका हमसाथी साथी वेणु।

अेक झोपड़ेमें वेणु बाँधा जाता। बीचके द्वारसे जुम्मा अपने वेणुसे बात करता और हुक्का गुड़गुड़ाया करता। तीसरे झोपड़ेमें घास भरी रहती।

अुसके अनेक मित्र संगी-साथी आये और गये, पर अिन दोनोंकी दोस्ती अखण्डित बनी रही।

* * *

रोजका कार्यक्रम। दिन निकलते ही जुम्मा वेणुकी पीठपर मशक रखकर अपने गाहकोंके घरोंमें पानी भरने चल देता। मशकके गलेमें बंधा हुआ घण्टी बजने लगती। जुम्मा पीछे पीछे अलाप लेकर, गजल गीत गाता हुआ चलता। दोपहर तक वह अपने झोपड़ेमें लौट आता। लौटते समय वह अेक-दो पैसेका गाजर मूलीका साग अपने लिअे और घासका भारी गट्ठा अपने वेणुके लिअे बाजारसे ले आता। यही था अुसका रोजका काम और यही था रोजका बाजार।

दोपहरसे शामतक वह अपने झोपड़ेमें बैठा हुक्का गुड़गुड़ाया करता और हुक्केके संगीतमें लीन वेणु अपने कर्ण-संचालनसे ताल दिया करता और आँखें

मूंदे या खोले पड़ा रहता। दोनों अेक दूसरेसे, मानो मूक भाषामें बातें किया करते।

संध्या होते ही दोनों दोस्त नदीके किनारे घूमने जाते। कभी-कभी अिच्छा हुअी तो भिनसारे ही हवा-खोरीको चल निकलते।

अेक दिन बहुत सवेरे, पांच बजे दोनों घूमनेके लिअे चल निकले। जुम्माने सोचा, अिस ठंडी वेलामें, वेणु कुछ चरकर पेट भर ले तो अच्छा। पर यह बात वेणुको पसंद न आयी। घूमने जाते समय राहमें कुछ खाना भले मानुषोंका लक्षण थोड़े ही है! अतः वेणुने स्पष्ट अिनकार कर दिया।

थोड़ी देर बाद जुम्मा वेणुसे बोला-'चल भैया' अब तो घूम लिये घर जाकर, कुछ खा-पीकर, अपने कामपर चलें।

अुसकी अिस विनयपर खुश होकर वेणुने हुंकार किया, अपनी पूंछ पीठपर पछाड़ी, और जुम्माके सामने देख, कान फटकार, आनन्दसे दौड़ने लगा।

"अरे कहां दौड़ा जा रहा है? दौड़नेकी क्या जरूरत है?" जुम्माने कहा, पर वेणुने अुसकी न सुनी। वह दौड़ा चला जा रहा था। सामने ही बी बी अेण्ड सी आओ रेल्वेकी लाअिन थी। वह रेलकी पातोंके अूपर दौड़ रहा था कि अगली लाअिनके जोड़के बीच अुसका पैर फंस गया और वह ठोकर खाकर वहीं गिर पड़ा। फिर वह फंसे पैरको निकालनेकी कोशिश करने लगा। पर ज्यों-ज्यों वह पैर निकालनेकी कोशिश करता था, त्यों त्यों अुसका पैर ज्यादा फंसता जाता था। जुम्माने दूरसे यह देखा और वह पागलकी नाअी दौड़ा। 'या खुदा! यह क्या हो गया!!' वह बोला और वेणुके पास बैठकर अुसका पैर खींच अुसे रेल-पातोंमेंसे निकालनेकी कोशिश करने लगा।

कुछ-कुछ अुजेला होने लगा था। सामनेसे सैर-सपाटेके शौकीन दो नौजवान घूमते आ रहे थे, जिनके अेक हाथमें छड़ी थी जिसे वे घुमा रहे थे। दूसरेमें थी टोपी, जो सिरपरसे अुतारकर हाथमें रख ली थी, ताकि ठंडी हवा खोपड़ीको लगे और दिमाग तक पहुँच जाअे। जुम्मा दौड़ा अुनके पास। बोला—

"सुनिअे, भाअी साहब! मेरा, मेरा, वेणु.. फंस गया है, रेलमें कट जाअेगा। देखिअे, देखिअे।"

दोनोंने अुस ओर दृष्टिदान करनेकी कृपा की। देखा, कोअी काली-काली चीज तड़प रही है।

'पर है क्या?"

"मेरा वेणु—मेरा पाड़ा"

"ओह! दौड़, दौड़, फाटकवालेके पास। यहां क्या खड़ा है?"

"भैया! कुछ मदद करो, हाथका सहारा दो तो अुसे निकाल लूं। वह बच जाअेगा।"

"मदद? हम? अरे बेवकूफ दौड़कर फाटक-वालेके पास जा। दौड़, दौड़।" और यों परअुपकारका अुपदेश देकर वे आगे हवाखोरीको चल दिये।

जुम्मा फाटकवालेकी ओर दौड़ा। घरके अंदर चक्की चल रही थी, अुसकी घरघर ध्वनिमें किसीने अुत्तर नहीं दिया। दूरसे गाड़ीकी व्हिसिल सुनायी दी। निराशाभरी दृष्टिसे जुम्माने चारों ओर देखा। कोअी दिखायी नहीं दिया। वह सिगनलकी ओर दौड़ा। वह सांकल खींचने लगा और जोरोंसे चिल्लाने लगा। पर चक्कीकी घरघराहटने अुसकी आवाज ही दबा दी। कोअी न आया। वह फिरसे किवाड़की ओर लपका और लातें लगाकर कहने लगा।

"अरे बहन, देखो, सुनो, सिगनल अूंचा करो, मेरा वेणु कट जाअेगा।"

"घरपर कोअी मरद नहीं है," लापरवाही भरा अुत्तर मिला, और फिर चक्की चलने लगी।

अब गाड़ी बहुत नजदीक आ चुकी थी। अेक बार वह फिर चीख मारकर पुकार अुठा—

"अरे कोअी दौड़ो, दौड़ो मेरा वेणु कट जाअेगा। अरे बचाओ, बचाओ।" पर अुसकी आवाज, अुसीकी प्रतिध्वनिमें डूब गयी।

तक्कयागप्परणी

: श्री ति. शेषाद्रि, अेम. अे. :

तमिल भाषाके साहित्यका वह भागभी काफी लंबा है जो अनुमानका विषय न रहकर प्रत्यक्ष अुपलब्ध है। लगभग डाओी–तीन हजार सालोंका साहित्य है वह।

जिस साहित्यमें आरम्भसे ही अेक प्रवृत्ति साफ दृष्टिगोचर हो रही है। वह है सामञ्जस्यकी प्रवृत्ति, विषयके लिअे गभीर तथा सनातन सत्य चुननेकी प्रवृत्ति; भावोंमें विशालता तथा विराटता लानेकी प्रवृत्ति, जिससे भारतीय विचारोंकी वह सर्वप्रथम विलक्षणता बरकरार रहे। स्पष्ट रूपसे कहें तो तमिलके साहित्य-स्रष्टाओंने लगातार यही कोशिश की कि साहित्यमें वह सर्वग्राही विशालता बनी रहे, ताकि देशवासी अुसे अपना सकें। शायद अुन्होंने सनातन सत्यमें विभिन्नता नहीं देखी। सत्यका अेक ही रूप हो सकता था।

शुरूमें शायद तमिल साहित्य अपनी विशिष्टता तथा विलक्षणता अधिक लिये हुअे था। लेकिन धीरे-धीरे दसवीं सदीतक–जिस कालको मैं कम्बकाल कहना चाहूँगा–साहित्य सिर्फ तमिलनाडका न रहकर भारतीय बन गया। मतलब यह कि अुनका बाहरी रूप तथा वेशभूषा तमिलका अपना रहा, अुसकी आत्मा पूर्ण भारतीय हो गयी।

कम्बनकी रामायण अेक अैसी कृति है। अगर अुत्तर भारतके लोग नाम सुनकर समझ लें कि रामायण अुत्तर भारतकी कहानी है, कम्बनकी रामायण अुसका अनुवाद होगा, तो यह भ्रम है। कम्बनकी रामायण पढ़िअे तो पता चलेगा कि रामकथाने तमिल भाषाका आवरण तथा तमिलनाडका थाम पाकर कितना सुन्दर रूप धारण कर लिया है। यह तमिलवालोंकी विशेषता थी कि वे तोता कहींसे पकड़ लाये लेकिन अुसके लिअे अपना पिंजरा अपने ढंगसे तैयार किया तथा अुसे अपनी बोली सिखा दी। सरयूने कावेरीका रूप धारण कर लिया, राम ठेठ तमिलवाले बन गये, स्वयं अयोध्या नगरीभी ठोठ राजाकी कोअी सुन्दर पुरी बन गयी। काव्य-शैली तमिलकी परिपाटीके साँचेमें ढल गयी।

यह प्रयास स्तुत्य है। लेकिन अगर अुत्तरभारत-वाले यह समझते हैं कि देखो तमिल भाषामें मौलिकता नहीं रही तो दक्षिण भारतवाले अपनी परंपराको कोसने लगते हैं और अपनी अलग खड़े होनेकी क्षमताके प्रद-र्शनके लिअे छटपटाते हैं। अिसीलिअे तमिलनाडके विद्वान दूरदर्शी लोग चाहते हैं कि वह परंपरा जारी रखनेका प्रयास दोनों ओरसे सम्मिय रहे।

खैर, अुसी परंपरा लड़ीकी अेक सुंदर मणिसे परि-चय करानेका ही मेरा अिस लेखसे अुद्देश्य है। पाठकोंको अेक नवीन चीज मिलेगी, जो नवीन होते हुअे भी बिलकुल अपरिचित नहीं रहेगी यानी "अेक परिचित नवीनता" का रसास्वाद मिलेगा।

जिस ग्रंथका नाम "तक्कयागप्परणी" है। नाममेंही आप अिस विचित्र सामञ्जस्यका अुदाहरण लीजिअे। यह शुद्ध संस्कृतके 'दक्षयज्ञ भरणी' का साफ तमिल रूप है (विकृत रूप नहीं)। जी हाँ, यह दक्षयज्ञकीही कहानी है जिसे स्वयं तुलसीदासजीने बड़े चावके साथ रामचरित-मानसमें बखाना है। लेकिन अिस ग्रंथमें वह कहानी जिस ढंगसे कही गयी है अुसमें कलासौष्ठव है; और अुस कहानीकी पंक्तियोंके अंदर कितनेही भावमणि बटोरकर रखे गये हैं, अुन्हींमें चम-त्कार है।

कवि

अुसके प्रणेता कवि ओट्टक्कूत्तर है। 'कूत्तर' नटराजका तमिल नाम है, कूत्तर कम्बनके समकालीन

कवि माने जाते हैं। कूत्तर मुदलियार जाति के थे। अुनमें तथा तत्कालीन प्रसिद्ध कवियोंमें बडी भयकर होड थी। वे बडे साहसी कवि थे तथा वीर हृदय रखते थे। असमर्थ कवि अुनके सामने टिकही नहीं सकते थे। अलकारिक अर्थमें ही नहीं, बल्कि यथार्थमें ही अुनके प्रतिद्वन्द्वीका नाश निश्चित था, अगर वह कम प्रतिभा-वाला तथा कमजोर रहकर भी होड लगानेका दुस्साहस करे। वे तीन शोळ (Chola) राजाओंके आश्रयमें रहे।

अिस कविके बारेमें यह जनश्रुति प्रसिद्ध है। शोळ राजाका विवाह पाड्य राजकुमारीसे हुआ था। अेक दिन किसी कारणवश पति-पत्नीमें मनमुटाव हो गया। रानी अपने कमरेके अदर गयी और किवाडकी चटखनी अदरसे चढा ली। राजाने कूत्तरको रानीके पास अुन्हे शात करनेके लिअे भेजा। कूत्तरने जाकर अेक पद्य सुनाया। लेकिन रानीने अुसे सुनातक नहीं, आट्टक्कूत्तन पाट्टुक्कु रेट्टै ताप्पाल (ओट्टक्कूत्तनके पद्यके जवाबमें दो चटखनियाँ) कहकर दूसरी चटखनी भी चढ़ा ली।

रानी जब पतिगृह आयी थी तब पाड्यराजाने अपने दरबारी कवि पुगर्येदिको, जो प्रसिद्ध 'नलवेण्बा" (नलदमयन्तीकी कहानी) के प्रणता हैं, अपनी पुत्रीको साथ कर दिया था। तब वे वहीं थे। शोळराजाने अुन पुगर्येदिको अपनी रानीके क्रोधको शात करनेके लिअे भेजा। पुगर्येदिने जाकर अेक पद्य सुनाया तो रानी किवाड खोलकर बाहर आ गयी। पुगर्येदि तथा ओट्टक्कूत्तरमें पहले ही हुअी होडकी भावनामें अिस घटनाने आगमें घीका काम कर दिया। तो भी अेक दूसरेकी प्रशसा अुनके कानोंसे दूर रहकर दोनोंने की।

कूत्तर तमिल तथा सस्कृत दोनों भाषाओंके प्रकाड पडित थे। अुनके काव्योंके अध्ययनसे पता चलता है कि अुनका साहित्य तथा शास्त्रज्ञान कितना गहरा था। सस्कृतके शब्दोंके तद्भव तथा तत्सम दोनों रूपोंके प्रयोगको वे कभी तमिलके हितका बाधक नहीं मानते थे।

मालूम पडता है कि वे "श्यामलाकी अुपासना" के शास्त्रके भी ज्ञाता थे, और देवीके अुपासक थे। अुनको "कवि राक्षसकी अुपाधि" अिसलिअे मिली कि वे देवीके साहसपूर्ण अुपासक थे। अब भी यहाँ जिनको यक्षिणी या दुर्गा आदि देवियाँ अिष्ट हैं, वे भयमिश्रित सम्मानके साथ देखे जाते हैं।

जहाँ कूत्तरके प्रेमियोंने कविराक्षसका सबोधन कर अुनकी साहसपूर्ण प्रकृति तथा कविताके क्षेत्रमें अुनकी निःसकोच तथा निडर गतिका सम्मान किया, वहाँ कविचक्रवर्ती या सिर्फ चक्रवर्तीकी अुपाधिसे भूषित कर अुनके साहित्यके पसन्द करनेवालोंने अुनकी अद्वितीयताका अभिनन्दन किया।

अुनका काव्य सचमुच अेक सुन्दर साहसपूर्ण कला-योजना है। अुनकी कल्पना कल्पनातीत लोकोंको लाघ जाती है, अैसी कल्पनाअें जो कमजोर दिलोंको अेकदम कँपा देगी। रातके वक्त कोअी अुनके भूतगणोंसे परिचय प्राप्त कर ले तो अुस रातको अुसकी नींद हराम हो जाअे।

वर्णनोंमें आपको लोकोत्तर विचित्र वातावरण बनानेमें प्रशसनीय दक्षता प्राप्त है। अिस वजहसे अुनको "कौडप्पुल्वर" (शायद गूढ कविका रूप हो) की अुपाधि अुपलब्ध थी।

राजाने अिनको "कालम"* आदि भेजकर सम्मानित किया था, अत अुनको "कालप्पुलवर" भी कहा जाता है।

ओट्टक्कूत्तरके काव्यको समझनेके लिअे आपको शास्त्रका गहरा ज्ञान, तीक्ष्ण बुद्धि, निमग्न मन तथा कविका साथ न छोडनेवाली कल्पना शक्ति अिन सबकी आवश्यकता पडेगी। अुसका अध्ययन कर लीजिअे। आप भी अेक प्रकाड पडित बन जाअें।

भरणी

जैसे नामसे जाना जा सकता है, अिस काव्य-ग्रथमें दक्षयज्ञकी कथा भरणी रीतिसे रची गयी है। तमिल साहित्यके लक्षण ग्रथोंमें प्रबध रचनाकी ९६ रीतियाँ प्रचलित हैं। जिनमें भरणी विधि भी अेक है। अुस

*(शहनाअीके समान अेक बाजा जो सत्ताधारीके भ्रमणपर निकलनेके समय बजाया जाता है।)

रीतिकी रचनाकी विशेषतायें मुख्यत: ये हैं— अुसमें किसी प्रसिद्ध युद्धका वर्णन किया जाता है। युद्धके विजयी वीरको नायक बनाकर यह रचा जाता है। कभी-कभी आचार्य या कोअी देवता भी काव्यनायक बनाये जा सकते हैं।

अिस काव्यमें प्रधानतया, अीश्वर-वन्दना, कडै-तुरप्पु (द्वार खोलना), दुर्गाको भेंट चढाना आदि अंग होते हैं। (अिनका सविस्तर वर्णन आगे किया जाअेगा)।

यह क्यों भरणी कही गयी ? अिसके भी विशेष कारण हैं। भरणी नामक नक्षत्रके बाद ही अिसका नामकरण हुआ है।

भरणीके दिनमें ही भूतगण भोजन बनाकर काली देवीका भोग लगाते हैं। भरणी दुर्गा-देवीका नक्षत्र है तथा यमराजका भी। अिस तरहके काव्यमें दुर्गादेवीका वर्णन, दुर्गादेवीके भोजनका वर्णन तथा यमराजके कार्य विस्तारका वर्णन अवश्य रहता है। अिस कारण अिस प्रबंधका नाम भरणी पडा।

भरणी नक्षत्र विजयका सूचक भी है। तमिलमें यह मसल मशहूर है भरणीका जात—धरणीका राजा। किसी वीर विजयीकी वह कथा है, अत अिसका नाम भरणी हुआ है।

दक्ष-यज्ञ भरणी

अिस रीतिकी और अेक विशेषता है कि जिस प्रबंधके शीर्षमें हारे हुअेका नाम जुड़ा रहता है। कथाके अनुसार दक्षप्रजापतिके सत्ताजनित घमंडको तोडकर, अुनकी अनधिकार चेष्टा, अनीति सम्मत कार्य तथा अुद्दंडताकी सजा दी जाती है। अत दक्षका नाम ही शीर्षक है। असलमें वीरबाहुदेवने दक्षका ही नहीं दक्षके सहायक देवोंका भी गर्व जरूर तोडा था, बल्कि अुनका नाश भी कर दिया था। तो भी अिसका नाम 'वीरबाहु भरणी' नहीं रखा गया।

अन्य प्रसिद्ध भरणियोंमें कलिंगत्तुभरणी, हिरण्य-वदैप्परणी, मोहवदैप्परणी आदि अुल्लेखनीय हैं। अब अिस काव्य विषयका अध्यायवार सारांशमें देखिअे —

१ अीश्वर वन्दना। अिसमें क्रमश अुमापति, गणनायक (विघ्नहर) मुरुगन (सुब्रह्मण्य) आदि देवों की वन्दनाके साथ श्री ज्ञानसंबधकी भी महिमा गायी गयी है। ज्ञानसंबध शैव भक्तोंमें प्रसिद्ध चार सन्तोंमें बहुत प्रसिद्ध बाल सन्त हैं। अुनका नाम अिसलिअे चिर-स्मरणीय है कि अुन्होंने शैवमतकी स्थापनाकर, अुसे दृढ किया। अुनके तेवारम (अीश्वर-भजन) तमिलनाडके शैवोंके कंठाभरण हैं और मन्दिरोंमें श्रद्धाके साथ पूजा-अर्चनाके समय गाये जाते हैं। अुनकी जैनोंके साथ जो मुठभेड हुअी अुसका वर्णन अिसी भरणीके अंतर्गत किया जाता है।

अिस अध्यायका आखिरी पद्य है:—

" अिरै वाऴि तरैवाऴि, अियल वाऴि, अिशै वाऴिअे।

मरै वाऴि, मनु वाऴि, मदि वाऴि, रवि वाऴि, मऴै वाऴिअे।"

क्रमश अीश्वर, भूमि, रक्षाशक्ति, चरित्र, यश, वेद, मनु नायक, शोळ राजा, चंद्र, सूर्य, वर्षा सब चिर-जीवी हों।

२. अिसके बाद दूसरा अध्याय "कडैतिरप्पु" है। अिसमें कअी देवियोंसे द्वार खोलनेकी प्रार्थना की जाती है। यह भाग अिस ग्रंथका विशिष्ट भाग है तथा कोमल भावोंसे पुष्ट होनेके कारण सबसे रसवान् भी। शायद *अिसका आशय है कि देवियोंकी कृपासे कविताका द्वार* खुलेगा।

यह भाग सरस्वतीदेवी तथा लक्ष्मीदेवीसे की गयी प्रार्थनाके साथ शुरू होता है। क्रमश सुरस्त्रियाँ, जलदेवियाँ, पर्वतकुमारियाँ, वनदेवियाँ तथा नगरवासिनी-देवियाँ संबोधित की जाती हैं। अुनमेंसे दो-अेक पद्य देखिअे —

अुरहू सुररुयिरण्डन अुणर्वुण्डन योगुम।
निरहु कुऴलर मेगयर तिरमिन् कडै तिरमिन।

अिसमें अुन सुरबालाओंको संबोधित किया जाता है, जो स्नान करनेके बाद अपनी केश राशिको अुमेठकर अुनसे पानी निकाल रही हैं। बेचारियोंका पता नहीं

कि जिन वेशोंको अैंठ रहा है, अुनके अन्दर सिर्फ पानी नहीं है, बल्कि देव युवकोंकी जानें तथा स्मृतियां भी हैं। अुनके वेशोंने देखनेवाले युवकोंकी जान तथा सुध समेट रखी थी। अब वह भी अैंठन सा रही है।

दूसरा अेक पद्य लीजिये —

अरनुमेनै अिमय वरु मुण्बरन
अजि नजु - अमुदमु मुडन् ।
तिरै महोदधियै विड विम्वनेय
देव मादर् वडै तिरमिनी ।

समुद्रमें विष तथा अमृत छिपे रूपमें विद्यमान हैं। यह सबको मालूम है। पौराणिक कथायें बताती हैं कि *विषके असरसे शिवजी हैं तथा अमृतके देव।* अपने दुश्मनोंसे डरकर अमृत तथा विष अिन सुन्दरियोंमें शरण पा गये हैं। अुनसे कवि कहता है— "अैसी सुन्दरियो, किवाड खोलो।"

टीकाकारने समझनेमें सहायता देनेके लिये विषको अुनकी आँखोंमें तथा अमृतको कुचोंमें छिपा हुआ बतलाया है। विज्ञ तथा रसिक पाठकगण कल्पना तथा अपने-अपने अनुभवके आधारपर अिसका अर्थ-गांभीर्य समझ लें।

तदनन्तर (३) दुर्गापरमेश्वरीका वासस्थान-श्मशानका भयंकर वर्णन होता है। वहाँ कालमुख भैरव आदि घूमते हैं। पिशाचगण भूतगण आदि भी अपने भयंकर रूप लिये विचर रहे हैं। रविके घोडे भी अुस ओरसे जाते डरते हैं, फिर मयाका क्या पूछना। कँटीले झाडोंको छोडकर वहाँ कोअी और चीज नहीं अुगती। "Ancient Mariner" पुरातन समुद्र-यात्रीके जहाजोंके समान रेखा रूपोंमें भूत दिखायी देते हैं। भूतोंका शोर तथा मृतकोंके साथ बजते आनेवाले भयंकर बाजोंकी आवाजें अितनी तुमुल हैं कि देवोंके कान भी फट जाते हैं।

अिस पृष्ठ भूमिमें (४) दुर्गादेवीका वर्णन होता है। मरकत-काता देवीका वर्णन आपादमस्तक किया गया है। अुनकी सन्निधिमें बहुत अुपासक हैं जो होम आदि विधिसे अुस देवीका प्रसाद पानेके लिये सतत *कृत्य* हैं।

अिस भागमें श्यामला देवीकी अुपासनाके शास्त्रका सम्यक् ज्ञान मिलता है। *अिस भागका आखिरी पद्य* यह है —

अडिच्चुट्टु नूपुरमो ? वारणमलर्नतुमे
मुडिच्चूट्टु मुल्लैयो ? मुरुक्कुं मुल्लैये ।

पादकल्प वे क्या नूपुर हैं ? नहीं, वे *अनन्त वेदोंके* सहस्रों मंत्र हैं। सिरपर क्या वह चमेली लता है ? नहीं, सखीचकी लता है। चमेलीकी लता सतीत्वका प्रतीक मानी जाती है। और अुमादेवी सतियोंकी सिर ताज हैं। देवीका श्रद्धाके साथ वर्णन पूरा करनेके बाद (५) पिशाचगणमें परिचय दिया जाता है। अिसमें पिशाचोंके रूप और अुनकी सर्वभक्षिणी *तथा अदम्य* भूखका वर्णन मिलता है।

आकाशके छू जानेसे तथा आकाशमें और भी अूँचा होनेकी शक्तिके न होनेकी वजहसे नाटे हुअे पिशाच, तथा दिनकी तंगीकी वजहसे पतले हुअे पिशाचके दाँत अगर किवाडका काम नहीं करते तो शायद पेटकी भूख मुखके द्वारसे बाहर निकलकर सारे विश्वको निगल जाती! अुनके हाथ अितने लम्बे हैं कि सारे समुद्रोंकी चौडाओी तक पँहुच जाते, तथा अितने बडे कि सारे क्षीरसमुद्र तथा मधुसमुद्रको अेक ही चुल्लूमें लेकर पी जाते! अिनकी भूखको क्या कहा जाये! (६) अिनकी अधिनायकी देवीके मंदिरका वर्णन बादको होता है।

यह अंश बहुत ही श्रेष्ठ है, क्योंकि अिसमें ज्ञान-सबधकी धर्म विजयकी कहानी सरस्वती देवीके मुखसे *कहलायी गयी है। वस्तुतः, देवीकी शैय्याका सर्प,* अुनके पचायुधके वर्णनके बाद देवीके दरबारका वर्णन होता है। देवी नारायणकी बहन समझी जाती है तथा मूल देवी। शिवजीकी पत्नी तथा नारायणकी पत्नी भी अिनके ही अंश हैं। श्यामला शास्त्रमें यही सबसे अुच्च-परब्रह्म समझी जाती हैं।

अुनकी सेवामें सप्तमाताअें, स्वयं लक्ष्मी देवी, भूदेवी तथा सरस्वती देवी विद्यमान हैं। देवीकी कृपा दृष्टि सरस्वती देवीपर पड जाती है और देवी कहती

है—वल्लीके (Valli) प्रेमी, मेरे पुत्रकी वह कथा गाओ जिसमें अुसने अपने प्रतिस्पर्धियोंपर विजय पायी थी।

तिरुज्ञानसंबंध मुरुगनके अवतार माने जाते हैं। सरस्वती देवीने कथा सुनायी, जिसका सार यों है:—

ज्ञानसंबंध मदुरा नगरीकी दयनीय स्थितिका पता पाकर मदुरा आये। नगरकी चहारदीवारीके बाहर अेक मठमें विराज रहे थे। विरोधियोंको जिसका ज्ञान मिला तो अुन्होंने अुसमें आग लगा दी। ज्ञानसंबंधने अपनी योग-शक्तिसे अुस आगको आज्ञा दी कि तुम पाड्य राजाके शरीरको ताप बन जाओ। पाड्य राजा, जो कून पाड्यनी कहलाता था (अपनी कुब्जता के कारण) ज्वरसे पीडित हो गया। बहुत अुपचार किये, पर कोअी लाभ नहीं हुआ। तब मन्त्री कुलचिरै-यार तथा रानी मगैयर्करसी (नारीमें रानी) ने राजासे प्रार्थना की कि ज्ञानसंबंध बुलाये जायें। ज्ञानसंबंध आये तथा अुनको अुच्चपीठपर बिठाया गया। अुनके विरोधियोंने अीर्ष्यावश आरोप लगाया—"यह पाड्य राजा विरोधी चोळराजाके राज्यका बालक है;-वहभी शैव बालक। अिसका यहां आनाही दुस्साहस है। और राजाके ज्वरको दूर करनेका प्रयास वृथा है।" लेकिन मन्त्रीने अुनको चुप कराया। तथा बालसन्त ज्ञानसंबंधसे प्रार्थना की कि आप राजाको ज्वरपीडासे मुक्त कीजिये। ज्ञानसंबंधने राजाके शरीरपर विभूति लगायी और राजा स्वस्थ हो गया। राजाने अुठकर बालकका स्वागत किया। विरोधियोंका मन अीर्ष्यासे राख हो रहा था। विरोधियोंने वेमतलबकी बातें कहीं। राजाने कहा, जिस ज्वरकी चिकित्सा आप नहीं कर सके वह ज्वर अिनकी विभूतिके कारण दूर हो गया। तब मैं क्यों न अिनकी वन्दना करूं?

तब विरोधियोंने शर्त लगायी कि हम दोनों अपने-अपने मन्त्र ताडके पत्रोंपर लिखेंगे। जिसका पत्र आगमें नहीं जलेगा तथा वैसे नदीमें पानीकी धाराके विपरीत दिशामें बहेगा वे विजयी माने जायें। हारे हुअे स्वयं सूलीपर चढ़ेंगे। तथास्तु कहा गया। रानी बालक ज्ञानसंबंधके मुखको देखकर शंकाकुल हुअी। तब बालसन्तने कहा, देवी चिन्ता मत कीजिये:—

"अग्नि हमारी है। अुसी अग्निकी शक्तिसे पानी बरसता है। वर्षासेही नदी अुत्पन्न होती है। अतः नदी भी हमारी है। फिर क्या अग्नि हमारे मन्त्रको जलायेगी? नदी ताडपत्रको बहा ले जायेगी?"

मतलब, अग्नि तथा वरुण हमारे शिवके अधीन हैं। हमारे ही अधीन हैं। जिस तरह वीर-वचन बोलने-वाले बालकका चित्र भी देख लीजिये, लगे हाथों—

> कादिर्कनगक्कुळै निन्रिलाड्
> कमपुं कुळ्न्मुन्बु कलन्दशैयच्
> चोदित्तिरत्ते नेरियल् नीरिलहच्
> चुट्टिक्कलन् मीदु तुलगदुने।

कानोंमें कुंडल झूल रहे हैं। सुगंधित अलकें मुखसे मिलकर हिल रही हैं। ज्योतिर्मय ललाट-पर मभूत देदीप्यमान है। अुसके अूपर "चुट्टी"* सुशोभित हो रही है।

क्या यह चित्र देखकर आपका मातृ या पितृ-हृदय अुस बच्चेको गोदमें अुठानेके लिअे मचल नहीं अुठता? साथ-साथ ज्योतिर्मय ललाटको भभूतको देखकर आपका भक्त-हृदय श्रद्धासे झुक नहीं जाता? खैर, यथा-विधि स्पर्धा शुरू हुअी। ज्ञानसंबंधकी जीत हुअी तथा विरोधियोंकी हार। विरोधी स्वयं सूलीपर चढ़ गये।

अिस कथाका संकेत "मीदरवन्दना" के अंतमें है। वहां ज्ञानसंबंधको "स्वयं सूलीपर चढ़कर प्राण खोये विरोधियोंके समूल अुन्मूलनकी विक्रमी" के नामसे सबोधित किया गया है।

अिस कथा-श्रवणसे आनंदित होकर देवीने सरस्वतीको अपने सामने स्थान देकर सम्मानित किया।

तभी [७] पिताय आकर अपनी मुनका विह्वल वर्णन करने लगते हैं। कितने ही दिन हुअे

---

*"चुट्टी" झूमर-सा अेक 'आभरण' है जो बच्चोंके सिरपर अग्रभागमें लटकता रहता है।

अुनको कुछ खाये हुअे। भूख नही मही जाती। जब यह अर्ज की जा रही है तभी अेक पिशाच आता है जो दक्षयज्ञ तथा युद्ध देखकर आया हुआ है।

वह पिशाच [८] देवीसे सारी कहानी कहता है। "कालिकु कूत्ति कूरियदु" के रूपमें सारी कहानी विस्तारके साथ कही जाती है।

दक्षने यज्ञ शुरू किया, अन्य सभी देवताओंको निमन्त्रित किया। लेकिन पुराने विद्वेषके कारण अेक शिवजीको नही बुलाया। पार्वती देवीने देखा कि सभी देव जा रहे हैं। जानेकी अिच्छा जाग्रत हुअी तो अुन्होंने पतिसे अनुमति मागी। शिवजीने कुछ आक्षेप किया तो देवीने पिताकी भूलके लिअे माफी मागी। भविष्यद्रष्टा महेशने अनुमति दे दी।

देवी गयीं, पर स्वागत किसीकी ओरसे न हुआ। स्वय माताने भी अनदेखी कर दी। शिवा कुपित होकर लौटीं। अुनकी परिचारिकाओंने कोप शमन करनेका प्रयास किया लेकिन कुछ लाभ नही हुआ। वे सीधे पतिके पास गयी और प्रार्थना करने लगीं कि पिताको अिस बेअदबीकी अुचित सजा दी जाअे। ओीश्वरने सोचा, आखिर पिताकी पुत्री है क्या पता कि सजा देनेपर शिकायत करने लग जाअे। वे चुप्पी साध गये।

देवीके गुस्सेका पारा और भी चढ गया। वे पतिसे अलग हो गयी और कही दूर जाकर बैठ गयी। शिवजीको भी गुस्सा आ गया। अुन्होंने वीरबाहुको बुलाया और आज्ञा दी कि जाके *यज्ञसहित दक्षका नाश* कर दो और अुनके सहायक देव भी छूट न जाअें।

वीरभद्रदेव भूतगणोंको लेकर युद्धमें गये। दक्षके दलमें विष्णु, ब्रह्म, अिन्द्र, द्वादशादित्य, अेकादश मरुद्गण थे, समुद्र था, पर्वत थे, वायु थे।

बारी-बारीसे सबका नाश होता गया। लेकिन ब्रह्माने सबकी पुन सृष्टि कर दी। अिस युद्धके विशद तथा सजीव वर्णनके बाद हम देखते हैं कि वीरभद्रदेवने भद्रकालीकी सहायता लेकर सबका नाश कर दिया। विष्णु, दस ब्रह्मदेव आदि सब मरकर भूत बन गये।

यह प्रकरण लबा प्रकरण है। अिसमे हमको कअी बातोंका ज्ञान होता है। हमारे आजतकके देव अितिहासमें कितने देव हैं, अेक-अेक देवके कितने अश हैं, अिन सबका ज्ञान अुपलब्ध होता है। अेक तरहसे देव-वशका अितिहास पूर्णरूपेण बताया जाता है। अुनके नाम, अुनके गुण, अुनके काम, अुनकी प्रकृति सबसे हम परिचित हो जाते हैं।

दूसरी भद्रकालीके गणोंमें जो योगिनियाँ, डाकिनियाँ, शोतिनियाँ आदि हैं अुनका भी परिचय हमको दिया जाता है। वीरभद्रके गणोंमें कुछ पक्षी रूपी भूत हैं। अुनके वर्णनके मिस पक्षियोंके गुणोंका भी वर्णन मिल जाता है, जैसे —

चकोरोंने चन्द्रकी अल्पवया किरणोंको चुग लिया। कबूतरोंने पवनोंको चुग लिया। कबूतर छोटे-छोटे ककड निगल लेनेके आदी हैं। अिस स्वभावका यहाँ प्रयोग करके कविने पर्वतोंको कपोलकवलित बताया है।

मोरोंने सर्पोंको निगल लिया आदि। यह कहानी सुनकर काली पिशाचोंको लेकर युद्धके मैदानमें आती है, जहाँ—

(९) कूळ्ळुदलुम् उदुदलु (भोजन बनाकर कालीको भेंट करना) की क्रिया सपन्न होती है। वह भोजन क्या है— देवमांस हड्डियाँ तथा अन्य सामग्रियोंका पड़ा हुआ माड है। अिसमें बीभत्स रसका पक्का पकवान तैयार हुआ है। पिशाच भर पेट खा खा करके राजाकी जय मनाते हैं। जिसकी अिच्छासे यह काव्य प्रणयन हुआ। यह ओट्टक्कूत्तरके साहसका और अेक अुदाहरण है कि पिशाचगण जहाँ अुनको काव्य नायककी जय मनानी चाहिअे थी वहाँ काव्य-सहायक राजाकी जय गा दी।

यहाँ कहानीको समाप्त हो जाना चाहिअे। लेकिन यहाँ कहानी समाप्त नही होती।

(१०) कल गाट्टल (मैदान दिखाना) में शिवजी पार्वती देवीको ले आकर समर-भूमि दिखाते हैं।

समर भूमिमें सभी शत्रु भूत रूपमें खडे हैं। विष्णुका भूत अुस दिनकी अुनकी छायाके समान लबा

खडा है जिस दिन अुन्होंने त्रिविक्रमावतार लेकर ब्रह्माड को नापा था ।

भूत गणोपर राज्य करनेवाला देवराजका भूत, पेटके अन्दर आग रखनवाला वरुणका भूत, निर्जीव घूमाकार अग्निका भूत, दूसरे भूतपर सवार निरतिका भूत (निरुति भूतवाहन है), यमका भूत, कहाँ तक कहें सब देव भूत विचर रहे हैं ।

यह सब देखकर देवीका दुहरा कोप हवा हो गया । व अपने पतिदेवसे प्रार्थना करती हैं कि अिनको माफ कर दें तथा पूर्ववत् रूप तथा पद दिला दें।

शिवजी, अपनी पत्नीका मन रख लेते हैं । सभी देव पूर्ववत होकर शिव पार्वतीका मगल गाते हुअे चले जाते हैं। दक्ष ही अैसे थे जिनको पूर्वरूप नही मिल सका। अुनका शिरभर अजका सा हो जाता है । आखिरी (११) प्रकरणमें जयगान होता है । यहाँ भी राजाका ही जयगान है ।

अुपसंहार

पाठकोंने स्थालीपुलाक न्यायसे देखा होगा कि अिस काव्यसे कविका विविध शास्त्र-ज्ञान,साहित्याध्ययन, कवित्व-शक्ति, मौलिक प्रतिभा, अद्भुत-कल्पना अिनका पूरा ज्ञान मिलता है ।

अिनके साथ-साथ कुछ विशिष्टताअें भी हैं, जिनकी ओर ध्यान दिये बगैर मन नही भरता । कवि अेकके बाद अेक, तीन शाळ राजाओंके आश्रयमें रह चुके हैं। यह बडे राज भक्त थे तथा कृतज्ञतासे भरे कवि थे । अत, अुन तीनों राजाओंपर पृथक्-पृथक् अेक "अुला" गाया है। अुला अुस रचनाका नाम है जिसमें किसी वीरका वर्णन अुनकी महिमाके साथ किया जाता है । अुसके अलावा कुलोत्तुगन् पिल्लैत्तमिल (बाल काव्य लीला) लिखकर कुलोत्तुग राजाका सम्मान किया है । अिस भरणीमें विक्रमशाळनकी जय गायी गयी है । राजराजनका भी जय-गान यत्र-तत्र अिसीमें पाया जाता है। अिसी कृतज्ञतासे प्रेरित होकर नियमके प्रतिकूल जाते हुअे भी अुन्होंने पिशाचोंके मुखसे विक्रमका ही जय-गान करवाया है । आखिरमें भी कविने स्वय अुनका ही जय गान किया है ।

दूसरे, अुनकी ज्ञानसबधके प्रति अगाध श्रद्धा थी । अिसी कारण अुन्होंने सरस्वती देवीके मुखसे ज्ञान सबधकी महिमा गवायी । अिस सारी पुस्तकका नाश हो जाअे, तथा यही शेष अश बच जाअे, तो भी वही अिसकी महिमाके परिचयके लिअे पर्याप्त होगा ।

अिन दोनों भावनाओंके मूलमें शिव-भक्तिका स्रोत नि सृत हो रहा है । वे कट्टर शिव-भक्त थे । अिसी कारण अुनको यह कथा पसद आयी । क्योंकि अिसमें शिवजीकी शक्तिके सामने अन्य देव नही ठहर सके । अिसी शिव-भक्तिके फलस्वरूप विरोधी हारकर म्रियमाण हुअे । शैवमतको पुन स्थापित करनेवाले ज्ञानसबधके प्रति अपनी श्रद्धाको तथा शैव राजा शोलनके प्रति अपनी कृतज्ञताको प्रकट करनेमें वे अितने आतुर थे कि कहीं-कहीं काव्य-लक्षणके अुल्लघनकी भी परवाह नही की ।

तमिल भाषाकी प्रकृतिजन्य विशेषताओंको छोड दें तो भी अिस काव्यका हिन्दी ही नहीं, किसी भी भाषामें अनुवाद हो जाअे तो अुससे रसिक मुग्ध हुअे बिना नही रहेंगे--खासकर भारतके किसी भी कोनेका निवासी जो अपने पुराणोंमें आस्था रखता है अपनी धर्म मूलक देवप्रधान परपरापर सहानुभूति (कमसे कम सहानुभूति ही) रखता है, अिसे पढकर अिसीमें खो जाअेगा, अिसमें सदेह नहीं है ।

यह काव्य अपनी विषयआभाकी परिचिन्तताके कारण आकर्षक तथा अपनी नवीनताकी वजहसे रोचक सिद्ध होकर किसीको भी मोह लेगा ।

[मदुरा ।

जनश्रुति—असत्यपर सत्य

: श्री ब्रह्मानन्द श्रीवास्तव, अेम अे :

संभव तो नहीं है पर मान लिया जाय कि यदि आकाशका जनक आकाश न होता तो मनुष्य अपना मस्तक कहाँ रखता ?

अिस बड़े प्रश्नका बड़ा अुत्तर यह है कि मनुष्य अपना मस्तक भी भूमिपर रखता और वह पैर चलनेके अतिरिक्त लेटकर चलता।

आकाश क्या है? कुछ नहीं। पर यह कुछ नहीं खड़े खड़े चलनेके लिये आवश्यक है।

जितना अव्यक्त और रहस्यमय है वह आकाशमें ही है। आकाश स्वयं अव्यक्त है। पर धरवासी नीला ग्रहही तो है।

हमारे जीवनके चारों ओर अैसी "कुछ नहीं" वस्तुअें घेरा डाले पड़ी हैं कि अुस घेरेके बाहर जातेही जीवनके बाहर जाना पड़ता है।

यदि कोअी आधुनिक मनुष्य जोरसे शोर मचाकर कहे कि पुराणकी कहानियाँ गलत हैं तो हिन्दू चाणक्य चुटिया दिखाकर कहेगा 'तू नास्तिक है भ्रष्ट है, तू अधर्मी है।'

धर्म ग्रन्थोंमें कअी अैसे स्थल हैं जहाँ भगवानने स्वयं कुछ कहा है। जो कहा है वह जान लेनेके बाद पहली बात जो मनमें आती वह यह है कि भगवान अमुक व्यक्तिके पास गये होंगे और अपनी बात कहने लगे होंगे। अमुक व्यक्ति अुसे नोट करता गया होगा। यदि नोट न करता तो आजकी जनता क्या जानती कि भगवानने क्या कहा था।

यदि कहा जाय कि जैसे आजके कहानीकार अपने पात्रोंसे ज्ञान और दर्शनकी व्याख्या करवाते हैं, वैसे अुस समयके काव्यकारों या कहानीकारोंने भगवानसे जीवन और धर्मकी व्याख्या करवा दी तो यह निबन्ध लेखक यहाँ नास्तिक माना जायेगा। धर्मकी झण्डीके नीचेसे भागा हुआ आधुनिक व्यक्ति 'लाल झण्डी' का समर्थक माना जाता है। अतीतके अैसे व्यक्ति असुर थे।

पर यह दावेके साथ कहा जा सकता है कि अुन पुरानी बातोंमेंसे अधिक पुराने काव्यकारोंकी कल्पनाअें हैं जो साहित्य, धर्म और समाजमें घुस आयी हैं। वे केवल जनश्रुति हैं। धर्म-ग्रन्थोंमेंसे यदि दर्शन और कोअी अैतिहासिक घटनाअें निकाल दी जायें तो जनश्रुतिही शेष बचेगी।

पर अितना याद रखिये कि ये जनश्रुतियाँ अुपेक्षाकी चीज नहीं हैं। वे असत्य हैं पर जीवनमें सत्य बनकर आ पड़ी हैं। धर्मकी धरतीपर चलनेवाले प्रगतिका मस्तक अुसी जनश्रुति आकाशमें ही है, जो वस्तुतः है कुछ नहीं, पर अुस 'कुछ नहीं' का रहना आवश्यक है। भूगोल चन्द्रकी काली छायाको चाहे जमा हुआ समुद्र माने चाहे पहाड़पर धार्मिक लोग विश्वासके साथ कहते हैं कि जब चन्द्रमा मुर्गा बनकर गौतमकी पत्नी अहिल्याको छलनेमें अिन्द्रकी सहायता करने गया था तब गौतमने मृग चर्मसे मुर्गारूपी चन्द्रको मारकर मारसे काला कर दिया। अुसीसे मृग लाञ्छन वहीं लटका है। कैसाकी सत्यताका निर्णय विज्ञान पाठक करें, पर सत्य अितना अवश्य है कि किसीकी पत्नीको छलनेवालेका मुँह काला होता है।

लोगोंको अतीत जितना अच्छा लगता है, वर्तमान अुतना अच्छा नहीं। अलंकार सदा अतीत सत्य बन गया और अुसी अलंकारमें मुका वर्तमान बुरा ही रह गया।

तुलसीदासजीने कुंभकरणके विषयमें लिखा है, "भूधराकार शरीरा।" माननेवाले आँखें मूँद-कर मानते हैं कि कुंभकरणकी लुचाअी यदि हिमालयके बराबर न रही होगी तो विन्ध्याचलके बराबर अवश्य रही होगी। और यदि आज कोअी कवि किसीको

'भूधराकार शरीरा' कह दे, तो वह अधिकसे अधिक छह या सात फीट ऊँचा समझा जाअेगा।

धीवरकी पुत्री मत्स्य-गन्धाकी सुगन्ध दूर तक जाती थी। अुसे योजन गन्धा भी कहा गया है। अिसका विरोध करनेवाला प्राचीन सभ्यता विरोधी और महाभारत अविश्वासी माना जाअेगा पर "जानन ओष अुजास"वाले बिहारीके अिस दोहेमें अतिशयोक्ति है।

शकुन्तलाके लाल अधरको फल समझकर पक्षी अवश्य चोंच मार सकता है पर आजकी 'चन्द्रमा' कही जानेवाली नायिका केवल 'गोरी' मानी जाअेगी।

जनश्रुतिका जन्म बेमतलबकी गप्पों और मतलबके तर्कोंसे होता है। कुछ बातें चल पड़ती हैं कुछ चला दी जाती हैं। चल पड़ती हैं किसी अनुमानके आधारपर, और चला दी जाती हैं किसी कार्य-सिद्धिके लिअे। ये न पूर्णतः सत्य होती हैं, न असत्य। सत्य अिसलिये होती हैं कि अिनका आधार शून्य नहीं होता और असत्य अिसलिअे होती हैं कि चल पड़ती हैं या चला दी जाती हैं।

वस्तु या व्यक्ति जो किसी भाँति हमारे जीवनमें आ जाते हैं अुनके जीवनका वह आवश्यक अंग जो खो गया है या छिप गया है वहाँ अुनके जीवनके किसी विशेष अंशका आधार लेकर या कोरी कल्पनाकर कुछ अनुमान कर लिया जाता है। वस्तु या व्यक्तिकी महत्ताके अनुसार अनुमान भी होता है। कभी-कभी व्यक्ति और व्यक्तित्वके अनुसार बहुत सी भ्रामक और अनर्गल बातें चल पड़ती हैं। अुन बातोंके लिअे व्यक्तित्व चाहिअे। सुन्दर व्यक्तित्व सुन्दर बात, असुन्दर व्यक्तित्व असुन्दर बात।

जनश्रुतिसे कोअी भी समाज, सम्प्रदाय, धर्म और साहित्य वंचित नहीं है। कहीं कहीं वे आत्माकी भाँति जीवन शक्ति प्रदान कर रही हैं, आत्मा अुड़ी कि शरीर निर्जीव होकर गिरा।

जनश्रुतिके आधारपर यदि सृष्टिका रचना-क्रम मान लें, तो यह मानना ही पड़ेगा कि अुस सृष्टिमें निर्मित धार्मिक और सामाजिक व्यवहार रूपमारी नींव बाँधनेके लिअे जनश्रुतिका मसाला जमाया गया होगा।

धर्मकी कल्पना हुअी अुसकी सीमामें सृष्टिको रखा और बिन्दुमें ब्रह्मको। ब्रह्मकी व्यापकता और अुसकी शक्तिको व्यक्त करनेके लिअे कुछ बातें चलीं। अुन बातोंका आधार वही बिन्दु है। अुस अव्यक्त शक्तिको व्यक्त करनेके लिअे कुछ अनुमान हुआ और अनुमान सत्य होते होते आगे बढ़ गया। विकसित बुद्धिने तर्कहीन समझकर अुसे गल्प कहा, पर वे गल्प अब भी सत्य हैं।

गौतमकी पत्नी अहल्याको ही लीजिअे। वह पतिके शापसे पाषाण हो गयी थी और रामके चरण-रज-स्पर्श मात्रसे अपना वास्तविक स्वरूप पा गयी। पाषाणको जीवित स्त्री बना देना, बुद्धि अिसे कैसे ग्रहण करे? शायद कोअी पाषाण हृदया अहल्या रही हो, जो अपने स्वभावके कारण पति-वंचिता हो गयी हो और मर्यादा पुरुषोत्तम रामके प्रभावसे सुधर गयी हो। *किसीको सुधार देना ही रामको भगवान बनानेमें योग नहीं दे सकता, पर ज्यों-ज्यों राम भगवान होते गये, पाषाण-अहल्या पाषाण होती गयी।*

अहल्याकी कथाको हम सादर ग्रहण करते ही हैं, क्योंकि वही भक्तोंकी शक्ति है।

जब अव्यक्तसे सत्ताकी नींव पड़ती है तब अुसके प्रचारके लिअे जनश्रुतियों द्वारा अुसका समर्थन कराया जाता है। अैसी जनश्रुतियोंका जन्म भावावेशके कारण हुआ होगा।

रावण प्रतापी था, विद्वान था और शैव था। अन्य राजाओंकी भाँति अुसमें अेक बड़ा दोष था वह कामी था। वह रामका विरोधी था और शैव था। शायद अिसलिअे वह वैष्णवोंके लिअे राक्षस था। देवताओंके शत्रु राक्षस होते ही। जिस युगमें अैसा खानेवाले राक्षस नहीं हो पाये और मनुष्योंका मांस खानेवाले कतिपय जंगली जंगली ही रह गये। दुःशासनका रक्त पीनेवाला भीम महा पराक्रमी भीम हुआ। वैष्णवोंने रावणकी किसी दुर्बलताकी व्याख्या करके अुसे राक्षस करार दिया हो। वह आर्यों अथवा देवताओंका ही समभिअे, शत्रु था फिर अैसे शैवको राममक्त वैष्णव राक्षस न कहकर देवता कहते।

नारी, गौ और ब्राह्मणकी रक्षा करनेवाले रामके सामने सूपणखाकी नाक कट गयी। केवट अुसने प्रेम निवेदन किया था अिसीलिअ। भगवान बाण चलायें वह राक्षसी थी सीताको मारने दौड़ी या भगवानने माया की। कैसी माया? लक्ष्मणतक यह मर्म न जाना। बात आगे न बढ़ पायी मायाम सिमिटकर बंद गयी। न मालूम कितनी धार्मिक जनश्रुतियाँ मायाके पर्देमें छिपी हुअी हैं अुन्हें छेड़ा नहीं कि नास्तिककी अुपाधि मिली।

जनश्रुति चली आ रही है कि रावणने दण्डकारण्यमें रक्तका टैक्स लिया था और अुसी रक्तसे सीताका जन्म हुआ। पर रक्तकी होली खेलनेवाली और मस्तकका टैक्स लेनेवाली आजकी सरकार धन्य है।

राम और रावणके जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रचलित जनश्रुतियाँ यदि निकाल दी जायें तो राम अेक विजयी राजा हों और रावण राक्षस न होकर मनुष्य हो जाअ।

जनश्रुति यहाँ मायाका यंत्र बन जाती है। अच्छा कितना अच्छा हो और बुरा कितने नीचे गिराया जाअ!

कामदेवको भस्म करके भगवान शंकरने रतिको अमर सुहागका वरदान दिया। 'काम' यहाँ अेक भाव है और रति है अुस भावका कारण और निदान। यहाँ भाव और कारणका मानवीकरण किया गया है। अिसी भाँति भगवान शंकरको अिन्द्रियोंका दमन करने वाला योगी कहा गया है।

भावोंका मानवीकरण अब प्रचुर मात्रामें होता है।

अिन्द्रके कोपसे व्रजकी रक्षा करनेवाले भगवान श्रीकृष्णने पर्वत अुठा लिया था।

वर्षा अधिक होनेके कारण शायद बाढ़ आ गयी हो और भगवान कृष्णने सबकी रक्षा की हो। लोग कार्य भारके कारण अब भी कहते फिरते हैं कि सिरपर पहाड़ धरा है। विरही और आलसियोंका दिन पहाड़-सा होता ही है।

[बस्ती।

कविता

शिशिरकी रात

(श्री प्रो० महेन्द्र भटनागर)

शिशिर ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!
कि फैला दिग्दिगन्तोंमें सघन कुहरा,
सजल कण कण कि मानो प्यार आ सुनरा,
प्रकृति संगीत स्वर बस गूँजता अविरल!
शिशिर ऋतु राज राका रश्मियाँ चंचल!
शिथिल तरु डाल सम्पुट फूल पाँखुड़ियाँ,
रहीं चुपचाप गिर ये ओसकी लड़ियाँ,
धवल हैं सब दिशायें झमती झुकझल!
शिशिर-ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!
गगनके वक्षपर कुछ टिमटिमाते हैं
सितारे जो नहीं फूले समाते हैं,
सुखद प्रत्येक अुर है नृत्यमय झलमल!
शिशिर ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!

धरा-आकाश अेकाकार आलिंगन,
प्रणयके तारपर यौवन भरा गायन,
मिलता नीलवर्णी शून्यमें आँचल!
शिशिर ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!
विहग तरुपर अकेला कूक देता है,
किसीकी यादमें बस हूक लेता है,
नयन प्रिय पथपर प्रतिपल बिछे निर्मल!
शिशिर ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!
सवेरा है कहाँ? संसार सब सोया,
पवन सुनसानमें बहता हुआ खोया,
अभी हैं रातके पल शेष कुछ कोमल!
शिशिर ऋतु राज, राका रश्मियाँ चंचल!

[धार।

लघुकथा

निराश्रयकी जीत

श्री राजी

समुद्रके बीच बसा हुआ अेक छोटा सा द्वीप था। कभी कभी पाससे निकलनेवाले जहाज कुछ समयके लिअे अुसके तटपर लंगर डाल देते थे। अिन जहाजोंके द्वारा अुस द्वीपके भी कुछ निवासी दूसरे द्वीपों और महाद्वीपोंमें जाकर बस गये थे और अुनमेंसे कुछ कभी कभी अिस द्वीपमें भी आकर कुछ समय रह जाते थे।

अेक बार अुस द्वीपमें अैसा अकाल पड़ा कि लोगोंके भूखों मरनेकी नौबत आ गयी। बाहरका जहाज भी बहुत दिनोंसे कोअी नहीं आया था। बाहरसे खाद्य सामग्री प्राप्त करने या द्वीप छोड़कर अन्यत्र जा बसनेका अुनके पास कोअी अुपाय नहीं था। अुनके पास जो छोटी छोटी नौकाअें थीं वे समुद्र पार करनेके लिअे बिलकुल बेकार थीं।

द्वीपके मुखिया लोग अिसी चिंतामें अेकत्र होकर सोच विचार कर रहे थे कि अचानक अेक युवकने अुनकी सभामें आकर कहा —

'समुद्रके पार महाद्वीपमें पहुँचनेका प्रबंध मैंने कर लिया है। आप सब द्वीपके सभी निवासियों सहित मेरे साथ चलनेको तैयार हो जाअिये।'

'अिस प्राण रक्षक समाचारके लिअे हम हृदयसे तुम्हारे कृतज्ञ हैं। क्या तुम अुसी महाद्वीपसे आये हो? तुम्हारे साथ कोअी बड़ा जहाज आया है? या तुम अेकसे अधिक जहाज ला सके हो? वह महाद्वीप किस दिशामें कितना दूर है?' आदि प्रश्नोंकी झड़ी अुस युवकपर बरस पड़ी।

'मेरे पास कोअी भी बड़ा जहाज नहीं है। मैं अिसी द्वीपका रहनेवाला हूँ। मैंने समुद्र पारके महाद्वीपकी कभी भी यात्रा नहीं की। मैं केवल अितना जानता हूँ कि वह अुत्तरकी ओर है फिर भी वह महाद्वीप कितना भी दूर हो मैंने अुस तक पहुँचनेका प्रबंध कर लिया है और आप सबको अपने साथ चलनेका निमंत्रण देता हूँ।' युवकने अुत्तर दिया।

'जिसके पास कोअी बड़ा जलपोत नहीं, जिसने महाद्वीपकी यात्रा नहीं की और जो अुसका रास्ता भी नहीं जानता अुसका साथ लेकर हम अपनी जानी हुअी मृत्युको बुलानेमें कुछ नासमझी ही कर सकते हैं।' बूढ़ोंने बदले हुअे स्वरमें युवकको अुत्तर दिया और अपनी चिंतामें लग गये।

फिर भी अगले दिन जब अुस युवकने द्वीपके अुत्तरी समुद्रमें अपनी नाव खोली तब लोगोंने देखा कुछ और भी युवक अपनी अपनी नाव लेकर अुसके साथ हो गये थे। वे सभी नावें पारस्परिक समीपता और यातायातकी सुविधाके विचारसे अेक दूसरेके साथ रस्सियोंसे बंधी हुअी थीं।

तट छोड़ते ही अचानक अेक तूफान समुद्रमें अुठ खड़ा हुआ और द्वीप तटपर खड़े देखनेवालोंने अपने दूरवीक्षण यंत्रोंसे देखा वे नावें अेक दूसरेसे टकराकर और क्षतविक्षत होकर समुद्रमें डूबने लगीं और कुछ ही क्षणोंमें जलके गर्भमें विलीन हो गयीं।

अिस भयंकर दुर्भाग्य कांडको देखकर द्वीपके लोग भरे हृदयसे अपने घरोंको लौटे।

अुनके आश्चर्यकी सीमा नहीं रही जब अुन्होंने कुछ युवकोंको अपने सामने अुपस्थित देखा। ये अुन्हींमेंसे कुछ थे जो प्रातःकाल अपनी नाव लेकर समुद्रमें अुतर गये थे और जिन्हें नौकाओंसमेत डूबते हुअे वे अपनी आँखोंसे देख चुके थे।

'समुद्रको सकुशल और निरापद पार करनेका रहस्य हमने जान लिया है। हमारी नावें जब छिन्न-भिन्न होकर डूबने लगीं तब हमारे साथीने हमें समुद्रकी अधिक-से-अधिक गहराअीमें अुतर जानेको सचेत किया। हमने सरसक प्रयत्न किया लेकिन अधिक नीचे नहीं अुतर सके और नावें जानेके पश्चात् प्रयत्नसे हम अन्त

ही वपण पानीके अूपर ऊ फका। हमारा अनुभव है कि मनुष्य पानीमें डूबकर तभी मरता है जब वह अुसकी गहराअीमें जानसे बचना चाहता है अयथा समुद्रको मनुष्यका शरीर अपन भीतर रखना सवथा अरुचिकर है। हमारे अधिकाश साथी निश्चिन्त जल विहार पूवक अुत्तरको ओर बढ चले आ रहे ह और हम कुछ लोग बीचसे ही असलिअ लौट आय ह कि और भी जो लोग यहाँसे चलनका तैयार हो सकें व हमारे साथ चल। अुन युवकोमस अकन कहा।

+ + + + +

आगरा]

अिस कथापर मेरे कथा गुरुकी टिप्पणी है कि ससारकी बडीसे बडी विपत्तिया भी मनुष्यको अपन भीतर रखना अरुचिकर समझती ह और अुनमें फसकर मनुष्य तभी अपनी कमर तोड लेता है जब अुनस बचनक लिअ व तहाशा भाग दौड करता है। अुनका यह भी सकेत है कि छोटी बडी लौकिक विप त्तियोस लेकर विश्वकी महामायातकस बचनके लिअ वास्तवम मनुष्यको किसी समथ, जानकार मुक्त या सिद्ध गुरु के सहारे और पथ प्रदानकी अनिवाय आवश्य कता नही है। वह अकेला और निराश्रय होकर ही अिनपर अतिम विजय पा सकता है।

चार चतुष्पदियाँ

श्री अजितकुमार

अेक विधान

प्यास तो अैसी लगी थी
क्या समन्दर, क्या सितारे
सभीको पी लूँ,
कामना अैसी जगी थी
क्या तुम्हारे, क्या हमारे
सभी क्षण जी लूँ,
किन्तु विधिके अुन निषेधों,
अुन विरोधोंको कहूँ क्या
जो यही बोले,
प्रीत जो मनमें रँगी थी
तोड डालूँ बिन विचारे,
होंठको सी लूँ।

दो श्रम विभाजन

दो आँखें हैं असलिअ कि हम देखें ज्यादा
दो कान कि सुन लें जितना भी होअ सभव
लेकिन अीश्वरने अक जबान हमें क्यों दी?
असलिअे कि देखें सुन अधिक बोलें कुछ कम।

तीन: आशीर्वाद

वे जो आँसूके बीज आज बोते ह
कल खुशियोंके अकुर अुपन देखगे,
परसों प्रसन्नताकी फसलें काटेंगे' —
अैसी है अेक कहावत अंग्रेजीमें।

चार आकाश स्थिर

और सब अस्थिर
मगर आकाश स्थिर है,
अचिर सब है
शून्यका पर भाव यह चिर है,
नभ असीम, अपारका
वैभव अटूट अमाप
मनुज है अूँचा बहुत, पर यहाँ—
नतशिर है।

[अनुवाद।

आलोचना :

'दिनकर'जीका 'कुरुक्षेत्र'

: श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' :

हमारे दैनिक जीवनमें जब सत्यका कोओ स्वरूप नीरस प्राणशून्य रूढ़िका रूप धारण कर लेता है और हम स्वयं अनुभव करने लगते हैं कि हम किसी बंधनमें कारागारमें पड़ गये हैं, तब कविही स्वस्थ सुंदर कल्याणकर तथा जीवनसे अधिक घनिष्ठता रखनेवाला सरस सत्य लेकर हमारे सामने अुपस्थित *होता है और अुसे ही स्वीकारकर* अुसमें ही अपनी चित्त वृत्तियोंको रमाकर हम तदनुरूप अपनेको ढालने लगते हैं। भारतीय राजनीतिक क्षेत्रमें महात्मा गांधी-द्वारा प्रवर्तित अहिंसा अुनके कुछ ही अनुयायियोंको छोड़कर शेष अधिकांश लोगोंको प्रिय नहीं हुओ। अहिंसाकी निर्विवाद अुपयोगिता होनेपर भी लोगोंने अुसके प्रति सौहार्दका भाव नहीं बढ़ाया। अैसी अवस्थामें अुसके प्रति भक्तिके अभावका स्थान विवश मान्यताके भावने ले लिया। क्रमशः लोगोंमें यह विचार बल-संग्रह करने लगा कि अन्याय और अत्याचारके प्रतिकारके लिअे हिंसात्मक अस्त्रोंका अुपयोग अनुचित नहीं है अिसी विचार धाराको वाणी प्रदान करनेके लिअे 'दिनकर' जीने 'कुरुक्षेत्र' नामक काव्यकी रचना की है। अिस दृष्टिसे 'दिनकर' जीके अिस काव्यका अैतिहासिक महत्त्व है। अुसने अेक निर्जीव सत्यके स्थानमें अेक सजीव सत्यकी स्थापनाका प्रयत्न करके हिन्दी भाषी समाजकी विचार शक्तिको प्रेरणा देनेके रूपमें अुसकी प्रशंसनीय सेवा की है। अपने अिस अुद्योगमें वे कहाँतक सफल हुअे हैं, यही यहाँ विचारणीय है।

अपने नवीन सत्यकी प्रतिष्ठापनाके लिअे कविको महाभारत संग्राम द्वारा प्रस्तुत परिस्थितियाँ स्वभावतः बड़ी अुपयुक्त और सहायक प्रतीत हुओं। अुसमें विजय प्राप्त करके भी युधिष्ठिर आत्मदाह और आत्मग्लानिसे मुक्त न हो सके। अनुताप और ग्लानिने अुन्हें घेर लिया। वे सोचने लगे कि अिस विजयसे अच्छा तो यही होता कि हमने त्याग मार्ग स्वीकार किया होता। अपनी शंकाओंको लेकर वे भीष्मपितामहके पास पहुँचते हैं, और भीष्मपितामह अुनका समाधान करनेका प्रयत्न करते हैं। महाभारतके अिसी प्रसंगको लेकर दिनकरजीने अपने कुरुक्षेत्रकी वस्तु-रचना की है। अुन्होंने अपने सदेशका अुपयुक्त वाहक बनानेके अुद्देश्यसे भीष्मपिता-*महके चित्रणमें कुछ मौलिकतासे काम लिया है। अुनका* यह चित्रण कैसा है अिसके सम्बन्धमें आगे लिखा जायगा, यहाँ पहले अितना जान लेना आवश्यक है कि प्रत्यक्ष अवस्थामें त्याग और अहिंसाका पक्ष लेनेके लिअे अिस काव्यमें अेक ओर युधिष्ठिर प्रस्तुत हैं, तो दूसरी ओर अन्यायके निराकरण अुद्देश्यको लेकर की जानेवाली हिंसाका समर्थन करनेके लिअे भीष्मपितामह अुपस्थित हैं। किसकी वाणीमें कविकी निश्चयात्मक वाणी अपनी गूंज पा रही है, यह पहिचानना कठिन नहीं है। *यह स्पष्ट ही है कि सन्देहकी स्थितिमें* युधिष्ठिर हैं और व्याख्यानाका पद भीष्मपितामहका है। अैसी अवस्थामें अिस बातमें कोओ दुविधा नहीं रह जाती कि भीष्मपितामहकी विचार धारा स्वयं कविकी विचार-धारा है।

भीष्मपितामहके अपार त्याग और प्रायः अमानुषिक ब्रह्मचर्य संकल्पके कारण मानव मात्रकी श्रद्धा अुनकी ओर सहज ही अुमड़ती है, तथापि दुर्योधनके प्रति अनुचित पक्षपात और द्रौपदीके महान् संकट-कालमें भी सहज कर्तव्य-पालनसम्बन्धी अुदासीनताने अुनके चरित्रपर कलंककी अेक रेखा खींच दी है। 'दिनकर'जीने अुनके व्यक्तित्वके भीतर छिपे हुअे अनेक मार्मिक स्थलोंका अुद्घाटन किया है, जिनसे पाठकके सामने अुनका अेक पूर्ण स्वरूप अुपस्थित होता है और वह अुनके प्रति सहानुभूतिसे प्रेरित हो जाता है। भीष्म-

पितामहकी वाणीका प्रभाव लानेके लिये उनका यह कवि कौशल सराहनीय हुआ है।

अपनेको धिक्कारते हुये भीष्मपितामह कहते हैं —
'धिक् धिक् मुझे हुआ अपीडित सम्मुख राजवधूटी
+ + +
"और रहा जीवित मैं धरणी फटी न दिग्गज डोला
गिरा न कोई वज्र, न अम्बर गरज क्रोधमें बोला।'
वे अपना पतन स्वयं स्वीकार करते हैं—

सदा सुयोधनके कृत्योंसे मेरा क्षुब्ध हृदय था,
पर क्या करता? यहाँ सबलकी नीति अवश्यतम नय था।
अनुशासनका स्वत्व सौंपकर स्वयं नीतिके करमें।
पराधीन सेवक बन बैठा मैं अपने ही घरमें।
वीरताका पतन किस प्रकार होता है इसका वर्णन भी भीष्मपितामहने बड़ी ही सच्चाईके साथ किया है —
'यौवन चलता सदा गर्वसे सिर ताने शर खींचे।
झुकने लगता किन्तु क्षयोबल वह विवेकके नीचे।
किन्तु बुद्धि नित खड़ी ताकमें रहती घात लगाये।
कब जीवनका ज्वार शिथिल हो कब वह उसे दबाये।
+ + +
"जीवनकी है श्रान्ति घोर हम जिसको वय कहते हैं।
थके सिंह आदर्श ढूँढते व्यर्थ बाण सहते हैं।'
० ० ०
"बात पूछनेको विवेकसे जभी वीरता जाती।
पी जाती अपमान पतित हो अपना तेज गँवाती।"

भीष्मपितामहका कहना है कि विवाह न करनेके कारण उन्होने दुर्योधनको अपना स्नेह दिया और उसी स्नेहके प्रकाशमें अपना यौवन काल व्यतीत कर दिया। वृद्धावस्थाने उन्हें और उनकी वीरताको विवेकके हवाले करके उनकी कार्यकारिणी शक्ति नष्ट कर डाली। इन स्वीकारोक्तियोंके द्वारा उनका चरित्र तप हुये सोनेकी तरह खरा उतर आया है।

धर्मराज युधिष्ठिरके सम्बन्धमें भी लोग प्राय कहा करते हैं कि युद्धमें भाग लेना उचित नहीं था। शायद ऐसे ही शङ्काओंका समाधान करनेके लिये कविने उनकी स्वीकारोक्तियोंकी भी नियोजना की है। धर्मराज अपनी विजयको सम्बोधित करते हुये कहते हैं—

"अयि विजय, रुधिरसे सिक्त वसन है तेरा
यम दन्तोंसे क्या भिन्न दशन है तेरा?'
× ×
ओ कुरुक्षेत्रकी सर्वग्रासिनी व्याली!
मुखपरसे तो ले पोछ रुधिरकी लाली')
+ +
'धनही परिणाम है युद्धका अंतिम
तात इसे यदि जानता मैं—
× ×
फिरसे कहता हूँ पितामह! तो
यह युद्ध कभी नहीं ठानता मैं'।

युधिष्ठिर जिस बातको स्वीकार करते हैं कि राजसिंहासनके लोभहीसे पाण्डव इस युद्धमें सम्मिलित हुये। उनका कहना है कि जबतक उनमें यह लोभ प्रबल रूपसे विद्यमान है, तबतक संग्राममें विजेता होकर भी न वास्तवमें विजेता नहीं हैं, अतएव व निर्णय करते हैं कि इस लोभको जीतनेके लिये एक और रण करना उनके लिये आवश्यक है—

'यह होगा महारण रागके साथ
युधिष्ठिर हो विजयी निकलेगा।
नर संस्कृतिकी रण छिन्न लतापर
शान्ति सुधाफल दिव्य फलेगा।'॥

फिरभी युधिष्ठिरकी स्वीकारोक्तियोंमें एक कसर है। उन्होंने यह कहीं नहीं स्वीकार किया कि अनर्थका बहुत कुछ उत्तरदायित्व उनकी जुआ खेलनकी दूषित प्रवृत्तिपर था। अस्तु।

हमारे जीवनमें देवत्वके साथ-साथ दानव पक्ष सदैव क्रियाशील रहा है। देवत्वका प्रतिनिधित्व करनेवाले अनिवार्य होनेपर ही युद्ध करते हैं और युद्धमें विजयी होनेपर भी इस बातके लिये खेद करते हैं कि उनके द्वारा हिंसात्मक कार्य होनेके कारण समाजमें कष्टका संचार हुआ। युधिष्ठिर इसी पक्षके प्रतिनिधि हैं।'

दानव पक्षके प्रतिनिधिगण आवश्यकता न होने पर भी युद्ध करनेके लिअ बहाने ढूँढा करते हैं। वे अस्त्र-शस्त्रकी भाषा ही समझ सकते हैं। अतः असे लोगोंको जीवन-सत्य समझानेके लिअ युद्धकी भाषाका ही प्रयोग करना पड़ता है। दुर्योधन अिसी पक्षके प्रतिनिधि थे और भीष्मपितामह अिस हद विपथगामी दुर्योधनके पृष्ठपोषक थे।

युधिष्ठिर और भीष्मपितामहके संवादमें दोनोंकी सत्यनिष्ठा सराहनीय है। युधिष्ठिर युद्धकी निंदा करते हैं और भीष्मपितामह युधिष्ठिरके युद्धको ... अनुचित ठहराते हैं। यही नहीं वे तो यह कहते हैं कि जब तुम्हारे स्वत्वका हरण हो रहा है तब त्याग और तपसे काम लेना ही पाप है। भीष्मपितामहको लेकर कविने और भी बहुत-सी बातें स्पष्ट रूपसे कही हैं— (१) अहिंसाका अवलम्बन लेना असे व्यक्तिके लिअ विचारणीय हो सकता है जो वृद्ध, निर्बल और साधनहीन हैं। भुजाओंमें शक्ति रखनेवालेको तो लज्जा ही होगी। (२) क्षमा, तप, करुणा, दया आदि व्यक्तिकी शोभा हैं। किन्तु समुदायका प्रश्न खड़ा होनेपर हम अिन्हें भूलनेके लिअ विवश हो जाते हैं। (३) मनोबल देहका शास्त्र नहीं हो सकता। अुसका क्षेत्र वह मनोमय भूमि है जहाँ मनुष्य अपने ... विकारोंसे लड़ता है। (४) केवल प्राप्त तपका साधन बनाकर अमन चाहनेवाले संग्राममें विजयी नहीं हो सकते, क्योंकि

पाशविकता खड्ग जब लेती अुठा
आत्मबलका अेक बस चलता नहीं।

(५) तप और त्यागकी शक्तिका प्रभाव व्यक्तिके मनपर तो पड़ सकता है किन्तु जहाँ समुदायका सम्बन्ध आ जायगा वहाँ योगियोंकी शक्तिसे वह कभी पराजित नहीं हो सकता।

अुक्त समस्त स्थापनाओंपर विचार करनेपर हम अिस परिणामपर पहुँचते हैं कि हिंसाके द्वारा ही हिंसाका अन्त सफलतापूर्वक किया जा सकता है। निम्नलिखित पंक्तियोंमें आक्रमक हिंसाका पूरा समर्थन नहीं किया है— वह हिंसा जो आक्रमणकारी दानव पक्ष-समर्थक दुर्योधनकी है अुसे कहाँ केवल अुस हिंसाका आवाहन अुचित माना है जो देवपक्ष-पोषक आत्मरक्षक युधिष्ठिरकी है। कविका कथन वहाँतक सर्वथा अुचित है जहाँतक आक्रामक और आत्मरक्षक दोनों ही स्वार्थ साधनमें भौतिक दृष्टिकोणको ही महत्व देते हैं। दुर्योधन अपने अधिकारके बाहर भी राज्य चाहता है जिसमें कुछ अंतरसे युधिष्ठिर अपने अधिकारसे वह ही राज्य चाहते हैं। अिसमें सन्देह नहीं कि सांसारिक सुखोपभोगके लिअ प्रचुर भौतिक साधनोंसे सम्पन्न होनेकी वासना दोनोंहीमें है। अतअव अधिकार किसे मिले और किसे न मिले अिसका निर्णय रक्तपातपूर्ण संग्रामके द्वारा ही हो सकता है। असे अवसरपर यदि कोअी अहिंसा सिद्धांतके पालनका आग्रह करे तो यह मानना पड़ेगा कि अुसमें बहुत अधिक भोलापन है। सांसारिक विलासिताकी सामग्री अेकत्र करनेके लिअ अहिंसाका अुपयोग निरर्थक है, भले ही किसीको अुसका न्यायोचित अधिकार प्राप्त हो।

सच बात यह है कि महाभारत कालमें संग्रामके हिंसात्मक साधनोंकी जितनी प्रचुरता हो गयी थी कि अहिंसात्मक संघर्षकी कल्पना ही नहीं की जा सकती थी। किन्तु यदि अुसकी सम्भावना होती तो क्या अहिंसात्मक युद्धका यह रूप होता कि अेक ओर कौरवोंकी सेना खड़ी होती और दूसरी ओर अहिंसक पाण्डव खड़े होते? नहीं, अहिंसात्मक संग्राममें यह अन्त अिस प्रकार नहीं होता।

यदि युधिष्ठिर अहिंसात्मक संघर्षमें रत होते तो सबसे पहले आत्मशुद्धिके रूपमें वे जुआ खेलना बंद करते, अुसके अनन्तर अुन्हें राज्य प्राप्तिकी वासनाका त्याग कर साधारण श्रमिकका जीवन स्वीकार करना पड़ता। साथ ही दुर्योधनके प्रति वे सच्चा स्नेह रखते और अपने स्नेहके लिअ कोअी बदला न माँगते। त्यागके अिस वातावरणमें यह पूर्ण सम्भव है कि दुर्योधनका दुराग्रह शिथिल पड़ता और वह प्रेमपूर्वक अुनके सुख-मय जीवन निर्वाहका कुछ प्रबंध कर देता। सामान्य श्रमिकका जीवन हम स्वीकार नहीं करेंगे, हम राजा ही होकर रहेंगे—अहिंसाका पुजारी अिस प्रकारका आग्रह नहीं करता।

व्यक्ति हो अथवा समुदाय वासनामय जीवनके साधन संग्रह निमित्त अथवा जीवनके प्रति मोहमय दृष्टिकोण निर्वाहके अुद्देश्यसे वह अहिंसात्मक साधनाका अवलम्ब लेकर लाभ नहीं अुठा सकता। व्यक्ति और समुदाय दोनोंहीको यह स्मरण रखनेकी आवश्यकता है कि अहिंसात्मक संग्रामकी गति और अुसके साधन हिंसात्मक संग्रामकी गति और अुसके साधनोंसे सर्वथा भिन्न हैं और अहिंसात्मक संग्रामकी सफलताके लिअ भी अुसी प्रकार तयारी करनी पड़ती है जिस प्रकार हिंसात्मक संग्रामके लिअ। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि पाण्डवोंमें अहिंसात्मक संघर्षकी क्षमता नहीं थी और आवश्यक क्षमता प्राप्तिके लिअ अुन्हें साधना करनी पड़ती। अिसके विपरीत हिंसात्मक रणके लिअ धनुष बाणसे वे सदैव सज्जित रहते थे। अनकी अिसी तयारीके कारण परिस्थितियाँ जिस प्रकार विकसित हुआी कि अुन्हें हिंसात्मक संग्राममें भाग लेनेके लिअ बाध्य होना पड़ा। ये परिस्थितियाँ अनिवार्य नहीं थीं साधनाके अभावहीमें अुन्होंने भयानक रूप धारण किया। आखिर अयोध्याकी राजगद्दीपर रामचन्द्रका भी तो अधिकार था। यदि लक्ष्मण असा समर्थक पाकर अुन्होंने कैकयीकी अिच्छापूर्तिके विरुद्ध युद्ध ठान दिया होता तो क्या अुन्हें कोअी दोषी ठहराता? और अिसमें भी सन्देह नहीं कि विजय अुन्हींकी होती। किन्तु रामचन्द्रने अपने अधिकारका त्याग किया और अिन त्यागके द्वारा और अधिक महान होकर वे जनताके हृदय सम्राट बने। अुन्होंने राज्यको लात मारकर वनवासीका जीवन स्वीकार किया। अुनके अुच्चकोटिके त्यागने राजलक्ष्मी को अुनका चरण चूमनेके लिअ बाध्य कर दिया। यहीं हमारे सामने प्रश्न यह खड़ा होता है कि जिस मार्गपर रामचन्द्र चल सके अुसपर युधिष्ठिर और अुनके भाअियोंके पाँव क्या गतिशील नहीं हो सके? अिसका असंदिग्ध अुत्तर यही है कि पाण्डवोंमें अहिंसात्मक संघर्ष चला सकनेकी क्षमता नहीं थी। अुसके लिअ आवश्यक मात्रामें अुदारता और त्याग भावनाका अुनमें अभाव था। युधिष्ठिरने बात आरम्भमें नहीं समझी किन्तु युद्धका कुपरिणाम देखकर अुन्हें अगाध आघात लगा और अुन्हें सन्देह हुआ कि अुनसे कहीं भूल हो गयी है। वे भीष्म पितामहसे कहते हैं—

> कुलके अपमानसे साथ पितामह
> विश्व विनाशक युद्धको तोलिअे।
> अिनमेंसे विघातक पातक कौन—
> बड़ा है? रहस्य विचारके खोलिअे।'

किन्तु कुरुक्षेत्रके भीष्मपितामहके पास युधिष्ठिरके युद्धको अुचित ठहरानेके अतिरिक्त और कोअी अुत्तर नहीं है। सातवें सर्गमें अुन्होंने श्रमके महत्वकी घोषणा की है किन्तु अिस सम्बन्धमें कहीं अक शब्द भी नहीं कहा है कि राज्य लोभसे विरत रहकर श्रमिक जीवन यापन स्वीकार करना भ्रातिमग्न भाअियोंके प्रति युद्धकी नीति न ग्रहण कर प्रेमका व्यवहार करना युधिष्ठिरके लिअ अधिक अूँचा और श्रेयस्कर आदर्श होता।

युधिष्ठिर अपने प्रश्नको और भी सरल बनाते हुअे कहते हैं कि जिस ध्वंसके द्वारा हम जिस सुखको प्राप्त कर रहे हैं वह अुचित है या शांतिके मार्गपर चलते हुअे आँसुका अुपहार लेकर प्रस्तुत होनेवाला दुख सहन करना अुचित होता? किन्तु कठिन प्रश्नको यह रूप देकर असे विकृत कर दिया है। यह क्यों मान लिया जाअे कि राज्यके न मिलनेपर युधिष्ठिर अुसके लिअे जीवनभर रोते ही रहते? बिना संतोषके शांतिका मिलना संभव ही नहीं हो सकता था। जीवनभर राज्यके मोहमें मग्न होकर रोते रहनेकी तुलनामें तो युद्धहीका मार्ग अुचित था। किन्तु यदि युधिष्ठिरका अुद्देश्य यह मान लिया जाअे कि वे संतोष और परिश्रमपूर्ण जीवनसे अधिकार मात्र युद्धकी तुलना करना चाहते हैं तो स्पष्ट रूपसे यह कहना होगा कि महाभारत-संग्रामके अवसरपर पाण्डवोंका नेतृत्व करके अुन्होंने अुचित नहीं किया—भले ही वह संग्राम अुन्होंने अपने स्वत्वोंकी रक्षाके लिअे किया हो। और भीष्मपितामहको भी यह स्वीकार करनेमें कोअी आपत्ति नहीं होनी चाहिअे थी कि शांतिका अवलम्ब मार्ग मानव सभ्यताको विकासकी ओर ले चलता है। अिस प्रकार यह देखा जाअेगा कि जीवनमें मनोबल अहिंसा प्रेम आदि आधारोंका विरोध करनेकी धुनमें कवि भीष्मपितामहको अुस योग्यतासे वंचित कर दिया जो युधिष्ठिरको किसी अूँचे लक्ष्यकी ओर ले चलती। अपने प्रस्तुत रूपमें भीष्मपितामह

युद्ध-भावनासे अभिभूत जान पड़ते हैं और युद्ध-कालमें वे युधिष्ठिर-पक्षके जितने ही बड़े विरोधी थे युद्धके अनन्तर युधिष्ठिर-पक्षके अुतने ही बड़े समर्थक हो गये। खेद है, भीष्मपितामहका यह चित्रण संतोषजनक नहीं है। अेक बहुत बड़े सिद्धांतपर आक्रमण करनेके लिअे सन्नद्ध होनेपर कविके लिअे युधिष्ठिरके पक्षको जितने सरल रूपमें अुपस्थित करना आवश्यक था अुसका भी अभाव दिखायी पड़ता है। अतअेव यह कहना पड़ता है कि अपने दृष्टिकोणको सबल अभिव्यक्ति प्रदान करनेकी अुमंगमें कविने युधिष्ठिर-पक्षके साथ पूर्ण न्याय नहीं किया और युधिष्ठिरका अेक धुंधला व्यक्तित्व ही हमारे सामने खड़ा होता है।

हमारे पास अिस बातका कोअी प्रमाण नहीं है कि कविने अिस काव्यमें महात्मा गांधीके अहिंसात्मक संघर्ष-सम्बन्धी सिद्धान्तका विरोध करना चाहा है। किन्तु मनोबल और आत्मबलकी अुपयोगितापर जिस प्रकार आक्रमण किया गया है और काव्यके निर्माणका जिस कालसे सम्बन्ध रहा है, अुसे ध्यानमें रखकर विचार करनेपर अिस बातमें कोअी संदेह नहीं रह जाता कि अहिंसाके राजनैतिक प्रयोगोंमें अस्वाभाविकता देखकर अुसके विरुद्ध प्रतिक्रियाकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करना अुनका अुद्देश्य रहा है। किन्तु भीष्मपितामह और युधिष्ठिर दोनोंहीके चित्रणमें कहीं न कहीं त्रुटि होनेके कारण हम अिस सम्बन्धमें किसी परिणामपर पहुँच नहीं पाते, हमें किसी प्रकारका नेतृत्व नहीं प्राप्त होता। हम यह नहीं समझ पाते कि आखिर हम क्या करें? अेक ओर तो हमें बताया जाता है कि मनोबल, आत्मबल आदिसे कुछ नहीं होनेका, दूसरी ओर हमसे यह कहा जाता है कि हम विज्ञानकी सहायता लेकर नये-नये शास्त्रोंका आविष्करण न करें। यदि यह सच है कि युद्ध अनिवार्य है तो यहभी सच है कि नये अस्त्रोंके अनुसन्धानके लिअे अुपयोग निरंतर जारी रहेगा। यदि कोअी चाहता है कि नर-संहारकारी अविष्कारोंका अंत हो तो अुसे अुन साधनोंकी खोज करनी पड़ेगी, जो युद्धकी आवश्यकताको कम करें। मनोबल और आत्मबलके प्रयोगद्वारा हम अपने मत-भेद और वैमनस्यकी समस्याको, जितना कविने समझा है अुससे कहीं अधिक दूरतक, हल कर सकते हैं। किन्तु जैसा कि मैं कह आया हूँ, यह कदापि सम्भव नहीं कि भौतिक वासनाओंकी समस्त मांगोंकी पूर्तिके लिअे अुस मतके माननेवाले हिंसात्मक संग्रामकी सेनाओंके सामने कुरुक्षेत्रके मैदानमें खड़े किये जा सकें। देह और आत्मामें जितना अंतर है, अुतनाही अंतर हिंसात्मक और अहिंसात्मक-रणकी शैलियोंमें भी रहेगा।

छठे सर्गमें मनुष्यकी नीचताका वर्णन दिया गया है। कतिपय पंक्तियाँ अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जाती हैं—

> "अेक छोटी, अेक सीधी बात ।
> विश्वमें छायी हुअी है वासनाकी रात ।
> बुद्धिमें नभकी सुरभि, तनमें रुधिरकी कीच ।
> यह वचनसे देवता पर कर्मसे पशु नीच।"

जीवनमें यदि मनोबल और आत्मबलका अुपयोग घटाया जाअेगा तो मनुष्यकी यह नीचता घटेगी नहीं, बढ़तीही जाअेगी।

यहाँ मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि आत्मरक्षा का कोअी साधन शेष न रह जानेपर सीमित मात्रामें हिंसात्मक संग्रामकी अुपयोगिता सदैव बनी रहेगी। अुसे कोअी अस्वीकार नहीं कर सकेगा। सच पूछिअे तो हिंसा और अहिंसामें किसी अेकके बहिष्कारकी नहीं, दोनोंहीके समन्वयकी आवश्यकता है। साथही हिंसाके स्थानमें अहिंसापर बल देना अधिक हितकर होगा।

देशके लिअे यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि महात्मा गांधीके सिद्धान्तोंको काव्यात्मक अभिव्यक्ति न प्राप्त होनेके कारण जनताका अुनके प्रति सौहार्द न बढ़ सका और अुस दिशामें कोअी प्रयत्न आरंभ होनेके पहलेही अुनके विरोधमें प्रतिक्रिया शुरू हो गयी। काव्यमें अिस प्रतिक्रियाका नेतृत्व 'दिनकरजी' ने किया है, किन्तु अहिंसा और आत्मबलपर अपना मार्ग प्रशस्त करनेके लिअे जैसा आघात अुन्हें करना चाहिअे था वैसा वे नहीं कर सके हैं।

अिस काव्यमें ओज, प्रवाह, सद्विचार-संग्रह आदिकी कमी नहीं है। भाषा सरल और प्रभावशालिनी है, संन्यासके विरोधमें समाज-सेवाका संदेश, श्रम सिद्धान्त, जीवन-साधनोंका सम-वितरण आदि विचारोंकी सजावट सुन्दर है, किन्तु अपनी मूल स्थापनाको सशक्त न बना सकनेके कारण वह साहित्यके अितिहासमें किसी प्रकारकी क्रान्ति करनेमें असमर्थ रहेगा।

अनुभूतिका आलोक

: श्री रतनलाल बंसल :

कन्धारके बाजारोंमें पूरे तीन महीनोंतक कड़ी-से कड़ी मेहनत-मजदूरी करनेके बाद जब करीम अपने गाँव हालिमजअी चलनेको तैयार हुआ, तो अुसने देखा कि हालांकि अुसने कभी पेट भरकर खाना नहीं खाया, फिर भी अिस बीच वह केवल सत्रह रुपये बचा सका है।

'अिन सत्रह रुपयोंमें भला मैं क्या-क्या कर लूँगा? अिसमेंसे सात रुपये तो सरदारको ही देने होंगे, जिसके सख्त तकाजोंके डरसे मैं गाँव छोड़कर यहाँ आनेके लिअे मजबूर हुआ। बचे दस, जिनसे गल्ला खरीदना है, कुछ कपड़े भी लेने हैं और हाँ, अेक मोटा-सा कम्बल भी तो चाहिअे। पिछली सर्दियाँ तो मैंने और अस्मतने सिर्फ आगके सहारे काट दी थी, लेकिन अब यह कैसे हो सकता है। अस्मत अब अेक बच्चेकी माँ जो हो गयी है। कम्बख्त अब तो मुस्कुराने लगा होगा।" बच्चेका ध्यान आते ही करीमकी मनोदशा बदल गयी और अुन चिन्ताभरे क्षणोंमें भी अुसकी कल्पना कुछ जगमगा अुठी। किन्तु कुछ ही क्षणोंके पश्चात् अुसकी विचारधारा फिर अुन सत्रह रुपयोंपर आकर अटक गयी और वह सरदारके सात रुपयोंको निकालकर शेष रहे, दस रुपयोंमें कम-से कम तीस रुपयेके व्ययका व्यर्थ ही जोड़-तोड़ बैठाने लगा। अन्तमें जब अुसे अपने अिस प्रयासमें किसी प्रकार भी सफलता नहीं मिली, तो अुसने न जाने किस अेक गन्दी-सी गाली दी और रुपयोंकी मैली थैली अपनी सलवारकी अन्टीमें ठूँस, लाठी अुठा, गाँवकी ओर चल पड़ा।

"अगर अिसी बीच सरदार साला मर गया हो, तो यह सात रुपये भी बच जाअेंगे," रास्ता चलते-चलते अेक बार करीमने सोचा और दूसरे ही क्षण अुसे स्वयं ही अपनी अिस व्यर्थकी कल्पनापर हँसी आ गयी।

"भला ये सूदखोर जितनी आसानीसे मरा करते हैं," करीमने बड़बड़ाते हुअे कहा, "मुल्ला लोग फजूल बका करते हैं कि सूद लेनेसे दोजख मिलता है। मरनेके बाद दोजख मिले या कुछ और, लेकिन जिन्दगीमें तो वे खूब आराम अुठा ही लेते हैं।"

"और यह मुल्ला-मौलवी," करीमकी विचार-धारा अब अिन लोगोंकी तरफ मुड़ी, "ये लोग हमेशा दौलतकी बुराअी करते हैं, अुससे अलग रहनेका अुपदेश देते हैं लेकिन येही लोग दौलतमंदोंकी जूतियाँ चाटते और गरीबोंको कुत्तोंकी तरह दुतकारते हैं।" करीमको स्मरण हो आया कि जब अुसके घरमें पुत्र जन्म हुआ था और वह गाँवके मुल्लाको बुलाने गया था, तब मुल्लाजीने कितनी घृणाके साथ मुँह बिचकाकर कहा था, 'आज मुझे सरदारके यहाँ दावतमें जाना है। जो कुछ लाये हो, यहीं दे जाओ, मैं शामकी नमाजमें तुम्हारे बच्चेके लिअे भी दुआ माँगकर आअूँगा।" अुस समय करीमको गुस्सा तो अैसा आया था कि मुल्लाकी गर्दनको अुमेठता ही चला जाअे, लेकिन वह अपने आनन्दमें विघ्न नहीं डालना चाहता था और दो पैसे मुल्लाकी तरफ फेंककर चुपचाप घर चला आया था।

अिसी तरह न जाने क्या-क्या सोचते— विचारते करीमने अपने गाँवका कठिन रास्ता पार कर लिया और जब गाँवकी बुर्जी अुसे दिखायी देने लगी, तब थकावटसे चूर-चूर होनेपर भी अुसके पैर अधिक तेजीसे अुठने लगे।

आखिर गाँव भी आ गया। अस्मत और बच्चेकी सूरतको आँखोंमें बसाये करीम घरकी ओर लपका चला जा रहा था कि अुसके कानोंसे अेक घिनौनी, कड़वी आवाज आकर टकरायी, "अबे करीमा है क्या?

लो करीमा ! आ गया तू । न जाने कितना माल मारकर लाया होगा शहरसे ? ला, हमारे रुपये तो दे जा ।" यह सरदारकी आवाज थी ।

करीमके पैर जैसे जमीनसे चिपककर रह गये और अेक सुपरिचित आतंकसे प्रेरित होकर अुसका हाथ अपने आप सल्वारकी अण्टीमें खुंसी हुअी रुपयोंकी थैलीपर पहुँच गया । थैली खोलते हुअे अुसने सहमे और बेबस स्वरमें कहा, "हाँ, हाँ सरदार ! तुम भी अपना हिसाब कर लो । कितने रुपये निकलते मेरे अूपर ?"

"आठ रुपये पाँच आने ।" सरदारको अपने सैकड़ों कर्जदारोंका हिसाब जबानी याद रहता था ।

"हैं, सातके अब आठ रुपये पाँच आने हो गये । सरदार ! कम-से-कम अितना जुल्म तो मत करो ।" करीमने झुंझलाहट-भरे स्वरमें कहा । शायद सरदारसे अैसे स्वरमें वह आजतक नहीं बोला था । "बदमाशोंकी बातें मत करो," ... "सरदारने डपटकर कहा, "अपना रुपया माँगना भी जुल्म है । जब गया था, तब सात रुपये बताये थे, अिधरका सूद नहीं देगा । लाओ, अिधर बढ़ाओ आठ रुपये पाँच आने ।"

करीमने अनुभव किया कि गलती अुसकी ही थी । अुसने दो-अेक क्षण कुछ सोचा और फिर सात रुपये थैलीमेंसे निकालकर सरदारकी ओर बढ़ाते हुअे अत्यन्त खुशामदभरे स्वरमें बोला, "माफ करना सरदार ! आप जानते हैं, हिसाब-किताब मुझे नहीं आता । अभी अितना ले लो, बाकी फिर दे दूँगा ।"

सरदारको यह सुनकर प्रसन्नता हुअी, क्योंकि अेक रुपया पाँच आना शेष रह जानेका अर्थ था, शीघ्र ही पुनः अितनी रकम हो जाना । अतः अुसने दबी-सी मुस्कराहटके साथ कहा, "हिसाब किताब नहीं आता, दूसरेपर ही भरोसा किया कर । हम बेअीमानीका अेक पैसा भी हराम समझते हैं । चल अब घर जा, हारा-थका होगा ।" करीम अेक ठंडी साँस लेकर आगे बढ़ गया ।

"आ गये तुम ?" करीमके दहलीजमें घुसते ही अुसकी बीबी अस्मतने कहा और दो बूँद आँसू अुसकी आँखोंसे बहकर मुरझाये गालोंको चूमने लगे ।

"हाँ, आ गया । जिस दिन तेरी खबर फकरसे मिली थी, अुसके दूसरे दिन ही मैं चल दिया । फिर तबीयत ही नहीं लगी । तू अच्छी तो है !" करीमने हाथकी लाठी जमीनपर फेंक अस्मतकी गोदसे बच्चेको लेते हुअे कहा और फिर बच्चेको अुछाल-अुछालकर खिलाने लगा । अस्मत खाने-पीनेका चिन्तजाम करने घरके भीतर चली गयी ।

× ×

करीमको घर आये पूरे आठ महीने बीत गये । अब वह फिर अेक-अेक पैसेको तंग है । सरदारके दस-बारह रुपये अुसके सर चढ़ गये हैं और अुसके तकाजोंके मारे करीमका नाकमें दम आ गया है । अुधर कन्धारके बाजारमें भी मजदूरी बेहद मुश्किल हो गयी है । गाँवके कअी आदमी वहाँसे निराश होकर लौट आये हैं । अब अस्मत और करीममें प्रायः झगड़ा हो जाता है ।

अकस्मात् अेक दिन करीमको अुसका पुराना साथी बशीर मिला । नयी सल्वार, कीमती कुर्ता और मखमली जाकेटमें वह बिलकुल दूल्हा मालूम होता था । करीमने अुसके अैसे ठाट-बाट देखे तो ओर्ष्यासे अुसका दिल कुढ़कर रह गया । फिर भी अूपरसे अुसने बशीरसे बड़ी मुहब्बत भरी बातें कीं, यहाँतक कि बशीरने अुसे अपने अिस ठाटबाटका रहस्य भी बता दिया । करीमको मालूम हुआ कि बशीर दो साल पहिले अिससे भी बुरी हालतमें हिन्दुस्तान गया था और आज अुसका हजारों रुपया वहाँके आसामियोंपर फैला हुआ है । यहीं तक नहीं, बल्कि बशीरने यह भी कह दिया कि अगर करीम अुसके साथ चलना चाहे, तो वह अपने खर्चेपर अुसे हिन्दुस्तान ले जा सकता है । करीम जैसे अेक मुस्तैद तथा विश्वस्त आदमीकी अुसे जरूरत भी है ।

करीमने बड़ी प्रसन्नता और कृतज्ञतासे बशीरका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, किन्तु अस्मतको समझाने-बुझानेमें अुसे लोहेके चने चबाने पड़े । जो अस्मत अिधर अुससे दिन-रात लड़ा करती थी, वही अुसके जानेकी बात सुनतेही अितनी बुरी तरह रोने लगी कि कभी-कभी करीमका निश्चयभी डगमगा जाता । आखिर

बहुत समझाने-बुझानेके बाद अम्मीने अपनी स्वीकृति दी। अुस स्वीकृतिमें सिर्फ बेबसी ही बेबसी थी।

× × ×

करीम अब घूमते-घामते दिल्ली आ पहुँचा। बम्बओमें तो अुसकी अनबन मालिकसे हो गया, क्योंकि वह सिर्फ अिने गिने पैसोंपर ही अुसे रखना चाहता था। लेकिन करीम अब अुसके रोजगारके तमाम दाव-पेंच समझ गया है। जब वह लाहौरसे दिल्ली चला तो अुसके पास सिर्फ पचास रुपये थे, लेकिन अब अुसके सत्तर रुपये तो अुधारमें हैं, जो प्रति दिन बढ़ते जाते हैं। अिसके अलावा अब वह रुपयेका मनाफा वह थोड़ा-सा सौदा बेचकर कमा लेता है। परिश्रम करनेमें तो वह भूत जैसा है।

करीमका कायदा है कि आधी रातको वह अपने तमाम कर्जदारोंके घरोंपर चक्कर लगाओ और अुनसे अपना सूद रोजका रोज वसूल कर ले। अुस समय ज्यादातर कर्जदार अपने घरपर ही मिल जाते और दूसरी सुविधा यह होती है कि अुस समय कर्जदारको टालने-धमकाने मारने-पीटनेमें काफी बाधा नहीं डालता। वह बड़ा क्रूरतासे अपना सूद वसूल करता और कभी कभी पाँच सात रुपये अुसके पास सिर्फ सूदके ही आ जाते हैं। अिनमेंसे कुछ वह नये कर्जमें बाँट देता है और कुछका सामान बेचनेके लिअे खरीद लाता। भोर लगनेपर तन्दूरपर * जाकर सस्ते पैसेमें खा जाता और थके जानेपर अब मस्जिदमें कुछ देरके लिअे कमर सीधी कर लेता। हाँ, कभी-कभी अम्मन और अपने बच्चे वाजिदकी याद अुसके दिलको जरूर कचोटने लगती लेकिन तभी करीम अपना डण्डा अुठा सीधे कर्जदारके घरकी ओर चल देता और अुससे लड़-झगड़कर अपने दिलका बुखार निकाल आता। अिसके अलावा वह करे भी क्या?

अिस तरह लगातार डेढ़ साल बिताकर जब अेक दिन अुसने अपनी पूँजी गिनी तो नकद तरह सौ रुपये अुसके पास थे। अिसके अलावा पाँच छह सौ कर्जदारोंपर भी बाकी थे। करीमको अुस दिन न जाने क्या सूझा, कि बाजार पहुँचकर अुसने थोड़ा सा सामान खरीदा और सीधा अपने वतनके लिअे चल दिया। अम्मन और वाजिदकी यादने अुसे बेकल कर दिया था।

× × ×

करीम हिन्दुस्तानके लिअे दूसरी बार चला, तो अम्मनकी ओरसे तो किंचित भी बाधा अुपस्थित नहीं हुआी किन्तु करीम स्वयं बड़ी कठिनाओीसे या कहना चाहिअे कि अपने फैले हुओ कर्जको वसूल करनेके मोहसे ही यहाँतक आ सका। वाजिदके कारण अुसको दिल घरसे अितना दूर रहनेसे घबड़ाता सा है। वह जबतक घरपर रहा, चौबीसों घण्टे वाजिदमें ही अुलझा रहा। अिसीलिअे रास्तेमें भी अुसके पैर बार बार घरकी ओर मुड़ने लगे किन्तु कर्जके आकर्षणने अुसे दिल्ली पहुँचाकर ही छोड़ा।

---
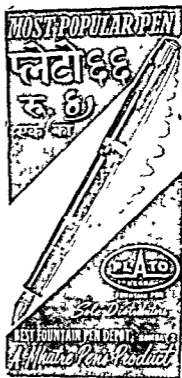
* तन्दूर वह भट्टा जहाँ मिट्टीके बने गोल बर्तनपर मोटी मोटी रोटियाँ पकती हैं।—सम्पादक

दिल्ली आकर दो-तीन दिन करीम गुम-सुम मस्जिदमें पड़ा रहा। असके बाद अुसने दिल कड़ा करके कर्जदारोंके घरोंपर चक्कर लगाने शुरू किये।

आखिर कर्ज तो वसूल करना ही है। अेक दिन वह अिसी प्रकार कर्ज वसूल करने चला तो सबसे पहले मजूके घर पहुँचा जिसपर अुसकी सबसे ज्यादा रकम थी। करीमने मजूके दरवाजे तक पहुँचते पहुँचते हिसाब लगा लिया कि आजकी तारीख तक ठीक तिहत्तर रुपये अुसकी तरफ निकलते हैं। तिहत्तर रुपये यानी सत्तर और तीन। करीमने मन ही मन सोचा 'अगर मजू चाहे तो अितने रुपये देना अुसके लिअे कोअी मुश्किलकी बात नहीं। दस बीस रुपयेके गहने अुसकी औरतके पास जरूर होंगे। असके अलावा कपड़े लत्ते बरतन भाँड़े। ये हिन्दुस्तानी भी अजीब होते हैं, कर्ज लेते हैं और गहने बनवाते हैं। साला औरतका गुलाम।' करीमको रास्ता चलते गालियाँ बड़-बड़ानेकी आदत पड़ गयी थी।

'मजू हय? मजू ओ मजू!' करीमने शब्दकी लाठीसे मजूके किवाड़को ठोकते हुअे पठानी हिन्दीमें आवाज दी, किन्तु भीतरसे कोअी आवाज नहीं आयी।

'बोलता नहीं साला! हम तुम्हारा बाप खड़ा है।' करीमने क्रोधसे चीखते हुअे पुनः आवाज दी किन्तु अुत्तर फिर भी नहीं मिला।

करीमने अेक दो क्षण कुछ सोचा और फिर किवाड़में अेक लात जमाकर बोला— 'हम दरवाजा तोड़कर भीतर आ जायगा, वरना चला बाहर।'

अिस बार करीमने अनुभव किया कि देहलीजमें कोअी आ रहा है। कुछ ही देरमें किवाड़ खुले और दीनताकी मूर्ति बने हुअे मजूने करीमके पैरोंको पकड़कर कहा 'खान! आज अट्ठाअीस तारीख है परसों तनखा होगी। बस दो दिनकी मुहलत दे दो। अिस महीनेकी पूरी तनख्वाह तुम्हें ही दे दूँगा।'

करीमने मजूकी पीठपर तीन चार घूँसे जमाकर कहा 'बदमाश! जब माँगता है बस दो दिनकी मुहलतका बहाना कर देता है। हमको अपना बापका नौकर समझता है!'

मजू घूसोंकी चोटसे बिलबिलाकर बोला— 'चाहे मार डालो खान लेकिन रुपया तीसकी शामको ही मिलेगा। अुस दिन न दूँ तो जान निकाल लेना।'

'दो दिन! अच्छा दो दिनकी मोहलत दिया। लेकिन फिर बहाना किया तो मालूम हय...' करीमने मजूके अेक लात जमाते हुअे कहा और आगे चल दिया। कुछ कदम चलनेपर करीमको अनुभव हुआ कि अुसने मजूको अितना नहीं पीटा, जितना पीटना चाहिअे था। परिणाम यह हुआ कि जिस अगले कर्जदारके पास करीम पहुँचा अुसपर सिर्फ सात आने ही अुधार थे फिर भी अुसे अितना पीटा कि अुसकी नाकसे खून बहने लगा। करीम कर्जदारोंको पीटनेमें कुछ तृप्ति-सी अनुभव करने लगा था।

अिस प्रकार अुस रातको करीम जिस कर्जदारके पास पहुँचा अुसकी जैसे शामत आ गयी। किन्तु अुस दिन वसूली भी अच्छी हुअी। करीम जब लौटकर आया तो अुसने मस्जिदके मुल्लाको अेक रुपया दिया कि वह अुसके वाजिदके लिअे पाँचों वक्तकी नमाजमें दुआ माँगे।

किसी तरह दो दिन भी बीत गये। करीम आज सुबहसे ही सोचने लगा कि अगर मजूने आज भी टालमटूल की तो अुसे वह अितना मारेगा कि बच्चूको छठीका दूध याद आ जायगा।

शाम हुअी और करीम लाठी लेकर मजूके द्वारपर जा पहुँचा। 'मजू हय!' अुसने अपने स्वभावानुसार आवाज लगायी और दूसरे ही क्षण अेक आदमीने किवाड़ खोलकर अुससे पूछा 'क्या है?'

'तुम कौन है? अुसी माँगता मजू।' करीमने घुड़ककर कहा। "मैं अिसी घरमें किरायेदार हूँ। मजूको कहाँ से मजू, वह तो मर गया।"

'हमारा बिना अिजाजत वह नहीं मर सकता। देखो वह अभी आता है।' करीमने दरवाजेकी ओर

पैर बढ़ाते हुअे कहा। अुसे मालूम हो रहा था कि अुसके साथ चाल खेली जा रही है।

करीम घरकी चौखटपर खड़ा ही था कि अेक राहगीरने किंचित् व्यंग्य करके कहा, 'खान! मजूको तलाश करता है क्या? अुससे मिलनेके लिअे तो अब तुम्हें दूसरी दुनियामें जाना पड़ेगा। यह कहकर अुसने आसमानकी तरफ अुंगली अुठा दी।

करीमको अब मजूके मरनेका विश्वास आया। वह फिर चौखटसे अुतरकर सड़कपर आ गया और झुंझलाहट भरे स्वरमें अुस किरायेदारसे पूछा—

"तुम मजूका कौन हय?"

'कोअी नहीं। मैं ठाकुर हूँ, मजू बामन था।'

"अुसका औरत है?"

"है पर अिस वख्त नदीपर गयी है, मजूके फूल चुनने।"

"कब आअेगा?"

"क्या मालूम?"

"जब आये, तो अुससे बोलना कि खान आया था। कोअी मर जाअेगा, तो अमारा रुपया नहीं छूटेगा। अुसे रुपया देना पड़ेगा, वरना हम बेअिज्जत करेगा।"

"वह देगी," अुस आदमीने सहमकर कहा, फिर खुशामद भरे स्वरमें बोला, 'वह कहाँसे देगी खान! कफन तो चन्देका पड़ा। अुस बेचारीको माफ करो।"

"अम किसीको माफ नहीं करता," करीमने तमककर कहा, "चन्दा कौन है? अुसने कफन दिया था, अमारा रुपया नअी दे सकता?"

आदमी समझ गया कि यह राक्षस है। अिसकी खुशामद करनेसे कोअी लाभ नहीं होगा। कुछ देर खड़ा रहकर वह घरके भीतर चला गया।

करीम वहाँसे चला, तो सोचने लगा कि अब रुपया कैसे वसूल होगा। अुसे याद आया कि मजूने तनख्वाह मिलनेकी बात कही थी। तो फिर तनख्वाहका रुपया तो मजूको वहाँसे मिला ही होगा। वह यह सोचकर झुंझला अुठा कि अगर मजू सिर्फ कुछ घंटे और जिन्दा बना रहता, तो कमसे कम अुसका रुपया तो वसूल हो जाता।

करीम जब मस्जिदमें लौटा, तो अुसने अपने बिस्तरके अूपर अेक कार्ड पड़ा देखा। कार्ड परचा है, अितना वह अुसकी शक्ल-सूरत देखकर ही समझ गया। *जिस समय अुसे बड़ी भूख प्यास लगी थी लेकिन कार्डको देख कर भूख प्यास भूल गया* और सीधा मुल्लाजीके पास पहुँचकर बोला "मौलवी! अमारा खत सुना दो।"

मुल्लाजीने खत लिया। अुसमें सिर्फ दो लाअिनें थीं, फिर भी कुछ देर वे खामोशीके साथ कार्डपर नजर जमाये रहे। जिसके बाद बोले, 'क्या पूछता है खान?"

'खतमें क्या लिखा है, यह सुनाओ।"

"*क्या सुनाअूँ? तुम्हारा लड़का था, वह जाता* रहा। तुम्हें फौरन बुलाया है।"

करीमको अनुभव हुआ, जैसे जमीन आसमानकी तरफ अुड़ी जा रही है। गिरनेसे बचनेके लिअे अुसे दीवालका सहारा लेना पड़ा।

"रंज करनेसे क्या फायदा? खुदासे दुआ माँगो कि मरनेवालेको नजात (मुक्ति) दे।" मौलवीने कहा और मस्जिदसे बाहर चला गया।

करीमने वह रात अैसे काटी, जैसे अुसके दिलपर आरा चलता रहा हो।

× × ×

'मजूकी औरत! चलो बाहर।" करीमके स्वरमें यद्यपि नरमी थी, फिर भी देहलीजमें बैठी हुअी मजूकी औरतका दिल यह आवाज सुनते ही काँप गया। करीम पहले दिन जो कुछ कह गया था, अुसे वह अक्षर-अक्षर पड़ोसियोंसे सुन चुकी थी।

"कोअी नअी जाता हय। फिर अम भीतर आकर खींचेगा।' करीमने धमकी भरे स्वरमें कहा।

'अरी मजूकी बहू! जो कुछ कहता है, वह दे। अपनी मिट्टी क्यों पलीत करा रही है? यह खान बड़ा जालिम है, भीतर आकर न जाने क्या करने लगे?"

किसी पड़ोसकी स्त्रीने मञ्जूकी बहूसे कहा, तो करीमने भी यह बात सुनी। अिससे पहले वह जब किसीको अपने सम्बन्धमें 'जालिम' कहते सुनता था, तो कुछ गर्व-सा अनुभव करता था किन्तु आज अिस शब्दने अुसपर दूसरा ही प्रभाव डाला। वह अिस सम्बन्धमें कुछ सोचने लगा और तभी मञ्जूकी बहू अपने छोटे-से बच्चेको गोदीमें लेकर किवाड़की ओटमें आ खड़ी हुअी।

"अम अपना रुपया चाहता है। अबी चाहता है, बिल्कुल अबी।' करीमने तकाजेके जोशमें कहा, लेकिन तभी अुसकी निगाह मञ्जूकी बहूकी गोदमें चढ़े हुअे अुसके बच्चेपर पड़ी, तो वहींकी वहीं जमी रह गयी।

"वह तो चले गये सरकार! अब ।" मञ्जूकी बहूने भयसे काँपते हुअे कुछ कहनेका प्रयास किया ही था कि करीमने बिलकुल दूसरे ही स्वरमें बच्चेकी ओर संकेत करते हुअे पूछा, "यह कौन है? तुम्हारा बेटा है? तुम्हारा वाजिद है?"

मञ्जूकी बहू कुछ समझी, कुछ नहीं समझी। आज अुसे पहली बार मालूम हुआ कि खूँख्वार दीख पड़नेवाला यह खान अितनी मीठी बोली भी बोल सकता है।

"यह वाजिद तुम अमको दे दो। अम तुमको भौत रुपया देगा।" यह कहकर खानने पागलकी भाँति अपने हाथ फैला दिये।

मञ्जूकी बहू खानका यह अद्भुत व्यवहार देखकर डर-सी गयी। वह कअी कदम पीछे हटकर खड़ी हो गयी और तभी न जाने क्यों अुसकी गोदका बच्चा भी रोने लगा।

"ओह! यह रोता हय! अम अपने वाजिदके लिअे रोता है और यह अपने वालिदके लिअे रोता हय। अिसे तुम चुप कर लो।" कहते-कहते खानकी दाढ़ी आँसूओंसे तर होने लगी। मञ्जूकी बहूने समझा कि खान पागल हो गया है। वह सहमकर भीतर भाग गयी।

"ओह, तुम भी भागता हय। अमारा वाजिद भी भाग गया और यह वाजिद भी भागता हय। अमसे सब नाराज हय। अम जाता हय। तुम, अपने वाजिदको अिसका मिठाअी खिलाना। अितना कहकर खानने अपनी जाकेटकी जेबसे कुछ नोट निकाल दहलीजमें फेंक दिये और रोता हुआ वहाँसे चला गया। अिसके बाद फिर कभी किसीने खानको अुस नगरमें नहीं देखा।

[फीरोजाबाद।

अश्कके नाटकोंमें युग सत्य

• श्री गोपालकृष्ण कौल, श्री रामगोपालसिंह चौहान :

समाजके द्वन्द्वात्मक विकाससे साहित्यका अटूट सम्बन्ध है। जब लोग कबीलोंमें रहते थे और अुनमें वर्गोंकी सृष्टि नहीं हुअी थी, अुस समय मानवको प्रकृतिसे संघर्ष करना पड़ता था। और जब अुत्पादन और अुत्तराधिकारके क्रमसे होनेवाले परिवर्तनोंके कारण वर्ग-समाजका विकास होने लगा तो मानवका संघर्ष प्रकृति और मानवकृत शोषण दोनोंके विरुद्ध शुरू हुआ। जिस संघर्षकी प्रगतिके साथ-साथ वर्ग-स्वार्थ भी स्पष्ट होते गये। मानव समाजकी अिस संघर्षशील, द्वन्द्वात्मक-प्रगतिका प्रभाव साहित्यमें किसी न किसी रूपमें सदा प्रतिबिम्बित हुआ है। अिस संघर्षके क्रममें ही धर्म अधर्म, नीति-अनीति, दास मालिक, अूँच नीच और पाप-पुण्यकी विविध धार्मिक सामाजिक तथा राजनैतिक आदि मान्यताओं रीति रूढ़ियों, मिथ्या विश्वासोंका जन्म हुआ जो देश कालके प्रभावोंसे वर्ग-समाजमें होने वाले परिवर्तनोंसे प्रभावित होकर भिन्न भिन्न युगोंमें भिन्न रूप धारण करते गये। सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म और रीति-रिवाज आदिका अुदय और प्रचलन वर्ग-शासनों और वर्ग प्रभुताओंसे अनुशासित होता रहा। अिस प्रकार प्रभुताधारी और शासित, शोषक और शोषित धनी और निर्धन अेवं श्रमिक और अवकाश भोगीके वर्ग संघर्ष भी जीवनके विविध क्षेत्रोंमें अपने विविध रूपोंमें चलते रहते हैं। अिस मानव संघर्षका अन्त होता है वर्गहीन-समाजके निर्माणसे।

साहित्य मानव संघर्षकी कलात्मक अभिव्यक्ति है। यह संघर्ष चाहे आन्तरिक हो या बाह्य। अिस संघर्षका अेक मनोवैज्ञानिक परिणाम और लक्ष्य है— स्वार्थ आधारित अवकाशभोगी मानव सत्ताओं और व्यवस्थाओंका अन्त और मानवश्रमको महत्व देनेवाले समता-आधारित, रचनात्मक वर्गहीन समाजका निर्माण। अिस संघर्षमें रचनात्मक श्रमशील मानव समुदाय अेक ओर है और अवकाशभोगी सत्तासम्पन्न सीमित वर्ग दूसरी ओर। अेक शोषित है, दूसरा शोषक। मानव संघर्षके अितिहासमें सदा दो पक्ष रहे हैं। चाहे अुनके वर्ग रूप देश कालके अनुसार बदलते रहे हों। आज भी अिस संघर्षके दो पक्ष हैं— अेक अुनका जो अवकाश-भोगी शोषक हैं और सत्ताको जैसे भी हो अपने हाथोंमें बनाये रखना चाहते हैं, जो जीवनके विविध क्षेत्रोंमें अपने अुच्च वर्गके पुरखोंकी परम्पराका अैन्द्रजालिक विस्तार किये हुअे हैं, जो आज साम्राज्यवाद और पूँजीवादके पक्षधर हैं और अपनी अस्तित्व-रक्षामें बड़े बड़े युद्धोंकी तैयारी करते हैं। दूसरा पक्ष अुनका है जो अिस शोषण चक्रमें पिसते हुअे भी नव जीवन-रचनाके लिअे श्रम करते हैं और संसारकी शान्ति और रचनामें विश्वास रखनेवाली अधिकांश मानवजातिके प्रतीक हैं। सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक भेद अिस वर्ग स्वार्थकी शोषण परम्परासे नत्थी है। प्रत्येक युगके साहित्यमें अिस संघर्षका प्रतिबिम्ब किसी न किसी रूपमें दिखायी पड़ता है। हमें देखना होता है कि किस साहित्यमें, किन अैतिहासिक परि-स्थितियोंके कारण तमाम अन्तर्विरोधोंके साथ, किस पक्षका अधिक समर्थन किया गया है। जिस साहित्यमें मानव संघर्षके रचनात्मक जन-कल्याणकारी पक्षका समर्थन जितना अधिक होता है वह अुतना ही अपने युग सत्य की यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान करता है। यह अभिव्यक्ति दो प्रकारकी होती है। अेकमें जन कल्याणकारी शोषित वर्गकी क्रान्तिकारी शक्तियोंका सीधा समर्थन किया जाता है और दूसरेमें शोषक वर्गके जन विरोधी तत्वोंका अुद्घाटन।

युग सत्यकी जिन यथार्थ अभिव्यक्तियोंके अतिरिक्त लेखकके वर्गीय जीवनके अन्तर्विरोध भी अुसके साहित्यमें प्रकट होते रहते हैं। वह जिन सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियोंके वातावरणमें अपने

देवताकी छायाम अकाकीम भरीका यह कहना— 'हम लडकियाँ ह। हम अपनी अिच्छासे हस नही सकती बोल नही सकती हिल डुल नही सकती चाहे घट घुटकर मर जाअ। भारतीय नारी जीवनके रुग्यिस्त बन्धनोंसी घुटनभरी करण पुकार है।

अश्कके असे सभी नाटकोंम ज्ञात अज्ञात रूपमे सामाजिक व्यक्तिकी हैसियतसे नारीको सामन्ती और पूजीवादी बन्धनोंसे मुक्त करनेकी भावना विद्यमान दिखायी देती है।

अुडान म जिन बन्धनोंकी तमाम समस्या ओका निदान है। जिसमें मायाके चरित्रके माध्यमसे नारीके अस रूपको अपस्थित किया गया है जो पुरुषकी दासताकी मात्र दासी पूज्या या भाग्या बनकर ही स्वीकार नहीं करना चाहती बल्कि वह अक सामाजिक अिकाओ बनकर पुरुष सगिनी बनना चाहती है।

अश्ककी महानुभूति श्रमिक वर्गके साथ है। यद्यपि अुन्होंने मजदूरोंके जीवनपर कोओ नाटक नही लिखा फिर भी अुनके नाटकोंम यत्र तत्र श्रमका शोषण करनेवाली पूजीवादी मनोवृत्तिका पर्दाफाश किया गया है। देवताओंकी छायाम म शोषणग्रस्त मजदूर जीवनकी अक छोटी सी झाँकी अुन्होंने प्रस्तुत की है। अिस नाटकके पहले दृश्य विधानम ही अुनके दृश्यका सकेत देते हुअ अपनी अिस भावनाको भी प्रकट करते ह। वे लिखते है—

> कावूके असी ही अक नयी आबादीके पास दो अढाओ सौ बच्चे घरोंका अक गाँव है। अक व्यवसायी सोसाअिटीन (जो शिष्ट व्यवसायकी कलाम निपुण है) जिसके पास तीन चार सो अकड असर धरती सस्ते दामोंम मोल ले ली है। और फिर अिस अपीलपर कि अुस धरतीपर अक नये समाजकी नींव रखी जाअगी जो सम्प्रदायके स्थानपर मानवको अपने प्रेमका भाजन बनाअगा और देशके दीन हीन कृषकोंका सुधार करेगा बहुत दामों प्लाट बेचकर देवनागर के नामसे अक नयी बस्तीका सूत्रपात कर दिया है। निकट वर्ती गावोंके श्रमी वहा सुबह सात आठ बजेसे शामके सात आठ बजे तक सख्त सर्दी अथवा सख्त गर्मीम काम करते ह और पौने छह आने दैनिक मजदूरी पाते ह और वे लोग पत्र पत्रिकाओंम बड गवस्फीत स्वरम घोषणा करते ह कि अुन्होंने लाखों रुपय देहातम वितरण कर दिय ह और अुनके नगरके निकटवर्ती गाँव सम्पन्न हो रहे ह।

यह दृश्य विधान लेखककी वर्ग भेदको पहचानने वाली सजग प्रगतिशील दृष्टिका ही परिचायक है। नाटकका दृश्य विधान अिस टिप्पणीके बिना भी पूरा हो सकता था किन्तु शायद अस तरह पाठकोंके सम्मुख श्रमिकोंका शोषण करनेवाले पूजीवादी मानववादका पर्दाफाश न होता। अिस टिप्पणीकी पृष्ठभूमिम नाटकम दिखायी गयी गरीबीका चित्र वर्ग भेदकी यथार्थताको और भी अधिक स्पष्ट कर देता है।

अधिकारका रक्षक अकांकीम पूजीवादी सस्कारोंपर कठोर व्यग किया गया है साथ ही आजके अवसरवादी नेताओंकी पोल खोली गयी है। अिस नाटकके प्रमुख पात्र मि सेठ चुनावके लिअ जिस प्रकार ढोग रचते ह (जिनकी करनी कुछ और कथनी कुछ) वह आधुनिक नेताशाहीके ढोगी रूपका ही अक चित्र है। अक ओर तो वे हरिजन-सभाके मत्रीसे बात करते हुअ पीडितों और पददलितोंका अुपर अुठानेका दम भरते ह दूसरी ओर अपने नौकरको बुरी तरह गालियाँ देते और अपनी मेहतरानीको महीनेकी पगार माँगनेपर डाँटते ह। सार्वजनिक रूपसे वे अक ओर तो बच्चोंको शारीरिक रूपसे दण्ड देनेका नाशिक विरोध करते ह दूसरी ओर अपने बच्चोंको बमनाअत्र पीटते ह। बाहर मालिकोंके अत्याचारोंके विरोधका ढोग रचते ह और घरम अपने नौकरको तनखाह माँगनेपर कहते ह जा अब कोओ भी नहीं देते निकल जा यहाँसे जा जाकर पुलिसम रिपोर्ट कर दे। पाजी हरामखोर सूअर! आजतक मजीमें शाम सौंपा मुल्कम यहाँतक कि बाजारसे आनेवाली हर अक चीजम पैसे रखता रहा। हमने कभी कुछ न कहा

खेतको गन्दा करनेवाले पूंजीके प्रभावकी यथार्थताका अुद्घाटित करते हैं।

'अलग-अलग रास्ते' नाटकमें समाजकी पूंजीवादी जहनियत और आजके न्यायका परिचय लूकसके अिस कथनसे होता है — "यह हिन्दुस्तान है। यहाँ काबलियतकी कदर नहीं दिखावेकी कदर है। जो साधु गाली दे वह सिद्ध, जो डाक्टर मरीजोंके साथ तीखेपनसे पेश आये वह धनवन्तरीका बाप और जो वकील जितना ही झूठा हो अुतना ही सफल। वकालत आखिर रह ही क्या गयी। सचका सच और झूठको झूठ साबित कर दिखाना वकालत नहीं, बल्कि हर तरीकेसे झूठका सच साबित कर देना वकालत है।"

अश्कने अपने नाटक "अुड़ान" में मायाके चरित्र-पर युद्धकी विभीषिकाके कुछ प्रभाव दिखाकर संकेत रूपमें युद्धका विरोध करते हुअे शान्तिका पक्ष ग्रहण किया है। माया कहती है "बमबारीने जहाँ मकानोंके परखचे अुड़ा दिये, जहाँ अुनके वासियोंकी लज्जाको भी तार-तारकर दिया। जिनकी शर्म अुन्हें झरोखेसे झाँकने तककी आज्ञा न देती थी। अुन्हें मैंने नंगे मुँह नंगे मुँह क्या, नंगे शरीर सड़कोंपर भागते देखा है।" युद्धकी विभीषिकाका नग्न रूप देखनेवाली माया अेक गानके सहारे युद्धके आघातोंको भूलकर बड़े बड़े जंगल और पहाड़ पार करती रहा। मायाका यह गीत मानवकी शान्ति भावनाका प्रतीक है जो युद्ध नहीं चाहता।

अश्कने धर्मके नामपर साम्प्रदायिकताको अुभाड़नेवाली पूंजीवादी मनोवृत्ति और अुसके पीछे साम्राजी साजिशका भण्डा-फोड़ "तूफानसे पहले" नामक अपने अेकांकीमें किया है। अिसमें मुसलमानोंकी रक्षा करते हुअे हिन्दू गुण्डेसे मारा जानेवाला प्रधान पात्र धीसू मरते समय दाँत पीसकर कहता है — अेक तूफान आ रहा है। जिसमें ये सब दाग, ये गुण्डे ये धर्म और जाति-पाँतिके दर्द, गरीबोंका लोहू पीनेवाले पूंजीपति, ये भोले-भाले लोगोंको लड़वाकर अपना अुल्लू सीधा करनेवाले नेता——सब मिट जायेंगे। नयी दुनिया बसेगी जिसमें गरीबोंका, मजदूरोंका राज होगा जहाँ हिन्दू-मुसलमान न होंगे काले-गोरे न होंगे। सब अिन्सान भाअी-भाअी होंगे!" यह कथन अश्कके प्रगतिशील जनवादी दृष्टिकोणका अुद्घाटक है। अिससे यह प्रतीत होता है कि समाजकी प्रतिक्रियावादी, जन-विरोधी शक्तियोंकी मिटती हुअी सत्ता और वर्गहीन समाजके निर्माणके भविष्यके प्रति लेखक कितना जागरूक है।

अश्कने अपने नाटकोंमें मध्यवर्गीय जीवनमें पूंजीवादी प्रभावोंसे अुत्पन्न विशृंखलताओं और अुच्छृंखलताओं तथा अुनके जीवनके अन्तर्विरोधोंके व्यंगात्मक चित्र अुपस्थित करनेके साथ साथ जीवनके अुदात्त मानवीय भावोंका चित्र भी प्रस्तुत किया है जो मानव विकासका आशावादी प्रतीक है।

अिस प्रकार वर्ग समाजके युग-सत्यको विभिन्न रूपोंमें अश्कने अपने नाटकोंमें यथार्थवादी ढंगसे अभिव्यक्त किया है।

स्वप्न-सत्य साकार करो तुम !

श्री प्रभुदयालु अग्निहोत्री, अेम. अे. :

महज सुभग शृंगार करो तुम।
नील निलयकी नील निवासिनि, भूतलपर अभिसार करो तुम।

द्वार द्वारके दीप निर्वापित और तमोरेखाअें गहरी,
यौवनके सपनोंसे अस्थिर किन्तु सजग अम्बरके प्रहरी,
मन्द चरण छिप-छिप पलकोंपर अुतर सकल श्रमताप हरो तुम।

बिखरीं खण्ड-खण्ड प्रतिमाअें मन्दिर आज बना खण्डहर है,
जीवन जलता पृष्ठ कि जिसका, ध्वस्त-ग्रस्त अक्षर-अक्षर है,
पटाक्षेप कर हे रसरंगिणि, नव विधान-विस्तार करो तुम।

लघु सर अेक, अनन्त लहरियाँ, क्षुब्ध-क्षुब्ध सर अन्तर्मन,
लघु अुर अेक अनन्त विकल स्मृतियोंका पल-पलमें आवर्तन,
अपने शीतल मदिर स्पर्शसे चेतनताका भार हरो तुम।

आज प्रभंजनसे कम्पित हैं स्नेह-समर्पणकी दीवारें,
और अमर विश्वास हिला है, सूख चली मधुरसकी धारें,
अब नीरस आख्यान हो चला जिसका अुपसंहार करो तुम।

कबतक ठहरे ज्योतिस्नेह जल चुका और धूमित है बाती,
घूम रही है सूनेपनमें अेक करुण-ध्वनि-सी टकराती,
युगयुगसे रीते अन्तरमें आज हृदयभर प्यार भरो तुम।

कैसा शीतल अंक कि जिसमें तम-प्रकाश शिशुसम पलते हैं !
औ, वट जिसकी डाल-डालपर जन्म-मरण समरस फलते हैं !
आज हिरण्मय पात्र हटाकर स्वप्न-सत्य साकार करो तुम।

[अकोला।

ओड़िया

समग्र भारतरे प्राय आठ शह भाषा प्रचलित, तन्मध्यरु अधिकाश साहित्य विवर्जित केवल कथ्य भाषा। हिन्दी, बगला, तेलुगु, तामिल, कानारिज (कन्नड), मलयालम, मरहट्टी, गुजराती, गुरुमुखी, नेपाली, अुर्दू ओ आभमानक ओडिया प्रभृति अत्यल्प भाषा प्राचीन ओ आधुनिक साहित्य विभवरे प्रकृत भाषा नामरे अभिहित हुअे। वर्तमान युगरे ओडिआ भाषा अेहि सबु परवर्त्ती भाषा समाजरे समान आसनर अधिकारी न हेले हे–प्राचीन विभवरे अे जे शीर्ष स्थान अधिकार करीब, अेहा अनेक भाषाविद् स्पष्टरूपे स्वीकार करि अछन्ति।

हिन्दी

समग्र भारतमें प्राय आठ सौ प्रकारकी भाषाअे प्रचलित हैं। अुनके मध्यमेंसे अधिकाश साहित्य-विवर्जित केवल बोलचालकी (कथ्य) भाषाअे हैं। हिन्दी, बगला, तेलुगु, तामिल, मलयालम, कन्नड, मराठी, गुजराती, गुरुमुखी, नेपाली अुर्दू और हम लोगोकी ओडिया प्रभृति अत्यल्प भाषाअे प्राचीन तथा आधुनिक साहित्य वैभवमें प्रकृत (वास्तव) भाषाओके नामसे अभिहित होती है। वर्तमान युगमें ओडिया भाषा अिन सब परवर्ती भाषा-समाजमे समान आसनकी अधिकारी न होनेपर भी प्राचीन वैभवमें यह अवश्य शीर्ष स्थानपर अधिकार करेगी, यह अनेक भाषाविद स्पष्ट रूपमे स्वीकार कर चुके हैं।

मराठी

राष्ट्रोन्नतीचे नियम

१. "जे पोटी तेच ओठी" ही हृदयशुद्धीची परीक्षा आहे
२ "चित्त शुद्ध जरी शत्रु मित्र होती" हेच सत्य आहे
३ वाओीटाला चागल्याच्या नावाखाली खपू देणे तर धोक्याचे आहेच, पण चागल्या माणसाना निष्कारण बदनाम करणे हे अधिकच हानिकारक आहे
४ दुसरा वाओीट ठरला ह्मणजे तुह्मी चागले ठरणार नाही
५ कर्तव्य–पथावर सोवती मिळण्याची वाट पाहू नका
६ स्वत पेक्षा अधिक शाहण्यापासून शिका व कमी शाहण्यास शिकवा, सपूर्ण समाजाम वर ओढण्याचे यापेक्षा दुसरे हमखास साधन

हिन्दी

राष्ट्रोन्नतिके नियम

१ 'जो मनमें वही मुंहमे' यही हृदय-शुद्धिकी परीक्षा है।
२ 'हृदय शुद्ध हो तो शत्रु मित्र बन जाअे।' यही सत्य है।
३ बुराओीको अच्छाओीका बुरका पहननेकी अिजाजत देना तो सक्टकारक हैही, किन्तु भलाओीकी बदनामी करना अुससे भी अधिक हानिकारक है।
४ दूसरेको बुरा कह देनेसे आप अच्छे नही सिद्ध होगे।
५ कर्तव्य पथपर साथीकी राह देखनेमें समय मत खोअिअे।
६ अपनेसे अधिक बुद्धिमानोसे पढिअे, कम बुद्धिमानोको पढाअिअे। पूरे समाजको अूपर अुठानेका अिससे अधिक सच्चा साधन सम्भव नही।

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।]

राधा और राजन (अुपन्यास) लेखक—श्री बलभद्र ठाकुर पृष्ठ संख्या—३२६, डबल क्राअुन, सोलह पेजी। प्रकाशक ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया (राजस्थान)।

लेखकके शब्दोंमें यह अुपन्यास शहीदोंकी कहानी है। और शहीदके रूपमें अुसका नायक राजन है। राजन गम्भीर प्रतिभाशाली युवक है, अुसके हृदयमें अुत्कट राष्ट्रप्रेम है और अिसीलिअे वह प्रतिभाशाली होते हुअे भी कालेज छोड़ देता है तथा आअी सी अेस बननेकी अभिलाषा भी। वह चरित्रवान भी है। नारी जातिके प्रति श्रद्धा रखता है अैसी हालतमें ट्रेनपर लीलाके साथ जो व्यवहार करता है वह अुचित नहीं प्रतीत होता। लेखकका कहना है कि 'अिस अुपन्यासमें शहीद पात्रोंको मानव रूपमें ही अुपस्थित किया गया है।' शहीद पात्र तो केवल राजन ही है, और यह घटना राजनके स्वभावके प्रतिकूल जान पड़ती है। राजन स्वयं ही शैतान कहता स्वभाविक वातावरणमें अनाचार भी सदैव रहता है जब कि कृत्रिम मनोमोहक परदेके भीतर वही अनाचार व्यभिचार हो अुठता है। लीलाके पिता पण्डित रमाशंकरका अुसपर आसक्त होना भी विचित्र बात है।

काशी युग और प्रगतिशील प्रवाहमें बहनेवाला नवयुवक है। यही हाल राधाका भी है परन्तु अुसको शिक्षा दीक्षा राजनके द्वारा हुआ। अिसलिअे बादमें सम्हल जाती है और देश-सेविकाके रूपमें सामने आती है। मानो हरिऔधके 'प्रिय प्रवास' की राधा हो। काफी भी सम्हलना है परन्तु तब जब राजन राजद्रोहके अपराधमें फांसीके तख्तेपर चढ़कर हँसते हँसते मृत्युका आलिंगन कर लेता है। जिनके पहले लंदनसे लौटनेके बादसे तो वह पूरा बैरिस्टर ही था साहब था।

लीलाका चरित्र तो प्रारम्भसे अन्ततक रहस्यमय है, परन्तु अुसमें नम्रता और कर्तव्यके प्रति जागरूकता अवश्य है। अपने पिता पंडित रामशंकरकी वासनासे बचनेके लिअे लीला राजनके साथ भागकर नगर आयी थी। अुस समय अुसने कहा था 'अुस पिताकी सामाजिक स्थितिकी सुरक्षाके लिअे ही तो भाग चली हूँ।' पिताका यह रूप तो बीभत्स और अस्वाभाविक है। बादमें पण्डित रामशंकरको भी अपनी हरकतोंपर पश्चात्ताप हुआ और वे लीलाकी शरणमें आ गये। महन्त प्रजाकीर्तिका समावेश अुपन्यासमें बिल्कुल अनावश्यक प्रतीत होता है। राधाकी माँ 'चाची' पूरी भारतीय माँ है व कविवर मैथिलीशरण गुप्तकी भाँति 'आँचलमें दूध और आँखोंमें पानी' लिये।

अुपन्यासमें रजिया, रहीमखान और बनारसीके न भी होते तो भी काम चल जाता परन्तु अुन चरित्रोंके समावेशने अुपन्यासको सामयिकताको भी प्रदान की है। अिनके चरित्रका विकास भी सुन्दर है। बहिनजीके

चरित्रका स्फुरित होनेका मौका ही नहीं मिला। वे अब धूमिल छाया-सी रह गया।

मानव— (अुत्पत्ति स्थिति और विकास) लेखक, श्री बलभद्र ठाकुर पृष्ठसंख्या २८० स्वल्पमूल्य सोलह पन्ने। प्रकाशक ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया (राजस्थान)।

लेखकके शब्दोंमें 'अिस छोटी सी पुस्तकमें मानव समाजके लाखों वर्षोंके परिवर्तन और निर्माणकी कहानी है।' पुस्तकका आरम्भ 'पृथ्वी और अुसके मूल तत्वसे होता है" फिर पृथ्वीपर मनुष्यके आगमनकी चर्चा करती है। और फिर विभिन्न अध्यायोंमें अुसके सांस्कृतिक अेवं सामाजिक विकासपर प्रकाश डाला जाता है। लेखकका मत है कि 'भारतीय समाज अबतक विकासकी चार अवस्थाओंको देख चुका है।' अुसका यह भी मत है कि ५ हजार वर्ष पूर्व समाजका रूप आदि साम्यवादी था यह हो सकता है, परन्तु वह साम्यवाद आजके साम्यवादसे भिन्न था। वर्ग-चेतना तो थी, परन्तु वर्ग-संघर्षकी भावनाका अभाव था। पुस्तकमें विद्यार्थियों तथा साधारण ज्ञान बढ़ानेकी अिच्छा रखनेवालोंको पर्याप्त सामग्री मिल सकती है।

रावीका तट [लेखक—श्री राधेश्याम द्विवेदी, प्रकाशक केशव-साहित्य-कुटीर, करेरा (मध्यभारत) पृष्ठसंख्या ७२, मूल्य १।।)] बहुत अधिक मूल्य है केवल ७२ पृष्ठोंवाली पुस्तिकाका।

अिस नवोदित कविने अपनी अिस छोटी सी काव्य पुस्तिकाको, सन् १८५७के सिपाही विद्रोहसे लेकर २६ जनवरी १९५०की गणतांत्रिक स्वाधीनताकी घोषणा तककी आन्दोलन पृष्ठभूमिपर खड़ा करनेका रूप देनेका प्रथम प्रयास किया है। विषयसे संबंधित जिन तिथियोंका लेखकने सूचीपत्रमें घटनाक्रमके अनुसार अुल्लेख किया है, अुस विस्तृत क्षेत्रमें तो प्रतिभासम्पन्न होनेकी समर्थ लेखनी ही विचरण कर सकती थी। नवकविने घटनाओंका नीरस तुकबन्दीमें अुल्लेख मात्र कर दिया है।

पुस्तक रावीके अुस तटसे आरंभ होती है जहाँ लाला लाजपतरायके बलिदानसे शोक-छाया मँडरा रही है और अन्तमें भारतमें स्वतंत्रता देवीके आनेपर भी रावीके तटपर वही शोक-छाया मँडराती रहती है। रावी जिसके तटपर पंजाब-केसरी लाला लाजपतरायका अंतिम संस्कार हुआ, जिसके तटपर ३१ दिसम्बर १९२९ की अर्धरात्रिको पूर्ण स्वाधीनताका प्रस्ताव पास हुआ और २६ जनवरी सन् ३० को राष्ट्रके कर्णधारोंने स्वाधीनताकी प्रतिज्ञा दुहरायी, जिसके तटपर क्रान्तिकारी भगतसिंहको कारामुक्त करानेके हेतु बम परीक्षण करते हुअे साथी भगवतीचरण शहीद हुअे, वही रावी स्वतंत्रताके अवसरपर भारतीय द्वारसे बाहर निष्कासित कर दी गयी, यह भावना अपने-आपमें जितनी नाटकीय और प्रभावशाली है कविने अपनी रचनामें अुसका अुपयोग नहीं किया।

दुर्बल अभिव्यक्ति और अनुभूतिकी शिथिलताने पुस्तकको नीरस बना दिया है। कहीं भी पाठकको रससिक्त कर देनेवाली काव्य-शक्तिके दर्शन नहीं होते। अिस कच्चे प्रयासमें अैसे अनेक स्थल हैं जहाँ भाषाके कदम बुरी तरह लड़खड़ाये हैं और छिछले प्रयोगोंमें कविता लुप्तप्राय हो गयी है। अेक अुदाहरण देखिअे—

और अहिंसात्मक आन्दोलन
से घबड़ा जाता है शासन।
हिलने लगती है वह जड़से
वर्षोंकी तिष्ठित, दृढ़ आसन॥

गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवा (लेखक—श्री परशुराम चतुर्वेदी, प्रकाशक—साहित्य भवन लिमिटेड, अिलाहाबाद, पृष्ठ संख्या ७२, मूल्य बारह आना)

गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवा दो विभिन्न क्षेत्र और विषय हैं। प्रत्येक विषयपर प्रतिपादन अेवं समस्याओंको सुलझानेकी दृष्टिसे वास्तवमें बृहत् ग्रंथ लिखा जाना चाहिअे था जिसमें गृह जीवनकी समस्याओंका समग्र विवेचन प्रस्तुत हो। यही बात ग्राम सेवाके सम्बन्धमें कही जा सकती है। परन्तु प्रस्तुत पुस्तिका किसी बड़े ग्रंथकी रूपरेखा अथवा सार-संकलन मात्र प्रतीत होती है।

प्रकाशकने अपने वक्तव्यमें स्वीकार किया है कि 'गार्हस्थ्य जीवन और ग्राम सेवाके व्यवहारिक पक्षकी

ओर जितना कम ध्यान दिया जाता है अुतना कम ध्यान शायद ही अन्य किसी ओर दिया जाता हो।" किन्तु प्रकाशकके शब्दोंमें अुसके 'जागरूक लेखक' ने भी अिस विषयकी ओर वास्तवमें जितना ध्यान देना चाहिअे, नहीं दिया।

पुस्तिकाके गार्हस्थ्य जीवनवाले अंशमें पाँच परिच्छेद हैं और प्रत्येक परिच्छेद चारसे पाँच पृष्ठकी परिमित सीमामें समाप्त किया गया है। फुटनोटकी तरह लिखे गये अिन पाँचों परिच्छेदोंका क्रम अिस प्रकार है ...गार्हस्थ्य-जीवन, गृहवस्तु-व्यवस्था, आय-व्यय, वेशभूषा और बातचीत। केवल तीस पृष्ठोंमें लेखकने गार्हस्थ्य जीवन सम्बन्धी अपने व्यवहारिक सुझाव देकर प्रथम अंश समाप्त कर दिया है। अिन तीस पृष्ठोंमें थ्योरी अंश ही अधिक है, दृष्टान्तोंका समावेश नहींके बराबर है जिससे पुस्तककी अुपादेयता घट गयी है। परन्तु खूबी यही है कि सवंपमें सार्वेतिक ढंगसे सब कुछ कह दिया गया है। ग्राम-सेवा सम्बन्धी दूसरे अंशमें यह खूबी नहीं है। ग्राम-सेवाके लिअे शहरोंसे गावोंमें जानेवाले युवक या अन्य सेवापरायण व्यक्तियोंके सम्मुख आनेवाली समस्याअें भी यथार्थ रूपमें लेखक द्वारा नहीं अुठायी गयी। शहरो अेवं राजनैतिक आन्दोलनोंके प्रभावसे हमारे गावोंका स्वरूप वह नहीं रहा जैसा लेखकने बार-बार दुहराया है। न ही ग्रामीणोंकी कट्टरपंथी वृत्ति अुतनी तीव्र रह गयी है। गावोंकी रूपरेखा पीढ़ीमें दूर परिवर्तन हुअे हैं और अुनकी समस्याओंके रूप अब कुछ दूसरे ही हैं जिनसे आजके ग्राम-सेवकोंको संघर्ष करना पड़ता है। "ग्राम सेवाके सूत्र" महत्वपूर्ण अध्याय हैं परन्तु अुसका संक्षिप्त रूप अुसके महत्वको घटाना ही है। अिन सूत्रोंके प्रकाशमें कुछ तथ्योंकी चर्चा अपेक्षित है। फिर भी पुस्तिका कार्यव्यस्त जीवनमें अवकाशके समय देख लेने योग्य है। छपाई गेट-अप तथा मूल्य यथायोग्य है।

—अनिलकुमार, सा. र.

महात्मा गान्धी—जीवन कथा :—ले०—ना. सी फड़के, प्रका०—अंजलि प्रकाशन लिमि०, फरोजशहा मेहता रोड, बम्बअी १। पृष्ठ सं १८२ मूल्य १॥)

मराठीके स्यातनामा ललित साहित्य स्रष्टा श्री प्रो० ना सी फड़केके द्वारा मूल मराठीमें लिखित पुस्तकका यह हिन्दी-रूपान्तर है। अनुवादक हैं श्री प माणिक्लाल परदेशी।

अिसमें जैसा कि पुस्तकका नाम है, महात्मा गाधीजीकी जीवन कथा है किन्तु यह आत्मकथापरक नहीं है, न सस्मरणात्मक, न कथात्मक है। अिसे अुपन्यासपरक कह सकते है। यही कारण है कि अिसकी रोचकता बढ गयी है। विषय अति परिचित, जाना-समझा हुआ होते हुअे भी पढते ही बनता है। अिसके लिअे भारतके ही नहीं, ससारके सरताज महान् पुरुष भारतके प्रधान मत्री श्री प जवाहरलाल नेहरूकी भूमिकाने चार चाँद लगा दिये हैं। और भी अिस पुस्तकपर कअी सम्माननीय व्यक्तियोंकी सम्मतियाँ हैं। प नेहरूके शब्दोंमें अिसका हर कोअी समर्थन करेगा कि—"महात्मा गाधीके जीवनका सदेश प्रो. फड़केने अपनी अिस सुदर पुस्तकमें अत्यत प्रभावपूर्ण ढंगसे विशद किया है। मेरी हार्दिक कामना है कि यह चरित्र सब लोग पढ़ें और अिसपर मनन करें।"

अिस दिशामें लेखनी चलानेके लिअे प्रो फड़केजी बधाअीके पात्र हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें गाधीजीकी अुपदेश-वाणी, विशिष्ट घटनाओंका निर्विवार विवरण और अभ्यासके लिअे प्रश्न भी दिये गये हैं। पुस्तक हाअीस्कूल कक्षाओंमें तथा राष्ट्रभाषाकी परीक्षाओंमें स्थान देने योग्य है। भाषा दोषरहित, सरल, स्वाभाविक है।

पुस्तककी छपाअी-सफाअी अच्छी है।

लड़खड़ाते कदम—ले० प्रोफेसर महेन्द्र भटनागर, प्रकाशक—स्वरूप ब्रदर्स, मजूरी बाजार, अिन्दौर। पृष्ठ स ७८। मूल्य अेक रुपया।

आज पाठक-वर्ग कहानी द्वारा मनोरंजन मात्र नहीं चाहता, अपनी व्यथाकी कथाको वह अुसमें ढूंढता है। यहाँ 'अपनी व्यथा' से मतलब व्यक्तिकी, समाजकी राष्ट्रकी और अिससे भी अूपर अुठकर मानवकी व्यथा-मजबूरीसे है। सुमदुखी ही अपना दुख दर्द सुनकर—सुना

कर हलका कर सकते हैं। जिससे उनके हृदयका भार प्रच्छन्न हो, हृदयमें नाना प्रकाश और प्रेरणाकी शक्तिका संचार होता है। ठीक उसी दिशामें प्रस्तुत कहानी संग्रहकी प्रत्येक रचना सन्नद्ध है।

यद्यपि कहीं कहीं कथानकके बीचकी घटनायें एकदम अेक परिवर्तन सी जान पड़ती हैं, तथापि पाँच सात मिनटमें पढ़ी जा सकनेवाली छोटी रचनाओंका होना विशेष आकर्षक जान पड़ता है। प्रथम कहानीमें चपरासी परमाका पार्वतीसे यह कहना कि 'कित्ती खूबसूरत लग है तू पारवती'। भाषाकी दृष्टिसे स्वाभाविक और सुंदर प्रयोगको बताता है।

तरुण भटनागरजी कवि कहानीकार और आलोचकके रूपमें साधना कर रहे हैं। यदि वे बढ़ते ही चले कदम बढ़ाकर तो हिन्दीको उनसे बहुत कुछ आशा है।

जिसमें संदेह नहीं कि पाठकों द्वारा जिसका अच्छा स्वागत होगा।

—अभिराम, सा. र.

शकुन्तला दर्शन — लेखक सिद्धान्तवाचस्पति मूलाराम त्रिपाठी साहित्यरत्न, शिक्षा विशारद, प्रकाशक —भारतीय साहित्य मंदिर, गोरखपुर हवाबाग जबलपुर। पृष्ठसंख्या १२८ मूल्य १।)

महाकवि कालिदासका अभिज्ञान शाकुंतल संस्कृत साहित्यका अेक विश्वविख्यात नाटक है। संसारकी प्रमुख भाषाओंमें असके अनुवाद भी हो चुके हैं। हिंदीमें राजा लक्ष्मणसिंहने असका सुंदर अनुवाद किया है। प्रस्तुत पुस्तक मूल संस्कृत नाटक और असके असी हिंदी अनुवादकी सर्वांगीण समीक्षा है। जिसमें लेखकने शाकुंतलके सम्पूर्ण विषयपर, असके केन्द्र बिंदु कथा भाग, नाटकीय तत्व दिव्यतत्त्वोंका समावेश, चरित्र चित्रण, रस विचार, ऐतिहासिकता, भौगोलिक तथ्य, सांस्कृतिक परम्परा, विश्वव्यापी प्रभाव, श्रेष्ठ अनुवाद इत्यादि पंद्रह अध्यायों द्वारा अुत्कृष्ट प्रकाश डाला है।

पात्रोंके चरित्र लेखकने सबसे अधिक जागरूकता और निष्पक्षतासे प्रस्तुत किये हैं—विशेषत शकुन्तलाके चरित्र चित्रणको तो नारी जीवनके गंभीर मनोवैज्ञानिक निरीक्षणके पश्चात् ही खींचा गया प्रतीत होता है।

पुस्तक छोटी होते हुअे भी समीक्षा जगतमें अवश्य ही अेक नया और अूंचा स्तर स्थापित करती है। यथासंभव सभी दृष्टियोंसे लेखकने शकुन्तलाके नाटकत्व और स्थायित्वकी परीक्षा की है। भारतीय नाट्यशास्त्रकी दृष्टिसे तो लेखकने नाटककी परीक्षा की ही है, साथ ही शेक्सपियरके कुछ नाटकोंसे भी असकी तुलना की गयी है। अतः पुस्तक जहाँ अेक ओर परीक्षार्थियोंके विशद अध्ययनके अुपयोगकी वस्तु है तो दूसरी ओर साहित्य मर्मज्ञोंके लिअे भी चिन्तन सामग्री प्रस्तुत करती है। पुस्तककी छपाओ सफाओ अच्छी ही है।

—मूलशंकर त्रिपाठी

अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन पाँचवाँ अधिवेशन, नागपुर :

अ भा राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनका पांचवां अधिवेशन जो नागपुरमें हुआ बडे महत्वका था। श्री काकासाहब गाडगील अुसके अध्यक्ष थे और मद्रासके राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश-जीने अुसका अुद्घाटन किया। श्री गाडगीलजीने अपने अध्यक्षीय भाषणमें राष्ट्रभाषा हिन्दीके सम्बन्धमें दो-तीन बडे महत्वके प्रश्नोंकी चर्चा की और श्री श्रीप्रकाशजीने भी कुछ नये प्रश्न अुप-स्थित किये। सम्मेलनमें कोअी ६०० के लगभग भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें राष्ट्रभाषा प्रचारका कार्य करनेवाले प्रचारक-प्रतिनिधि अिकट्ठे हुअे थे। मणिपुर, आसाम, बंगाल, अुत्कल, कच्छ, सौराष्ट्र, गुजरात, बम्बअी, महाराष्ट्र, कर्नाटक, हैदराबाद, आंध्र, राजस्थान, मध्यभारत, मध्यप्रदेशसे प्रतिनिधि आये और अुनमें ९० प्रतिशत हिन्दीतर भाषी थे।

अिन प्रचारकोंका प्रचार-कार्य मुख्यत हिन्दीतर भाषी लोगोंमें ही हो रहा है। प्रचार-सम्मेलनका अुद्देश्य यही तो है कि भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके प्रचारक आपसमें अेक दूसरेसे मिलें, अपने कार्यका लेखा-जोखा करें, प्रचार-कार्यकी समस्याअें और अुनके हलपर विचार करें, और यदि हो सके, तो अपने कार्यमें बडे नेताओंसे मार्ग-निर्देशन भी प्राप्त करें।

श्री श्रीप्रकाशजीने सम्मेलनका अुद्घाटन करना स्वीकार किया, यह वास्तवमें बडी आशाजनक बात थी। अुन्होंने ४५ मिनटका लम्बा भाषण दिया, परन्तु सुननेवालोंको, जो अधिकतर *हिन्दीतर भाषी थे, अिस बातका* आश्चर्य हुआ कि अुन्होंने जो बातें कहीं वे अधिक-तर हिन्दी-भाषी-जनोंके लिअे थीं। सम्भवतः अुद्घाटनकर्ता स्वयं हिन्दी भाषी थे, अतः अुन्होंने अिस अवसरका अुपयोग अपने हिन्दी-भाषी बन्धुओंको जाग्रत करनेके लिये करना ही अच्छा समझा।

डंडेके बल प्रचार !

यह बार-बार सुननेमें आता है कि राष्ट्र-भाषाका प्रचार जोर-जबरदस्तीसे नहीं होना चाहिअे, डंडेके बलसे अुसका प्रचार नहीं किया जा सकेगा। श्री जवाहरलाल नेहरूने भी यह बात अेक-दो बार कही है और नागपुर-सम्मेलनके अुद्घाटक महोदयने भी अिस बातको अपने भाषणमें दोहराया। सम्मेलनमें अेकत्र हुअे प्रचारक अिस बातको सुनकर हैरान दिखायी देते थे। यह बात ही अुनकी समझमें न आ सकी कि हिन्दीका प्रचार जबरदस्ती कहाँ किया जा रहा है, कौन कर रहा है? और जबरदस्तीसे हिन्दीका प्रचार किस प्रकार किया जा सकता है? वे सब जानते हैं कि हिन्दीका प्रचार किस प्रकार किया गया है और आज भी किस प्रकारसे

हो रहा है। हिन्दी-भाषी प्रान्तोमे तो हिन्दीके प्रचारका प्रश्न ही नही है। हिन्दीतर भाषी प्रान्तोंमें जहाँ हिन्दीका प्रचार किया जा रहा है, वहाँ स्वराज्य मिलनेसे पहले तो सरकारके विरोधके होते हुअे भी, जनताकी मीठी नजर प्राप्त कर ही अुसका प्रचार बढाया गया और स्वराज्य मिलनेके बाद तो प्रान्तोंमें प्रान्तीय भावनाअे प्रबल होनेके कारण विरोध बढा ही है, घटा नही। जो राज्य-सरकारे हिन्दीके काममे सहायता करना चाहती है, वे भी यदि डर-डरकर कदम रखनेको बाध्य होती है तो प्रचारकगण तथा प्रचार-सस्थाअे किसके बलपर जोर-जबरदस्ती कर सकती है, यह समझना अुनके लिअे कठिन था। जो लोग जोर जबरदस्ती-की बातें करते है वे शायद वस्तुस्थितिको जानते ही नही, अथवा यो ही कुछ कहनेके लिअे अैसी बाते कह देते हैं। शायद कुछ लोगोको अैसी बाते सुननेमे यह अच्छी भी लगती होगी, असलिअे भी सम्भव है कि कही जाती हो।

संतोंकी वाणीसे प्रभावित भाषा :

अुद्घाटक महोदयने अेक बात यह भी कही कि हिन्दीमे गाली गलौजकी क्षमता अधिक है और अुसम अपशब्द बहुत भरे हैं। असे सुनकर भी सम्मेलनके प्रतिनिधियोको बडा आश्चर्य हुआ था। और क्यो न होता? आजतक तो वे यह मानते आये थे कि हिन्दीपर सन्तोकी वाणीका ही अधिक प्रभाव है। हिन्दी राष्ट्रभाषा बनी अुसके पहले साधुओ और सन्तो द्वारा ही अुसका सारे भारतवर्षमें प्रचार हुआ। तुलसी, सूर, कबीर, मीरा, दादू, नानक आदि सन्तोकी वाणीसे हिन्दी समृद्ध है। कअी स्थानोपर तो राष्ट्रभाषा-प्रचारका आरम्भ अिन सन्तोका तथा अुनकी वाणीका प्रचार करनेसे किया गया। गुजरातमे भी असी प्रकार अिस कार्यका आरम्भ किया था। असलिअे आज तक प्रचारकोकी जो भावना बनी हुअी थी अुसपर आघात करने-वाला मन्तव्य सुननेसे अुन्हे खेदसहित आश्चर्य होना स्वाभाविक ही है। कअी लोग गुस्सा होनेपर अग्रेजीमें गालियाँ देने लगते है असलिअे अग्रेजी गालियाँ देनेकी क्षमता रखनेवाली भाषा नही कही जा सकती, असी प्रकार यदि गुस्सेमें कोअी हिन्दी या अुर्दूमें गाली देने लगे तो अुसमें अुस भाषाका दोष नही। गाली देना कोअी अच्छी बात नही, असलिअे जब मनुष्यका अन्तर-मन अुसे अन्दरसे टोकता है तब वह दूसरी भाषाका प्रयोग करने लगता है, और समझता है कि अिस तरहसे अुसने अुसपर अेक बारीक सा परदा डाल दिया है। यही असका मनोवैज्ञानिक रहस्य है। असलिअे किसी भाषापर असका दोष मढना किसी प्रकार अुपयुक्त नही माना जा सकता।

भाषा कैसी हो ?

राष्ट्रभाषा कैसी हो असके सम्बन्धमे अब विवादकी आवश्यकता नही। प्रचलित अग्रेजी तथा अन्य भाषाओके शब्दोको निकालकर अुनके स्थानपर सस्कृतके भारी-भरकम शब्दोका अुपयोग किसी प्रकार भी वांछनीय नही। श्री श्रीप्रकाशजीका अिस सम्बन्धमे जो मन्तव्य है वह हिन्दीके अधिकतर विद्वानोको भी मान्य है। प्रान्तीय भाषाओ तथा हिन्दीमे परस्पर लेन-देन हो, और हिन्दी-भाषी भी अकाध दूसरी भारतीय भाषा सीखें, अुनका यह सुझाव भी अच्छा था। राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति असके लिअे प्रयत्न भी कर रही है।

सचमुच ही यदि हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनना है तो अुसमें सभी प्रान्तीय भाषाओंके अुपयोगी शब्दोंको आत्मसात करनेकी क्षमता होनी चाहिये और भावना तथा विचारोंमें सारे भारतका प्रतिनिधित्व करनेकी भी शक्ति आनी चाहिये।

गाडगीलजीकी योजना :

श्री गाडगीलजीने अपने भाषणमें कुछ महत्वके प्रश्नोंकी चर्चाही नहीं की, अुन्होंने हिन्दी-प्रचारकी अेक योजना भी दी। यह योजना नयी नहीं। अपने दिल्लीके अेक भाषणमें अुन्होंने यह योजना सर्वप्रथम रखी थी। योजना अच्छी है परन्तु सरकारी सहायताके बिना सफल नहीं हो सकती यही अुसकी सबसे बडी त्रुटि है। सरकारकी ओरसे अिस कार्यमें सहायता मिलेगी, अैसी आशा करके बैठे रहना कार्यको बडी हानि पहुँचाना है। सार्वजनिक संस्थाअें जो अिस कार्यमें लगी हुयी हैं, वे सब मिलकर यदि कोअी योजनाबद्ध कार्य आरम्भ करें, तो बहुत कुछ काम हो सकता है। परन्तु यह कैसे सम्भव होगा, यह प्रश्न है जिसका अुत्तर अभी तक हमें नहीं मिला।

अंग्रेजीके सम्बन्धमें :

श्री गाडगीलजीने अंग्रेजीको अेकदम न हटानेकी चेतावनी भी अपने भाषणमें दी है। विधानमें अंग्रेजीके लिअे १५ वर्ष दिये गये हैं और आज भी केन्द्र तथा राज्य सरकारोंका अधिकांश कार्य अंग्रेजीमें ही चल रहा है। अितना ही नहीं, बडोदा, ग्वालियर आदि स्थानोंमें, जहाँ गुजराती या हिन्दीमें काम होता था, वहाँ फिरसे अंग्रेजीको स्थान दिया गया है। अैसी स्थितिमें अंग्रेजीको अेकदम हटानेका प्रश्न अुपस्थित ही नहीं होता। प्रश्न तो यह है कि अंग्रेजी हटेगी भी, और कब हटेगी? श्री गाडगीलजीने श्री राजाजीके अेक अवतरणको देकर, अंग्रेजी भारतके लिये सरस्वती देवीकी सब देन है अिस ओर हमारा ध्यान खींचा। सरस्वती देवीकी अिस देनको हम स्वीकार कर सकते हैं परन्तु देनका मूल्यांकन भी तो सरस्वतीके पुत्रही कर सकेंगे। साधारण जनता तो शायद अुसका मूल्य समझ भी न सकेगी। अैतिहासिक दृष्टिसे यदि देखा जाअे तो कुछ लोगोंके मतसे भारतमें अंग्रेजी राज्य भी विधाताका अेक विधान था— अर्थात् ईश्वरकी देन थी। अुसके लाभ भी गिनाये जा सकते हैं, परन्तु किसी कारण अुसके गुलामीके तौकको तो हम सदा गलेमें लटकाये नहीं रख सकते थे। अिसी प्रकार सरस्वती देवीकी देन अंग्रेजीको भी, हमारे अूपर सदा प्रभुत्व करने नहीं दिया जा सकता। जनताके हितके लिअे राष्ट्रभाषा हिन्दीको अपना स्थान तथा प्रान्तोंमें प्रान्तीय भाषाओंको अपना स्थान देना ही होगा और वह भी यथासम्भव शीघ्रही। अिसका यह अर्थ नहीं कि अंग्रेजीका बहिष्कार किया जाअेगा। अेक वर्ग तो अंग्रेजीका अध्ययन करताही रहेगा और अुसके द्वारा प्राप्त ज्ञानसे भारतकी सेवा भी करेगा। परन्तु अंग्रेजी पढा-लिखा वर्ग आज शासनमें तथा अन्य महत्वके स्थानोंपर अधिकार कर बैठा है और साधारण जनतासे अलग रहकर अपनेको धन्य मानता है। अिस स्थितिमें आमूल परिवर्तन तभी होगा जब हिन्दी तथा प्रान्तीय भाषायें, जिनको साधारण जनता भी समझती है, अपना अुपयुक्त स्थान प्राप्त करेंगी और पढे-लिखे तथा साधारण जनतामें आज जो टूटका सम्बन्ध है वह निकटका तथा निजी सम्पर्क बन जाअेगा।

भारतकी मांगें :

श्री काकासाहब गाडगील तो जाने और माने हुअे साहित्यिक हैं। स्वाभाविक है कि वे

राष्ट्रभाषाको अपमा देनेका मोह संवरण न कर सके। अुन्होंने अस पतिगृह जानेवाली शकुन्तलासे अुपमा दी है। अुन्हें शकुन्तला ही क्या याद आयी? क्या अिसीलिअे कि वह भरत जिसके प्रभाव तथा गौरवके कारण अिस देशका नाम भारत पड़ा है अुसकी वह माता थी? परन्तु यदि राष्ट्रभाषा हिन्दी हमारी राष्ट्रवाणीका रूप लेनेवाली हो तो हमारी पुरानी परम्पराके अनुसार अुसे भारती-सरस्वतीकी अुपमा देनी चाहिअे, जिसकी राष्ट्रकी पीठिकापर प्रतिष्ठा की गयी है और जिसकी पूजामें भारतकी समस्त प्रजा अुत्तमसे अुत्तम भेंट चढ़ानेको अुत्सुक है।

श्री पराडकरजीकी हिन्दीको देन :

नागपुरमें राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनमें हिन्दीके सुप्रसिद्ध पत्रकार आजके सम्पादक श्री बाबूराव पराडकरजीको १५०१) का 'महात्मा गांधी पुरस्कार' देकर जो सम्मान दिया गया वह अपना अलग ही महत्त्व रखता है। अुनके जीवन तथा कार्यके सम्बन्धमें नवम्बरके अंकमें जो दो लेख छपे हैं, अुससे पाठकोंको पर्याप्त जानकारी मिल गयी होगी। परन्तु राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकासकी दृष्टिसे अुन्होंने जो कार्य किया है, वह अनुपम है। राष्टभाषा प्रचार समितिमें जब वे गत १३ नवम्बरको पधारे, तो अुन्होंने समितिके कार्यकर्ताओंके समक्ष हिन्दी भाषाके रूपके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करते हुअे कहा कि अुन्होंने हिन्दीमें अपनी लेखनी द्वारा कोअी २०० अैसे शब्दोंको हिन्दीमें टकसाली बना दिया, जो मराठी, बंगाली आदि भाषाओंसे लिये गये थे। आज वे अुस रूपमें पहचाने नहीं जाते और हिन्दीके ही बन गये हैं। अेक पत्रकार तथा लेखक अपनी लेखनी द्वारा क्या कर सकता है, अिसका यह बड़ा अच्छा अुदाहरण है। परन्तु जिसके लिअे अुसके पास विशाल हृदय, राष्ट्रीय भावना तथा समन्वय-दृष्टिका होना आवश्यक है। हमारी दृष्टिमें राष्ट्रभाषाके विकासकी दृष्टिसे श्री पराडकरजीका यह कार्य सदा अनुकरणीय रहेगा। समितिने अुनका सम्मानकर स्वयं अपना गौरव बढ़ाया है।

सरकार सहानुभूति तथा सहयोग दे :

नागपुरके प्रचार सम्मेलनके अवसरपर जिस वर्ष राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके रत्नोंको मध्यप्रदेशके मुख्य मन्त्री श्री रविशंकर शुक्लजी के शुभ हाथोंसे प्रमाण पत्र तथा अुपाधि-शाल दिये गये। श्री शुक्लजी कुछ अस्वस्थ होनेपर भी आये और अुन्होंने अुस समय जो दीक्षान्त भाषण दिया अुसमें अेक बड़े महत्त्वके प्रश्नकी चर्चा की। अुन्होंने राष्ट्रभाषाके प्रचारकोंसे अपने ही बलपर अिस कार्यको आगे बढ़ानेका अनुरोध किया। अुन्होंने कहा सरकार भी कुछ करती है, परन्तु वह जो करती है, वह अुस कार्यके प्रति सहानुभूति तथा सहयोग देनेकी दृष्टिसे करती है। अर्थात मुख्य कार्य तो सार्वजनिक संस्था तथा प्रचारकोंको ही करना होगा।

सार्वजनिक संस्थाअें तथा प्रचारक भी तो यही चाहते हैं। वे राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकारसे अनेक कार्यमें सहानुभूति तक सहयोग चाहते हैं और यही कारण है कि आज प्रचार-सम्मेलनों तथा अैसे ही दूसरे मन्चोंपर राजकीय नेताओंको लानेका प्रयास किया जाता है। स्वराज्य मिलनेसे पहले अिन संस्थाओंमें तथा सरकारी तन्त्रोंमें जो विरोध रहता था वह आज नहीं रहा अिसका निश्चित ज्ञान भी कार्यकर्ताओंका अुत्साह बढ़ानेके लिअे पर्याप्त है। परन्तु राजकीय नेतागण कभी-कभी अैसे मन्चोंपर

आत्र रचनात्मक कार्यकी दृष्टिको गौण बनाकर राजनैतिक दृष्टिको ही प्रधानता देने लगते है, तत्र वडी विपम परिस्थिति अुपस्थित होती है। परन्तु आजके क्राति-काल में यह सब होगा ही। अिसे सहन करनके सिवा दूसरा कोअी चारा नही। परन्तु हम यह आशा अवश्य करे कि राजनैतिक वपनके नता भी यह शीघ्र ही समझ जाअगे कि अिन कार्योसे अन्ततोगत्वा अुन्हीको वल मिलनेवाला है। रचनात्मक कार्यके द्वारा ही प्रजामें भावनाका, सगठनका तथा कार्यका वल आअेगा और वलवान प्रजाका नेतृत्व ही अुसके नेताको गौरव प्रदान करेगा।

लिपि सुधारका महत्व :

निकट भविष्यमें ही लखनअूमें अुत्तर प्रदेशके मुख्य मत्री श्री पतजीके द्वारा निमन्त्रित लिपि-परिषद होने जा रही है। हम अिस परिपदका स्वागत करते है। नागरी लिपिमें जो कुछ सुधार करना आवश्यक हो अुसका अब निर्णय हो जाना चाहिअे। वर्पोसे अिस सम्बन्धमें चर्चा होती आयी है विचार-विनिमय तथा विवाद भी हुअे हैं, परन्तु अभीतक अतिम निर्णय नहीं हो सका। अिस अनिश्चित दशाका अत होना चाहिअे।

अिस परिपदका ध्यान हम अेक विशेप वातपर दिलाना चाहते है। 'अ' की बारहखडी तथा अन्य कुछ सुधारोका प्रचलन देशमें हो चुका है। हिन्दीतर भापी प्रातोंमे राष्ट्रभाषा प्रचार समिति आदि जो सस्थाअें काम कर रही है अुनमे अधिकाशने लिखनेमें 'अ' की बाराखडीको स्वीकार किया है। आज लाखो लोग अिस तरहकी लिपि लिखने तथा पढनेके आदी हो गये है। अनेक सस्थाओका सारा प्रकाशन भी अिसी लिपिमें होता है।

अिन सुधारोको जनताने अपनाया है। अत परिपद यदि अिन प्रचलित सुधारोके पक्षमें अपना निर्णय दे तो वह हितकर ही होगा।

शास्त्रीय या विज्ञानिक दृष्टिसे हम यहाँ अिसपर किसी प्रकारकी चर्चा करना नही चाहते। सुविधाकी दृष्टिसे अिसे हिन्दीतर भाषी प्रातोमें स्वीकार किया गया है और 'अि, अु' आदिको भी अिन स्वरोका चिन्ह मानकर चलानेसे अुसमें फिरसे कोअी आपत्ति नही रहनी चाहिअे। परिपद यदि विकल्प रूपसे भी अिस पद्धतिका स्वीकार कर लेगी तो भी विरोधका कारण टल जाअेगा और सबको सन्तोप होगा।

आशा है, परिपद अिसपर अवश्य सहानुभूतिपूर्वक विचार करेगी और हिन्दीतर भाषी प्रातोंके निवासियोकी कठिनाअियोको ध्यानमें रखकर, अिस सुझावको मान्य करनेमें किसी प्रकारका विवाद न खडा करेगी।

प्राच्य विद्या परिषद :

प्राच्य विद्या परिपदका अहमदावादका अधिवेशन आतर-राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान श्री सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याकी अध्यक्षतामें सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। देशके कोने कोनेसे प्राच्य विद्यामें दिलचस्पी रखनेवाले प्रथम पक्तिके विद्वान अुसमें अेकत्रित हुअे थे। अुसके साथ प्राचीन हस्तलिखित ग्रथोकी अेक प्रदर्शनी भी की गयी थी। प्रदर्शनीमें अधिकाश तो जैन ग्रथोकी पाण्डुलिपियाँ थी। फिर भी प्रदर्शनी दर्शनीय ही नही, अुपयोगी भी थी। परिपदके विभिन्न विभागोमें जो निवन्ध वाचन हुआ, वे भी अुस-अुस विभागके भारतीय विद्वानोंके अध्ययन तथा योग्यताके परिचायक थे। गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी ओरसे परिपद्के विद्वान प्रतिनिधियोका अेक प्रीति-

सम्मेलन आयोजित किया गया था। अिसमें राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें जो विचार भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी विद्वानो द्वारा व्यक्त किये गये वे सचमुच ही अुत्साहवर्धक थे। अेक दोको छोडकर सभी वक्ताओंने हिन्दीमें ही अपने विचार प्रगट किये। अुनका यह प्रयत्न अवश्य अभिनन्दनीय था।

परिषदके बारेमें अेक बात अवश्य खटकती रहेगी। परिषदने निबन्धोंके लिअे तो हिन्दी भाषाको स्वीकार कर लिया, परन्तु प्रयाग विश्वविद्यालयके सुप्रसिद्ध विद्वान डा० बाबूराम सक्सेनाका 'हिन्दी' को परिषदका अेक स्थायी-विभाग बनानेका प्रस्ताव कार्अुसिलकी बैठकमें बहुमतसे अस्वीकृत रहा। अिस प्रस्तावका विरोध करनेवालोंका तर्क था, कि हिन्दी अभी राष्ट्रभाषा बनी नही, जब वह राष्ट्रभाषा बन जाअेगी तब अुसपर विचार करेंगे। अिस प्रकार तर्क करना क्या ठीक है? अिसका जनता ही विचार करेगी। विधानमें तो हिंदीको संघीय भाषाका महत्व दिया जा चुका है। जनता भी अुसको अपनाती जा रही है और अनेक वर्षोसे राष्ट्रभाषाके रूपमें हजारों प्रचारक अुसका प्रचार करते आ रहे हैं। अैसी स्थितिमें यदि प्राच्य विद्या परिषद् श्री सक्सेनाजीका प्रस्ताव स्वीकार कर लेती, तो अुससे राष्ट्रभाषाके कार्यको बहुत बल मिलता। परन्तु यह प्रस्ताव वहाँ स्वीकार नही कराया जा सका, अुसका कारण हिन्दीके विद्वानोंकी अुदासीनता है। प्रतीत होता है कि वे प्राच्य विद्याके क्षेत्रम भी जैसी चाहिअे वैसी दिलचस्पी नही लेते। यदि वे यह अुदासीनता दूर कर सके, तो आगामी अधिवेशनमें अिस प्रश्नको फिरसे लाया जा सकता है। परन्तु यह तभी हो सकेगा जब हिन्दीके विद्वानोंपर जो अेक बहुत बडी जवाबदेही है, अुसे वे समझें।

—मो० भ०

'राष्ट्रभारती' पर कृपा करनेवालोंसे निवेदन

'राष्ट्रभारती' राष्ट्रभाषामें अपने ढगकी निराली लोकप्रिय भारतीय साहित्यकी मासिक पत्रिका है, जिसपर कलोपासक श्रेष्ठ लेखकों, कहानीकारों और कवियोंकी विशेष ममत्व-भरी कृपा रही है और अुनके सहयोगका हमें आश्वासन रूपी सम्बल मिला है। दिसबरका यह अंक तीसरे वर्षका अन्तिम अंक है। अिस वर्ष (१९५३) में जिन सहृदय श्रमजीवी, अुदारमना महानुभावोंने अपनी कृतियोंसे राष्ट्रभारतीको अलंकृत किया, कृपादृष्टि रखकर हमें अुत्साहित करते हुअे अपना आदर और प्यार दिया, हम अुनके अत्यन्त आभारी हैं। हमारा हाथजोड निहोरा है अुनके प्रति कि 'राष्ट्रभारती' पर वे सदैव पूर्ववत् कृपा रखें।

हम कृतज्ञता पूर्वक अिस वर्षके अपने प्यारे सहयोगी लेखक-बन्धुजनोंके नाम यहाँ प्रकाशित करते हैं —

सर्वश्री प माखनलालजी चतुर्वेदी, क्षितिमोहन सेन, मौ अ कलाम आजाद, डॉ वियोगी हरिजी, डॉ अमरनाथ झा, आचार्य सिद्धेश्वर वर्मा, आचार्य चन्द्रबली पांडे, ब्रिजलाल

वियाणी, मामा वरेरकर, भदन्त आनन्द कौसल्यायन, मन्मथनाथ गुप्त, महाराजकुमार डॉ रघुवीर सिंह, डॉ रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर आअी सी अेस, रमाप्रसन्न नायक आअी सी अेस, महात्मा भगवानदीन, प्रो विनयमोहन शर्मा, प्रो मोहनलाल वाजपेयी, प्रो प्रभाकर माचवे अेम अे, अुदयशंकर भट्ट, भवानीप्रसाद तिवारी अेम अे, 'नीरज' अेम अे, किशोरीदास वाजपेयी, भदन्त शान्ति भिक्षु, शिवनाथ अेम अे, प्रो रामपूजन तिवारी अेम अे, मोहनसिंह सेंगर, अुमाशंकर जोशी, राजेन्द्र यादव अेम अे, गंगाप्रसाद पांडेय अेम अे, प्रो अचल, प्रो राममूर्ति रेणु अेम अे, शंकरदेव विद्यालंकार, श्रीमती शान्ति अेम अे, श्रीमती विद्यावती मिश्र, प्रो रंजन अेम अे, जगदीशचन्द्र, कि रा, पितरस, नज्मुन्निसा बेगम, कु मुबारकजहाँ, अध्यापक जहूरबख्श, ओमप्रकाश आर्य, श्रीमती कमल आर्य बी अे, मुमताज अशरफ कादरी अेम अे, 'लहरी' अेम अे, प्रो कन्हैयालाल सहल अेम अे, प्रो रामचरण महेन्द्र अेम अे, प्रो शंभुप्रसाद बहुगुणा अेम अे, अमिताभ अेम अे, रा वीलिनाथन, वीरेन्द्र त्रिपाठी, प्रो जगदीशप्रसाद व्यास अेम अे, प्रो म ना अदवन्त अेम अे, प्रो य श गोडबोले, यशपालजी, डॉ धर्मवीर भारती, हकीम अबदुलबाकी, प रामनरेशजी त्रिपाठी, विष्णु प्रभाकर, लक्ष्मीशंकर व्यास अेम अे, पा ग पेंडापाडे, श्रीमती कमला चौधरी, रा कृष्णमूर्ति, रामरत्न वडोला अेम अे, मुनि श्रीकान्तिसागरजी, आचार्य स ज भागवत, डॉ हरदेव बाहरी अेम अे, प्रो हरिमोहन झा अेम अे, श्रीमती सीता सिन्हा, नागेश शरण अुपाध्याय अेम अे, प्राचार्य डॉ सोमनाथ गुप्त, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', लक्ष्मीकान्त वर्मा, रमणलाल वसन्त देसाअी, गौरीशंकर जोशी, म म माण्डवड, गुरुनाथ जोशी, 'भिक्षु', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना अेम अे, गिरिधर गोपाल अेम अे, गोपाल शर्मा अेम अे, हर्षनाथ, कु लक्ष्मी कृष्णन, ललित सहगल, गंगाधर गाडगील, अनिलकुमार सा र, बैकुंठनाथ मेहरोत्रा अेम अे, श्रीपरशुराम, महेशकुमार मूंधडा, श्रीमती गुहप्रिया, श्रीमती सरस्वती रामनाथन, लोकबन्धु, डॉ स स अल्तेकर, प्रेमकपूर कंचन, सुजानसिंह, अ न कृष्णराव, राजकुमारसिंह कुमार, श्रीमती माया गुप्त, देवराज दिनेश, जनार्दन मुक्तिदूत, प्रभातशास्त्री साहित्याचार्य, वृन्दावन नामदेव, बालमुकुन्द मिश्र, कृष्णलाल टी जेतली, प्रो महेन्द्र भटनागर, नीलमणि फूकन, प्रा विश्वनाथ सत्यनारायण, श्रीनाडोडी, अमरेन्द्र, चावलि सु ना मूर्ति बी अे सा र, देवदत्त विद्यार्थी, राजेन्द्रप्रसाद भट्ट बी अे अेलअेल बी, कु मोहिनी शर्मा अेम अे सा र, महेन्द्रराज अेम अे सा र, प्रताप विद्यालंकार, प्रो लावेकर, प्रो न चि जोगलेकर, जगदीशचन्द्र सिन्हा, नन्दकुमार पाठक, गोपालकृष्ण कौल, रामगोपालसिंह चौहान, कुसुमाकर दीक्षित, परदेसी सा र, आत्माराम वर्मा सा र, 'सोमु', प्रो कृष्णचन्द्र गुप्त, प्रो हिरण्मय अेम अे सा र, आनन्दचन्द, वसु व्यास 'अनल', रायप्रोलु सुब्बराव, यदुनाथ थत्ते, घनश्याम सेठी, श्रीराम शर्मा 'राम', मो र करंदीकर, आरसीप्रसाद सिंह, रतनलाल कमल, प्रो वें अेस चिदम्बरम भारद्वाज अेम अे, सत्यव्रत अवस्थी, अरविन्द जोशी, मनोहर देशपांडे, अनुसूयाप्रसाद पाठक, जिनेन्द्रचन्द्र चौधुरी, रंजन परमार, पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' अेम अे सा र, प्रो वेंकटरामय्या, श्रीमती राजलक्ष्मी राघवन, अहमदयूसुफ बद्र, जिब्राईल अली बदवी, औशनारायण जोशी, प्रो हरिमोहन झा ।

—हि० प्र०

श्रद्धेय टंडनजीको थैली

अ भा राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलनके पाँचवें अधिवेशन नागपुरमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ है —

"यह सम्मेलन निश्चय करता है कि हिन्दी के प्राण श्रद्धेय श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डनको अनकी हिन्दीकी अमूल्य सेवाओंके प्रति श्रद्धा व्यक्त करनेके लिअे अक अच्छी निधि अकत्रित की जाअे, और अुचित समयपर अुन्हें वह समर्पित की जाअे।"

प्रचारक तथा केन्द्र-व्यवस्थापकोंने मिलकर जो यह प्रस्ताव किया है अुसकी जवाबदेही वे समझते ही होंगे। अुनका अब यह कर्तव्य है कि अिस थैलीके लिअे जितना भी हो सके, धन शीघ्र अिकट्ठा करें। यह कोअी कठिन बात भी नहीं है। पुराने तथा नये परीक्षार्थियोंतक पहुँचनेका ही सवाल है। राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षाओंमें लाभ अुठानेवालोंकी संख्या लाखोंकी है। यदि वे आठ आना मात्र भी अिस थैलीके लिअे दें, तो भी लाखोंकी रकम अिकट्ठी हो जाअेगी। प्रचारक केन्द्र व्यवस्थापक तथा अन्य राष्ट्रभाषा-प्रेमियोंका भी जो कुछ हिस्सा अिस रकममें रहेगा। अिस प्रकार यह थैली अच्छी खासी बडी हो सकती है।

श्री टण्डनजीके सम्बन्धमें यहाँ कुछ कहना मुझे आवश्यक प्रतीत नहीं होता। राष्ट्रभाषा हिन्दीका विकास, प्रचार आदि प्रवृत्तियोंके वे प्राण हैं और भारतीय संविधानमें हिन्दीको राजभाषाका जो स्थान प्राप्त हुआ है, वह भी अधिकांशमें आपहीके प्रयत्नोंका परिणाम है। श्री टण्डनजी हिन्दीके कार्यको अपना जीवन-कार्य मानते हैं और राजनैतिक क्षेत्रमें अुनका बहुत अूँचा स्थान होनेपर भी, वे अपने राजनैतिक कार्यको हिन्दीके कार्यकी तुलनामें गौण स्थान देते हैं। गत चुनावके समय अुन्होंने 'पार्लमेण्ट' (संसद) में जानेका निश्चय किया, अुस समय भी हिन्दीका कार्य ही अुनकी दृष्टिके समक्ष मुख्य कार्य था। श्री टण्डनजीको थैली अर्पण करनेसे राष्ट्रभाषा हिन्दीके कार्यकी ही सेवा होगी। सब केन्द्र-व्यवस्थापक तथा प्रचारकोंसे हम अिस कार्यमें सम्पूर्ण सहयोग तथा प्रयत्नकी आशा रखते हैं। अिस थैलीके लिअे हम धनिकोंके पास जाना पसंद नहीं करेंगे। हमारे प्रचारक, केन्द्रव्यवस्थापक तथा परीक्षार्थियों द्वारा श्रद्धापूर्वक जो भी दिया जाअे अुसीको हम श्री टण्डनजीकी सेवामें अर्पण करेंगे। अिसलिअे जो रकम वे अेकत्र कर सकें, मन्त्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाके पास "टण्डनजीकी थैलीके लिअे" अिस प्रकार लिखकर मनिआर्डर या चेकके द्वारा भेज दें। जो प्रचारक तथा केन्द्र-व्यवस्थापक विशेष रूपसे प्रयत्न करके अिस थैलीके लिअे धन अेकत्र करना चाहेंगे अुन्हें लिखनेपर यहाँसे रसीद बुकें भेज दी जाअेंगी। अिस थैलीके लिअे जो धन प्राप्त होगा वह 'राष्ट्रभाषा' पत्रमें क्रमशः प्रकाशित किया जाअेगा।

मोहनलाल भट्ट,
मंत्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

साहित्यिक त्रैमासिक-पत्रिका

"राष्ट्रवीणा"

संपादक - जेठालाल जोषी

विद्वानोंसे प्रशंसा प्राप्त राष्ट्रवीणामें—

विद्वानोंके चिन्तनप्रधान लेख अव गुजरातीके साहित्यिक सांस्कृतिक, कला विषयक लेख, कविताओं प्रवास वर्णन परीक्षोपयोगी लेख गुजराती मराठी, बंगाली तथा हिन्दीकी समानार्थी शब्दावली आदि सामग्री चयनिका संस्कृति स्थान साहित्य समीक्षा गुजरात सौराष्ट्र और कच्छके राष्ट्रभाषा प्रचार समाचार आदि कओ स्तंभ प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य ४) अेक प्रति १)

वर्धा समितिके सक्रिय प्रचारकों और केन्द्र व्यवस्थापकोंको पत्रिका आधे मूल्यमें भेजी जाती है।

—व्यवस्थापक राष्ट्रवीणा

गुजरात प्रा रा भा प्र समिति कालूपुर,

खजूरीकी पोल, अहमदाबाद।

जल्दी ही आर्डर दीजिये

राष्ट्रभाषा-डायरी

१९५४

जिसमें राष्ट्रभाषा प्रचार समितिकी परीक्षा आदि प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें विभिन्न जानकारियोंके साथ दैनिक व्यवहारमें आनेवाली अुपयोगी बातें संग्रहीत हैं।

राष्ट्रभाषा प्रेमी प्रचारक वर्ग, छात्र वर्ग तथा सभी कोटिके लोगोंके लिअे यह डायरी बहुत ही अुपयोगी होगी।

सुन्दर कागज, आकर्षक छपाओ तथा कपडेकी पक्की जिल्द।

साअिज—४"+६½"

लागत मूल्य-१) अेक रुपया, डाक खर्च अलग।

प्रकाशक—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

महाराष्ट्र रा.भा प्रचार समिति, पुणेके तत्वावधानमें

राष्ट्रभाषा प्रचारकों और परीक्षार्थियोंके अुपयोगकी हिन्दीकी अभिनव साहित्यिक मासिक पत्रिका

"जयभारती"

सम्पादक अेवं प्रकाशक—श्री प. मु. डांगरे

प्रारम्भिकसे लेकर अूँची परीक्षाओंतककी परीक्षोपयोगी सामग्री, साहित्य, परंपरा सम्कृति विषयक लेख, शंका समाधान, साहित्य परिचय, मधुसंकलन, हिन्दी जगत्, परीक्षा विषयक सूचनाअें, आवश्यक जानकारी, कहाँपर कौन क्या पढें? आदि सारगर्भित अेवं समयोचित रचनाओं अेवं विशेषताओंसे भरपूर।

मनीआर्डरसे वार्षिक मूल्य १) अेक रुपया भिजवाकर शीघ्र ग्राहक बन जाअिये।

पता—८६६ सदाशिव, पो बा न ५५८, पुणे २.

पुस्तक-परिचय

अुत्कल साहित्य और साहित्यिकोंसे परिचय प्राप्त करना चाहते हैं तो निम्नलिखित पुस्तकें पढिये—

१-प्रतिभा—लेखक डा श्री हरेकृष्ण महताव। प्रतिभा जो अुत्कल विश्वविद्यालयकी बी अे परीक्षाके पाठयक्रममें है अुसका यह हिन्दी अनुवाद है।

२-अुत्कल मणि पं० गोपबन्धु दास—पं० गोपबन्धु दासकी जीवनी है। मूल अुत्कल भाषाके लेखक पं. लिंगराज मिश्र अेम पी हैं।

३-धर्मपद—पं अुत्कलमणि गोपबन्धु दास द्वारा लिखित अुत्कल भाषाका खण्ड-काव्य है।

४-अुत्कल साहित्यकी श्रेष्ठ कहानियाँ—जिसमें अुत्कल भाषाके प्रसिद्ध आठ लेखकोंकी कहानियाँ संग्रहीत हैं।

५-राष्ट्रभाषा बन्धु और राष्ट्रभाषा सुबोधिनी—अुत्कल भाषा सीखनेमें सहायक

६-क्या यह सुनी कहानी—लेखक प. रामेश्वर दयालजी दुबे हैं।

प्रकाशक—अुत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, कटक-१

जनवरी १९५४

[सूचनाः— राष्ट्रभारती राज्योंके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत है। अिस अंकके साथ 'राष्ट्रभारती' का चौथा वर्ष आरंभ हो रहा है। राष्ट्रभारती समग्र भारतीय— अन्तर-प्रान्तीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करती है। अिसने हिन्दीकी मासिक पत्रिकाओंमें अपना अेक प्रतिष्ठित अेवं महत्वका स्थान बना लिया है। प्रेमी पाठकोंसे हमारा निवेदन है कि आप अेक नया ग्राहक बनाकर अिस पत्रिकाकी ग्राहक संख्यामें वृद्धि करें और अपनी राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अुत्साहको और भी बढ़ाअें। 'विशारद' और राष्ट्रभाषा-रत्न परीक्षोपयोगी अुच्च आलोचनात्मक-परिचयात्मक लेख भी प्रतिमास अिसमें छपेंगे। कृपया राष्ट्रभाषा-प्रसारमें समितिका हाथ बँटाअिअे। —मो० भ०, प्रधान-मंत्री रा. भा. प्र. स. वर्धा]

—: विषय-सूची :—

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

— सम्पादक —

मोहनलाल भट्ट   हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ४ *   वर्धा, जनवरी १९५४   * अंक १ *

सन्त-वाणी

दादू' ये सब किसके पन्थमें धरती अरु आसमान,
पानी पवन दिन रातका चन्द सूर रहिमान।
ब्रह्मा विस्व महेसको कौन पन्थ गुरुदेव
साओी सिरजनहार तूं कहिअे अलख अभेव।
महमद किसके दीनमें, जबराअिल किस राह?
अिनके मुर्सद पीरको कहिअ अक अलाह।
'दादू' य सब किसके ह वै रहे यहु मेरे मन माहि,
अलख अिलाही जगद्गुरु दूजा कोओी नाहि।

हे दयामय, तुम्हीं बताओ यह धरती और यह आकाश, यह हवा और यह पानी, ये दिन और ये रातें, यह चांद और यह सूरज ये सब किस पन्थ, किस सम्प्रदायके माननेवाले ह? ब्रह्मा विष्णु और शिवके नामसे अगर पन्थ खड़े हो सकते हो, तो बताओ गुरुदेव! ये खुद किस पन्थके माननेवाले हैं? तुम स्वामी हो। तुम सहजकर्ता हो। तुम अलख हो। तुम भद और ज्ञानके अतीत हो, तुम्ही अिसका अुत्तर दे सकते हो। हे अेक अल्लाह तुम्हींसे पूछता हूँ बताओ तो भला मुहम्मदका मज्हब क्या था? जिब्राअिलका पन्थ कौनसा था, अिनके मुर्शिद और पीर कौन थे? ये सब किसके सम्प्रदायमें थ, किसकी सम्पत्ति थे? यह प्रश्न निरन्तर मेरे मनमें अुठता रहता हैं वह अलख अिलाही ही अेकमात्र जगद्गुरु ह समारमें दूसरा कोओी नहीं।

भारती

: श्री माखनलाल चतुर्वेदी :

रविकी प्रथम किरण शिर धरकर निमितिके अभिषेक !
हिम शिखरो अूंचा अुठनेको ओ चमकीली साध !
धोते चरण, निछावर होते तृपितोकी सुन टेक,
अुतर अुतर गगा जमुना बनते मीठे अपराध !

धूल-कणोसे अुठनी है तू हरित प्राणकी सेज,
वृक्षोसे विद्रोही अुठते धूल-कणोके तेज !

पग-पग, मग-मग डोल रही तू, तुझपर शत शिर डोल,
मांग रहा भू-दान, मुसाफिर लांघ रहा भूगोल !

चरण चल रहे भूमिपृष्ठपर रच दो शिथिला रेखा,
नियति लिख रही अुस रेखापर कोटि भाग्यका लेखा !

ओ वन्या, ओ प्रतिभा धन्या, विधि कन्या री अल्प,
दिल्लीके सिंहासनपर शोभित तेरा सकल्प !

देवि, वगके शूलीपर चढते शीशोके दान,
सिद्ध करो स्वातन्त्र्य आ गया बन प्रभुका वरदान !

हिमका मुकुट पहिन लो, लो गगा जमुनाका हार,
करनफूल काश्मीर और नेपाल प्रलय शृगार !

तेरे तार-तारपर गूंजे वह निनाद वह बोल,
करनफूल हिल अुठें न जानें पर मोतीका मोल !

अुत्तरका वासी दक्षिणपर दक्षिण अुत्तर-वासी,
मीनाक्षी पढरपुर त्र्यबक चल अुठ पूजें काशी !

जो कुछ पाया अुसपर गर्वित है न तरुणकी सांस,
ठडे जीनेपर न भरोसा करता है विश्वास !

कोटि-कोटि हृदयोंमें धमनी धडक रही है जानो,
धमनीमें युग प्रलय गल रहे है अिसको पहचानो !

अेक हाथ अपनी धड़कनपर, अेक हाथ युगकी छातीपर,
कल्याणी, रखकर देखो अगुली जलती दीपक बातीपर !

फिर बोलो, क्या अिस जमीनपर मंडराता आदित्य वही है ?
जग-जगमें जो व्याप रहा है क्या तेरा साहित्य वही है ?

फिर क्यो झिझक रही हो अंगुलि निर्देशो फौलाद गलाते !
फिर क्यो विता रही हो जीवन गीत वदनाओंके गाते !

कृष्ण, बुद्ध, अीसा, गान्धीको तुमने पृथ्वीका वर गाया ।
जो विद्रोही हुआ अुसीको तुमने भी अीश्वर बतलाया !

फिर क्यो चाहे, आश्रय नत हो कविता बनी सिसक निकली ?
फिर क्यो वीणा हुअी कुठिता फिर क्यो वाणी विकने निकली ?

'वर'-सी अुठी, हिमाचल शिखरो चमकी, देवोने यश गाया,
बनी 'महावर'-सी चरणोम, गगा बन भू-तल हरियाया !

हृदय-हृदयमें अुतर न पाओ, अिस विहारको हार कहूँ क्या ?
सृजनहीन कोमलताको कोमलताका सहार कहूँ क्या ?

भावोका जिनको अजीर्ण है अुनमें खेल न खेलो रानी !
भावोके भूखे शत-शत है, अुन्हे न दूर ढकेलो रानी !

जलकी हो श्रमजलकी हो, शिव तो है जिसके सिर गगा,
काली गोरी शिवा पार्वती अुसकी है जो है अधनगा ।

महलोम भर स्वाँग नृत्यकी ध्वनियाँ भर मत गूँथो बानी,
टिमकीपर डफपर, ताडवपर, चरण जमाओ लिखो कहानी !

तरलोन्मादमयी, मनमोहनि विश्वभरी मनोरथधामा,
वशी, वीणा, धन्य प्रवीणा नृत्य गान वादन अभिरामा !

पानीपर मत खीचो रेखा, खिच खिच वे ढहती जाअेंगी !
हिम शैलोपर गीत न लिक्खो नश्वर वे बहती जाअेंगी !

अमर रहे युग मस्तक डोलें, तो समझो मेरी कल्याणी,
चट्टानोमें फौलादोको तोड-मरोडकर लिखो कहानी !

बादलमें, गगा जमुनामें सागरमें रहने दो पानी,
पर तलवारोके पानीको भूलो नही वेदकी वाणी—

जिनने रसकस तुझको सौपा, जिनका कौशल तुझको भाया,
नर्तक, गायक, चित्रक, मूर्तिक, चितक—यह सब तेरी माया !

जिनने श्रमकण सौप भारती भारतनन्दनको लहराया,
प्राणोपर दे प्राण कि जिसने सिपहगिरीको धन्य बनाया !

क्यो तेरी रगोमें रगिणी अुनका रक्त नही भर आता ?
क्यो तेरी वीणापर मानिनि अुनके राग न कोअी गाता ?

तरलाअीका परम देवता जल है, मधुर अश्रु प्यारे है !
पर मिठासमें रक्तदान क्यो वहती हो जिनसे न्यारे है ?

चली योजनो डग-डग, पग-पग पागल भूमिदानकी तोली,
करुणामयी न तूने अुनपर अभीतलक वाचा भी खोली !

रथ दौडे, जलस्थ दौडे, ले देख हवापर भी रथ दौडे !
वाल्मीकि, तुलसी, मोरेश्वर सब पुष्पक वर्णनको दौडे !

निज ढीली चरणावलियोपर मत भूलो चमकीली चूली !
मत कहलाओ सिन्धु चीरते नभ कपित करतोको भूली !

तुलसी रगे रामके रगसे, सूर श्यामसे रिस-हँस बोले !
खुद अपने ही को दुलराकर हम जैसे कोअी कब बोले ?

नारी गयी कि प्राण चल दिये, माना किन्तु रसोकी रामा—
माता बहिन बेटियाँ भी तो नारी ही होगी अभिरामा !

वेणी खोल अेशियाकी सब भूमि भाग बालाअें धायीं,
तेरा माखन-चोर जगा दे री भारती जसोदा माअी !

बलिपर, कृतिपर, रसपर, छविपर जितनी दूर नजर जाअेगी
चारण-युग अुच्चारण युगको सिंहासन दे पछताअेगी !

बशीको ओठों रख, स्वरको जीपरसे भूपर आने दो !
हे प्रकाशमुखि, छाया पीछे-पीछे ही शोभा पाअेगी !

सजग विश्व जनगण सुनता है, जगके स्वरपर स्वर दो रानी !
छा जाओ भारती जगतपर, प्रतिभामयी देशकी वाणी !

अुठो देवि, कल्याणवन्दिता शस्त्रशास्त्र पूजिता अुठो तुम !
गिरिवन निर्जन प्रलय प्रभजन रसवती जूझिता अुठो तुम !
चढा कुमारीके तूँबेपर तार खूँटियाँ हिमगिरिपर दे,
गाओ भैरव राग सृजनकी विश्ववन्द्य गूँजिता अुठो तुम !

खडवा] (कविके सौजन्यसे)

आचार्य शान्तिदेवके स्वार्थ और परमार्थपर विचार*

श्री शान्ति भिक्षुः

अेक बात मेरे मनमें घूमा करती है, वह यह कि आदिम मानवसे लेकर आजतकका सुसंस्कृत मानव अेक ओर स्वार्थसिद्धिके लिअे अुचित अेक अनुचित सब कुछ करता है और दूसरी ओर वह परमार्थकी बात ही नहीं करता, पर परमार्थके नामपर दुनियाको अेक पोथीखाना ही बना डालना चाहता है। कभी-कभी वह परमार्थके नामपर कुछ भी कर डालता है या करना अथवा करवाना चाहता है, जो परमार्थकी परिभाषासे कोसों दूर होता है।

अेक दिन अेक धार्मिक-ग्रंथ पढ रहा था। ग्रन्थके रचयिता अेक महान् आचार्यने अेक जगह अेक महापुरुषको बहुत बडी बातें कह डाली थीं। मैंने अपनेको खूब सम्भालनेका जतन किया नहीं तो गुस्सेमें आकर अींटका जवाब पत्थरसे देना चाहा था। अुस भावुकताके आवेशमें मुझे बोधिसत्व शान्तिदेवने बचा लिया। अुनकी अेक सूक्ति मेरे मनमें आयी और अुसने मेरे मनको खराब होनेसे बचा लिया। अुन्होंने कहा है कि धर्मकी यदि कोअी बुराअी कर रहा हो, मूर्तियोंको यदि कोअी तोड रहा हो और स्तूपोंको यदि कोअी बिगाड रहा हो तो हमें नाराज होनेकी जरूरत नहीं, क्योंकि अिससे बुद्ध और बोधिसत्वोंका मन नहीं दुखता—

"प्रतिमा स्तूप सद्धर्मनाश का क्रोश केषु च।
न युज्यते मम क्रोधो बुद्धादीना नहि व्यथा॥"
-(बोधिचर्यावतार)

मेरे मनमें गान्धीजीका वह चरित्र चित्रलिखित-सा घूम गया। जब वे दिल्लीमें बैठे हिन्दुओंके समाचारोंसे बिना कुपित हुअे ही मुसलमानोंकी बुराइयोंकी निरन्तर कामना करते रहे, रच भरको अुनके कोसको आगमें वे अुदासीन न हुअे, और अेक दिन वह आया जब स्वयं अपना बलिदान कर दिया। अपनी जाति, अपने धर्म, अेक अपने आपके अूपर आये संकटके समय कुपित होनेका अर्थ तो समझमें आ जाता है क्योंकि वह दुनियाकी रीति-नीति है, पर अैसे अवसरोंपर शान्त रहनेमें क्या रहस्य है? तथागतने कहा है— फूटे कांसेका घटा कितना ही क्या न पीटा जाअे, बजता नहीं। अुसी तरह यदि तुम अपने आपको गम्भीर बना लो तो समझो कि तुमने निर्वाण पा लिया। तुम्हारे लिअे अशान्ति नहीं रही।

"स चे नेरेसि अत्तानं कंसो अुपहतो यथा।
अेस पत्तो सि निब्बानं सारम्भो ते न विज्जति॥"
-(धम्मपद)

पर बात-बातमें कलह करनेवाली दुनिया क्या अिस प्रकारके निर्वाणको चाहती है? शायद नहीं। क्योंकि अिस प्रकारके निर्वाणके लिअे जिस क्षमताकी आवश्यकता है, अुसका दर्शन दुनियामें विरल है।

मनकी वह स्थिति जिसे निर्वाण कहा गया है कैसे प्राप्त की जा सकती है? अुत्तर सीधा है कि दुनियाके स्वार्थोंको छोड देनेसे। किन्तु स्वार्थ कैसे छोडा जाअे? अुसका अुपाय क्या है? शान्तिदेवने अुसका अुपाय बताया है कि यदि हमारा मन निर्वाणके लिअे अिच्छुक है, तब हमें सभी कुछ छोडना होगा क्योंकि सर्वत्यागका नाम ही निर्वाण है। पर सब कुछ योंही छोड देना ठीक नहीं, प्रत्युत अुसे सत्त्वार्थ-प्राणियोंके हितके लिअे छोडना होगा यदि हमने अैसा नहीं किया तो दुनियामें जो होना है वह तो होगा ही। अेक दिन अैसा आअेगा जब न तो हमारे प्रियजन बचेंगे, न हमारे अप्रियजन ही, न मैं ही रहूँगा और न यह सब कुछ।

---

* आचार्य शान्तिदेव सातवीं शतीमें नालन्दामें थे। अिनकी प्रसिद्ध कृति "बोधिचर्यावतार" का तिब्बतमें गीताकी तरह पाठ होता है। —लेखक।

"सर्वत्यागश्च निर्वाणं निर्वाणार्थि च मे मनः ।
त्यक्तव्यं चेन्मया सर्वं वरं सत्त्वेषु दीयताम् ॥
अप्रिया न भविष्यन्ति प्रियो मे न भविष्यति ।
अहं च न भविष्यामि सर्वं च न भविष्यति ॥"
—(बोधिचर्यावतार)

प्राणियोंके हितके लिअे किये गये अिस त्यागको आचार्य शान्तिदेव स्वार्थका परित्याग नहीं कहते, प्रत्युत स्वार्थका साधन कहते हैं, क्यों कि अुनके विचारसे जो स्वार्थ है वही परमार्थ है और जो परमार्थ है वही स्वार्थ है। स्वार्थ और परमार्थके बीचमें रेखा खींचकर परमार्थको व्यवहारसे सर्वथा मनुष्यके प्रवहमान जीवनसे अलग कर देना तार्किकोंकी करतूत है, जिसका साधनाके मार्गसे कोअी सम्बन्ध नहीं। परन्तु यदि परमार्थ जैसी कोअी वस्तु है—परमार्थ जैसा कोअी पुरुषार्थ है और यदि परमार्थ सभी पुरुषार्थोंमें श्रेष्ठ है तो जीवनके अन्य मूल्योंको जीवनसे अन्य पुरुषार्थोंको, अुसका अंग होकर चलना होगा। मनुष्यका अिससे बढ़कर स्वार्थ या परमार्थ क्या हो सकता है कि वह स्वयं सुख और शान्तिका अनुभव करे तथा दूसरोंको सुख और शान्तिका अनुभव करने दे। पर मनुष्य अैसा नहीं करता।

सत्त्वार्थ अिस त्यागको ही तथागतकी आराधना कहते हैं। आज तथागतकी आराधना स्तूप और प्रतिमाकी आराधनामें बदल गयी है। यद्यपि पुराने आचार्य अिस बातको ठीक-ठीक समझते थे कि बुद्ध पूजा अेवं सत्कार ग्रहण नहीं करते। कोअी अुन्हें पूजे या कोअी न पूजे, वे अेक रस ही रहते हैं। पूजा पूज्यके लिअे नहीं वह तो पूजकके लिअे है। पूजकमें पूजाके द्वारा जो क्षणभर चित्तकी प्रसन्नता अुत्पन्न होती है, वही पूजाका परम अेवं चरम फल है। बुद्धकी जीवनवेलामें जो पूजा करता या तथा अुनके परिनिर्वाणके बाद जो अुनकी पूजा करता है, अुन दोनोंमें चित्तकी निर्मलता अेक ही प्रकारकी होती है। अतः, दोनोंमें अेक ही प्रकारका सुकृत है। पर प्रश्न यह है कि पूजाके वास्तविक प्रतीक कौन हैं? स्तूप और प्रतिमाअें या सत्त्व (प्राणि-समूह)? स्तूप और प्रतिमाओंको देखकर अैतिहासिक महापुरुषका स्मरण होता है, अतः अुनके प्रत्याख्यान करनेकी बात तो सोची ही नहीं जा सकती। पर वास्तविक पूजा अिननेसे नहीं होती। वास्तविक पूजाके आश्रय वस्तुतः सत्त्वगण ही हैं। अिसलिअे आचार्य शान्तिदेवका कथन है कि अुन कारुणिक तथागतोंने सारी दुनियाको आत्मसात् कर रखा है, प्राणियोंके रूपमें तथागत ही तो हमारे प्रभु हैं, फिर अुनके प्रति आदर न हो यह कैसी बात? —

आत्मीकृतं सर्वमिदं जगत्तैः
कृपात्मभिर्नैव हि संशयोऽस्ति ।
दृश्यन्त अेते ननु सत्त्वरूपाः
त अेव नाथाः किमनादरोऽत्र ॥
—(बोधिचर्यावतार)

सत्त्वाराधनके रूपमें बुद्ध-पूजा कैसे की जाअे? आचार्य शान्तिदेवने अत्यन्त रमणीय काव्यभाषामें अिसका वर्णन किया है।

येषां सुखे यान्ति मुदं मुनीन्द्राः
येषां व्यथायां प्रविशन्ति मन्युम् ।
तत्तोषणात्सर्वं मुनीन्द्र तुष्टिः
स्तत्रापकारेऽपकृतं मुनीनाम् ॥

सुखी हो हिं जिनके मुद माहीं।
जिनकी व्यथा देखि पछिताहीं॥
तिनके सुख सब सुगत सुखारी।
तिन्हें कृत-अहित सुगत-अपकारी॥

आदीप्तकायस्य यथा समन्तात् ।
न सर्वं कामैरपि सौमनस्यं ।
सत्त्वव्यथायामपि तद्वदेव
न प्रीत्युपायोऽस्ति दयामयानाम् ॥

सुखी न मन जदपि सब कामा।
लगी आगि चर्म जब जामा॥
तिमि जन-पदा भये मुनिरामा।
होअि न मन-सन्तोष अुपाया॥

स्वयं मम स्वामिन अेवं तावद्
यदर्थमात्मन्यपि निर्पेक्षाः ।
अहं कथं स्वामिषु तेषु तेषु
करोमि मानं न तु दासभावं ॥

जिनके हित तृण सम मम स्वामी।
तजहिं देह (जनके अनुगामी)॥
तिन प्रभु प्रति हौं किमि अभिमानी।
करहुँ न दासभाव का जानी॥

तस्मान्मया यज्जन दुःखदेन
दुःखं कृतं सर्वमहाकृपाणां।
तदद्य पापं प्रतिदेशयामि
यत्क्षेदितास्तन्मुनय क्षमन्तां॥

सकल जनन कहँ जो दुख दी है।
महाकृपालु दुखी सब कीन्ह॥
आजु सो सब प्रतिदेसहुँ पापा।
छमहु मुनीन्द्र भेद जो व्यापा॥

तथागताराधनमेतदेव
स्वार्थस्य संसाधनमेतदेव।
लोकस्य दुःखापहमेतदेव
तस्मान्ममास्तु व्रतमेतदेव॥

यहै तथागत परमाराधन।
यहै मनुष्य स्वार्थ संसाधन॥

यहै सकल जन दुःख विदारन।
यहै हमार होउ व्रतधारन॥

दुनियामें जिस प्रकारकी स्वार्थसाधना ही साधकका परमार्थ है। जो साधक नहीं, अथवा जो सिद्ध हो चुका है वह भी जिसका अभिनंदन किये बिना नहीं रह सकता। जिस प्रकारकी साधनामें लगा मनुष्य परमार्थके नामपर धर्मके नामपर, ईश्वरके नामपर, *ऐसा कोई भी कार्य नहीं करता जो मानवताके विरुद्ध हो* या मनुष्यकी किसी प्रकारकी संकीर्णतामें बाँधता हो।

[शांतिनिकेतन

भू-दान यज्ञ आन्दोलन, क्रान्तिकारी आन्दोलन है। वह शोषित और दलित वर्गका उत्साह और वीरता बढ़ानेवाला है। वह शान्तिका विरोधी नहीं है, विरोधी है रक्तपात, क्रूरता और हृदयहीनताका। भावना जितनी शुद्ध और उदात्त होगी, शान्तिके सैनिककी शक्ति भी उतनी ही अधिक अमोघ होगी।

—आचार्य दादा धर्माधिकारी

कहानी :

ज्वार भाटेके खिंचावमें

: श्री प्रबोधकुमार मजुमदार :

गाँवके अनादि चाचा खबर पाकर सहानुभूति जताने आये। पर जिस शकरपर अितने बडे दुर्भाग्यका वार हुआ था, अुसकी बातचीतमें किसी प्रकारकी निराशा न पाकर, वे आश्चर्यसे अवाक् रह गये।

'जी हाँ, चाचा, मकान मैंने छोड दिया। सब तरहसे सोचकर देखा, लेकिन लगा कि अिससे अच्छी बात और कुछ हो नहीं सकती।' शकरने यह बात अैसे लहजेमें कही, मानो कारोबारमें कोअी बहुत बडी रकम अुसके हाथ लगी हो।

'तुम कह क्या रहे हो, शकर? पैतृक मकान, बाप-दादोंकी निशानी, अुसे बेच डालनेमें ही तुमने भलाअी देखी?'

क्षण भरके लिअे शकरके चेहरेपर विषादकी छाया आ पडी।

'हाँ. .सो.. तो . जी हाँ, पैतृक सम्पत्तिको बेच डालना तो...' पर दूसरे ही क्षण अेकाअेक अुत्साहित होकर कहा—'लेकिन ज्यादा दिनोंकी बात थोडे ही है। साहुजीने मुझसे वादा किया है कि ..'

'कौन? वह भुवन साहु न? जब तुमने अुस हत्यारे सूमसे रुपये अुधार लेने शुरू किये थे, तभी मैं जान गया था कि अब सब सत्यानाश होकर ही रहेगा।.. तो भुवन साहुने क्या कहा?'

'कहा कि मेरा मकान ज्योंका त्यों बना रहेगा। वह अुसमें कोअी परिवर्तन नहीं करेगा। फिर जिस दिन मैं अुनके रुपये सूद-सहित लौटा दूँगा, अुसी दिन वह मेरा मकान लौटा देंगे।'

'अच्छा। बडे दयावान हैं। तुम किस तरह अुनके कर्जको चुका पाओगे, अिस सम्बन्धमें भी कुछ सोचा है?'

'जी हाँ। क्यों नहीं? यदि ओीश्वरने कृपा की, और जिस नये काममें मैंने हाथ लगाया है, वह सफल रहा, तो फिर अिस कर्जको तो चुटकी बजाते चुका दूँगा।'

अनादि चाचा घरसे यही सोचकर चले थे, कि वह तसल्ली देते हुअे येही सब बातें कहेंगे। अुन्होंने सोचा था कि शकरको परेशान तथा अुसके चेहरेको अुतरा हुआ पाअेंगे, तो आशा दिलाअेंगे, जिससे कि विपत्तिका बोझ हल्का हो जाअे। पर यहाँ तो वे ही सब बातें शकरके मुँहसे निकलीं। अिसलिअे मजबूरन अुन्हींको जब अुल्टा राग अलापना पडा—'अरे, भैया, रुपये कमाना क्या अितना आसान है?...अच्छा, जाने दो ये सब बातें। शायद भुवन साहुने ही तुमको ये सब बातें समझायी हैं!'

'हाँ, अुन्होंने भी कहा, और मैंने भी सोचकर देखा। बात यह है कि हर महीना सूद बढता चला जा रहा था। कर्ज चुकता हो जाअे, तो कम-से-कम सूदसे तो रिहाअी मिले। अिसके अलावा अुनसे नकद भी ३५० रु० लिये हैं।'

'कर्ज कुछ दिन और रहता, तो क्या बिगड जाता? अिस बीचमें कोशिश कर-कराकर ..'

'पर साहुजी रुकनेके लिअे तैयार नहीं हुअे। अुन्होंने कहा, कि अगर मैं कर्ज न चुकाअूँगा, तो मजबूरन नालिश करेंगे।'

'और, बस, अितनेहीमें तुम्हारा दम निकल गया। जानते हो, डिग्री, अपील, नीलाम, दखल करने-कराने दो साल जाते। और जिस बीचमें जिलेकी अदालतसे लेकर हाओीकोर्ट तक अुसको सात 'समुन्दर' का पानी पिला दिया जाता।'

'फिर भी, चाचाजी, अन्तको मकान तो हाथसे निकल ही जाता? फिजूलका खर्च बढ़ानेमें क्या फायदा था?'

'तो भी अिसीलिअे, भैया, कोअी बाप दादाकी निशानी अैसे नहीं छोड़ देता। यह कोअी अैसी-वैसी जायदाद तो है नहीं, बाप दादाकी निशानी है। खैर, अब तो गया ही। जिसकी जैसी समझ।. तो, भैया, मकान तो गया, अब रहोगे कहां?'

'अुसकी कोअी चिन्ता नहीं। कहीं-न-कहीं गुजारा हो ही जाअेगा। साहूजीने अेक महीनेका समय दिया है। जिस बीचमें कहीं न कहीं ढूंढ़ ही लूँगा। हम ढाअी आदमियोंको सिर रखनेके लिअे जगहकी क्या चिन्ता? गाँवमें कोअी-न-कोअी जगह मिल ही जाअेगी।'

असल बात यह थी कि अगर कोअी अुसकी गरीबीपर अुसके साथ सहानुभूति दिखाने आता था, तो शंकरके आत्म-सम्मानको ठेस लगती। अुसके पिता धनी न होनेपर अच्छे खासे तगड़े आसामी थे। शंकर बचपनसे ही आरामसे रहनेका आदी था। गरीबीके कीचड़का तिलक लगाना अुसके लिअे न केवल कष्टदायक था, बल्कि लज्जाकी बात भी थी।

नदी-प्रवाहके वेगसे जीर्ण, शिथिल तट-भूमि जैसे रसातलमें जानेके पहले कुछ समय तक हरियाली धारण किये रहती है, अुसी प्रकार शंकरने प्रफुल्लताकी आड़में अपने दुर्भाग्यको छिपा रखना चाहा।

अिसके अतिरिक्त शंकरमें कल्पनाके दिवा स्वप्नमें डूबे रहनेकी अद्भुत शक्ति थी। जो भविष्यकी मादक, मधुर कल्पनामें विभोर रह सकता है अुसे विषादमय वर्तमान कैसे स्पर्श करेगा?

पिताके जीवित रहते कभी अुसे खाने-पहननेका अभाव नहीं हुआ। अैसा कभी हो सकता है, अिसकी वह भी कल्पना नहीं कर सकता था। अिसलिअे वह जब अेक बार मैट्रिकमें फेल हो गया तो अुसने तीन मीलकी दूरीपर स्थित स्कूलमें भरती होनेका कष्ट करना व्यर्थ समझा। और मजेमें ताश खेलकर और बांसुरी बजाकर दिन काटने लगा। यथा समय पिताने अुसकी शादी भी कर दी, पर पोतेका मुँह देखनेके पहले ही वे परलोक सिधार गये। मरनेके पहले ही जमीन तथा लेन देनका सारा हिसाब पुत्रको समझा गये।

लेन-देन चलानेकी मनोवृत्ति शंकरमें नहीं थी। अिस कारण तथा नये-नये कानूनोंके पेंचमें पड़कर शीघ्र ही अुसका यह काम खतम हो गया। बाकी रही जमीन। अिस बीचमें चीजोंका भाव बढ़ रहा था। गृहस्थी किसी प्रकार न चलती देखकर, शंकरने कहा कि अब वह व्यापार करेगा।

स्त्री सरसी बहुत खुश थी कि व्यापार होगा। अुसने सुन रखा था, 'वाणिज्ये वसति लक्ष्मी।' फलां-फलां व्यापारकी बदौलत मामूली आदमीसे बढ़कर राजाओंकी तरह अैश्वर्यशाली हो गये, अैसे दृष्टान्तोंका भी अभाव न था।

अुत्साहकी अधिकताके कारण अुस रातको किसीको नींद नहीं आयी। व्यापारसे रुपये मिलनेपर क्या-क्या होगा शंकर अिसका अेक बहुत लम्बा-चौड़ा चित्र खींच गया और सरसी मुग्ध होकर सब सुनती रही। शंकरमें वर्णनकी अच्छी क्षमता थी। सुनते सुनते सरसीकी कल्पना भी अुत्तेजित हो गयी। अुसने भी शंकरके चित्रपर अपनी तूलिका चलायी।

अिसी विषयपर दोनोंमें अेक छोटा मोटा परन्तु मीठा झगड़ा भी हो गया। सरसी बोली कि मकानके भीतर आंगनके अेक किनारे अेक अमरूदका पेड़ रहेगा। अुसका बच्चा बड़ा होनेपर अमरूद तोड़कर खाअेगा। (बच्चेकी अुम्र अिस समय सात महीनेकी है।) शंकरको अमरूदोंसे नफरत है। वह कहता था कि अनारका पेड़ रहेगा। अिसपर सिर हिलाते हुअे सरसीने चटपट कहा— 'अरे बाबा, नहीं नहीं। अनारकी डाल बहुत कमजोर होती है। कहीं हमारा मुन्नू गिर पड़े, और अुसके हाथ पैर टूट जाअें तो?' कहकर मुन्नूकी काल्पनिक विपत्तिकी आशंकाको पोंछ डालनेके लिअे अुसने पास लेटे हुअे मुन्नूका मुँह चूम लिया।

जो हो, कुछ देर तर्क वितर्कके बाद यह निश्चित हुआ कि मकानके अन्दर अमरूदका पेड़ ही रहेगा, और

मकानके बाहर अनारका, पर अुसके आसपास सावधानीसे अैसा घेरा तैयार कर दिया जाअेगा कि मुन्नू अुसपर न चढ सके।

व्यापार शुरू हो गया। पहले गुडसे शुरू हुआ। पर व्यापार कल्पनाके घोडेपर तो चलता नहीं। अुसके लिअे जिस तजुर्बे तथा जानकारीकी आवश्यकता थी, वह अुसमें न होनेके कारण वह तरह-तरहसे ठगा गया। कारोबार तो गया ही, मामला अितनेसे ही खतम नहीं हुआ। पल्लेकी ढाअी बीघा जमीन भी दे देनी पडी। अिस प्रकार कडुवेपनसे गुडके कारोबारका अन्त हुआ।

शकरने सरसीको समझाया कि कारोबारका यही नियम है। कभी मुनाफा होता है, कभी घाटा। जो कुछ घाटेमें गया है, अगली बार अुसके बीस गुना मिल जाअेगा। बल्कि शुरूमें घाटा होना ही अच्छा होता है। तजुर्बा हो जाता है। अतअेव कमर कसकर फिरसे व्यापारमें लग जाना चाहिअे।

अबकी बार अुसने तम्बाकूका कारोबार शुरू किया। चिलममें भरकर हुक्केमें पी जानेवाली तम्बाकूका नहीं, तम्बाकूके पत्तोंका। आय-व्ययका लेखा दिखाकर शकरने यह बता दिया कि अिसमें कितना जबर्दस्त मुनाफा रहेगा। अिसपर फिर दोनोंके हृदयोंमें आशा हिलोरें लेने लगी। कारोबार शुरू हुआ। पर बाजारकी जादूगरीको शकर बेचारा क्या जाने? नतीजा यह हुआ, कि तम्बाकूका कारोबार भी गुडके व्यापारकी तरह चौपट हो गया।

सरसीको अबतक अपने पतिकी योग्यतामें सन्देह करनेका कोअी कारण नहीं मिला था। पहले-पहल जब अुसने शकरको पति रूपमें पाया था, तो वह अुस ग्रामीण बालाको अेक अभिनव आनंद जान पडा था। अिसके अतिरिक्त गाँवके लोगोंपर जब कोअी विपत्ति आ पड़ती थी, तो शकर जी खोलकर अुनकी सहायताके लिअे दौड पडता था। अिससे सब लोग अुसकी तारीफ ही करते थे। बासुरी बजानेमें अुसके मुकाबलेमें कोअी नहीं था। फिर जब गाँवमें कोअी 'ठेटर' (थियेटर यानी नाटक) या नौटकी होती, तो शकरकी शिरकत*के बिना सफल नहीं होती। अुस जमानेमें भोली भाली सरसी क्या जानती थी कि अेक दिन शकरको भी कठोर जीवन-संग्रामका सामना करना पडेगा, और अुसके ये गुण काम न देंगे।

अब तम्बाकूका कारोबार भी गुडकी ही गतिको प्राप्त हुआ, तो हितैषियोंने सलाह दी कि अब काफी प्रयोग हो चुके, अब शकर कोअी नौकरी कर ले। पर गाँवमें जो मामूली नौकरी मिल सकती थी, अुसे शकर नहीं करना चाहता था। रहा परदेश जाकर नौकरी-चाकरी तलाश करना, सो भी शकरकी दृष्टिमें अनुचित था, क्योंकि घर-द्वार छोडकर वह कहीं कैसे जाता। अिसके अतिरिक्त नौकरीके सीमित वेतनसे धन-दौलत, आगन-महल, कुअें-पोखरेका स्वप्न कैसे पूर्ण होता?

शकरने हिम्मत बाधकर फिर व्यापार शुरू किया परन्तु परिस्थिति यह हो गयी थी, कि पैतृक मकान बेचे बिना काम नहीं चल सकता था।

× × ×

साहुजीने कृपा करके अेक महीनेका जो समय दिया था, अुसके खतम होनेके पहले ही अुसने अेक आश्रय खोज लिया। निकुंज अुसका दूरका फूफाजात-भाअी है। वह अुम्रमें अुससे बडा है। गाँवके हाटमें अुसकी अेक दूकान है। अिस दूकानमें चावल-दाल मसाले, टीम-टाम, छोटी-मोटी अन्य चीजें और मिट्टीके बर्तन मिलते हैं। दूकानके पीछेकी ओर बाँससे घिरा हुआ आगन है। घरमें तीन कमरे। पत्नी कामिनी तथा बच्चोंकी गृहस्थी। यही निकुंज कुछ दिनोंके लिअे शकरको आश्रय देनेके लिअे तैयार हो गया।

कामिनीने पहले पहल यह कहकर आपत्ति की थी, कि यदि तीनमेंसे अेक कमरा छोड दिया गया, तो सामान रखनेमें असुविधा होगी। पर बादमें राजी हो गयी। अिस प्रकार रहनेकी चिन्तासे छुट्टी पाकर, शकरने अपने पास बचे हुअे तीन सौ साठ रुपये लेकर फिर कारोबार शुरू किया।

अब अुसकी कल्पनाकी दौड़ बहुत घट गयी थी। घरको महाजनसे छुडा पाना ही अिस समय अुसका

*सहयोग।

अेक मात्र ध्येय था। जब कैसे २५००) रु हाथ लगे कि मकान छुड़ा लिया जाअे, अब पति-पत्नीकी कल्पनाका केन्द्र-बिन्दु यही था। अिससे आगे सोचनेकी हिम्मत नहीं थी।

कल्पनाकी दौड़में सरसी शकरको पार कर जाती थी। महाजनके लिअे मकान छोड देनेके पहलेही वह अुसमें अमरूदका अेक नन्हा-सा पौधा लगा आयी थी। *मुन्नू और वह पौधा होड करके बढने लगे। जब तक* पेडमें फल आने शुरू होंगे तब तक तो मुन्नूभी पेडपर चढनेके काबिल हो जाअेगा। अुस समय सरसी पेडके नीचे खडी होकर कहेगी—'मुन्नू अेक अमरूद देगा?' और मुन्नू सारा पेड खोजकर, अुसमेंसे कुछ अच्छी तरह पके हुअे अमरूद मांके पसारे आंचलमें डाल देगा।

तब मां कहेगी 'काफी है, बेटा, अब अुतर आओ।'

तब मुन्नू जल्दीसे अुतरकर मांकी गोदमें छिप जाअेगा।

व्यापारमें शकरको जो कुछ मुनाफा होता, अुतनेसे गृहस्थी नहीं चलती। अिसलिअे पूंजीपर हाथ लगाना पडता। बीच-बीचमें घाटा भी होता। शकरने हिसाब लगाकर देखा तो जान पडा कि पूंजीका तो कहीं पता नहीं, अुल्टे वह कुछ कर्जदार हो गया है।

ज्यों ज्यों शकरकी आर्थिक अवस्था बिगडती गयी, त्यों-त्यों सरसीके प्रति कामिनीका दुर्व्यवहार भी बढता गया। खानेके खर्चके लिअे शकरसे कुछ लेते निकुंजको शर्म आती थी, पर शकर कुछ-न-कुछ खरीद कर हमेशा निकुंजकी गृहस्थीमें योग देता। अिस तरह निकुंजको कुछ फायदा ही था, नुकसान नहीं।

कामिनीके कअी बच्चे-कच्चे थे। अकेली वह अुनकी देख-भाल किया करती। पर जबसे सरसी आयी, वह अिस कार्यमें हाथ बँटाने लगी। कामिनी कभी बीमार पडती, तो वही खाना पकाकर सबको खिलाती।

× × ×

जब शकरकी हालत अैसी हुअी कि वह निकुंजकी गृहस्थीमें कुछ मदद देनेके योग्य नहीं रहा, तो कामिनी अक्सर बीमार रहने लगी। सरसी बेचारी क्या करती? जिनके आश्रयमें थी, सब तरहसे अुन्हें सन्तुष्ट करने लगी। अिस प्रकार जब शकरकी निजी आमदनी कुछ नहीं रही, तो सरसीका चूल्हे चौकेसे पक्का सम्बन्ध जुड गया।

दोनों जून रसोअी, चौका-बर्तन और अूपरसे पग पगपर कामिनीकी डाँट डपट, सरसीको यह सब कष्ट मंजूर था, पर अुसका लडका लापरवाही और *अनुपयुक्त आहारके कारण सूखकर काँटा होता जा रहा* था, अिससे अुसे बहुत अधिक मानसिक कष्ट था। सरसी चुपचाप सब सहती कभी प्रतिवाद नहीं करती। अक्सर कामिनीकी निरंकुश जीभ अुसपर अैसी चोट करती कि अुसका कलेजा टूक-टूक हो जाता।

जब वह किसी प्रकार कहीं भी आशाकी क्षीण रेखाभी नहीं देख पाती, तो शकर अुसे तसल्ली देता। अिस प्रकार सरसी अपने दुर्भाग्यको सहनेके लिअे फिर कमर कस लेती।

पर मुन्नूकी सहन शक्ति सीमित थी। वह कुछ दिनों तक बीमार रहा फिर मांकी गोद खाली करके चल बसा।

सरसी कअी दिन बेहोश पडी रही। पर जो खिला रहे थे, वे छोडते क्यों? कामिनीने कअी दिन तक रसोअी सभाली, फिर सरसीको सुना-सुनाकर कहने लगी कि-'मेरा शरीर अितना कमजोर है। दोनों जून चूल्हेके सामने बैठूं, तो जी चुकी।

अिसपर भी जब कोअी नतीजा नहीं हुआ, तो अुसने साफ-साफ कहा, विपदा किसपर नहीं पडती? पर अिसी कारण कोअी गृहस्थी थोडे ही छोड देता है। अजीब ढकोसले हैं।

अिसके बाद न मालूम और मुन्नूकी बारी आये अिसलिअे सरसी अुठी, और अुसी रोग तथा शोककी अवस्थामें सबेरेसे शामतक पिसने लगी।

अिसी बीचमें निकुंजने शकरसे कहा—'भअी, जानते तो हो मेरी हालत। अब अैसे कबतक काम

चलेगा? हां, अगर तुम दूकानका हिसाब लिखा करो तो मुनीमको जवाब दे दूं।

\+ + +

अगले दिनसे शंकर दूकानका हिसाब-किताब लिखने लगा। अिस प्रकार पति और पत्नी दोनों निकुंजके पूर्णतया आश्रित हो गये।

अिसी तरह चला जा रहा था। पर अेक दिन शंकरने आकर, अुत्साहसे अुत्फुल्ल होकर सरसीसे कहा, 'अब कोअी चिन्ताकी बात नहीं। बहुत बढ़िया रोजगारका पता लगा है। मालामाल हो जाअूंगा।' अुत्साहके मारे वह ठीक तरह बोल नहीं पा रहा था।

संक्षेपमें मामला यों था। अुसी गांवका निखिल कलकत्ताकी अेक कटपीसकी दूकानमें नौकरी करता था। वह आज किसी कामसे गांवमें आया था। शंकरने अुसके मुंहसे सुना कि कलकत्तेके रास्तामें पैसे बिखरे पड़े रहते हैं, अुठा भर ले। वहां जानेपर अुन्हें खानेकी कोअी कमी नहीं रहनेकी। वहां भाग्य चमक गया, तो पौ-बारह रहेगा। व्यापार भी करे तो कलकत्तामें करे। वहांपर कुछ लोग अेक सालमें ही लखपति हो चुके हैं। निखिलने जो कुछ अुसे बताया था, वही अतिरंजित वर्णन अुसने सरसीको सुनाया।

अुस दिन दोनों रातको बड़ी देरतक जागकर कल्पनाको बे-लगाम दौड़ाते रहे। गांवके लोग अेक दिन आश्चर्यचकित होकर देखेंगे कि अुसके मकानके सामने अीटें पड़ी हैं, और राज काम कर रहे हैं। देखते-देखते सुन्दर, शानदार मकान तैयार हो जाअेगा। गृह-प्रवेशके दिन सारे गांवका न्यौता होगा। सब लोग आकर घूम-घूमकर देख रहे हैं, और सोच रहे हैं कि मकान हो तो अैसा हो। जहां जो चाहिअे, वहां वही है। सारा ओर लक्ष्मीका राज्य है। गोशालामें गाय-बैल बंधे हैं। आंगनके अेक तरफ खलिहान है, और अेक कोनेमें वही अमरूदका पौधा रहेगा। और पौधेपर......यहांतक आकर सरसीकी कल्पना अवरुद्ध हो जाती। वह लम्बी सांस खींचकर, दूसरी बात सोचने लगती।

अिसके बाद अच्छा दिन देखकर, अेक दिन शंकर सरसीको लेकर कलकत्तेके लिअे रवाना हो गया। निखिल पहले ही चला गया था। यह तय था कि वही अिन लोगोंके लिअे रहनेकी जगह ठीक कर रखेगा। रास्तेके खर्च और कलकत्तेमें कुछ दिन रहनेके लिअे सरसीके कानकी बालियाको बेचकर पचीस रुपये अिकट्ठे किये गये।

गांवसे स्टेशन सात मील है। शामकी गाड़ी पकड़नेके लिअे दस बजे दिनको ही रवाना हो जाना पड़ेगा। सरसीने जल्दी-जल्दी खाना पकाकर पतिको खिलाया, और खुद भी खाया। आज अुसकी खुशीका कोअी पारावार नहीं। बच्चोंकी तरह वह खुशीसे अुछल रही है। चिरपरिचित गांवको छोड़कर, वह दूर देश जा रही है, अिसकी अुसे जरा भी चिन्ता नहीं। निकुंजके मकानवाले दो सालके विभीषिका-पूर्ण अध्यायका यह सुखद अन्त! अिसको वह गनीमत समझ रही थी। अुनकी छोटी-सी गृहस्थीकी आवश्यक चीजें अेक छोटे बक्स और बिस्तरमें लपेटकर बैलगाड़ीमें लाद दी गयी हैं।

यात्राके लिअे तैयार होकर सरसीने कामिनीके पैर छुअे। अबसे दोनों जून रसोअी करनी पड़ेगी, यह सोचकर कामिनी नाराज थी। जरा खीजकर बोली—'देवरजीके भी अजीब ख्याल हैं। कहते हैं न कि सुखसे बैर है। यहां कितने मजेमें थे। सो नहीं रुचा, तैयारी कर दी कलकत्तेकी। कोअी कलकत्ता जानेसे चतुर्भुज थोड़े ही हो जाता।'

सरसीने आजतक जिस प्रकार अुसकी सब बातोंको चुपचाप सहन किया था, वैसे ही आज भी वह कड़ुआ घूंट पी गयी। केवल बोली—'किसी प्रकार तकदीर नहीं लौटी। अब जरा देखा जाअे कि कलकत्तेमें......'

कामिनी कुछ पिघली। बोली—'खैर, जा रही हो, तो जाओ। पर यदि कभी विपत्तिमें पड़ो, तो यहीं चली आना। हम लोग तो हैं ही।'

सुनकर सरसीका हृदय कांप अुठा। मन ही मन अीश्वरसे प्रार्थना की—'भले ही धन न देना प्रभु पर यहाँ अन्न दाग होकर न लौटना पड़े।'

फिर पतिके साथ गाड़ीपर बैठ गयी। रास्ता पहलेके अपने मकानके सामनेसे पड़ता था। दोनोंने जी भरकर अुसे देखा। सरसीने कहा—'चलो, जरा मकानको भीतरसे देखा जाओ।"

पर शंकरने कहा—'रहने दो, अिस मकानमें जो किरायेदार है, न मालूम क्या समझ बैठें।

मकानके किरायेदारका अेक छह सात वर्षका लड़का सामने खड़ा अुंगली चूस रहा था। सरसीने अुसे पास बुलाकर जिरह की, 'मुन्नेका क्या हाल है? अमरूदका पौधा कितना बड़ा हुआ है? पर वह कोअी सन्तोषजनक अुत्तर न दे सका।

सरसी फिर गाड़ीपर चढ़ गयी। सोचने लगी, 'न मालूम कब किस हालतमें यहाँ लौटना हो? सम्भव है, यह मकान भी लौट आये। पर अुसके जिगरका टुकड़ा मुन्नु कभी नहीं लौटेगा। कितनी अवहेलना सहकर बेचारा मरा।'

बचपनमें सरसी अपने चाचाके साथ अेक बार कलकत्ता गयी थी। पर अुस समयकी स्मृतियाँ धुंधली हो चुकी थीं। वह रास्तेमें कोअी नअी चीज देखती, तो विस्मयसे अवाक् होकर, टकटकी बांधकर देखती, और सोचती 'हाय, यदि मुन्नू आज यह देखता तो कितना खुश होता।'

हावड़ा स्टेशनपर अुतरकर, दोनों अेक रिक्शापर सवार होकर चले। हावड़ा पुलपर सरसीने गंगाजीको प्रणाम किया। फिर पतिसे बोली—अेक दिन मुझे गंगा स्नान करनेके लिअे ले चलना।'

शंकरने कहा—जरूर। अब तो यहीं रहोगी, न मालूम कितनी बार आना होगा।'

× × ×

निखिलके निवास-स्थानपर वे पहुँचे। अुसने छह आने रोजपर अिनके लिअे वहीं अेक कमरा ठीक कर रखा था। वहीं दोनों पहुँचे। सरसीने बक्स, बिस्तरा खोलकर देखते-देखते गृहस्थी सजा दी। न मालूम कितने दिनोंसे अैसी स्वतन्त्र गृहस्थीके लिअे अुनके मन तरस रहे थे।

निखिलके साथ सलाह करके यह तय हुआ कि पहले व्यापारके चक्करमें न पड़ा जाओ। नौकरीकी तलाश होने लगी। निखिल भी अिस तलाशमें मदद देने लगा। पर अव्वल तो नौकरी मिलती नहीं थी और मिलती भी थी, तो पन्द्रह-बीसकी जिसमें मकानका किराया देकर कलकत्तेमें रोटी दाल खाना भी मुश्किल था। सरसी रोज व्यग्रतासे प्रतीक्षा करती, और रोज निराश होती। अिस प्रकार कानकी बालियोंके रुपये खतम होनेको आये। सरसीका मुंह सूख गया। अेक दिन जब काम खोजनेके लिअे शंकर जा रहा था, तो पीछेसे सरसी बोली—क्यों जी, कोअी नौकरी क्या नहीं कर लेते?'

शंकर बोला—'कोशिशमें तो हूँ पर कोअी बीस रुपयेसे अूपर बढ़ता ही नहीं। और अुस दिन हमने हिसाब लगाके देखा था कि पैंतीस रुपयेसे कममें काम नहीं चलेगा।'

'सो तो है पर मैं क्यों न कहीं रसोअी बनानेका काम कर लूं?'

शंकर स्तब्ध रह गया। फिर वेदना भरी आवाजमें बोला—सरसी, तुमने आज कैसी बात कह दी? क्या मैं अैसा अभागा हूँ कि अपनी स्त्रीसे काम करवाअूं?'

अिसमें नाराज होनेकी क्या बात है? अकेले तुम्हारी आमदनीसे काम नहीं चलेगा अिसीसे मैंने यह बात कही।'

'यह बात फिर कभी जबानपर न लाना। गरीब हूँ तो क्या? अिज्जतदार तो हूँ।'

सरसी यह समझती थी, पर वह परिस्थितियोंको भी जानती थी। वह मृदु स्वरमें बोली—'वहाँ भी तो मैं रसोअी बनाती थी।'

'वहाँकी बात और थी। हजार हो, वे रिश्तेदार तो थे। यहाँ अगर तुम महाराजिन हो जाओ, और गाँवके लोग जान जायें, तो बस नाक कट जाय। दो-

चार दिनमें ढगकी कोओी-न-कोओी नौकरी मिल ही जाअेगी।'

पर दो-चारकी जगह दस दिन बीत गये, कुछ न हुआ। सारी पूंजी खतम हो गयी। मकानवालेके तकाजेसे परेशान होकर सरसीको चूडियाँ भी बेच देनी पड़ीं।

अन्तमें शकरन भी हार मान ली। अेक दिन अुसने आकर सरसीसे कहा—'अब कोओी अुम्मीद नहीं। गाँवको लौटना ही पड़ेगा। केवल रेलका किराया बाकी है।'

सरसीको कओी दिनसे अिसीकी आशंका थी। वह गुमसुम बैठ गयी।

दूसरे दिन दोनों गाव लौटनेको तैयार हुअे। सरसी अेक अेक करके बिखरी चीजोंको बटोरती, और अुसकी आँखें सजल हो अुठतीं।

शकर आखिरी बार बाजार घूमने गया। तय यह था कि वह घंटे भरमें लौटेगा, पर अेक बजे लौटा। बहुत खुश था अुस समय वह। बतलाया कि निखिलके यहाँ अेक व्यक्तिसे अुसकी भेंट हुओी, जिसने अुसे रुपया पैदा करनेका गुर बता दिया। अुस व्यक्तिने कहा था—'वाह! आप नौकरी क्यों करेंगे? बस, देहातमें सेमरकी रुओी बटोरकर भेजिअे। मैं खरीद लिया करूँगा।'

× × ×

सरसीने अिसपर कोओी अुत्साह नहीं दिखलाया। दोनों स्टेशनकी ओर फिर अुसी प्रकार रिक्शेमें चले। पर यह जाना दूसरे ढंगका था। छुट्टीका दिन था। सिनेमाका मैटिनी शो होनेवाला था। लाअुडस्पीकरपर अेक गाना बज रहा था, जिसका अर्थ यह था, कि जो भाटेके मुँहमें जाने हैं वे फिरकर ताकते भी नहीं। सरसी सोचने लगी—सच तो है। फिर अुसी कामिनीके 'अन्न दासत्व'में लौटना पड़ रहा है। क्या अुसके जीवनमें अब भाटा ही रहेगा? ससुरजीकी मृत्युके बादसे आरंभ हुआ यह भाटा कब तक चलेगा। क्या कभी ज्वार आअेगा?

अुधर शंकर रास्ते भर प्रबल अुत्साहसे अपने नये व्यापारकी सम्भावनाओंके सम्बन्धमें बात करता रहा। परन्तु अुसने जो कुछ कहा, अुसका अेक भी शब्द सरसीके कानोंमें नहीं गया।

अुनका रिक्शा जिस समय हावड़ाके पुलपर जा रहा था, अुस समय अेक तीखी मोटरमें अुनका ध्यान अपने चारों ओरके वातावरणकी ओर फेरा। सरसीने सामने दृष्टि डाली। गंगाजी लहरा रही थीं। सूर्य-किरणोंसे तरंगें झिलमिला रही थीं। शकरने कहा—'ओह, खूब याद आया। तुमने गंगा किनारे नहलानेके लिअे कहा था, पर मौका नहीं मिला। अभी गाड़ीमें देर है। चलो, दो-चार डुबकी लगा लें।'

रिक्शेवालेसे ठहरनेके लिअे कहा गया, तो वह राजी नहीं हुआ। अन्तमें अुसे पूरा किराया देकर बिदा कर दिया। किसी प्रकार घाटके किनारे अेक दूकानपर सामान रखकर वे नहाने चले। अुस समय घाटपर स्नानार्थियोंकी भीड़ नहीं थी। अैसे समय कौन नहाता?

नदीमें अुस समय पूरे ज्वारके बाद भाटेका खिंचाव आ रहा था। वर्षाके अन्तकी नदी थी। घाटकी प्राय सब सीढ़ियाँ डूबी हुओी थीं। जल प्रवाह तीव्र था। घाटके दोनों सिरोंपर असंख्य नौकाअें, बजरे, डोंगियाँ लगी थीं। प्रवाहके तालपर नाव नाच रही थीं। अुनकी रस्सियोंपर खिंचाव पड़ रहा था। अेकदम किनारे, जहाँ प्रवाहकी गति बहुत मन्द थी, नावकी आड़में खड़े होकर शकरने अंगोछेसे शरीर रगड़नेकी तैयारी की। अकस्मात अुसने चौंककर देखा, सरसी अुससे भी कओी हाथ आगे थी। वहाँ पानी अुसकी कमर तक था।

शकरने परेशान होकर कहा—'सरसी अुतने गहरेमें मत जाओ। पानीमें तेजी बहुत है।'

सरसीने कुछ नहीं कहा, और ओर भी आगे बढ़ गयी।

'अरे, यह क्या, सरो? सुनती क्यों नहीं? अितनी दूर मत जाओ। तुम तैरना नहीं जानतीं। जल्दी लौटो।'

सरसीने कुछ नहीं कहा। मुँह फेरकर देखा भी नहीं। फिर रुंधी हुओी आवाजमें सिर्फ कहा—'नहीं।'

'नहीं क्या, जी ? पानीमें कितनी तेजी है नहीं देखती ? सभल नहीं पाओगी। यहाँ पानी कम है। अिधर आओ।'

अबकी बार सरसीने मुँह फेरा। अुसके चहरेपर आँसूकी धारें बह रही थीं। अपनी बडी बडी सजल आँखोंसे पतिके मुँहपर जमाकर वह मर्मभेदी रुदनके साथ बोली—'नहीं जी। . मैं अब वहाँ लौटकर नहीं आअूँगी।'

दूसरे ही क्षण जाह्नवीकी जलराशिने अुसे ग्रस लिया।

शकर कअी क्षण तक अुस तरफ विह्वल, विमूढ दृष्टिसे देखता रहा। सरसी फिर अूपर नहीं आयी। जहाँपर सरसी डूबी थी, वहाँपर कुछ देरके लिअे अेक भँवर-सा दिखायी पडा। फिर जल ज्यों-का-त्यों हो गया।

क्षण भर बाद अुससे कोअी बीस हाथकी दूरीपर, जहाँ अेक मालसे लदी नाव थी, बिखरे हुअे कुछ बाल दिखायी पडे। किसी अज्ञात जलचरकी तरह अेक बार दिखकर वे नावके नीचे अदृश्य हो गये।

मर्मभेदी चीत्कारके स्वरमें शकरने कहा—'सब सत्यानाश कर दिया तूने सरसी!' और वह अुन बालोंका निशाना बनाकर पानीमें कूद पडा। वह अितने जोरसे कूदा और साथ ही पानीका बहाव अितना तेज था कि शकर अेक क्षणमें ही अुस नावके पास पहुँच गया। अपनेको सभाल न पानेके कारण अुसका सिर जोरोसे नावसे टकरा गया और वह बेहोश हो गया।

सरसीको किसीने डूबते हुअे नहीं देखा था, पर शकरके घोर गर्जनसे सभीकी दृष्टि अुस ओर गयी। फौरन सब दौड पडे, 'गया, गया!' 'बचाओ, बचाओ!' चिल्लाते हुअे।

पल भरमें पासकी नावोंसे चार-पाँच व्यक्ति कूद पडे, और शकरको पकड लिया।

शकरको होश आया, तो वह पागलोंकी तरह अिन लोगोसे कहने लगा—छोडो, छोडो। मुझे छोड दो। जहाँ वह गयी है वहीं मुझे भी जाने दो।'

अुसने अुन लोगोंसे हाथ छुडानेके लिअे खींचा-तानी भी करनी चाही थी। पर अकेला चार पाँच आदमियोंसे कैसे पार पाता। वे अुसे बचाकर ही माने।

देखते-देखते शकरके चारों तरफ अच्छी खासी भीड जमा हो गयी। सब जानना चाहते थे कि मामला क्या है।

घाटके किनारे बैठे-बैठे अेक बूढा भिखमगा लाअी चबा रहा था। अुसने घटनाका अन्तिम दृश्य देखा था। अुसने सबको बतलाया कि 'अिन बाबूकी स्त्री डूब गयी है, अिसलिअे ये भी डूबने जा रहे थे।'

किसीने सहानुभूति दिखायी, किसीने कर्म-फलकी महिमाका बखान किया, किसीने अिस बातपर अपनी राय दी, कि लाश कितने घंटोंमें अूपर अुठेगी और कितने मीलके अन्दर रहेगी।

धीरे धीरे भीड घट गयी। घाट करीब-करीब जन शून्य हो गया। भीगे कपडोंमें गगाकी ओर दृष्टि स्थिर किये शकर बैठा रहा।

नदीके पानीमें गला हुआ सोना डालकर, अुस पारकी हवेलियोंकी आडमें सूर्य अस्त हो गये।

बाह्य ज्ञान शून्य-सा शकर फिर भी बैठा ही रहा। जीवनके सैकडों दुर्भाग्योंमें भी अितने दिनोंतक कल्पनाने अुसे आशाकी वाणी सुनायी थी, पर आज तो कहीं आशाकी अेक रेखा भी नहीं दीखपडती थी।

अुसके समस्त आकाश-कुसुमोंकी सत्यतामें अितने दिन जो बिना विचारे विश्वास करती थी, अुस सुख-दुखकी जीवन सहचरीके अिस परम विश्वासघातसे अुसकी कल्पनाका सोना सूख चुका था।

(बगलासे अनुवादिका—श्रीमती माया गुप्त)

[दिल्ली

मौपासाँ

: श्री परदेशी, साहित्यरत्न :

फ्रान्सीसी भाषाका यह स्वनामधन्य कलाकार मौपासाँ विश्वकथाकारोंकी अग्रतम पंक्तिमें है। कथासाहित्यके अक्षय कोषका वह कुबेर था। मौपासांकी कहानियोंने पाठकोंको जितना प्रभावित किया अुतना १९ वीं सदीके अन्य किसी कथाकारकी रचनाओंने नहीं।

यदि शरद्बाबू फ्रान्समें जन्मे होते तो शरद् और मौपासाँ मिलकर फ्रेंच नारी जीवनको पूर्णता प्रदान करते। शरद्बाबू भारतीय नारीकी निष्काम प्रणति और सर्वस्व समर्पणके गायक थे। नारी-जीवनकी व्याकुल विदग्धता, पयदा और प्रमदाकी मर्यादाओं और सामाजिक कठोरताको शरद्बाबूने खूब समझा है। मौपासाँ शरद्के ठीक विपरीत हैं। यदि शरद्ने समाज-पीडित भारतीय नारीके मौन आँसू देखे हैं तो मौपासाँने पतनोन्मुख फ्रेंच समाजके घेरेमें पडी विकृत रूप और विषयगामिनी फ्रेंच नारीका दर्शन किया है। जो लोग यह कहते हैं कि मौपासाँ साधारण नारीके प्रति अत्यन्त दुर्भावनापूर्ण (प्रेज्युडिस्ड) और कुटिल-कठोर था, वे अपराधी हैं। निजी जीवनमें मौपासाँ नारीके चरणोंका सेवक रहा है। साहित्यमें अुसने जिस नारीका चित्रण किया, वह दुर्दशाग्रस्त समाजकी देन है। यदि अुसने 'हिपोलितका दावा' कहानीकी नायिका मदाम स्यूनी और 'कमरा न ११'की मदाम अमन्दाँ जैसी भयकर चरित्रोंकी रचना की है तो दूसरी ओर अपनी श्रेष्ठ रचना 'बाल ऑफ फेट'में वेश्या नारीका चरित्र जिस प्रकार अुठा दिया कि पाठक अुस तिरस्कृता नारीकी अुदारता और सरलता देखकर रो पडता है। अिसलिये मौपासाँको नारी जीवनकी निष्ठुरिका कथाकार कहना, कहनेवालोंपर कलंक है। अुसने जिस विकृत और शोषित जीवनकी ओर ध्यान आकर्षित किया, अुसके मूलभूत कारणों और अुन सभी व्यक्तियों, वर्गों और शोषकोंपर भयकर प्रहार भी किये हैं, जो अिन कारणोंको बढानेमें स्वयं अेक कारण रहे हैं। "लित् लूसी रोक" कहानी हमारे अिस कथनका प्रत्यक्ष प्रमाण है। जमींदार रेनार्द और पोस्टमेन मेदेरिक रांपेल, दो भिन्न वर्गोंके प्रतिनिधि हैं। परन्तु रेनार्दके वर्गपर अपनी अनन्त कहानियोंमें मौपासाँने परशुरामकी तरह तलकलकर कुठाराघात किये हैं!

गी द मौपासाँका जन्म साधारण फ्रेंच परिवारमें हुआ था। वह पेरिसके महकमेमें अेक क्लर्क था। अेक ओर अुसने पेरिसकी दफ्तरमें प्रकृत परिवेशका सामीप्य पाया, दूसरी ओर कथाकारके रूपमें अुसे विकृत नारीका नैकट्य मिला। बहरहाल, नारी अुसके अन्तर और बहिर्जगतकी प्रेरणा रही।

मौपासाँने अपने गुरु गुस्तेव फ्लावर्तसे कथाकला सीखी। फ्लावर्त नारी-जीवन-जलनिधिकी गहनतम गहराअियोंमें तैरनेवाला तैराक था। मदाम बावेरीका अमर प्रणेता फ्लावर्त तत्कालीन फ्रेंच साहित्यका विधाता था। कहना चाहिये कि यद्यपि मौपासाँ अपने गुरुसे पूर्णतया प्रभावित था तथापि वह फ्लावर्तसे कहीं आगे निकल गया।

मौपासांकी कथाका विषय प्रकट रूपमें फ्रेंच नारी और अप्रकट रूपमें फ्रेंच समाज है। अिस नारीका नग्नकर लेखकने अिसके प्रति पर्याप्त मानवता और अुदारताका परिचय दिया है। अुसकी पार्श्वभूमिमें लेखकने समाजके जीर्णशीर्ण विषवृक्षोंपर तीक्ष्णतम प्रहार किये हैं। कुल मिलाकर मौपासाँ 'फ्रेंच' था। फ्रान्सीसी जीवनसे बाहर अुसकी दृष्टि नहीं गयी। यों, अेक कहानी 'शानी' में अुसने मध्यकालीन ठकुरके नृशंसहत्याका अद्भुत दर्शन किया है। और ६ से ९ वर्षकी वधुओंके दास-जीवनका रोमांचक दर्शन कराया है। केवल अिस कथामें लेखककी नजर फ्रान्ससे बाहर गयी। यों मानवीय भावनाओंकी अुसमें कमी नहीं और वे

भावनाअें समाजके सभी देशोंमें, सभी कालोंमें वर्तमान रहती हैं। यदि मोपासाँ अपनी कथावस्तुका दायरा बहुत बड़ा देता तो संभव था कि अुसकी फ्रेंच नारी जीवनके चित्रणकी विशेषता समाप्त हो जाती।

मोपासाँकी कहानियोंमें (तत्कालीन कथा विकासकी दृष्टिसे) कहीं कोअी खामी नहीं। अेक-अेक शब्द नगीनेकी तरह जड़ा है हर अेक शब्दमें काट चमक और नुकीलापन है। अुसके कथानक अत्यंत रोमांचक, कुतूहलवर्द्धक और स्वाभाविक हैं। कथा-वस्तुके आधार पेरिसकी साधारण और अमीर औरतें हैं— वेश्याअें, अभिनेत्रियाँ, गुलाबी गालोंवाली ग्राम्य कन्याअें, सामन्तों और ठाकुरोंकी ठकुरानियाँ आदि। अिन सबके साथ शोषण, धोखा, झूठ, संघर्ष, अनुदारता, अुदारता, दुखकी कटुता, सुखका संतोष, पराजितोंकी मन स्थिति आदि अनेक भाव-भावनाअें गुम्फित हैं। मोपासाँने अपनी कथाओंका सृजन अत्यन्त कौशल और चपल धैर्यके साथ किया है।

अुस समयके साहित्यिक अपनी रचनाओंकी पॉलिश किया करते थे। अुर्दूमें शेर लिखनेवाले शायरोंकी तरह तत्कालीन कथाकार भी कअी बार अपनी कहानियोंको काटने-छाँटते तराशते थे। जिससे यह स्पष्ट होता है कि वस्तुस्थितिसे अधिक अुनका ध्यान बाह्य आवरण और विचित्रताकी ओर था। मनोरंजन, रोमांस और रोमांस अुनके प्रथम लक्ष्य थे। मोपासाँ अिनमें भी आगे था। अुसकी छोटीसे छोटी कहानी भी पूर्ण मनोयोगपूर्वक अेक कलामय ढंगसे लिखी गयी है। वह कहानीके बाह्य स्वरूपका शिल्पी और आन्तरिक भावोंका सृष्टा था। फिर भी, यह तो कभी-कभी महसूस होता ही है कि पूरी कहानीमें केवल शब्दाडम्बर और अेक ट्रिक है, अेक चमत्कार मात्र है जैसा कि हमारे रीतिकालीन शृंगारी कवियोंके वर्णनात्मक छंदोंमें मिलता है। अर्दली', 'चाँदनी रात', 'कचहरीका कमरा', 'कब्रिस्तानकी रानी' आदि कहानियाँ अिसी कोटिकी हैं।

अैसा लगता है कि लिखते समय, मोपासाँ अपनी कथाओंमें तन्मय हो जाता था। अभिव्यक्तिका क्षेत्र अत्यन्त दुर्गम है। वहाँ तलवारकी धारपर चलना होता है। लेखक अपने पात्रोंके तन, मन, जीवनको अभिव्यक्त करते समय बहुत ज्यादा लिख जाता है विशेषकर अुन विषयोंसे, जो अुसकी विशेषताके अन्तर्गत आते हैं, जो अुसे अधिक प्रिय हैं, अैसेमें तटस्थ रह जाना, बड़े संयमका काम है। अैसे समय लेखक अपनी समस्त अनुभूतियोंको मूर्त रूप देनेका लोभ संवरण नहीं कर पाता। किन्तु भावोन्मेष, अभिव्यक्ति-आविष्कार, और अनुभूति अुद्रेककी सीमाको पहचाननेवाले कलाकार तटस्थ रहकर अुतनाही रस, रूप आकार और माधुर्य देते हैं, जितना पात्रों और पाठकोंके लिअे आवश्यक है। मोपासाँ अपने पात्रोंमें अभिव्यक्त है।

भावानुभूति और अभिव्यक्तिमें अति अतिरेकसे रचनाके सौंदर्यकी मर्यादा भंग होती है। काव्य या कथाके समस्त बाह्य अुपकरणों और आकांक्षित मूर्ति आन्तरिक मनोप्रदेशमें अेक समस्वरता होनी चाहिअे। मोपासाँ अिसीका अुस्ताद है। वह अपने अिष्टको शनैः शनैः परन्तु दृढ़तापूर्वक अूँचाओंकी ओर ले जाता है, भाव कलशको कहीं छलकने नहीं देता। अनिच्छित, अनिष्टको, विरोधी पक्षको अिस कठोर धैर्यके साथ धीरे-धीरे काटता है कि ब्रह्मा भी चाहे तो अुसे पुनः जीवन नहीं दे सकते। अिसी कारण, मोपासाँमें जितनी कसक, वेदना, तीव्रता, सचाअी और स्पष्ट-वादिता है।

मोपासाँके पात्रोंमें दो अद्भुत विशेषताअें हैं। वे 'कु' और 'सु' की दोनों धुरियोंपर स्थित हैं। यदि पात्र बुराअीमें जीता है तो समस्त बुराओंके स्मशानपर भूतनाथ शिवकी तरह शासन करता है। अैसे पात्रोंका साथ ही बुराअी है। यदि पात्र सच्चरित्र है तो अितना कि कभी हारता नहीं। जीवनका कोअी लोभ, मोह सत्यसे च्युत नहीं कर सकता। अिस कथनपर हमें प्रेमचंदके 'होरी' की याद आती है। साधारण और निम्न वर्गके पात्रोंके लिअे मोपासाँ और प्रेमचंदने समान रूपसे लड़ाअियाँ लड़ी हैं। पोस्टमेन मेदेरिक रॉवेल साअिमनका पापा, रस्सीका टुकड़ा और कण्ठहार अिसके प्रमाण हैं। बोर्झुआ नैतिकतासे मोपासाँ खूब खुलकर खेला है। 'बॉल ऑफ

फेट' पढ लीजिअे— काअुन्त ह्यूबर्त्त, कार्नूदे, केरे लेम्दां और अुनकी बीवियाँ, आभिजात्यमें रहनेवाली पाशविकताकी प्रतिमाअें हैं। अिस वर्गके सदस्योंकी— अनैतिक असामाजिकताके विरुद्ध मोपासाँने अपने समयकी अगतिशील व्यवस्था और समाजके बीच रहकर भी बडी वीरतापूर्वक जंग लडा है। 'वॉल ऑफ फेट'—'चर्बीका गोला' समालोचकोंकी दृष्टिमें पिछली अेक शताब्दीकी श्रेष्ठतम कहानियोंमें है। पचपन वर्ष पूर्व, श्री सेटबरी— जिसे मोपासाँकी कहानियाँ खास तौरपर पसन्द और नापसन्द नहीं थी,—लिखता है— "वॉल ऑफ फेट'— ट्रेजिक कॉमेडीकी अत्यन्त परिष्कृत अेव रोमांचकारी रचना है। हमारे युगमें अैसी कहानी कभी नहीं लिखी गयी।"

सचमुच, अिस कहानीमें मोपासाँने कल्पनाकी अुत्तम श्रेणियों और यथार्थकी गहन गहराअियोंको बाँध लिया है। वॉलिम ब्रॉक्वेका कथन है— 'अिस कथा-द्वारा मोपासाँ अितना अूँचा अुठ गया है कि अुसने कहानीकी श्रेष्ठताका परीक्षण करनेवाले अूँचेसे अूँचे मापदण्डको भी छोटा प्रमाणित कर दिया है।' वास्तवमें, 'वॉल आफ फेट' अैसी ही कला-कृति है। अुसमें जो गहरा, पैना और भारी व्यंग्य है, वह अुस वर्गको शताब्दियों तक काटता रहेगा, जिसपर वह किया गया है।

शोषक-वर्गका यह प्रमुख लक्षण रहा है कि अपनी स्वार्थपूर्तिके लिअे वह किसीकी कुछ भी बलि देनेमें नहीं हिचकता। नीति और चरित्र, शास्त्र और शास्ताकी दुहाअियाँ देनेवाला अिसका व्यक्ति अपने परित्राणके लिअे, वेश्याके चरणोंमें लोट-लोटकर भीख माँग सकता है और अपनी मुक्तिपर, लोह-कलशीसे निकले नागकी तरह फुत्कारकर फन मारता है। अिससे अधिक कृतघ्न और कमीना दूसरा नहीं। 'वॉल आफ फेट'के पात्रों द्वारा मोपासाँने अिस सत्यको मूर्तिमत रूपमें रखा है। मोपासाँने 'अिन पात्रोंकी नैतिकता' और अुनके असभ्य संस्कारोंने १९ वीं सदीके अन्तमें कअी अंग्रेज और अमरीकी आलोचकोंको दुर्दान्त बनाया।

यदि अुसकी कहानियोंमें 'फ्रान्सकी पतन-परस्त अगतियों और सुन्दरियोंका गधभरा चित्र है (कमरा नं. ११, खलिहानकी लडकी, मेद्रमेजेल फिफि, वनमें, दानव, ब्राजियाकी अप्सरा, ब्याहकी रात और अन्याय), विविध वर्गोंके विचित्र पीडितों-शोषकोंके स्वरूप हैं (बेल, कलाकार, पगली, शिकार आदि) और शासक वर्गीय सामन्तों, महन्तों, सारे समाजकी अच्छाअियों, बुराअियोंके सौदागरों (मिस हेरियेत, मश्यू पेटेन्ट, मार्क्विस द फयुमरोल, साअिमनके पापा, अंग्रेज, दर्या आदि कहानियाँ) और व्राअिम तथा पेगनसे भरे १९ वीं सदीके सजीव चित्र हैं तो अुनके लिअे मोपासाँकी अपनी नैतिकता, अनैतिकता अुत्तरदायी नहीं। साधारण-सी बात है कि अपने जीवनकी प्रबल परिस्थितियोंने अुसे अपने सामयिक समाज और अवस्थाका पर्याप्त अनुभव कराया। जो अुसे सहज सुलभ, अुपलब्ध हुआ, अुसका अध्ययन और प्रभाव अधिक सूक्ष्म रूपसे अुसके मन, मस्तिष्क और कलापर अंकित हुआ। अुस कालके मानव समुदाय और समाज-व्यवस्थाके प्रति अुसका अेक विशेष दृष्टिकोण बना। यदि मोपासाँमें नैतिकता ही देखना है तो विलासिनी सामन्त कन्याओंमें क्यों न अुसकी खोज की जाअे, बाजारू सेठानियोंके जीवनमें वह सहज-सुलभ न हो सकेगी, अुसे 'कण्ठहार' कहानीकी नायिका मदाम लाअिजेलके चरित्रमें देखना अधिक सुगम होगा। क्योंकि कठोर परिश्रमके अुपरांत भी वह अपनी अूँचाअीसे नहीं डिगती। नैतिकताका अर्थ क्या है? अुसके मूल्य, मान और लक्षण क्या विविध वादोंने अपने विश्वासोंके अनुरूप नहीं बदल लिये?

साहित्यिक जीवनके आरम्भसे ही मोपासाँको पर्याप्त पूँजी और प्रसिद्धि प्राप्त हुअी। अिंग्लैंड अमेरिका और योरपके कअी देशोंने अुसकी कहानियोंका अनुवादकर अपने भाषा कोषको समृद्ध बनाया। भारतीय भाषाओंमें भी अुसने अुचित सम्मान पाया। हिन्दीमें अुसकी कहानियोंको ज्योंका त्यों लानेके प्रयत्नका सौभाग्य अिन पंक्तियोंके लेखकको मिला है।

शायद मोपासाँ ही अैसा लेखक है, जिसकी कहानियोंके कथानकोंके आधारपर संसारके अनगिनती कथाकारोंने अपनी कहानियाँ लिखीं। 'साहित्यिक चोरी' के साधारण विवादमें न पडकर, हम अिसे मोपासाँके लिअे अद्वितीय सम्मान ही कह सकते हैं।

फ्रांसका तो यह हाल था कि मौपासाँ जितना लिखता तुरंत छप जाता। समाचार पत्रोंमें अुसकी कहानियोंकी जबरदस्त माग रहती। आजकी महगाअीको भूलकर ७५ वर्ष पूर्वकी दशापर विचार कीजिअ, जब वस्तुके मूल्यको हिमालयकी चोटीपर चढनेका ख्याल नही आया था—सब चीजें सस्ती थी। अुस जमानेमें मोपासाँकी साहित्यिक आय २५०० रु प्रतिमास थी। पेरिसमें अुन दिनो अितनी आय किसी रअीसी शानके लिअ पर्याप्त थी। पारिश्रमिककी अिस आमदनीसे अपनी माँकी वार्षिक सहायताके अलावा मोपासाँ पूरी लग्जरी से रहता। अुसकी आदत अच्छी नही थी। अतः आवभगतमें खर्च होनेवाली रकमका अन्दाज लगाया जा सकता है। पेरिसमें रहनेवाले तत्कालीन लब्ध प्रतिष्ठित चित्र-कलाकार गागिन पिसारो लावत्र वानगोक वगैरह अुसके मित्र थे। अिन मित्रोंकी मडलीमें सुन्दरियों के लिअ विशेष आसन शासन था। अिनमें भी गागिन (विश्वका महानतम चित्रकार) तो लडकियो के बारेमें पूरा परमहस था। गांगिनने चित्रकार वान गोक्का जीवन बरबाद कर दिया यह कहकर भी अक प्रसिद्ध पुरुषके विषयमें असा कहना कहातक अुचित है हम नही जानते।

मोपासाँका असामयिक देहान्त हुआ। अुसने आत्महत्या कर ली! रेजर ब्लेडसे अपना गला काट डाला! विश्वका अन्यतम कहानीकार असा करेगा यह कसे कहा जा सकता था? कथा-लोकमें सर्वथा तटस्थ पर्यवेक्षण दृष्टि सृष्टि रखते हुअ भी क्योंकर मोपासाँ दुनियासे अिस प्रकार निराश हो गया? दुनियाकी सारी बुराअीको अुसने देखा!! देखा ही नही सुना समझा पाया और परखा था। यह सब होने हुअ भी असी कौन-सी चीज थी जिसने मोपासाँको अिस प्रकार बलिदान होनेको विवश किया?

मोपासाँकी वह? (He?) और पागलकी डायरी अंतिम कहानियाँ है। अिसके बाद वह पागल हो गया था और अुसने अपना गला काट डाला। कलाकार वानगोक्न तो अपनी प्रेमिकाको क्रिसमसके पर्वपर अपना कान काटकर भेंटकर दिया था! 'वह?' कहानी प्रथम पुरुषमें लिखी गयी बडी ही भयानक रचना है। अिसे पढकर कोअी भी पाठक अपने मस्तिष्क और मनको वशमें नहीं रख सकता। हृदयकी धडकन बढ जाती है और मौतकी परछाअियाँ सामने नाचने लगती है।

'प्रिय मित्र सभी सम्भव साधनोंके बल भी तुम यह जाननेमें असमर्थ रहोगे। तुम्हारा ख्याल है मैं पागल हो गया हूँ। हो सकता है परन्तु अुस दृष्टिकोणसे नहीं जिससे तुम निर्णय करते हो। हाँ मैं ब्याह करनेवाला हूँ। मेरे विचार और मेरे विश्वास वसे ही है अुनमें कोअी परिवर्तन नहीं आया है।

अब आगे मैं रात्रिमें अकेला रहना नहीं चाहूगा। मैं यह महसूस करना चाहता हूँ कि कोअी मेरे बिल्कुल करीब है मुझसे सटकर सोयी है। अक आत्मा जो बोल सकती है और कुछ भी कह सकती है परवाह नहीं वह चाहे जो कहे।

मेरी अिच्छा है कि मैं अपने समीप सोयी किसी सुन्दरीको जगाअूँ ताकि मैं अचानक अुससे कोअी प्रश्न

पूछ सकूं और अिन्सानकी आवाज सुन सकूं। मुझे यह भान हो कि मेरे पहलू, मेरे अितना निकट अेक जीती-जागती जिंदगी है। 'कोअी' है—जिसे मैं चाहे जब रोशनी जलाकर देख सकूं क्यों कि यह स्वीकार करनेमें मैं लज्जित हूँ कि अकेला रहनेमें मुझे डर लगता है।'

"तुम मुझे अभी भी न समझ सकोगे भले आदमी, मैं किसी खतरेसे नहीं डरता,-यदि कमरेमें कोअी आदमी आये तो यकीनन बिना हिचके और कांपे, अुसका खात्मा कर दूंगा। मैं भूतोंसे नहीं डरता, और न मुझे प्रेतात्माओंपर विश्वास ही है। मैं मरे लोगोंसे भय नहीं खाता क्योंकि मैं जानता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति मरनेपर खत्म हो जाता है।

हां, तो हां, कहना ही पडेगा, मुझे अपने आपसे भय लगता है, मैं 'भय की सनसनीसे डरता हूँ। मैं बोलता हूँ तो मुझ अैसा लगता है, मैं अपनी ही आवाजसे डर रहा हूँ। यदि चलता हूँ तो लगता है दरवाजेके पीछे, पर्देके पीछे, आलमारीके पीछे और बिछौनेके नीचे कोअी छिपा हुआ है, कोअी है। मैं यह प्रतिपल समझता हूँ कि वहाँ कुछ भी नहीं है, फिर भी, मैं तत्काल सहसा मुड़कर देख लेता हूँ, चूंकि मैं अुससे डरता हूँ जो मेरे पीछे है! अुसका साया मुझपर मंडराया हुआ है, यह कथन मूर्खतापूर्ण है, लेकिन सच है। 'वह' कौन और क्या है? मैं जानता हूँ कि मेरी कायर-कल्पनाके अतिरिक्त अन्य कहीं अुसका निवास नहीं। वह मेरे भय और मेरी पीड़ामें पैठा है। बहुत हो चुका यदि मैं कमरेमें अकेला न होता और हम दो होते तो निश्चय ही वह भाग खड़ा होता, क्योंकि 'वह' कमरेमें अिस लिअे आता है कि मैं अकेला हूँ, साधारण कारण है कि मैं अकेला हूँ, और अकेला हूँ!"

अब 'पागलकी डायरी' के कुछ अवतरण देखिअे—

"जून २०—१८५१. अैसे कुछ लोगोंसे भेंट होती है कि जिन्हें हत्यामें आनन्द आता है। हां, हां, अिसमें मजा आना ही चाहिअे। सबसे ज्यादा मजा कत्लमें है, क्या कत्ल, सोजनके समान नहीं है? निर्माण और नाश! अिन दो लफ्जोंमें दुनियांकी तवारीख छिपी है। तमाम धरतीका अितिहास— बस, यही सब है न? तब मारनेमें मजा क्यों न आये?

"जून २५— यह सोचना कि अेक जीव है जो, सांस ले रहा है, जीवित है, चलता फिरता दौड़ता है, वाह खूब कहा जीव! जीव भला क्या चीज है? जीवन अेक जर्रा जो धरतीपर रेंगता रहता है और मैं नहीं जानता, जीवनका यह नाचीज कतरा कहांसे आता है, लेकिन कोअी चाहे तो अिसे अपनी मर्जीपर मार सकता है, तब, तब कुछ भी नहीं बचता। यह ओपन हो जाता है, यह खत्म हो जाता है।

'जून २६— तब बताअिअे, हत्याको अपराध क्यों बताया गया? हां, क्यों? बजाय हत्याके, यह तो प्राकृतिक नियम है। हर अेक 'प्राणीका धर्म है— किसीको मारे! हर अेक, जीवित रहनेके लिअे मारता है, मारनेके लिअे जीता है। पशु प्रतिपल मारता रहता है। मनुष्य अपनेको शक्तिमान् बनानेके लिअे निरन्तर हत्याअें करता है। लेकिन, अिसके अलावा, मजेके खातिर भी वह खून करता है, अिसीलिअे तो अुसने कत्लका आविष्कार किया है। बालक दिनभर कीडोंको मारता है, नन्हीं चिड़ियां, छोटे जानवर वगैरह जो भी अुसके रास्तेमें आते हैं, मरते हैं। लेकिन, हमें कत्लेआमकी जो अदम्य प्यास और ललक है अुसकी पूर्ति अिससे नहीं होती। पशुओंको मार लेना ही काफी नहीं है। हमें चाहिअे कि आदमीको भी मारें। पूर्वकालमें अिस आवश्यकताका प्रतीक 'बलिदान' था। अब तो समाजमें जीवन व्यतीत करनेकी जरूरतने हत्याको अपराध बना दिया है। हम हत्यारेको सजा देते हैं और धिक्कारते हैं! फिर भी हम अिस नैसर्गिक अेव अनिवार्य अिच्छाका दमन नहीं कर सकते हैं। यह हममें सतत जागृत रहती है। और अिसका दमन करनेके लिअे हम समय २ पर जग छेड़ते हैं। तब तो आनदका मंगल समारोह आरम्भ होता है। पूरेके पूरे राष्ट्र दूसरे राष्ट्रपर चढ़ दौड़ते हैं और अुसका पूर्ण विध्वंस कर प्रसन्न होते हैं! यह खून और रक्त धोटियोंकी दावत है, अेक अैसी दावत है, जो सेनाओंको विक्षिप्त और नागरिकोंको पागल कर देती है। आदमी-औरत और बच्चे होश हवास खो देते हैं और रातोंमें घोरे चिराग जला जलाकर अखबारोंमें छपे, हत्याकाण्डोंके बीभत्स वर्णन बड़े समारोहपूर्वक

मिलजुलकर पढते हैं! जवाब दीजिये, क्या हम अुन लोगोंको धिक्कार सकते हैं जो अिन्सानकी हत्याके कारण हैं जिन्होंने ये कत्ले आम जारी करनेके हुक्म दिये हैं। परन्तु नहीं, हम अुलटे अुनको विविध अुपाधियोंसे विभूषितकर अपना गौरव बढाते हैं। अुन्हे सोने और जरीकी पोशाके पहनायी जाती हैं, अुनकी टोपियोंपर तुर्रे लगते हैं और अुनके सीनेपर जेवर-जवाहरातके तगमे जगमगाते हैं। अुन्हे क्रॉस और लीजन ऑफ ऑनर मिलते हैं। सलामियाँ दी जाती हैं। घमन्डके ये पुतले अहंकारके मदसे भर जाते हैं। सुन्दरियाँ अुनका प्यार पानेकी प्रतियोगितामें प्राण गँवाती हैं। भीड़की भीड़ अुनका जय जयकार करती है। क्यों साहब केवल अिसीलिअे न कि अुनका जीवनोद्देश्य मानवमात्रका रक्त बहाना, हत्यायें और कत्लेआम करना है। जब वे अपने मौतके हथियार थामे गलियोंसे गुजरते हैं तो लोग स्तब्ध रहकर मनही मन अुनकी शानसे ओर्ष्या करते हैं। क्योंकि, हत्या करना प्रकृतिका प्रबल नियम है जिसे अुसने प्रत्येक प्राणीके हृदयमें प्रतिष्ठित किया है। ससारमें हत्या और कत्लसे अधिक सम्मान और आनन्ददायक दूसरा काम नहीं है।

मृत्यु नियम है,—क्योंकि प्रकृति शाश्वत यौवन चाहती है। अैसा लगता है यह अपने प्रत्येक कार्य-कलापमें अनजाने ही पुकार रही है, जल्दी करो, जल्दी करो, जल्दी करो। ज्यों-ज्यों वह विनाश करती है, त्यों-त्यों अुसकी जवानी नया रग लाती है।

× × ×

परन्तु अिन अुद्धरणोंके आधारपर भी हम यह माननेको तैयार नहीं कि 'वह?' और 'पागलकी डायरी' मौपासाँको विक्षिप्त प्रमाणित करती है। अुपरोक्त अवतरणोंद्वारा विश्वके अगणित सेनानायकों, पराक्रमियों, सिकन्दरों वलिंग विजेताओं, नादिरशाहों और हिटलरोंपर *व्यग्यका* जो वज्रपात किया गया है वह विश्व साहित्यमें *सर्वथा दुर्लभ* है। मौपासाँ-जैसा महान् कला प्रभु ही यह कर सकता था! युद्धके विरुद्ध कितनी अटल अपील अिन पंक्तियोंमें है? मौतको जीवनका व्यापार बना देनेवाले वर्गोंके गालों कपालोंपर कैसा करारा थपत अिनमें है?

कौन कह सकता है यह सब लिखनेवाला मौपासाँ लेखन कालमें पागल था। यह 'मानवता' और 'अमर जीवनकी आवाज है, माग है। शातिद्वारा पेश की गयी न्यायकी पुकार है। अपनी कअी कहानियोंमें मौपासाँने शाति और मानवताका पक्ष लिया है। युद्ध और हत्यासे अुसे अुतनीही घृणा थी जितनी रोम्याँ या गांधीको। 'पगली' नामक कहानीमें युद्ध विरोधी वातावरणके जरिये, अुसने यही शांति-नारा बुलद किया है —

"तब भेडिये अुसे निगल गये। पछियोंने अुसके चीथडे और बिछौने काटकर अपने घोसले बसाये और मैंने अुसकी हड्डियोंको समेटा। मेरी यही प्रार्थना है कि हमारी सन्तान कभी 'युद्ध' के दर्शन न करे।"

—अैसे मौपासाँने आत्महत्या क्यों कर ली? विद्वान कभी अेकमत नहीं हो सके हैं। जिन कारणोंसे मौपासाँ शहीद हुआ, वे कारण साधारण अेव व्यक्तिगत नहीं हो सकते। व्यक्तिके रूपमें वह अितना समर्थ अवश्य था कि अपनी पीडाको देखता-परखता और बर्दाश्त करता। अवश्य अुसने फ्रान्सीसी समाज व्यवस्था और शासनमें, परिचितों और अन्य लोगोंमें अिस सीमा तक संडाद, शोषण, लूट, हत्या अनाचार, कृतघ्नता, धोखा देखा कि वह अूब अुठा और आत्महत्या कर ली। जैसे मराठीके प्रसिद्ध लेखक साने गुरुजीने अपने जीवनका अत किया।

अिसके अतिरिक्त, सच बात तो यह है कि मौपासाँ जिस वर्गके लिअे अुठा, अुसकी कमजोरियोंको जानते हुअे भी, अुन कमजोरियोंके कारण और अुन्हें दूर करनेका सही तरीका न खोज सका। अुस वर्गको विरोधी वर्गसे सतत सघर्ष करनेकी क्षमता नहीं दे सका, न अपने लिअे ही वह सघर्षशीलता रख सका। मौपासाँके पात्रोंमें वर्गचेतनाकी अनुपस्थिति है। सम्भवतया यही कारण है कि मौपासाँ अभिजात्यों और शोषणोंके विरुद्ध अपने पात्रोंको मैदानमें लानेमें असमर्थ रहा। सचेतन सघर्षशील व्यक्ति कभी आत्महत्या नहीं करता। कुछभी हो मौपासाँ विश्व कथावर्गका ज्वलत ज्वालामुखी है।

आधुनिक तेलुगु काव्य-प्रवृत्तियाँ

: श्री वारणासि राममूर्ति 'रेणु', अेम. अे. :

आचार्य श्री रायप्रोलु सुब्बाराव तथा महाकवि गुरजाड अप्पाराव वर्तमान तेलुगु काव्योद्यानके अैसे कोकिल है, जिन्होने अपनी मधुर काकलीसे कविता-सरस्वतीका आवाहन किया था तथा अुस वीणा-पाणिके चरणोंपर स्वागताञ्जलि, अक्षर-सुमनाञ्जलि चढा दी थी। वह प्रभात सचमुच समूचे आंध्र प्रदेशके लिअे नव जागरणका परिचायक सुन्दर सुप्रभात था। स्व श्री महाकवि गुरजाड अप्पारावजीने देश-प्रेमका शङ्ख फूंककर जनताकी दृष्टि अपनी मातृभूमिकी ओर जिन शब्दोंमें, अुन्मुख कर दी कि—

देशमनियेडि दोड्डवृक्षम्
प्रेमलनु पूलेत्तवलेनोय्।
आकुलंदुन अणगि मणगी
कवित कोकिल पलुकवलेनोय्।
पलुकुलनु विनि देशमंदभि
मानमुलु मोलकेत्तवलेनोय्।

(देशरूपी महान् वृक्षमें प्रेम प्रसून निकल आअें। पल्लवोंका रंगारंग अवगुण्ठन लिये कविता कोयल कूक अुठे, जिसके श्रवण मात्रसे देशके अणु परमाणुमेंसे आत्माभिमानके अङ्कुर फूट निकले।)

—तो आचार्य श्रीरायप्रोलु सुब्बारावकी हृत्तंत्री प्रेम-माधुरीकी स्वरलहरियोंसे स्थावर-जंगमको भाव विह्वल, आनन्द विभोर बनाती रही। अुन्हें तो दुनिया अेक सुन्दर फुलवारी-सी लगी।

"तारलन्नु, मणुलन्न, तरुणुलन्न
पुलुगुलन्न, गीतमुलन्न, पूवुलन्न
नाम वाचक भेदमुल् नाकुमात्र
मनियुनु बूवुले यगु नाम वृष्टि।"

तारिकाअें, मणियाँ, लडके-लडकियाँ, पक्षीगण, गीत तथा सचर सुमन अिन सबमें नाम भरका अंतर है। तत्वत मुझे तो सब फूल ही लगते हैं।

अैसे सुमन-सङ्कुल संसारमें जन्म लेनेवालोंका अेक ही लक्ष्य हो सकता है—प्रेमकी अुपासना। प्रेम पराङ्मुख मानवोंको देखनेपर वे कितने व्यथित हो अुठते हैं।

सच्चिदानंद कल्याण सदन मैन
श्री मनोहर जगतिकि नेगुदेंचि
प्रेम-लक्ष्मि नाराधिपवेमि यक्कट!

(हे मित्र! यह कैसी विडंबना है कि) तुम सच्चिदानंद कल्याणके निलय अिस जगतीपर अवतीर्ण होकर भी, प्रेमलक्ष्मीकी आराधना नहीं करते?

कुछ-कुछ अिसी तत्वको स्व महाकवि जयशंकर-प्रसादजी भी अपनी जीवन-यात्राका पाथेय बनाकर चले थे।

यह लीला जिसकी विकस चली
वह मूल शक्ति थी प्रेम-कला
जिसका संदेश सुनानेको
संसृतिमें आयी यह अमला।

—(कामायनी)

अिस प्रकार आधुनिक तेलुगु साहित्यका श्रीगणेश, देशभक्ति, समाजसुधार तथा अमिट प्रेमतत्व अिन तीनोंके साथ संपन्न हुआ था, अिस २० वीं शतीके प्रथम दशक ही में। स्व अप्पारावजी देशभक्त तथा पुरानी रूढियोंके घोर शत्रु सुधारवादी कवि रहे। श्री सुब्बा रावजीकी काव्य-दृष्टि तो आरंभसे लेकर आजतक निसर्ग जनित तथा शुद्ध रही। येही दोनों आधुनिक काव्य-गगनके सूर्य अेव शशि सिद्ध हुअे हैं। अिस छोटी-सी भूमिकाके बाद हम समूचे आधुनिक तेलुगु काव्य-साहित्यकी प्रधान प्रवृत्तियोंका अुल्लेख, अुदाहरण सहित करेंगे।

१. प्राचीन संस्कृतिका परिपोषक काव्य विधान :—

२० वी शतीमें आकर जनताका ध्यान अपने सनातन आर्य-धर्म अेवं प्राचीन संस्कृतिसे खिंचकर हेतुवाद तथा नास्तिकताकी ओर अग्रसर होने लगा है। 'काम' तथा 'मिथुन' का अहितकर प्रचार जोर पकडता जा रहा है। अंग्रजी शिक्षाप्रणाली रही सही कसर पूरी कर रही है। अैसी स्थितिमें धर्म और सदाचारसे दूर जा पडनेवाली जनताके हृदयोंमें अुन विषयोंकी पुनः प्रतिष्ठाकर सनातन सांस्कृतिक ध्वजा फहरानेकी सद्भावनासे प्रेरित होकर कुछ कवियोंने लेखनियाँ अुठायी। अिस श्रेणीके अग्रणी कवियोंमें श्री विश्वनाथ सत्यनारायण आचार्य, शिवशंकर शास्त्री, कोरि नरसिंह शास्त्री, पुट्टपर्ति नारायणाचार्युलु, गुदिमेल्ल रामानुजाचारी, वेट्टूरि वेङ्कट नरसय्या वगैरह हैं। पाश्चात्य रंगमें रंगे अपने आलोचकोंकी अुपेक्षा, श्री विश्वनाथ सत्यनारायण किस दृढता अेवं आत्मविश्वासके साथ करते हैं, जरा देख लें —

> लेत बुर्रलु कोविकरिस्ते
> आतगाळ्ळतो येमिगानी
> तान तातलनाटि कथलू
> त्रव्विपोस्तानोय !

(यदि कच्ची खोपडियाँ मेरी हँसी अुडाती हैं तो अुडाया करें। मुझे अुनकी कब परवाह है? मैं तो बाप-दादोंके जमानेकी गाथाअें खोदकर ढेर लगा दूँगा!)

"किन्नेरसानि पाटलु, रामायण कल्पवृक्षमु, कवि-प्रिया, 'सहजयान पथी', पेनुगोण्ड लक्ष्मी, साक्षात्कारमु, शिवताण्डवमु, 'मगुव माचाला', 'माण्डवी' वगैरह अिस ढंगकी कृतियोंमें अुल्लेखनीय हैं।

२. गोचारणवाली (Pastoral) कविता पद्धति :—

गँवअी गाँवोंके स्वस्थ, स्वच्छ अेवं अकपट वातावरणमें रहनेवाले कतिपय कवियोंने ग्रामीण जीवन तथा अुससे संबद्ध दृश्यावनको ही अपने काव्यका विषय बना लिया है। अैसे काव्य-विधानके स्रष्टाके रूपमें स्व० श्री बसवराजु अप्पारावका नाम सादर लिया जा सकता है। अिस रीतिका श्रीगणेश जिन्होंने अपने "निर्झर संगीत" (सेलयेटि गानमु) के साथ किया था। यह प्रणाली काव्यमर्मज्ञों तथा काव्यरसिकोंको अितनी अच्छी लगी कि देखते-देखते अनेक रस-सिद्ध कवि तिलकोंने अुसको अपनाया और तेलुगु साहित्यको 'कृषीवलुडु', 'वनकुमारी', 'वधेन्दुलक्ष्मी', 'यैंकि पाटलु' जैसी सरस रचनाअें प्राप्त हो गयीं। सर्वश्री दुव्वूरि रामिरेड्डी, येटुकूरि वेंकटनरसय्या, नण्डूरि सुब्बाराव, अडिविबापिराजु, विश्वनाथ सत्यनारायण वगैरह अिस श्रेणीके अत्यंत लोकप्रिय कवि हैं। अिस प्रकारकी रचनाअें शिष्ट व्याकरण संमत भाषा तथा देहाती बोली दोनोंमें लिखी गयी हैं। नण्डूरि सुब्बाराव तथा बापिराजुने बोलचालकी जबानका ही सर्वत्र व्यवहार करके देहाती तेलुगुकी मिठाससे लोगोंको छका दिया। अेक अुदाहरण सुब्बारावकी 'अेंकि पाटलु' से लीजिअे।

'अतिस्नेह पापशंकी' प्रेमकी आत्यंतिकता हमेशा प्रियपात्रोंके शारीरिक-कुशलको लेकर सशंक रहा करती है। गँवअी-गाँवकी प्रोषितपतिका 'यैंकी' के दिलकी धडकनें कितनी करुण हैं!

> दूरान नाराजुके राविडौनो!
> अेरोजु नारात लेरालपालो!
> सोमसिल्लकन गाले सेदरि पोतादि मनसु,
> काकम्म सेतन कबुरपडाराजु! ॥ दूरान०
> कळ्ळ केदो मसक कम्मिनटलुटादि,
> निदरल्ले नायोल्लु नीरसिल्लुतादि ॥ दूरान०
> तुलिसेम्म शोरिगिदि, तोलिपूस पेरिगिदि!
> मनसुलो ना बोम्म मसक मसकेसिदि! ॥ दूरान०

हाय! हाय! दूर देशमें रहनेवाले मेरे राजा (प्राणेश्वर) संकटमें होंगे! जाने मेरा भविष्य किन लकीरोंसे अंकित हो रहा है! चीटीके चलनेकी भी आहट पाकर यह मन जाने कैसा हुआ जाता है! हाय, वह तो अपना संदेश तक कौअेसे नहीं भिजवाते! आँखोंपर जैसे कोअी पतली बदली-सी छा गयी है, सारी देह किसी तन्द्रालस विवशतामें शिथिल पडती जा रही है! हाय, हाय! तुलसी चौतरेका यह पौधा तो

नीचेकी तरफ झुका जाता है। मेरे गलेका हार (टूट) बढ चला है! मन-मन्दिरमें बैठे प्रियकी मूर्ति तो धुधली पड गयी है। जाने मेरे परदेसी प्रियतम किस सकटमें होगे।

३. प्रेम-प्रधान काव्य-सर्जना :—

आधुनिक तेलुगु कवियोमेंसे प्राय सबके सब न्यूनाधिक मात्रामें प्रेमके विविध रूपोको ही अपने काव्यके विषय बनाकर चले हैं। अग्रेजी कवि कीट्स, शैली, ब्राउनिङगकी रचनाओके साथ साथ बगलाके कवीन्द्र रवीन्द्रके गूढ-मधुर प्रेम-तत्त्वसे भी अिनमेंसे अनेक कवि—विशेषकर गीतिकार-प्रभावित हुअे हैं। किन्तु यह प्रेम तो विभिन्न व्यक्तियोमें अनुभूति भेदके कारण विभिन्न नाम धर बैठा है। कही वह रति (दम्पति प्रेम) का रूप लेता है तो कही 'मैत्री' का और कही प्रकृति प्रेम तथा अन्यत्र मातृ-भक्तिका। अिससे स्पष्ट है कि अिस प्रकारकी रचनाअें बहुधा आत्माश्रयी (Subjective) हुआ करती हैं। कविता विषय प्रधान न रहकर विषयी प्रधान बन जाती है और सर्वत्र अेक प्रकारकी स्वच्छन्दताकी छाप लिये चलती है। प्रेमको अपने काव्य जीवनका सम्बल बनाकर चलनेवाले कलाकारोमें सर्वश्री तल्लावझल शिवशकर शास्त्री, देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री, नायनि सुब्बाराव, नाळम् कृष्णाराव, अडिवि बापिराजु वेदुल सत्यनारायण शास्त्री आदि प्रधान हैं। अिनमें श्री देवुलपल्लिका काव्य जीवन दुखसे आविल है, अुनका 'कृष्ण पक्ष', ही अधिक चित्ताकर्षक है। आचार्य शिवशकर शास्त्रीकी 'हृदयेश्वरी', कृष्णशास्त्रीकी अुर्वशी' तथा बापिराजुकी 'शशिकला', अिन तीनाकी कल्पना प्राय अेक-सी है। फिर भी अुनपर अपने निर्माताओके सबल व्यक्तित्वकी छाप स्पष्ट गोचर होती है। 'हृदयेश्वरी','वकुलमालिका', 'कविप्रिया', 'पद्मावती', 'अुर्वशी', 'शशिकला गीतमुलु', 'सौमङ्गलि प्रणययात्रा' वगैरह दर्जनो रचनाअें रस-लुप्त सुमन चषक हैं जिनकी मिठास अेव सौरभसे तेलुगु काव्योद्यानकी क्यारियाँ महक रही हैं। अेक-दो अुदाहरण देखें—

(अ) श्री देवुलपल्लि कृष्णशास्त्रीकी निम्नलिखित पक्तियोमें, समूचा विश्व किसी विराट् सत्ताके विरहमें, प्रेममें आकुल-व्याकुल होकर, कदम्ब-सा फूलकर मानो, "कस्मैदेवाय हविषाविधेम!" वाली विस्मयकारिणी वैदिक रागिनी, सुनाता नजर आता है, तो कविकी चकित आत्मा अेक बृहत् प्रश्नचिन्ह लगाकर अपनी जिज्ञासा प्रकट करती है।

> सौरभमुलेल चिम्मु पुष्पव्रजंबु ?
> चन्द्रिकल नेल वेदजल्लु चंदमाम ?
> अेल सलिलंबु पारु ? गाड्पेल विसरु ?
> मावि गुब्ब कोम्मनु मधुमास वेळ ?
> वल्लवनु मेक्कि कोअिल पाडुटेल ?

अर्थात्—

> सौरभ क्यों बहा देता है, सुमन समूह ?
> चन्द्रिकाअें क्यों बिखेरता है चन्द्रमा ?
> यह सलिल बहता क्यों है ? पवनका प्रसार किसलिअे ?
> रसाल पल्लवोका कलेवा करके, अवुआकी डालीसे,
> मधुऋतुमें, मदमाती कोअिल गाती किसलिअे है ?

(आ) मुगल बादशाह शाहजहाँ तथा बेगम मुमताजके प्रेमके अमर प्रतीक ताजने, न जाने कितने कवियोकी कल्पनाको जीवन-दान दिया है। दो शरीर तथा अेक हृदय लिये रहनेवाले अुन प्रेम विहगोकी पवित्र गाथाका गायन 'रसाल तथा माधवीलता'के रूपकके सहारे स्व बसवराजु अप्पारावजीने अिस प्रकार कर दिया है—

> मामिडि चेट्टनु अल्लुकोनदो मावबोलतोकटी,
> अेमा रँडिटि प्रेम सपदा ! अितितनराद्दु !
> चुडलेनि पाविष्टि तुपानु, अुडबोके लकनू !
> ओडै पोयो मामिडि चेट्टु मोगमु बेलवेसे !
> मुच्चटँन् आकुलु कायलने वेच्चनि कन्नोळोल्लवो !
> पच्चनाकुला बोम्मरिटिलो पडोरुकटि राल्वो,
> मामिडि चेट्टु मायविलतनो मायलो कलिसिंदो !
> कामिन मिच्चे मामिडि पन्डू कबुलकु मिगिलिंदो !

सयोगकी बात है—

> किसी रसालसे अेक माधवीलता लिपट गयी।
> दोनोका प्रेम-सौंदर्य तो अवर्णनीय बना रहा।

राहुला पापी तूफान अुठ खड़ा हुआ—

अुसमें वह निर्मल प्रेम न देखा गया! न देखा गया!
हाय! देखते-देखते माधवी जड़ समेत अुखड़ गयी!
बेचारा रसाल नीरस नीरव ठूँठ बना रहा! और
नयनाभिराम पत्र पुष्पोंके गर्म आँसू बहा डाले!
अेक सजे-सजाये धरीदेमें गिरा दिया अेक फल!
फिर वह रसाल भी माधवी लताके साथ
विलीन हो चला मायामें! और आज अिस
धरतीपर रह गया कवियोंको काम्य बरसाने-
वाला आम!

४. अतीतके गौरव-गानका विधानः—

भारतका अतीत अत्यन्त गरिमामय तथा ज्वलन-शील रहा है। अुसके कितने ही गौरवमय व अुदात्त प्रसङ्ग हैं जिनसे स्पन्दनशील कवि हृदयकी कल्पना प्रेरणा पाकर अमरत्वको प्राप्त करती रही है। 'सौंदरनन्दमु', 'राणा प्रताप चरित्रमु' तथा 'शिव-भारतमु' ये तीनों महाकाव्य आधुनिक काव्य साहित्यके बेजोड़ रत्न हैं, जिससे कि क्रमशः भारतीय अितिहासके बौद्धयुग, राजपूत तथा महाराष्ट्र युगीन भास्वर-वातावरणकी किरणें फूटती रहती हैं। सर्वश्री पिंगळि, काटूरी कविद्वय, राजशेखर शतावधानी तथा गड़ियारम्म वेंकटशेष शास्त्रीजीने ये तीनों काव्य रचकर तेलुगु साहित्यका मस्तक समुन्नत किया है। अिन अैतिहासिक महाकाव्योंके अतिरिक्त कितनेही कवियोंने खण्डकाव्योंके रूपमें अतीतका गुणगान किया है। स्व० श्री कोडालि सुब्बारावकी 'हम्पीक्षेत्रमु' पुट्टपर्ति नारायणाचार्युलुकी 'पेनुगोंड लक्ष्मी' तथा वेदूरि वेंकटसत्यम्‌जीको 'पल्नाटि भारतमु' आदि अिस दिशामें अुल्लेखनीय रचनाअें हैं। गत-विभवा 'पेनुगोंडलक्ष्मी' के बचे खुचे शिल्प सौंदर्यने रससिद्ध कविके हृदयमें भावोंका जो तूफान खड़ा कर दिया है, अुसकी तीव्रताका अनुभव तनिक कर लीजिये!

स्वर्गकी अप्सराओंको भी मात करनेवाली प्रस्तर-सुन्दरियोंपर दृष्टि पड़ते ही कविकी भावना मानों अुमड़ पड़ी!

कुलकुन्गुलुल अुचुचुसयदि,
तिगुन् जीरिच श्रोवाड्डु नव्वुलो,
वञ्चि विसवु तल्कोपिपि,
यो पुबोडि येवानि भावलता स्वर्ण सुमबो!
नेटिकि नपूर्व प्रौढि, वंचिचु मा
तल्पुल्, तीक्ष्णमुलैन मन्नमुल
चेतन्वोले माडिंपुचुन्!

नाज-अन्दाज भरी अपनी तिरछी नजरें, लज्जा पटके तार तार करती हुअी, चारों ओर फेंकनेवाली, तथा ओठोंसे फिसल फिसल पड़नेवाली मुस्कानोंमें बचचा जहर घोलकर पिलानेवाली यह कुसुम-बाला (स्त्री मूर्ति) जाने किस कलाकारकी भावलतापर खिला स्वर्ण सुमन है! आहा! (३०० वर्ष बाद) आज भी प्रस्तर मन्नाक्षरोंकी तरह अमोघ शक्ति रखनेवाली, अपनी कुशलतासे यह (प्रतिमा) तो हमारी भावनाओंको चुरा रही है! हमें कमाल बनाकर मनमाना नाच नचा रही है! वाह री कुशलता!

अुलिलो, देनेल सोनलल जिलिकि, यौयोटपारि,
चिविरिचु बेळल ना शिल्पिकि यन्नु गोसलनु धारला-
ट्टनेमो जलकुल्,
चेवोपि सेमचियुंड्डु ननुकोवुन्,
भावनावेश भगुल् धंपे जेलरेग,
मुद्दु गोनियुंड्डुन्, प्रेम विभ्रांतुडै!

छेनीमें चाहदके पत्थरो छिड़ककर, अिस प्रतिमा को स्वरूपदान देते समय मेरा ख्याल है, अुस (अज्ञात नामा) शिल्पीके नेत्रांचल फर् फर् बरस पड़े होंगे, अुसकी हथेलियोंमें स्वेदकण छलके हांगे! निश्चयही अुसने भावावेगके अभग भगोंके अुफानसे तंग आकर प्रेमके भँवरमें फँसकर (अिसे) लपककर चूम लिया होगा!

कैसी भाव विदग्धता है! अपने स्रष्टाकी बुद्धिको भी चक्करमें डालनेवाली कैसी कला-कुशलता है!

५. दलित मानवता तथा राष्ट्रीय भावनाका प्रतिनिधि काव्य:—

अस्पृश्यता तथा अूँच-नीचका भेद भाव हमारे सामाजिक जीवनमें कोढ़की भाँति घुसकर, अुसे जीर्ण-

शीर्ण बनाते आय हैं। अुनसे राष्ट्रको छुटकारा दिलानेके शुभ अनुष्ठानमें राजनैतिक नेताओंके सिंह-गर्जनके साथ-साथ कांता सम्मत कविवाणीभी अपना करुण मधुर तथा मर्मस्पर्शी संगीत सुनाती रही। अिस दिशामें मधुर कवि श्री. गुर्रम जोषुवाकी सुन्दर कृतियाँ 'गब्बिलमु' तथा 'अनाथा' विशेष रूपसे अुल्लेखनीय हैं। अिनमें पहली रचना अेक सुन्दर संदेश काव्य है जिसमें हरिजनोंकी दुर्दशाका अतीव करुण चित्र खींचा गया है। अिसी कविकी अेक और रचना 'फिरदौसी' भी अत्यंत लोकप्रिय है।

भारतीय स्वतंत्रताके साथही, अलग आंध्र-प्रदेश निर्माणके लिअे आंदोलन पिछले ४० वर्षोंसे चलता रहा है, जो कि अिसी वर्ष विगत १ अक्टूबरको अस्तित्वमें आया है। अिस आंदोलनमें भी स्वतंत्रताके आंदोलनकी भाँति कवियोंने अपना आंशिक सहयोग प्रस्तुत कर दिया है। स्व श्री गरिमेळ्ळ सत्यनारायण, श्री विश्वनाथ सत्यनारायण, श्री राय प्रोलु सुब्बाराव, श्री दाशरथि तथा श्री तुम्मल सीताराम मूर्ति चौधरीजी की रचनाअें अिस प्रसंगमें सादर स्मरणीय हैं।

कविवर जोषुवाकी 'अनाथा' रचनाका अेक सुंदर प्रसंग लीजिअे। किसी संकटकी शिकार चमारिनको अस्पतालमें चिकित्साके लिअे छोड आनेवाले अपने दयालु पतिको किसी कट्टर ब्राह्मणीने तबतक घरमें पैर रखने नहीं दिया था जबतक अुसने सचैल-स्नान नहीं किया। स्नान और भोजनके अुपरांत जब अेकांतमें दम्पती बैठ गये तो पतिने पत्नीसे मृदु शब्दोंमें प्रश्न किया—

> अलुक दामिचेना जलकमाडिन यंतने ?
> माल्दानि विल्ल्ल कडगड्लु चूचि बहुळंबुग दग्तम
> नदुना मनोजलजमु मंल्चड्रदि स्नानमु चेसेने ?
> येरिदान योवेलुपलि शुद्धि ओवुलकु येट्टुने,
> पोयुने मुक्तिनिच्चुने ?

अरी पगली ! बाह्य स्नान करने मात्रसे तुम्हारा क्रोध अुतर गया ? अुस चमारिन तथा अुसके बच्चोंके दैन्यकी आँचसे मेरा मानस-कमल मुरझा गया है, अप-वित्र बन चला है, क्या अुमने भी स्नान किया है ? फिर अिस बाह्य निर्मलतासे, भला, कोअी प्रयोजन सिद्ध होगा ? अिससे मुक्ति मिल सकती है ?

करुणासे ओतप्रोत कैसी कान्ता-सम्मित संजीवनी वाणी है !

६. प्रगतिवादकी धारा:—

अिस प्रकार हम देख चुके हैं कि काव्य साहित्यमें राष्ट्रप्रेमके साथ-साथ प्रांतीय भावनाने भी स्थान पा लिया है। समय तथा विज्ञानके प्रगति करनेके साथ ही जनताके दृष्टिकोणमें भी परिवर्तन आ गया है। वर्तमान सामाजिक धार्मिक अेवं नैतिक व्यवस्थाके प्रति कुछ पढे-लिखे व्यक्तियोंका असन्तोष बढ चला है। अनि-विकसित आधुनिक विज्ञानने अिनकी दृष्टि अेकदम अपार्थिव और भौतिक बना दी है। अैसे लोगोंके विचारोंका भी प्रतिनिधित्व वर्तमान तेलुगु काव्य कर रहा है। 'प्रगतिवाद' और 'अतिवास्तविकतावाद' अैसी विचार धाराके काव्य गत नाम हैं। अिस क्षेत्रके कवियोंके अगुआ "श्री श्री" (श्रीरंगम् श्रीनिवासरावजी) हैं। अिनके अनुसार कविताके लिअे छंद, सौंदर्य, सधीभाषा, यहाँतक कि भाव भी अुठने जरूरी नहीं हैं। कोअी भी शब्दसमूह काव्य कहला सकता है! अिस प्रकारके काव्यमें मानवताकी स्थाअी समस्याओंकी अुपेक्षा साम-यिक अेवं सामाजिक विषयोंको ही अधिमान्यता दी जाती है। वर्तमान भौतिक प्रभुताकी शिकार दलित जनताका आकुल आक्रोश ही अुसमें मुखरित होता है।

अपनी "भिक्षुवर्षीयसी" रचनामें 'श्री श्री' बूढी हुअी अंगीठी-सी किसी पेडके नीचे सिकुडी सिमटी ठिठुरनेवाली भिखारिनका करुण चित्र खींचकर अंतमें लिखते हैं।

> आ अव्वे मरणिस्ते आ पाप मेव्वरिदनि,
> वेरिगालि प्रश्निस्तू वेळिपोयिंदि !
> अेमुक मुक्क कोरकुट्टु अेमी अनलेदु कुक्क।
> ओक ओगनु पडवेमुक तोंदरगा तोलगे तोंड !
> "अिदि मा पापं कादने"
> ओगिरि वञ्चि अंगिलाकु !

पगली हवा प्रश्न करती निकल गयी—
"यदि वह बूढी मर जाअे तो वह पाप किसके सिर लगेगा ?"
पास ही पडी सूखी हड्डी कट-कटानेवाला कुत्ता चुपचाप सुनता रहा !
कहींसे अेक गिरगिट झटसे लपका,
अेक मक्खीका शिकार कर वहाँसे हट चला !
सर्ररंरसे जूठा पत्तल अेक, यह कहता अुड आया—
"यह पाप तो मेरा नहीं है !"

अबतक प्रसगवश अुद्घृत नामोके अतिरिक्त सर्वश्री पळ्ळे पूर्ण प्रज्ञाचार्युलु, स्व० सुरवरम् प्रतापरेड्डी, देवुलपल्लि रामानुजराव, सी० नारायण रेड्डी, वर्रेगटि वीरभद्राचार्युलु जन्ध्याल पापय्यशास्त्री, नारायणबाबू, सपरकुमाराचारी, पालगुम्मि पद्मराजु, मोचर्ल रामकृष्णय्या,अनिसेट्टि, सुब्बाराव शिष्ट्ला, सत्यनारायण राजशेखरम, अेकिराल कृष्णामाचारी, वाविलाल सोमयाजुलु, पिल्ललमर्रि वेकट हनुमतराव, केशवभट्ल गोपालमूर्ति, जोसफ, कोडवीटि वेंकट कवि आदि कितने ही ख्यातनामा कवितिलक वर्तमान तेलुगु काव्यको अलकृत कर रहे हैं। लेखके कलेवरके बढ जानेके भयसे अुन सबका अुल्लेख सभव नही रहा है।

पुरुषो ही की भाँति महिलाओकी स्तवनीय सेवाअें भी आधुनिक तेलुगु काव्यको पर्याप्त मात्रामें प्राप्त हैं। अिनमेंसे सुश्री काचनपल्लि कनकाबा, कनुपर्ति वरलक्ष्मम्मा, गुडिपूडि अिदुमती देवी, चिल्कपाटि सीताम्बा, गण्टि कृष्णवेणम्मा, स्थानापति रुक्मिणम्मा, मदमचि अनन्तम्मा, पुट्टपर्ति कनकम्मा, तल्लाप्रगड विश्वसुदरमा, सौदामिनी, बगारम्मा अिल्लिदल भरस्वती देवी, नायनि कृष्णकुमारी, अडिवि गधावसतम्मा, अट्टकूरि लक्ष्मीकातम्मा, दो० अनसूया देवी वगैरह बीसों मालाअें तथा बहनें हैं जिनकी सरस कृतियोपर तेलुगु काव्य जगत सदैव गर्व करता रहेगा। अिन देवियोने पुरुषो ही की भाँति, वर्तमान तेलुगु साहित्यकी सभी दिशाओको अपनी पारस लेखनियोसे भास्वर बना दिया है।

ध्येयवादी

: श्री ग. त्र्यं. माडखोलकर :

संसारके परिवर्तन-क्रमको विकासवादका स्वरूप देनेका प्रयत्न शास्त्रज्ञ सदैव करता रहा है। परन्तु कुछ परिवर्तन अितने अद्भुत होते हैं कि शास्त्रज्ञोंको अुनकी अुत्पत्तिके विषयमें जानकारी प्राप्त करना दुष्कर हो जाता है। शास्त्रज्ञ होनेपर भी वे अनुभवोंके आधारपर ही तो सिद्धान्तोंका निर्माण करते हैं। लेकिन मनुष्यका अनुभव स्वभावतः अितना संकुचित है कि अुसके आधारपर संसारकी सारी घटनाओंके रहस्यका विश्लेषण करना असंभव होता है। किसी घटनाके पश्चात् अुसके मूल कारणोंका विश्लेषण करना अुतना कठिन नहीं होता। अिसीलिअे संसारमें आजतक जितनी भी क्रान्तियाँ हुअीं, अुनके मूल कारणोंकी परम्परापर अितिहासज्ञोंने सफलतापूर्वक प्रकाश डाला है। विभूतिके निर्माणके पश्चात् अुसे अवतार लेनेके लिअे अनुकूल परिस्थिति पूर्वसे ही प्राप्त थी, यह सिद्ध करना दुष्कर नहीं है। विभूतिका अवतारकार्य विकासका परिणाम है यह मान लेनेपर भी विभूतिके कार्यमें अुसकी अन्तःस्फूर्तिका भी अुतने ही महत्त्वका स्थान है, यह भुलाया नहीं जा सकता। पुष्पके सौंदर्य और सुगन्धका विकास होनेके लिअे सूर्य-प्रकाशके साथ-साथ वृक्षका स्वभाव-धर्म भी महत्त्व रखता है। कुछ विभूतियोंके चरित्रमें अैसे चमत्कार दिखाओ देते हैं कि अुनके कर्तृत्वकी कीमत तत्कालीन परिस्थितियोंमें बिलकुल भी नहीं हो पाती। काल विभूतिका निर्माण करता है अिसी अर्थमें आप-आप यह भी सच है कि विभूति कालका निर्माण करती है। अन्यथा जिसके धर्मको आज आधेसे अधिक संसार मानता है अुस औीसामसीहको सूलीपर चढ़नेका प्रसंग क्यों आता? अिस तरह भगवान बुद्धके धर्मका प्रसार अुनकी जीवितावस्थामें ही सारे भारतमें हुआ, अुसी प्रकार औीसामसीहके धर्मका प्रसार क्यों नहीं हुआ? अिसका मुख्य कारण यह है कि औीसामसीहके लिअे काल अनुकूल नहीं था और अिसीलिअे प्रतिकूल कालके क्रोधका बलिदान बननेका दुस्तर प्रसंग अुनपर आया।

लेकिन कुछ विभूतियोंका काल-निर्माण ही नहीं होता। अनुकूल अथवा प्रतिकूल कालकी चिन्ता अुन्हें होती है जो यश पानेकी अपेक्षा करता है। किन्तु जो *निराशासे तनिक भी भयभीत नहीं होते*, वे अपने कार्यको पूरा किये बिना नहीं रहते, चाहे परिस्थिति अनुकूल हो अथवा प्रतिकूल। फिर वह कार्य कितना निष्काम होता है अुतना ही निष्फल सिद्ध हुआ, तो भी अुन्हें परवाह नहीं रहती। अैसी ही विभूतियोंको हम "ध्येयवादी" कहते हैं। जिस प्रकार अुनके कार्यको अनुकूल कालकी अपेक्षा नहीं होती, अुसी तरह काल भी अुनके कार्यको सीमित नहीं कर पाता। विनाश कालका नियम है। फिर भी ध्येयवादी विभूतिका-कार्य अविनाशी होता है। अुसे अैतिहासिक स्वरूप प्राप्त नहीं होता। शास्त्रज्ञोंके सिद्धान्त विनाशी होते हैं। संशोधनात्मक प्रगतिके नये सिद्धान्तोंकी प्रस्थापना होते ही प्राचीन सिद्धान्तोंका केवल अैतिहासिक महत्त्व शेष रह जाता है। शास्त्रज्ञोंके मानवीय अनुभवोंके आधार-पर निर्मित सिद्धान्त मनुष्य शरीरके समान ही मर्त्य होते हैं। मनुष्यकी आत्मा जिस प्रकार बारबार अनेक देह धारण करती है, अुसी प्रकार अिन अनुभवात्मक सिद्धान्तोंको सदा नये रूप धारण करने पड़ते हैं। परन्तु जिस ज्ञानका अुदय अन्तःस्फूर्तिसे सम्बन्ध रखता है अुसपर विनाशकारी अथवा विकासात्मक सिद्धान्तोंका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता।

संसारके ज्ञान-भण्डारकी अुन्नति अनुभव अेवं अन्तःस्फूर्तिसे हुअी है। अिस आधारपर हम मानव-जातिके प्रवर्तकोंको दो भागोंमें बाँट सकते हैं। डॉर्विन, रामदास, मोरोपन्त, लॉक, मिल अित्यादि प्रवर्तकोंने अनुभवके आधारपर अुपदेश किये। अुनके साहित्य और

तत्त्वज्ञानमें अन्तःस्फूर्तिसे सम्बन्धित जीवनका अत्यन्त कम स्थान है। साक्रेटीस, अीसामसीह, तुकाराम, मेझिनी अित्यादि प्रवर्तकोंके सिद्धान्तोंमें हमें अन्तःस्फूर्तिसे प्रेरित जीवनका प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखायी देता है। अुनके साहित्य अेवं तत्त्वज्ञानके भण्डारसे मानव जातिको स्फूर्ति और अुत्साह मिलता है। चूँकि ध्येयवादी आन्तरिक प्रेरणासे बोलते हैं अुनका कार्य स्वयंस्फूर्त होता है, समाज अुनके तत्त्वज्ञानको शीघ्र मान्यता नहीं देता। कोअी भी नये विचार ग्रहण करते समय समाज अुनके विरुद्ध आवाज अुठाता है, मनुष्य स्वभाव अितना दुराराध्य अेवं दुरभिमानी होता है कि अुसे अनुभवजनक साहसकी बात समझानेपर भी सरलतासे मान्य नहीं होती। अैसी बात कहनेवाला ही समाजकी दृष्टिमें मूर्ख सिद्ध होता है। जीवनके चार दिन सुखसे बितानेके विचारको त्यागकर विचार करनेकी झंझटमें कौन पड़ेगा। सत्ताधारी अेवं सुख-लोलुपताके पीछे दौड़नेवाले लोगोंके विचारकोंके प्रति व्यक्त होनेवाले रूपको शेक्सपियरने अत्यन्त मार्मिक शब्दोंमें व्यक्त किया है "He thinks too much: Such men are dangerous" अिनायाक गुरुदासने मेझिनीके पितासे कहा था कि "तुम्हारा पुत्र रात-बेरात अकेला विचार करते हुअे भटकता रहता है। यह लक्षण ठीक नहीं। अिस अवस्थामें वह किस बातका अितना विचार करता है? जवान लड़केका अिस तरह गलत विचारोंमें अुलझे रहना अुचित नहीं।"

ध्येयवादी विभूतियोंके प्रति समाजका दृष्टिकोण सामान्यतः अिसी प्रकारका होता है। आदिकालसे समाजके सत्ताधारी वर्ग और ध्येयवादियोंके बीच संघर्ष रहा है। यद्यपि अिस संघर्षका अन्तर अुत्तरोत्तर कम होता जा रहा है। तथापि अीसामसीहको सूलीपर चढ़ानेकी या सुकरातको [illegible] समाजने दर्शायी वह आज सर्वथा लुप्त हो गयी है अैसा नहीं कहा जा सकता। साम्राज्यवादी राष्ट्रों द्वारा क्रान्तिकारियोंके साथ जो बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया जाता है अुसमें क्रूरताकी मात्रा कम है, यह कौन कहेगा? सामान्य क्रान्तिकारीको केवल सत्ताधारी वर्गसे ही लोहा लेना पड़ता है, परन्तु जिस लोगोंके विचारोंमें ही क्रान्ति अुत्पन्न करता है अुसे दबानेके लिअे समाजकी सारी शक्तियाँ प्रतिकार करती हैं।

अिस सामाजिक विरोधसे टक्कर लेनेके लिअे मनकी जिस तैयारीकी आवश्यकता होती है अुसे ही 'वीरवृत्ति' कहते हैं। केवल शौर्य ही वीरवृत्ति नहीं है। संसारमें कितने राज्यसंस्थापक अथवा विद्रोही हुअे अुनमें शौर्य अवश्य था, परन्तु केवल अुसीसे अुन्हें 'वीर' (Hero) कौन कहेगा? पानीकी अधिकतासे ही यदि पवित्रता आ जाती तो किसी भी प्रचण्ड जलाशयको पवित्र कहा जा सकता था। साहसी वृत्तिका विशुद्ध तेज जिसमें आविर्भूत होता है, अुसीको वीर कहते हैं। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक वीर ध्येयवादी हो। गॅरिबाल्डी वीर होते हुअे भी ध्येयवादी नहीं था। लेकिन ध्येयवादीमें वीरवृत्तिके अुत्कर्षकी मात्रा अधिक दिखायी देती है। अितना ही नहीं, अुसमें तो तत्त्वज्ञ और कविके स्वभावधर्म अेवं आत्मीय गुणोंका भी समावेश रहता है। तत्त्वज्ञ सत्यका साक्षात्कार पानेके लिअे तपस्या करता है, वीर स्वतन्त्रता प्राप्तिके लिअे मरता है और कविकी प्रतिभाको सौंदर्य दर्शनका भूत सवार रहता है। तत्त्वज्ञका सत्य संशोधनात्मक प्रयत्नका परिणाम मानव जातिके लिअे भले ही अुपयुक्त और कल्याणप्रद सिद्ध हो परन्तु मूलतः वह आत्मनिष्ठ ही रहता है। वीरकी स्वतन्त्रता भक्ति अुत्कट होनेपर भी अुसमें सत्यका होना आवश्यक नहीं है। सौंदर्य-संस्कार ग्रहण करनेके लिअे जिस सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृष्टिकी आवश्यकता होती है, प्रायः कविमें वह पूर्णरूपेण नहीं पायी जाती। कविपर सौंदर्य-दर्शनका भूत अितना सवार होता है कि वह सत्यासत्यका अन्तर ठीक तरह नहीं परख पाता। बर्नार्ड शॉके मतानुसार कविमें केवल सौंदर्य-संवर्धन करने योग्य ही सद्विवेक रहता है। अुनके नाटक "The Doctors Dilemma" में चित्रकारका चरित्र चित्रण भी कविकी मनोभूमिका प्रकाश डालता है। 'दर्शी'के समान सौंदर्यासक्त कवि विरला ही होगा।

जिस प्रकार सत्यनिष्ठा कल्याणप्रद होनेके साथ-साथ कठोर भी होती है, अुसी प्रकार सौंदर्यका भूत भी आनन्ददायक होनेके साथ-साथ अुन्मादक होता है अन्यथा 'गेटे' अेव 'आस्कर वाअिल्ड' जैसे प्रतिभाशाली कवियोंके नैतिक-पतनका क्या कारण था? आस्कर वाअिल्डके मतानुसार "No artist has ethical sympathies" "कलाकारको नैतिक भावनाअें नहीं होतीं" के सिद्धान्तको सत्य मानना अनुचित नहीं होगा।

लेकिन ध्येयवादी जितना सत्यनिष्ठ, अुतना ही सौंदर्योपासक, अेव जितना सौंदर्योपासक अुतना ही स्वतन्त्रता भक्त होता है। ध्येयवादीका यह सिद्धान्त है कि सत्यके बिना सौंदर्य और सौंदर्यके बिना स्वतन्त्रताका मूल्य नहीं आँका जा सकता। स्वतन्त्रता साधन मात्र है, साध्य नहीं सत्यका संरक्षण और सौंदर्यका संवर्धन करना स्वतन्त्रताका ध्येय है तथा जबतक व्यक्ति और राष्ट्रको स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती तबतक वह अिस ध्येयको प्राप्त नहीं कर सकता। अिसी भावना अेव श्रद्धाके कारण वह स्वतन्त्रता प्राप्तिके लिअे आत्मसमर्पण करता है। राष्ट्रकी स्वतन्त्रताके लिअे संघर्ष करनेवाले वीर और ध्येयवादीमें यही मुख्य अन्तर है। मेजिनी और गरिबाल्डीके चरित्रमें यह अन्तर स्पष्ट रूपसे व्यक्त हुआ है। व्यक्ति-स्वार्थ तो अुनमें सर्वथा लुप्त ही रहता है। परन्तु राष्ट्रीय स्वार्थकी भावना भी अुसे सहन नहीं होती, क्योंकि मानवताके व्यापक दृष्टि-कोणसे अुसका ध्येय ओतप्रोत रहता है। अिटलीकी स्वतन्त्रता प्राप्तिके लिअे मेजिनीने जितना संघर्ष किया वह किसलिअे? केवल अिटलीकी स्वतन्त्रता वह नहीं चाहता था, अपितु 'रोम सारे संसारको स्वतन्त्र करेगा" यही अुसकी श्रद्धा थी और अिसी श्रद्धाके आधारपर अुसके विश्वात्मक राष्ट्रधर्मका अधिष्ठान हुआ। लेकिन तत्कालीन देशभक्तोंने मेजिनीके ध्येयवादके प्रति विशेष आदर व्यक्त नहीं किया। लोगोंने अुसे मूर्ख भी कहा। परन्तु अिस कारण मेजिनीकी योग्यताके बारेमें किसे सन्देह होगा? आकाशमें भ्रमण करनेवाला गरुड भव्य होनेपर भी पृथ्वीके लोगोंको छोटा ही दिखायी देता है और आकाशमें भ्रमण करनेके बाद अुसे आश्रय लेनेके लिअे भूतलपर ही आना पडेगा यह भी वह भलीभाँति जानता है। लेकिन गरुड आश्रय लेनेके लिअे नीचे अुतरनेपर भी हिमालयके रजत-शिखरोंपर ही आश्रय लेता है। वह पृथ्वीके वृक्षोंकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देता। यह बात दुनियादारों अेव देशभक्तोंमें नहीं पायी जाती, लेकिन ध्येयवादी-व्यवहारी भूतलपर आनेके बाद व्यवहारको भी विशुद्ध स्वरूप प्रदान करता है। अिस दृष्टिसे अिंग्लैंडके परम्परागत साम्राज्यकी अपेक्षा रोमकी सत्ताधारी शक्तिसे पतनका अितिहास अधिक महत्व रखता है। अिसका मुख्य कारण है, सम्भवासम्भवके विचारोंमें डूबी मानवीय बुद्धिको अैतिहासिक अनुभवोंके आधारपर ही अपने अुद्धारकी आशा रहती है। मेजिनीका ध्येयवाद तत्कालीन समाजको मूर्खपना प्रतीत हुआ, परन्तु अुसका विश्वात्मक राष्ट्र धर्म आज समाजवादके विकसित रूपमें पूरे संसारने मान्य किया है। यह तो संसारका नियम है कि आज हम जिसे असम्भव मानकर अुपहासकी दृष्टिसे देखते हैं कल अुसे ही अभिमानपूर्वक ग्रहण करते हैं। लेकिन यदि ध्येयवादी सम्भवासम्भवके चक्करमें पडकर संशयात्मक परिस्थितिका शिकार हुआ तो मानव-जातिका अुद्धार होना कठिन ही प्रतीत होता है।

संभवासंभवका विचार स्वार्थकी अुपज है। जिसे केवल यश पानेकी लालसा होती है, अुसकी बुद्धि संभवासंभवके विचारोंसे बारम्बार कुंठित होती है। लेकिन ध्येयवादीकी अपेक्षाअें कुछ भिन्न प्रकारकी होती हैं। वह अनुकूल कालकी बाट नहीं जोहता। वह अन्तःस्फूर्ति अेव आन्तरिक प्रेरणासे कार्य करता है फिर चाहे अुसे यश मिले अथवा न मिले, अुसकी अवज्ञा हो अथवा अनादर हो, वह अपने विचार व्यक्त किये बिना नहीं रहता और अिसीमें अुसकी अलौकिकता निहित है। विचारसमाधिमें बुद्धि नष्ट होनेके पश्चात अुसकी आँखोंके सामने अेक विशेष प्रकारकी स्वप्नसृष्टिका विकास होता है और अिसलिअे अुसे "द्रष्टा"(Seer)

कहते हैं । तत्वशोधी दृष्टि भूतकालीन अनुभवोंके रहस्यका अनुसन्धान करती है । देशभक्तका दृष्टिकोण वर्तमानके आगेकी बात नहीं सोचता । लेकिन ध्येयवादी सदैव मानवजातिके अुत्कर्षके स्वप्न देखता है और वह अुन स्वप्नोंको व्यक्त करनेका साहसभी करता है । यही कारण है कि लोग अुसे "भविष्यवादी" (Prophet) कहते हैं । परन्तु अिस भविष्य-वचनके लिये अुसे कितनी यातनाअें सहनी पड़ती हैं ? लोगोंका अैसा प्राचीन मत है कि यज्ञ किये बिना सामर्थ्य प्राप्त नहीं होती । जिस ध्येयके कारण मानवको पवित्रता अेवं पूर्णता प्राप्त नहीं होती, क्या वहभी यज्ञपरही अवलम्बित है ? अन्यथा मेजिनीके समान राष्ट्रधर्मके प्रवर्तकको जन्मभर 'देश-निकाला' क्यों सहना पड़ा और ओीसामसीहु जैसे विश्व-धर्मके प्रवर्तकको सूलीपर चढ़नेकी बारी क्यों आयी ? अखिल मानवजातिके अुद्धारके लिअे अकेले ओीसामसीहुको आत्मयज्ञ करना पड़ा जिसका क्या अर्थ है ? गांधीजीका वर्णन करते समयभी रवीन्द्रनाथको यज्ञकी ही अुपमा सूझी थी । संसारमें आजतक जितनेभी ध्येयवादी हैं अुनके चरित्र अवलोकन करनेपर हमें यही लगता है कि हमने "नरयज्ञका" त्याग नहीं किया है । लेकिन अुसके लिअे दोषी किसे कहा जा सकता है ? क्योंकि स्वयं भगवानने कहा है कि यज्ञ किये बिना जग-धारणा निर्माण नहीं हो सकती ।

मराठीसे अनुवादकः—श्री वसु व्यास "अनल"

[नागपुर

गीत

: श्री नीरज :

आज न कोअी दूर न कोअी पास है
फिर भी जाने क्यों मन आज अुदास है ।

आज न सूनापन भी मुझसे बोलता
पात न पीपल पर भी कोअी डोलता,
ठिठका सा है वायु, थका सा नीर है,
सहमी-सहमी रात, चाँद गम्भीर है,
गुपचुप धरती, गुमसुम सब आकाश है ।
फिर भी जाने क्यों मन आज अुदास है ।।

आज शामको झरी नहीं कोअी कली,
आज अंधेरी नहीं रही कोअी गली,
आज न कोअी पन्थी भटका राहमें,
जला पपीहा आज न प्रियकी चाहमें,
आज नहीं पतझार, नहीं मधुमास है ।
फिर भी जाने क्यों मन आज अुदास है ।।

आज अधूरा गीत न कोअी रह गया,
चुभनेवाली बात न कोअी कह गया,
मिलकर कोअी मीत आज छूटा नहीं
जुड़कर कोअी स्वप्न आज टूटा नहीं,
आज न कोअी दर्द न कोअी प्यास है ।
फिर भी जाने क्यों मन आज अुदास है ।।

आज घुमड़कर बादल छाया है कहीं
बिना बुलाये सावन आया है कहीं,
किसी अधजले विकल शलभकी याद में
आज किसीने दीप जलाया है कहीं
अिसीलिअे शायद मन आज अुदास है ।
जब कि न कोअी दूर न कोअी पास है ।।

[कानपुर

गोंडोंका अितिहास

: श्री प्रभाकर माचवे, अेम. अे. :

गोड राजाओंका अितिहास कहीं भी कमबद्ध नहीं मिलता। बिशप, चैटरटन विल्स आदि लोगोंने जनश्रुति और दन्तकथाओंके आधारपर कुछ लिखनेका यत्न किया है। अुन्हींके आधारपर पता चलता है कि गढाके राजघरानेका मूल पुरुष जदुराय था। गोदावरीके किनारे किसी गाँवके पटेलका लडका था। शायद देवगिरीके यादवोंमेंसे यह अेक हो। गढामें राज्यस्थापना होनेसे पहले अिस भागमें कलचुरी नामके राजा हुअे हैं। अुन्हींका जदुराय नौकर था। नागदेव नामके गोड राजाकी लडकीसे अुसकी शादी हुअी। और बादमें सुरभि पाठक नामके ब्राह्मण मंत्रीकी सहायतासे अुसने गढामें राज्य स्थापित किया। अुसके संबंधमें यह दंतकथा प्रचलित है कि वह अपने स्वामीके साथ अमरकटकमें देवदर्शनके लिअे जाया करता था। रास्तेमें अेक रातको मालिकके डेरेके बाहर जब पहरा दे रहा था, तब दो गोड पुरुष और अेक स्त्री और अुनके पीछे अेक बंदर जदुरायके सामनेसे गये। बंदरने जदुरायके मुँहकी ओर देखकर कुछ मोरके पंख वहाँ डाले और चला गया। जदुरायका पहरा समाप्त होते ही वह वहीं सो गया। नींदमें नर्मदामाओने अुसे दर्शन दिये और कहा कि तुमने जिन्हें देखा वे साधारण आदमी नहीं थे। वे राम सीता और लछमन थे। अुनके पीछे हनुमान जा रहे थे। मयूर पंखका अर्थ यह है कि तुम्हें शीघ्र ही राज्यपद मिलनेवाला है। तू अब रामनगरमें जा और वहाँ सुरभी पाठक नामक ब्राह्मणको अपना गुरु बना। जदुरायने वैसा ही किया। नर्मदा नदीमें सत्कर्म छोडा कि 'मैं राजा बनूंगा तब तुम्हें प्रधान बना दूंगा।' गढाके गोड राजाके अुस समय पुत्र नहीं था। तब अुसने यह युक्ति की कि नर्मदाके किनारे सब लोगोंको जमाकर अेक पालतू मैना अिस अुद्देश्यसे अुडा दी कि 'वह जिसके सिरपर जा बैठे वही राजा होगा।' वह मैना जदुरायके सिरपर ही बैठी।

पहले गोड राजा अपने नामके पीछे राजपूतपन दिखानेके लिअे 'सिंह' पदवी लगाते थे। बादमें मुसलमानोंके प्रभावसे 'शाह' लगाने लगे। जदुरायके बाद संग्रामशाह हुआ। अिस राजाने अपना राज्य बहुत बढाया। गढाके पश्चिममें ४०-५० कोसपर अुसने चौरागढ* नामका किला बनाया। दो अूँची मजबूत पहाडियोंपर यह किला है और अुसपर पानीकी बडी रसदका प्रबंध है। अिसके बाद करीब १५०० ओस्वीमें दलपतशाहने राज किया। यह संग्रामशाहका लडका था। महोबाके चंदेल राजाकी सुन्दर लडकी दुर्गावतीके लिअे गोड राजाने माँग की। कहते हैं कि दुर्गावतीने दलपतके पास गुप्त संदेश भेजा और तलवारके जोरपर अुसे जीतनेका प्रस्ताव रखा। दलपतने गोड फौजके सहारे अपने भावी ससुरपर हमला किया और अुन्हें हराया। अिन दोनोंकी शादीके चार बरस बाद ही रानी दुर्गावती विधवा हो गयी। अपने लडके वीरनारायणके भरोसे रानी दुर्गावतीने बडी हिम्मतसे राज चलाया। बहुतसे जनहितके काम किये—तालाब, किले, नहरोंका निर्माण किया। अकबरके सूबेदार आसफखांने माणिकपुरमें दुर्गावतीकी सुंदरताकी तारीफ सुनी थी। अुसने अिसके राज्यपर हमला किया। सिंगोरगढमें अपनी गोड सेना जमा करके रानीने आसफखांका मुकाबला किया, वहाँ अुनकी पराजय हुअी। गढामंडलामें फिर लडाअी हुअी। अेक स्थानपर जब पीछे नदी पूरपर थी और सामने आसफखांकी सेना थी, तब रानीने विश्वस्त नौकर आधार‡ के हाथों खंजरसे आत्म-घातकर लिया और अपने सतीत्वकी रक्षा की। रानी दुर्गावतीके नामपर "रानी

---

*यह चौरागड सम्भवत पचमढ़ीके निकटवाला स्थान होगा। —सं.

‡ आधारसिंह रानी दुर्गावतीके मंत्री थे। अुनके नामका आधार ताल जबलपुरमें है। —सं.

सात' जबलपुर और गढ़ाके बीचमें है।

रानीके पुत्र वीरनारायणको गोंड लोग नरसिंह-पुरको ले गये। वहाँ भी आसफ़खाँने पीछा किया। तब अिस बहादुर लड़केने अकेले लड़कर प्राण दिये। चौरागढ़में 'जोहर' हुआ, अुस आगमेंसे रानी दुर्गावतीकी बहिन कमलावती और वीर नारायणकी भावी वधू पुरागढ़के राजाकी लड़की भाग निकली। गढ़ा और चौरागढ़की लूटमें आसफ़खाँको अेक हजार हाथी और अनगिनती खजाना तथा जवाहिरात मिले। अिनमेंसे सिर्फ़ ३०० हाथी अुसने अकबरको भेजे। बादमें अकबरको जब सच्चा पता चला तब आसफ़खाँपर अुसका विश्वास नहीं रहा। अिसी समय गढ़ामें गोंडोंका घराना प्रायः नष्ट हो गया। वीर नारायणका चाचा चन्द्रशाह अकबरका मंडलीक बनाया गया। परन्तु भोपालकी ओरका बहुत-सा हिस्सा अुससे छीन लिया गया था। अिससे गढ़ा-मंडलाकी सत्ता बहुत कम हो गयी। चन्द्रशाहके भाअी मधुकरशाहने अुसे मार डाला और खुद राजगद्दीपर बैठा। परन्तु बादमें मधुकरको भाअीकी हत्याका अितना पछतावा हुआ कि वह अेक सूखे पीपलके पेड़की खोखलमें जाकर बैठा और अपने हाथोंसे अुस पेड़को आग लगा दी। मधुकरका लड़का प्रेमशाह जो मुगलोंके दरबारमें अपने लड़के हिरदेशाहके साथ था, अपने बापके राजको सभालने आया। पर वीरसिंहदेव बुन्देलेके लड़के झुझार-सिंहने अुसपर हमला कर दिया। कहीं अैसा भी कहा गया है कि प्रेमशाह मुगल दरबार छोड़कर जो चला तो अुसने वीरसिंहदेवके प्रति आदर व्यक्त नहीं किया। अिसलिअे मरते समय वीरसिंहने अुसपर बदला लेनेके लिअे लड़केसे वचन ले लिया। झुंझारसिंहने प्रेमशाहके किलेको घेरा डाल दिया। बहुत दिनोंतक जब घेरा नहीं अुठा, तब अुसने कपटसे सधिके लिअे प्रेमशाहको बुलाकर अुसे और अुसके मंत्री जयदेव वाजपेयीको मार डाला। प्रेमशाहका लड़का हिरदेशाह दिल्लीमें था, वह गुप्त रूपसे वहाँ आया। अपनी पुरानी दाअीकी मारफ़त अुसने छिपा हुआ पिताका खजाना हथियाया और शाहजहाँसे भोपालके सूबेदारकी मारफ़त संबंध जोड़ा। शाहजहाँने झुझारके लिअे यह फ़रमान जारी किया कि अुसके मंडलीक गढ़ाके राजाको अुसने क्यों मारा और राज्य कैसे ले लिया। अिसके बदलेमें वह राज्य और १० लाख रुपये दिल्ली भेजे। झुझारने अपने लड़के विक्रमाजीतको बालाघाटसे बुला लिया। खाँ जमानके साथ अुसकी बड़ी लड़ाअी हुअी और विक्रमाजीत बड़ी मुश्किलसे आ मिला। बादशाह-नामेमें आगकी बातें यों दी हैं—

शाहजहाँने 'सुंदर कबराय' नामका आदमी झुंझारके पास भेजा और अुसे निम्न संधिकी शर्तें बतायीं —(१) झुझार आगराके अिलाकेका अेक हिस्सा बादशाहको दे। (२) अुसके बदलेमें झुझार गोंडोंके राज्यका चौरागढ़ और नीचेका प्रदेश ले। (३) चौरागढ़की लूटमेंसे तीन लाख रुपये बादशाहको दे। (४) झुंझार खुद खाँजमानके साथ बल्हाड (वरार-विदर्भ) में सेनासहित जाअे। (५) अुसके पुत्र विक्रमाजीतको मुगल दरबारमें रखा जाअे।'

लेखककी अप्रकाशित पुस्तक 'गोंडोंके देशमें' का अेक अंश।

[नागपुर

"गीता" की वैज्ञानिक दृष्टि और वैज्ञानिक

: श्री प्रो० कन्हैयालाल सहल, अेम. अे. :

गीताके प्रथम अध्यायको पहले में अितना महत्व नहीं देता था किन्तु आज मुझे लगता है कि गीताकी मूल समस्याको समझनेके लिअे यह अध्याय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अर्जुन जैसे प्रसिद्ध योद्धाके हाथसे गाडीव छूट जाता है और अुसका मस्तिष्क चक्कर खाने लगता है। प्रश्न यह है कि क्या अर्जुन कौरवोंकी विशाल वाहिनीको देखकर भयभीत हो गया था? अर्जुन जैसे धनुर्धारीके सम्बन्धमें यह शंका नहीं की जा सकती। अुसने पहले भी बहुत से युद्ध लडे थे, आज वह क्यों युद्धसे पराङ्मुख हो रहा है? आज वह युद्धकी हानियोंका अितना विस्तारपूर्ण वर्णन क्यों कर रहा है? यहाँ यह अुल्लेखनीय है कि गीताके प्रथम अध्यायमें जितने थोडे शब्दोंमें युद्धकी अधिक से-अधिक हानियाँ दिखलायी गयी हैं, वे शायद ही अिस रूपमें अन्यत्र देखनेको मिल सकें। अिसका मुख्य कारण यह है कि अर्जुन अपने सबधियोंको मारना नहीं चाहता। अपने ही चचा, मामा-भतीजो आदिकी हत्या वह कैसे कर डाले? अुसने अिस बातको साफ स्वीकार किया भी है। "स्वजन हि कथं हत्वा सुखिन स्याम माधव?" यदि अनर्जुको किसी अन्य शत्रुसे मुकाबला करनेके लिअे भेजा जाता तो वह अवश्य बडे हर्षपूर्वक युद्ध करनेके लिअे चला जाता, अुसपर रणोन्माद छा जाता, हर्षसे अुसकी छाती फूल जाती। तब वह युद्धकी बुराअियोंका अुपदेश भी किसीको नहीं देता। वस्तुतः हमारा हृदय जो चाहता है, अुसीका समर्थन हम करने लगते हैं। हृदयकी अदम्य अिच्छाके सामने बुद्धिका कुछ वश नहीं चलता, वह हाँमें हाँ मिलाने लगती है। 'कामायनी'के सुप्रसिद्ध कवि श्री जयशंकरप्रसादने अिस मनोवैज्ञानिक तथ्यको भली भाँति प्रकट किया है—

"बन जाता सिद्धान्त प्रथम फिर,
पुष्टि हुआ करती है।
बुद्धि अुसी ऋणको सबसे ले,
सदा भरा करती है।
मन जब निश्चित सा कर लेता,
कोअी मत है अपना।
बुद्धि-दैव-बलसे प्रमाणका,
सतत निरखता सपना।।"

अर्जुनके मनने निश्चित-सा कर लिया था कि स्वजनोंसे युद्ध नहीं करना चाहिअे। बुद्धिने युद्धके विरुद्ध अनेक प्रमाण अुपस्थितकर युद्धकी सदोषता दिखला दी। हम भी प्रायः यही किया करते हैं। अिस तथ्यकी सम्यक् प्रतीतिके लिअे कुछ अुदाहरण लीजिअे —

१. बनारस विश्व-परिषद्में सम्मिलित होनेके लिअे हम लोग बनारस गये थे। अेक स्टेशनपर मैंने देखा, गाडी आनेमें विशेष देर नहीं थी। यात्री पंक्तिबद्ध खडे थे और प्रतिक्षण खिडकीके खुलनेकी आवाजकी प्रतीक्षा कर रहे थे। खिडकी खुली किन्तु टिकिट बाँटनेवाला बाबू अपने अेक मित्रसे बातचीत करनेमें संलग्न था। मित्रको वह बतला रहा था कि मेरी पत्नीकी बहिन बहुत अच्छा गाती है, रेडियो-वालोंकी ओरसे भी अुसे निमंत्रण मिलते हैं और अुसकी सुमधुर आवाजका तो क्या कहना! अेक यात्री धीरे-धीरे गुर्राया, कहने लगा, अिस स्टेशन मास्टरको गोलीसे अुडा दिया जाअे तो कितना अच्छा रहे। यह नहीं देखता गाडी आनेवाली है, यात्री जाडेसे ठिठुर रहे हैं और अिसे अपनी पत्नीकी बहिन और रेडियोकी पडी है। जहन्नुममें जाअे अुसकी बहिन और अुसका रेडियो!!

सयोगसे अेक क्षणके लिअे आप कल्पना कीजिअे कि यदि यही स्टेशन-मास्टर अपनी वृद्ध माताको लेकर यात्राके लिअे निकले और अुसको भी हड्डियाँ तकको कँपा देनेवाले शीतमें टिकटके लिअे पंक्तिबद्ध खडा होकर प्रतीक्षा करनी पडे और वह टिकट बाबूको अिसी

प्रकारकी घरेलू बातोंमें रस लेता हुआ देखे, तो अुसी सामान्य मुसाफिरकी सी प्रतिक्रिया क्या अुसके मनम नहीं अुत्पन्न हो जाअेगी ? किन्तु ज्योंही वह अपनी कुर्सीपर बैठेगा, सोचने लगेगा, दिनमें न जाने कितनी गाडियाँ आती हैं, मैं मुसाफिरोंका कहाँतक ध्यान रखूं, अैसा करूँ तो मेरा तो मरण हो जाअे।

२ अेक बार अेक सज्जन जो मुझसे बिल्कुल अपरिचित थे, सपत्नीक मेरे यहाँ आये। कहने लगे-देखिअे, 'अिनको' पढानेमें मैंने क्या नहीं किया, ट्यूशनोंकी व्यवस्था की, घरका काम छुडाया" किन्तु अब नौका मझधारमें है। आप ही अिस नौकाको पार लगा सकते हैं। फिर बोले स्त्री शिक्षाका तो हमारे देशमें वैसे भी अभाव है, आप जैसे विद्वान यदि सहारा नहीं लगाअेंगे तो कैसे पार पडेगा ? वे चाहते थे कि मैं अुन्हींकी अुपस्थितिमें अुक्त महिलाको अुत्तर पुस्तक निकालकर अुन्हें मुक्तहस्त होकर अंक दे दूँ। मैंने मन ही मन कहा "अब मैं तोहि जान्यो संसार।" "कामी स्वना पश्यति।" "सर्वं स्वार्थं समीहते।"

३ अेक न्यायाधीश थे जिन्होंने अनेकाधिक बार फाँसीकी सजा सुनायी थी। अेक दिन अुनका लडका ही अैसा अपराध कर बैठा जिसकी सजा सिवाय फाँसीके और कुछ नहीं हो सकती थी। किन्तु न्यायाधीश सोचने लगे, यह फाँसी कोअी अच्छी चीज नहीं, जिससे न समाजका भला होता है न अपराधीका। फाँसीके बदले कोअी दूसरी सजाका आविर्भाव किया जाना चाहिअे। न्यायाधीशकी युक्तियाँ चाहे युक्तियुक्त हों किन्तु अुनके चित्तके मोहाविष्ट हो जानेके कारण अुनकी युक्तियाँ पूर्वाग्रहसे दूषित हो गयी थीं।

लेखकी कलेवर-वृद्धिके भयसे अधिक अुदाहरण नहीं दे रहा हूँ। आज हम वैज्ञानिक युगमें रह रहे हैं किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि हमारी नहीं है। जो वैज्ञानिक प्रयोगशालामें बैठकर सत्यका वस्तुगत परीक्षण करते हैं, अुसके साथ प्रयोग करते हैं वे ही वैज्ञानिक लौकिक व्यवहारोंमें अपनी अिस वैज्ञानिक दृष्टिको तिलांजलि दे देते हैं।

व्यावहारिक बुद्धिके पुरुषको *अर्जुनका* दृष्टिकोण बुरा नहीं लगता, कृष्णको बुरा लगा। अर्जुनको भी कुछ लगा हो किन्तु अुसके मनमें चैन नहीं था। अिसीलिअे भगवान व्यासने गीताके *अिस प्रथम अध्यायका* नाम रखा है *"अर्जुन विषाद-योग"*।

याज्ञवल्क्य जब अपना घर छोडकर जाने लगे तो अुन्होंने अपनी दोनों पत्नियोंसे कहा कि मेरे पास जो गोधन आदि है अुसका बँटवारा कर लो। अुनकी *अेक स्त्रीने कहा*—' किंतेन कुर्याम् येना ऽ हं नामृता स्याम्" क्या अिस धनसे मैं अमर हो जाअूँगी। याज्ञवल्क्य ने कहा, अैसा तो नहीं हो सकता। तो अुसने कहा कि अुसे लेकर मैं क्या करूँ जिससे अमरता मुझे न मिले। सभी जानते हैं कि यह शरीर तो अमर नहीं रह सकता। किसी दिन मिट्टीमें मिलही जाअेगा। 'मृत्युवन् निश्चिन' यह तो अंग्रेजी भाषाकी अेक कहावती अुपमा है। वास्तवमें आत्मौपम्य दृष्टिमें अमृतत्व है। सब प्राणियोंको आत्मवत् देखना अथवा साधनाकी अुच्च अवस्थामें आत्माको ही सब प्राणियोंके रूपमें देखना यह दृष्टि कृष्ण अर्जुनको देना चाहते थे। जबतक यह दृष्टि हमें नहीं मिलेगी तबतक न हम सुखसे रह सकेंगे, न हम दूसरोंको सुखसे रहने देंगे।

आजकल "सर्वोदय" जैसा कल्याण-कारी शब्द सुनायी पड रहा है। सर्वोदयका सच्चा अर्थ मैं तो यही समझता हूँ कि "आत्म" और "सर्व" अिन दोनोंके बीचमें जो दीवार है अुसे भेद दिया जाअे, तोड दिया जाअे तो 'आत्म" और "सर्व" के स्वार्थोंमें अेक-रूपता आ जाअेगी। हम अपने मोहके कारण ही अिनको अलग अलग समझ बैठे हैं। गीताके अन्तमें चलकर अर्जुनने स्वीकार किया कि मेरा मोह नष्ट हो गया है और अब मुझे चीजें ठीक ठीक दिखलायी पडने लगी हैं। हम भगवानसे प्रार्थना करें कि हमें भी गीताकी वैज्ञानिक दृष्टि मिले जो आजके वैज्ञानिकोंको भी प्राप्त नहीं।

विनोबा कहते हैं कि वर्तमान युगमें यदि विज्ञानने हिंसाके साथ अपना गठ बंधन किया तो विश्वमें प्रलय अुपस्थित हो जाअेगा किन्तु यदि मानवताके हितको लक्ष्यमें रखकर विज्ञान और अहिंसा दोनों प्रेम-पाशमें

आवद्ध हो गये तो विश्वमें सुख-शान्तिकी स्थापना हो सकती है। पर आज हो क्या रहा है? विश्वके वैज्ञानिक हायड्रोजन बमोंकी सहारक-शक्तिको बढानेमें लगे हैं और अेक देश हायड्रोजनके अुत्पादन और विकासके अर्थ दूसरे देशके साथ प्रतिस्पर्द्धा कर रहा है। यह स्थिति निश्चयही अवाछनीय है, किन्तु प्रश्न यह है कि अिसके लिअे दोषी कौन है? सामान्यत यह कहा जाता है कि अिस विनाशकारी प्रतिस्पर्द्धाके लिअे वैज्ञानिकोंको दोषी नही ठहराया जा सकता। दोषी वे है जो वैज्ञानिक साधनोंका दुरुपयोग करते है। किन्तु थोडा विचार कर देखिअे तो पता चलेगा कि अिसके लिअे स्वय वैज्ञानिकभी कम दोषी नहीं। वैज्ञानिक आखिर क्यों अिन घातक साधनोंका आविष्कार करते हैं? क्यों नही वे दुनियाके दुख दर्दोको दूर करनेमें अपनी प्रतिभाका सदुपयोग करते? आज अिस बातको समझ लेनेकी सबसे अधिक आवश्यकता है कि वैज्ञानिक भी वैज्ञानिक होनेके पहले मनुष्य है, अिसलिअे अच्छा वैज्ञानिक बननेकी अपेक्षा अेक अच्छा मानव बनना अुसका सबसे बडा कर्तव्य है।

यह हमारा दुर्भाग्य है कि बौद्धिकवाद और विज्ञानके अिस युगमें हम मानवताको भूलने लगे है। हमारी बुद्धि तो आवश्यकतासे अधिक विकसित हुअी है किन्तु हमारे दिल छोटे पड गये है, हृदयका समुचित विकास नही हो पा रहा है। यह गहन चिन्ताका विषय है। विज्ञानको आज दर्शनका सहारा लेकर आगे बढना होगा। दर्शनके बिना आज विज्ञान अन्धा हो गया है; अुसे मालूम नही, वह मानवताको किस विनाश-पथकी ओर ले जा रहा है!

गीतामें कहा गया है— 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गति तात गच्छति' अर्थात् "जो कल्याणके मार्गपर आरूढ है, अुनकी कभी दुर्गति नही हो सकती।" वैज्ञानिकोंके लिअे आवश्यक है कि वे आत्म-मन्थन करे, सोचे कि क्या वे कल्याण-मार्गके पथिक है? यदि वैज्ञानिकोंने अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया तो निश्चयही वे भी मानवताके लिअे अभिशाप सिद्ध होंगे।

भौतिक जगत्‌की सचाअीका पता वैज्ञानिक लगाता है जब कि अध्यात्मवादी आध्यात्मिक जगत्‌के रहस्योंका अुद्घाटन करता है। अिस युगके महान् दार्शनिक अरविन्दने कहा था कि केवल भौतिकवादपर ही बल देना अथवा भौतिकवादकी सर्वथा अुपेक्षा कर केवल अध्यात्मवादको ही सर्वस्व मानकर चलना दोनो ही अतिवाद हैं। भूत अध्यात्मकी ओर गतिशील है तो अध्यात्म भूतकी ओर अुन्मुख। आवश्यकता अिस बातकी है कि वैज्ञानिक भी अिस तथ्यको समझें। और अिस तथ्यको वे तभी समझ सकते है जब कि मानवताके महत्त्वको वे हृदयगम करें।

वैज्ञानिकोंका कहना है कि हमारी यह पृथ्वी कभी भयकर ज्वलन्‌पिण्डके रूपमें थी, असख्य वर्षोके अनन्तर यह ठडी हुअी, अिसपर वनस्पतियाँ अुगी। फिर जीवजन्तुओंका आविर्भाव हुआ। और न जाने प्रकृति द्वारा कितने प्रयोग किये जानेपर अिस धरित्रीपर अुन प्राणीकी अवतारणा हुअी जो अपनी मनन-शक्तिके कारण मानव कहलाया। मानव ही अेक अैसा प्राणी है जिसमें विवेक है, सयम है, तपस्या है और जो अपने अकल्पनीय गुणोंके कारण प्रकृतिपर विजयपर विजय प्राप्त करता चला जा रहा है किन्तु आज सबसे बडे आश्चर्यकी बात यह है, मानव ही मानवके लिअे पहेली बन गया है। अिस पहेलीको सुलझाना आजकी बडी भारी समस्या है। समय-समयपर महापुरुष अिस विश्वमें अवतरित होते हैं और अिस गुत्थीको सुलझानेका भरसक प्रयत्न करते है। अिस देशमें गांधी जैसे महामाने अहिंसा और सत्यके साधनों द्वारा अिसी गुत्थीको सुलझानेका प्रयत्न किया था।

क्या विश्वके वैज्ञानिक और राष्ट्रोंके सूत्रधार समय रहते चीत्कार करती हुअी मानवताकी अिस आवाजको सुन सकेंगे?

[पिलानी]

धरतीका बेटा

श्री नन्दकुमार पाठक

जिस दिन करनलके सामनके तीन दांत तोड डाले गये थे अुस दिन भी अुसका दिल नहीं टूटा था। सिर्फ स्वर टूट गया था। दिलमें अेक दरार भर पडकर रह गयी थी। लेकिन जिस दिन अुसका दिल बिल्कुल ही टूट गया और किस्मत भी फूट गयी अुस दिनकी बात कह रहा हूं।

यह करनल आजसे ६ साल पहले तक रावी नदीके किनारे बसे हुअे जडाला नामक गांवका रहने वाला था। किसान था। अुसने अपने सामनेवाले अूपरके तीन दांत सोनेसे मढवा लिये थे। जब देशको दो हिस्सोंमें तराश दिया गया तो प्राण बचानेके लिअे वह भागकर देशके अेक भागसे दूसरे भागमें आ जानेके लिअे मजबूर हो गया। वह अेक भागसे दूसरे भागमें भाग आया। वहां अुसका खेत छूट गया। अुसका घर छूट गया। और सोनेसे मढ़े सामनेके तीन दांत तोडकर वहीं रह जानेवाले रख लिये क्योंकि वह सोना जो अिसके दांतोंमें चिपका दिया गया था, वह अुसी भागका था और अिसलिअे अुसे वहीं रह जाना चाहिअे था। अुसकी जान बख्श दी गयी। सो वह अपनी जान लेकर चला आया। साथमें अपना आठ सालका लडका ले आया। और साथमें आया अुसका दरार पडा हुआ दिल दिमागमें परेशानी गांव छूट जानेका दुख था। परेशानीके कारण माथेपर पड गयी सिलवटोंपर अस्तव्यस्त बाल थे और थी नये जीवनको प्रारम्भ करनेकी व्याकुलता साथमें और कुछ नहीं था।

अपनी जान और मालकी सलामतीके लिअे करनैल अिधर आ गया। अुसके बहुतसारे साथी टिहरी गढ़वालके पार्वत्य अिलाकोंमें जा बसे थे। कोअी घोडे खरीदकर टांगा हांकने लगा था और कोअी भैंसे खरीदकर दूधके व्यापारमें कमाअी करने लगा था। करनल यह सब कुछ नहीं कर सकता था। कुछ दिनों तक रेलगाडियोंमें घूम घूमकर अुसके लडकेने सन्तरेकी गोलियां बेची। लेकिन करनलको यह गवारा नहीं हुआ और वह हरगांवके अेक जमींदारसे आरज़ू मिन्नतकर अुसके घरमें लडकेकी नोकरी लगा दी। वह वहीं परवरिश पाने लगा। और करनलने दूकानसे अुधार माल लेकर रेलगाडियोंमें नीलामकर कुछ पैदा कर लेनेकी तरकीब अपनायी।

जो करनल अपने गांव जडालाकी चांदनी रातोंकी दूधिया झिलमिलमें और सितारोंकी छांहमें अपने खेतोंमें काम करता था वह यहां अपने भाग्यके टूटे नक्षत्रोंकी छांहमें मनुष्योंकी भीडमें अपनी रोजी कमानेका काम करने लगा। जो करनैल अपने खेतोंकी नसोंको टटोलकर अुसकी अुर्वरा शक्ति और आर्द्रताका चतुर अनुभव किया करता था आसमानके और मौसमके बदलते रुखोंकी टोह लिया करता था हल फाल कुदाल बीज और बैलोंकी देख रेख और हिसाबकिताब करता था वह यहां आकर अेक व्यापारी आखेटककी दृष्टिसे देखनेमें चतुर हो गया। वह अुन भोली भाली सूरतोंको ढूढा करता जो अिसके व्यापारमें बरकत दे सकती हों। धरतीको कुरेदकर धन पैदा कर लेनेवाला धरतीका वह बेटा धरतीकी सेवाओंके आवरणसे वंचित होते ही अपने जीवनकी नग्नतामें आने लगा और जब अपनी जबानकी चतुर कचीसे नीलाममें भोले भाले अिन्सानोंकी जेब कतरने लगा अुसे अिन सब बातोंका दुख था और वह यह सब नहीं चाहता था। लेकिन मजबूर था। अुसने योजनाभी बना रखी थी कि वह थोडेही दिनों तक अिस मजबूरीको बरदाश्त करेगा, फिर कहीं न कहीं धरतीका काम करने लग जाअेगा।

जिस प्रकार निर्मम और असह्य परिस्थितियोंकी विवशतामें गुनाह कर बैठनेवाला कानूनके चंगुलमें फँस जानेपर मुक्ति पानेके लिअे कानूनकी कितनीही धाराओं और पैंतरोंमें कुशल बन जाता है, अुसी प्रकार करनैल अपनी निर्मम परिस्थितियोंके गिरफ्तमें आ गया था और अुसके रोजमर्रा जीवनमें आखेटक प्रवृत्तियोंने अपनी जगह बना ली थी। अेक दिन जब किसान अूख बेच कर हरावलसे लौटने लगा तो अुसी डब्बेमें करनैल भी अपना नीलामी माल लेकर चढ़ गया।

वह नीलामका अभिनय करने लगा। "देखिअे बाबूजी यह 'आल्ता'की शीशी है। यह आअीना है। यह कंघी है। और यह अेक सेट ताश है। आप अिन्हें बाजारमें लेने जाअेंगे तो चार रुपयेसे कौड़ी कम नहीं लगेगा। लेकिन मैं अिन्हें सस्तेमें दे दूँगा। जो बोली ज्यादा बोले। पहलेके कम दाम होनेपर कमीशन दूँगा। आप अैसा न समझें कि यह चोरीका माल है। नहीं। यह फैक्टरीका माल है। अिसलिअे सस्ते मूल्यमें दिया जाअेगा। आप भाअी साहबानको, जिसे बोली बोलना हो, बोले। आठ आने, रुपया, दो रुपया।" वह मुस्कराया।

"आठ आने!" मुसाफिरोंकी भीड़मेंसे आवाज आयी।

"यह देखिअे, बाबू साहब चार रुपयेके मालपर आठ आनेकी बोली। अच्छा, आठ आने! चार रुपयेके मालपर बोली आठ आने! आठ आने!!" वह घूम घूमकर बोलने लगा—"आठ आने! आठ आने! आठ आने!" अुनकी आजमाअिशके कारण चिन्तित माथेपरके छितराये अस्त-व्यस्त बाल बल खाकर रह रह जाते थे। चेहरेपर अेक चिन्तातुर कमनीयता आ गयी थी।

"बारह आने!" दूसरे छोरसे आवाज आयी।

वह अुसके स्वरकी छोर पकड़कर बोलने लगा—"बारह आने, अभी बारह आने!"

वह अपने मनचालेपन और स्वरके लोचमें अुन्माद भरकर बोलने लगा।

"अेक रुपया!" आवाज दी गयी।

करनैलने पकड़ लिया—"अेक रुपया! बाबूजी, अेक रुपया!!" टूटे दाँतोंके बीचसे अुसके स्वरका स्पष्ट अुच्चारण खिसलने लगा। लेकिन माथेपरसे बोझ दूर लेनेपर जैसे ढोनेवाला थकावटसे चलता है, वैसे ही अपने अभिनयके लिअे कृत्रिम प्रसन्नताका दम डाले वह थकावटसे बोल जा रहा था। माथेपर पसीनेकी बूँदें छलक आयी थीं। "अेक रुपया! अेक रुपया!"

"सवा रुपया!" अुधरसे आवाज फूटी।

पसीना पोंछते हुअे करनैलने छोर पकड़ ली—"अजी, सवा रुपया! सवा रुपया!" सवा रुपयेपर पहुँच बोलीमें गत्यवरोध हो गया। करनैलके चेहरेपर थकान आ गयी। अुसने लाचारीके स्वरमें कहा—"बाबूजी सवा रुपयामें नहीं पड़ता। यह लीजिअे चार आने कमीशनके।" अुसने पैसे अेक ओर बढ़ाये कि अुस ओरसे गत्यवरोध हट गया। "डेढ़ रुपया।"

करनैलने टेक बदल दिया—"अच्छा बाबूजी, डेढ़ रुपया।" यह बोली अेक तरुण ग्रामीणकी थी जो लखनअूसे अपने गाँव वापस जा रहा था। अुसके मनमें नयी अुमंगका सोरगुल होने लगा था। और वह सोच रहा था कि अिन सब चीजोंको लेकर वह अपनी नयी पत्नीको भेंट करे तो कैसा अच्छा हो! लेकिन अुसके साथीने अुसका मनसूबा मन ही-मन भाँप लिया और आगे बढ़ गया— "दो रुपये!"

करनैलकी थकान दूर हो गयी। वह अुमंगमें स्वर साधने लगा—"दो रुपये, अजी बाबूजी दो रुपये! —दो रुपये!"

पहला साथी अुतावला होकर बोला-"ढाअी रुपये।"

लेकिन दूसरे साथीने रोक लिया—"तीन रुपये।" करनैलने तीन रुपयेमें अेक-दो-तीन कर रुपये जेबमें रख लिये। अुसका मन हरा हो गया।

अब करनैलने अेक साड़ी निकाली। ठेठ पीलापनका रंग लिये। अुसके तहोंको टूट जानेके खतरेसे सावधान होते हुअे अुसे अपने हाथोंमें तौला।

"भाअी साहबान, अब आपके सामने अेक साड़ी पेश कर रहा हूँ।"—धीरे-धीरे अुसके शब्द

आकर्षक होने लगे। "आप साहबान जानते होंगे, मेनका अैसी ही लजीज साडी पहनकर विश्वामित्रके पास आयी थी, जो हवाके झोकोंसे अुड़ अुड़ जाअे, फहरा-फहरा जाअे फिसल-फिसल जाअे।" बड़ी ही आकर्षक और कोमल अदासे साडीकी तह खोलते हुअे बोला—"विश्वामित्रकी आँखें खुलीं कि मेनकाने घूँघट डाल दिया। तब भी आँखें चार! जी हाँ, तब भी आँखें चार।" करनैलने साडीके पर्देको अपने मुँहपर लेकर अुसकी पारदर्शिताका परिचय कराया। "बड़ी-बड़ी दूकानोंमें जाअिअे तो अैसी साडियाँ शीशेकी आलमारियोंके तहखानेमें या नफीस बुतोंके बदनपर नुमाअिशकी गयी मिलेगी। अिसकी कीमत तीस रुपये। जी हाँ। लॉटरीके लाटमें मिली है। बाबूजी जिसे बोलना हो बोली बोले। दस, बीस। जो, जी चाहे।" साडीमें अुसने तहें लगा दीं। कभी-कभी भाअी साहबान कमीशनके लालचमें यों भी बोली बोल देते हैं। आपसे मेरा अर्ज है, अैसा न करें। अगर आपके टेंटमें पैसे हों तो बोली बोलें, वरना खामोश ही रहें।"

"पाँच रुपये।" अुधरसे आवाज आयी।

टूटे दाँतोंके झरोखेके अुसपार करनैलकी जुबान हिलने लगी। "पाँच रुपये।" अुसने अफसोस प्रकट करनेके लिअे कहा—"जी हाँ। तीसके मालपर पाँच रुपये।" अुस बोलनेवालेको अेक दूसरा नवयुवक समझाने लगा,—"अरे, क्या सनक सवार हो गयी तुमपर भी यार? देखते नहीं हो? पाटकी है? अेकबार पानी पड़ेगा तो साडीके रेशे अुसीके साथ धुल जाअेंगे। वह तीन रुपयेमें भी महँगी है, बेवकूफ!"

बर्थपरसे आवाज आयी—"आठ रुपये।"

आखिर सत्रहमें जाकर साडीका अेक दो तीन हुआ। अुसके बाद तेलकी शीशियाँ, टार्चलाअिट, कैंचियाँ, धूपके चश्मे आदिका डाक हुआ। आज करनैलको पर्याप्त आमदनी हुअी। और गाडी सीतापुर आ पहुँची।

सन्ध्या समय बारिश सहसा थम गयी थी। *सन्ध्याके झुटपुटेमेंसे अेक मटियाला अुजाला फूटकर* निकल आया था। गढ़े जहाँ-तहाँ मैंदले पानीकी सतहोंका प्रतिबिम्ब और पश्चिमके आकाशमें थके और निचुड़े हुअे बादलोंकी ओटसे निकलकर फैलता हुआ धुन्द आलोकसे सन्ध्याके आनेका मार्ग दिखलायी देने लगा था। हरगाँव लौट जानेवाली गाडीके *मिलनेमें* अभी देर थी। समय बितानेके लिअे करनैल स्टेशनके *गिर्द घूमने लगा। सामनेके मैदानमें किसी आयोजनका* शोर-गुल और चहल पहल था। *बैल गाडियोंपर गन्ने* लादे रातभर चलकर सीतापुर चीनीके कारखानेमें बेचनेके लिये आअे हुअे किसान बारिशके कारण जो *अिधर-अुधर छिप गये थे, अब खाने-पकानेका आयोजन* करने लगे। अजीब-सी हरकतें। चूल्हे सुलगे। हाँडियाँ चढ़ीं। सिलोंपर मसाले पिसे। धुअें। लपटें। बर्तन। पत्तल। पानी। हर हरकतमें हिसाब-किताब करते जाते थे। कितनी आमदनी हुअी। कितना खर्च हुआ। किस किस सामानमें कितना कितना खर्च। जोड़-घटाव। लकड़ीका दाम। हाँडीका दाम। मसालोंका दाम। चावल-दालका दाम। कभी किसी गानेकी धुन। कभी हँसी-खिलवाड़। कभी अूँचे स्वरकी तीव्र आवाज। चिंतातुर आवाज। परेशान आवाज। करनैल सब देख रहा था। सब सुन रहा था। जमानेकी सड़कपर *जीवनकी दौड़ धूपसे अुड़े गर्दो-गुबारसे ढँका अुसकी स्मृतियोंका ढाँचा, अुभरने लगा।* वह सोचने *लगा*, कभी वह भी धरतीकी पैदावारपर अपनी जिन्दगीकी बातें तोला करता था। लेकिन अब वे दिन बीत गये। नीलाममें बचे मालको अेक ओर रख अेक अधेड़ अुमरके किसानके निकट बैठकर वह अुसके *हिसाब किताबमें* सहायता देने लगा। लेकिन वह सोचता जाता था, किस तरह और क्यों वह धरतीसे अलग हो गया।

करनैल हरगाँवसे सीतापुर अपनी रोजीके कामको लेकर बराबर ही आया जाया करता। लेकिन जब भी यहाँ ठहरा, तो होटलमें ठहरा। होटलमें खाया-पिया। सिनेमामें वक्त गुजारा। भीड़में वक्त गुजारा। कभी कुछ नहीं सोचा। आज भी वह ग्रामीणोंकी भीड़में ही था। वह अुनके आमद खर्चका हिसाब कर रहा था। लेकिन आज अुसका मन अुसके बीते हुअे

जीवनके धुन्धमें भटकने लगा। खाना तैयार हो जानेपर अुसे ग्रामीणोंने बड़े स्वागत-भावसे भोजन कराया। गाड़ीका समय होते ही वह स्टेशनकी ओर चल पड़ा। गाँववाले अपनी गाड़ियाँ जोतकर अपने गाँवको रवाना हो गये।

जैसे अुसके दिमागपर अेक बोझ लद गया। गाड़ीमें अुसकी आँखें अपने शिकारका निशाना साधनेसे अिन्कार करने लगीं। करनैल सोचने लगा—वह अपने अिस पेशेमें क्यों आ गया? और कैसे आ गया? जहाँ पेट भरनेके लिअे शिकार करना पड़े! बेचारे अिन भोले-भाले किसानोंका, जो धरतीकी सेवाकर अुससे धन पैदा करते हैं! करनैल अपने जीवनकी जिस मंजिलपर अभी आ पहुँचा है, वहाँ तक पहुँचनेकी अेक-अेक गतिविधि सोच गया। आज अुसने अितनी बातें बनाना कैसे सीख लिया। घूम-फिरकर वह अिसी निर्णयपर पहुँचा कि जिस दिनसे वह जमीनकी सेवासे, धरती माताकी खिदमतसे जुदा हुआ, अुसी दिनसे अुसका जीवन नंगा होने लगा। बर्बर, आखेटक, नंगा। जिनके लिअे अिस पेशाको अुसने अनिवार्य समझकर शुरू किया था, वह अिस समय अेक विवश यन्त्रणा बन गया था।

वह हरगाँव पहुँचा तो रातके दस भी नहीं बज पाये थे। लेकिन निस्तब्ध सन्नाटेने रातको लपेटकर सुला दिया था। अँधियारेने भी रात्रिको अपने आलिंगनमें भरकर आत्म विस्मृतिमें अपनी लम्बी काली पलकें झुका ली थीं। नीरवता गुनगुना गुनगुनाकर हवामें अेक गुदगुदी पैदा कर रही थी। अभिसारिकाअें या विरहिणियाँ अैसी रातोंमें मादकता या अवसादका रस सुना करती होंगी, किन्तु करनैल अिस अन्धेरी रातमें अपने जीवनके पथकी अेक रेखा ढूँढ़ना चाहता था। अेक सुबहका मुँह देखना चाहता था।

सोचा, क्यों न वह अपने लड़केको भी अपने साथ ही घर ले चले? अितनी अँधेरी रातमें लौटनेमें शायद डर जाअे। वह वैसे ही बोझिल मनसे साथ अुस मालिकके मकानपर गया जहाँ अुसने अपने लड़केकी नौकरी लगा दी थी। मालिकके यहाँ सो जानेका अुपक्रम किया जाने लगा था।

करनैलने विनीत भावसे पूछा—"मितल चला गया क्या, बाबूजी।"

बाबूजीने अन्यमनस्क भावसे कहा—"हाँ, अेक तरहसे चला गया ही समझो।"

"अेक-तरहसे चला गया कैसा? मैं समझा नहीं, बाबूजी।"

"जाओ, आराम करो। खुद ही मालूम हो जाअेगा तो सब कुछ समझमें आ जाअेगा।"

बाबूजीने आजिज हो अुठनेके भावमें जवाब दिया।

"बाबूजी, जब आप अैसा कहते हैं तो मेरे मनमें कअी तरहका शक होने लगा है। अब तो खुद मालूम हो जाने तकका अिन्तजार मुझसे नहीं सहा जाअेगा। क्या बात हो गयी है, बाबूजी?"—करनैल व्यग्र हो अुठा।

बाबूजीके शरीरकी शिराअें हठात् क्षुब्ध हो अुठीं। वे अूँचे स्वरमें बोल अुठे—"तुम्हारा बेटा शैतान है। और क्या पूछते हो? छोटी बीबीजीके गुसलखानेसे अुसने अुनके डेढ़ रुपये अुठा लिये। मैंने अुसे पुलिसके हवाले कर दिया। हम तुम लोगोंका यह सब फ़ितूर बर्दाश्त नहीं कर सकते। अभी वह बच्चा है। अभीसे अुसे सुधारना चाहिअे। नहीं तो भविष्यमें वह भयंकर बदमाश बन सकता है।"—मालिक चुप हो गये।

मितलका समाचार करनैलने सुन लिया। समझ लिया। अुसकी आँखें अंगारोंकी तरह नहीं चमकीं। अेक लौ की तरह झिलमिला गयीं जो अुसके जीवनकी वास्तविकताओंपर सदा ही अेक धुँधला आलोक देती रही है। न मालूम, आज कौन-सा घूँट पीकर वह लौटा था कि जिसने अुसे सुखों और दुखों, दोनों ही के प्रति अुदासीन बना दिया था।

दाँतोंसे ओठ दबा, गलेमें अुमड़ते आँसुओंका घूँट पी गया। अुसपर अेक चुप्पी छा गयी। खामोशी, मुकम्मिल खामोशी। फिर वह सूखे गलेसे बोला—"अच्छा बाबूजी मैं जाता हूँ। आज आपके आशीर्वादसे मुझे कुछ

मिला है। और आपका कुछ नुकसान हो गया। आपने मेरे लड़केको सुधारकर अितने दिनों तक साथ रखा और अब ज्यादा सुधारके लिअ जेल भिजवा दिया। आपका अुपकार भूलने लायक नहीं। मैं अपनी ओरसे आपके परिवारके बच्चोंके लिअ कुछ देना चाहता हूं।' अुसने कुछ नोट कुछ सिक्के और अठन्नियां चवन्नियां और दुअन्नियां चारपाओके पायताने रख दीं। और धीरे धीरे चलने लगा दर्दके विलम्बित राग की तरह।

दरवाजेके अुस पार पहुंचनेके पहले झनककी अक आवाज हुअी तो अुसने घूमकर देख भर लिया नोट सिक्के आदि सभी जमीनपर बिखर पड़े थे। और मालिक अपना पांव समेटे रहे थे।

अभी रातकी स्याही सुबहकी सफेदीके साथ ठीकसे घुलने मिलनेभी नहीं पायी थी। करनलने अपने पड़ोसीको बुलाकर कहा — जानते हो न? मित्तल जेल भेज दिया गया है। अुसने अपने मालिकके डेढ़ रुपये चुरा लिये थे। गरीबोंका सबसे बड़ा कसूर यही है कि वे अपनी अिच्छाओं पूरी करनेकी कोशिश करें। अमीरोंकी सभी चीजें सुन्दर होती हैं। अुनके पापभी सुन्दर होते हैं। लेकिन अब छोड़ो भाओी क्या क्या कहूं? मन सोच समझ लिया है यह सब क्या हो गया? यह सब अुस दिनसे होना शुरू हुआ जिस दिन मुझसे धरतीकी सेवा छूट गयी। धरतीकी सेवासे दूर रहनेसे ही जिन्दगी हैवानकी जिन्दगी बन जाती है। नंगी बबर शिकारी। सो देखो मैं जा रहा हूँ फिरसे खेतीकी सेवामें। और मित्तल जब छूटकर यहाँ आये तो असे कह देना वह टिहरी गढ़वालके अपने रिश्तेदारोंके पास आ जाओ। मैं भी वहीं जा रहा हूं। जानते हो? जहां से भागकर यहाँ आना पड़ा है वहाँभी अिन्सानही रहते हैं। लेकिन फिरभी अक अिन्सानको अिन्सानके डरसे भागना पड़ा। अब यहाँके अिन्सानोंसे भागकर कहां जाओ? अिन्सान अिन्सानोंसे भागकर कहां जा सकेगा? वहाँ मेरे दांत तोड़ डाले गये थे। मेरी जिन्दगीका सिलसिला तोड़ डाला गया था। और यहाँ मेरे बेटेकी जिन्दगीको तोड़ डाला गया। अब मैं नंगा हो गया हूं। फिर जीवनको ढकना होगा।

करनल कटी फसलके खलोंके मेड़ोंपरसे होता हुआ अुस दिशाकी ओर चल पड़ा जिस दिशासे सुबह चली आ रही थी।

[खड़गपुर

अुपन्यास-सम्राट शरद्‌बाबूके जीवनकी झलक

ः स्व० श्री युसुफ मेहरअली ः

शरद् बाबूके साथ मेरी अंतिम भेंट अुनके अन्त-कालके थोडे ही दिन पूर्व हुआी थी। अुस वक्त तो स्वप्नमें भी यह खयाल नहीं था कि मेरे और अुनके बीच यह आखिरी मिलन साबित होगा। अुन दिनों कलकत्तेमें अेक सम्मेलन था। अुसमें सम्मिलित होनेके लिअे शरद् बाबू भी आये थे। सम्मेलन समाप्त होनेपर हम दोनोमें बातचीत शुरू हुआी।

अुन दिनों शरद बाबूका स्वास्थ्य कुछ बहुत अच्छा नहीं रहता था। असलिअे वे जमकर कोआी कार्य नहीं कर सकते थे। डॉक्टरोंकी ओरसे अुन्हें पूर्ण आराम लेनेकी हिदायत भी मिल चुकी थी। लेकिन सतत कार्यमें रत रहनेवाली अुनकी आत्मा भला यह बन्धन कैसे स्वीकार कर सकती थी?

मैंने अुनसे पूछा कि आजकल आप कौनसा साहित्य पढना अधिक पसन्द करते हैं?

"फिलहाल तबीयत ठीक न होनेसे मेरे लिअे लगातार पढना मुश्किल हो गया है।" अुन्होंने जवाब दिया। "फिर भी आजकल मुझे विज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकोंमें अधिक आनन्द आता है।"

'विज्ञान सम्बन्धी!" मैं आश्चर्यसे बोल अुठा। अुनका यह जवाब सुनकर मुझे काफी ताज्जुब हुआ। मैंने कहा, "मेरा तो कोआी और ही खयाल था। शायद आप साहित्य-सम्बन्धी बतायेंगे।"

"सच पूछो तो आपको यह सुनकर अजब मालूम होगा कि अुपन्यास तो आजकल मैं किसी भी हालतमें नहीं पढ सकता।"

"बहुत खूब।" मैं कह अुठा। शरद् बाबू, कल्पना कीजिअे अेक मनुष्य है, जो असंख्य अुपन्यासोंका लेखक है और हजारों लोग जिसके अुपन्यास दिलचस्पीसे पढते हैं, वह खुद अुपन्यास पढना नापसन्द करता है।"

शरद् बाबूके चेहरेपर अेक हलकी-सी मुसकराहट दौड गयी। हमारी बातोंने दूसरा मोड लिया। देशकी राजनीतिके बारेमें अुन्होंने मुझसे अनेक सवाल पूछे। अन्तमें मैंने कहा, "शरद् बाबू, मुझे यह जानकर बडी खुशी हो रही है कि न केवल अिस देशके, बल्कि विश्वके दूसरे श्रेष्ठ साहित्यकारोंकी भाँति आपकी रुचि भी केवल कल्पित विषयों तक ही सीमित नहीं है।"

अुनके मुँहपर सहज अुत्तेजनाका भाव प्रकट हुआ। वे कहने लगे 'मैं तो मानता हूँ कि सच्चा कलाकार कभी सार्वजनिक जीवनसे अलिप्त नहीं रह सकता। कलाकारकी जिम्मेदारी कुछ कम नहीं है। हरेक देशके सुन्दर और सुखी भविष्यके निर्माणका कीमती काम तो अुन-अुन देशोंके साहित्यिकों और शिल्पकोंपर ही निर्भर रहता है न? अपनी आँखोंके सामने खडे कर्तव्यके प्रति अुदासीन रहा जाअे, तो आप कैसे भविष्यकी आशा करेंगे? भारतमाँकी देहपर तो विदेशी शासनकी गुलामीकी बेडी पडी है। तब क्या हमारे देशके आजादीके आन्दोलनको वेग देना हम सबका कर्तव्य नहीं है?"

शरद्‌बाबूके साथ बातें करते हुअे मेरे मनमें क्षण भरके लिअे अेक विचार आया। अिस देशकी दुखी प्रजा और अुसकी अभिलाषाओंके साथ तद्रूप हो जानेमें अिस साहित्य-सम्राट्‌की मान-प्रतिष्ठा और गौरवने अुसके मार्गमें कोआी रुकावट नहीं डाली। अिस देशकी जनताका अेक विशाल समुदाय अुनके प्रति कितने आदर-भावसे देख रहा है। फिर भी अिस वमनशील देशमें पाश्चात्य सम्कृतिके रंगमें रंगे हुअे कुछ अैसे लोग भी होंगे, जो शायद शरद्‌बाबूसे बिलकुल ही अनभिज्ञ हों। दुनियाकी अनेक भाषाओंमें शरद्‌बाबूकी पुस्तकोंके अनुवाद निकल चुके हैं। अुनमेंसे कुछके तो कितनी ही आवृत्तियाँ भी निकल चुकी हैं। जितना ही नहीं, अिनमेंसे कुछ पुस्तकोंने तो साहित्य-जगत्‌में अद्‌भुत कमाल कर दिखाया है।

व्यक्ति शरद्बाबूका जीवन साहित्यकार शरत्बाबूके जीवनके जितना ही रसिक और विविधतासे पूर्ण है। शरदबाबूका जीवन यानी सुख दुख और चित्र विचित्र घटनाओंकी अेक अखण्ड परम्परा है।

सत्ताअीस वर्षकी अुम्रमें शरदबाबू अपने घरको अंतिम नमस्कार करके चल दिये। घूमते घामते और भटकते भटकते अन्तमें वे ब्रह्मदेश पहुंचे। वहां अुनका स्वागत अुनके अेक मौसाने किया। लेकिन शरत्बाबूका भाग्य दो कदम आगे ही रहता था। थोड़े ही दिन बाद अुनके अिस भले मौसाका अवसान हो गया। अिस दारुण परिस्थितिमें अुन्होंने अपनी मौसीका घर त्यागा। फिर वही निरुद्देश्य भटकनेका क्रम शुरू हो गया। भगवान भी अुनको बड़ी कसौटीपर कस रहा था। अिन्हीं दिनों अुन्हें अेक अत्यंत मामूली सी नौकरी पानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। अिसे पानेमें अुनके अपने मधुर कण्ठने बड़ी मदद की। शरदबाबू गाने बजानेमें बड़े कुशल थे। कुछ ही दिनोंमें अुन्होंने अेक अच्छे गायकके रूपमें सबके दिल जीत लिये।

श्री अेम के मित्र नामके अेक बंगाली सज्जन तो शरदबाबूपर अितने मुग्ध हो गये कि अुन्होंने अुन्हें अपने पास ही क्लर्कके रूपमें रख लिया। अितने कष्टों और कठिनाअियोंके जीवनके बाद जीवनमें पहली बार अुन्हें यहाँ गंभीर अध्ययनकी ओर ध्यान देनेका मौका मिला। भीषण दरिद्रताके कारण अुन्हें अपनी कालेजकी पढ़ाअी भरी जवानीमें ही छोड़नी पड़ी थी। अिस सज्जनकी अपनी अेक सुन्दर लायब्रेरी थी। यहींपर शरदबाबूने मिल दाँते, हेगल, शोपनहोर और दूसरे पाश्चात्य साहित्यिकोंके ग्रन्थोंका अध्ययन किया। यहाँ अुनकी साहित्य पिपासु आत्मा अपनी प्यास बुझा सकी।

शरदबाबूके पिता भी कोअी कम साहित्य रसिक नहीं थे। अिन्हीं साहित्य प्रेमीके यहाँ १५ सितम्बर १८७६ को शरद्बाबूका जन्म हुआ था।

शरदबाबूके पिताकी कलमने साहित्यके विविध क्षेत्रोंको स्पर्श मात्र किया था। काव्य, नाटक, छोटी कहानियाँ और अुपन्यास सभी कुछ अुन्होंने लिखा था। लेकिन सबसे विचित्र बात तो यह थी कि ये सब कृतियाँ अपूर्ण और साहित्य जगतमें अन्न्य ही था। छात्रावस्थामें बालक शरद अुन सबका पारायण करता। कअी रात वह बिना आँख झपकाये बिस्तरेपर पड़ा पड़ा केवल यही बात सोचता रहता कि अिन सब कृतियोंको वह किस तरह पूरा करे। अिस कामसे अुसे अितनी दिलचस्पी हो गयी कि अन्तमें वह स्वयं ही लिखने लगा। अुस समय शरदबाबूकी अुम्र केवल सत्रह वर्षकी थी। बंगाल अुन दिनों कविवर टगोरके पीछे पागलसा हो रहा था। और यह भावनाशील युवक टगोरकी रचनाओंकी तुलनामें अपनी रचनाओंको थोड़ी भी अुतरता देखता तो तुरन्त अुसे फाड़कर फेंक देता। अुसने लगभग यह निश्चय ही कर लिया था कि जबतक अुसके हाथों टगोरकी सी सुन्दर और कलापूर्ण चीजोंका सर्जन नहीं होगा तबतक वह कुछ भी प्रकाशित नहीं होने देगा। हालाँकि वे मित्रोंके सहयोगसे चलनेवाले 'छाया' नामके अेक हस्त लिखित मासिक पत्रमें जरूर लिखते रहे।

शरदबाबूके घरकी भीषण दरिद्रताका और अुनकी करुण स्थितिका अुनके साहित्यिक जीवनपर काफी असर पड़ा था। अेक ओर गरीबी और दूसरी ओर साहित्य सेवा, अिन दोनोंका मेल जीवनमें कैसे साधा जा सकता है! आखिर अेक दिन झगड़ा हुआ और शरदबाबू घरसे निकल भागे। सन्यासीके वेषमें वे गाँव-गाँव घूमे। अिस घुमक्कड़ जीवनमें अुन्हें अनायास ही समाजके भिन्न भिन्न लोगोंके निकट सम्पर्कमें आनेका लाभ मिला। अुन्हें जनताके गहरे दुख और दैन्यसे पीड़ित हृदयोंको देखने समझने और जानने पहचाननेका सद्भाग्य प्राप्त हुआ। बादमें वे वापस घर तो जरूर आये लेकिन वर्षोंतक अुन्होंने हाथमें कलम नहीं ली।

अिन्हीं दिनों अेक असी चमत्कारिक घटना हुअी कि साहित्य जगतमें अेकाअेक शरदबाबूका आविर्भाव हुआ और प्रसिद्धि स्वयं अुनके पास दौड़ी चली आयी। बात यह हुअी कि रंगूनसे कुछ दिनोंकी छुट्टीपर वे कलकत्ता आये थे। बचपनके साथी अुनसे मिलने आये। अुन मित्रोंने 'यमुना' नामक मासिक पत्रका प्रकाशन शुरू किया था। अिसलिअे अुन्होंने

शरद्‌बाबूसे आग्रह किया कि वे अिस पत्रके लिअे कुछ न कुछ जरूर लिखें। शरद्‌बाबूने तो वर्षोंसे हाथमें कलम भी नहीं ली थी। अुन्होंने काफी हीले-हवाले किये। लेकिन सुनता कौन है? अुनकी सारी दलीलें बेकार सिद्ध हुअीं। अन्तमें शरद्‌बाबूने अपने वचनके पालनके खयालसे तो नहीं, मगर अिस परेशानीसे बचनेके लिअे अनिच्छासे ही क्यों न हो, अेक कहानी लिख भेजी। यह कहानी 'यमुना' पत्रमें छपी और अुसने बंगलाके साहित्य-जगत्‌में अेक हलचल-सी मचा दी। सभीने यही सोचा कि हो न हो यह कहानी रविबाबूने ही लिखी है। लेकिन जब रविबाबूने स्वयं यह जाहिर कर दिया कि नहीं, यह कहानी मेरी नहीं है, अिसका लेखक कोअी और होना चाहिअे, तब सबको लगा कि बंगलाके साहित्यिकोंमें अेक नये साहित्यकारका जन्म हो चुका है।

अब तो शरदबाबूने अपना ज्यादा-से-ज्यादा समय साहित्य-सर्जनमें ही देना शुरू किया। 'भारती' मासिकमें अुनकी 'बड़ी दीदी' कहानी क्रमशः प्रकाशित हुअी। अुसके सबसे अन्तिम परिच्छेदमें कहानी-लेखकके रूपमें शरद्‌बाबूका नाम प्रकट हुआ। अपने रंगूनके मित्रोंकी ओरसे अिस रहस्यके बारेमें पूछनेपर अुन्होंने यह अुड़ाअू जवाब देकर कि अिस कहानीके लेखक शरद्‌बाबू जरूर हैं, लेकिन वह मैं नहीं कोअी दूसरे ही हैं, अुन्हें शान्त कर दिया। अैसे थे हमारे शरदबाबू शरमीले और प्रसिद्धिसे कोसों दूर भागनेवाले!

'परिणीता', 'चन्द्रनाथ', 'चरित्रहीन' आदि कृतियाँ अिसी 'यमुना' पत्रमें प्रकाशित हुअी थीं और अितनी लोकप्रियताने साहित्यकार शरद्‌बाबूकी कीर्तिको चार चाँद लगा दिये। सन् १९१३ में अुनका स्वास्थ्य बिलकुल गिर गया और डॉक्टरोंने अुन्हें ब्रह्मदेश छोड़नेकी सलाह दी। अुन दिनों अुनकी मासिक आय सौ रुपये थी। अब अुनके सामने बड़ी कठिन समस्या खड़ी हुअी। अेक ओर भयंकर आर्थिक तंगी और दूसरी ओर डॉक्टरोंकी यह सलाह। स्थायी नौकरीको तिलांजलि देकर वे अनिश्चित भविष्यके गर्भमें कूद पड़े। लेकिन गुरुदासमनीमें अुनके प्रकाशकने अिस समय अुनके प्रति बड़ा सौजन्य दिखाया। अुसने अुन्हें प्रतिमास सौ रुपये देनेका वचन दिया। अिस आधारपर शरदबाबू ब्रह्मदेश छोड़कर कलकत्ता आ गये।

कलकत्ता आनेके बाद तो शरदबाबूकी प्रतिष्ठा दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ती गयी। श्री देशबन्धुदासने अुन्हें अपने मासिक पत्र 'नारायण' के लिअे कोअी रचना भेजनेके लिअे लिखा। शरदबाबूने 'स्वामी' नामक कहानी लिख भेजी।

अिस कहानीको पढ़कर देशबन्धुदास अितने खुश हुअे कि अुन्होंने अेक कोरा चेक अपनी सही करके शरदबाबूको भेजते हुअे लिखा कि आपके जैसे अेक अद्वितीय और अप्रतिम कलाकारकी रचनाकी कीमत आँकनेकी धृष्टता मैं नहीं कर सकता। आप अपनी मर्जीमें आये अुतनी रकम अिस चेकमें भर लीजिअे। दर असल शरद्‌बाबू चाहते तो चाहे जितनी रकम भर सकते थे। लेकिन अुन्होंने केवल सौ रुपये ही लिये। अेक श्रेष्ठ साहित्यकारके नाते अुनकी यह सिद्धि कुछ कम नहीं थी। लोगोंके दिलोंपर अुनकी कहानियोंने कैसा जादू किया था, यह अिस बातका ठोस प्रमाण है।

दो समर्थ साहित्यकारोंकी रचनाओंकी कला, अुनकी शैली और प्रश्नका समग्र दृष्टिसे प्रस्तुतकरण करनेका तरीका कभी अेक-सा नहीं होता और फिर शरद् बाबूकी शैली तो बिलकुल ही भिन्न प्रकारकी थी। शरद्‌बाबू कहानीका आदि और अन्त कभी पहलेसे निश्चित नहीं करते थे। सबसे पहले वे कहानीकी रूपरेखा तैयार करते। अुसके खास-खास पात्रोंके बारेमें सोचते। और बादमें जीवनका जो रहस्य अुन्हें प्रकट करना होता अुसे प्रकट करते। कभी-कभी तो वे बीचमेंसे ही कहानी शुरू कर देते और कभी कहानीका अन्त पहले लिख डालते। सच तो यह है कि जैसे-जैसे अुनके दिमागमें विचारोंकी तरंग अुठती, वैसे वैसे वे अुसे मूर्त रूप देते जाते। 'चरित्रहीन' अुपन्यास अिसी प्रकार लिखा गया है। अपनी रचनाओंके पीछे शरदबाबू कुछ कम मेहनत नहीं करते थे। शैली तो कहानीकी जान होती है। अपनी शैलीके प्रति वे काफी सावधान रहते थे। लेखन-कार्य अुनके मनसे कोअी सामान्य बात नहीं

थी। अुनकी यह दृढ मान्यता रही कि आत्माको अभिव्यक्त करनेका यदि कोअी सबसे बडा प्रेरक बल है, तो वह है लेखन-कार्य।

अपने जीवनकालमें शरद्बाबूने जितना लिखा है, अुतना शायद बहुत कम लेखकोंने लिखा होगा। यदि अुनके प्रकाशित और अप्रकाशित सभी ग्रंथोंका संग्रह किया जाअे, तो खासा अच्छा संग्रह बन सकता है। बिलकुल सीधे सादे और सामान्य प्रसंगोंको भी अपनी अद्भुत प्रभावशाली शैलीसे पेश करनेका अधिकार तो शरद्बाबूको ही था। अुनके संवादका ढंग सचमुच अनोखा था। व्यंग्य और कटाक्षभी जहां-तहां अुनकी कृतियोंमें बिखरे पडे हैं।

शरद्बाबूके करीब करीब सारे अुपन्यासोंमें बंगालके सामाजिक जीवनका चित्रण है। बंगाल यानी जमींदारी प्रथाका घर। अुन्होंने अपनी रचनाओंमें बंगालके मध्यम और जमींदारोंके वर्गका ही निरूपण किया है। जमींदारी प्रथाके अनिष्टों, जमींदारोंके जीवनके वैभव-विलासों और छल-प्रपंचोंका चित्रण अुन्होंने अपने विशिष्ट ढंगसे किया है।

विद्वान पुरुषोंकी धुनभी कभी-कभी अुनके जीवनका अेक दिलचस्प विषय बन जाता है। चार्ल्स डिकन्सके बारेमें कहा जाता है कि अुन्हें अपने जीवनके अन्तिम वर्षोंमें यह धुन सवार हुअी कि अेक खास कुर्सीपर खास ढंगसे खास टेबलपर जबतक वे नहीं बैठेंगे, तब तक कुछभी नहीं लिख सकेंगे। अेमिल जोलाके बारेमें भी अैसाही कहा जाता है। अमुक आदमीकी तसवीर जब तक अुनकी टेबलपर नहीं होती, तब तक अुनकी कलम नहीं चलती थी। शरद्बाबूके जीवनमें भी कुछ अिसी प्रकारकी विचित्रताअें थी। हमेशा लिखनेके लिअे वे सुन्दर और कीमती कागज ही काममें लेते। जाडी, मोटी और तीक्ष्ण धारवाली पेनसे ही वे लिखते। अुनके अक्षर भी बडे सुन्दर थे। हुक्केके बिना तो अुनका काम ही नहीं चलता था। चायके भी वे जबरदस्त शौकीन थे। सतान तो अुन्हें कोअी भी नहीं थी। लेकिन वात्सल्य भावसे पशु-पक्षियोंको पालनेका अुन्हें कुछ कम शौक नहीं रहा।

भारतीय साहित्यमें तो शरद् बाबूका स्थान सर्वश्रेष्ठ साहित्यकारके रूपमें है ही। अितना ही नहीं, विश्व-साहित्यमें भी अुनका स्थान निश्चित हो चुका है। लेकिन भविष्यमें अुनकी कृतियोंका मूल्यांकन कैसा और कितना होगा, यह तो अभी क्या कहा जा सकता है? क्योंकि शरद् बाबूकी आत्मा स्वभावसे क्रान्तिकारी नहीं थी। सामाजिक वर्गोंके प्रति अुनका झुकाव अत्यन्त सावधानी भरा है। समाजमें घर कर रहे अनिष्टोंका प्रथक्करण वे अपने अनोखे ढंगसे करते हैं। प्रथक्करण करते समय अुनकी कलम भी तेजस्वी बन जाती है। फिर भी प्राचीन कालसे समाजमें रूढ हो गये अिन अनिष्टोंसे आधुनिक युगमें कैसे मन्त साधा जाअे, अिस बारेमें वे कोअी हल नहीं बतलाते। प्रचलित अनिष्टोंको दूर करनेके लिअे वे भूतकालकी ओर देखते हैं, लेकिन अज्ञान और वहमोंकी जालमें फँसे समाजका जडमूलसे कैसे परिवर्तन हो, अिसका मार्गदर्शन अुनकी कृतियोंमें कहीं भी दिखायी नहीं पडता।

बावजूद अिसके शरद्बाबू हमारे देशके गौरव और अेक महान् कलाकार थे। १६ जनवरी, १९३८ को बासठ वर्षकी अुम्रमें अुनका जीवन-दीप सदाके लिअे बुझ गया। अुनके अवसानसे साहित्यके अेक युगका अन्त हो गया।

(अनुवादक : श्री गौरीशंकर जोशी)

[अहमदाबाद

हिन्दी-साहित्यके आदिकालका नामकरण

:श्री महेन्द्र 'राजा', अेम. अे., सा. र.:

स्व. आचार्य रामचन्द्र शुक्लने अपने 'हिन्दी साहित्यके अितिहास'में हिन्दी-साहित्यका आदिकाल स० १०५० से १३७५ तक माना है और हिन्दी साहित्यके अितिहासमें परिचित जनसामान्य भी यही मानता है। पर पिछले वर्ष प्रकाशित अपने 'हिन्दी-साहित्य' में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीने हिन्दी साहित्यका आदि-काल १००० अि से १४०० अि तक माना है। यदि सच पूछा जाये तो अिस कालमें जिन-जिन प्रवृत्तियोंका जन्म हुआ वे विकासको प्राप्त हुअी अुनका 'बीज-वपन संस्कार' तो अिस कालके पहले ही अर्थात् अपभ्रंश कालमें हो चुका था जैसा कि दसवीं शताब्दीसे पहलेके प्राप्त अनेक अपभ्रंश ग्रंथोंसे पता चलता है। अतः अिस कालको 'आदि काल' कहना भी ठीक नहीं मालूम पड़ता। अिस कालकी प्रवृत्तियाँ तो पूर्व निश्चित योजनाका फल थीं। अंकुर तो कभीका निकल चुका था, शायद पल्लव भी आने लगे थे, अब तो केवल अुसके पुष्पित होने तथा फल लगनेकी देरी थी और यह सब अिस कालमें हुआ। अेक बात हमें नहीं भूलना चाहिये कि अिस काल तक जो साहित्य हमें मिलता है वह हिन्दीका नहीं अपितु परिनिष्ठित अेवं अुससे कुछ आगेकी अपभ्रंशका है। और अब यह निर्विवाद है कि अिस कालमें जिस साहित्यकी रचना हुअी वह पूर्व निश्चित परम्पराका सुसंस्कृत रूप है। १० वीं शताब्दीकी भाषाके गद्यमें तत्सम् शब्दोंका व्यवहार बढ़ने लगा था पर पद्यमें तद्भव शब्दोंका ही व्यवहार होता था। अिस कालकी सम्पूर्ण प्रवृत्तियोंमें यह बात विशेष रूपसे लक्षित होती है। अिस कालकी जितनी भी प्रवृत्तियाँ हैं, वे सब प्रत्येक दृष्टिसे पूर्ववर्ती परम्पराका आगेकी ओर बढ़ाव ही हैं, यद्यपि भाषामें नाममात्रका थोड़ा बहुत परिमार्जन आ गया है। अतः अिस कालकी प्रवृत्तियोंको लक्ष्य कर हम अिस कालकी भाषाको परिनिष्ठित अपभ्रंशसे थोड़ा आगे बढ़ी हुअी, परिमार्जित व संस्कारित अपभ्रंश कह सकते हैं, (हिन्दी नहीं।) आगे चलकर अिसी भाषाके क्रमशः विकासने शुद्ध हिन्दीका रूप लिया। हो सकता है कि तत्कालीन भाषाका रूप हिन्दीकी आधुनिक प्रान्तीय बोलियोंमेंसे ही किसीका पूर्व रूप रहा हो।

हिन्दी-साहित्यके आदिकालका अितिहास जाननेके लिअे प्रमुख रूपसे केवल अेक ही अितिहास पुस्तक प्राप्त है और वह है प० रामचन्द्र शुक्ल लिखित "हिन्दी साहित्यका अितिहास"। पिछले कअी वर्षोंसे स्कूलों, कालेजों अेवं विश्वविद्यालयोंमें यह पुस्तक अेक प्रामाणिक ग्रंथके रूपमें मान्य हुअी है और आगे आनेवाली पीढ़ीने अिसीके आधारपर हिन्दी-साहित्यके अितिहासके विषयमें ज्ञान प्राप्त किया है।

जिस समय शुक्लजीने अितिहास लिखा था, अुस समय नाममात्रके जो थोड़ेसे ग्रंथ प्राप्त थे, अुन्हींको आधार मानकर शुक्लजीने अपने अितिहासका प्रणयन किया था और अुन्हीं ग्रंथोंके आधारपर शुक्लजीने हिन्दी-साहित्यके आदिकालका नाम 'वीरगाथाकाल' रखा था। यद्यपि अुस समय भी कअी अैसे अन्य ग्रंथ प्राप्त थे जो अब काफी प्रामाणिक माने जाने लगे हैं, पर शुक्लजीने अुस समय अुनकी प्रामाणिकतामें सन्देह प्रकट किया था और अिसीलिअे अपने अितिहासके लिखनेमें अुनसे कुछ भी सहायता नहीं ली। तथा कुछ ग्रन्थोंको अुन्होंने साम्प्रदायिक अेवं धर्मप्रचारकका खिताब देकर भी छुट्टी ले ली थी। शेष जिन ग्रन्थोंके आधारपर अुन्होंने अिस कालका अितिहास लिखा था, वे ये हैं—(१) विजयपाल रासो, (२) हमीर रासो, (३) कीर्तिलता, (४) कीर्तिपताका, (५) खुमान रासो, (६) बीसलदेव रासो, (७) पृथ्वीराज रासो, (८) जयचन्द्र प्रकाश, (९) जयमयंक जस चंद्रिका, (१०) परमाल रासो, (११) खुसरोकी पहेलियाँ और (१२) विद्यापति-पदावली।

इन ग्रंथोंको आधार मानने एवं उस समय प्राप्त अन्य ग्रंथोंको छोड़नेका कारण बतलाते हुए उन्होंने लिखा था कि केवल उपरोक्त बारह ग्रंथ ही ऐसे हैं जिनसे हमें अपने विवेचनमें सहायता मिल सकती है और हिन्दी-साहित्यके आदिकालका लक्षण-निरूपण एवं नामकरण हो सकता है। इन ग्रन्थोंमेंसे अधिकांशको उन्होंने वीरगाथात्मक बतलाकर इस कालका नाम 'वीरगाथा-काल' रखा था तथा बाकी ग्रंथोंको अविवेचनीय करार देते हुए कहा कि इन पुस्तकोंमेंसे कुछ परवर्ती कालकी रचनाएँ हैं कुछ नोटिस मात्र हैं और कुछ धार्मिक उपदेश विषयक हैं। पर अबतक जो साहित्यिक खोजें हुई हैं, उनसे पता चलता है कि शुक्लजीने आदिकालके लिए विवेचनीय ग्रंथोंके चुनावमें बड़ी भूल की है और जिन ग्रंथोंको उन्होंने उस समय प्रामाणिक एवं असंदिग्ध माना था उनमेंसे अधिकांश अप्रामाणिक एवं संदिग्ध होनेसे अविवेचनीय हैं तथा किसी किसीके तो अस्तित्व तकका पता नहीं चलता।

उपरोक्त बारह ग्रंथोंमेंसे अधिकांशको अविवेचनीय ठहराते हुए एवं शुक्लजीकी भूलकी ओर इंगित करते हुए आचार्य द्विवेदीजीने बिहार राष्ट्रभाषा परिषद द्वारा आयोजित व्याख्यानमालाके अंतर्गत प्रथम व्याख्यानमेंही निर्देश किया था। राजस्थानी साहित्यके उद्भट विद्वान श्री अगरचंद नाहटा एवं श्री मोतीलाल मनोरियाके साथही साथ श्री राहुल सांकृत्यायनने भी उपरोक्त ग्रंथोंमेंसे कुछको अप्रामाणिक एवं संदिग्ध सिद्ध किया है।

इस प्रकार वर्तमान खोजोंके अनुसार हम देखते हैं कि मान्य विद्वानोंने यह सिद्ध कर दिया है कि शुक्लजीने हिन्दी-साहित्यके आदि कालके इतिहासके लिए जिन ग्रंथोंको विवेचनीय माना था उनमेंसे अधिकांश अविवेचनीय हैं और उन्हींके शब्दोंमें कहा जाए तो कुछ पीछेकी रचनाएँ हैं, कुछ नोटिस हैं कुछका अस्तित्व तक संदेहजनक है, एवं कुछ अर्द्ध-प्रामाणिक मानी जाने लगी हैं। केवल पृथ्वीराज रासोकी प्रामाणिकता-अप्रामाणिकताको लेकरही विद्वानोंने जमीन-आसमानके कुलाबे एक कर डाले थे। जिन धार्मिक एवं उपदेशपरक रचनाओंको शुक्लजीने अविवेचनीय मानकर छोड़ दिया था, उनमेंसे अधिकांश अब विवेचनीय मानी जाने लगी हैं। केवल धर्मोपदेश होने मात्रसेही कोई रचना साहित्यिक विवेचनके योग्य न समझी जाए, यह उचित नहीं जान पड़ता। अन्यथा फिर रामचरित मानस, सूरसागर, रामचन्द्रिका आदि ग्रंथ भी साहित्यिक विवेचनाके योग्य नहीं रह जाते।

स्व० शुक्लजीके बादकी खोजोंमें इस 'काल'की विवेचनाके योग्य जो ग्रंथ पाये गये हैं तथा विद्वानोंकी दृष्टिमें जो ग्रंथ विवेचनायोग्य समझे जाने लगे हैं, उनमेंसे कुछ ये हैं—

सन्देश रासक, भविसयत्त कहा, सणकुमार चरिउ, भावना सार, परमाल प्रकाश, पउमसिरी चरिउ, तिसट्ठीलक्खण महापुराण, पउमचरिउ, हरिवंश पुराण, स्वयंभूका रामायण, जसहर चरिउ, णायकुमार चरिउ, प्राकृत पैंगलम, बौद्धगान ओ दोहा, वर्णरत्नाकर, उक्ति-व्यक्ति प्रकरण, ढोलामारूरा दूहा, नेमिनाथ फागु आदि ग्रंथोंके अतिरिक्त कुछ पहलेके प्राप्त ग्रंथ भी विवेचनीय हैं।

उपरोक्त ग्रंथोंके साथही साथ आदिकालके इतिहासपर विचार करते समय आधुनिक लेखकोंके निम्न ग्रंथ सहायक सिद्ध होंगे—मिश्रबंधु विनोद, हिन्दी साहित्यका इतिहास, काव्य धारा, वीर-काव्य संग्रह हिन्दी साहित्यका आलोचनात्मक इतिहास, राजस्थानी भाषा और साहित्य, राजस्थानी साहित्यकी रूपरेखा, हिन्दीके विकासमें अपभ्रंशका योग, हिन्दी-साहित्यका आदि काल आदि। अंतिम दो ग्रंथ काफी महत्त्वके हैं।

अब प्रश्न आता है, इस कालके नामकरणका। इस कालके इतिहासके लिये विवेचनीय जिन ग्रंथोंका ऊपर जिक्र आया है उन्हें देखनेसे पता चलता है कि इनमें दो प्रकारकी रचनाएँ। एक तो उपदेशात्मक, धर्म प्रचारक, रहस्यमूलक रचनाएँ हैं। दूसरी-चारण कवियोंके-चरित काव्य। इनके विषयमें आचार्य ह० प्र० द्विवेदीजीने लिखा है कि पहली प्रकारकी रचनाओंमें बौद्ध और नाथ सिद्धोंकी तथा जैन मुनियोंकी रूक्ष तथा उपदेशमूलक या हठयोग या कर्मयोगकी महिमाका

प्रचार करनेवाली रहस्यमूलक रचनाओं हैं। अिन्हें हम साहित्यके अितिहाससे हटा नहीं सकते। अिन्होंने जितनी दूरतक मनुष्यचिन्तको रूढ़िके विचारसे मुक्त करके सहज सत्य तक पहुँचनेमें सहायता की है उतना दूरतक व सच्चे साहित्यके अन्तगत गिने जाने योग्य हैं। दूसरी श्रेणीकी रचनाओंमें राजस्तुति युद्ध और विवाह आदिके वर्णन हैं। अिस श्रेणीकी रचनाओंकी वीर दर्पोक्तियोंमें नवीन काव्य भंगिमाकी ताजगी अनुभूत होती है। हेमचन्द्रके व्याकरणमें ही अिस श्रेणीके वीर दर्पका यह नया स्वर सुनायी देने लगा है। अुसमें नवीन ताजगी ता है ही सहज अकुतोभय भावनासे अुसमें अपूर्व तेजस्विता भी मिलने लगती है।

यह पहले कहा जा चुका है कि प० रामचन्द्र शुक्लजीने अुस समय प्राप्त रचनाओंके आधारपर अिस कालका नाम 'वीरगाथा-काल' रखा था। अुनका कहना था कि अुन रचनाओंमेंसे अधिकांश वीरगाथायें हैं। पर अूपर यह बतलाया जा चुका है कि शुक्लजीकी आधारित रचनाओंमेंसे अधिकांश अप्रामाणिक तथा संदिग्ध तथा नोटिस मात्र हैं, अतः अिस कालका नाम 'वीरगाथाकाल' अुचित नहीं प्रतीत होता। हाँ, यह बात निर्विवाद है कि अिस कालकी रचनाओंमें वीर रसका अपूर्व अेवं नवीन स्वर मिलता है तथा वीर रस प्रधान है, पर दूसरी ओर बौद्ध तथा नाथ सिद्धों तथा जैन मुनियोंकी निर्गुणिया भावापन्न कविताओं भी मिलती हैं। राहुलजीका भी यही मत है और अुपरोक्त दो प्रकारकी (१ सिद्धोंकी वाणी २ सामंतोंकी स्तुति) रचनाओंके आधारपर अुन्होंने अिस कालका नाम 'सिद्ध-सामन्त काल' रखनेका सुझाव दिया। पर यह नाम भी कुछ अधिक अुपयुक्त नहीं मालूम पडता। नाम अैसा होना चाहिये कि जिससे कालकी सभी प्रवृत्तियोंका अुससे आभास हो सके। अतः जबतक आलोचकों, विद्वानों और अिस विषयके अन्वेषकोंकी दृष्टिमें कोअी अन्य अुपयुक्त नाम नहीं आता तबतक हम भी आचार्य ह. प्र. द्विवेदीजीके स्वरमें स्वर मिलाकर यही कहना चाहते कि अिस कालका नाम 'आदिकाल' ही अधिक अुपयुक्त जान पडता है।

कुछ विद्वानोंकी दलील है कि यदि कुछ धार्मिक ग्रन्थ प्राचीन कालके मिल गये, तो भी 'वीरगाथा काल' में कोअी आँच नहीं आती। क्या दानवीर, धर्मवीर, दयावीर नहीं होते? पर सच पूछा जाअे तो अुनकी यह दलील थोथी है। माना कि 'दानवीर' आदि भी वीर होते हैं, पर सामान्य व्यवहारमें 'वीर' का अर्थ 'शूरवीर' या युद्धवीर' होता है, अतः "वीरगाथाकाल" यह नाम हमें अुपयुक्त नहीं जँचता।

[बनारस

असम प्रदेश और असकी भाषा

: श्री महेशकुमार मूँधड़ा :

भारतके अुत्तरी पूर्वी सीमान्तका प्रदेश आसामके नामसे विख्यात है। तीन तरफ यह पहाड़ोंसे घिरा है— अुत्तरी-पूर्वी भागकी पहाडियोंके कारण अुपरी ब्रह्मपुत्रकी घाटी और चीन अेक दूसरेसे अलग होते हैं, पूरबी दक्षिणी भागकी पहाडियाँ अिस प्रदेशको बर्मासे पृथक् करती हैं। जिसके पश्चिममें पड़ता है पूर्वी बंगाल (अर्थात् वर्तमान पूर्वी-पाकिस्तान)। भौगोलिक दृष्टिसे हम वर्तमान आसामके दो भाग कर सकते हैं— ब्रह्मपुत्र या आसाम घाटी अेव सूरमा घाटी। ब्रह्मपुत्र घाटी ही असली आसाम है। यहाँके निवासी खुदको असमिया कहते हैं अेव असमिया भाषा बोलते हैं। देश 'असम' कहलाता है, किन्तु अंग्रेजोंकी कृपासे आसाम हो गया।

विभिन्न अैतिहासिक युगोंमें अिस प्रान्तके नाम अलग अलग रहे हैं। अिसका सबसे पुराना नाम है प्राग्‌ज्योतिष। रामायण तथा महाभारतमें अिसी नामसे अिस प्रदेशका अुल्लेख किया गया है। रामायणमें लिखा है कि सुग्रीवने सीताको ढूँढनेके लिअे विभिन्न दिशाओंमें बन्दर भेजे थे। कोअी बन्दर यहाँ भी आ पहुँचा। सुग्रीवने अुस समय अिस प्रदेशका परिचय अिस तरह दिया था—

> योजनानि चतुष्षष्टिर्वराहो नाम पर्वतः।
> सुवर्णशृङ्गः सुमहानगाधे वरुणालये ॥ ३०
> तत्र प्राग्ज्योतिषं नाम जातरूपमयं पुरम्।
> तस्मिन् वसति दुष्टात्मा नरको नाम दानवः ॥३१
> (किष्किन्धाकाण्ड, ४२ सर्ग)

महाभारतके सभापर्वमें अर्जुनके दिग्विजयपर अिस क्षेत्रके शासक भगदत्तका वर्णन आता है—

> स किरातैश्च चीनैश्च वृतः प्राग्‌ज्योतिषोऽभवत्।
> अन्यैश्च बहुभिर्योधैः सागरानूपवासिभिः ॥
> रा भा ७

यहाँ यह कहा जा सकता है कि कुरुक्षेत्रके युद्धके समय अिस राजाने दुर्योधनकी सहायता की थी।

परवर्ती संस्कृत साहित्यमें प्राग्-ज्योतिषके अलावा 'कामरूप' शब्दभी अिस प्रदेशके लिअे प्रयुक्त होने लगा। कालिदासने दोनों नाम व्यवहृत किये हैं। प्राचीन कालके अुत्तरी भारतके कितनेही शिलालेखोंमें भी कामरूप शब्दका प्रयोग मिलता है। पुरातत्त्वके अध्ययनसे ज्ञात होता है कि कामरूप बहुत ही प्राचीन जनपद है। आज तो कामरूप वर्तमान असम प्रदेशका अेक विस्तृत जिला मात्र रह गया है, मगर प्राचीन कालमें अिसका क्षेत्र अिस समयकी अपेक्षा बहुत अधिक विस्तृत था। वर्तमान आसामके अधिकांश भागके अलावा बंगालके जिले कोच बिहार, जलपाअीगोडी तथा रंगपुर आदि अुस कालमें कामरूपके अन्तर्गत ही थे। 'कालिकापुराण' (रचनाकाल—सम्भवत दसवीं शताब्दी अी) और 'योगिनीतंत्र' (रचनाकाल—सम्भवतः सोलहवीं शताब्दी अी) में प्राचीन कामरूपका भौगोलिक वर्णन मिलता है। अुस वक्त अिसकी पश्चिमी सीमा अुत्तरी बंगालकी करतोया नदी थी।

'कालिका पुराणमें' लिखा है—

> करतोयां समारभ्य पूर्वं भागावधिस्थिता।
> यावल्ललितकान्तास्ति तावद्देश पुरं तदा॥
> (३८।१२१ अ)

अर्थात् करतोया नामक सरयगासे पूर्वकी ओर ललितकान्ता पर्यन्त यह पुर विस्तृत है। (ललितकान्ता दिवरवासिनीके निकट है।)

'योगिनीतंत्रमें' प्राचीन कामरूपकी चतुःसीमा अिस तरह दी गयी है—

> "करतोयां समाश्रित्य यावद्दिक्करवासिनीं।
> अुत्तरस्यां कञ्जगिरि करतोयास्तु पश्चिमे॥

तीर्थश्रेष्ठा दिक्षुनदी पूर्वस्या गिरिकन्यके ।
दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्य लाक्षाया • सगमावधि ॥
कामरूप अिति ख्यात सर्वशास्त्रेषु निश्चित ॥'

" त्रिशत् योजनविस्तीर्णं दीर्घेण शतयोजनम् ।
कामरूपं विजानीहि त्रिकोणाकार मुत्तमम् ॥
ओशाने चैव केदारो वायव्या गजशासन ।
दक्षिणे सङ्गमे देवी लाक्षाया ब्रह्मरेतस ॥
त्रिकोणमेव जानीहि सुरासुर नमस्कृतम् ।"

अर्थात् कामरूप करतोयासे दिक्करवासिनी तक विस्तृत है। असके अुत्तरमें कच्जगिरि, पश्चिममें करतोया नदी, पूर्वमें तीर्थ श्रेष्ठ दिक्षु नदी और दक्षिणमें ब्रह्म पुत्रा नदी तथा लक्षा नदीका सगम है। अिस सीमाको सभी शास्त्रोंने माना है। असका विस्तार तीस योजन और दैर्घ्य अेकसौ योजन है। असके अीशान कोणमें केदार, वायव्य कोणमें गजशासन और दक्षिणमें ब्रह्मरेतस तथा लाक्षाका सगम है। कामरूप त्रिकोणाकार है।

वर्तमान गौहाटी ही अिस प्रदेशकी राजधानी थी और प्राग-ज्योतिषपुर असी गौहाटीका नाम था। मगर तेरहवीं सदीके पिछले भागमें अिस प्रदेशकी राजधानी यहाँसे हटकर आधुनिक कूचविहारसे चौदह मील दक्षिण पूर्वस्थित कामतापुर बना दी गयी। आज कामतापुर अेक ध्वसावशेष मात्र रह गया है। कामरूपमें अुस समय कितने ही भूयां सरदारोंके दल बहुत शक्तिशाली हो गये थे। व कामतापुरके राजाके अधीन नाममात्रके ही थे। सोलहवीं सदीमें नर-नारायणने (१५४० अी में गद्दीपर बैठा) कामतापुरसे हटाकर कूचविहारको राजधानी बनाया।

किसी समय कामरूप प्रदेश अिद्रजालकी विद्याके लिअे विख्यात था। कहा जाता है कि यहाँकी स्त्रियाँ अिन्द्रजाल फैलाकर पुरुषोंको वशीभूत कर लेती थीं। कामरूपमें स्त्रियाँ अन्य प्रदेशोंकी अपेक्षा अधिक स्वतत्र रही हैं। शायद अिसी स्त्री-स्वातन्त्र्यके कारणही यह अन्ध-विश्वास बाहरसे जानेवालोंके दिमागमें पैदा हुआ।

अिस प्रदेशका आधुनिक नाम यहाँके शान विजेताओंने सर्वप्रचलित बनाया जाता है। सन् १२२८ अी के करीब अुत्तरी पूर्वी सीमा (बर्मा चीन) की तरफसे शान जातिके लोगोंने अिस प्रदेशको जीता। कहा जाता है कि अिस प्रदेशपर विजय प्राप्त करनेके बाद अिन लोगोंने 'अहोम' नाम ग्रहण किया और अुसीसे अिस प्रदेशका नाम असम पडा। सन् १२२८ अी. से करीब डेढ सौ वर्षोंतक अहोम राजा देशके पूरबी असममें राज करते रहे। पूरबी असममें जब अिनके पैर जम गये तो अिन्होंने पश्चिमकी ओर बढना शुरू किया। अिस देशमें ये लोग वर्तमान बगालकी सीमातक बढ आये। सन् १३७६ अी में पहली बार अिन्हें लखमीपुर और शिवसागरके चूता राजाओंसे घमासान युद्ध करना पडा। कहा जाता है कि यह संघर्ष करीब १२४ वर्षोंतक चलता रहा। १५०० अी के करीब चूता राजाको हराकर अहोमोंने शिवसागरमें अपनी राजधानी कायम की। परवर्ती शताब्दियोंके असमका अितिहास काफी हदतक अहोम-शासनकालका ही अितिहास है।

अहोम जिस वक्त आसाममें आये, अुनकी वेश-भूषा, चाल-ढाल और भाषा आदि पराजित प्रदेशके लोगोंसे बिल्कुल जुदा थी। राजनैतिक सत्ता हासिल करनेका जहाँतक सवाल है, अहोम विजयी हुअे। मगर पराजित जनताकी सस्कृति अितनी अुन्नत थी कि विजेताओंको सास्कृतिक क्षेत्रमें अपनी हार माननी पडी। धीरे-धीरे अहोम भारतीय रगमें रगे जाने लगे और अन्तमें सन् १६५५ अी के करीब अहोम नृपति 'चुचगफा'ने हिन्दू धर्म भी स्वीकार कर लिया।

अिस प्रदेशका नाम असम है और अिसी नामसे अुस प्रदेशकी भाषाका नाम असमिया पडा। असमिया मागधी या गौड अपभ्रंशसे सम्भवत निकली है। आधुनिक आर्य भाषाओंमें असमियाका स्थान अेक पूर्ण विकसित भाषाके रूपमें है। मगर अिस भाषाका अपना विशेष रूप किस समयसे शुरू होता है यह कहना बहुत ही कठिन है। तत्सम (सस्कृत) शब्द अिसमें प्रचुर मात्रामें हैं। बगला भाषासे अिसका बहुत अधिक साम्य है। अिन दोनों भाषाओंकी अुत्पत्तिका

स्रोत अेक होनेके कारण अैसा होना कोअी आश्चर्यकी बात नहीं है।

सातवीं सदीके प्रथमार्धमें कामरूपके राजा भास्कर वर्मनके निमंत्रणसे चीनी पर्यटक हुअेनत्सांग अुस प्रदेशमें गया था। राजकीय-अतिथिके रूपमें वह कुछ दिन वहाँ रहा। अुसने लिखा है कि कामरूपके लोग अीमानदार, नाटे कदके तथा काले रंगके थे। अुनकी भाषा 'मध्य भारत' की भाषासे कुछ भिन्न थी। (The people were of honest ways small of stature and black -looking their speech differd a little from that of Mid India) १

हुअेनत्सांगके अिस वर्णन तथा तद्विषय दूसरी बातोंके आधारपर कुछ विद्वानोंका कहना है कि सातवीं सदी अी में आर्यभाषा अिस प्रदेशमें पहुँच चुकी थी और अुस वक्तभी अिस भाषामें तथा तत्कालीन "मध्य भारत में बोली जानेवाली मैथिली या मागधी भाषामें कुछ फर्क आ चुका था। २

डाक्टर सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या महाशयका मत है कि पन्द्रहवीं सदीके मध्यभाग तककी असमिया तथा तत्कालीन बंगला भाषामें नहीं के समान फर्क है, दोनों प्राय अेक हैं तथा असमियाके विशिष्ट तत्व अुस कालकी असमियामें नगण्यसे हैं। अुनके मतानुसार तिब्बती धर्मी अेव स्थान, प्रभाव तथा दूसरे कतिपय कारणोंसे परवर्ती कालमें असमिया तथा बंगलाका पार्थक्य बढा। ३

---

(१) Thomas Watters-On Yuan Chwang s Travels in India (London 1905) Vol II p 186

2 Birinchi Kumar Barua-Assamese Literature. (P E N.) Bombay, 1941 pp 5-6

3 Dr Suniti Kumar Chaterji-The Origin and Development of the Bengali Language. (Calcutta University Press) 1926 Part I p 108-9 (Section. 58)

डाक्टर वाणीकान्त काकतीने कलकत्ता विश्वविद्यालयमें सन १९३५ में पी अेच डी डिग्रीके लिअे असमिया— अुसका निर्माण तथा विकास सम्बन्धी जो निबन्ध (थिसिस) दिया अुसमें असमियाका अन्यान्य भागकी भाषाओंसे जो सम्बन्ध है अिसका अच्छी तरह विवेचन किया है। ४ अुनके मतानुसार असमिया बंगलासे निकली हुअी नहीं, अेक स्वतंत्र भाषा है जिसका मागधी अपभ्रंशके नाते बंगलासे सम्बन्ध है। वर्तमान असमिया दोहाकी भाषाके अधिक निकट है। ('Assamese is not an off shoot or patois of Bengali but an independent speech related to Bengali, both occupying the position of dialects with reference to some standard Magadhan Apabhransa Modern Assamese in certain respects shows a closer approximation to the forms and idioms preserved in the dohas) ५

यहाँ दोहासे मतलब है 'बौद्धगान् ओ दोहा' है। ६ अधिकांश विद्वान अिन बौद्ध दोहोंका रचनाकाल आठवीं से दसवीं शताब्दी मानते हैं।

4 Dr Banikanta Kakati-Assamese, Its Formation and Development (Gauhati 1941) *जिस पुस्तकमें देखिअे* भूमिका-(B) The Affinities of Assamese Relationship with other Magadhan dialects considered pp. 3-11

5 वही पुस्तक pp 9-10 section 16

६- महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीने नेपालमें जाकर बौद्ध गानओ दोहाका पता लगाया। अुनके मतानुसार ये करीब अेक हजार वर्ष पहलेकी बंगला भाषाके नमूने हैं। किन्तु अुनकी भाषा और विषय रूपसे शब्द संगठनको देखकर पूर्वी भारतकी विभिन्न भाषाओंके विद्वान अुन्हें अपनी अपनी भाषाकी रचना बताते हैं

अिस तरह हम देखते हैं कि स्व डॉक्टर काकतीने डॉ सुनीति बाबूके अूपर दिये गये मतको नही माना है। डॉक्टर काकतीका कहना है कि बंगला और असमियाका अुद्गम अेक है, किन्तु अुनका विकास समानान्तर रूपसे स्वतत्र पद्धतिमें हुआ। (' . they started on parallel lines with peculiar predisposition and often developed sharply contradictory idiosyncracies ') ७

पहले असमिया कअी लिपियामें लिखी जाती थी। गर्गय, बामुनिया, ल्खारी और कैथली आदि लिपियाँ प्रचलित थी। बगालके प्रसिद्ध शहर श्री रामपुरमें छापाखाना खोलनेके बाद असमियामें पुस्तक प्रकाशित होने लगीं और तबसे अिस भाषाके लिअे बगला लिपिमें थोडा सशोधन करके अुसे ही अिस्तेमाल किया जाने लगा।

असमिया साहित्य विशाल है। आधुनिक भारतीय भाषाओंमें अितिहासके ग्रन्थ लिखनेके क्षेत्रमें असमियाकी परम्परा काफी गौरव पूर्ण रही है। कअी शताब्दियोंसे असमियामें बुरञ्जियाँ (अर्थात् अितिहास) लिखनेकी परम्परा चलती आयी है। ये बुरञ्जियाँ अभीतक सुरक्षित हैं। अुस प्रदेशका अितिहास जाननेमें अिनसे बहुत सहायता मिलती है।

विभिन्न लेखकोंकी साधनासे असमिया साहित्यकी श्री-वृद्धि हो रही है। हमारे समाजकी प्रगतिके साथ असमिया साहित्यकार भी विकासकी नयी मंजिलें तय करते हुअे निरन्तर प्रगतिकी ओर बढे जा रहे हैं।

[कलकत्ता

७, डाक्टर काकतीकी अूपर लिखित पुस्तक, प ७, परिच्छेद १२

बुन्देलखण्डी लोकगीतोंमें शृंगार-सुषमा

: श्री कालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर' :

यद्यपि ब्रजभाषा और बुन्देलखण्डीमें कोअी विशेष अन्तर नहीं फिर भी कुछ अुच्चारण भेद और शब्दोंके प्रयोगमें कुछ भिन्नता अवश्य पायी जाती है। जिन लोगोंको श्री बनारसीदास चतुर्वेदी और श्री मैथिलीशरण गुप्तसे बातचीत करनेका अवसर मिला है और जिन्होंने बारीकीसे दोनोंकी भाषाओंका अन्तर समझनेका प्रयत्न किया है, वे अिस सूक्ष्म भेदको कुछ-न-कुछ अवश्य समझ सके होंगे। स्वर्गीय कवि मुंशी अजमेरीका कहना था कि बुन्देलखण्डी ब्रजभाषासे भी अधिक मधुर है और ब्रजभाषाके माधुर्यकी तो चर्चा करना ही व्यर्थ है। ब्रजभाषा और बुन्देलखण्डी दोनोंकी अुत्पत्ति शौरसेनीसे हुअी है, जिसे डाक्टर धीरेन्द्र वर्माने शौरसेनी जनपदकी भाषा माना है। केशव और पद्माकरकी कविताओं पर भी बुन्देलखण्डीका प्रभाव पाया जाता है। पद्माकरकी निम्नलिखित सवैया ब्रजभाषा और बुन्देलखण्डीकी अेकता समझनेमें सहायक होगी —

जाहिरै जागत सी जमुना, जब बूडै बहै अुमहै वह बेनी।
त्यो 'पद्माकर' हीरके हारन गंगतरंगनको सुख देनी।
जावकके रंगसो रंग जातु है भाँतिहिभाँति सरस्वति सेनी।
पैरे जहाँ ही जहाँ वह बाल तहाँ तहाँ तालमें होत त्रिवेनी।

—जगद्विनोद

ब्रजसाहित्य-मंडलके गत मैनपुरी अधिवेशनमें (१० दिसम्बर १९५३) को अपने अध्यक्षीय भाषणमें डाक्टर शर्माने भाषाके अनुसार पाँच जनपदोंका वर्गीकरण बताया था (१) शूरसेन जिसमें ब्रज और बुन्देलखण्डी प्रदेश, (२) पांचाल (कन्नौजी भाषाका प्रदेश), (३) कोशल और काशी (भोजपुरी-प्रदेश) और (४) कुरुजनपद। कुरु-जनपदकी भाषाको छोड़कर प्रायः सभी जनपदोंकी भाषापर ब्रजभाषाका प्रभाव अधिक रहा है। अवधी, कन्नौजी और भोजपुरीमें अनेक शब्द और प्रयोग ब्रजभाषाके मिल जाते है —

भअिअु विरह अरि कोअिल कागे।
डार डार जो कूकि पुकारी।

—जायसी

डाक्टर वर्माने अपनी पुस्तक 'ब्रजभाषाका व्याकरण' में अवधीका वातावरण ब्रजभाषासे बहुत भिन्न माना है, परन्तु बात अैसी नहीं है। वे स्वयं अवधीको मध्यवर्ती भाषा मानते हैं और अिस दृष्टिसे देखा जाअे तो ब्रजभाषाका प्रभाव अवधीपर किसी न-किसी सीमातक पड़ा ही है। सहायक क्रिया 'ह' को ही लीजिअे ब्रजभाषा और अवधी दोनोंमें अिसके समान रूप चलते हैं। अहो, अहै, अित्यादि। संज्ञाके नरन घरन, आदि प्रयोग दोनोंमें समान हैं। सर्वनाम भी अेकसे चलते हैं। डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा 'मोर' सर्वनामका प्रयोग ब्रजभाषामें नहीं मानते, परन्तु 'मेरे' शब्दका प्रयोग दोनोंमें होता है जैसे —

मेरे बाबुलरे सोनेके दीपककलसा लैदे।
मेरे बाबुलरे नितनितकलसिया फूटती।

(ब्रजका अेक लोक गीत)

होती बिटिया जो मेरे यक केहुँराजाघर देति बियाहि।
कुम्भक लौती रयहिराजाको, औ लाखनको लेति बचाय।

—आल्हा

आल्हाकी भाषा बैसवाड़ी है, जो अवधीका ही अेक रूप है। 'लौना' ब्रजभाषामें 'लावनी' हो जाता है। क्रियार्थक संज्ञा जैसे 'राखब' तथा वर्तमानकालिक कृदन्त, जैसे 'राखत' दोनोंमें अत से होते हैं। सहायक क्रियाके रूपोंमें भी सादृश्य है। कअी विभक्तियाँ भी अेकसी हैं। श्री किशोरीदास वाजपेयीने भी अपनी पुस्तक 'ब्रजभाषाका व्याकरण' में ब्रजभाषाका व्यापक प्रभाव माना है जो अवधीही नहीं कअी अन्य प्रान्तीय भाषाओं पर भी दिखायी देता है। अवधीपर ब्रजभाषाका प्रभाव बतलाते हुअे डाक्टर धीरेन्द्र वर्माने 'ब्रजभाषा व्याकरण' में

यह स्वीकार किया है कि "अेक ओर तो अुसम ब्रजभाषाके अनेक रूप मिलते हैं, दूसरी ओर पूर्वी भाषाओंके कुछ चिह्न दिखलायी पड़ने लगते हैं।" वास्तवमें पूर्वी भाषाअें जिन्हें डॉक्टर धीरेन्द्र वर्माने ब्रज-साहित्य मंडलके गत मैनपुरी अधिवेशनके अध्यक्षीय भाषणमें कोशल-जनपदके अन्तर्गत माना है, अवधीके द्वारा ब्रजभाषासे भी प्रभावान्वित हैं। भोजपुरीका भी यही हाल है। भोजपुरी 'बाट' धातु अवधीकी ही है। कबीरकी कअी कविताओंपर भी तो अिस भाषाका प्रभाव भी दिखलायी देता है। अपनी भाषा या बोलीके सम्बधमें कबीरका स्वयं कहना है :—

बोली हमारो पूरबकी हमें लखे नहीं कोय।
हमकोतो सोअी लखे, धुर पूरबको होय।

—हिन्दी कवि और काव्य भाग २

जान बीम्सने रायल अेशियाटीक सोसायटीके भाग ३ सन् १९६२ में लिखा था कि भोजपुरी भोजपुरकी बोली है, जो शाहाबादमें पश्चिमोत्तरमें बसा है। डाक्टर ग्रियर्सनका तो यहाँतक कहना है कि "राजनीतिक दृष्टिसे अिस स्थानका सम्बन्ध संयुक्तप्रान्त (वर्तमान अुत्तरप्रदेश) से होना चाहिअे न कि बिहारसे, यद्यपि आजकल यह बिहारकी सीमाअें है।" (लिंग्विस्टिक सर्वे आफ अिंडिया, भाग ५) अिन अुद्धारणोंसे यह सिद्ध है कि भोजपुरीको भी अवधी और ब्रजभाषाके प्रभावसे मुक्त नही रखा जा सकता।

बुन्देलखंडी और ब्रजभाषाके बीचका भेद तो बहुत बारीक है। स्वर्गीय रायबहादुर डाक्टर श्याममुन्दरदासने अपनी पुस्तक 'भाषाविज्ञान' में लिखा है कि 'यह बुन्देलखंडकी भाषा है और ब्रजभाषा क्षेत्रके दक्षिणमें बोली जाती है। शुद्ध रूपमें यह झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, ओडछा, सागर, नरसिंहपुर सिवनी और होशंगाबादमें बोली जाती है। अिसके मिश्रित रूप दतिया, सतना, चरखारी, दमोह, बालाघाट तथा छिन्दवाड़ाके कुछ भागोंमें पाये जाते हैं। "वास्तवमें सतना और चरखारीकी भाषापर बुन्देलखंडी भाषाका कुछ प्रभाव हो सकता है, परन्तु दतिया, दमोह, बालाघाट जबलपुर आदि तो शुद्ध बुन्देलखंडीके ही क्षेत्र हैं।

ब्रजभाषा-शब्दोंमें पायी जानेवाली ये-औ ध्वनियाँ बुन्देलीमें प्राय ये ओ के रूपमें ही प्रयुक्त होती हैं। शब्दके बीचमें आनेवाला 'ह' बुन्देलखंडीमें अधिकतर लुप्त हो जाता है। कर्मकारकमें ब्रजभाषाका 'को' 'खो' हो जाता है। जैसे 'हम खो'। अनुनासिक शब्दोंका प्रयोग बुन्देलखंडीमें अधिक होता है। अिन्ही सब कारणोंसे यह अक्सर ब्रजभाषासे भी अधिक श्रुत-मधुर हो जाती है। परन्तु जैसा डाक्टर धीरेंद्र वर्माने 'ब्रजभाषा' व्याकरणमें लिखा है केवल बुंदेलीमें ही पड़ो का परो नही हो जाता, ब्रजभाषामें भी होता है। हाँ, आपका यह विचार मान्य है कि "दोनोंमें व्याकरण सम्बन्धी अधिक भेद नही है केवल दर्शन समूहोंका भेद है।" जो स्वाभाविक भी है।

काव्यमें रस

विभाव आदिके द्वारा पोषित किये मनोमोहक भाव ही रसका रूप धारण करते हैं और विभाव अनुभावके ज्ञानसे ही रसकी अनुभूति अुत्पन्न होती है जिसका सम्बन्ध मानव आत्मासे होता है। अंग्रेजी कवि-कालरिज अिसीलिअे कवि-कल्पनाको आनंदस्वरूप आत्मासे अुत्पन्न मानता था और क्योंकि आत्मा शाश्वत है, अिसीलिअे काव्यकी कल्पनाअें भी शाश्वत सौंदर्यपर निर्भर रहती हैं। यह शाश्वत सौंदर्य ही "चतुर्वर्गप्राप्ति" का साधन बनता है। अिटलीका अभिव्यंजनावादी विचारक क्रोचेने भावों तथा मनोविकारोंको काव्यकी अुक्तिका विधायक नही माना, परन्तु अभिव्यंजनाका प्रासाद भावोंकी नींवके बिना नहीं खड़ा हो सकता।

वास्तवमें रूप विधान कल्पनाके द्वारा ही निर्मित होता है अनुभावके व्यापारों तथा चेष्टाओं द्वारा आश्रयको जो रूप प्राप्त होता है, वह कल्पनासे ही मिलता है। अैसी हालतमें काव्यमें कल्पनाका स्थान साधारण नहीं माना जा सकता और काव्यकी अनुभूतिके लिअे कल्पनाका अस्तित्व कवि और श्रोता दोनोंके लिअे अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक रूप-विधानके आदानसे जिस कल्पनाकी सृष्टि होती है, वह कविके अनुभवोंपर अवलम्बित है।

आधुनिक आलोचक आओ. अे रिचर्डसका कहना है कि 'जीवन और कवितामें कोओ भेद नहीं। हमारे प्रतिदिनके भावात्मक जीवन और काव्यमें भी कोओ अन्तर नहीं।" (प्रेक्टिकल क्रिटिसिज्म) काव्यमें प्रयुक्त विभिन्न रस जीवनकी विभिन्न रागात्मक प्रवृत्तियोंके द्योतक हैं, अिसीलिअे काव्यमें अुनकी निष्पत्ति आवश्यक है और अिसीलिअे रस काव्यकी आत्माका काम करते हैं। श्रृंगार रसका स्थायी भाव रति अथवा प्रेम है, जो संयोग और वियोग दोनों ही अवस्थाओंमें रहता है। वियोगकी अवस्थामें विप्रलंभ और संयोगकी अवस्थामें संयोग-श्रृंगार कहते हैं। परन्तु वास्तवमें दोनों अवस्थाओंमें रति या प्रेम स्वयं संयुक्त अनुभूति न होकर अैसा चक्र है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकारकी अनुभूतियों और भावोंका सम्मिलन होता है। सब प्रकारके भाव वात्सल्य प्रेम और दाम्पत्य प्रेमके अन्तर्गत आजाते हैं और स्थायी भाव आत्मानुरक्तिका साधन है, परन्तु श्रृंगार रसका स्थायी रति या प्रेम वह वासना नहीं जिसे अिस युगके वैज्ञानिक फ्रायड मानव जीवनमें सबसे अधिक महत्व देते हैं। फ्रायड चेतन मनपर अवचेतनका प्रभाव जबरदस्त मानते हैं, परन्तु भारतीय साहित्यका ध्येय तो अवचेतन मनपर अतिचेतन मनका प्रभाव डालना रहा है और महर्षि अरविन्द तो 'भविष्यकी कविता' से यही आशा रखते थे। परन्तु रीतिकालीन कविताकी भाँति ही श्रृंगारी लोक-गीतोंमें रस आत्माके चिरन्तन सुखका साधन नहीं बन पाया, यद्यपि अुनमें जीवनका सत्य अवश्य निहित है।

बुन्देलखंडी लोकगीतोंमें श्रृंगार

संयोग श्रृंगारमें नायिकाके श्रृंगारका विशेष महत्व है। अलंकारोंद्वारा सौंदर्यको अुन्हें पक्षीको बाँधकर सोनेके पिंजरेमें रखनेकी कल्पना की जाती है। महाकवि कालिदासकी भाँति 'अियमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' वल्कलकी तन्वीमें ही शकुन्तलाका रूप लावण्य देखनेकी क्षमता बहुत कम कवियोंमें है। अिसीलिअे अुन्हें कविता और कामिनी दोनोंके लिअे अलंकारोंकी आवश्यकता पड़ी। अेक बुंदेलखंडी गीतमें अिसी श्रृंगार साधनाका वर्णन करते हुअे लिखा गया है —

अरस (आलों) सेंककओ (कओ) लओ बेलनमें तेल फुलेल।
पटिया पारीरे माथे पै जैसे नाग लहरिया लेय।
गुबो चुटील (गुथी चोटी) अैसे रिरके (खिसके) जैसे बामी सरक जाय साँप।

माँग भरदओ रेगोरीकी, जैसे गंगाकी निकर जाय धार।
नाक नथुनियाँ नकबेसर, सोने बेंदा लग्योलिलार।
बिंदिया अनारस दमकन लागी, अनयारे लटकरये बार।
सोने सीक सुरमा रचे, जैसे बादर अुठे घन घोर।
पान अनियाँ मुखमें दये कठन हो पीक दिखाय।
दुहरी, तिहरी पचलड़ियाँ, गरेमें परे टकाअुर हार।
का छब बरनो रे गोरीकी गरेमें घूम रही खगवार।

अिसी प्रकार विभिन्न अंगोंके श्रृंगार वर्णनमें चमत्कार दिखाया गया, जिसमें काव्यका रूप पक्ष तो है परन्तु आत्मपक्ष नहीं। काव्यकी आत्मा अनुभूति चाहती है जिसका अिस गीतमें अभाव है। परन्तु साज सिंगारका वर्णन गीतमें अवश्य सुन्दर हुआ है और कुछ अुपमाअें तो वैसीही नयी हैं, जैसी आजकलके प्रयोगवादी कवि देते हैं। जैसे —

बिलना बिलनी पिंडरी बनी, जोबनकी शोभा विशाल।
मुदरी कैसी करहा बनी, मानो ढारो चतुर सुनार।

अेक दूसरे गीतमें जिसे होरीके अवसरपर बेंड-नियाँ (ग्राम नर्तकियाँ) गाती हैं अिसी प्रकार श्रृंगारका वर्णन है। अिसमें नायिकाका चित्रण पनिहारिनके रूपमें किया गया है —

चुनरी रंगी रंगरेजने। गगरी गढ़ी कुमार।
बिंदिया गढ़ी सुनारने सो दमकत सुघर लिलार।
बिंदुलिया तो लै दओ रसीले छैलने।

अेक नायिका अपने पतिको आँखोंकी ओट नहीं देखना चाहती, अिसलिअे प्रियतमसे कहती है —

प्रीतम प्रीत लगाअिके बसन दूर नअि जाअु,
बसौ हमारी नागरी, दरसन देंदै जाअु
नजर सें टारे टरौ नअि मोरे बालमा।

अेक अन्य नायिकाको पति दूर होनेसे अुसके दर्शन ही दुर्लभ हो गये— जिससे वह अपनी देहकी अुपमा पीपरामूलसे देती है, जिसका तात्पर्य यह है कि वह सूखकर दुबली हो गयी है —

सबके सैयां नीरे बसे, मो बोलम (दु खिनो) के दूर ।
पूरी-परी पै नाचे हैं, सो है गयी पीपरामूर ।

ठाकुर कविने अिसी भावको व्यंजित करते हुअे लिखा कि 'जिन लालन चाहकरी नितहीतिन्है देखिवेके अब लाले परे।" निकटताका अिस प्रकार दूरीमें परिवर्तित हो जाना, वास्तवमें नायिकाके लिअे दुखकी बात है और दुखमें कामिनीका यह अनुराग पूर्व स्मृतियोंके रूपमें छलका पडता है ।

पारिवारिक जीवनकी छटा

अेक गीतमें परिवारिक जीवनके दो दृश्य बडे सुन्दर ढगसे दिखलाये गये हैं। चार स्त्रियां हैं, दो गोरी और दो सांवरी। दो सांवरी परिवारमें तिरस्कृता हैं। अुनका किसीको ख्याल नहीं। गोरी सास और ननद का सुख भोगती हैं। सब शृंगार करती हैं। अुन्हें पतिका प्यार प्राप्त होता है, जब कि सांवरीका पति किवाडे तक नहीं खोलता और अुसे निराश होकर वापस आना पडता है। अुल्लास और निराशाके दो मार्मिक चित्र अिस बुन्देलखंडी गीतमें बडे सुन्दर बन पडे हैं। गीत सावनमें ही अधिकतर गाया जाता है —

गुंअिया दो गोरी दो सांवरो ।
गुंअियां चारअु बजारे जायं, सहेली सावन भरझूलियो।
गुंअिया कौने बिसाये कारे कजरवा कौने बिसायेलौजी पान।
गोरी बिसाये कारेकजरवा, संवरी बिसायेलौंजी पान ।
गुंअियां दो गोरी, दो सांवरो ।
गुंअिया कौनेखों कजरा खूब लगे, औ कौना खोरचे है तमोर।
गोरीखो कजरा खूब लुभे, गुंअिया सवरीखो रचे तमोर।
गुंअिया दो गोरी, दो सांवरो ।
पैले औसरे सवरीलो गुंअिया, ओरी करल्यो सोरअु सिंगार।
सासो पै मांगो करुअो री, गुंअियां ननदी पै मांगो फुलेल।
सासो न दीनो करुअो री, गुंअिया ननदी न दीनो फुलेल ।
गुंअियां दो गोरी, दो सांवरी ।
पिनयाँ लगाय गोरी पटियां जोपारी गुघविनभर लओ माग।
(तेल न मिलनेसे पानीसे पाटीपारी और अींगुरन मिलनेसे लाल-लाल घुघचियोंसे मांगभरी)
अूंची अटरिया चढ़ि गअी गुंअियां, मोरी लैहै बेला (कटोरा) भरतेल।
खुलीरी किवरियां लगलअी गुंअियां मोरी, जागत सोवे नाय ।
झटक अटरियां अुतरी गुंअियां ठाढे पटक दओ तेल।
गुंअियां, दो गोरी दो सांवरो ।
भोरभयें सखि पूछन लागीं, ओरी कैसे बितायो सारी रैन।
अिन सिजियन पर्यो पथरारी गुंअियां, मोरे राजापै पर्यो तुषार।
गुंअियां दो गोरी दो सांवरी ।

यह तो हुअी निराश पत्नीकी बात । अब दूसरी ओर दो गोरियोंके अुल्लास और आनन्दका वातावरण देखिअे —

अिसे औसरे गोरीके गुंअियां, करलअो सोरह सिंगार।
सासने दीनी ककओरी गुंअियां, ननदोनें दीनो फुलेल।
गुंअियां दो गोरी दो सांवरो।
बेला तेलसे पटिया हो पारी, औगुर भरलअी मांग।
अूंटी अटरिया चढिगअी गुंअियां, लैये बेलाभर तेल।
लगी केवरिया खुलगअी गुंअियां, सोअत जगो नाय।
कहींजो पायते गिररअू राजा, कहौं पलट घर जाअु।
गुंअियां दो गोरी दो सांवरी ।
ना तो पायते गिररअ धनिया, नां तो पलट घर जाव।
मोरो हमारी पिंडरी री धनिया, बैठो हमारे साथ।
गुंअिया दो गोरी दो सांवरी ।
भोर भये सखि पूछन लागी। गुंअियां कैसे बितायी सारी रैन।
अुनसिजिया फुलवा हो बरसे। मोरी राजा पै अुडिलो गुलाब।
गुंअियां दो गोरी दो सांवरो ।

अेक अन्य गीतमें नायिका पतिसे अपनी ओर अच्छी तरह प्रेमपूर्वक देखनेका आग्रह करती है।

' नजर भर देना' का अर्थ ही है अच्छी तरह देखना प्रेम पूर्वक देखना है—

> नजर भर हेरत काय नजिर्याँ।
> हम तो राजा बनकी हिरनियाँ,
> तुम ठाकुरके लरिका।
> तुपकलोर मारत काय नजियाँ। नजर भर

संस्कृतके अेक सुप्रसिद्ध आचार्य वामनने रसको गुणका प्रधान लक्षण माना है। अुनके मतानुसार रसकी सहायतासे ही शैलीमें कान्ति प्रकट होती है। यह बात ठीक भी है। कारण शैली, वह परिधान है जो वह शरीर और आत्माके सौन्दर्यपर ही निखरता है। लोक गीतोंमें आत्माका सौंदर्य अधिक व्यापक रूपमें रहता है, अिसीलिअे कभी कभी शैलीमें कोअी विशेष आकर्षण न होते हुअे भी रसका परिपाक शैलीको अुद्भासित कर देता है। अूपर अुल्लिखित अधिकांश गीतोंमें भी शैलीका चमत्कार रसकी स्वाभाविक निष्पत्तिके कारण चटक और चपल दिखलायी पड़ता है।

अेक अन्यगीतमें नायिका नायकको विदेश गमनसे रोकनेके लिअे कितना बनाव तनाव सोचती है। अिस गीतकी नायिका परकीया जान पड़ती है —

> जिन जअियो विदेशी दिन थोरो।
> दिन थोरोरे। दिन थोरो।
> थोरो जियन मुख न मोरो।
> अूंचे अटा पै पलगा बिछाअूं।
> दुआरे बाँध दो जो घोरो (घोड़ा)
> जिन जाअियो विदेशी दिन थोरो।

नायिका परकीया सी है ही, कुछ कुछ स्वयं दूतिका सी भी जान पड़ती है। कारण, वह विदेशीको रोकनेके साथ-साथ परिस्थितिको भी समझाती जाती है जिससे आगन्तुक निश्चित होकर ठहर सके। दरवाजेपर घोड़ा बंधवानेमें भी अिस शंकाकी परिपुष्टि होती है। क्या कि यदि पति होता तो अुसे घोड़ा बांधनेका स्थान बतानेकी पत्नीको क्या आवश्यकता पड़ती? अब अेक आगत पतिकी नायिका (जिसका पति आ रहा हो) का अुदाहरण नीचे लिखे गीतमें देखिअे —

> रसिया आये गरद अुड़ी गोरी।
> जब मोरे रसिया मेंड़ पै आये
> सूखी दूब हरियानी गोरी,
> रसिया आय गरद अुड़ी गोरी।
> जब मोरे रसिया कुवना पै आये,
> रीते कुअें भरि आये गोरा ।
> जब मोरे रसिया द्वारे पै आये,
> मोतियन चौक पुराये गोरी।
> जब मोरे रसिया बखरी (घर) में आये,
> सोनके कलस धराये गोरी।

अिस गीतमें नारीके हृदयका अुल्लास बड़े सुन्दर ढगसे दिखलाया गया है। अुसके चित्तकी प्रसन्नता चारो ओर स्फुरित है और वह स्वयं स्वागतकी तैयारीमें निमग्न है। सामने अेक चित्र सा खड़ा हो जाता है, जिसे हृदयकी तूलिकासे चित्रितकर जीवनके रंगसे रंगा गया है। असीही अेक आगतपतिकाके हृदयका अुल्लास वर्णन करते हुअे हिन्दीके अेक कविने लिखा है कि 'अगियाकी तनी खुल जात घनी सो बनी फिर बाँधत है कसिके।' कविकी भावनामें अतिशयोक्ति अवश्य है परन्तु वह नारीके हृदयमें झाँककर अुसके मनकी अुत्फुल्लताको अवश्य सफलताके साथ व्यक्त कर सका है।

अेक अन्य बुंदेलखंडी गीतमें जो झाँसीकी तरफ गाया जाता है, नारीकी पतिप्रणयरता तथा सतीत्वका सुन्दर ढंगसे प्रकटीकरण हुआ है। नारी कुअेंपर पानी भरने गयी। पतिके विरहके कारण दुबली हो गयी है, अुससे अुसकी चोली ढीली पड़ गयी है और हार भी ढीले पड़ते हैं। अुसे देखकर अेक धोबी प्रलोभनों द्वारा फुसलाना चाहता है परन्तु सतीका सतीत्व जाग्रत हो जाता है, और वह धोबीको अच्छी डाँट बताती है। अुसे देवरके आनेपर बेरीके पेड़से बधानेकी कहती है —

> अहो रतन कुआं मुख साँकरे, अलबेली भरें पनिहार।
> अरी अरी कुअनाकी पनिहारी, काहे ठाढी बदन मलीन।
> कै तेरो हार कुअना गिरो, अरी कै तेरो बिछुरो पनिहार।
> ना मेरो हार कुअना गिरो अरी न बिछुरो पनिहार।
> कहरा तो ल्यावें लरका दरजीको कहरा लिवावें पनिहार।

[शेषांश पृष्ठ ६२ पर]

सम्पादकके नाम अेक पत्र

[कभी-कभी मेहमान और मेजमान, दोनों आनेवाले और बुलानेवाले, परेशानीका शिकार बनते हैं, हंसी भी आती है और पश्चाताप भी होता है। जिसका दर्शन जिस लेखमें कीजिये। —सं०]

आतिथ्य धर्मकी पराकाष्ठा

मित्रवर श्री पन्नालालजी शर्माका अेक पत्र है। भारतवर्षके अेक बड़े शहरसे, जहां हिन्दी, मराठी, गुजरातीकी त्रिवेणीका संगम है, बंबअी मत समझ लीजियेगा जिस शहरको, यह मजेदार पत्र आया है। पत्रमें 'राष्ट्रभारती'के पाठकोंको देखने मिलेगा कि किसी लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिक व्यक्तिको अपने यहां किसी समारोहमें बुलाते हैं तो कभी-कभी अुत्साहके मारे हम जितने आत्मविभोर, आत्मविस्मृत हो जाते हैं कि हमारा आतिथ्य-धर्म पराकाष्ठाको पहुँच जाता है। 'पराकाष्ठा' का अर्थ होता है चरमसीमा। तो सचमुचमें अैसाही अेक प्रसंग है जब ·····में, स्वेच्छासे नहीं किन्तु स्वातःसुखाय जिसलिये कि अुसमें बहुजन-सुखायकी भावना निहित है—जिस भावनाको लेकर कोअी ख्यातिप्राप्त साहित्यकार या कलाकार निमंत्रित होकर आया करता है, आगत व्यक्तिकी मेहमानदारीका हमने मूर्धाभिषेक कर डाला। तो पढ़िये :—

मराठी साहित्य-जगत्में प्रसिद्ध अेवं लब्ध-प्रतिष्ठ विदुषी लेखिका श्रीमती मालती दाडेकरको अबकी बार हमने व्याख्यान देनेके लिये बुलाया।

"हमारे जीवनकी कुछ समस्यायें"—विषयपर आज बोलने जा रही थीं, सो अेक्सप्रेससे वे यहां आ रही थीं। स्टेशनपर अतिथिकी अगवानीके लिये जाना पहला धर्म है। मैं स्टेशन पहुँचा। सोच रहा था कि न जाने वे स्वभावसे कैसी होंगी, किस वेश-भूषामें होंगी, क्या खाती-पीती होंगी, कैसे अुन्हें पहचानूंगा, कैसे बातचीतका सिलसिला शुरू करूँगा। येही विचार बार-बार मनमें चक्कर काट रहे थे कि गाड़ी धनधनाती आकर प्लेटफार्मपर रुकी। मैं कुली-हमालको लेकर जिधर-अुधर दौड़ने लगा और जिस धक्कमपेलमें न जाने कितने लोगोंसे टकराया और कितनोंके होल्डालोंपर हड़बड़ाकर गिर पड़ा। सचमुच जिस समय मेरी जो स्थिति थी वह बड़ी करुण अेवं मजेदार ही थी। सोच रहा था, कहीं वे प्लेटफार्मसे निकल न जायें, क्या सोचेंगी कि यहांके व्यवस्थापक कितने व्यवहार-शून्य, अनजान हैं आदि-आदि......। किसी प्रकार सेकंड क्लासके डिब्बेके पास पहुँचा तो अेक स्वस्थ सुन्दर भद्र महिला बड़ी सहज हाथकी महाराष्ट्रीय साड़ी पहिने अपने सामानको डिब्बेसे अुतारती हुअी दिखायी दी। मेरे मनने कहा, हो न हो यही श्रीमती दाडेकर हैं! किन्तु नाम पूछनेपर तो अजीब-सा लगेगा। क्या सोचेंगी कि मुझे पहचानते भी नहीं! जितनी बड़ी, मराठी साहित्य-मन्दिरकी आराधिकासे कैसे पूछें कि, क्या आपही मालतीबाअी दाडेकर हैं? लेकिन नहीं पूछता हूँ; तो काम ही कैसे चलेगा। कुछ सूझताही नहीं कि क्या युक्ति की जाये, बुद्धि जवाब दे चुकी है। मेरे मनमें जिन सारे विचारोंकी शृंखला अेक मिनटमें जुड़ गयी और बादमें साहस बटोरकर मैंने कह ही तो दिया कि 'क्या आपही श्रीमती मालतीबाअी दाडेकर हैं?' परन्तु न जाने क्यों शब्द जितने धीरे निकले कि मैंने स्वयंही नहीं सुना कि मैंने क्या पूछा है। परन्तु डिब्बेके सामने छींका टूट गया, अुन्होंने शीघ्रतासे कहा 'जी, मैं मालती दाडेकर हूँ।' अुन्होंने जो अुत्तर दिया अुससे प्रकट था कि केवल मैं ही अुन्हें खोज रहा हूँ सो बात नहीं, वे भी मुझे खोज रही थीं और जो समस्यायें मेरे सामने थीं ठीक वे ही अुनके सामने भी थीं। अस्तु, कुलीने अुनका सामान अुठाया और हमारी मोटरके कैरियरमें रख दिया और हम लोग निर्धारित निवास-स्थानपर पहुँचे। अुन्हें जहां ठहराना था वहां अुन्हें छोड़कर हम लोग मोटर लेकर

चले आये और कह दिया अपने अतिथिसे कि हम लोग भाषणके पन्द्रह मिनिट पहले अुन्हे लेने पहुँच जायेंगे।

× × ×

लौटते समय कार्यवश अनेक स्थानोंपर भटकने हुअे तीन घंटे बाद जब कार्यालय पहुँचा तो देखा अेक अजीबसी हलचल-खलबली सी मची हुअी है मुझ देखतेही लोग मुझपर टूट पड़े,जैसे निगल जाना चाहते हो 'चिल्लाने लगे, 'सेक्रेटरी बने फिरते हैं यहाँ फोनपर फोन आ रहे है बेचारी ४०० ५०० मीलकी सफरमे आयी हैं विदुषी है स्त्री है, अरे जब किसीकी योग्य व्यवस्था और सम्मान नहीं कर सकते थे तो बुलाते क्यो हो झख मारने ? वह अितनी बड़ी मराठी जगत्‌की भद्र महिला है कि क्या कहेगी, अेककी गलती होती है लेकिन बदनामी तो सभीकी होती है।'

मैं असमंजसमें पड़ गया कि आखिर हो क्या गया! सही सलामत घंटे दो घंटे पहले मैं ही पहुँचाकर आया हूँ, फिर फोनसे अैसी कौनसी दुर्घटना सुनायी जा रही है। मैंने तो अैसा कोअी असभ्य व्यवहार नहीं किया। मराठी भाषा और रीति-नीतिका पूरा मर्मज्ञ न होनेके कारण तो मैंने अुनसे पूरी बातचीत भी नहीं की, फिर यह क्या बला है। मैंने अुनसे पूछा— अरे भाअी क्या हो गया, कुछ बोलो तो?'

वे सभी अेक साथ कहने लगे "अरे अिससे बढ़कर किसी बुलाये हुअे आगत अतिथि सज्जनकी क्या हँसी हो सकती है, तीन घंटेसे बेचारी बैठी है परेशानीमें। तुम किसीकी परवाह तो करते नही, अपनेमें फूले फिरते हो? अब तो मैं काँप गया, सोचा हो न हो कोअी अनपेक्षित घटना अवश्य घटी है। लेकिन ये देवता लोग कुछ कह भी नहीं रहे हैं। मैं चिढ़-सा गया और पूछा—'क्या हो गया है अैसा, जो घंटे भरसे सारा ऑफिस सरपर अुठा रखा है?' वे सब साश्चर्य कहने लगे 'अरे तुम्हें मालूम नहीं जिस मोटरमें तुम मालती बाअीको स्टेशनसे लाये थे, अुसके कैरियरमें अुनका बिस्तरा और पेटी रखी है, बेचारी बिना नहाये धोये अपने सामानकी प्रतीक्षामें बैठी है। फोनपर फोन आ रहे हैं पर तुम्हारा तो पता तक नहीं, कुओंमें बास डाले गये। सन्देशा भी दें तो कहाँ दें! क्या तुमने अुनका सामान अभीतक नहीं पहुँचाया?'

× × ×

श्रीमती मालतीदेवी दांडेकरका भाषण सभाभवनमें हुआ और शानदार हुआ। सामान घंटे दो घंटे तक खो जानेसे हुअी अनुभूतिसे अुनने 'मूड'को अेक नया कल्ट मिला था जिससे अुन्होंने अपने भाषणमें कहा हम कभी-कभी सामयिक छोटी-छोटी चिन्ताओंमें अितने व्यग्र हो जाते हैं कि हमारे जीवनकी महत्त्वपूर्ण समस्या छोटी और क्षणिक चिंता ही बन जाती है, परन्तु अैसा होना नहीं चाहिअे। भाषणके बाद श्री०[illegible]बाअीसे साहित्यके विषयमें मन खोलकर चर्चा की। अु[illegible] लिखी हुअी पचीसों पुस्तकें देखी हैं, जिनमें मराठी लोकगीतों के संग्रह कहानी संग्रह, बालकथाअें और सामाजिक परिवारिक अुपन्यास थे। मैंने पूछा 'आप अपनी सबसे अच्छी रचना कौनसी समझती हैं और वह क्या?'

अुन्होंने कहा मुझे मेरी सबसे अच्छी रचना 'संसारमें पदार्पण' लगती है, जो अेक परिवारिक अुपन्यास है और अिसलिअे अच्छा अुपन्यास है क्योंकि अुसकी नायिका अेक आदर्श नायिका है— जिसकी आवश्यकता आज गृहस्थीके भारसे झुके हुअे और कुरीतियोंसे ग्रसित प्रत्येक भारतीय परिवारको है।' मैंने फिर पूछा क्या आपने सिनरियो लिखनेका प्रयत्न कभी किया है?' वे बोली 'मैंने पचासों कहानियाँ और दर्जनों अुपन्यास लिखे हैं, अुनपर कअी चलचित्र बनाये जा सकते हैं। कुछ फिल्मवालोंने अिस विषयमें मुझसे बातचीत भी की थी लेकिन मेरी अपनी शर्त है कि, मेरी नायिका भद्दे ढंगसे न नाचेगी, न गायेगी; वैसा आचरण और बातचीत भी नहीं करेगी जो पुस्तकमें न हो या जो मैं नहीं चाहती हूँ। यही वजह है और मुझेभी हिचकिचाहट है कि अबतक मेरी किसी भी रचनापर फिल्म नहीं बन सकी। और हम आयेदिन देखते हैं कि ये फिल्म निर्माता अच्छीसे अच्छी कलाकृतिको बिगाड़कर बाजारू चीज बना देते हैं। सच्चे साधक कलाकारको कितनी ठेस लगती है।'

श्रीमती मालतीबाअी दांडेकरजीसे, अन्तमें मैंने क्षमा मांगते हुअे कहा कि आज आपको मैंने बेहद तकलीफ पहुँचायी! भूलसे सामान मोटरमें मेरे साथ चले जानेसे आपको जो घोर असुविधा हुअी, कष्ट हुआ, मैं दुखी हू--शर्मिन्दा हूँ। लेकिन यह आजकी घटना भी अीश्वरेच्छा थी।

'अीश्वरेच्छा' शब्द सुनते ही वे खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली कि "आप अीश्वरकी वकालत क्या करते है। हमें प्रत्येक और प्रतिक्षण घटनेवाली घटनासे लाभ अुठाना चाहिअे। वैसे मेरे सामने आजकी यह 'सामानकी दुर्घटना" अपने आपमें अेक कहानीका मजेदार प्लॉट है।

सारस्वत धर्म

: श्री अुमाशंकर जोषी :

[गुजराती]

आपणा देशनी जुदी-जुदी भाषाओना साहित्यका रोने मळवानु थाय छे त्यारे अेकमेकना कार्यने भले ओळखता न हता पण बधा अेवा अेक रीते ज जाणे अंधकारमा मार्ग (Groping) करी रह्या हता तेनु भान तो तरत थाय छे ज । आपणा देशनी जनतानी अनर्गळ सहनशक्तिने अने अेनी मूगी आशा आकांक्षा-ओने वाचा आपी शके अेवा अुचित साहित्यस्वरूपोनी खोजनो अणसारो पण मळी रहे छे । पण ते छता मुख्यत्वे वातो साहित्यआयोजना (टेकनिक) अगे घणी चर्चा तो चाले छे । साहित्यना माणसो घणु खरु दुनियानी घटनाओमां सीधा सडोवायेला नथी होता, पण अेनो अर्थ अे नथी के तेओ चंदनमहेल (Ivory tower) मां रहे छे । देशनो अटपटो विटबनाओनो ख्याल पटकरण गणाना आ वर्गने बेचेन बनाव्या वगर रहे अे केम बने ? जीवन केम वधु अुन्नत बने, वधु समर बने अे माटे अे पण सळगी रह्या होय छे ।

सरस्वतीके अुपासकोंका धर्म

: अनुवादक : श्री गौरीशंकर जोशी :

(हिन्दी)

हमारे देशके भिन्न-भिन्न भाषाओंके साहित्यकार जब कभी कहीं मिलते हैं, तब वे भलेही अेक-दूसरेको या अेक-दूसरेके कार्यके बारेमें न जानते हों, फिर भी अिसका तो तुरन्त खयाल हो ही आता है कि सब मानो अन्धेरेमें अेक ही जैसे रास्ता टटोल रहे थे। साथ ही साहित्यके अैसे स्वरूपोंकी खोजका संकेत भी मिल जाता है, जो हमारे देशकी जनताकी असीम सहनशक्ति और अुसकी मूक आशा-आकांक्षाओंको वाणी दे सके। बावजूद अिसके यह बात नहीं कि अुनके बीच केवल साहित्यकी आयोजना (टकनिक) या साहित्य-सर्जन सम्बन्धी ही विशेष बातें होती हों। देशके महान प्रश्नों और मानव-जातिकी समस्याओंके बारेमें भी अुनमें काफी चर्चा होती है। अक्सर साहित्यिक लोगोंका दुनियाकी घटनाओंसे कोओी सीधा सम्बन्ध नहीं होता, वे स्वयं अुनमें फँसे हुअे नहीं होते; लेकिन अिसका यह अर्थ नहीं कि वे कहीं दूर किसी अेकान्त चन्दन महल (Ivory tower) में रहते हैं। देशके जटिल प्रश्नों और दुखका खयाल संवेदनशील माने जानेवाले अिस वर्गको बेचैन किये बिना कैसे रह सकता है ? जीवन किस प्रकार अधिक अुन्नत और श्री-सम्पन्न बने अिसके लिअे अुनके मनमें भी आग सुलग रही होती है।

पण साहित्य अने कलाना अुपासकोनी साधना अलग प्रकारनी होय छे। लोकजीवनमां मूळियां नाख्या वगर अे जीवी ज न शके, पण जगतना रागद्वेषो थी पूर्णपण लिप्त थवु अेमन पालवे नहि। दुनियामा कलेशो तो अुकळता होय छे। कलेशोने वकरावनाराओनी कमीना होती नथी। सरस्वती के अुपासको तो अे कले शोनी अन्दर स्फुरी रहेला सवादिताना बीजने पोषवा मथी रहेला होय। सारस्वतोनी आ सवादितानी साधना घेलछाभरी आदर्शमयता नथी। विश्वप्रेममां, व्यवहारमां अेनो अुपयोग छे। समाजमां अेवी व्यक्तिओ के व्यक्ति मडळो जोओअे ज समाजना धारे वारे पलटाता राग द्वेषोने वश न थाय अेटलुज नहि वखत आव्ये समाजनी सामे अुभा रहीने पण अेने अेनो कल्याण-मार्ग चींधी शके। वाल्मीकि न होत तो सीता क्यां जओन रहेत? वाल्मीकि न होत तो सीतानो स्वीकार करवा माटे अयोध्याना लोकोने दम भीडीने कोण कहेत? आपणा देशनो अितिहास जोओशु तो जणाशे के व्यवहारना राजकारणना माणसोअे देशने घणु वार छिन्न भिन्न राख्यो, ते छतां दुनियाने अचबो अुपजावे अेवा विरळ आंतरअेक्ता आ देशमा शी रीते घूटाओ अने देशनी पडती वेळा आवी तोये टकी रही? देशनी आवी अेक्तानी साधनामां सारस्वतोनो मोटो फाळो छ।

अे धर्म बजाववानी जरूर अत्यारे ओछी छे अेम मानवानु नथी। बलके आजनी घडीअे सारस्वतोअे व्यक्ति तरीके तेमज मडळो तरीके अेकता अने सवा दितानी पोतानी साधना वधु सक्रिय बनाववानी जरुर छे। राजकारणना माणसो आ साधनानु गौरव आपो आप समजी शके अेवी शुद्ध अने असरकारक पण अे होवी जोओअे। दुश्यन्त कण्वना तपोवनमा 'विनीत वेश' मां जवानु विचारे छे। धनके सत्ताना माणसो सारस्वत मडळोमां 'विनीत वेशे' आवे अेटलो अे मडळोअे पोतानो प्रभाव प्रगटाववो जोओअे। पोते अेमना वर्चस् नीचे तो हरगीज न आवे।

लेकिन साहित्य और कलाके अुपासकोकी साधना कुछ भिन्न प्रकारकी होती है। लोकजीवनमें जड जमाये बिना तो वे जिन्दा ही नहीं रह सकते लेकिन दुनियाके राग द्वेषमें पूर्णरूपसे लिप्त हो जाना अुन्हें नही पुसा सकता। क्लेशोका अुफान तो दुनियामें निरन्तर चलता ही रहता है। क्लेशोको अुभाडने वालोकी भी कोअी कमी नही होती। सरस्वतीके अुपासक तो अुन दुखोके भीतर खिल रहे सवादिता (हार्मनी) के बीजके विकासके लिअे प्रयत्नशील होते हैं। सरस्वतीके अुपासकोकी सवादिताकी यह साधना कोअी पागल आदर्शवादिता नहीं। विश्वप्रेम और व्यवहारमें अुसका अुपयोग है। समाजमें अैसे व्यक्ति या व्यक्तियोके समुदाय होने चाहिअे, जो समाजमें दिन प्रतिदिन बदलते रहनेवाले राग द्वेषोके वश न हो। अितना ही नही, बल्कि समय आनेपर वे समाजके खिलाफ खडे होकर अुसे कल्याणमार्ग भी बता सकें। वाल्मीकि न होते तो सीता कहाँ जाकर रहती? वाल्मीकि न होते तो सीताको स्वीकार करनेके लिअे अयोध्याके लोगोसे खम ठोककर कौन कहता? हमारे देशका अितिहास देखेंगे तो पता चलेगा कि व्यावहारिक-राजनैतिक पुरुषोने देशको बहुत कुछ छिन्न विछिन्न हालतमें रखा, फिर भी दुनियाको अचम्भेमें डाल देने जैसी विरल आतरिक अेक्ता अिस देशमें कैसे मजबूत बनी, जो देशके पतनके समय भी टिकी रही? देशकी अैसी अेक्ताकी साधनामें सरस्वतीके अुपासकोका काफी बडा हाथ रहा है।

यह न माना जाअे कि आज अिस धर्मपर चलनेकी कोअी कम जरूरत है। बल्कि आज तो सरस्वतीके अुपासकोको व्यक्तिगत रूपमें और अिसी प्रकार मण्डलोके रूपमें अेकता और सवादिताकी अपनी साधनाको और भी अधिक सक्रिय बनानेकी जरूरत है। वह अितनी शुद्ध और असरकारक होनी चाहिअे कि राजनैतिक पुरुष अिस साधनाका गौरव अपने आप समझ सकें। दुष्यन्त कण्वके तपोवनमें 'विनीत वेश' में जानकी सोचता है। अिन मण्डलोंको भी अपना अितना प्रभाव दिखाना चाहिअे कि धन और सत्तावाले आदमी सारस्वत मण्डलोमें 'विनीत वेश' आअें। वे स्वय अुन धन और सत्तावालोके वर्चसके नीचे तो कदापि न आअें।

भक्त सोहिरोबानी नीचेनी (मराठी) पंक्तियो मानी भावनामा आ सवादिता अने अेकता स्थापता धर्मनी चावी छे

आम्ही न हो पाचातले, न हो पचवीसातले,
या सर्वांहि वळखुनिया आम्ही आतले आतले हो।
आम्ही न हो लक्षातले न हो पक्षातले,
या सर्वांहि वळखुनिया असू अलक्षातले हो।
आम्ही न हो मंत्रातले, न हो तंत्रातले,
या सर्वांहि वळखुनिया नसू मायेच्या यंत्रातले हो।

—अमे नथी पाचमाना, नथी पचीसमाना अे बधाने ओळखी लअीने अमे अन्दरना छीअे। अमे नथी लाखमाना, नथी पक्षमाना, अे बधाने ओळखी लअीने अलक्षमाना छीअे, नथी मंत्रमाना के तंत्रमाना, अे बधाने ओळखी लअीने मायाना यंत्रमाना रहता नथी।

भक्त सोहिरोबाकी निम्नलिखित मराठी पंक्तियोंमें अिस अेकता और सवादिता स्थापित करनेवाले धर्मकी कुंजी है —

"आह्मी न हो पाचातले, न हो पचवीसातले,
या सर्वांहि वळखुनिया आह्मी आतले आतले हो।
आह्मी न हो लक्षातले, न हो पक्षातले,
या सर्वांहि वळखुनिया असू अलक्षातले हो।
आह्मी न हो मंत्रातले, न हो तंत्रातले,
या सर्वांहि वळखुनिया नसू मायेच्या यंत्रातले हो।"

—हम न पांचमेंसे हैं, न पचीसमेंसे, अिन सबको पहचानकर हम अन्दरके हैं। हम न लाखमेंसे हैं, और न पक्षमेंसे, अिन सबका पहचानकर हम अलक्षमेंसे हैं। हम न मंत्रमेंसे हैं और न तंत्रमेंसे, अिन सबको पहचानकर हम मायाके यंत्रमेंसे नहीं रहे।

[पृष्ठ ५७ का शेषांश]

कौनकी चोलिया अमानें (ढोली) भअी, कौनके ढीले भये हार।

तेरे पानजो चाबें हैं रसिया चोलीपें परिगअी पीक।
अरे,अरे भजिया धोबियारे मेरी चोलीको दाग छुटाव।
जो तेरी चोलीको दाग छुटैहें, हमको कहा तुम देहु।
तोको देहीं हाथकी मुंदरी और हियें कौहार।
सिन्धर फोरि हैं तोरी मुंदरी, समद (समुद्र) बआवु तेरो हार।

लेहो ओ लेहो तेरी चोली लेहो मैं पियको सिंगार।
दाढ़ी जारो तेरे बापकी तेरी मूछं नो देसु अंगार।
जबधर आवे बारे लछमन देवरा तोहें दिरियासे देहो बंधाय।

श्री देवेन्द्र सत्यार्थीने अपनी पुस्तक 'वला फूले आधीरात' की प्रस्तावनामें लिखा है कि 'लोक गीतके स्वर मुद्दरसे आते हैं। जाने ये स्वर कहांसे फूट पडते हैं। युग-युगकी पीड़ा-वेदना, युग-युगकी हर्ष श्री, रीति नीति, प्रथा गाथा, अचूक सहज रूढिवार्ता भौगोलिक अेवं वातावरण निर्मित संस्कृत परम्परा ये सभी अिन स्वरोंमें अपने नाम, धाम अथवा वेश आदिका परिचय देती प्रतीत होती है।" यही कारण है कि लोक-गीतोंमें हम व्यक्ति और समाजके जीवनका सच्चा चित्र पाते हैं, जो हमको केवल भाव-जगत्से ही परिचित नहीं कराता परन्तु अुस वास्तविक जगतसे परिचित कराता है जो कलामें यथार्थकी अभिव्यंजनाकर आदर्शकी ओर बढ़ता है।

[वर्धा

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिअे।]

आँखोंमें—[लेखक-हरिकृष्ण 'प्रेमी', प्रकाशक-आत्माराम अेंड सन्स, दिल्ली, पृष्ठ-सख्या ११०, मूल्य २।)]

हृदयकी अनुभूतियाँ जब सरस शब्दावलीका सहारा लेती हैं तब कविता स्वय अुपस्थित हो जाती है। प्रेमानुभूतिसे प्रेरित काव्यही ससारके साहित्यमें सबसे अधिक है। महाकवि अकबरने ठीक ही लिखा था कि—

> अिश्कको दिलमें जगह दे अकबर
> शायरी कब अक्लसे हुआ करती है?

प्रस्तुत पुस्तक "आँखोंमें" और "प्रेमी" के विरह विदग्ध हृदयकी वेदना, प्रेम, कसक, मादकता, करुणा और न जाने अन्य कितनी कोमल भावनाअें अक्षरोंके पीछे खड़ी होकर पाठकको भाव-विभोर बनाती हैं।

'आँखोंमें' पुस्तकके रचयिता श्री हरिकृष्ण प्रेमी हिन्दीके प्रसिद्ध नाटककार हैं, किन्तु सत्य यह है कि वे नाटककारसे पहले कवि हैं। हिन्दी साहित्यके क्षेत्रमें वे पहिले कवि रूपमें ही प्रकट हुअे थे, बादमें अुन्होंने अनेक सुन्दर नाटक लिखे हैं। अिन नाटकोंमें भी अिनका कवि रूप छिप नहीं सका है।

"आँखोंमें" प्रेमीजीके यौवन-कालकी सरस रचना है, जिसमें अुनके अन्तरका अुच्छ्वासित धुआँ वाष्प बनकर आँखोंसे आँसू बनकर टपकने लगा है। किसी 'प्रेमी' के हृदयको जब कोअी कोमल भावना छू लेती है तब वह प्रेमोन्मत्त हो जाता है। भले ही फिर ससार अुसे पागल कहे, मतवाला कहे। वह स्वनिर्मित अपनी सृष्टिमें विचरण करता है। अुस सृष्टिके बाहर और भी कुछ है, कुछ हो सकता है—न वह अिसे जानता है, न अुसे जाननेका प्रयत्न करता है। "आँखोंमें" किसी अैसे ही मनवाले 'प्रेमी' के विशृङ्खल भाव बिखरे हुअे हैं। न यह प्रबन्ध काव्य है और न मुक्तक-काव्य। हाँ, सरस भावके मोतियोंका अुसे अेक सुन्दर सग्रह कहा जा सकता है।

किसी तरुण कविकी भावनाओंमें यौवनका अुद्दाम प्रवाह कितना सुन्दर और सरस होता है, "आँखोंमें" सहज देखा जा सकता है।

वन्दनाके बोल—लेखक-हरिकृष्ण "प्रेमी" प्रकाशक—आत्माराम अेन्ड सन्स पृष्ठ १२०, मूल्य २।)

प्रस्तुत पुस्तकमें श्री 'प्रेमी' जीकी ६० कविताअें सग्रहीत हैं। पुस्तकके प्रारम्भमें कविने अेक प्रश्न किया है।

"कविकी बाँसुरीने वन्दनाके बोल क्यों गाये? गान्धीको गये दो वर्षसे अधिक हो गये और अब कविकी साँसोंमें ये अुच्छ्वास क्यों अुमड़े?"

कविने अिस प्रश्नका अुत्तर भी दिया है—

"बापूके वदनीय व्यक्तित्वने स्वय ही फूँक लगा दी है, कविका अपने गीतोंपर अधिकार नहीं है।"

स्पष्ट है कि प्रस्तुत पुस्तकका सीधा सम्बन्ध राष्ट्रपिता गान्धी और अुनकी विचार-धारासे है। प्राय प्रत्येक गीतमें बापूके प्रति नम्र श्रद्धाजलि कविने चढायी है।

जो जुल्मकी चट्टानके
नीचे दबे नीरव रहे।
अुन मूक पीड़ित प्राणियोका।
बन गया अुच्छवास तू।
हर सांसकी था सांस तू
विश्वासका विश्वास तू॥

शैलीकी दृष्टिसे 'वन्दनाके बोल' की अेक अपनी विशेषता है। अुर्दूकी गजलके ढगपर अिन गीतोकी कुछ-कुछ रचना हुअी है। श्री 'प्रेमी'जी अिस दिशामें प्रयत्नशील है और अिधर अुन्होने अनेक हिन्दीकी अच्छी गजले भी लिखी है।

"वन्दनाके बोल" गाकर कविकी वाणी धन्य हुअी है।

कविके निकट बापूके चरण-चिन्होका विशेष महत्व है। अुसका विरवास है—

पानकोंके पंकमें भ्रम-वश
कभी फँसते नहीं वे,
जो तुम्हारी लीकपर रख
पाँव अविचल चल रहे हैं।

कवि हृदयकी कल्पनाको
ज्योति तुमसे मिल रही है।
स्वप्नके अुसके हृदयमें
खिल विमल शतदल रहे है

चिन्ह चरणोंके तुम्हारे
दीपकोंसे जल रहे हैं॥

— रामेश्वर दयाल दुबे, अेम. अे., सा. र.

गौनेकी विदा (बुन्देलखंडकी लोक-कथाअें) :— ले. श्री शिवसहाय चतुर्वेदी। पृष्ठ सख्या १६४ डबल काअुन १६ पेजी। मूल्य २) प्रकाशक-अजन्ता प्रेस लि. पटना।

यह प्रसन्नताकी बात है कि भारतीय साहित्य कारो अेव प्रकाशकोंकी रुचि लोक-साहित्यकी ओर आकर्षित हुअी है। अभीतक अधिकतर लोकगीतोंपर ही ध्यान दिया गया परन्तु ग्रामोंकी जनताका अपना कथा साहित्य भी है, जो सदियोंसे लोगोंकी जबानपर चला आ रहा है। पुस्तककी भूमिकाके लेखक श्री रामनरेश त्रिपाठीके शब्दोंमें कहा जा सकता है कि 'मनुष्य कहानी बनानेके लिअे ही अुत्पन्न हुआ है।' और वह समयके वक्षस्थलपर अपनी कहानी लिखकर अज्ञानलोकको चल देता है। अिसी कहानीको कवि और कथाकार शब्दों द्वारा सामने लाते हैं। अुसे कलाका रूप देते हैं, परन्तु मनुष्य जन्मजात कलाकार है और अुनकी कलाकृतिका प्रतिबिम्ब ही साहित्य-सरिताके नीरमें प्रतिबिम्बित दिखलायी पडता है।

लोक-साहित्य आदर्शवाद या यथार्थवादके पचडेमें नहीं पडता। वह कलाकारोंका विषय भी नहीं। विषय तो समीक्षकोंका है। परतु अक्सर समीक्षक वादोंके कुचक्रमें पडकर कलाकी कमनीयता अेवं सजीवताको भूल जाते हैं। अुसके शाश्वत सत्यको पहचाननेमें डग-मगा जाते हैं और तब साहित्य अपना स्वाभाविक प्रवाह छोडकर लकीरो और मेंडोपर चलने लगता है, जिससे अुसकी स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है। स्वाभाविकता साहित्यका सौंदर्य है और अस्वाभाविकता ही कुरूपता।

"गौनेकी विदा" में लेखकने बुन्देलखण्डकी २० कहानियोंका सग्रह किया है और सभी कहानियाँ मजेदार तथा प्रवाहपूर्ण हैं। अुनमें समाजका चित्र है और साहित्यका प्रकटीकरण। चार कहानियाँ तो सागर जिलेकी बुन्देलखडी बोलीमें लिखी गयी है। वस्तु वर्णन भी स्वाभाविक तथा आकर्षक है। कहीं कहीं तो सामने चित्र सा अुपस्थित हो जाता है। कहीं-कहीं भाषाभी बडी चुलबुली और मजेदार हो गयी है.—

'बिन्नामी झूठी न बातेंसे मीठी. घडीघडीका बिसराम जाने सीताराम ! नदेबारे सोदोष न गुनने बारेको दोष, दोषतो असो जीने बिन्ना बनाके खडी करी। और दोष आवो सोअी नैया। बामसे अने रैनचाटनेके लाने बनायी। पाककरको घोडा सकलारेकी लगाम। छोड दो दरियाके बीचमें चला जाय छमा छम छमा छम अुसपार घोडा अुसपार पान, न पाव घोड़ा सो ग्याय न घोडा घास सों ग्याय।"

यद्यपि सभी कहानियाँ 'रंजकारिके लाने' बनायी गयी है, फिर भी अुनमें दिलको ममझनेकी भी सामग्री है। प्रथम कहानी "गोनेकी विदा' कोही लीजिअे, जिसमें नारीकी बुद्धिमत्ता और मनुष्यके अभिमानका बडे मार्मिक ढंगसे वर्णन किया गया है। 'राजा रघु और ब्राह्मण' कहानी तो जीवनकी गीताके समानही अुपदेश देती है और वह भी असी मधुरताके साथ कि अुपदेश अुपदेश न होकर कहानीके रूपमें मस्तिष्कको घेरता है। 'बुन्देला ठाकुर' कहानी भी बडी मजेदार है। गोस्वामी तुलसीदासके शब्द 'सपनेहु होअ भिखारि नृप रकनाक पनि होय' याद आते हैं। अिसी प्रकार सभी कहानियाँ कोअी न कोअी अुद्देश्य लेकर चलती हैं, परन्तु अुद्देश्य कथाके आवरणमें अैसा कुछ घिरकर चलता है कि कहानी तत्व अपना रंग जमा लेता है। पात्रोंके भिन्नतामें सजीवता देखकर यह कहना पडता है कि जन साधारणमें कहानी-कला अपने कितने अवयव लेकर चली और चल रही है। अिसका प्रभाव हमारे कथा साहित्यपर भी पड सकता है।

खोजकी पगडंडियाँ —लेखक श्री मुनि' कान्तिसागर, पृष्ठ २१५, डबल क्राअुन सोलह पेजी, मूल्य ४), प्रकाशक, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।

पुस्तकके लेखक मुनिकान्तिसागर श्वेताम्बर जैन हैं, जो अधिकतर पैदल पर्यटन करते रहते हैं। आपका कहना है कि 'मेरा अनुभव रहा है कि भारतीय सभ्यता और संस्कृतिके मूलरूपको जितना पादविहारी भोली-भाली जनताम बैठकर आत्मसात कर अनेक विलुप्तप्राय सामग्रीको प्रकाशमें ला सकता है, हमारे वाहन-विहारीके लिअे संभव नहीं।" और फिर 'दृष्टि-सम्पन्न, मानव जहाँ जायगा अुसे अपने विषयकी ठोस सामग्री अुपलब्ध होही जायगी।" लेखकने अिसी दृष्टि सम्पन्नताके फलस्वरूप पहले "खंडहरोंका वैभव, नामकी पुस्तक पाठकोंको प्रदान की थी। जिसमें वैभवका विशेषण खंडहर बताते हुअे भी 'राजे सजाये मन्दिरोंमें सौन्दर्य सम्पन्न कृतियोंका भी अुल्लेख किया है।" वास्तवमें सौन्दर्य तो विश्वकी प्रत्येक कलाकृतिमें देखा जा सकता है', यदि सौन्दर्यानुभवकी दृष्टि हो तो। "साँची और भेडाघाटकी चौसठ योगिनियोंकी मूर्तियाँ आजभी तो अपने सौन्दर्यकी आभा विकीर्ण करती हैं, यद्यपि अुनका प्राचीन वैभव लुप्त हो गया है। सौन्दर्यके लिये वैभव आवश्यक नहीं। कारण, सौन्दर्य स्वयं ही वैभवका प्रतीक है और अिसी दृष्टिको ले, मुनी-कान्तिसागरजी सम्भवत 'खंडहरों' अेवं 'पगडंडियों' में भटकते हैं और 'जिन ढूंढा तिन पाअिया'के अनुसार अुन्हें, यहाँ भी सौंदर्यका वैभव मिल जाता है— कलाकी अमरता दिख जाती है। जिसे वे अपनी पुस्तकोंमें रख देते हैं।

'खोजकी पगडंडियाँ' पुस्तक भी खण्डहरोंके वैभव' की भांति मुनिजीके पुरातत्व तथा कला सम्बन्धी निबन्धोंका संग्रह है, जिसके ललितकला, लिपि और भौगोलिक यात्रा तीन भाग किये गये हैं। पुस्तकका आरम्भ जैन आश्रित चित्रकला अध्यायसे होता है। जिसमें जैन चित्रकला, भित्ति, पल्लव, ताड तथा वस्त्र चित्र आदिपर विवेचन और प्रमाणके साथ विचार प्रकट किये गये हैं, जिनसे लेखककी प्राचीन तथा अर्वाचीन ग्रंथोंकी जानकारी प्रकट होती है। दूसरे प्रकरणमें बौद्ध चित्रकलाका विवेचन है और फिर महाकोशलके जैन भित्त-चित्रोंपर प्रकाश डाला गया है। वास्तवमें यह खेदकी बात है कि मध्यप्रदेशकी पुरातत्व सामग्रीपर जैसा चाहिये अभीतक प्रकाश नहीं डाला गया, यद्यपि यहाँ पर्याप्त सामग्री अुपलब्ध है। अिसी प्रान्तमें भारतका सबसे पुराना खुदा रंगमंच मौजूद है, लेकिन सब छिपा पडा है। त्रिपुरीकी खुदाअीका कार्य भी बहुत महत्वपूर्ण है। जबलपुरमें स्वर्गीय रायबहादुर डाक्टर हीरालालकी स्मृतिमें जिस समितिकी स्थापना हुअी है, अुसके प्रयत्नोंको प्रोत्साहन मिले तो भले ही कुछ हो जाय।

लिपि-प्रकरणमें महाराज हस्तीके नवोपलब्ध ताम्र शासन, कलचुरि पृथ्वीराज द्वितीयके ताम्र-शासन और गुप्त लिपिपर विस्तारके साथ लिखा गया है। प्रथम ताम्रपत्र स्व गौरीशंकर हीराचंद्र ओझाके मतानुसार वि से ५४६ का है। दूसरे ताम्रपत्रकी लिपि तेरहवीं शताब्दी की देवनागरी है, जिससे अितिहासकी अेक नयी जानकारी यह मिलती है कि

कलिंग नरेश चोडगगको पृथ्वीदेव द्वितीयने हराया था, यद्यपि अभीतक रत्नदेव प्रथम द्वारा चोडगगका पराजित किया जाना प्रसिद्ध था।

भौगोलिक ज्ञान सम्बन्धी लेखोंमें नालदा विद्यालय, कलातीर्थ मैहर तथा पाटलिपुत्रकी पैदल यात्राओंका सुन्दर वर्णन है। अिन यात्राओंमें भी लेखक अपनी पुरातत्व दृष्टिसे विलग नहीं हुआ। मैहरकी शारदा देवीका वर्णन करते हुअे लेखक लिखता है कि "शारदाके मुखपर अद्भुत तेजकी चमक है। वीणापर अुगलियाँ अैसी साधकर रखी गयी हैं कि अुनकी कल्पना और रचना अेक पहुँचा हुआ कलाकार ही कर सकता है। शरीरके अन्य सभी अंग-प्रत्यगमें कोमलताकी मार्मिक अभिव्यक्ति है।" पाषाण-प्रतिमामें कोमलताकी अभिव्यक्ति कलाकारके ही समझनेकी चीज है और सचमुच साधारण शिल्प-कला अिस चरम अुत्कर्षको नहीं पहुँच सकती।

अिसी प्रकार पुस्तकके अनेक स्थल मार्मिक और विशद् विवेचनासे भी पूर्ण हैं। पुस्तक-पठनीय तथा अुपयोगी है।

—'अजातशत्रु'

समीक्षार्थ प्राप्त पुस्तकें तथा पत्रिकाअें

नया पथ (मासिक-पत्र) —सपा०— श्री शिव शर्मा। प्रकाशन स्थान–३१४ वल्लभभाअी पटेल रोड, बम्बअी ४। मूल्य ।।)

नवनीत (मासिक-पत्र) :—प्रकाशक—नवनीत प्रकाशन, बम्बअी। मूल्य १)

भौतिक समन्वयवाद :—ले०—श्री गोविन्दप्रसाद त्रिपाठी। प्रकाशक—रा भा. प्रकाशन, मधना, कानपुर। मूल्य १।।।)

रजवाड़ा :—ले०श्री देवेशदास। प्रकाशक—आत्माराम अेण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली। मू० ५)

अभिनय (मासिक पत्र) :—प्रका०—फिल्मवेज कार्पोरेशन, कलकत्ता। मूल्य ।।)

परेड ग्राअुँड :—ले०—श्री हसराज रहबर। प्रका०—आत्माराम अेण्ड सन्स, दिल्ली। मू० १।।)

गुरु दक्षिणा :—ले०—श्री सन्तराम। प्रका —आत्माराम अेण्ड सन्स, दिल्ली। मूल्य ।।।)

स्तालिन – ले०—श्री राहुल सांकृत्यायन। प्रका०—पीपुल्स पब्लिशिंग हाअुस, बम्बअी। मूल्य ३)

अपना पराया :—श्री राधिकारमण सिंह। प्रका०—राजेश्वरी साहित्य मन्दिर, पटना। मूल्य २)

धर्मकी धुरी :—श्री राधिकारमण सिंह। प्रका०—राजेश्वरी साहित्य मंदिर, पटना,। मू० २)

लाल चीन :– प्रका०—भारतीय ज्ञानपीठ, काशी। मूल्य ३)

संघर्षके बाद :—ले०—श्री विष्णु प्रभाकर। प्रका०—भारतीय ज्ञानपीठ, काशी। मूल्य ३)

साहित्य-सुधा :—श्री सत्यपाल। प्रका०—भाषा प्रकाशन, नयी दिल्ली। मूल्य ३)

साहित्यिक जीवनके अनुभवः—लेखक श्री किशोरीदास वाजपेयी। प्रकाशक—हिमालय अेजेन्सी कनखल, अु प्र। मूल्य २)

आर्य संस्कृतिके मूलतत्त्व :—लेखक–श्री सत्यव्रत सिद्धांतालंकार। प्रका०—विद्याविहार, बल्बीर अेवेन्यू देहरादून। मूल्य ४)

चारके चार :–ले. श्री कमल जोशी। प्रका०—शुभ्रा प्रकाशन जमशेदपुर। मूल्य २।।)

छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति :

अखिल भारतीय व्रज-साहित्य मण्डलका नवम अधिवेशन प्रयाग-विश्व-विद्यालयके सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री डॉ० धीरेन्द्र वर्माकी अध्यक्षतामें सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। अुत्तर प्रदेशके राज्यपाल श्री कन्हैयालाल मुन्शीका अुस अवसरपर दिया गया अुद्घाटन-भाषण भी प्रेरणादायी था। अुन्होंने कहा कि —"अेक समय था जब व्रज-भाषाके साहित्य द्वारा दूसरे प्रान्तोंके साहित्यिकोंको भी प्रेरणा मिलती थी और कअी गुजराती तथा दूसरी भाषाओंके कवियोंने व्रजभाषाकी कविताके अनुकरणपर अपनी भाषामें कविताकी रचना की है। कुछ भिन्न प्रान्तीय कवियोंकी व्रजभाषामें लिखी कविताअें भी मिलती है। व्रजभाषाका अुस समय अितना व्यापक प्रभाव था।"

श्री डॉ० धीरेन्द्र वर्मानें अपने अध्यक्षीय-भाषणमें व्रजभूमिकी भाषा, अुसका साहित्य तथा संस्कृतिकी कुछ विशेषताओंको दिखाते हुअे व्रजभाषाका विशेष अध्ययन-अध्यापन, संरक्षण तथा खोजकी ओर अग्रसर होनेके लिअे प्रेरणा दी और अुसे वैज्ञानिक रूप देनेका आग्रह किया। अुसके साथ-साथ अुन्होंने अक चेतावनी भी दी जो बडे ही महत्व की थी। अुन्होंने कहा —

"व्रज भाषाके कार्यको आप कभी भी हिन्दी भाषा सम्बन्धी कार्यमें भिन्न अथवा प्रतियोगी न समझें। व्रजभाषा हिन्दीका ही अेक अभिन्न अंग है। अतः व्रजभाषाकी सेवा वास्तवमें हिन्दीके ही अपनी सेवा है। दूसरी बात यह कि व्रज-प्रदेशकी भावनाको आप शासन और राजकीय-स्तरपर कभी भी न ले जाअें। स्पष्ट शब्दोंमें व्रज प्रदेशका अेक स्वतन्त्र प्रान्त बनाया जाअे, अिस कल्पनाको भी कभी मनमें न आनें दीजिअे। अिससे व्रजभाषाका अहित अधिक होगा, हित कम। आज व्रजभाषा समस्त हिन्दी-भाषियोंकी ही नहीं बल्कि समस्त भारतीयोंकी अपनी निधि है। व्रज प्रान्त बन जानेपर व्रजभाषा अुस प्रान्त तक ही सीमित रह जाअेगी। अिसके अतिरिक्त अैसा करनेसे आप आर्यावर्तके मध्यदेशकी लगभग १५ करोड हिन्दी भाषी जनताके सम्मिलित परिवारमें फूटका बीज बोअेंगे। आज भी हिन्दी प्रदेश १०-११ पृथक राज्योंमें विभक्त हैं, किन्तु अिस विभाजनके पीछे कोअी कटुता या अलगावकी भावना नहीं है। हिन्दीकी बोलियोंके आधारपर राज्योंकी माग हिन्दी भाषियोंकी शक्तिको छिन्न-भिन्न कर देगी। हिन्दीके सम्बन्धमें ग्रियर्सन आदि जो फूटका बीज बो गये हैं वह पल्लवित हो जाअेगा।"

अुनकी यह चेतावनी बडी अुपयुक्त चेतावनी थी और बडे अवसरकी चेतावनी थी। फिर भी अधिवेशनमें जो अेक यह प्रस्ताव हुआ कि व्रज साहित्यमें नया साहित्य—नाटक, अुपन्यास आदि लिखनेकी प्रवृत्तिका भी आरम्भ किया

जाअे, अुसे हम बहुत बडी चिन्ताका कारण मानते है। हमारी दृष्टिमें, आर्यावर्तके मध्यदेशकी जनतामें आधुनिक हिन्दीको अपनानेके सम्बन्धमें जो अेकमत दिखायी देता है, अुसमें यह प्रस्ताव छोटा-सा भी क्यों न हो, अेक छिद्र अुत्पन्न करनेका प्रयत्न कर रहा है और अेक छोटे-से छिद्रके कारण कैसी अनर्थ-परम्पराका सामना करना पडेगा, जिसकी कल्पना करना भी कठिन है। श्री धीरेन्द्र वर्माकी अुपरोक्त अध्यक्षीय चेतावनीके बाद भी यह प्रस्ताव क्यों आया यह समझना हमारे लिअे अेक समस्या ही है। जिस 'प्रस्ताव' के सम्बन्धमें जब चेतावनीके दो शब्द कहे गये तो वर्माजीने विश्वास दिलाया कि वहाँ किसीके मनमें हिन्दीकी प्रतियोगिताका या कोअी दूसरा भाव नहीं है। यह विश्वास दिलानेकी कोअी आवश्यकता तो न थी, क्योंकि जिन्होंने प्रस्तावके सम्बन्धमें चेतावनी दी थी वे भी जिस बातको मानते और जानते थे। परन्तु जिस प्रस्तावका वे विरोध कर रहे थे क्योंकि वे अुसके परिणामसे डरते थे। और दरअसल यह समझना कठिन है कि आज खडीबोली गद्यके विकासमें जितनी दूर तक जानेके बाद अुन्हें ब्रज-भाषाके गद्यको नये सिरेसे पैदा करनेकी कौनसी आवश्यकता जान पडी? ब्रजभाषाको घरेलू व्यवहारमें ही सीमित करके सार्वजनिक क्षेत्रमें जहाँ आधुनिक हिन्दीको सर्व प्रकारसे अपनाया गया है, यहाँ तक कि हिन्दीमें धारावाही भाषण देनेवाले ब्रजभाषाके जिन आग्रहियोंको भी ब्रजभाषामें भाषण देना कठिन मालूम होता था, वहाँ यह नया अुपक्रम किस लिअे? यह प्रश्न होता है, और अुसका अुत्तर और जिस अुपक्रमका परिणाम दोनोंकी कल्पना करनेपर हम चौंक अुठते हैं। अवधी, मैथिली, राजस्थानी, भोजपुरी, बुन्देली, हाडौती आदि भाषाओंके आग्रही भी यदि जिसी प्रकारकी प्रवृत्तिमें जुट जाअें, तो जिसका परिणाम वही होगा जिससे बचनेके लिअे श्री धीरेन्द्र वर्मा चेतावनी देते हैं। अन्तमें शासन और राजकीय स्तरपरही अुन्हें अुतरना पडेगा और परिणाम कैसा होगा यह तो सरल अनुमानकाही विषय है। हम चाहते है कि यह प्रस्ताव ब्रज साहित्य मण्डलके कार्यालयमें अैसा खो जाअे कि फिर अुसका किसीको ख्याल भी न आअे। स्वयं प्रस्तावक महोदयने बातचीतमें यह स्वीकार किया था कि अुन्होंने अपने प्रस्तावके परिणाम आदिपर भिन्न प्रकार विचार नहीं किया। अैसी स्थितिमें हम मानते हैं कि अुसे भुला देना कठिन न होगा।

आगरा-विश्वविद्यालयका हिन्दी-विद्यापीठ:

जिस विद्यापीठका शिलान्यास अुत्तर प्रदेशके मुख्य मन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्तजीके शुभ हाथोंसे ता. १४ दिसम्बरको हुआ। जिसका नाम तो वैसे हिन्दी-भिन्स्टीट्यूट रखा गया है, परन्तु यहाँ सुविधाके-लिअे हमने अुसे विद्यापीठ बना लिया है। हम जिस विद्यापीठका स्वागत करते है। अेक जमानेसे अधिक हुआ कि जिसके सबंधमें विचार हो रहा था। अभी अुसका शिलान्यास हुआ है, और जैसी कि आशा की जाती है अुसका आरम्भ आगामी जुलाअीसे हो सकेगा। अभी अुसके संचालनका भार कौन सम्हालेगा जिसका निर्णय नहीं हुआ है। अच्छी योग्यताके व्यक्तिकी तलाश हो रही है और जिसलिअे अुस पदके लिअे पर्याप्त वेतनकी योजना की गयी है। परन्तु कौन जिस पदको विभूषित करता है यह जबतक मालूम नहीं होता, संस्थाके भविष्यके सबंधमें कुछ भी कहना कठिन प्रतीत होता है।

क्योंकि संस्थाके भविष्य तथा विकासका आधार अुस संचालकके व्यक्तित्वपर ही निर्भर करेगा। फिर भी हम अिस विद्यापीठका हार्दिक स्वागत करते हैं। हम आशा करते हैं कि यह विद्यापीठ आजकी अेक बहुत बडी आवश्यकताकी पूर्ति करेगा। जैसा सुना गया है, अिसके कार्यक्षेत्रके बारेमें अब भी कुछ मतभेद हैं। कुछ लोग अिसे भारतीय भाषाओंके लिअे अेक अनुसन्धान तथा खोज-कार्यका केन्द्र मात्र बनाना चाहते हैं परन्तु आगरा विश्वविद्यालयके कुलपति श्री मुन्शीजीकी कल्पना दूसरी ही है। वे अुसे भारतीय भाषाओंके और खासकर हिन्दीके विशेष अध्ययन और अध्यापनका पीठ बनाना चाहते हैं। यही नहीं, यहाँ अनुसन्धान तथा खोजका काम भी होगा। परन्तु वह भारतीय भाषाओंको परस्पर अेक दूसरेके निकट लानेकी दृष्टिसे, अुनमें जो समान शब्द व्यवहारमें आते हैं अुन्हें ढूँढकर हिन्दीको समृद्ध बनाने और फिर हिन्दी द्वारा भारतीय भाषाओंको समृद्ध बनानेकी दृष्टिसे होगा। अिस संस्थामें अेक और भी महान लाभ होगा और वह यह कि भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके विद्यार्थी-विद्वान् अिस संस्थामें अेक दूसरेके निकट आअेंगे। साहित्यिक तथा सांस्कृतिक-स्तरपर परस्पर सम्पर्क साधेंगे और अिस प्रकार हमारी मूलभूत राष्ट्रीयताको सुदृढ बनाअेंगे। अिस भव्य भावनाको यह संस्था किस प्रकार मूर्तरूप दे सकेगी, यह भविष्यकी बात है। हम आशा करें कि अिस संस्थाके कार्यका आरम्भ शीघ्र ही हो और वह अपने ध्येयके अनुसार कार्य करनेमें सफल हो। जैसा कि सुना गया है अिस संस्थाकी ओरसे भारतीय साहित्यकी अेक त्रैमासिक पत्रिका भी निकालनेका आयोजन हो रहा है, अुसमें सभी प्रधान प्रान्तीय भाषाओंका प्रतिनिधित्व होगा। हम अिस संकल्पका स्वागत करते हैं।

हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयागका अुपाधि वितरण-समारोह :

सम्मेलनके हिन्दी विश्वविद्यालयके साहित्य-रत्न परीक्षोत्तीर्ण स्नातकोंका अुपाधि-वितरण समारोह ता० २० दिसम्बरको सम्मेलनके साहित्य विद्यालय भवनके प्रांगणमें सफलता पूर्वक संपन्न हुआ। सम्मेलनके दीर्घकालीन जीवनमें यह प्रथम ही अवसर है, जबकि अुसने यह समारोह किया है। अिसका अुद्घाटन सम्मेलनके प्राण राजर्षि टण्डनजीने और दीक्षान्त भाषण बिहार राज्यके शिक्षामन्त्री आचार्य श्री बदरीनाथजीने किया। अिससे अिस समारोहकी शोभा और भी बढ गयी। अिसमें श्री डॉक्टर सम्पूर्णानन्दकी अुपस्थिति और अुन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषिक दिया जाना, अिस समारोहका विशेष आकर्षण था। सम्मेलनके आदाता श्री जगदीश-स्वरूपजीकी अिस सूझके लिअे तथा अिस समारोहकी सफलतापर हम अुनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

सम्मेलनका अधिवेशन नहीं हो रहा है परन्तु सम्मेलनकी परीक्षाओं आदिका कार्य सुचारु रूपसे चल रहा है। यही नहीं अुसने अेक बडे कोशका काम भी शुरू करवा दिया है। यह श्री जगदीशस्वरूपजीकी कार्य-कुशलता तथा हिन्दी-प्रेमको प्रकट करता है। वे कुछ काम कर जाना चाहते हैं और जो कुछ किया जा सकता है वे कर रहे हैं। अिसके लिअे वे धन्यवादके पात्र हैं। यह समारोह भी अुनके अिसी प्रकारके अुत्साहका परिणाम है। और वह खूब सफल रहा। परन्तु अेक बात हमें अवश्य खटकी।

स्नातकोको गाअून देनेका विचार जिस किसीका भी हो, वह हमें अपनी संस्कृतिके अनुकूल नही जँचता। वह तो केवल अंग्रेजी परिपाटीका अनुकरण मात्र ही था। अिस गाअूनका हमारे स्नातकोंको कुछ भी अुपयोग न हो सकेगा और न वे कभी अुसका अुपयोग कर सकेंगे। अिससे तो अच्छा यह होता कि अेक अच्छी शाल सम्मेलनके मुद्रालेखोंसे छपी हुअी दी जाती। अुसका स्नातक अुपयोग तो करते। गुजरात-विद्यापीठने वर्षोंसे गाअूनके बदले खादीकी शालका अुपयोग किया है और अुसी परिपाटीके अनुसार राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति भी अपने कोविद तथा राष्ट्रभाषा-रत्नोंको शाल ही देती है।

हमारी अुदासीनता तथा निष्क्रियता :

दूसरा जो विचार अिस समारोहके अवसरपर आया वह यह था कि आज यदि सम्मेलन आदाता द्वारा नहीं, परन्तु अपनी स्थायी समिति द्वारा सार्वजनिक संस्थाके रूपमें कार्य करता होता तो, अिस समारोहकी भव्यता कितनी बढ जाती। हिन्दीका कार्य करनेवाली देशकी सबसे बडी और पुरानी संस्था आज आपसके झगडोंके कारण अैसी परिस्थितिमें पड गयी है कि देशकी हिन्दी सम्बन्धी बहुत बडी आवश्यकताओंको देखते तथा अनुभव करते हुअे भी अुन्हे पूरा करनेमें वह असमर्थ है और हिन्दीपर अभी चारों ओरसे जो व्यर्थका आक्रमण हो रहा है, अुसे अुसके अेक समयके कर्णधार, जिनके नामसे हिन्दीके साहित्यिक तथा कार्यकर्त्ता प्रेरणा पाते थे और हिन्दीके कार्यमें अुत्साहसे लग जाते थे, वे भी आज पुरुषार्थहीन होकर केवल देखते रहनेके सिवा कुछ नहीं कर सकते। अभी-अभी दिल्लीकी संसद तथा राज्यसभामें जो हिन्दीके सम्बन्धमें चर्चाअें हुअी, अुनमें बहुत-सी बातें हमारी आँखें खोल देनेके लिअे पर्याप्त हैं। जामिया मिलिया द्वारा हिन्दीका ज्ञानकोश तैयार करवाया जा रहा है और सरकार अुसे लाखो रुपयोंकी सहायता दे रही है। मैं जामिया मिलिया या सरकारका दोष नहीं निकालता। जामिया मिलियाने तो अेक अच्छा कार्य आरम्भ किया है और वह अपने विचारोंके अनुसार अुसे पूरा करेगी। यह दूसरी बात है कि भाषाके संबंधमें तथा विश्वकोशकी योजनाके संबधमें हमारा अुनसे मतभेद हो। दरअसल ज्ञानकोश तथा दूसरे प्रकाशनोंका काम हाथमें लेना हिन्दीकी गण्यमान संस्थाओंका काम था। अुसमें लगानेके लिअे योग्य पूँजी प्राप्त कर लेना भी अिन संस्थाओंके लिअे कठिन काम नहीं था। परन्तु वे आपसके झगड़ोंमें ही लगी रही और अिस प्रकारके रचनात्मक कार्योंके प्रति अुदासीन बनी रही।

यदि हिन्दीकी संस्थाओंने अलग-अलग अपनी रुचिके अनुसार कार्य-भार अुठाकर हिन्दीकी सेवा करना अुचित न माना तो वे सब मिलकर भी कुछ योजना बनाकर कार्यका आरम्भ कर सकती थीं। अुन्हे अुसके लिअे आवश्यक साधन-सामग्री मिल ही जाती और कार्यका आरम्भ करनेपर सरकार द्वारा भी सहायता मिलती। परन्तु अुन्होंने अैसा कोअी कार्य नहीं अुठाया और सब अपनी-अपनी डफली बजानेमें ही व्यस्त रहे और कभी-कभी सरकारकी या दूसरी संस्थाअें जो अपनी दृष्टिके अनुसार कार्य किये जा रही हैं, अुनकी टीका-टिप्पणी करके ही संतोष मानते रहे। अिसका परिणाम और क्या हो सकता था? आज फिर अुर्दूका प्रश्न अुठ रहा है। प्रान्तीय भावनाअें प्रबल हो रही है और

हिन्दीको जो स्थान वर्षोंके सतत प्रयत्नसे प्राप्त हुआ था अुसका आसन डोलता हुआ नजर आता है। और हम तो निश्चिन्त हो आँखें मूँदकर अपनी छोटी-छोटी प्रवृत्तियोंमें ही अेक दूसरेका विरोध करते हुअे कार्य करनेका वृथा अभिमान करते हुअे दिखायी देते हैं। क्या अब हम अपनी आँखें खोलेंगे और वास्तविक स्थितिका अध्ययन कर हमारा जो कर्तव्य है अुसे करनेके लिअे अग्रसर होंगे?

— मो० भ०

× × ×

'नागरी-लिपि सुधार परिषद':

अुत्तर-प्रदेशकी राजधानी लखनअूमें पिछले नवम्बर मासके आखिरी सप्ताहमें अेक नागरी-लिपि सुधार परिषद हुअी। नागरी वर्णमालाके, आजकल व्यहारमें आनेवाली लिखित अंकित, टंकित और मुद्रित प्रणाली या परम्परामें सुधार करनेके अुद्देश्यसे अुत्तर-प्रदेशके प्रधान मंत्री पंडित गोविन्दवल्लभ पन्तने अिस परिषदको आमन्त्रित किया था। भारतके विभिन्न राज्योंके कुछ राज्यपाल, कुछ प्रधान और शिक्षा-मन्त्री, सचिव, संचालक और कुछ विशिष्ट विद्वान् लोग अिस अधिवेशनमें सम्मिलित हुअे थे। भारतके अुपराष्ट्रपति महान दार्शनिक डॉ राधाकृष्णनने अध्यक्षपद ग्रहण किया था। यह सब देखकर अिस परिषदकी श्रेष्ठता, अुपयोगिता व आवश्यकताको कौन समझदार व्यक्ति नकार सकता है। अिसमें जो लोग अिकट्ठे हुअे, चर्चा हुअी, विचार विनिमय हुआ आपसमें, तो हमें १९२२ की गया-कांग्रेसकी याद आ गयी जिसमें नेताओंके दो पक्ष हो गये थे—अेक अपरिवर्तनवादी अर्थात् 'नो चेंज' और दूसरा परिवर्तनवादी। लखनअूकी अिस परिषदमें कुछ कट्टर सनातनी विचारके भी थे जो नागरी लिपिमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं चाहते। आज नागरीका जो रूप अुत्तर-प्रदेशमें प्रचलित है अुसीको रखनेके पक्षमें हैं वे। कुछ लोग पूरा और पर्याप्त परिवर्तन करनेकी सिफारिशें लेकर पहुँचे थे अुस परिषदमें।

राष्ट्रभाषाके साथ राष्ट्रलिपि भी जुडी हुअी है। यह हमारा संविधान घोषित कर चुका है। प्रयत्नपर प्रयत्न किये जा रहे हैं कि हिन्दी राष्ट्रभाषाके रूपमें सर्वग्राह्य हो—सर्वमान्य हो। हमारी राष्ट्रभाषा वैज्ञानिक हो। अुसका सुलभ सामान्य रूप देशवासी ग्रहण करें। अुसकी शैली नियमबद्ध हो जिसमें कठिनसे कठिन भाव व्यक्त किये जा सकें। राष्ट्रभाषाका व्याकरण प्राणवान हो—लोगोंके जीका जंजाल न हो और अुसका साहित्य अैसा अुन्नतिशील प्रौढ हो कि पढा जाअे। भारतकी अेक राष्ट्रीय लिपिके बारेमें भी यही समस्या है, कि नागरी लिपि सरल अुपयोगी और सारे भारतमें ग्रहण करने योग्य आधुनिक वैज्ञानिक सुधारोंसे सुधार-सवाँरकर रख दी जाअे कि अुसे सभी मानें।

तो यह ध्यानमें रखा जाअे कि वर्णमाला और लिपि अलग-अलग चीजें हैं। भारतका यह दुर्भाग्य या बदनसीबी है कि अेक भाषाके लिअे दो लिपियाँ (नागरी प्लस् (धन) अुर्दू) चलायी गयी और संविधान विरुद्ध होते हुअे भी अुसे चलाये जानेके पक्षमें अब भी अेडी चोटीका पसीना अेक कर रहे हैं। कुछ लोगोंका छुपा-छिपा पक्ष भी यहाँ मौजूद है जो अवैज्ञानिक होते हुअे भी व्यावहारिक क्षेत्रमें ज्यादा अुन्नत और अुपयोगी सिद्ध की गयी रोमन-लिपिको अपना लेनेका समर्थन करता

है। हम हजार चिल्लाअें कि 'रोमन वर्णमाला' में, लिपिमें, अपूर्णता है—स्वरो और व्यजनोका अकाल है, लिखेंगे 'पिता' और पढेंगे "पिटा", लिखगे 'दाता' शब्द और पढा जाअेगा—'डाटा" औ॰ कभी भूले-भटके या अिक्के-दुक्के लिखा गया सम्कृतका 'पिनाकपाणि'—(शिव-शकर जिसका अर्थ है) वहाँ शब्द पीनेका पानी" पटा जाअेगा। हमपर प्रभाव डाला जाता है कि यूरप-अमेरिका आदि पाश्चात्य देशोकी अधिकाश भाषाअें रोमन लिपिमें ही लिखी जाती है। तव पाश्चात्योके साथ सास्कृतिक सम्बन्ध बनाये रखनेके लिअे अग्रेजीके साथ-साथ पन्द्रह वर्षोके लिअे हम अिसीको क्यो न अपना ले। माना कि अुर्दू लिपिमें 'शीघ्र लिपि' के सभी गुण मौजूद हैं। यह अति शीघ्रतासे लिखी जा सकती है। अुर्दू अक्षरोकी रचना सादी है, अुनका आपसमें सयोग भी बडा सरल है फिर, वही क्यो न अपना ली जाअे। भाषाओ और लिपियोके वैज्ञानिक जानते हैं कि अुसमें बिना लेखनी अुठाये अक्षर तथा शब्द लिखनेकी क्षमता अेव रेखाअें सरल होते हुअे भी स्वर और व्यजन बडे गडबड हैं। अुच्चारणमें दिक्कत होती है। जिसकी वर्णमाला अपूर्ण और बेढगी अवैज्ञानिक है, सस्कृत अग्रेजी आदि भाषाओके शब्द लिखना जिसमें असमव है, जहाँ नुक्तोके हेरफेरके चक्करमें पडा हुआ व्यक्ति अधरेमें टटोलता फिरता है।

अत हमारे दूरदर्शी नेता लिपिका सुधार अनिवार्य मानते हैं। अेक वैज्ञानिक दृष्टिकोणको सामने रखकर सुधार आवश्यक है। यह बात तो सभीके दिलमें जमकर अब बैठ गयी है कि नागरीमें जो कुछ लिखा जाता है वही ठीक पढा जाता है। सम्कृत, अग्रेजी, अरबी, फारसी आदि सभी भाषाओके शब्द लिखे जा सकते हैं, अुनकी ध्वनियाँ प्रकट की जा सकती हैं। और हूबहू पढे जा सकते हैं। फिर भी सुधारकी आवश्यकता है और शीघ्र अिस दिशामें कुछ सर्वमान्य बात होनी चाहिअे। कुछ आवश्यक बातोको ध्यानमें रखकर सुधरी हुअी हमारी नागरी लिपि अैसी बने जो मोनो, लाअिनो टाअिप, टेली प्रिंटिंग, टक-लेखन, शीघ्र लिपि आदिमें निर्दोष अेव सहल बन जाअे। नागरीका अक्षर परिचय सहज हो जाअे, हस्त-लेखन अितना सधा-सुधरा हुआ हो कि कलम बार-बार न अुठानी पडे। भारतके करोडो निरक्षरोमें जिसके द्वारा साक्षरताका प्रचार सुलभताके साथ किया जा सके। आज 'खाना हुआ' 'खाना हुआ' बन जाता है, क् + ष का शुद्ध वैज्ञानिक सयुक्त रूप 'क्ष' होनेपर भी अुसे अमान्यकर, अुसी पुराने बाबा आदमके जमानेके 'क्ष' को पकडे हुअे हैं। "स्टेनोग्राफीके स्टैंडर्डा-अीजेशन' को भी बहुत कालतक अछूता नही रख सकते। टक लेखन (टाअिप राअिटिंग) को भी ठीक सभालना है। अभी तक "की बोर्ड" (key board) बुरी तरह फिसल रहा है। अेक मत नही। भिन्न-भिन्न मत और सुझाव हैं। सकीर्ण प्रातीयता और प्रादेशिकता भी रुकावट डाल रही है। अभी तक कुछ न हुआ—कुछ न हुआ।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा अुन सभी सर्वसुलभ, नागरी-सुधारोका स्वागत करनको तैयार रहेगी। अिन सुधारोंकी दिशामें अुसने १९३७ में अपना सर्वप्रथम सुधरा हुआ नागरी-रूप देशके सामने रखा था जिस पथपर वह आज भी चल रही है। आचार्य काका कालेलकर, प्रयाग विश्वविद्यालयके प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी डॉ बाबूराम सक्सेना आदि सप्त महारथी पडितोने बडे समझौतेके साथ ध्वनिशास्त्रके आधारपर वर्धा समितिको सुधारी हुअी नागरी लिपि दी थी। लिपिका समानीकरण किया था। आवश्यकता है बहुत सोच विचारपूर्वक निर्णय करनेकी, साहसकी और समझौतेको अमली रूप देनेकी। अभी तो हमें लखनअूकी लिपि सुधार परिषद 'पहाड खोदकर चुहिया निकली' जैसी लगी।

नागरी प्रचारिणी सभाकी हीरक जयन्ती :

आजसे साठ वर्ष छह मास पीछेके युगपर आप दृष्टि डालिअे। तब राष्ट्रभाषा हिन्दी, हिन्दी साहित्य, नागरी लिपि, अिनकी चर्चा करना, अिनके प्रचार और प्रसारके लिअे प्रयत्न करना तबके सभ्य समाजमें पागलपनका काम समझा जाता था। राज्य अंग्रेजोंका था अपने मध्यान्हपर, सारी शिक्षा अंग्रेजी भाषा द्वारा मिलती थी अंग्रेजी राज्यान्तर्गत बसनेवाले भारतवासियोंको। अंग्रेजी भाषाके साथ अंग्रेजोंकी कृपाके बलपर राजकाज, दरबार और अदालतोंमें क्लिष्ट अरबी-फारसीसे लदी अुर्दू लिपि और अुर्दू जबानका जोर था। अुर्दू सन १८३७में ही भारतमें अदालती भाषा बना दी गयी थी। अंग्रेजीदाँ और अुर्दूदाँ ही तब पढे लिखे सभ्य या शिक्षित लोग माने जाते थे। बचारे क्या करते? करता क्या न करता? रोटीका-रोजीका सवाल जो था। हिन्दीका अपमान खुल्लमखुल्ला होता था। हिन्दी-नागरीका व्यवहार करनेवालोंकी हँसी अुडायी जाती थी। सारा भारत तबके अंग्रेजोंके राज्यमें अन्धेर नगरी बना हुआ था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रका अुदय हुआ। हिन्दीके अितिहासमें वह मंगलमय दिवस था। दबी हुअी जनताकी भाषा जीवित होकर अुठ खडी हुअी। भारतेन्दुके "निज भाषा अुन्नति अहै सब अुन्नतिको मूल" का मंत्रोपदेश ग्रहण कर हिन्दीकी सर्वांगीण अुन्नतिके लिअे दो-तीन पागलोंकी आवश्यकता थी जो अेक हृदय होकर, अेक प्राण होकर, हिन्दीकी सेवा करें। वे युवक थे। काशी नगरीके किसी हाअीस्कूलके ही छात्र थे। तीन थे वे तरुण—बाबू श्यामसुन्दरदास, पंडित रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमार सिंह। अिनके भगीरथ प्रयत्नसे, त्याग और तपसे काशीमें नागरी प्रचारिणी सभाकी स्थापना हुअी। सुनकर आपको हँसी आ जाअेगी जब शुरू-शुरूमें अिस संस्थाको १ रुपया १४ आना मात्र मासिक चंदा मिलता था। सदस्य ही आपसमें यह चंदा अिकट्ठा कर लेते थे। काशीके धनी-मानी, पढे-लिखे सभ्य अिस संस्थाको निरा बच्चोंका खेल समझते थे। अिन तीनों नौजवानों और अुनके सहयोगियोंके लगातार अुद्योगसे हिन्दीकी अुन्नति बडी ही तीव्र गतिसे होने लगी। हिन्दी और नागरीके प्रचार-कार्यकी बाधाअें क्रमशः दूर होने लगी, ठीक अुसी तरह जैसे सूर्यके अुदय होनेके साथ शीत, जाडा, जडता जनतामेंसे भाग खडे होते हैं। मार्ग स्पष्ट दिखायी पडने लगता है और कमल खिल अुठते हैं जलाशयोंके। किसी भी महान् अुद्देश्यकी सिद्धि आरंभमें अपनी परिमित शक्ति और परिमित साधनोंसे ही होती है। नागरी लिपिके प्रचार तथा हिन्दी साहित्यके अुन्नयनमें सभाका कार्य अुत्तरोत्तर आगे बढा। राजकाजमें, अदालतोंमें, जनताके जीवनमें, शिक्षणमें, साहित्य, संस्कृति और कलाके विविध निर्माणमें जो महत्वपूर्ण स्थान आज हिन्दीको और नागरी लिपिको प्राप्त हुआ है अुसका सारा श्रेय काशीकी नागरी प्रचारिणी सभाको है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग अिसीका स्थापित किया हुआ है। १९१० में जो पहला पहला अधिवेशन हिन्दी साहित्य सम्मेलनका महामना मालवीयजी महाराजके सभापतित्वमें हुआ था, अिन पंक्तियोंके लेखकने अुस प्रभावशाली अधिवेशनको निकटसे देखा था, काशीकी नागरी प्रचारिणी सभा मूलमें अुस छोटेसे बटबीजकी तरह रही और अब वह महान

विशाल वट-वृक्षके रूपमें हैं जिसकी जड़ें जमीनके अन्दर कओी सौ फीट नीचे जम गयी है और जो अपनी शाखा-प्रशाखाओंमें अपनी सार्वदेशिक विपुलता, सृजनता, सघनता और विशालताको फैला चुका है। आज यह संस्था साठ वरसकी हो चुकी है। राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रलिपि नागरीके अधिकारोंकी रक्षाके लिअे, अुत्थान अेवं विकासके लिअे अिस प्राचीन संस्थाने जो सतत संघर्ष किये हैं, सेवा और संघर्षमें आज भी वह सलग्न है। सबकी आदरणीया है, श्रद्धाकी पात्र है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा आगामी वसंत-पंचमी (माघ सुदी-पंचमी संवत् २०१०) को, अपनी हीरकजयन्ती मना रही है। यह हीरक जयन्ती अैसे संक्रान्ति कालमें मनायी जा रही है जब सम्पूर्ण राष्ट्रकी साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक आवश्यकताओंको दृष्टिमें रखते हुअे राष्ट्रभाषाके माध्यमसे भारतीय राष्ट्रके नवनिर्माणका कार्य करना है।

हम सब चलें, चलिअे, पवित्र काशीपुरीके अिस भारतीय साहित्य और संस्कृतिके वसंत-हीरक महोत्सवमें सम्मिलित होने।

अिस महती हीरक जयन्तीकी संपूर्ण सफलताके लिअे शुभ कामना !

—हृ० श०

हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं!

'राष्ट्रभारती' का चौथा वर्ष जनवरी ५४ से ही शुरू होता है। चौथे वर्षका यह प्रथम अंक (जनवरी मासका) आपके हाथमें है।

'राष्ट्रभारती' के जिन प्रेमी ग्राहकोंका वार्षिक चन्दा अिस अंकके साथ पूरा हो जाता है, अुनसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपना अगले वर्षका चंदा ६ रु मनीआर्डर द्वारा तुरन्त भेजनेकी कृपा करें। वार्षिक या छहमाही चंदा हर हालतमें मनीआर्डर द्वारा भेजना ही ठीक होगा। अिससे हमको और आपको सुविधा होगी। आपको अंक समयपर मिलेगा। वी पी और रजिस्ट्री' चार्जकी झंझटसे आप और हम दोनों बचेंगे। आशा है, आप हमारी अिस प्रार्थनापर जरूर ध्यान देंगे।

दूसरा निवेदन यह भी है कि कमसे-कम अपने किसी अेक-दो पड़ोसी मित्रोंको भी ग्राहक अवश्य बना दें और अुनका सालाना चंदा मनीआर्डरसे भिजवा दें। यह 'राष्ट्रभारती' सबसे सस्ती, सुन्दर-साहित्यिक, सांस्कृतिक पत्रिका है, जो ठीक समयपर हर १ ली ता० को निकलती है।

अिस पत्रिकाके प्रचारमें आप अपना ज्यादा-से-ज्यादा सहयोग दें और अिस पत्रिकाको स्वावलंबी बनावें।

मनीआर्डरसे वार्षिक चंदा ६ रु. और छहमाही चंदा ३ रु. ८ आ.

नमूना अंकके लिये दस आना मात्र।

पता :— व्यवस्थापक—'राष्ट्रभारती', पो०—हिन्दीनगर (वर्धा, म० प्र०)

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी कापी भेजनी चाहिये। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और खूब लंबी नहीं होनी चाहिअे। कृपया अिसका खयाल रखें कि लिखावट स्वच्छ अेवं सुवाच्य होनी चाहिअे।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो, और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें। 'राष्ट्रभारती' अपने लेखकोंको "पत्रपुष्प-पुरस्कार" भी भेंट करती है।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर ले, तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना आदि प्रकाशन योग्य सम्पादकीय सारा व्यवहार अिस पतेपर करें —

संपादक : 'राष्ट्रभारती'

पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशक— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस, — राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

फरवरी १९५४

वर्ष ४] राष्ट्रभारती, फरवरी-१९५४ [अंक २

[आवश्यक सूचना :— राष्ट्रभारती राज्योंके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत है। 'राष्ट्रभारती' का चौथा वर्ष आरंभ हो चुका है। राष्ट्रभारती समग्र भारतीय— अन्तर प्रान्तीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करती है। अिसने हिन्दीकी मासिक पत्रिकाओंमें अपना अेक प्रतिष्ठित अेवं महत्वका स्थान बना लिया है। प्रेमी पाठकोंसे निवेदन है कि अेक अेक नया ग्राहक बनाकर अिस पत्रिकाकी ग्राहक संख्यामें वृद्धि करें और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अुत्साहको बढावें। विशारद और 'राष्ट्रभाषा रत्न' परीक्षोपयोगी अुच्च आलोचनात्मक-परिचयात्मक लेख भी प्रतिमास अिसमें छपेंगे। कृपया अिस बातको ध्यानमें रखें कि हमारी लिखित अनुमति लिये बिना कोअी सज्जन या प्रकाशक 'राष्ट्रभारती' के पिछले अंकोंमें या आगामी अंकोंमें प्रकाशित प्रांतीय साहित्यके लेखों, कहानियों और अेकांकी-नाटकों आदिको न छापें।

—मोहनलाल भट्ट, मंत्री, रा. भा. प्र. स. वर्धा]

—ः विषय-सूची ः—

राष्ट्र भारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ४ * वर्धा, फरवरी १९५४ * अंक २ *

स्व० गुरुदेवकी वाणी !

राष्ट्रभाषाका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि प्रान्तीय भाषाओंका वह नाश कर दे, न यह अुसका लक्ष्य ही है। राष्ट्रभाषा और प्रान्तीय भाषाओंके सम्बन्धके विषयमें स्वर्गीय विश्वकवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर कहते हैं

"आधुनिक भारतकी संस्कृति अेक विकसित शत दल कमलके समान है जिसका अेक-अेक दल अेक अेक प्रान्तिक भाषा और अुसकी साहित्य संस्कृति है। किसी अेकको मिटा देनेसे अुस कमलकी शोभा ही नष्ट हो जाअेगी। हम चाहते हैं कि भारतकी सब प्रान्तिक बोलियाँ जिनमें सुन्दर साहित्य सृष्टि हुअी है, अपने-अपने घरमें (प्रान्तमें) रानी बनकर रहें प्रान्तके जनगणकी हार्दिक चिन्ताकी प्रकाश भूमि स्वरूप कविताकी भाषा होकर रहे और आधुनिक भाषाओंके हारकी मध्यमणि बनकर हिन्दी भारत भारती होकर विराजती रहे। मेरे विचारमें प्रान्तीय भाषाओंके पुनरुज्जीवनसे राष्ट्रभाषा हिन्दीकी कुछ भी क्षति नहीं होगी, अुसका अुत्कर्ष ही होगा।'

मृत्युंजयकी वन्दना

: श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव :

हे मृत्युंजय मानव ! तुम अवतार बन गये,
दुनियासे उठते-उठते संसार बन गये !

विश्व-पुरुष तुम विश्व-शांतिका दीप जलाये,
पद-दलितोंको कंठ लगाने भूपर आये।
प्रेम-नेम धारण कर जा पहुँचे घर-घरमें,
करते-करते प्यार स्वयं तुम प्यार बन गये।

मानवताको कवच अहिंसाका पहनाया,
शोषित जनको सत्याग्रहका शस्त्र सुझाया !
संघर्षोंकी सरिताकी हिंसक लहरोंमें—
खेते-खेते नॉव स्वयं पतवार बन गये।

धर्मोंसे ऊपर मानवताको पदवी दी,
तुमने मानवता प्राणोंके मोल खरीदी।
ईसा-बुद्ध-मुहम्मद तीनोंके स्वर साधे—
गाते-गाते तुम अखंड गुंजार बन गये।

मुक्त किया मानवको अपनी मुस्कानोंसे,
तुमने मस्तक कभी न फेरा बलिदानोंसे।
मंजिल, छाया बनकर पीछे चली तुम्हारे—
बलिपथके पग-चिन्ह स्वर्गके द्वार बन गये।

मानवताके शिल्पी तुम खुद मूर्ति बन गये,
मिटते-मिटते मानवताकी पूर्ति बन गये।
मानवताकी पूजामें सर्वस्व चढ़ाकर—
तुम मानवकी पूजाके अधिकार बन गये।

हे मृत्युंजय मानव तुम अवतार बन गये,
दुनियासे उठते-उठते संसार बन गये !

नागपुर]

आचार्य परमार्थ

श्री कृष्णकिंकर सिंह, अेम अे

प्राचीन कालमें चीन और भारतको सांस्कृतिक अेकताके सूत्रमें बांधनेका प्रयास जितना अिन दर्शोक गृहत्यागी भिक्षुओं और विद्वानोंने किया था अुतना राजा महाराजाओं तथा अुनके द्वारा भेजे गये राजदूतोंने नहीं। परमार्थ भारतके अेक असे ही मनीषि थे जिन्होंने आजसे १४०० वर्ष पूर्व चीनकी भूमिपर भारतीय साहित्य और संस्कृतिका प्रचार किया और अपने अुज्ज्वल चरित्र और विद्वत्ताकी धाक जमायी थी। पर हमारे विशाल भारतीय वाङमयमें अिस महान साधककी चर्चामें अेक पंक्ति भी लिखी नहीं मिलती। हम चीनी वाङमयका सदा कृतज्ञ रहना चाहिअे जिसमें हमारे अिस साधक तथा और भी अनेक भारतीय साधकोंका जीवन वृत्त तथा कार्यकलापोंका विवरण अबतक सुरक्षित है।

जीवन वृत्त

परमार्थ अुज्जैनके निवासी थे। अुनका जन्म सन् ४९८ औ. में अेक विद्वान ब्राह्मण कुलमें हुआ था। वे बचपनमें बड़े मेधावी थे और अल्प समयमें ही नाना शास्त्रोंमें पारंगत हो गये थे। विद्या ग्रहणके बाद अुन्हें घरका बंधन खलने लगा अतः अेक दिन घरसे निकल पड़े। नाना स्थानोंका भ्रमण करते हुअे तथा ज्ञान विज्ञानसे अपनेको और समृद्ध करते हुअे वे पाटलिपुत्र पहुँचे। अुन दिनों मगधकी गद्दीपर अुत्तरकालीन गुप्त राजा थे। परमार्थ पाटलीपुत्रमें रहकर शास्त्र चर्चामें अपना समय व्यतीत करने लगे। थोड़े समयके भीतर अुनकी विद्वत्ता तथा अुज्ज्वल चरित्रकी धाक वहाँ जम गयी। अुत्तरकालीन गुप्त राजा भी अुनसे बड़े प्रभावित हुअे। संभवतः अुस समय जीवित गुप्त प्रथम मगधकी गद्दीपर थे। सन ५३० में अुनके दरबारमें दक्षिण चीनके ल्यांङ राजवंशके सम्राट वुतिका भेजा अेक मिशन पहुँचा। सम्राट वुति पक्के बौद्ध धर्मावलम्बी थे और चीनमें बौद्ध धर्मकी अुन्नति देखना चाहते थे। अतः अुन्होंने भारतसे बौद्ध धर्मग्रंथ तथा अेक प्रसिद्ध भारतीय पण्डितको चीन ले आनेके लिअे मिशन भेजा था। अिस मिशनके अनुरोधपर जीवित गुप्त प्रथमने परमार्थसे चीन जानेके लिअे अनुरोध किया। परमार्थके हृदयमें भगवान बुद्धकी मैत्री तथा करुणाके अुपदेशोंका प्रचार अपने देशसे दूर जाकर करनेकी चाह तो थी ही अतः वे चीन जानेको राजी हो गये। चीन जानेके लिअे अुन्होंने अेक विशाल भारतीय वाङ्मयका संग्रह किया और अुसे लेकर सन ५४४ औ. में ताम्रलिप्ति बंदरसे समुद्र मार्ग द्वारा चीनके लिअे रवाना हो गये। दो वर्षोंकी यात्राके बाद वे सन ५४६ औ. में चीनके नानकिंङ नगरमें पहुचे। अिन दो वर्षोंके बीच वे संभवतः दक्षिण पूर्वके देशोंका भ्रमण करते हुअे चीन गये थे क्योंकि अुस समय अुन देशोंमें बौद्ध धर्म और भारतीय संस्कृतिका काफी बोलबाला था।

नानकिंगमें ल्यांग सम्राट वुतिने परमार्थका राजकीय स्वागत किया। वे वहाँ पायुन प्रासादमें रहकर धर्म प्रचार तथा सार्थक लाये हुअे ग्रंथोंका चीनी अनुवाद करनेमें लग गये। पर परमार्थके भाग्यमें शांतिसे बैठकर कार्य करना नहीं लिखा था। अुन दिनों चीनकी राजनीतिक अवस्था बड़ी डांवाडोल थी। राजनीतिक दृष्टिसे चीन अुत्तर और दक्षिण दो खण्डोंमें बँट गया था। दोनों खण्डोंमें राजकीय षड्यंत्र तथा राजवंशोंका परिवर्तन आम बात थी। ल्यांग राजवंशके विरुद्ध भी षड्यंत्र रचा गया और विद्रोह हुआ। राजधानी अिन षडयंत्रों और विद्रोहोंका प्रधान केन्द्र होती थी। अतः, अराजकताके बीच परमार्थको भला कहाँ शांति मिल सकती थी। अुनके संरक्षक सम्राट वुतिके विरुद्ध सेनापति हुचिङने विद्रोह कर अुनकी हत्या कर दी। असी परिस्थितिमें परमार्थको नानकिंग छोड़ना पड़ा और वे अपने साहित्यका भंडार लिये आश्रयकी खोजमें

भटकते अेकदम दक्षिण चीन चले गये। सौभाग्यसे दक्षिणमें फु छुअेन्का शासक पक्का बौद्धधर्मावलम्बी था। अुन्होंने परमार्थका स्वागत किया तथा आश्रय दिया। अिस शासकने धर्म प्रचार करने तथा धर्मग्रंथोंका अनुवाद करनेकी सभी समाचित सुविधाअें दीं। पर वह युग ही शांतिसे काम करनेका नहीं था। दक्षिणमें भी अराजकता फैल गयी और परमार्थको अपना अधूरा काम छोडकर पुन आश्रयकी खोजमें भटकना पडा। सेनापति हु चिङ् त्याङ सम्राट वुनिकी हत्याकर नान्किडपर आधिपत्य जमा बैठा था सो अंतमें मारा गया। अल्प-कालके लिअे पुन शांति कायम हुअी। परमार्थ नान्किङ लौटे और चङ् नान विहारमें रहकर कार्य करने लगे।

लेकिन चीनका राजनीतिक आकाश साफ नहीं हुआ था। अपना अपना प्रभुत्व स्थापित करनेके लिअे विभिन्न राजपुरुषों, मन्त्रियों और सेनापतियोंके बीच घात प्रतिघात चलते रहते थे। फल यह हुआ कि सन् ५५७ अी में छन् पा शिअेन् नामक अक सेनापति त्याङ राजवंशको समाप्त कर स्वयं सम्राट् बन बैठा और छन् राजवंशकी स्थापना की। अिस अशांति और अराजकताके बीच करुणा और मैत्रीके प्रचारकका मन भला कहाँ तक रम सकता था। अुनका मन चीन छोडनेको अुतावला हो अुठा। पर अुनकी विद्वत्ता और अुज्ज्वल चरित्रकी धाक अितनी जम चुकी थी कि अुनके अनुयायी, शिष्य और प्रशंसक अुनके चीन छोडनेकी बातसे घबडा अुठे। सबके बार-बार अनुनय विनयके फलस्वरूप अुन्होंने चीनमें रहना स्वीकार किया और नान् चुअे नामक स्थानपर रहकर पुन धर्मोपदेश तथा अनुवाद कार्यमें जुट गये। स्वतंत्र अनुवादके अतिरिक्त अुन्होंने पहलेके बहुतसे अनूदित ग्रंथोंका संशोधन भी किया।

परमार्थकी विद्वत्ता तथा धर्मोपदेशकी ख्याति दिन दिन अधिक फैलने लगी। दूर-दूरसे लोग अुनका अुपदेश सुनने तथा अुनसे ज्ञान सीखने अुनके पास जुटने लगे। छन् राजवंश (सन् ५५७-५६९ अी) के सम्राट वर्नातिके राज्य कालमें नान्किङ् निवासियोंके अनुनय-विनयपर अुन्होंने नान्किङ्में कअी वर्षों तक मम्मरिग्रह शास्त्रपर अुपदेश दिये। पर परमार्थका मन चीनसे अुखड चुका था। अेक ओर अुनके शिष्यों तथा प्रशंसकोंके प्रेम और श्रद्धाका बंधन अुन्हें चीनमें रहनेको बाध्य कर रहा था तो दूसरी ओर चीनकी राजनीतिक अशांति और घात प्रतिघातका वातावरण अुनके मनको चीन छोडनेको प्रेरित कर रहा था। स्वदेशसे दूर परमार्थ अिसलिअे ही तो आये थे कि वे डटकर बौद्ध धर्मका प्रचार कर सकेंगे-युद्ध और हिंसारत मानवको मैत्री तथा करुणाका अुपदेशामृत पिलाकर सच कर्तव्य पथपर लगा सकेंगे। पर अुन दिनों चीनका राजनैतिक वातावरण अितना भयप्रद और हिंसायुक्त हो गया था कि शनै शनै -बौद्ध धर्मकी अवनति हो रही थी। सतत प्रयत्नोंके बाद भी परमार्थको अपने अुद्देश्यमें सफलता नहीं मिल रही थी। अत, वे स्वदेश लौटना चाहते थे और अिसी अुद्देश्यसे वे अेक दिन नावमें बैठकर समुद्र तटके अेक बन्दरगाहपर पहुँच गये। वहांसे अेक बडा जहाज पकडकर स्वदेशकी ओर प्रस्थान करनेको तैयार थे। परन्तु अुनके शिष्य भला अुनका पिंड कब छोडने वाले थे। अुन सबने बन्दरगाहपर ही अुन्हें जा घेरा। बाध्य होकर परमार्थको समुद्र-तटपर ही रुक जाना पडा।

समुद्र-तटपर परमार्थ कुछ दिनों तक टिके रहे और अपने अुपदेशोंसे लोगोंको तृप्त करते रहे। वहाँ अुनका मन नहीं लगा। अत, अेक दिन अुन्होंने अक जहाज पकडा और स्वदेशकी ओर रवाना हो ही गये। पर स्वदेश लौटना अुनके भाग्यमें नहीं था। शायद परमार्थका जन्म चीनकी भूमिपर रहकर कार्य करनेके लिअे ही हुआ था। स्वदेश लौटनेके लिअे जहाजपर वे सवार तो हो गये पर प्रकृतिने अुनका साथ नहीं दिया। चीनके लोग प्रकृति पूजक अधिक होते हैं। प्रकृतिने अपने श्रद्धालुओंकी ही विनती सुनी। हवा प्रतिकूल हो गयी और जहाज आगे नहीं बढ सका, केन्टनके पास जाकर वह रुक गया। परमार्थ जहाजसे अुतरकर पुन चीनकी भूमिपर पाँव रखनेको बाध्य हो गये। अुनकी ख्याति सब जगह फैल चुकी थी अत वहाँके शासकको परमार्थके आगमनकी बात मालूम हुअी तो अुन्होंने अुनका अत्यधिक स्वागत और अभ्यर्थना की। अिस

शासकके अनुरोधपर वे वहां बौद्ध धर्मका अुपदेश देने लगे। अुन्होंने विशेषकर वहांके बौद्ध भिक्षुओंको महार्थधर्मपर्याय शास्त्र तथा विज्ञप्तिमात्र सिद्धिके गूढ तत्त्वोंकी शिक्षा दी। अिस स्थानपर भी परमार्थके पास अेक बड़ी शिष्य मंडली जुट गयी जो अुनकी सेवामें मगन लगी रहती थी। पर ज्ञानके अिस साधकको अपने मनमें सदा यह बात खटकती रहती थी कि अुन्हें अपने जीवनके अुद्देश्यमें सफलता नहीं मिली, अतः अुनका जीवन व्यर्थ है। अिसीलिअे व अेक दिन आत्महत्या करनेपर अुतारू हो गये। अपने गुरुके अिस कार्यसे शिष्यगण बड़े दुखित हुअे। दिन रात वे लोग और सजग होकर गुरुकी सेवामें जुट गये। पर परमार्थ अपने जीवनसे सर्वथा निराश हो चुके थे। अिस पार्थिव शरीरको त्याग देना ही अेकमात्र शान्तिका मार्ग अुनके लिअे रह गया था। अिस तरह स्वदेश और अपने परिजनोंसे दूर अपनी मातृभूमि लौटनेकी अतृप्त अिच्छा लिये हुअे अपने जीवनसे निराश होकर ज्ञानका वह साधक अपने अनगिनत शिष्यों, अनुयायियों और प्रशंसकोंको रोते छोड़ ७१ वर्षकी आयुमें सन् ५६९ ओी. में यह लोक छोड़ गया। अपने गुरुके प्रति चीनी शिष्योंमें जो अगाध श्रद्धा और भक्ति थी अुसे प्रकट करनेके लिअे कोअी भी पार्थिव साधन पर्याप्त नहीं था। पर वे अपने गुरुका स्मारक बनाना चाहते थे सो अुन लोगोंने परम्पराका पालन करते हुअे अुनकी समाधि-पर अेक स्तूप निर्माणकर सन्तोष किया।

परमार्थका प्रचार कार्य

परमार्थके चीन जानेका अुद्देश्य था मैत्री और करुणाके अुपदेश द्वारा हिंसक हो अुठे मानव समाजमें शान्तिकी स्थापना करना। वहां पहुँचकर अुन्होंने अुत्साह और लगनके साथ अपने अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे कार्य आरम्भ किया। अुनकी विद्वत्ता तथा मर्मस्पर्शी व्याख्यासे लोग अुनकी ओर आकर्षित हुअे और अुनपर प्रभाव भी पड़ा। पर जान पड़ता है कि परमार्थ जिस समय चीन गये थे वह अुनके अुद्देश्य-पूर्तिके लिअे अुपयुक्त समय नहीं था। चीनकी राजनीतिक अुथल पुथल अुनके मार्गमें सबसे बड़ा रोड़ा था। अिसलिअे अुन्हें अपने अुद्देश्यमें सफलता नहीं मिली और वे अपने जीवनसे निराश हो गये। अन्तमें अुन्होंने अपने अेक शिष्यसे कहा— "मैं जिस योजनाको लेकर यहां आया वह कभी भी पूरी नहीं होगी। अिस कालमें धर्मकी अुन्नति होगी अिसकी जरा भी आशा हम लोगोंको नहीं रखनी चाहिअे।" शान्ति प्रचारकके रूपमें परमार्थका कार्य और जीवन असफल रहा और यह असफलता-जन्य निराशा ही अुनकी मृत्युका कारण बनी।

परमार्थका साहित्यिक कार्य

शान्ति-प्रचारकके रूपमें जहां परमार्थ असफल रहे वहां साहित्य निर्माणके क्षेत्रमें अुन्हें अभूतपूर्व सफलता मिली। अु-ह चीनके ल्याङ् (सन् ५४८-५५७ ओी.) और छन् (सन् ५५७-५६९ ओी.) दो राजवंशोंके समय कार्य करनेका अवसर मिला। राजनीतिक दृष्टिसे अिन दोनों राजवंशोंका समय यद्यपि अशान्तिका युग था और परमार्थको शान्तिसे बैठकर काम करनेका कम ही अवसर प्राप्त हुआ तथापि वे अितने प्रतिभाशाली और अगाध विद्वान् थे कि कम समयमें भी बहुत कार्य कर लेते थे। अुन दिनों चीन पहुँचनेवाले भारतीय विद्वानोंका प्रधान साहित्यिक कार्य होता था बौद्ध धर्मके ग्रंथोंका चीनी अनुवाद प्रस्तुत करना। परमार्थने भी विशेषकर यही कार्य किया। अुनके कार्यकी महत्ता और अनुवादकके रूपमें अुनकी सफलताके सम्बन्धमें प्रसिद्ध जापानी विद्वान् श्री ताका कुसुकी प्रशंसा अुल्लेखनीय है — "अिनका अनुवाद-कार्य अत्यन्त ही प्रशंसनीय और सन्तोषप्रद हुआ है। असंग वसुबन्धु आदि विज्ञानवादियोंके प्रसिद्ध ग्रंथोंको, ओीश्वरकृष्णके भाष्य सहित सांख्यकारिकाको तथा नागार्जुन, अश्वघोष, वसुमित्र और गुणमतिके कुछ ग्रंथोंको अनुवाद रूपमें सुरक्षित रखनेके कारण ये सचमुच धन्यवादके पात्र हैं।" अुन्होंने जिन भारतीय ग्रंथोंका चीनी भाषामें अनुवाद प्रस्तुत किया अुनमेंसे कुछ ही अब मूल रूपमें भारतमें प्राप्त हैं। अतः अुनके अनुवाद-कार्यकी महत्ता अिससे आंकी जा सकती है कि अुन ग्रंथोंके पुनरुद्धार करनेका अेकमात्र स्रोत चीनी अनुवाद है।

परमार्थके सैकडों वर्ष पहले बौद्ध धर्म महायान और हीनयान दो शाखाओंमें बँट चुका था। अुनके समय तक प्रत्येक शाखामें कितने ही सम्प्रदाय भी बन चुके थे। परमार्थ महायान शाखाके अनुयायी हैं। बहुतसे विद्वान् प्रसिद्ध कवि-दार्शनिक अश्वघोषको महायान शाखाका प्रवर्तक मानते हैं। अेक ग्रंथ जिनसे अिस मतकी अधिक पुष्टि होती है वह है 'श्रद्धोत्पादशास्त्र'। क्योंकि सभी विद्वान् अश्वघोषको अिस ग्रंथका प्रणेता मानते हैं। अिसमें भूततथताकी धारणा त्रिकाय सिद्धान्त और सुखावतीव्यूह अिन तीन बातोंका प्रतिपादन बडी दृढतासे किया गया है। महायानशाखाके माध्यमिक सम्प्रदायके शून्यतावाद दर्शन और योगाचार सम्प्रदायके आलय विज्ञान सिद्धान्तका बीज रूप हमें श्रद्धोत्पाद शास्त्रके भूततथताकी धारणामें मिलता है। अिसी तरह यह ग्रंथ त्रिकाय सिद्धान्तकी व्याख्या तथा चर्चा करता है जिसमें करुणा, ज्ञान और कर्म अिन तीनोंका सम्मिलित रूपसे कार्यान्वित होना माना गया है। यह त्रिकाय सिद्धांत महायानकी अेक प्रमुख विशेषता है जिसके कारण वह हीनयानसे अलग माना जाता है। अिस श्रद्धोत्पाद शास्त्रमें सर्वप्रथम सुखावती व्यूह अर्थात् धर्म द्वारा निर्वाण प्राप्तिके सिद्धांतकी चर्चा हुअी है। अत: बौद्ध धर्ममें यह ग्रंथ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अिस ग्रंथको सर्वप्रथम चीनी भाषामें अनुवाद करनेका श्रेय परमार्थको ही है। सुदूरपूर्वके देशोंमें बौद्धधर्मके विकासमें अिस अनुवादसे अत्यन्त सहायता मिली है। अिस अनुवादपर फा चाङ् नामक अेक चीनी विद्वान्ने बडा ही तथ्यपूर्ण और विशद भाष्य लिखा है जिसका प्रचार मूल अनुवादसे भी अधिक हुआ।

बौद्ध धर्मके अितिहाससे पता चलता है कि महायान शाखाके अेक प्रसिद्ध आचार्य असंगने योगाचार सम्प्रदायकी नींव डाली। असंगके छोटे भाअी वसुबन्धुने अपने भाअीके ग्रंथोंपर भाष्य लिखकर योगाचारके प्रचारमें ही हाथ नहीं बँटाया, प्रत्युत, स्वतन्त्र रूपसे विज्ञानवाद दर्शनका प्रतिपादन, स्थापन और व्याख्या कर जहाँ अपनी प्रतिभासे लोगोंको कायल किया वहाँ अेक दार्शनिक शाखाके रूपमें योगाचारको सुदृढ बनाया। योगाचार और विज्ञानवादके सिद्धान्तोंको सर्वप्रथम चीनमें प्रवेश करानेका श्रेय परमार्थको है। यह काम अुन्होंने असंगके तो कम पर वसुबन्धुके कअी ग्रंथोंका चीनी भाषामें अनुवाद प्रस्तुत करके किया। परमार्थने असंगके महायान सम्परिग्रह शास्त्रका चीनी अनुवाद सन् ५६३ अी में किया और अुसके बाद अिस ग्रंथपर वसुबन्धुके लिखे भाष्यका भी अनुवाद किया। असंगके ग्रंथ 'अभिधर्म संगति सूत्र' का अनुवाद परमार्थके बहुत पीछे शुआन च्वाङने प्रस्तुत किया पर अिस ग्रंथपर वसुबन्धुके भाष्यका अनुवाद स्वयं परमार्थने किया था।

कहा जाता है कि वसुबन्धुने २८ ग्रंथोंकी रचना की थी। अिनमें कुछ दूसरे आचार्योंके ग्रंथोंपर वसुबन्धुके लिखे भाष्य थे और कुछ स्वतन्त्र रूपसे अुनके द्वारा प्रस्तुत ग्रंथ। और अैसे कुछ ग्रंथोंपर स्वयं अुनके लिखे भाष्य। परमार्थने वसुबन्धुके आठ ग्रंथोंका अनुवाद चीनी भाषामें किया। अिनमें सबसे प्रसिद्ध है अभिधर्मकोश-कारिका और अुसका भाष्य। ये दोनों ग्रंथ वसुबन्धुकी प्रतिभाकी स्वतन्त्र अुपज हैं। बहुत दिनोंतक अिन दोनोंका मूल संस्कृत रूप अप्राप्य था पर सौभाग्यसे अब मिल गया है। अिन ग्रंथोंमें वसुबन्धुने अपने विज्ञानवाद दर्शनका प्रतिपादन और व्याख्या बडी ही विद्वत्ता और तर्कपूर्ण ढंगसे की है। परमार्थके लगभग ८० वर्ष बाद शुआन् च्वाङने पुन: अिन दोनों ग्रंथोंका अनुवाद चीनी भाषामें प्रस्तुत किया। वसुबन्धुके दूसरे प्रसिद्ध ग्रंथ जिसका अनुवाद परमार्थने किया वह था 'विज्ञप्तिमात्र सिद्धि' या विंशतिका। जिसमें वसुबन्धुने अपने विज्ञानवादके सिद्धांतको संक्षिप्तरूपसे प्रतिपादित किया है। परमार्थके बाद भी अिस ग्रंथके दो चीनी अनुवाद हुअे। अिन ग्रंथोंके अतिरिक्त परमार्थने वसुबन्धुके 'मध्यान्त विभाग शास्त्र', 'तारक शास्त्र', 'बुद्धगोत्र शास्त्र', 'बुद्धके अंतिम अुपदेशोंपर लिखा गया शास्त्र' आदिका भी अनुवाद किया। अिन ग्रंथोंकी विशेषताकी चर्चा अिस छोटे निबंधमें संभव नहीं। अिनमेंसे अधिकांशके मूल संस्कृत रूप लुप्त हो गये हैं और हम लोगोंकी जानकारीका अेक मात्र साधन चीनी और तिब्बती अनुवाद है।

वसुबन्धुके ग्रंथोंका चीनी अनुवाद करनेके अतिरिक्त परमार्थने जो सबसे प्रसिद्ध काम किया वह है चीनी भाषामें अुनकी लिखी हुअी वसुबन्धुकी जीवनी। अिसके अभावमें हम लोग वसुबन्धुके जीवनके संबंधमें अुनके नामको छोडकर और कुछ नहीं जान पाते। वसुबन्धुकी जीवनी लिखते हुअे प्रसंगवश परमार्थने अुनके

बड़े भाओी असंगके जीवनपर भी काफी प्रकाश डाला है। परमार्थके अिस कार्यकी महत्ताके सम्बन्धमें प्रसिद्ध जापानी विद्वान् ताका कुसुके मतका निम्न अुद्धरण पर्याप्त है— "परमार्थके जिस कार्यका सबसे अधिक मूल्य है वह है अुनकी लिखी वसुबन्धुकी जीवनी। जिससे अैसे अनेक विस्मृत आँकड़ों तथा तथ्योंका पता चलता है जिनके जाननेका कोओी दूसरा साधन नहीं शेष रहा था। साथ-साथ जिससे साधारण रूपसे भारतीय साहित्यपर तथा विशेष रूपसे सांख्य सम्प्रदायके बौद्ध धर्मके अितिहासके अूपर सुन्दर असम्भावित प्रकाश पड़ता है।"*

आचार्य दिङ्नाग बौद्ध तर्कशास्त्रके जनक माने जाते हैं। अुनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'आलम्बन-परीक्षा' या 'आलम्बन प्रत्ययध्यान शास्त्र' का अनुवाद भी परमार्थने चीनी भाषामें प्रस्तुत किया पर दूसरे नामसे। बादमें शुआन् चाङ्ने भी अिस ग्रंथका अनुवाद किया। परमार्थ और शुआन् चाङ् दोनोंके अनुवाद मिलानेपर पता चलता है कि ये दोनों अेक ही ग्रंथके अनुवाद हैं। पर परमार्थने ग्रंथका चीनी नाम दिया है जिसका अर्थ होता है 'अन्य विचार-रजपर लिखा गया शास्त्र।'

परमार्थने सांख्य दर्शनके ग्रंथोंका भी चीनमें प्रवेश कराया। 'सुवर्ण सप्तति शास्त्र' नामक ७० श्लोकोंकी सांख्य कारिका और अुसके भाष्यका अुन्होंने अनुवाद किया। अिस कारिका और भाष्यके लेखकके सम्बंधमें विद्वानोंमें बड़ा मतभेद है। अनुवादके प्रारम्भमें अेक टिप्पणी है जिसमें ग्रंथके रचयिताका नाम ऋषि कपिल बताया है। पर अन्तमें अिस बातका अुल्लेख है कि ऋषि कपिलके शिष्य आसुरीके शिष्य पञ्चशिख (कापिल्य) ने ६०००० श्लोकोंमें जिसकी रचना की। जिनमेंसे अीश्वर कृष्ण नामक ब्राह्मणने ७० श्लोकोंको चुनकर अलग किया। 'सुवर्ण सप्तति शास्त्र' की कारिकाअें अीश्वरकृष्णकी ७२ कारिकाओंके 'सांख्य सप्तति' नामक ग्रंथका, जो संस्कृतमें मिलता है सारांश है। अिस ग्रंथके भाष्यको कोओी गौडपाद रचित भाष्य और कोओी अीश्वरकृष्णको ही कारिकाओं और भाष्य दोनोंका रचयिता मानते हैं। परमार्थने आचार्य गुणमतिके 'लक्षणानुसार शास्त्र' नामक सांख्य दर्शनके ग्रंथका भी अनुवाद किया। यह ग्रंथ मूल संस्कृतमें नहीं मिलता है। यहाँ तक कि जिसका मूल संस्कृत नाम भी नहीं ज्ञात है। यह 'लक्षणानुसार शास्त्र' नाम चीनी अनुवादमें दिये चीनी नामका संस्कृत रूप है।

अूपर कहा गया है कि परमार्थको दक्षिण चीनके ल्याङ और छन् दोनों राजवंशोंके समय कार्य करनेका अवसर मिला था। अपने चीन प्रवासके २३ वर्षोंमें अुन्होंने ७० ग्रंथोंका अनुवाद प्रस्तुत किया। अूपरके जीवनवृत्तसे पता चलता है कि अुन्हें अशांतिपूर्ण जीवन चीनमें बिताना पड़ा था। २३ वर्षके अशांत जीवनके बीच ७० ग्रंथोंका अनुवाद प्रस्तुत करनाही पर्याप्त प्रमाण है कि वे कितने मेधावी विद्वान् और कर्मठ व्यक्ति थे। अगर अुनका जीवन शांतिसे चीनमें व्यतीत होता तो न मालूम और कितने अमूल्य ग्रंथ-रत्न चीनी वाङ्मय रूपी हारमें और पिरोये जाते। अूपर अुनकेद्वारा अनूदित कुछ प्रसिद्ध ग्रंथोंकी ही चर्चा हुओी है। अिनके अतिरिक्त अुन्होंने नागार्जुन अश्वघोष, वसुवर्मन, वसुमित्र आदि महायानके महान् आचार्योंके ग्रंथोंका भी अनुवाद प्रस्तुत कर अुन्हें मूल संस्कृतमें नहीं तो कमसे कम चीनी भाषामें सुरक्षित रख छोड़ा है और अिस तरह अुन्हें सदाके लिअे लुप्त होनेसे बचा लिया है।

परमार्थने जहाँ अपने अुज्ज्वल चरित्र और धार्मिक आस्थाके कारण चीनके बौद्ध धर्मप्रेमी जन समूहकी श्रद्धा तथा प्रेम प्राप्त किया वहाँ अुन्होंने अपनी साहित्यिक प्रतिभा और कार्यदक्षताके कारण चीनके सुधीवृन्द तथा मनीषियोंको भी अपनी ओर आकर्षित कर अुन्हें अपना प्रशंसक बना लिया। अिस साधकने बौद्ध धर्मके विज्ञानवादका प्रचार कर वहाँ अिस सिद्धान्तकी जड़ जमा दी। कितने ही चीनी विद्वान् अुनसे प्रभावित होकर बौद्ध धर्मके प्रचार तथा बौद्ध ग्रंथोंके अनुवाद कार्यमें लगे। राजनीतिक क्षेत्रको छोड़ अुनका प्रभाव अुस कालके चीनके धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रोंपर अितना पड़ा कि चीनके बौद्ध धर्मके अितिहासमें वह युग ही परमार्थका युग कहलाता है। अिस प्रकार भारतीय संस्कृतिको चीनमें फैलाने तथा अुसे समृद्ध करनेकी दिशामें परमार्थकी सेवा अमूल्य रही है जो हमारे लिअे गर्व तथा अनुकरण करनेकी वस्तु है।

[बरहत, बिहार

---

* जिस ग्रंथका अनुवाद चीनी भाषासे हिंदीमें चीन-भवन, शांतिनिकेतनके प्रो० शांतिभिक्षु शास्त्रीजीने किया है। देखिअे—'विशाल भारत', अक्टूबर, १९४६।

'३० जनवरी' की पुण्यस्मृति-लहरी

:श्री आर. के. षण्मुखम् चेट्टियार:

[स्वर्गीय श्री आर के. षण्मुखम् चेट्टियारका जन्म कोयमुत्तूरके अेक प्रतिष्ठित चेट्टियार कुलमें हुआ था। आपकी विद्वताकी प्रशंसा दुनियाके बडे-बडे विद्वान करते हैं। आप अपनी मातृभाषा तमिलके बडे पंडित थे। आपकी लेखनीने अनेक प्रकारके राजनीतिक, सामाजिक साहित्यिक लेख सृजन किये हैं। 'शिलप्पधिकारम्' तमिल साहित्यके पंच महाकाव्योंमें सबसे अधिक प्रसिद्ध है। अुसके 'पुहार काड' पर आपने जो टीका की है, वह बहुत ही अुत्तम मानी जाती है। तमिलके अधिकारी विद्वानोंने अुनकी भाषा व शैलीकी बड़ी प्रशंसा की है। आप साहित्यिक ही नहीं, संगीत, नृत्य आदि ललित कलाओंके भी बडे प्रेमी थे। संगीतके रसानुभवके लिअे साहित्य भी जरूरी है-अिस पक्षके आप समर्थक थे और 'तमिल अिशै' अर्थात् तमिल संगीतके आन्दोलनके भी आप प्रवर्तक थे।

राजकाज दरबारके क्षेत्रमें भी आपका बडा हाथ रहा है। आप भारतकी अनेक रियासतोंके दीवानके पदपर भी आसीन रहे और शासनकी बागडोर सुचारु रूपसे संभाली। संसारके अिनेगिने अर्थशास्त्रविशारदोंमें आपका प्रमुख स्थान रहा है। भारतके स्वतन्त्र होनेपर, भारत सरकारके वित्तमंत्री भी रहे।

आप बडे मिलनसार थे। मित्र और मेहमानोंकी खातिरदारी करनेमें बडेही कुशल !

स्वर्गीय चेट्टियारका राष्ट्रपिता बापूके साथ बड़ा निकट सम्बन्ध रहा। बापूजीके निधनके बाद, चेट्टियारजीने जो संस्मरण लिखा है अुसीका हिन्दी-रूपान्तर, 'राष्ट्रभारती'के पाठकोंके सम्मुख हम प्रस्तुत कर रहे हैं, श्री रा वीलिनायनजी द्वारा अनूदित राष्ट्रपिता पू बापूकी स्मृति और श्रद्धांजलिके रूपमें। —सम्पादक]

मैं अुस वक्त मदरासके कालेजमें पढ रहा था। दक्षिण अफ्रीकाके प्रवासी भारतीयोंकी जो दीन हीन शोचनीय दशा थी, अुसकी मार्मिक जानकारी भारतीयोंको देनेके हेतु गाधीजी मदरास आये थे। 'शंकुराम-चेट्टी' गलीमें श्रीयुत जी. अे. नटेशनके घरमें अुनसे मिलनेके लिअे हम कुछ छात्र गये। सफेद अंगा, सफेद काठियावाडी पगडी और कधेपर अेक स्वच्छ दुपट्टा पहने हुअे थे। फर्शपर बिछे कालीनपर बैठे हुअे थे। हम सब छात्र अुन्हें चारो तरफसे घेरकर बैठ गये। वे धीमी आवाजमें दक्षिण अफ्रीकाके प्रवासी भारतीयोंके सम्बन्धमें बातें कर रहे थे। अुस दिन हमने जिन महाशयको देखा था, वे काठियावाड गुजरातके अेक साधारण सामान्य मनुष्यही दिखलायी दिये। अुस वक्त हमारे मनमें यह विचार लेशमात्रभी नहीं अुठा कि हम महान अवतारी पुरुषसे बातें कर रहे हैं।

× × ×

अुसके बाद दस साल गुजर गये। महात्मा गाधी तमिलनाडमें भ्रमण कर रहे थे। मालूम हुआ कि कोयमुत्तुर भी पधार रहे हैं। अुस वक्त मैं अुस नगरकी नगरपालिकाका अेक सदस्य था। नगरपालिकाकी सभामें जब यह प्रस्ताव आया कि महात्माजीको स्वागतमें अेक बढिया मानपत्र दिया जाअे तब अुस प्रस्तावका जोरदार विरोध हुआ। तरह-तरहके आक्षेप अुठे। सदस्योंने यह दलील पेश की कि महात्माजी तो असहयोग आदोलनके प्रवर्तक हैं और अुसका जोरशोरसे प्रचार कर रहे हैं। नगरपालिकाका कर्तव्य तो यह है कि वह सरकारको अपना पूरा सहयोग प्रदान करे। अैसी हालतमें वह अेक असहयोगीको मानपत्र देकर अुसका स्वागत कैसे कर सकती है ?

पर बहुतसे सदस्योंने अुस दलीलका अुत्तर यों दिया, 'यद्यपि हम असहयोग आन्दोलनके पक्षपाती नहीं, फिरभी अुनके मद्यपान निषेध, अस्पृश्यता निवारण,

खादीका प्रचार आदि समाजोपयोगी सुधारोंके कामोंको हम क्यों न महत्त्व दें ?"

मैंने कहा, "स्वागत-मानपत्रमें हम केवल प्रशंसाके शब्द न लिखकर, अपने आंतरिक सच्चे विचार स्पष्ट रूपसे रख दें और यह भी निस्संकोच कह दें कि हम आपके असहयोग आंदोलनका विरोध करते हैं।'

यह सुनकर अनेक सदस्योंने यह विचार प्रगट किया कि अिस ढंगका मानपत्र देना महात्माजीका अपमान करना होगा, अिससे मानपत्र न देना ही अच्छा है।

मेरा विचार यह था कि महात्माजी सत्यवादी हैं। हम अपने मनकी बात बगैर लुकाये छिपाये कह दें तो वे जरूर ही खुश होंगे।

आखिर अधिकांश सदस्य मेरी रायसे सहमत हुअे और मेरे कहे अनुसार मानपत्र लिखने और प्रदान करनेको राजी हो गये। प्रस्ताव नगरपालिकामें सर्व-सम्मतिसे स्वीकृत हुआ।

मानपत्र तैयार करनेका कार्य मुझे ही सौंपा गया। अिस प्रकारके मानपत्रोंमें प्रशंसाके जो शब्द कहे जाते हैं अुन्हें मैंने थोड़में और नगर-पालिकाके ज्यादातर सदस्योंके विचारों और विश्वासोंको स्पष्ट शब्दोंमें रखा। —

"आपके असहयोग आंदोलनपर हमें जरा भी विश्वास नहीं। सहयोग द्वारा ही हमारा देश स्वतंत्र हो सकता है। लेकिन सुधारके जो कार्य आपने अपने हाथमें लिये हैं, अुनका हम हृदयसे स्वागत करते हैं। अस्पृश्यता निवारण, मद्यपान निषेध खादी प्रचार, ग्राम-सुधार जैसे कार्योंमें हम आपको अपना पूरा-पूरा सहयोग प्रदान करनेको प्रस्तुत हैं।"

अिस प्रकार मान-पत्र तैयार कर दिया गया। हम सब सदस्य अिस बातकी बड़ी अुत्सुकतासे बाट जोह रहे थे कि महात्माजी अिस नये ढंगके मानपत्रका क्या जवाब देते हैं? परन्तु मैंने जो विचारा था, वही जवाब महात्माजीने दिया।

महात्माजीने मानपत्रके अुत्तरमें कहा, "अधिकांश लोगोंका यह ख्याल होगा कि आज मैं अपने विरोधियोंके बीचमें हूँ। लेकिन मैं यह समझता हूँ कि कोयमुत्तूरकी नगरपालिकाके सदस्य मेरे सच्चे दोस्त हैं। मानपत्रमें प्रशंसाके प्रचलित शब्द नहीं कहे गये, मुँहके सामने मीठी बोलनेकी रीति या नीति नहीं बरती गयी। वरन् अपने आंतरिक विचार निस्संकोच भावसे प्रकट किये गये हैं, यह देखकर मुझे अपार हर्ष हो रहा है। मेरे असहयोग-आन्दोलनके प्रति आप लोगोंको विश्वास नहीं हो तो अुसे अेकदम बिल्कुल भूल जाअिये। अिसका मुझे जरा भी दुःख नहीं होगा। मैं यही पर्याप्त समझता हूँ कि आप लोगोंको सुधारके अुन कार्योंमें पूरा विश्वास है, जिनकी ओर आप लोगोंने अपने मान पत्रमें अिशारा किया है। मैं चाहूँगा कि आप लोग अुन कामोंमें लग जाअें, जिससे मेरे मनको तसल्ली मिल सके।'

× × ×

सन् १९२६में फिर अेकबार महात्माजी कोयमुत्तूर पधारे। तब अेक हफ्तेके लिअे मेरे ही घरपर ठहरे थे। अिस समय अुनसे निकटतम परिचय प्राप्त करनेका सुयोग हाथ लगा। नित्य प्रातःकाल वे टहलने जाया करते थे। मैं भी अुनके साथ हो लिया करता था।

अेक दिन किसी कारणवश मैं अुनके साथ नहीं जा सका। सुबह आठ बजे वापस आये तो अुन्होंने कहला भेजा 'मैं तुरन्त तुमसे मिलना चाहता हूँ।" बात जाननेके लिअे मैं अुनके कमरेमें पहुँचा।

अुन्होंने पूछा, "यहाँके पुलिसके अधिकारीको तुम जानते हो ?"

मैंने अुत्तर दिया, "हाँ, जानता हूँ। पर अधिक मेल-जोल नहीं।"

"तुम्हें अभी पुलिसके अुस अधिकारीके पास दूत बनकर जाना होगा !"—अुन्होंने आदेश दिया।

मेरी समझमें तो कुछ नहीं आया कि मामला क्या है? पूछनेपर मालूम हुआ कि जिस वक्त गांधीजी सुबह घूमने सड़कपर जा रहे थे, अुसी वक्त अेक गरीब तेली भी कांवरके दोनों सिरोंपर तेल भरे

टीनके डब्बे लटकाये जा रहा था। सामनेसे पुलिसका अेक दल तेजीसे दौड़ता हुआ आ रहा था। तेली बीच रास्ते जा रहा था। अेक पुलिसवालेने, जो तेज चाल चल रहा था, धक्का देकर तेलीको गिरा दिया। तेली अचकचाकर नीचे गिर पड़ा और टीनमें भरा तेल भी जमीनपर बह गया। पुलिसवालोंमेंसे किसीने अिस बातकी चिन्ता नहीं की कि तेल लुढ़क गया है। किसीने जबानी हमदर्दी भी नहीं जाहिर की। अुलटे कुछ पुलिस-वालोंने ताली पीटकर अुसकी हँसी अुड़ायी। महात्मा जीने यह दृश्य देखा तो अुनके दिलको बड़ी ठेस पहुँची और तेलीको साथ लेकर वे मेरे घर आ पहुँचे।

सारी घटना अुनके मुखसे सुननेपर मैंने अुनसे पूछा, 'क्या अिसके लिअे नालिश करें?"

अुन्होंने अुत्तर दिया, "नालिश करनेकी कोअी जरूरत नहीं। पुलिसके अुस अधिकारीके पास शान्तिदूत बनकर तुम जाओ और अिसकी निवृत्तिका कोअी मार्ग खोज निकालो।'

क्या खोज निकालें?— मैं सोच-विचारमें पड़ गया। गांधीजीने मुझे विचार-मग्न देखकर कहा, "अुस पुलिसवालेको, जिसने गरीब तेलीका तेल फेंक देनेका जुल्म किया है और पुलिसके अुच्च अधिकारीको, जिसके मातहतने अैसा जुल्म किया है, चाहिअे कि तेलीसे माफी माँगे और तेलका दाम चुकाकर नुकसान भर दे। यही काम तुम्हें करना होगा।"

वहाँके पुलिस अधिकारी तो सभी गोरे थे और स्वभावके भी बड़े तीखे! मुझे अपने दौत्यकार्यमें सफलता मिलनेकी आशा नहीं थी। फिर भी मैं निराशा लेकर पुलिसके अुस अधिकारीके पास पहुँचा और सारी बातें कह सुनायीं। गांधीजी अिसका किस प्रकार न्याय चाहते हैं?— यह बात भी बता दी। पर पुलिसके अधिकारी वह बात मानने ही न थे।

मैंने अुनसे कहा, "आप स्वयं महात्माजीके पास चलकर अपनी बात कह दें तो बड़ा अच्छा हो।"

वे अनमने होकर बड़बड़ाते हुअे मेरे साथ चलनेको तैयार हुअे। दस मिनट तक महात्माजी और अुनमें बातें हुअीं। गोरे पुलिस अफसरकी अेकदम कायापलट गयी। वे स्वयं तेलीसे माफी माँगने और तेलका दाम चुका देनेको तैयार हो गये!

गांधीजीका प्रेम-मार्ग कैसा सद्य फल देनेवाला है?— मैंने तब अपनी आँखों देखा।

* * *

अुसी दिन शामको महात्माजीका अेक फोटो हाथमें लेकर, अुसपर अुनका हस्ताक्षर लेनेके विचारसे मैं अुनके कमरेमें गया।

मेरी अिच्छा मालूम होनेपर अुन्होंने पूछा "तुम चाहते हो कि मैं अिस फोटोपर अपना हस्ताक्षर करूँ! क्या तुम अुसका अुचित मूल्य देनेके लिअे तैयार हो?"

देखें, ये कितने रुपये माँगते हैं? — यह सोचकर मैंने अुनसे पूछा, "मैं तैयार हूँ। हाँ, बताअिअे, आप अिसके लिअे कितनी रकम चाहते हैं?"

"मैं तुमसे रुपयों-पैसोंकी आशा नहीं रखता। पर मैं तुमसे अेक वचन चाहता हूँ। वह वचन दो तो वही अिसका अुचित मूल्य होगा!" अुन्होंने कहा।

मेरी समझमें कुछ नहीं आया कि वह वचन क्या हो सकता है? मैंने सोचते-सोचते पूछा, "मुझसे आप क्या कराना चाहते हैं?"

"तुम्हें यह वचन देना चाहिअे कि मैं रोज कमसे कम आधा घंटा चरखेपर सूत कातूँगा। क्या, तुम्हें मंजूर है?"

अुनके अिस प्रश्नपर थोड़ी देरतक अच्छी तरह सोच लेनेके बाद मैंने अुत्तर दिया कि "यह काम मुझसे नहीं हो सकेगा।"

मैंने समझा था कि मेरा यह जवाब अुन्हें अवश्य असन्तुष्ट कर देगा। लेकिन अुन्होंने कहा, "तुम्हारे अिस निर्भीक अुत्तरकी मैं दाद देता हूँ। तुमने अपनी असमर्थता प्रकट कर अच्छा ही किया। मैं तो यह कहूँगा कि वचन देकर अुससे मुकर जानेसे यह अुससे कहीं बेहतर है। मैं तुमसे नाराज नहीं हूँ, बहुत खुश हूँ।"

मैंने अुनसे पूछा, "आपसे तो मैंने कोअी बात छिपायी नहीं। सच-सच बता दिया। अब अिसीको अपने हस्ताक्षरका दाम मानकर अिस फोटोपर आप हस्ताक्षर करके नहीं दे सकेंगे?"

"मैं भी बनिया हूँ और तुमभी बनिया हो। आखिर अिस व्यापारमें तुम्हीं जीते!" – यह कहकर हँसते हुअे अुन्होंने फोटोपर हस्ताक्षर कर दिये।

* * *

तिरुविताकूर (ट्रावनकोर) रियासतमें हरिजनोंके लिअे मन्दिर खोले जा रहे थे। अिस अुत्सव के लिअे महात्माजी तिरुवनन्तपुरम् (ट्रीवेंड्रम) गये थे। अुस समय मैं बगलकी कोचीन रियासतमें दीवानके पदपर था। तिरुविताकूरके मन्दिर-प्रवेशका अुद्घाटन देखकर कोचीनमें भी आन्दोलन जोर पकडने लगे। अिस विषयमें मेरा अुत्साह यद्यपि अधिक मात्रामें था, तथापि कोचीनके महाराज बडे ही कट्टर, वैदिक परंपराके पालनहार थे। हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशकी बात वे कदापि माननेवाले न थे। मेरी दशा साँप-छछूंदरकी-सी हो गयी। तिरुवनन्तपुरम्से महात्माजीने मुझे अेक तार भेजा था।

अुन्होंने अुस तार द्वारा मुझसे पूछा था, "कुछ लोग अिस बातपर बडा जोर देते हैं कि हरिजनोंके मन्दिर प्रवेशके प्रचारके लिअे मैं कोचीन रियासतमें भी आअूं। तुम अपना दीवान पद भूल जाओ और अेक मित्रके नाते मुझे यह सलाह दो कि मैं अिस वक्त क्या करूं? अपनी आतरिक रायस जल्दी से जल्दी मुझे अवगत कराओ। मैं कोचीन आअूं या नहीं?"

गान्धीजीका तार देखकर मेरी समझमें नहीं आया कि क्या जवाब दें। किसीके मनमें भी कैसे यह बात अुठ सकेगी कि महात्माजीसे कहा जाअे कि आप मेरे यहाँ न आअिअे? पर अुनसे यह भी कैसे कहे कि आप आअेंगे, तो कोचीन राज्यमें आन्दोलनके जोर पकडनेका अन्देशा है और वयोवृद्ध कट्टर वैदिक विचारवाले कोचीन-महाराजके दिलको ठेस पहुँचनेकी संभावना है। अिन समान बातोंपर खूब विचार कर लेनेके बाद मैंने अुत्तर दिया।

"यह हमारा अहोभाग्य है कि आप कोचीन पधारना चाहते हैं। मुझे भी बडी प्रसन्नता होगी। लेकिन बूढे महाराजका दिल टूट जाअेगा—चिन्ता अिसी बातकी है। सारी बात आप खूब सोच-समझ ले और जैसा अुचित समझें करें।"—तारका जवाब मैंने तारसे दे दिया।

तुरन्त गान्धीजीका प्रत्युत्तर भी आ गया। अुसमें लिखा था — 'कोचीनकी हालतसे मैं भलीभाँति परिचित हूँ। तुम्हारी श्रम दशा भी भली भाँति समझ पाता हूँ। अब मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं अिस बार कोचीन नहीं आअूँगा।"

× × ×

देहलीमें वित्तमंत्रीके पदपर मैं कार्य कर रहा था। बंगालसे महात्माजी देहली आ पहुँचे थे। दूसरे ही दिन अुनके दर्शन करनेके विचारसे मैं बिडला-भवनमें पहुँचा। सहज विनोदी हँसी हँसते हुअे अुन्होंने मेरा स्वागत तमिल बोलीमें किया, "आअिअे, साहब! आअिअे! बैठिअे! कुशलसे तो हैं न?"

मैंने भी तमिलमें कहा, "हाँ, स्वामी! कुशलसे हूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आजसे आपको मेरे साथ तमिल ही में बोलना चाहिअे।"

यह सुनकर वे खिलखिलाकर हँसे। अिससे ज्यादा तमिल बोलना वे जानते न थे। दक्षिण अफ्रीकामें तमिल भाषा-भाषियोंके साथ काम करते हुअे अुन्होंने तमिलके थोडेसे शब्द सीख लिये थे। आगेकी बातचीत अंग्रेजीमें हुअी।

अुन्होंने कहा, "स्वतन्त्र भारतमें तुम मन्त्री-पद ग्रहण कर चुके हो। अपने सहयोगी मंत्रियोंको तुम्हें तमिल सिखाना चाहिअे। अगर यह काम तुमसे नहीं हो सके तो, तुम्हें हिन्दी सीख लेनी चाहिअे। समझे?"

मैंने कहा, "मुझे हिन्दी सीखना आसान नहीं मालूम होता। तीस वर्षोंसे आपसे निकट सबन्ध रखनेवाले राजाजी (राजगोपालाचार) ही जब ठीक तरहसे हिन्दी बोलना नहीं सीख पाये तो मुझसे यह काम कैसे संभव हो सकता है?"

यह सुनते ही गांधीजी ठठाकर हँस पडे।

× × ×

देहलीमें महात्माजीने अनशन आरंभ कर दिया था। हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके बीचके विभाजनके अवसरपर यह निर्णय हुआ था कि हम पाकिस्तानको पचपन करोड रुपये देंगे। अुस रकमको लेकर भारत सरकार और पाकिस्तान सरकारके बीच तकरार अुठ खडी हुअी।

अनशनके दूसरे ही दिन मुझे अिस बातकी सूचना मिली कि बापूजी मुझसे मिलना चाहते हैं। सवेरे नौ बजेके करीब मैं बिडला-भवनमें पहुँचा।

देहलीमें तब सख्त सरदी पड रही थी। बिडला-भवनकी फुलवारीमें बापूजी अेक पलंगपर धूप सेवन करते हुअे लेटे थे। मेरे जाते ही, श्री जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल और डाक्टर मथाअी भी आ पहुँचे।

भारत और पाकिस्तानके बीच जो तनातनी खडी हो गयी थी अुसपर तीन घंटेतक वाद-विवाद हुआ। मैंने और सरदारने यह तर्क अुपस्थित किया कि कानून और पारस्परिक समझौतेके मुताबिक हम किसी तरह अिस समय वह रकम देनेको बाध्य नहीं। गान्धीजीने बडे गौर और सब्रसे हमारी बातें सुनीं और धीमे स्वरमें अेक घंटेतक अिस बातकी तर्कपूर्ण विवेचना कर हमें समझाया कि यद्यपि मैं मान लूं कि पाकिस्तान ही कसूरवार है और अुसका पक्ष कमजोर है, फिर भी मैं यही कहूँगा कि आप लोगोंकी मनोभावना हमारे भारतके अहिंसा धर्मके अनुकूल नहीं, बहुत ही प्रतिकूल है।

अुनकी बातें सुनते-सुनते हमारे मनमें यह विचार जड पकड गया कि हमारा फैसला ठीक नहीं है।

दूसरे ही दिन हमने 'कैबिनेट' की बैठकमें निश्चय कर लिया कि "पचपन करोड रुपये' तुरन्त पाकिस्तानके हवाले कर दिये जाअें।

अिस बातचीतके समय तमाशेकी अेक बात हुअी। धूप तेज हुअी तो मैंने अपना रूमाल निकालकर सिरपर बाँध लिया। यह देखते ही बापूजीने न जाने. धीमे स्वरमें पंडित जवाहरलालजीके कानोंमें क्या कहा? झट जवाहरलालजी अुठकर भवनके अन्दर गये। लौटने हुअे अुनके हाथमें टोकरी जैसी अेक बडी टोपी थी, जिसे ब्रह्मदेशवाले धूपसे बचनेके लिअे अिस्तेमाल करते हैं, अुन्होंने अुसे महात्मा गांधीके हाथोंमें रख दिया। मैंने सोचा कि महात्माजी धूपकी गरमी सहन न कर सकनेके कारण वह टोपी पहनने जा रहे हैं। पर अुन्होंने वह टोपी मेरे सामने बढा दी और कहा, "अिसे पहन लो न!"

* * * *

१९४८ की तीस जनवरीको साढे पाँच बजे होंगे, मैं देहलीके अपने कार्यालयमें बैठा कोअी काम कर रहा था। मेरे सेक्रेटरी दौडे हुअे आये और काँपते स्वरमें बोले, "महात्माजीपर किसीने गोली चला दी!"

अुस समय मेरी समझमें कुछ नहीं आया कि अुन्होंने कहा क्या? मेजपरके सारे-के-सारे कागजात जैसेके तैसे छोडकर मैं बाहर दौडा आया और अपनी गाडीमें बैठकर बिडला-भवनकी ओर चल पडा। अिस समय वहाँ ज्यादा भीड नहीं लगी थी। मैं दौडा हुआ महात्माजीके कमरेमें गया।

फर्शपर बिछे गद्देपर महात्माजी लिटाये गये थे। पंडित जवाहरलाल नेहरू भी आये। सरदार पटेल पास ही बैठे थे। सिरहाने महात्माजीकी पोतियाँ फूट फूटकर रो रही थीं और गीताके श्लोक पढती जा रही थीं। मैं अपने जीवनमें तीन बार आँसू बहाकर रोया हूँ। यही तीसरी बार था।

महात्माजीको देखते समय यह नहीं मालूम होता था कि अुनके शरीरने गोली खायी या अुनके प्राण-पखेरू तनरूपी पिंजडा छोडकर अुड गये हैं!

दूसरे दिन सरदीकी सान्ध्यवेलामें पाँच और छह के बीच, अैतिहासिक यमुनाके राजघाटपर ढेरा चंदनकी लकडी चिताकी आगमें धधककर प्रकाशमान हो अुठी। दुनियाको प्रकाश देनेवाली दिव्य ज्योति, भारतकी आधार प्रकाशराशि अुसमें जल रही थी। सबका विश्वास बुझ रहा था। फिर भी कभी न बुझनेवाली अुनकी दिव्य-आत्माकी ज्योति तो सदा प्रकाशमान रहेगी और सारी दुनियाको प्रकाश देती रहेगी।

[तमिलसे अनुवादक:— श्री रा० धीळिनाथन]

[मद्रास

गान्धीजीका कुसूर ?

: श्री अब्दुल हलीम अन्सारी :

महात्मा गान्धीको गुजरे पूरे ५ साल हो गये। दुखी भारतके लिअे ये पाँच साल कुछ कम नहीं होते जबकि अुसको प्यार करनेवाला आजाद करनेवाला और अपनी जिन्दगीमें ज्यादासे ज्यादा त्याग और बलिदान करनेवाला दुनियाका सबसे बड़ा व्यक्ति अुनके बीचमें न रहा। क्या कारण है जिसका ? भारतमाताकी शान्तिदायिनी गोदसे अुसका भक्त सपूत छिन गया। हमें वह कारण खोजना है। अैसा क्यों हुआ ? जब हम अिस सवालपर विचार करते हैं और महात्माका कुसूर ढूँढ़ निकालनेमें लग जाते हैं तो हम बड़ी कठिनाअीमें पड जाते हैं। बार बार हमारे दिमागमें यह खयाल घूमने लगता है कि कौनसा दोष था और वह भी विश्वप्रेमी महात्माका दोष ? दोषका या दोषीका सम्बन्ध दुराचारसे होता है, खराब चाल चलनसे होता है। पर गान्धीजीकी बातोंमें और आदतोंमें कौनसी बुराअी थी। अुनके सन्देशमें भारतके हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्ती, पारसी, सब धर्म और सब कौमके लिअे प्रेम जगमगाता था। अुसके सदाचारसे हमारा जीवन आगे बढ़ता था। अुसके चरण चिन्होंसे जीवनका निर्माण होता था। आपसमें प्रेम और अेकताका, सद्‌भावनाका केन्द्र अुस महात्माका हृदय था। अुसी केन्द्रको तोड़नेके लिअे निशाना बनाया गया। शामके ५ बजे जब कि वे भगवानसे मानवजातिकी भलाअीके लिअे प्रार्थनास्थलपर जा रहे थे, अुस ३० जनवरीकी शामको। महात्माके अुसी हृदय केन्द्रको पिस्तोलकी गोली लगी। बुद्ध, महावीर, अीसाके बाद दुनियाका अेक सबसे बड़ा मानवताका पुजारी, सच्चा अहिंसक सत पुरुष अुठ गया! मानवताके मर्मस्थलपर गोली लगी थी। गान्धीजीका कुसूर ?

[भोपाल

बुद्धदेव वसु

: श्री मन्मथनाथ गुप्त .

[भारतीय भाषा-साहित्यमें बंगलाका प्राचीन और आधुनिक सत्यं-शिवं-सुन्दरं साहित्य सबसे समर्थ और समुन्नत साहित्य है। काव्य भाव सिन्धुमें अुत्ताल तरंगें हिलोरती हैं। कहानी, अुपन्यास, नाटक, समालोचना चरित्र आदि साहित्यके सभी अंगोंमें पुष्टि, नव अुन्मेष, सौष्ठव, रूपण-स्वरण नयी रमणीयता, मर्म अुद्घाटनमें अनूठापन और सम्पूर्णता है। आधुनिक बंगला साहित्यके श्रेष्ठ साधकोंमें श्री बुद्धदेव वसुकी भी अधिक प्रतिष्ठा है। साहित्यके सभी क्षेत्रोंमें अुन्होंने अपनी प्रतिभाको बिखरा है। बंगलाके अेक महान् लेखकका यह परिचय श्री मन्मथनाथ गुप्तजीने 'राष्ट्रभारती के लिअे ही भेजा है। —सम्पादक]

बंगला साहित्यमें श्री बुद्धदेव वसुका अपना स्थान है। अुन्होंने कविता, अुपन्यास, कहानी, आलोचना सभी क्षेत्रोंमें रचनाअें करके अपना अतुल साहित्यिक शक्तिसामर्थ्य व्यक्त किया है। और अुनको पूर्ण यश मिला है। कुछ आलोचकोंने यह लिखा है कि जिनके निकट कविता और दर्शन अेक वस्तु है या जो यह मानते हैं कि कविताका प्रधान अुद्देश्य कोअी जीवन-दर्शन देना है, अुनके लिअे बुद्धदेव कवि नहीं हो सकते। पर क्या यह बात सही है? क्या बुद्धदेवका कोअी दर्शन-शास्त्र नहीं? मेरा तो अैसा विचार है कि बुद्ध-देवकी कृतियोंमें जीवनके सम्बन्धमें अेक दृष्टिकोण अन्तर्निहित है, और वही अुनका दर्शन शास्त्र है।

अुनमें जीवनको भोग करनेकी अदम्य स्पृहा है, साथही साथ दुखवादकी अेक अन्तर्धारा भी है। दूसरे शब्दोंमें कहा जाअे तो वे जीवनकी गुत्थियोंको सुलझानेमें असमर्थ रहकर शनिवाद या संसार-त्यागवादके दलदलमें न फँसकर भोगवादकी कोमल गोदमें आकर अपनेको भूलनेकी कोशिश करते हैं। अिस रूपमें देखा जाअे तो बुद्धदेव बंगालके अवक्षयकृत अुच्च वर्गके प्रतिनिधि-लेखक हैं।

बुद्धदेव जिस समय पहले पहल साहित्यिक क्षेत्रमें अवतरित हुअे याने १९२०-३० के युगमें बंगालके युवकोंमें दो धाराओंका जोर था, अेक तो क्रान्तिकारी धारा जिसका प्रतिनिधित्व शरत बाबू तथा काजी नजरुल अिस्लामने किया, और दूसरी धारा भोगवादी थी, जिसका प्रतिनिधित्व बुद्धदेव आदिने किया। सरोज बन्द्योपाध्यायने यह ठीकही लिखा है कि बुद्धदेव अुन लोगोंमें नहीं हैं, जो नजरुलकी तरह स्फुट रूपसे, बल्कि अुल्लसित होकर जेलखानोंके तोड़नेका नारा लगाते हैं। अुन्हें तो अपनेसे अधिक मतलब है। जनगणके दुख कष्टसे अुन्हें कोअी सरोकार नहीं। वे व्यक्तिवादी हैं। वे अपनी समझसे कवि और कविताका क्या अुद्देश्य होना चाहिअे, अिसपर कहते हैं—

"आमार आकांक्षा ताअी कवित्वेर अद्वितीय व्रत सघहीन सत्तातीत अेकाकेर आदिम ज्यामितिस्तब्ध तार निलिमाय आ मजात पूर्णतार वाणी।"

याने—अिसलिअे मेरी आकांक्षा है कवित्वका अद्वितीय व्रत। संघहीन सत्तातीत अेकाकीकी आदिम रेखागणित स्तब्धताकी *नीलिमामें आत्मजात* पूर्णताकी वाणी।

अिनके अिस कथनको पूरी तरह समझनेका दावा मैं नहीं करता, पर अितना तो स्पष्ट है कि अुनका संकेत यह है कि कवित्वका अद्वितीय व्रत व्यक्तिवादका गुण गाना है। बुद्धदेव वसुकी कविता अक्सर समझमें आती है, पर कहीं वह स्पष्ट नहीं हो पाती। क्या यह आधुनिक कविताकी अेक विशेषता है? अिस विषयपर मैंने अपनी नव प्रकाशित पुस्तक 'साहित्य कला-समीक्षा' में विस्तृत रूपसे विचार किया है। अिस प्रसंगमें केवल अितना ही कहना पर्याप्त है कि जब विचार धुँधला होगा, तो अुसका प्रकाश भी धुँधला होगा। अध्यात्मवादियोंकी

बातें अेक हदके बाद समझमें नहीं आतीं और यही हाल अिन निराशावादी भोगवादियोंका है।

स्वयं बुद्धदेव वसुने बार-बार यह कहा है कि कविता केवल बातें है, सौभाग्यसे बुद्धदेवकी सब कवितायें अिस श्रेणीमें नहीं आतीं। अवसरपर वे जो बातें कहते हैं वे समझमें आती हैं और भाषापर अुनका बहुत अधिक अधिकार होनेके कारण वे हमारे सामने अेक चित्र खडा कर देनेमें समर्थ होते हैं। अुनकी कविताका रसास्वादन करानेके पहले यह बता देना जरूरी है कि वे साहित्यके क्षेत्रमें क्यूबिस्ट या घनवादी नहीं हैं। अिस दृष्टिसे भी अुनकी परिस्थिति बहुत ही विशिष्ट है। वे अेक तरफ तो मार्क्सके शान्तिवादी या प्रगतिवादी से जँचते हैं दूसरी तरफ अपनेको घन-वादियोंमें ले जाकर नहीं खडा करते। अुनकी लडाअी दो मोर्चोंपर जारी रहती है। कहीं अस्पष्टता भलही आ जाअे, बात यह है कि वे अेक साथ बहुतसी बातें कहना चाहते हैं, पर वे अस्पष्टताकी साधना नहीं करते और न अुसे पाषाणमूर्ति बनाकर पूजते हैं। वे जिस प्रियाको सम्बोधित करके बात करते हैं अुसके निकट पहुँचीही पंक्तिसे स्पष्ट हो जाता है कि वे अुससे क्या चाहते हैं—

आज आधी रातके समय जब चलेगी ठंडी बयार
नींदको अुतार फेंककर तुम चली आना, क्यों?

हम दोनों जने आमने सामने बैठकर कविता पढ़ेंगे।
फिर लिखते हैं—

पेडका हरा पूर्वकी रेखासे गहरा हो गया।
वहीं पर मुट्ठी भर चाँदका अबीर खिल अुठेगा
हम दोनों जने आमने सामने बैठकर कविता पढ़ेंगे।
जंगलके पाससे हवा हहरा कर जाअेगी पर
जंगलके पास मेरा आकाश मूर्छित हो गिर पड़ेगा
पूर्वका हरा सफेद होकर भोरका आकाश खिलेगा।
रात और दिनके बीचमें पडकर हवा अूँघती है,
पुस्तक समाप्त हो चुकी हम दोनों बैठे हैं चुपचाप।
हेलेनके वक्षमें मनकी वासनाने बनाया है घोंसला
सर्वकालके सब पुरुषोंके मनकी वासना
टूट कर चूर चूर हो गया ट्राय।

वे अपनी बात बिलकुल साफ कर देते हैं, किसी प्रकार धुंधलापन अुसमें नहीं रहता। कवितामें बहकर वे तटसे नहीं हटते।

अफरोदीके मन्दिरमें अर्घ्य देनेके लिअे
स्पार्टाकी रानी हेलेन गयी, सब पुरुषोंकी वासना।
टूट कर चूर चूर हो गया ट्राय।
हेलेनके अपने वक्षके छविपर अर्घ्यकी रचना की है
वह सोनेका कटोरा है, सब पुरुषोंके मनकी वासना
टूटकर चूर चूर हो गया ट्राय।

अुनकी कवितामें प्रकृति है, प्रतीक भी है, पर असली बात जब शुरू होती है तब प्रकृति पीछे छूट जाती है और प्रतीक संयमके लिअे नहीं बल्कि वासनाको और घना करनेके लिअे प्रयुक्त होते हैं। वे अिसी कवितामें कहते हैं कि बाग़ और आग़ामें नींदसे जगाये हुअे लाल आधे चाँदकी टिमटिमाती ज्योत्स्ना अुस समय छा जाअगी, जब कविता पढ़नेका कार्यक्रम चलेगा। यहाँ

तो चाँद बेचारेको नाहक घसीटा गया है पृथ्वीसे हजारों मीलकी दूरीपर रहनेवाले चाँदको अिसलिअे रिवनीजीशन (तमन्ना) किया गया है कि वह आवर वासनाको स्पष्ट करे। कविता पढ़ना भी अिसी तरह अेक प्रतीक है।

वे दूसरे ढंगकी भी कविता लिखते हैं। जैसे—
लीजिअे अेक टुकड़ा —
कल अुसका अन्त नहीं है,
 हम तो केवल आजको लेकर जीते हैं,
जो कभी नहीं हुआ, हो सकता है, अुसीका नाम कल है,
जो निरन्तर हो रहा है, हो चुका अुसका नाम आज है,
यह पृथ्वी आज भरके लिअे मेरे लिअे व्यस्त है,
पृथ्वी मनुष्यसे भरी मुझपर सबका दावा है,
पृथ्वी कामकी कल है, मुझपर सभी पहिये हैं,
अिसे ही लेकर मेरा आज कटता है।

अिस कवितामें रवीन्द्र प्रभाव स्पष्ट है, पर आगे जो कुछ आता है वह अुनका अपना है और अुसमें हम अुनका विशेष सम्भोगवादी स्पर्श पा सकते हैं।
पर कल, कौन जाने कल क्या होगा, शायद वह आये।
मैंने जिसे देखा है, शायद कि कल वह आये
मैंने तो अुसे देखा है, अेक ही बार क्यों न हो
सोनेकी तरंगोंकी तरह अुनके अुन केशोंका अुच्छ्वास
आँखोंमें झिलमिल रोशनी, मानो तरंगोंमें दीपकी छाया,
मैंने तो अुसे देखा है, जब आँख नक्षत्र होकर खिलती है
वे कितने हैं जिन्होंने अुसे नहीं देखा है।

कहना न होगा कि बुद्धदेवमें अपनी विशेषता है। अेक कविता और लीजिअे—

हम बैठे हैं, मैं और नयनकुमार,
नयन मेरा मित्र है, सात सालसे हम लोगोंकी है
जान पहिचान।
हम बैठे हुअे हैं, बीचमें चायकी मेज है,
 सफेद प्यालेके मुँहसे सूक्ष्म सफेद धुआँ निकल रहा है
 अेक घूँटके बाद– ' आज कितनी गर्मी है। '
 अिसके बाद पन्द्रह मिनिट चुपचाप।
 प्याला अधिया गया– ' क्या तुमने पढ़ी है
 बर्नार्डशाकी नयी किताब? नयन सिर हिलाता है।
नयन बात नहीं करता।
मैं सिगरेट निकालकर कहता हूँ ' दियासलाअी है? '
प्याला समाप्त होनेपर है, मुहूर्तमें मुहूर्त कट जाता है।
प्रत्येक मुहूर्त कटता है, अुसीको हम बैठकर गिनते हैं।
' परेशने पत्र लिखा है। '
' अच्छा? ' बात आगे नहीं बढ़ती
' आज सिनेमा चलोगे? ' नयन फिर सिर हिलाता है,
नयन बात नहीं करता।
और क्या कहा जाअे।
मैं आकाश पाताल ढूँढ़ता रहता हूँ।

अिसे चाहे कविता मानिअे या न मानिअे, अिसमें सन्देह नहीं कि यह हमारे यहाँके मध्यम वर्गका अेक अच्छा चित्रण है। कहा गया है कि अितनी सामान्य वस्तुको विषय बनाकर कविता लिखना बड़ी भारी बात है, यह बात सही हो या न हो, कविताको कल्पनाके स्वर्गसे अुतार लाना यह आधुनिक कविता, बल्कि आधुनिक साहित्यका विशेष गुण है।

अभी अुनकी कविताओंकी अेक चयनिका प्रकाशित हुअी है जिसका नाम श्रेष्ठ कविता है। अुसकी सर्वत्र अच्छी आलोचना हुअी है। अेक आलोचक श्री अरुणकुमार सरकारने अुसकी आलोचना करते हुअे लिखा है– ' बुद्धदेवकी रचनामें जरा ध्यान दिया जाअे, तो यह ज्ञात होगा कि अुनमें कविता और जीवन अेकाकार हो गया है। कविके निकट ये दोनों शब्द समपर्यायवाची हैं, दूसरे शब्दोंमें कहा जाअे तो अुन्होंने कविताको हमेशा जीवन और यौवनके प्रतीकके रूपमें अिस्तेमाल किया है। संसारकी ग्लानि, दैनिक जीवनकी धुँधली, प्राणधारणका मिथ्याचरण, अस्तित्वकी परेशानीने अुन्हें छेड़ तो दिया है पर अुन्हें पीड़ित नहीं कर सकी। बात यह है कि विस्मय कवि-कल्पनाही अुनका असली जीवन है और अुनके वाणिविहंगकी आश्रय शाखा है जो कल्पना-वासनाके अिन्द्रजालसे नित्यके स्वर्गकी रचना कर सकती है। पारसी वस्तुअें जिसके स्पर्शमात्रसे सुन्दर होकर मिट्टीके फूल और आकाशके तारे हो जाती हैं, वही अुनका अुपजीव्य है। जिस कविके हाथमें अलादीनका चिराग है, वह किसी मामूली हीन प्रभुको प्रभु कैसे

मानें। यदि बाहर आंधी और तूफान आओे, अंधेरा अुतरे, तो भी भीतरकी रोशनी है, स्वप्न है दिग्विजयी चिन्ता है।' -

अिस प्रकारकी आलोचनासे कुछ हाथ लगना असम्भव है, विषयवस्तुका स्पष्टीकरण करनेके बजाय अैसी आलोचनाओंसे वह और भी अस्पष्ट हो जाती है। हाँ, अिस आलोचनासे भी यह स्पष्ट हो जाता है कि बुद्धदेव पलायनवादी हैं या कुछ अुसीके जिर्दगिर्द, अुक्त आलोचक भी मानते हैं कि मध्यवित्त जीवनके परिप्रेक्षमें बुद्धदेव वसुने वर्तमान समाज व्यवस्थाको चित्रित किया है। श्री सरकार लिखते हैं कि मध्यवित्त-जीवनमें 'केवल पतझड़का चीत्कार है हृत्पिंडमें हताशाका डमरू बजा करता है, पर बुद्धदेवने पराजय स्वीकार नहीं की, बिना लडाअीके ही विजयी हुओे हैं। अुस राज्यमें अपनी पुकार अुठायी है, जो राज्य शब्द, ध्यान रूप, और प्रेमका है। जहाँ मनुष्य अकेला है, अकेला और स्वाधीन, अपने भयसे मुक्त। या मनुष्य जहाँ हृदयके सम्पर्कसे दूसरेके साथ युक्त है, और अुसी अेकात्मीभूत शक्तिमें ही वह विरुद्ध-रूपी विश्व-व्यापारकी पहुँचके बाहर है। अिसीलिओे अुनकी कवितामें गरीब बलार्क भी कह सकता है—

अहह ! सुन्दर यह पृथ्वी, सुन्दर यह जीवन।
बिना मूल्यके ही, अमूल्य दान है
पण्यराशिकी जघन्य कमी है,
देहधारीको अिससे चाहे जितना दुख हो
अतल अगममें है मुक्त मेरा प्राण।

श्री सरकार अिस अुदाहरणके द्वारा अपने मुकदमेको साबित करनेके बजाय अुसे बुरी तरह खो देते हैं। बलार्क जो कुछ कहता है वह स्पष्टरूपसे अिस दुनियासे निराश होकर दूसरी बातोंमें भरोसा करना है। यह सब होनेपर भी बुद्धदेव वसुको हम दोष नहीं देते, क्योंकि जैसा युग है, वे अुसीको लेकर चलते हैं। वे दुनियाको बदलनेके लिओे अुत्सुक नहीं, शायद वे अुसकी आशा छोड चुके हैं, अिसलिओे वे अुससे भागकर जान बचाते हैं। पर कवि होनेके नाते वे अपने भगोड़ेपनको सुन्दर वाक्योंके धूम्रजालमें छिपाना जानते हैं, और अैसा भ्रम अुत्पन्न करनेमें समर्थ होते हैं कि वे संग्राम कर रहे हैं। अिसमें कोअी सन्देह नहीं कि वे अेक शक्तिशाली कवि हैं और भाषापर अुनका बहुत अधिक अधिकार है।

हमने अिस लेखमें मुख्यतः कवि बुद्धदेवकी ही आलोचना की है, पर वे कवि होनेके अतिरिक्त अेक आलोचक, अुपन्यासकार तथा कहानीकार भी हैं। अुन्होंने अंग्रेजीमें 'अैन अेकर आफ ग्रीन ग्रास' लिखा है, जिससे अिधरके बंगला साहित्यका परिचय बंगालके बाहरके लोगोंको मिलता है। यह पुस्तक तथ्यपूर्ण है। अेक हदतक वे निष्पक्ष भी रहते हैं। आलोचनामें गहराअीतक जानेकी चेष्टा करते हैं। बहुज्ञ और सुपठित हैं, दूर-दूरकी कौडी लाते हैं। अुनकी लिखी हुअी चीजोंको समझनेके लिओे अुनकी तरह स्वाध्यायी होना आवश्यक है।

अुपन्यास और कहानी क्षेत्रमें श्री बुद्धदेव वसुका नाम बंगला लेखकोंमें प्रमुख है। अुनका पहला अुपन्यास 'साडा' १९३० में प्रकाशित हुआ था। १९३३ में 'जेदिन फुटलो कमल' और 'धूसरगोधूलि' १९४२ में 'कालोहवा' और १९४६ में 'विशाखा' १९४९ में 'तिथिडोर' प्रकाशित हुओे। अुनकी पुस्तकोंमें यौन-आवेदनकी प्रबलता है। मैंने अपनी 'प्रगतिवादकी रूप-रेखा' नामकी पुस्तकमें अिनके सम्बन्धमें लिखा है। कुछ अुन्हें प्रतिक्रियावादी भी मानते हैं। पर यह कोअी नहीं कहता कि बुद्धदेव वसु कलाकार नहीं हैं। वे अेक अूँचे दर्जेके कलाकार हैं, और अुनमें हम मध्यवित्तवर्गके अेक रूपको देख सकते हैं।

[दिल्ली

अेक साधारण अनुभव

: श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी :

रघुनन्दन और मैं जिगरी दोस्त थे। बचपनमें हमारी पढाअी ही साथ नहीं हुअी थी, वरन् प्रत्येक प्रकारकी भविष्यकी आशाओंके जो बडे-बडे हवाअी किले हम बनाते थे अुनमें भी हम रात-दिन साथ रहते थे। कालिजमें पढनेवाले अनुभवहीन युवकोंकी स्वच्छन्द कल्पनासे हम अनेक प्रकारकी बातें सोचते थे। हम समझते थे कि हममें विश्वव्यापी आन्दोलनोंके अग्रगण्य नेता होनेकी शक्ति है और प्रलयकालके समुद्रकी तरंगों जैसी न्यूयरकी आत्मा और बुद्धिका अुत्साह। यही नहीं, हम अपनी अिन समस्त शक्तियोंको संसारकी अुन्नतिके लिअे अुपयोग करनेका भी दृढ निश्चय करते थे। अिसमें भी मेरी अपेक्षा रघुनन्दनमें टीमटाम कुछ अधिक था। वह बातें भी बढ्-बढ कर करता था। अिसलिअे मेरी समझमें यह नहीं आता था कि वह कौनसा अुच्च पद प्राप्त करेगा। कभी अैसा लगता कि वह धार्मिक सुधारक होकर सत्यके लिअे अीसामसीहके समान भयंकर मृत्युको अपनानेका गौरव पाअेगा। कभी अैसा लगता कि देश-प्रेमपर बलि होकर कोअी वीर पुरुष बनेगा और कभी अैसा लगता कि सुरेन्द्रनाथके समान अनुपम वक्तृत्व-कलाका धनी होकर देशकी चारों दिशाओंको दहकते हुअे शब्दागारोंसे भर देगा।

बादमें वह बम्बअी आया। पैसेकी कुछ कमी होनेसे मुझे तो अेक अंग्रेजी स्कूलकी चालीस रुपयेकी मास्टरीमें अपने कल्पना-जगतको छोड़ना पड़ा। पर रघुनन्दनने अपना अध्ययन जारी रखा। हमारा पत्र-व्यवहार बराबर चलता रहा और मैं यह सोचकर संतोष प्राप्त करता रहा कि यदि मैं नहीं तो कम-से कम मेरा मित्र तो बचपनके स्वप्नोंको मूर्तिमान करेगा ही।

अेक वर्ष बाद हम मिले। मुझे कुछ खेद हुआ। मैं सोचता था कि रघुनन्दनके निर्मल हृदयकी स्वच्छता-पर कभी तनिक भी मैल नहीं चढ़ेगा परन्तु अुसकी चाल-टाल देखकर मुझे अचम्भा हुआ। अंतरके अुल्लासकी अपेक्षा अुसमें बाह्य प्रदर्शन अधिक दिखायी दिया। प्रेम और अुत्साहके निर्मल स्रोतमें दुनियादारीकी कीचड़ अधिक जमती जान पड़ी। मैंने ये विचार मनसे निकाल डाले। सोचा, संभव है, मेरी दृष्टिका दोष हो ! मैंने पुराने स्वप्नोंकी बात छेड़ी। अुसने अुनमें थोड़ा-सा रस लिया लेकिन मुझे लगा कि वह बम्बअीकी रंगीनी, वहांके नाटक और वहांके फैशनमें अपेक्षाकृत अधिक रस लेने लगा है। अैसा अनुभव हुआ जैसे अुसने हमारी आशाओंकी अूंची-अूंची अट्टालिकाओंमें कुछ रद्दोबदल कर दिया हो। अितना होनेपर भी अुसमें मेरी श्रद्धा अचल रही। मैंने सोचा कि सांसारिक सुखोंको अिष्ट माननेवाले पाश्चात्य संस्कृतिके अनुपम केन्द्र बम्बअीके वातावरणसे मनुष्यके दृष्टिकोणमें परिवर्तन होना स्वाभाविक है अिसलिअे अपने स्नेहाधिक्यके कारण मैंने अुसके स्पष्ट परिलक्षित होनेवाले अधःपतनकी ओर कोअी ध्यान नहीं दिया।

रघुनन्दन और अेक सुशील बालिकामें परस्पर प्रेम था। वह मुझे सदैव पत्रोंमें अुसके गुणोंके विषयमें लिखा करता था। मैं समझता था कि कुछ दिन बाद वह अुसीसे विवाह करेगा। लेकिन अुसने मुझसे कहा कि अुस लडकीके बापकी स्थिति अच्छी न होनेके कारण अुसने विवाह स्थगित कर दिया है।

दो-अेक महीने बाद मुझे अेक पत्र मिला कि रघुनन्दन अेक धनवानकी लड़कीसे विवाह कर रहा है। पहले मैंने विश्वास नहीं किया। यहां तक कि रघुनन्दनके लिखनेपर भी अुसे कोअी जवाब नहीं दिया। कारण, मैं कभी यह मान ही नहीं सकता था कि रघुनन्दन जैसा अुच्चादर्शवाला मनुष्य प्रेम-सम्बन्धद्वारा अपनायी गयी अपनी प्रियतमाको छोड़कर किसी दूसरी स्त्रीसे विवाह करेगा। लेकिन अिसी बीच मुझे बम्बअी

जाना पडा। पहले जब कभी मैं बम्बअी जाता था तो रघुनन्दन पत्र पाकर दौडता हुआ स्टेशन आता था पर अिस बार मेरे पहुँचनेके अेक दिन बाद तक भी वह नहीं आया। मेरे मनमें अनेक भ्रम अुत्पन्न हुअे। मेरा हृदय भी बहुत दुखी हुआ। रघुनन्दनके अुज्ज्वल भविष्य और देशोपयोगितापर मेरी अितनी श्रद्धा थी कि मैं यह मानने लग गया था कि यदि अुसका अधःपतन हो गया तो देश और समाजके लिअे अेक भयंकर आघात होगा।

दूसरे दिन भाअी साहब दिखायी दिये। विलायती रंग-ढंग और बहुमूल्य वस्त्रोंसे सुसज्जित रघुनन्दनको देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। 'सादा जीवन अुच्च विचार' के पवित्र आदर्शकी साधना करनेवालेमें यह शान शौकत कैसी? साहब बैठे। अूँची सोसायटीवाली चालाकीसे कुछ देर अिधर-अुधरकी बातें कीं। मुझसे न रहा गया। मैंने विवाहके सम्बन्धमें पूछा।

"हाँ, अमुक सेठकी अिकलौती लडकीके साथ अगले महीने मेरा विवाह होगा', अंगुलीकी अंगूठीके चमकते हुअे नगको अूपर लाते हुअे अुसने कहा, "तुझे भी आज ही वालकेश्वर चलना पडेगा। तेरा परिचय कराअूँगा।' सत्यको छुपाकर कपट द्वारा किया गया मित्र द्रोह, गरीब माँ बापकी निराधार लडकीको धोखा देकर किया गया प्रेम द्रोह, धनके लालचमें नये सम्बन्धको स्वीकार करनेके साथ-साथ फैशनमें डूबकर किया गया अन्तरका आच्छादन और आत्मद्रोह, यह सब मैंने देखा और बिना शरमाये अुसे अैसी धृष्टता करते देखकर मुझे अुसके प्रति घृणा अुत्पन्न हुअी। यह रघुनन्दन! मैंने अुसे आडे हाथों लिया। घण्टे भर तक जो कुछ मुझसे कहा गया सो कहा, और तिरस्कारका समस्त शब्दकोष खाली कर दिया, लेकिन वह हँसता ही रहा।

अन्तमें अुसने जवाब दिया "देख भाअी, ये सब अपने स्वप्न थे। क्या हममें ल्यूथर अथवा शंकरकी प्रतिभा है? हम लोग अल्पशक्तिवाले हैं। अितना होनेपर भी यदि हमारे पास काफी पैसा हो तो हम किसी अंशमें अुसका सदुपयोग कर सकते हैं। केवल भाषण देनेकी अपेक्षा पैसेका त्याग करके देशकी सेवा करनेमें अधिक शोभा है। तू जरा सोच कि अिसमें मनको तो थोडा मारना पडता है पर अिसके द्वारा अिस समाजको कितना अधिक लाभ पहुँचा सकता है।" यह बात थी तो हलकी पर ठीक मालूम पडती थी। मुझे लगा कि रघुनन्दन अब अवश्य कुछ करेगा। वह लखपती होकर अुच्च त्यागका आदर्श रखेगा। लक्ष्मी और सरस्वती दोनोंको प्रसन्न करेगा और वास्तवमें अपनी भावनाओंको किसी-न-किसी अंशमें पूर्ण करेगा।

कुछ समय बाद धूमधामसे रघुनन्दनका विवाह हुआ। जैसा कि सुना गया छह महीने बाद अुसकी परित्यक्ता प्रियतमा विरहसे क्षीण होकर स्वधाम चली गयी। अुस समय रघुनन्दन महाबलेश्वरमें आनन्द लूट रहा था। नयी स्त्रीके सघन स्नेहमें निर्धन अभागिनीकी अकाल मृत्युकी कौन चिन्ता करता? पत्र पढ़कर अुसे रद्दीकी टोकरीमें फेंककर रघुनन्दन पत्नीके साथ टेनिस खेलने चला गया।

अुसके तीन वर्ष बादमें फिर बम्बअी पहुँचा। मेरे लिअे स्टेशनपर मोटर तैयार थी। अपार धन वैभवमें विहार करनेका यह अनुभव मेरे लिअे नया था। तेजीसे हम वालकेश्वर पहुँचे। आदमियोंने आकर मेरे लिअे निश्चित कमरा दिखाया। सारे मकानका ठाटबाट राजाओंके गर्वको चूर करनेवाला था। यदि केवल बंगलेके ही बेकारके साज-सामानको बचाकर पैसा अिकट्ठा किया जाता तो त्योरसकी सालके अकालमें अेक भी प्राणी या जानवर न मरने पाता। काठियावाडमें पैसेके अभावके कारण अनाजके बिना तडपते हुअे मृत्यु शैय्यामें पडे प्राणीकी अपेक्षा अेक घृणित व्यक्तिको प्रसन्न रखनेके लिअे अुसकी तृष्णाको शान्त करनेके लिअे कितना खर्च, कितनी मेहनत! कितनी खुशामद!

तदनन्तर मैं रघुनन्दनसे मिला। अपने विद्वान बालमित्रकी मानसिक अुत्साहसे चमकती आँखें, अुच्चाभिलाषासे गूँजती वाणी, और अध्ययनकी गरिमासे दीप्त भालके स्थानपर अल्पसायी हुअी विषयी आँखें,

फरानेबुल समझी जानेवाली पारसियोंकी-सी भाषा कठिनाअीसे निकलनेवाली लम्बीसी आवाज और अनेक सुगन्धित पदार्थोंसे झकझकाता हुआ मुख देखकर मै चौंक पडा।

अिसके बाद जैसे अीट-पत्थर या शीशे-लकडोमें कोअी बडी भारी भव्यता हो अैसे वह मुझे अपना बगला दिखानेके लिअे साथ लेकर चला। अुसके वर्णनसे किसको लाभ होनेवाला था? मुझे ग्रीसके अेक महात्माकी याद आयी। अेक पैसेवाले शिष्यने डायोजिनीसको अपना भव्य महल दिखाकर प्रशसाकी दृष्टिसे अुसके सम्बन्धमें अुस तत्ववेत्ताका अभिप्राय पूछा। डायोजिनीसने शिष्यके मुखपर थूका और हँसकर बोला—"और सब तो सुन्दर है पर अितनी ही सी जगह गन्दी है।" मुझे भी रघुनन्दनको अैसा ही कोअी प्रशसा-पत्र देनेकी अिच्छा हुअी।

यह अमुक 'हाल' और यह 'फ्लो' रूम करते-करते हम लायब्रेरी कही जानेवाली जगहपर आये। वहाँ मैंने अनेक चमकती हुअी अलमारियोंमें अत्यन्त शानदार जिल्दो और सुनहरे नामोंसे सुशोभित कभी अेक अस्पर्श्य और विलासियोंकी वासना तृप्त्यर्थ लिखे गये अुपन्यास देखे। कुछ अलमारियोंमें साहित्यिक ग्रथ ज्योंके-त्यों—बिना पन्ना चीरे—शोभा दे रहे थे। गत पाँच वर्षोंमें किसीने भी अुन्हें छुआ हो, अैसा नही जान पडता था।

"रघुनन्दन। तेरी कालिजकी छोटी किताबोंका क्या हुआ? वे तो तुझे प्राणोंसे भी अधिक प्यारी थी।"

"कौनसी, वे छह-छह आनेवाली। हाँ, वे तो बिल्कुल बेकार थी। अुन्हें मैंने फेंक दिया।" सच है, जब अूँचे विचारोंको जन्म देनेवाली ही चली गयी तब अूँची भावनाअें ही कहाँसे रह सकती है?

अितनेमें अेक नौकरने आकर कहा कि जोसफाअिन बीमार हो गयी है। यह नाम सुनकर मुझे महान नेपोलियनकी स्त्रीका स्मरण हो आया। रघुनन्दनका चिन्ताग्रस्त मुख देखकर मुझे यह जाननेकी जिज्ञासा हुअी कि यह जोसफाअिन कौन है। हाँफते-हाँफते हम अेक कमरेमें आये। वह कमरा कुत्तोंका अजायबघर जैसा लगता था। कारण, मैंने वहाँ १५-२० कुत्तोंको मौज करते हुअे देखा। अुन्हें देखकर जब मैं अत्यधिक घृणाके भावसे भर रहा था तब मुझे पता चला कि जोसफाअिन अेक कुतिया है। अिस भाग्यशाली जानवरके लिअे मोटरमें डाक्टर आया और जब अुसे कुछ आराम मिला तब रघुनन्दनकी जानमें-जान आयी। अुस समय मुझे अुस स्वर्गवासिनी, प्रेममयी नारीका ध्यान आया जो रघुनन्दनकी नीचताके कारण बचपनमें ही मर गयी थी। मुझे कॅपकपी आ गयी। अुसके बाद अुसने मुझे प्रत्येक कुत्तेकी जाति, कुटुम्ब, गुण आदिका अितिहास बताया। यदि अितनी अधिक स्मरण-शक्तिका प्रयोग अन्यत्र किया गया होता तो निस्सदेह हिन्दुस्तानका अितिहास लिख जाता।

जिसके बादकी अपनी तबेलेकी यात्रा और अुसके घोडोंके गुणोंका विवरण देकर मैं पाठकोंको अुबाना नही चाहता। मुझे तो यही लगा कि यदि रघुनन्दन कुत्तों अथवा घोडे-गधोंका व्यापारी होता तो बहुत अच्छा काम करता और दुनियाके लिअे वहीं अधिक अुपयोगी सिद्ध होता। तत्पश्चात् रघुनन्दनने अपनी समृद्धि और वस्तुओंका वर्णन किया और मुझसे पूछा—"क्यों दोस्त! सब लाजवाब है न? केवल अेक ही तकलीफ है।"

"क्या?" मैंने अुपेक्षा भावसे पूछा।

"खर्च नहीं चलता। क्या करूँ? बडी मुश्किल पडती है।"

अुस समय मुझे थोडी देर पहले देखे हुअे अेक दर्जन घोडे, दो दर्जन कुत्ते और पाँच दर्जन जूते याद आये, पर मैं बोला नही।

"तब तो किसी दूसरे काममें पैसा शायद ही लगता हो?" मैंने पूछा।

"नहीं भाओ। अेक कौडी भी नही बचती। मैं क्या करूँ?" यह बात अुसने अैसे कही जैसे अिसमें कौडीका दोष हो! और फिर पूछा—"लेकिन दोस्त सच कहो, सब वस्तुओंकी व्यवस्था तो ठीक है न?"

'बिलकुल ठीक है रघुनन्दन, लेकिन अेक बात है और वह यह कि तेरे यहाँ सब वस्तुओंके लिअे तो जगह है पर अेक वस्तु रखनेकी जगह कहीं नहीं दिखायी देती।"

'किसकी ?"

'किसकी ! यहाँ सब कुछ है पर तेरी भावना पुरुषार्थके अूँचे आदर्श, त्याग और सेवाके शुद्ध सबके स्थान यहाँ कहीं नहीं दिखायी देता। अुनके लिअे कहीं जगह नहीं है। अैसा लगता है कि वे सब काव्य देवीकी अुस छोटी और गंदी कोठरीमें रह गयी जिसमें कि तू पहले रहता था। न केवल वे बल्कि पुराना रघुनन्दन भी वहीं रह गया। क्या अैसा नहीं है ?"

मैंने अपने छोटे-से गाँवमें और थोड़ी सी तनख्वाह में अपनी भावनाओंको रघुनन्दनकी अपेक्षा अधिक अच्छे ढंगसे सुरक्षित रखा था। अिसलिअे पाँच छह दिनमेंही आनन्दके अयथार्थ अुपभोगसे अूबकर मैं अपने गाँवको चल दिया। बंगला छोड़ते समय मुझे भर्तृहरिका यह श्लोक याद आया—

साहित्य संगीतकला विहीन साक्षात् पशु पुच्छविषाणहीन।
तृणं न खादन्नपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम्॥"

गुजरातीसे अनुवादक- श्री पद्मसिंह शर्मा, 'कमलेश', अेम अे

[आगरा

खरा नाटककार

: श्री भा वि. वरेरकर :

(मराठी)

नाटककार म्हणजे- नाट्य लेखक नव्हे-नाटकाची निर्मिती करणारा नाटककार हा प्रतिसृष्टि निर्माण करणारा अेक विश्वामित्र आहे विधात्याला जें साधलं नाही, जें सुचलं नाही, की रचलं नाही तेच निर्माण करण्याचे सामर्थ्य ज्याच्या अंगी आहे, तोच खरा नाटककार

समाजातील गुणावगुण टिपून निवडून काढून, त्यांतील गुणदोषाचे प्रदर्शन जो प्रत्यक्ष स्वरूपांत करून दाखवतो त्या गुणदोषाच्या बेरीज, वजाबाकी आणि गुणाकारातून कोणत्या तरी प्रमेयाचे निश्चित स्वरूप जो समोर मांडू शकतो तोच नाटककार

(हिन्दी)

नाटककारका मतलब-नाट्यलेखक नहीं-नाटककी निर्मिति करनेवाला नाटककार प्रतिसृष्टि निर्माण करनेवाला अेक विश्वामित्र है। सिरजनहार—विधाताको जो नहीं सधा जो नहीं सूझा न रुचा वह निर्माण करनेका सामर्थ्य जिसके दिल दिमागमें है, वही है खरा नाटककार।

समाजके गुणावगुण देख-परखकर, चुन चुनकर, अुसके गुण-दोषोंका प्रदर्शन जो प्रत्यक्ष रूपमें कर दिखाता है, अुन गुण दोषोंके धन, ऋण, गुणितमेंसे किसी-न किसी प्रमेयका निश्चित स्वरूप जो सामने रख सकता है, प्रस्तुत कर सकता है वही है नाटककार।

राजस्थानका अेक लोकगीत 'मणियारी'

: श्री कन्हैयालाल सहल, अेम. अे. :

अेक बार राधाने कृष्णसे कहा कि मैं अैसी मनिहारिनसे चूडियाँ पहनना चाहती हूँ जो मुझसे भी अधिक सुन्दर हो। कृष्णने कहा—'प्रिये! तुम्हें सुन्दर चूडियोंसे काम है अथवा मनिहारिनके सौन्दर्यसे?' 'दोनोंसे" राधाने सगर्व भौंहोंमें मुस्कराते हुअे अुत्तर दिया।

कृष्णके सामने विकट समस्या थी—राधासे सुन्दर मनिहारिन भला कहाँ मिलेगी? मनमोहनने सोचा—मैं ही क्यों न मनिहारिनका वेश धारण कर लूँ? त्रिया-हठ भी पार पड जाअेगा और खासा अच्छा मनोविनोद भी रहेगा। राजस्थानी लोकगीतकारके शब्दोंमें—

"हर नें रूप धरया मणियारी
होके तो हुस्यार हर नें रूप धरया मोहनी
सजे है सिणगार हर की सूरत लागै सोहणी
लक्ष्मीके औतार दालिद्दरको खोवणी
मनुष्यका गुवाल मेरा सीस गूँथ दे रे जाली
पटियाँ सुधार जुल्फी छोड़ दे नै काली
पेर लिया छाप छल्ला हमलो हमेल घाली
चूप बाजूबंद सोवें कानों में झुकाली वाली
घेर घुमंता घाघरा चोली पैरी चोपाली
चूड़ा लिया दो च्यार होगा बरसाणैको त्यार
जड़े पन्ना और जंवार
लिया टोकरीमें डाल
हर कै पग पायल झणकारी॥"

कृष्णने मनिहारिनका रूप धारण कर लिया, हुसियार होकर भगवानने मोहिनीका रूप बना लिया। शृंगार कर लेनेपर कृष्ण अत्यन्त शोभित हुअे, अुनकी मुखाकृतिसे नूर बरसने लगा, दरिद्रताको दूर भगाने-वाली साक्षात् लक्ष्मीके अवतार-से वे जान पडे।

राधाने कहा—'हे गोपाल! मेरा सिर गूँथ दे, बालोंके पट्टोंको सँवार दे।"

अिधर कृष्णने अपना सुन्दर स्त्रियोचित वेश बना लिया—छाप-छल्ले पहन लिये, गलेमें हँसली डाल ली, चूप और बाजूबन्द शोभित होने लगे, कानोंमें बाली पहन ली। घेर-घुमेर 'घाघरा' और चापाली चोली पहन ली। दो चार सुन्दर चूडे ले लिये और बरसाना जानेको तैयार हो गये। पन्ने और जवाहरात टोकरीमें डाल लिये। अुनके पैरोंमें पायलकी झनकार होने लगी।

यदुराज चलने लगे, पायलोंका 'छम-छम' शब्द होने लगा, धरती 'धम-धम' हिलने लगी। 'गम्म-गम्म' करते हुअे श्रीकृष्ण बरसाने जा पहुँचे। द्वारपालोंने कहा—हे मनिहारिन! तनिक ठहर, अपना पसीना सुखा ले, जरा विश्राम कर, कुछ सुस्ता ले। कृष्णने चोलिअेको अुतार दिया और वे शीतल पवनका सेवन करने लगे। कुछ देर बाद बोले—"मैं चूडा बेचने आयी हूँ, मुझे राधिकाका भवन बतलाओ, अुसके बिना मेरा चूडा और यहाँ कौन खरीद सकता है?"

राधिकाकी सखी ललिताने मनिहारिनसे कहा—"बहिन! कौनसा तुम्हारा गाँव है? कहाँसे चलकर आयी हो और क्या तुम्हारा नाम है? राधा तेरा चूडा अवश्य खरीद लेगी, रोक-रोककर तुझे दाम देगी। मेरे पीछे होले, बरसानेकी सैर कर ले। तुझे राधिकाके महल दिखलाअूँगी और तेरी बडी टहल करूँगी।" मनिहारिन वेशधारी कृष्ण बोल अुठे—"तेरा गुण मानूँगी, मुझे राधिकासे जरूर मिला। रोक-रोक दाम दिलवा दे तो तुझे भी अेक रुपया अिनामका दूँगी।" ललिता चलकर राधिकाके महलमें पहुँची और कहने लगी—राधे! अेक नयी मनिहारिन आयी है; अुसके रूपका तो कहना ही क्या! धरतीपर अैसा रूप पहले कभी देखनेको नहीं मिला। अद्भुत सुन्दरी है वह, मानो सूर्यकी किरणोंने स्वयं अुसका साज-शृंगार किया हो।

"चाले जादूराओ जिणकी पायल बाजै छिम छिम
चाल जो घुमायो दाबा धरती हालै धम्म-धम्म
बरसाणे में जाय पूंच्या जादूराओ गम्म-गम्म
ड्योढी कै दरवाणी बोल्या मणयारी तू थम्म थम्म
सीने को मेट प्यारी जरा ले-ले गम्म गम्म
चोलियेको दिया तार लेणं लाग्या ठंडी पून
चूड़ा बेचण आयो मन्नै राधेका बताओ भौन
राधे बिन चूड़ा मेरा और यहाँ पर लेगा कौन?

मणियारी से ललता बोली कूणसो तुम्हारो गाँव
कठे सेती आओ भाण बताय ना तेरो नाव
राधे तेरो चूडो लेगी रोक रोक कर देगी दाम
होले मेरी गैल करले, बरसाणेकी सैल
तन्नैं राधेका दिखाऊं म्हैल
भीत करूँगी तेरी टहैल।
तेरा गुण मानूं प्यारी राधे सं मिलावे सही
रोक रोक दाम दिवा दे अेक दमड़ी दूगी नहीं
ललिता सखी चालकै राधेजीकै म्हैल गयी
सुण हे राध बात अक मणियारी तो आयी नयी
रूप है अपार अैसी धरती अूपर देखी नाओं
वा बडी अनोखी नारी
जैसें सूरज किरण सुधारी ॥

राधिका तुरत बोल अुठी–यदि वह मुझसे भी अधिक सुन्दरी है तो शीघ्र अुसके दर्शन करवा तनिक भी देर न लगा। ललिता चलकर दरवाजेपर आयी और कहने लगी–हे मनिहारिन! तू शीघ्र चल तुझे राधिकाने अभी बुला भेजा है। ललिताने साथ कृष्ण राधिकाके महलमें पहुँचे। रूपसे अभिभूत होकर राधिकाने मनिहारिनके लिअे जाजिम बिछवा दी। राधिकाके वचन सुनकर मनिहारिनने अपना छबड़ा खोला और चूडी दिखाने हुअे कहा–अिन चूडोका मूल्य बहुत अधिक है, हीरे-पन्ने और नगोंसे य जडे हैं, कांतिसे जगमग जगमग कर रहे हैं चतुर है तो पहन ले मूर्ख तो अिनका मोल लगा नहीं पाअेगा। राधिकाने कहा—अिससे भी बहुमूल्य चूडे निकालो, मैं अुनका मोल कर सकूँगी। चूडे पहननेके लिअे राधिकाने अपनी भुजा फैला दी।

'मेरे सं सरूप हैं तो दरसण दे कराओ ना
जल्दी करके जा हे ललना! बार मत लाओ ना
ललता सखी चालकर ड्योडी अूपर आयी है
मणियारी! तू चाल तन्नै राधजी बुलायी है
ललिताजी कै साथ क्रिसण महला भीतर आया हैं
देख देख कै रूप जिन्नें जाजम तो बिछायी है
राधेजीका सुणकर बोल
चोलिदेको दिया खोल
या ले चूडा पैर प्यारी
थारी अिनका कहिअे मोल।
हीरा पन्ना नग जड़या
रंगमें होरया झकाझोल
चातर है तो पैर प्यारी
मूरख नै पटे नै तोल
राधजी तो बोल्या बोल
आँसे बधका खोल
मन्नै सब कीमतका तोल
राधे पैरणने भुजा पसारी
मेरी भर दे कलैया सारी॥

राधिका कहने लगी—अरी! तू अजीब मनिहारिन है बाँहमें चूडा पहनाते हुअे भुजा क्यों मरोड रही है? किन्तु त्रिलोकीनाथ कृष्ण राधिकासे आँखें चार नहीं करते, अिस भयसे कि कहीं सब भेद प्रकट न हो जाअे! हे त्रिलोकीके स्वामिन! तुम्हारी मायाको कौन समझ सकता है? ज्ञानी गंगादासने कृष्णके रूपका बखान किया है। वही लीलाधारी सृष्टि रचता है और फिर अुसे समेट लेता है।

बडभागिनी है राधा जिसके यहाँ कृष्ण पाहुन बनकर आये हैं।

अरे! अिधर तो देखो कृष्णने अपनी साडी अुतार दी और अेक क्षणमें ही मोर मुकुट धारी बन वारी बन गये!!

"*बैंया मे चूडा पहरावे भुज्जा क्यू मरोडे है?*
तिरलोकीको नाथ देखो निज्जर नहीं जोडे रै
तिरलोकीका नाथ थारी माया नै कुण जाणे है!
गंगादास ज्ञानी हरके रूपनै बखाणे है
मणियारीकी लीला सुणके भरम नै बधावणा
बाहोकी है सृष्टी या तो बाहीका खवावणा
राधेजीका बडा भाग क्रिसण आया पावणा
हर नै तार बगादी साडी
बनै मोर मुकट बनवारी!!

जहाँ कृष्ण साडी अुतारकर मोर मुकुटधारी बन जाते हैं वहाँ ही यह गीत अुत्सुकताकी चरम सीमाको छू लेता है और यहीं अिसका अन्त भी हो जाता है। चरम सीमाके बाद यदि गीत आगे चलता तो यह नीरस हो जाता। बडी सरल सुबोध भाषामें यह गीत लिखा गया है और बडा प्रवाह है अिसमें! राजस्थानमें जोगी लोग बडी सरस अेवं मधुर लयमें सारंगीपर अिस गीतको गाते हैं और गृहस्थोंका मनोरंजन करते हैं।

कितनी सुखी गृहस्थोंका सुरम्य श्रुतिमनोहर गीत है यह।

[पिलानी।

पद्मावतका गूढ़-तत्त्व

: श्री रामपूजन तिवारी, अेम. अे. :

जायसीके 'पद्मावत' के अन्तमें निम्नलिखित पंक्तियाँ मानो 'पदमावत' के गूढ-तत्वोंको समझनेके लिअे कुञ्जी स्वरूप दी गयी हैं।

तन चितअुर, मन राजा कीन्हा।
हिय सिंघल, बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरु सुआ जेअि पंथ देखावा।
बिनु गुरु जगतको निरगुन पावा॥
नागमती यह दुनिया धंधा।
बांचा सोअि न अहि चितबंधा॥
राघव दूत सोअी सैतानू।
माया अलाअुदीं सुलतानू॥

अर्थात् यह शरीर चित्तौर है और मन ही राजा है। हृदय सिंहल द्वीप और बुद्धि पद्मावती रानी। सुग्गा गुरु है जो परमात्मा तक पहुँचनेका मार्ग दिखलाता है, क्यों कि बिना गुरुके संसारमें परमात्माको कौन पा सकता है? नागमती, सांसारिक जंजाल है और अुसमें जो नहीं बँधा, वही बच सकता है? राघवदूत ही शैतान है और सुल्तान अलाअुद्दीन माया है।

मैं अिन पंक्तियोंको सूफियोंके दृष्टिकोणसे समझनेकी कोशिश करूँगा और देखना चाहूँगा कि अुपर्युक्त पंक्तियोंमें पद्मावतीको बुद्धि समझनेके लिअे जो कहा गया है वह कहाँतक युक्तिसंगत है।

सूफी परमात्मा विषयक ज्ञानकी प्राप्तिके लिअे बुद्धिको कोअी स्थान नहीं देते। लेकिन मुतजिला-सिद्धान्तको माननेवाले कहते हैं कि परमात्मा सम्बन्धी आध्यात्मिक ज्ञान (मारिफत) वास्तवमें मस्तिष्क और बुद्धिका व्यापार है, अतअेव बुद्धिके द्वारा ही आदमी अिस ज्ञानको पानेमें समर्थ हो सकता है[1]। अधिकांश सूफी अिसे स्वीकार नहीं करते। हुजवीरीने बतलाया है कि वह ज्ञान हाली अर्थात् हृदय-प्रसूत है। वह अिस ज्ञानको हृदयका विषय मानता है[2]। अबुल हसन नूरीका कहना है कि परमात्माको पानेका रास्ता परमात्माके सिवा कोअी नहीं बता सकता। अपनी बुद्धिके द्वारा मनुष्य अुस परमात्माको जानना चाहता है लेकिन अेक सीमातक पहुँचकर अुसकी गति अवरुद्ध हो जाती है और मनुष्यको अपनी असहायावस्थाका बोध होने लगता है। अुस समय किसी प्रकारका मानवीय ज्ञान अुसकी सहायता नहीं करता, चूँकि वह ज्ञान परमात्माके गुणोंसे ही सम्बन्ध रखता है और परमात्मा अुन गुणोंको अपने ध्यानमें लगे हुअे साधकोंपर प्रकट करता है।

सूफियोंका कहना है कि मारिफ (परमज्ञान) परमात्माके द्वारा ही शक्ति-सम्पन्न होता है; अन्यथा बिना परमात्माकी सहायताके परमात्माको नहीं जाना जा सकता। कहा जाता है कि जब परमात्माने बुद्धिका निर्माण किया तब अुससे पूछा कि 'मैं कौन हूँ?' बुद्धि मौन रह गयी। तब परमात्माने अपने 'अेकत्व' का प्रकाश अुसपर डाला और अुसने बतलाया कि 'तुम परमात्मा हो[3]।'

अिससे यह सहज ही समझा जा सकता है कि अगर बुद्धिका यही अर्थ समझा जाअे तो बुद्धि और पद्मावतीको अेक समझना ठीक नहीं होगा। जायसीने जगह-जगहपर संकेत किया है कि पद्मावती वह परोक्ष सत्ता है जिसके लिअे रत्नसेन अर्थात् साधक सभी प्रकारके कष्टोंका वरण करता है। वैसे सर्वत्र अिसी रूपमें पद्मावतीको चित्रित नहीं किया गया है। बुद्धिके सम्बन्धमें सूफियोंके दृष्टिकोणको समझ लेनेपर यह

१ कश्फ अल-महजूब, पृ २६८।

२ वही, पृ २६७।

३ मार्गरेट्स्मिथ स्टडीज अिन अर्ली मिस्टिसिज्म अिन दि निअर अेण्ड मिडिल औस्ट पृ २०१

निस्संकोच कहा जा सकता है कि बुद्धिको पद्मावती समझनेके लिअे जो कहा गया है अुसे ठीक नहीं माना जा सकता।

अब हम अुद्धृत पंक्तियोंको दूसरी तरहसे समझने की चेष्टा करें। अगर पद्मावतीको परोक्ष सत्ता मानते हैं तो आत्मा, परमात्मा, मनुष्य और सृष्टिके संबंधमें सूफियोंका क्या कहना है अिसकी थोड़ी सी चर्चा कर लेना आवश्यक है। अिससे सूफियोंके दृष्टिकोणको हम अच्छी तरहसे समझ सकेंगे कि 'मनुष्यके भीतर परोक्ष सत्ताके वास' का अर्थ क्या है? अिससे यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि पद्मावतीको परम सत्ता मानते हुअे शरीरके भीतर अुसकी स्थितिकी कल्पना कहाँतक सार्थक है? साथ ही यह समझना भी कठिन नहीं होगा कि अुसे बुद्धि नहीं कहा जा सकता।

सृष्टि और परमात्माके संबंधमें सूफियोंका कहना है कि अुस निरपेक्ष, परम सत्ताको जो परम सौन्दर्य और परम-कल्याण भी है अपनेको प्रकट करनेके लिअे अिस अ-सत्, क्षण भंगुर जगत्की सृष्टि करनी पड़ी। किसी तत्वका परिचय, विरोधी तत्वकी वर्तमानतासे सहज ही हो जाता है। अन्धकारका होना प्रकाशका ज्ञान कराता है। अतअेव अुस परम सत्ताका ज्ञान अिस अ सत् सृष्टिके द्वारा संभव है। मंगलका ज्ञान अमंगलके द्वारा, सुन्दरका ज्ञान असुन्दरके द्वारा और अच्छाअीका ज्ञान बुराअीके द्वारा सहज प्राप्त है। जलालुद्दीन रूमीका कहना है कि बुराअियों (विरोधी तत्वों) की सृष्टिके द्वारा परमात्माकी सर्वशक्तिमत्ताका पता ठीक लग जाता है। अच्छाअियोंको प्रगट करनेके लिअे बुराअियोंका होना जरूरी है। अिसपर आक्षेप किया जा सकता है कि बुराअियोंकी सृष्टि करनेवाला तब स्वयं भी बुरा होगा। अिसके समाधानमें जलालुद्दीन रूमीका कहना है कि किसी तस्वीरमें अगर कुरूपता प्रदर्शित की गयी हो तो अिसका यह अर्थ नहीं है कि चित्रकार ही कुरूप है। [४]

अिसको स्पष्ट रूपमें यों समझ सकते हैं कि सूर्यका प्रकाश जलमें पड़ता है और जलमें पड़नेवाले अुसके प्रतिबिम्बसे हम सूर्यको देख सकते हैं। यह प्रतिबिम्ब वास्तवमें सूर्यके कारण है। अगर सूर्य नहीं है तो वह प्रतिबिम्ब भी नहीं है। अुस प्रतिबिम्बको अपने अस्तित्वके लिअे सूर्यपर निर्भर करना पड़ता है लेकिन सूर्यका अस्तित्व प्रतिबिम्बके कारण नहीं है। यह प्रतिबिम्ब हजारों बार बन बिगड़ सकता है। अुससे सूर्यका कुछ आता-जाता नहीं। अिस प्रकारसे जल, सूर्यके दर्पणकी नाअी है, जो सूर्यको प्रतिबिम्बित करता है। यहाँ सूर्यकी नाअी परम-सत्ता है, जलकी तरह अ-सत् है जो अुसे प्रतिबिम्बित करता है और जो सत्ताका न-कारात्मक रूप है। और सूर्यके प्रतिबिम्बकी नाअी यह दृश्यमान जगत है जो परमात्माका प्रतिबिम्ब है। यह दृश्यमान जगत् परमात्माकी सत्तापर ही निर्भर करता है अिसकी अपनी कोअी सत्ता नहीं।

अिस दृश्यमान जगत् और मनुष्यके संबंधमें सूफियोंका कहना है कि दर्पणमें देखनेवाला अपनेको अपनी प्रतिच्छविमें दीख पड़नेवाली आँखकी पुतलीमें देखता है, अुसी प्रकारसे परमात्माकी प्रतिच्छवि जो यह दृश्यमान जगत है अुसमें मनुष्य अुस प्रतिच्छविकी आँख जैसा है। अिस प्रकारसे परमात्मा अपनी प्रतिच्छवि (दृश्यमान जगत्) में प्रकट होता है तथा मनुष्य (प्रतिच्छविकी आँखकी पुतली) में भी अपने आपको प्रकट करता है। अतअेव मनुष्य अुन संपूर्ण गुणोंको, जो अलग अलग ब्रह्माण्डमें अभिव्यक्त हो रहे हैं, अुनको अपनेमें ग्रहण करता है और अुन संपूर्ण गुणोंके समाहारको भी अभिव्यक्त करता है। वह मानव रूपमें 'आलमेकुब्र' (क्षुद्र जगत्) है जो आलमकुब्र' (बाह्य समस्त वृहत् जगत्) को अपनेमें धारण किये हुअे है। परमात्माके सभी गुण हृदयमें प्रतिबिम्बित होते हैं अिसलिअे मनुष्यके हृदयको जाननेसे परमात्माको जाना जा सकता है।

अिस हृदयको कैसे जाना जा सकता है और अुसमें परमात्माका साक्षात्कार कैसे हो सकता है? आत्मा-संबंधी सिद्धान्तोंको लेकर सूफियोंमें नाना प्रकारके मत

---

४ निकोल्सन मिस्टिक्स आफ अिस्लाम, पृ० ९९।

प्रचलित है लेकिन साधारणतः सूफी आत्माके दो भेद करते हैं, (१) नफ्स, (२) रूह। नफ्स, निम्नस्तरीय है और सभी प्रकारकी कुप्रवृत्तियोंका स्थान है। रूह, सद्वृत्तियोंका अुद्गम-स्थल है। नफ्स, भावावेगसे परिचालित होता है और रूह विवेकसे। अिन दोनोंका संघर्ष निरन्तर चलता रहता है और ये आत्माको विपरीत दिशाओंमें खींचते रहते हैं। सूफी साधकोंने नफ्ससे बचनेके लिये बराबर सावधान किया है। अबू सुलैमान दारानीने कहा है कि नफ्स (जड आत्मा) बडा धोखेबाज है और जो परमात्माके रास्तेपर चलनेवाले हैं अुन्हें बाधा पहुँचाता है। 'पद्मावत'की नागमतीको नफ्स कह सकते हैं।

सूफियोंके मतानुसार अुच्चतर आत्मा शरीरके पहलेही निर्मित हो जाता है और अुसे परमात्मा, मनुष्य शरीरमें भेजता है। अिन अुच्चतर आत्माके भी तीन विभाग किये गये हैं, कल्ब, रूह और सिर्र। यह सिर्रही सबसे भीतरका हिस्सा है जहाँ सूफी साधक परमात्माके दर्शन किया करता है। यहाँ किसी प्रकारका कलुष प्रवेश नहीं कर सकता। यही मानो परमात्माका वासस्थान है, जहाँ वह मनुष्यको जान पाता है और मनुष्य वहीं परमात्माका ज्ञान प्राप्त करता है।[5]

५. किताब-अल-लुमा, पृ० २३१।

जीलीने रूह (आत्मा) तथा रूहुल कुद्स दो विभाजन किये हैं। अुसके अनुसार परमात्माने सर्वं ज्योतिसे रूह (आत्मा) की सृष्टि की और फिर अुससे जगतका निर्माण किया। रूहुल कुद्स (पवित्र आत्मा) ही मानव शरीरमें सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक अभिव्यक्ति है। यह परमात्मासे अलग नहीं और मनुष्यसे संयुक्त भी नहीं है। अिसीमें परमात्मा अपने आपको अभिव्यक्त करता है लेकिन परमात्माकी अभिव्यक्ति परमात्माके सिवा अन्य कहीं नहीं हो सकती। अतअेव यह रूहुल कुद्सही मनुष्यके भीतर औश्वरात्मा है। यह रूहही औश्वर-स्वरूप है जो मनुष्यके अन्तस्तलमें वास करता है। अिसेही जानने और प्रत्यक्ष करनेकी साधना की जाती है।

अुपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि पद्मावतीको रूहुल-कुद्स कहा जा सकता है, लेकिन रूहुल कुद्सको बुद्धिका पर्याय नहीं बताया जा सकता। अिस दृष्टिसे विचार करनेपर पद्मावतीको बुद्धि मानना भूल है। साथही 'पद्मावत'की अुपर्युक्त पंक्तियोंके सम्बन्धमें भी सन्देह अुत्पन्न हो जाता है कि क्या सचमुच वे जायसीकीही लिखी हुअी हैं?

[शान्तिनिकेतन

अच्छा !

: श्री 'कुमार' :

अच्छा, तो तुम्हें अेक बात बताअें। जी हां, बहुत अच्छी बात है और अेक बहुत ही अच्छे आदमीने हमें बतायी है। और अच्छे आदमी तो आप जानते हैं अच्छी ही बात करते हैं। बात यह है कि हमारे संसारका सारा व्यापार अेक दम्पतीके सहारे ही चल रहा है। अच्छा, तो अब आपने ध्यान दिया। परन्तु अिसमें आपका कोअी दोष नहीं, सब समयकी बात है। आजकल लोग बात किसी बातपर तभी ध्यान देते हैं, जब अुसमें कोअी रोमांटिक बात हो। कहीं किसी दम्पतीकी बात हुअी नहीं, कि लोग कान खड़े कर लेते हैं।

अच्छा तो बात छोड़िअे। मैं आपको बता रहा था कि संसारका सारा व्यापार अेक दम्पतिके सहारे ही चल रहा है। और वह श्रीमान् अच्छा और अुनकी पत्नी श्रीमती अच्छी। पर श्रीमान् और श्रीमती तो केवल झूठे शिष्टाचारके नाते ही कहा जाता है, वरना आजकल कौन श्रीमान् है और कौन श्रीमती है, सभी कामरेड बनते जा रहे हैं। हां तो, सीधे-सादे शब्दोंमें कहा जाअे तो वे हैं अच्छा और अच्छी। अिन अच्छा और अच्छीके बिना हम कोअी कार्य भी नहीं कर सकते। आप कहेंगे, अच्छा तो प्रमाण दो। लो लो, प्रत्यक्ष प्रमाण आपके सामने प्रस्तुत है, भला हाथ कंगनको आरसी क्या ?

अब चाहे आप किसी कलाकी बात करिअे और चाहे भिंडी तोरअी, करेलेकी, चाहे कविता-कहानीकी बात करिअे और चाहे बूट-पालिशकी और चाहे आप किसी फिल्मकी बात करिअे और चाहे किसी पालतू कुत्तेकी, हमें पूरा विश्वास है कि अिस दम्पतीके बिना आप कोअी वार्ता नहीं कर सकते, कहीं अपने विचार प्रकट नहीं कर सकते। अब कलाकी ही बात लीजिअे। कोअी चित्र आपको पसन्द आ गया, तो आप अवश्य ही कहेंगे कि यह चित्र बहुत अच्छा है। अिस चित्रका दृश्य बहुत अच्छा है या पोज बहुत अच्छा है। या फिर रंग बहुत अच्छे हैं। सार यह कि चित्र बहुत अच्छा है। अवश्य ही यह किसी अच्छे कलाकारकी कृति होगी। परन्तु अच्छा आपकी सेवामें अुपस्थित न होता तो आप क्या करते। निश्चय ही आपके कला प्रेमको बहुत धक्का लगता और आप अपने मनके भाव प्रगट न कर पाते। यह तो अच्छी बात है कि अच्छा आपके सब काम आसानीसे कर देता है सब भाव आसानीसे प्रगट कर देता है जिसे सुनकर सब लोग आपको भी कलाका अच्छा जानकार या अच्छा कलाकार समझने लग जाते हैं।

पर केवल कला सम्बन्धी विषयोंपर ही अच्छा आपकी सहायताके लिअे नहीं आता। यदि आप बाजारमें भिंडी-तोरअी आदि शाक तरकारी खरीदने जाअें, तो भी वह आपकी सेवामें तत्पर रहेगा। अच्छे आदमी हर समय सहायता करते हैं, और अच्छा मित्र भी वही है जो मुसीबतके समय काम आअे। और भिंडी-तोरअी है भी अच्छी सब्जी। सभी अच्छे डाक्टर यही बताते हैं कि अिसमें लोहा विटामिन और न जाने क्या-क्या पौष्टिक पदार्थ होते हैं। वैसे तो हमें तोरअियोंके बीज या सड़ी गली तोरअियोंमें कीड़ोंके सिवा और कभी कुछ दिखायी नहीं देता। परन्तु डाक्टरोंके साथ तर्क कौन करे क्योंकि आजकल तो वह यह भी बताने लग गये हैं कि टिड्डियों और मकड़ियोंमें भी अधिक विटामिन होते हैं। अब आप ही कहिअे कि यदि भिंडी तोरअीके सम्बन्धमें हां न करें तो डाक्टर हमें मकड़ियां ही खिलाकर दम लें। सो चुपचाप कह देते हैं कि अच्छी बात है जो लोहा-टीन या फौलाद आदि वह बताते हैं, होगा अिन भिंडी तोरअियोंमें।

अच्छा तो अिन डाक्टरोंकी बात तो छोड़ो और भिंडी तोरअियोंकी ही बात लो। सर्वप्रथम तो आप किसी

अच्छे दूकानदारके पास ही जाअेंगे। फिर वहाँ या तो अच्छी-अच्छी तोरअी आप ही चुनने लगेंगे, नही तो अुमीको कहेंगे कि भाअी अच्छी-अच्छी तोरअी डालना। साथ ही तोलके सम्बन्धमे अुसे चेतावनी दे देना कि भाअी अच्छा तोल तोलना, स्वाभाविक ही है। और दूकानदार भी तो अच्छी चीजके अच्छे ही पैसे माँगेगा। अच्छा, अब आपको सब्जी खरीदने काफी देरी हो गयी है, अब घर चलिअे।

तो फिर आप कविताकी बहार ही देखिअे। यदि आपको पसन्द आ गयी तो आप अवश्य ही कहेंगे कि यह अच्छी कविता है। परन्तु आजकलकी अच्छी कविताअें प्राय समझमें नही आती। अेक समालोचक महोदय बता रहे थे कि अुनमें अच्छाअी यही होती है कि अुनके भाव आसानीसे नही समझे जा सकते। आधुनिक कविताओंको समझनेके लिअे अच्छा खासा परिश्रम करना पडता है। अब बताअिअे कविता क्या हुअी, मानो मानसिक व्यायाम करनेका अच्छा खासा आखाडा हो गया। अैसी अच्छी कविताको भी कोअी क्या करे, जिसके भाव चाहे वह कितने ही अच्छे क्यो न हों, समझमें ही न आअें। यही हाल कहानियो और अुपन्यासोका है। कोअी कथानक नही होता, आरम्भ और अन्त भी मेल नही खाते, फिर भी कहते हैं कि कहानी अच्छी है। बस वही शताब्दियो पुरानी कहानियोंको थोड़ा बहुत हेर फेर कर, नये ढंगसे पेश कर दी जाती है। वही पुरानी शराब नयी बोतलोंमें दृष्टिगोचर होती है। वही अेक लडका और दो लडकियाँ या अेक लडकी और दो लडके, थोडा-बहुत अुतार-चढाव, थोडा-बहुत विघ्न और फिर मिलाप, बस कहानी तैयार है।

परन्तु चाहे आपकी कविता, कहानी अच्छी हो न हो, चिन्ता न कीजिअे। दस दस बीस बीस अिकट्ठी कर, किसी अच्छे प्रकाशकके यहाँसे छपवा लीजिअे और पुस्तकका नाम भी कोअी अच्छा सा रख दीजिअे। कोअी लम्बा चौडा नाम रखनेकी आवश्यकता नहीं, बस छोटे से छोटा नाम आप रख सकते हैं। अब अैसा ही रिवाज चल निकला है। कभी लेखक तो पुस्तकका नाम रखते ही नही, और नाममें धरा भी क्या है। अेक विद्वानके अनुसार हे, हूँ ओह, तो आदि कोअी भी नाम अुपयुक्त हो सकता है। और नही तो बाहरके पन्नेपर कामा, विराम, फुलस्टाप या प्रश्नसूचक चिन्ह् ही लगा दीजिअे, वह भी पर्याप्त होगा।

हाँ, तो पुस्तक छपवाकर आप दो-चार अच्छे समालोचकोंको अेक-अेक प्रति अवश्य भेज दीजिअे और यदि हो सके तो अेक-आध फालतू भी भेज दीजिअे, ताकि यदि वह पुस्तकोंको सेकडहैंड पुस्तकोंकी दूकानपर ले जाअें तो कुछ तो जेब गर्म हो जाअे। बस वह भी आलोचनामें पुस्तककी प्रशसा ही करेंगे। लिखेंगे कि लेखकने बडे परिश्रमसे पुस्तक लिखी है, लेखक बडे अनुभवी सज्जन हे। पुस्तककी लिखाअी छपाअी अच्छी है और टाअिटल पेज भी अच्छा है। और मूल्य भी अच्छा ही है। विषयके बारेमें समालोचक प्राय कुछ लिखना भूल ही जाते हैं। सो यह भी अच्छा है, नही तो न जाने वह क्या-क्या लिख देते। परन्तु लिखते भी कैसे, अुन्होंने कौन-सी पुस्तक पढी होगी। खैर, अुनके विचार दो-चार अच्छे पत्र-पत्रिकाओंमें छपनेसे आपकी पुस्तक गर्म-गर्म पकौडियोंकी तरह बिक जाअेगी। और लो, आप बातकी बातमें अच्छे लेखक बन गये। देखा आपने, लेखक बननेका कितना सरल अुपाय बताया आपको। परन्तु अिसका सारा श्रेय अिसी 'अच्छा' महोदयको है।

अब तो आप समझ ही गये होंगे कि अच्छा आपके कितना काम आता है। यदि नहीं तो और अुदाहरण देखिअे। आप पिक्चर देखने तो जाते ही हैं। निश्चय ही आप अच्छी पिक्चर देखना पसन्द करेंगे जिसमें अच्छे कलाकार काम कर रहे हो और जिसमें अच्छे नाच-गाने हो। अच्छी पिक्चर्में और होता ही क्या है? और फिर छोटे-मोटे सिनेमामें तो आप जाना ही न चाहते होंगे। जी हाँ, सिनेमा-हाल अच्छा हो, जिसमें सीटें भी अच्छी हो, तभी पिक्चर देखनेका आनन्द आता है। और फिर यदि कम्पनी (संगी-साथी) भी अच्छी हो, तो बहुत ही अच्छा है।

पिक्चर देखकर आप काफी-हाउसमें काफी पीने जाअेंगे ही। काफी भी आजकल बहुत लोकप्रिय हो गयी

है और यह है भी अच्छा पेय। सभी सभ्य और अच्छे आदमी असे पीते हैं। वहाँ बैठते ही बैरा आपके सिरपर सवार हो जायेगा। तो आप दूसरी बातोंको समाप्त करते हुअे अपने साथीसे पूछेंगे कि अच्छा बताओ खाओगे क्या? निश्चय ही आप किसी अच्छी चीजका आर्डर देंगे। और फिर बैरेको यह तो बोलेंगे ही कि काफी और दूसरा सामान जल्दी लाना। वह भी अच्छा साहब कहकर लोप हो जाता है। अिस अच्छे वातावरणमें बैठकर, अच्छी अच्छी बात कर गम गम पेय पीकर और अच्छी सूरतोंको देखकर तबीयत भी अच्छी हो जाती है। पर बातों ही बातोंमें देरी भी हो जाती है और अपने मित्रोंसे छुट्टी लेनेके लिअे कहते हैं अच्छा भाओी, अब तो हम चले।

मार्गमें आपको कोअी शरणार्थी मित्र मिल जाता है, वह हर समय अपनी ही रामकहानी सुनानेको अुतावला होता है। अुसके कहनेका सार यह होता है कि कभी अुनकी भी आर्थिक अवस्था अच्छी थी पास अच्छे पैसे थे, अच्छा खाने पीने थे अच्छी रहन सहन थी, बस यही समझिअे अच्छे दिन कट रहे थे। पर पाकिस्तान बननेपर अुनके अच्छे दिन हवा हो गये। और हो सकता है कि कह दें कि हमारी सरकारकी नीति भी अच्छी नहीं है। आप भी वक्तके सहानुभूतिका नपा-तुला वाक्य कहकर कह सकते हैं कि यह सब किस्मतकी बात है। कोअी बात नहीं अच्छे दिन फिर आयेंगे। परिश्रम करते जाओ, अुसका परिणाम भी अच्छा ही निकलेगा। और अीश्वर जो करता है अच्छा ही करता है। बस अुसीपर भरोसा रखो। वह भी हारकर कहेगा अ च्छा, और फिर चल देगा। अच्छा आप ही बताअिअे कि अिसके सिवा और किया भी क्या जा सकता है।

और फिर जब अच्छा अच्छा करके आप घर पहुँचते हैं तो श्रीमतीजी छूटते ही पूछती हैं अच्छा, यह बताओ कि अितनी देर कहाँ रहे? आप कहेंगे कि अच्छा, खाना तो लाओ, अभी बताये देता हूँ। तो वह दूसरा वार करेंगी अच्छा यह तो बताओ कि नलपालिश और मुन्नेकी जराबें लाये हो कि नहीं? आप कहेंगे ओ अच्छा, वह तो मैं भूल ही गया। फिर आप सफाअी पेश करनेके लिअे कहेंगे कि अच्छा बात यह है पर वह बीचमें ही बात काटकर कहेगी, अच्छा अच्छा रहने दो अब बहाने। सो अब तो आप चुपचाप खाना खाअिअे और सो जाअिअे देखिअे रात भी अच्छी हो गयी है। फिर कल सवेरे ही मिलेंगे।

परन्तु आपको नींद भी अच्छी ही आती है। अुधर श्रीमतीजी हैं कि सवेरे ५ बजे ही कहेगी कि, अच्छा अब अुठो भी न! परन्तु ५ बजे भी भला कोअी अुठनेका समय है। आजकल सर्दीमें कोअी अच्छा आदमी ८ बजेसे पहले नहीं अुठता। कोअी बात नहीं, आप अच्छा कहकर सो जाअिअे। घंटे डेढ़ घंटे बाद श्रीमतीजी फिर आयेंगी और कहेंगी अच्छा तो आप अभीतक सो ही रहे हैं। कोअी बात नहीं श्रीमतीजीसे पीछा छुड़ानेके लिअे अेक बार और अच्छा कहिअे और सो जाअिअे। परन्तु अब तो आठ बज गये। अच्छा अब तो अुठना ही पड़ेगा नहीं तो सम्भव है कि श्रीमतीजी झाड़ू या बेलन लेकर ही आ पहुँचे। अच्छा तो खैरियत अिसीमें है कि अब अुठा जाअे। प्रातः चाय पीना तो स्वाभाविक ही है और आवश्यक भी। चाय पिये बिना तो बिस्तरसे नीचे अुतरना भी कठिन होता है। पर श्रीमतीजी हैं कि अपने अगले राअुंडमें फिर आयेंगी और कहेंगी, अच्छा आप अभीतक अुठे नहीं। परन्तु अुनके अुठनेका तात्पर्य है, नहाने धोनेका। परन्तु आपको तो चाय पानी है सो आप हौसला कर पूछेंगे ही, अच्छा बताओ चाय तैयार है।

सो आप चाय पी मुँह हाथ धो, रोटी खा और श्रीमतीजीसे बाजारसे खरीदनेवाली वस्तुओंकी लम्बी सूची लेकर दफ्तर जायेंगे। और अितने काम करनेमें देरी होना तो स्वाभाविक ही है। पर रोज ही तो अैसे काम होते हैं और रोज ही अच्छा देरी भी हो जाती है। बस साहब भी पूछेंगे अच्छा आज क्या कारण है? कारण तो कोअी नया नहीं है और नित्य प्रति कोअी न कोअी कारण बतानेसे और कोअी कारण भी बाकी नहीं रह गया। कोअी बात नहीं आप कोअी घिसा पिटा कारण ही बता दीजिअे। साहब अितना ही तो

कहेगा, अच्छा आगेसे समयपर आना । तुम्हारे हकमें रोज देरसे आना अच्छा नहीं । पर साहब तो रोज ही अैसा ही कहते हैं । तो क्या हुआ, साहबके सामने जरासा अच्छा ही तो कहना पडेगा । आना तो फिर अपने समयपर ही है ।

अब कहिअे अगर आपका सच्चा और अच्छा साथी यह "अच्छा" न हो तो आपका सारा व्यापार ही ठप हो जाअे । आपको नौकरी चाहिअे तो अच्छी और वेतन भी अच्छा ही चाहिअे । मकान भी अच्छा ही होना चाहिअे और अच्छी लोकेलिटी (पास पडौस) में होना चाहिअे । पडोसी भी आप अच्छे ही पसन्द करेंगे। आप कोअी वस्तु बाजारसे खरीदने जाअें, तो यही यत्न करेंगे कि अच्छी वस्तु मिल जाअे । चाहे कपडा हो या नेलपालिश, बूट हो या क्लिप, साअीकल हो या टाअी, बस सभी वस्तुअें अच्छी ही होनी चाहिअे । और फिर सूट भी तो अच्छा होना चाहिअे क्योंकि आजकल आदमी अच्छे कपडोंसे ही पहचाना जाता है । कपडे अच्छी तरह पहनना भी अेक कला है । पुराने लोग तो कपडे क्या पहनते हैं, बस अपनेको कपडोंमें लपेट लेते हैं । परन्तु आजकलके युवकोंको देखो, क्या ढगसे कपडे पहनते हैं । अिस कलापर वे घंटो लगाते हैं, कभी सप्ताह अच्छी योजना बनानेमें लगाते हैं और कभी मास नया स्टाअिल ढूंढनेमें लगाते हैं, तब कहीं जाकर अुन्हें अच्छे कपडे पहननेकी कलाका अच्छा अभ्यास होता है ।

और फिर अच्छे कपडोंमें परसनैलिटी (व्यक्तित्व) भी तो अच्छी हो जाती है । पर अच्छे कपडोंके लिअे न केवल अच्छे पैसे ही लगते हैं परन्तु अच्छे दर्जीकी भी आवश्यकता होती है । अच्छे दर्जी बिल्कुल अपटूडेट मट्के, जो अभी-अभी हालीवुडसे आया हो, कपडे सीते हैं । और अच्छे कपडे पहनकर आप भी अच्छे लगेंगे । अच्छे आदमीकी और पहिचान ही क्या है । किसी जमानेमें कहते हैं, कि अच्छा आदमी बननेके लिअे विद्याका अच्छा अध्ययन करना पडता था, अच्छे कर्म करने पडते थे, अच्छा स्वभाव बनाना पडता था, अच्छा चरित्र बनाना पडता था । बस, अच्छा बनना भी मुसीबत थी । परन्तु अब अच्छा बनना तो बिल्कुल सरल हो गया है, अितना ही सरल जैसे गर्म-गर्म तेलमें पकौडियां तलना । बस, अच्छे कपडे पहनो तो आप अच्छे आदमी बन गये । और यदि आपके पास अच्छा पैसा हो तो समझो सोनेपर सुहागा है । फिर क्या है आप अेक अच्छी कार रखिअे, अच्छे होटलोंमें जाअिअे, अच्छे कपडे पहनिअे, अच्छे बंगलोंमें रहिअे और आप शतप्रतिशत अच्छे आदमी बन गये । क्या ही अच्छी बात है ।

परन्तु कभी-कभी लोग अच्छी बात नहीं करते और लड पडते हैं । यह तो बिल्कुल ही अच्छी बात नहीं । अुनको झगड़ा निपटानेके लिअे आपको कहना ही पडेगा, अच्छा-अच्छा जो हो चुका सो हो चुका, अब झगडा बन्द करो । परन्तु वह कहां सुनते हैं । वह तो कहे जा रहे हैं, अच्छा अबके मारके देख, अच्छा फिर कभी तुमसे समझ लूंगा या फिर अच्छा तुम्हें अिस बातका मजा चखाअूंगा । तो आपको फिर कहना ही पडेगा कि अच्छा समझ लेंगे ।

खैर अुन्हें छोड़िअे, बाजारमें देखिअे रातको क्या अच्छी रोशनी होती है । भीड़ भी वहां अच्छी होती है । लोग जब सैर-सपाटेको निकल आते हैं तो अच्छी चहल-पहल हो जाती है । मौसम भी अच्छा हो तो और भी अच्छी रौनक हो जाती है । परन्तु अिस चहल-पहलमें आगे बढना कठिन हो जाता है । कुछ तो लोग भीडभाड कर देते हैं, और मित्रगण और परिचित लोग आगे बढने नहीं देते । अुनको देखो मिलेंगे भी तो भीड़में, और सरे बाजार । क्या अच्छी जगह ढूंढी है ? और फिर नमस्ते भी अवश्य ही करेंगे, और हाल भी तो पूछेंगे । अब अैसी भीडमें किसका हाल अच्छा हो सकता है, अच्छा खासा अपटूडेट आदमी भी 'ओवर हाल' करने योग्य हो जाता है अितनी मिट्टीमें, परन्तु अुन्हें क्या पता अिस बातका । सो पीछा छुडानेके लिअे कहना ही पडता है कि भाअी अच्छा हाल है । फिर किसीपर दृष्टि न पडे तो यूं ही ताने कसने लग जाते हैं, अच्छा भाअी अब क्यों देखने लगे अिधर, या यूं ही कुछ और । आप ही कहिअे अुनको क्या

अुत्तर दिया जा सकता है। मगर यही मुँहसे निकलता है, अच्छा भाभी जो मनमें आओ वह लो।

यह मित्रता भी अेक अच्छा खासा मजाक है, जो किसीके मनमें आओ कह दे, पर आप कुछ कहने लगे तो मुसीबत और न कहो तो मुसीबत। परन्तु आजकल अिन प्रतियोगिताओंने भी तो दखो क्या अच्छा मजाक बन गया है। पहले तो सबसे अच्छे खिलाड़ी, सबसे अच्छे पढ़नेवाले सबसे अच्छे कूदनेवाले सबसे अच्छा बोलनेवाले आदि लोगोंको पारितोषिक मिलते थे परन्तु अब देखो सबसे अच्छे मूर्ख सबसे अच्छी गप हाँकनेवालेको भी पारितोषिक मिलने लग गये हैं। और फिर आजकल सौंदर्य-प्रतियोगिताओं (खूबसूरती की होड़) की भी अच्छी हवा चल निकली है। पर अब अच्छा बुरा कौन देखता है, सब मनमानेकी ही करते हैं।

न अच्छे भाव हैं, न अच्छे कर्म न अच्छा व्यवहार है और न अच्छा चरित्र। तो फिर लोगोंमें अुछृंखलता न बढ़े तो और क्या हो। आजकलके लड़कोंको देखो क्या अच्छा व्यवहार करते हैं। अभी अुस दिनकी बात है कि दो लड़के जा रहे थे। अेक लड़कीको जाते देख पहले तो अुसे घूरने लगे, फिर खाँसना आरम्भ कर दिया और फिर आँखें मटका अेक कहने लगा, 'अुनके देखेसे जो आ जाती है मुँहपे रौनक, वह समझते हैं बीमारका हाल अच्छा है।' मुखसे अनायास ही निकल पड़ता है कि 'अच्छी सभ्यता है!'

पर लड़कोंकी तो बात ही मत कीजिअे। अुन्हें तो कुछ भी अच्छा नहीं लगता। न किसीका कहा मानना और न किसीकी कोअी अच्छी बात सुननी। अुन्हें तो बस बन ठनकर घूमना अच्छा लगता है। अेक लड़केको अेक बार कहते सुना कि बड़ोंकी बातपर 'अच्छाजी', 'अच्छा जी' कर देना चाहिअे, और यह आवश्यक नहीं कि अुनकी बात मानी ही जाअ। अुस लड़केके अनुसार यदि बड़ोंकी बातें मानी जाअें तो चाय काफी, सिगरेट, सिनेमा सब कुछ ही छोड़ना पड़े और अिन सब चीजोंके बिना जीनेमें तो मौतही अच्छी। यह विचार सुनकर क्या आप किसी लड़केसे कुछ अच्छे कामकी आशा कर सकते हैं? लड़कोंका तो बिल्कुल भरोसा नहीं है। वैसे मृत्युका भी क्या भरोसा है। रायसाहब लाला शम्भूदयालकी बात ही लो कल प्रातःकालतक अच्छा भला था परन्तु शामको हृदयकी गति बन्द होनेसे दूसरी दुनियामें जा पहुँचा। अच्छा, जैसी भगवानकी अिच्छा।

परन्तु हमारा तो कहना है कि यदि 'अच्छा और 'अच्छी' सहायतापर न आअें, तो क्या आप कुछ भी कर पाअें। अब कहिअे विवाह करना हो तो कोअी अच्छा लड़का ढूँढना पड़ता है जिसका स्वभाव अच्छा हो, चरित्र अच्छा हो और अच्छा पढ़ा लिखा हो अच्छे कुलका हो अच्छे पैसे कमाता हो बस अच्छा लड़का हो। यदि लड़की चाहिअे तो वह भी अच्छी होनी चाहिअे अच्छे गुणोंवाली हो अच्छा खाना पका सकती हो, सीना परोना भी अच्छा जानती हो और देखनेमें भी अच्छी हो बस अच्छी हो। अब क्या आप अच्छा और अच्छीके बिना विवाह कर सकते थे? कदापि नहीं। और विवाह करने या करानेके लिअे पैसा भी तो अच्छा चाहिअे।

और फिर आजकल क्रिकेट टेनिस वालीबालके मैचोंमें भी जबतक दर्शक ताली न पीटें और अेक दो मिनट बाद ताली न बजाअें या 'बहुत अच्छे' बहुत अच्छे न चिल्लाअें, तो सारा खेल ही नीरस हो जाअे। और हो सकता है कि लोग यह खेल खेलना ही बन्द कर दें। परन्तु आप सोचते होंगे कि हम अच्छाके पीछे अच्छी तरह हाथ धोकर पड़ गये हैं। हाँ, तो हाथ हमने धो ही लिये थे, पर पीछे पड़ना हमारा काम नहीं। राजपूतोंके समान हमक भी सदा सामनेसे ही वार करते हैं और अिसीलिअे तो यह लेख आपके पीछे न होकर आपके बिल्कुल सामने है। और आप यह लेख क्यों पढ़ रहे हैं? जी हाँ यदि अपने मुँह मीयाँ मिट्ठू बनूँ तो कह सकता हूँ कि आप अिसलिअे यह लेख पढ़ रहे हैं कि यह लेख अच्छा है और अिसका शीर्षक भी "अच्छा" है और फिर अच्छे पत्रमें छपा है।

पर आखिर अच्छा है क्या? हम तो क्या बतायें परन्तु शेक्सपियरने अेक स्थानपर कहा है। शेक्सपियर तो आप जानते हैं अेक अच्छा कवि और नाटककार था। अुसने बहुत लिखा है और अच्छा लिखा है। अुसकी कलम अच्छी चलती थी (शायद वह पार्कर पेनसे लिखता था) और कुछ चीजें तो अुसने बहुत ही अच्छी लिखी हैं। हाँ तो अिन अच्छे शेक्सपियर महोदयने कहा है या लिखा है कि कुछ भी अच्छा नही और कुछ भी बुरा नही, बस हमारे विचार ही किसी भी वस्तुको अच्छा या बुरा बना देते हैं।

अब यह भी अच्छी रही। अच्छा-अच्छा चिल्लाते रहे और अुन्होंने गुड़-गोबर अेक कर दिया। क्या बात बतायी है। अब यदि अच्छा बुरा अेक ही है तो फिर कोअी अच्छा काम करनेसे लाभ। अिसी गड़बड़के कारण लोगोंको अच्छे और बुरेके भेदका ज्ञान ही नही रहा। अेक विद्वानने बताया कि लोग बुरा काम भी अच्छा समझकर ही कर रहे हैं। और जब कुछ भी तो अच्छा नही मिलता, न दूध अच्छा मिलता है और न घी, न आदमी अच्छे मिलते हैं और न अच्छे नौकर और कहते हैं कि नेलपालिश और क्रीम भी अच्छी नही मिलती। तब प्रश्न फिर वही रह जाता है कि अच्छा क्या है और बुरा क्या है? जो कल अच्छा था, वह आज अच्छा नही रहा, जो आज अच्छा है वह कलतक अच्छा रहे, कह नही सकते। अच्छे बुरेका मापदण्ड भी तो समय, देश और फैशनके साथ बदलता रहता है। और आजकल तो कहते हैं, अच्छाअीका समय हो नही रहा। किसीसे अच्छाअी करो, तो भी वह बुराअी ही करता है। क्या ही अच्छा हो यदि आप अिसपर विचार करें।

परन्तु आप तो अच्छा-अच्छा सुनते थक गये प्रतीत होते हैं। अच्छा तो लो हम भी चले। अच्छा फिर मिलेंगे, फिर अच्छी-अच्छी बातें होंगी। अच्छा, तो जय रामजीकी!

[नयी दिल्ली

कविता :

स्वर भरूँगा

: श्री नर्मदाप्रसाद खरे :

मैं तुम्हारी बांसुरीमें स्वर भरूँगा।
अेक स्वर अैसा भरूँ कि तुम जगतको भूल जाओ;
अेक स्वर अैसा भरूँ कि चन्द्रको तुम चूम आओ,
स्वर-सुधा तुममें बहाकर, ताप सब पलमें हरूँगा।
स्वर भरूँगा॥

तार कुछ अैसे मिलें कि स्वर्ग तुम भूपर अुतारो,
मरणको देकर चुनौती स्नेहसे जीवन सँवारो;
जागरणकी ज्योतिसे मैं तब तुम्हे ज्योतित करूँगा।
स्वर भरूँगा॥

दूर,—सुम भुवतारिकामें, लक्ष्य तुम अपना निहारो;
प्रेम-गंगामें नहाकर, मुक्तिका घूँघट अुघारो,
मुग्ध वासन्ती पवन बन, सुरभि-घन तुमपर भरूँगा।
स्वर भरूँगा॥

ज्वार कुछ अैसा अुठे जो दो तटोंको अेक कर दे;
प्यारकी अठखेलियोंसे, मृत्युका अभिषेक कर दे;
मिलनका मधु-पर्व होगा, और मैं तुमको वरूँगा।
स्वर भरूँगा॥

मैं तुम्हारी बांसुरीमें स्वर भरूँगा।

[जबलपुर

अंग्रेजी सॉनेट : परंपरा और अितिहास

प्रो वि म कुलकर्णी और प्रा मा ग बुद्धिसागर

[अंग्रेजी काव्यके अनुकरणसे भारतीय काव्यमें जो विभिन्न पद्धतियाँ प्रचलित हुआीं अुनमें सानेट का भी महत्वपूर्ण स्थान है। सुनीत अंग्रेजी सानेट का मराठी नामकरण हुआ। अिस लेखमें जहाँ-तहाँ सुनीत शब्द प्रयोग सॉनेटके ही अर्थमें समझा जाय। प्रस्तुत लेखमें सानेटके अितालियन साहित्यसे अंग्रेजी साहित्य प्रवेशका अुसके विविध रूप-परिवर्तनका अितिहास तथा अंग्रेजी काव्यमें अुसकी दो प्रमुख शैलियोंका सविस्तर दिग्दर्शन दिया गया है। सॉनेट हिन्दीमें भी लिखे गये हैं—यथा श्री प्रभाकर माचवे बालकृष्णराव त्रिलोचन आदि द्वारा। आज भी कभी कभी भूले भटके पत्रिकाओंमें हिन्दी सानेट दिख जाता है। परन्तु अुसमें चौदह पंक्तियोंके मोह के अतिरिक्त सानेटकी कोअी अुल्लेखनीय विशेषता नहीं होती। सानेटकी अनेक विशेषताओंकी प्रस्तुत लेखमें गंभीर चर्चा की गयी है। —अनुवादक]

'सॉनेट अंग्रेजीसे भारतीय भाषाओंमें आविर्भूत हुआ। परन्तु वह मूल निवासी अिंग्लैंडका नहीं। अुसकी जन्मभूमि है दक्षिण यूरोप! अंग्रेजीके प्रारंभिक सुनीत थॉमस वॉट (सन् १५०३-१५४२) ने लिखे। किन्तु अिससे दो सौ साल पूर्व ही अिटलीमें अिस शैलीकी काव्य रचना शुरू हो गयी थी। प्रायः सभीमें प्रणय-गीतोंकी अेक परंपरा अिस काव्य-शैलीने और सभी यूरोपीय भाषाओंमें वह प्रतिबिम्बित हुअी। सिसिलीके दूसरे फ्रेडरिकके शासन कालमें अिस काव्यपर दरबारी संस्कार होकर जो काव्य-पद्धतियाँ प्रचलित हुअीं अुनमें सॉनेट (Sonnet) प्रमुख था। Sonnetto अिस अिताल्यिन शब्दकी व्युत्पत्ति अेक Sonare यानि वाद्य बजाना अिस अर्थकी धातुसे निर्मित माना जाता है। वाद्यके साथ गाये जानेवाले संक्षिप्त गीतको Sonnetto कहा जाता है। पूर्ववर्ती तरहवीं सदीके फ्रियर गीत्तोने दे अरेजो को आदि अितालियन सुनीतकार (Sonnet) रूपक माना जाता है। अुसके पश्चात सुनीत रचना महाकवि दान्ते (१२६५-१३२१) ने की। प्रेयसी बिअट्रिसके प्रथम दर्शनसे अत्यन्त गद्गद होकर प्रेमका अितिहास अुसने अेक गद्य-पद्य मय ग्रंथके रूपमें लिखा। अिस ग्रंथकी पद्य रचना मुख्यतः सॉनेट शैलीकी है। दान्ते द्वारा प्रयुक्त सुनीत शैलीको प्रतिष्ठा प्राप्त हुअी। किन्तु अुसका विकास और स्वरूप निश्चित किया पेट्रार्क (१३०४-१३७४) ने। 'लारा' नामक प्रेयसीको संबोधित कर लिखे गये अुसके सुनीत यूरोपियन साहित्य जगत्‌में विख्यात हुअे। केवल अितालियन ही नहीं बल्कि अन्य यूरोपीय भाषाओंके सुनीतकारोंने भी पेट्रार्ककी सुनीत रचनाका आदर्श माना है।

सर थॉमस वॉट प्रथम अंग्रेजी सानेट लेखक हैं। अुनके सानेट पेट्रार्क की शैलीके हैं। कुछ तो पेट्रार्कके अनुवाद ही हैं। अुनके समकालीन अनुयायी हेनरी हावर्ड (अर्ल आफ सरे) ने वॉटका काम आगे बढ़ाया। सानेटके मूल अितालियन रूपमें अुसने परिवर्तन किये। रानी अेलिजाबेथके राजदरबारी अितिहास विख्यात सरदार सर फिलिप सिडनीने अपनी प्रेयसीको संबोधित कर Astrophel and Stella नामक सुनीत संग्रहकी रचना की। कविके व्यक्तित्व और काव्यकी रसमयताके कारण अुनका सुनीत संग्रह अत्यधिक लोकप्रिय हुआ, जिससे सिडनीका अनुकरण करनेवाले सुनीतकारोंकी बाढ़ आ गयी। कुछ अितिहासकारोंका अनुमान है कि सिडनीका सॉनेट संग्रह प्रकाशित होनेके बाद सात वर्षोंमें कमसे कम दो हजार सुनीत लिखे गये।

अेडमंड स्पेन्सर शेक्सपिअर और अुसके समकालीन ड्रायटन डेनियल ड्रेटन आदि कवियोंने सुनीत अिसी कालमें लिखे गये। अिन कवियोंमें अेडमंड

स्पेन्सर 'कवियोंका कवि' माना जाता है। किन्तु अुसके सुनीतोंमें सुनीत-शैलीके विशेष गुणोंका अभाव होनेके कारण अुन्हें विशेष मान्यता नहीं मिली। किन्तु शेक्सपिअरने सर्वरचित अिस काव्य-शैलीको अपनी अलौकिक प्रतिभाके संस्कारोंसे चमकाकर अभिनव रूप, ओज और सौन्दर्य प्रदान किया। अिस दिशामें अुसका कार्य अितना महान् सिद्ध हुआ कि 'वॅट' द्वारा अँग्रेजीमें प्रयुक्त तथा रानी अेलिजाबेथके शासन-कालकी समाप्ति तक विशेष पद्धति द्वारा विकसित होनेवाली सुनीतकी अिस शैलीका आलोचकोंने 'शेक्सपीरिअन' नामकरण किया। यह 'शेक्सपीरिअन' शैली पेट्रार्ककी आरंभिक सुनीत-शैलीसे अनेक दृष्टियोंसे भिन्न थी।

शेक्सपिअरके बाद अिस क्षेत्रमें विख्यात नाम महाकवि मिल्टनका है। अितालियन काव्य-साहित्य अेवं दर्शन-सम्बन्धी मिल्टनका अध्ययन पर्याप्त गंभीर था। अुन्होंने पेट्रार्क प्रणीत सॉनेटके मूल रूपको अँग्रेजीमें पुनर्जीवन प्रदान किया। मिल्टनके अधिकांश सॉनेट 'सामयिक' हैं। हृदय मथित होकर चित्तवृत्तियोंके अुद्वेलित हो अुठनेके महत्वपूर्ण क्षणोंमें कवि-मुखसे प्रसृत ये अुद्गार हैं। अुदाहरणके लिअे मिल्टनका Avenge O, Lord सॉनेट[1] परपराके प्रणया-भिव्यक्तिका वाहन बने हुअे सॉनेटमें जीवन-संग्रामकी रण-भेरीका स्वर भर देना मिल्टनकी महानता है। मिल्टनके व्यक्तित्वका अैसा गहरा प्रभाव अुसके द्वारा पुरस्कृत अिस शैलीपर पड़ा कि पुनरुज्जीवित अुक्त पेट्रार्कन सुनीतको 'मिल्टनी' (Miltonic) सुनीतकी संज्ञा समीक्षकों द्वारा मिली। मिल्टनके बाद करीब-करीब सौ साल तक सुनीत-रचनाका अभाव रहा। अुन्नीसवीं सदीका विख्यात और कवियोंकी दृष्टिसे सर्व-श्रेष्ठ सुनीतकार वर्डस्वर्थ माना जाता है। अुसने सुनीत-रचनामें मिल्टनकी परपराका अवलम्ब ग्रहण किया। और कीट्सका अेक अुल्लेखनीय अपवाद वर्ज्य छोड़कर अुसके बादवाले मुख्यतया सभी कवियोंने 'मिल्टनी' अथवा 'पेट्रार्कन' शैलीकेही सुनीत लिखे हैं।

वर्डस्वर्थके बाद प्रमुख अुल्लेखनीय सुनीतकार हैं— कीट्स, मिसेज ब्राअुनिंग, और रोज़ेटी। कुछ समीक्षकोंकी दृष्टिसे शेक्सपिअर, मिल्टन, वर्ड्स्वर्थ, कीट्स, मिसेज ब्राअुनिंग और रोज़ेटी अँग्रेजीके सर्व-श्रेष्ठ सुनीतकार हैं। किन्तु अन्य समीक्षकोंने सदैव अेडमंड स्पेन्सरकी तरह कीट्सको भी— अुसकी काव्य-वैभवकी श्रेष्ठता स्वीकार करते हुअे भी—सर्वश्रेष्ठ सुनीतकारोंकी पंक्तिमें स्थान नहीं दिया जा सकता। सॉनेटके सम्बन्धमें दो बातें ध्यान देने योग्य हैं —अेक है, स्पेन्सर और कीट्स जैसे श्रेष्ठ कवि भी कअियोंकी दृष्टिसे, सॉनेट लेखनके लिअे आवश्यक विशिष्ट काव्यगुणोंका सापेक्षतया अभाव होनेके कारण, प्रथम श्रेणीके सुनीतकार नहीं माने जाते। दूसरी बात है टेनिसन, ब्राअुनिंग, मॉरिस आदि श्रेष्ठ कवियोंने सॉनेट लिखेही नहीं। 'शैली' जैसे कुशल कविके अच्छे सॉनेट संख्यामें बहुत थोड़े हैं।

फिर भी महाकवियोंकी अुपेक्षासे सॉनेट-लेखन-परंपरा बन्द नहीं हुअी। अर्नोल्ड, मेरिडिथ, स्विनबर्न रॉबर्ट ब्रिजेस, अँड्रयू लँग, ऑस्कर वाअील्ड, अॅलिस मेनेल, हेनले और अन्तमें रुपर्ट ब्रुक आदि कवियोंने अुन्नीसवीं सदीके अुत्तरार्द्ध और बीसवीं सदीमें भी अुसे अखंडित रखा। सारांश, अँग्रेजी-सॉनेटका सम्पूर्ण क्षेत्र संख्या अेवं गुणकी दृष्टिसे अत्यंत समृद्ध है।

अितालियनसे अंग्रेजीमें प्रविष्ट होनेपर सॉनेटके रूपोंमें वॅटसे मिल्टनतक अनेक परिवर्तन हुअे, जिससे अुसके दो रूप प्रचलित हुअे; अिन रूपोंके क्रमशः शेक्सपिअर और मिल्टनके आधारपर जिन्हें 'शेक्सपीरि-अन' और 'मिल्टानिक' सॉनेट कहा जाने लगा। मिल्टानिक सॉनेटका मूल रूप 'पेट्रार्क' प्रणीत था। अतः अंग्रेजीमें अुसे 'पेट्रार्कन' भी कहा जाता है। 'शेक्सपी-रिअन' सॉनेटको 'अिंग्लिश' तथा मिल्टानिकको (मूल रूप अितालियन होनेके कारण) अितालियन कहा जाता है।

'मिल्टनी' सॉनेटमें चौदह पंक्तियाँ होती हैं। तुकान्तके विशिष्ट बंधन अेवं विषय-विस्तारकी दृष्टिसे अिनके दो भाग होते हैं। आठ पंक्तियोंका अष्टक (octave) सम्बोधित अेक विभाग और षट्क

(sestet) के रूपमें छह पक्तियोंका दूसरा विभाग। दोनोंमें आठवीं अथवा कभी-कभी नौवीं पक्तिके बीच विराम होता है, जिसमे सानेटके दो भाग होते हैं।

प्रथम आठ पक्तियाँ दो चतुष्पदियोंमें बनती हैं और दूसरे विभागमें दो त्रिपदियोंका अन्तर्भाव होता है।

अष्टकमें तुकान्त सम्बन्धी अेक विशेष बंधन है। पहली-चौथी और दूसरी तीसरी पक्तियोंमें तुक मिलती हैं अथवा पहली-तीसरी और दूसरी-चौथी पक्तियोंमें अन्त्यानुप्रास साधा जाता है।

षट्कमें पहली-तीसरी पक्तियोंमें तुकान्त मिलता है। अथवा पहली-चौथी, दूसरी पाचवी, और तीसरी-छठवीं पक्तियोंमें भी तुक सम्बन्ध जोड़ा जाता है।

मिल्टनी सानेट भाव-दृष्टिसे भी दो भागोंमें विभाजित होता है। अष्टकमें अिच्छित काव्यार्थकी रूपरेखा और विस्तार होता है तथा षट्कमें अिसका अुत्कर्ष अेव परिणति। अुदाहरणार्थ यदि अष्टकमें भावना विशेष, भावनाश्रित विचार अथवा प्रसग वर्णित होगा, तो षट्कमें भावनासे अुत्पन्न विचार, विचारका दूसरा पक्ष अथवा पहले विभागमें वर्णित प्रसगका निष्कर्ष होगा। अष्टकमे विषयका अेक पक्ष रखकर, षट्कमें अुसका दूसरा पक्ष दिखाते हुअे अुसे पूर्ण किया जाता है। अिसीसे सॉनेटका निर्णायक स्वभावगुण माना जानेवाला 'अर्थका आन्दोलन" गुण अुत्पन्न होता है।

मिल्टनी मुनीत-शैलीके अष्टक और षट्क दो विभाग करीब-करीब सम्पूर्ण अेव स्वयपूर्ण होते हैं। समीक्षक Crossland लिखता है कि मिल्टनी सानेट, अेक सम्बद्ध काव्य न होकर करीब-करीब दो काव्यास होता है। और अष्टक अलग हटाकर रख दिया जाअे तो दो चतुष्पदियोंका वह स्वतंत्र काव्य ही प्रतीत होगा। परन्तु वही आलोचक आगे लिखता है कि अष्टक और षट्कका सयोग अैसा कलात्मक साध लिया जाअे कि अभिन्नता प्रतीत हो। किन्तु आलोचककी यह भूमिका मानी नहीं जा सकती। Enid Hamer अथवा Sir Arthar Quiller-couch जैसे समीक्षकोंने लिखा है कि मिल्टनहीके सानेटमें काव्यार्थका अखट प्रवाह आरमसे अन्ततक अविरत प्रवाहित रहता है।

ये दोनो रूप सभव हो सकते हैं। जहाँ अष्टक और षट्क अेक दूसरेसे भिन्न, स्वतत्र अेव स्वयपूर्ण प्रतीत होने लगते हैं, वहाँ भी अुनको अज्ञात तरीकेसे सम्बन्ध जोड़कर अेक ही काव्य शरीर निर्माण करनेका अुत्तरदायित्व मिल्टनी-सॉनेटमें कविको निभाना पड़ता है। आठवीं अथवा नौवीं पक्तिके बीच योग्य स्थानपर विराम-योजनाकर, भिन्न अर्थसूत्रोंके कलापूर्ण गुम्फन द्वारा कविकी कुशलता व्यक्त होती है।

अिस अितालियन (मिल्टनी) सॉनेटका अंग्रेजी-भाषी शेक्सपीरियन सानेट कहलाता है। वास्तवमें यह शेक्सपियरसे भी काफी पुराना है। अिसका मूल निर्माता सामस वॅट माना जा सकता है। अितालियनसे अंग्रेजीमें लाते हुअे सामस वटने सानेटका मूल रूप (Form) सुरक्षित रखा। दो चतुष्पदियोंका द्वियमकी अष्टक और दो त्रिपदियोंका त्रियमकी षट्क यह विशेषता अंग्रेजीमें मूल अितालियनसे आयी। मात्र षट्कमें अन्तिम दो पक्तियोंकी तुकबदी नवीन शैलीसे जोड़नेकी पद्धति अुसने प्रचलित की। यह साधारण परिवर्तन अितालियन सॉनेटके मूल रूपको विघटित करनेवाला साबित हुआ। सरेने वॅटकी शैलीका अनुकरण किया और साथ ही अष्टक और षट्क अिन दो भागोंकी अपेक्षा दो तुकान्त-वाली तीन चतुष्पदियाँ और अन्तिम दो पक्तियोंका युग्मक-अिस प्रकार सॉनेटका अेक नया रूप (Form) अुसने प्रचलित किया। अिसीका अनुकरण सर फिलिप सिडनेने किया। कुछ समय बाद "अष्टक-षट्क और मध्यस्थानीय विराम" वाली सानेटकी परिभाषा क्षीण होकर बारह पक्तियाँ और दो पक्तियोंवाला रूप व्यवहृत हुआ। प्रारम्भिक बारह पक्तियोंमें विकसित भावधाराका अन्तिम दो पक्तियोंमें सूक्ति अथवा सुभाषित-रूप समारोप किया जाने लगा। अिसी प्रचलित प्रथाको सुव्यवस्थित रूप देकर डनिअल और शेक्सपियरने आगे चलकर 'शेक्सपीरियन' कहलाने-वाली सानेट-शैली अंग्रेजीमें आविर्भूत की।

मिल्टनी और शेक्सपिअरी सॉनेट भाओ-भाओ होनेके कारण अुनके कुछ अवयवों और स्वभाव गुणोंमें समानता होना स्वाभाविक है। मिल्टनी सॉनेटके अष्टक समान ही शेक्सपिअरी सॉनेटकी प्रथम बारह पंक्तियोंमें विषय विवेचन अेवं अुनका परिपोष होता है। अष्टककी अपेक्षा अिसका क्षेत्र विस्तृत होनेके कारण अिसमें पुनरवित विस्तार अेवं कल्पनाकी बारीकियोंको अधिक अवसर मिलता है। मिल्टनी सॉनेटके षट्कमें अष्टकके विषयका अुत्कर्ष अेवं परिणति होती है तो शेक्सपिअरी सॉनेटकी द्विपदीमें। बारह पंक्तियोंमें व्यक्त विषयका चमत्कृतिपूर्ण अुपसंहार किया जाता है अथवा अर्थान्तर-न्यासके रूपमें अुसे घुमा दिया जाता है।

मिल्टनी और शेक्सपिअरी सॉनेटमें अूंच-नीच निश्चित करना कठिन है। सॉनेटकी श्रेष्ठता—अुसकी शैली, रूप और शास्त्रीयताकी अपेक्षा कविकी प्रतिभा पर होना अधिक अवलंबित होती है। शेक्सपिअर और अुसके समकालीन कवियोंने शेक्सपिअरी शैलीको लोक-प्रिय बनाया है, तथापि सॉनेटकी मिल्टनी शैली ही भावनाके सूक्ष्म आन्दोलन अभिव्यक्त करनेकी दृष्टिसे श्रेष्ठ मानी जाती है।

सॉनेटकी स्वरूप चर्चा करते हुअे अेक महत्वपूर्ण प्रश्न अुत्पन्न होता है। सॉनेट किन विषयोंपर लिखा जाअे?

वास्तवमें सॉनेट विविध विषयोंपर लिखे गये हैं। प्रणय तो अिसका प्रमुख विषय है ही। किसी समय यही अिसका अेकमात्र विषय माना जाता था। परन्तु प्रेममें भी मिलन परिपूर्तिकी अपेक्षा विरह, वंचना, ममुत्सु-कता और निराशा आदि स्थितियोंका वर्णन सॉनेटकी रसपूर्तिके लिअे अधिक अनुकूल सिद्ध हुअे हैं। सॉनेटका नायक प्रणय-सफलता शायद ही अनुभव करता है। 'Our Sweetest songs are those that tell of saddest thought' शैलीके ये अुद्गार सॉनेटके सम्बन्धमें विशेष अर्थमें सत्य हैं। नारी प्रेम और मित्रप्रेमका विरोध तथा मित्र-प्रेमकी विजय शेक्सपिअर-कालीन सुनीतकारोंके प्रिय विषय थे। प्रेमके साथ ही मृत्युका अुल्लेख आता है। मृत्यु भी सुनीतकारोंका प्रिय विषय है।

अिलालियन और अंग्रेजी राजदरबारोंमें बचपन बिताकर सॉनेट प्रौढ़ हुआ, अतः राजस्तुति और स्वामि-प्रशंसा भी अुसका अेक विषय बना। जीवित अेवं मृत-मित्रोंका गुणगान, महापुरुषोंके प्रति आदर-प्रदर्शन, कवि और कविताका सम्बन्ध और स्वरूप वर्णन, अीश्वर रूप-चिंतन आदि सभी विषयोंपर सॉनेट लिखे गये।

केवल निसर्ग-वर्णन सॉनेटके लिअे पर्याप्त विषय नहीं हो सकता। भावों अथवा विचारोंकी पृष्ठभूमि होना अुसके लिअे आवश्यक है।

अुपरोध, अुपहास, नर्म विनोद, व्याजोक्ति आदि विषय सॉनेटके लिअे कहाँतक अनुकूल हो सकते हैं यह प्रश्न बार-बार पूछा गया है। सॉनेटके जन्मकालसे अबतक राजनीतिक प्रतिद्वंद्वीके प्रति वक्रोक्तिपूर्ण आलोचनाके लिअे अुसका अुपयोग किया गया है। व्याजोक्ति, अुपरोध और प्रकट अुपहासका अुसमें अन्तर्भाव हो ही जाता है। निरे हास्यरसपूर्ण सॉनेट भी लिखे गये हैं। परन्तु अुनकी संख्या परिमित है। विचार और भावनाकी सुश्लिष्ट अेवं गंभीर अभिव्यक्ति सॉनेटकी विशेषता मानी जाती है। विनोदप्रधान सॉनेटमें यह संभव नहीं होता, अतः विनोद सॉनेटके लिअे वर्ज्य माना जाता है। सॉनेट अमुक विषयपर लिखा जाअे और अमुक विषयपर नहीं, अिस प्रकारका नियम नहीं बनाया जा सकता। कविकी प्रतिमा-शक्तिपर ही सॉनेटकी गुणसम्पन्नता अवलंबित रहेगी। परन्तु साथ ही सॉनेटकी प्रकृतिको कुछ विषय अनुकूल होंगे तो कुछ अुतने अनुकूल नहीं होंगे—यह भी स्पष्ट है। अनुकूल विषय तथा प्रतिभा और रचना-कौशल्य सम्पन्न कविका 'समसमा संयोग' होनेपर ही प्रथम श्रेणीके सॉनेटका सृजन होता है। ❀

❀ मराठी 'सुनीत-संग्रह' की भूमिकासे साभार।

(मराठीसे अनुवादक—श्री अनिलकुमार, साहित्यरत्न)

अुर्दू कवितामें राष्ट्र-विभाजनके प्रति वेदना और आक्रोश

श्री रतनलाल बसल

राष्ट्र विभाजनकी घटना और अुसके फलस्वरूप हुअ भीषण साम्प्रदायिक अुत्पात भारतीय अितिहासके विद्यार्थीके हृदयमें सदैव वेदना और आक्रोशकी भावनाअ अुत्पन्न करते रहेंगे फिर अुनकी मनोभावनाओंका तो कहना ही क्या है जिनके अभाग नत्राके स मुख यह सब कुछ घटित हुआ अथवा अिन अुत्पातोंमें जिनको व्यक्तिगत रूपसे भी बहुत कुछ भुगतना पडा असे भुक्तभोगियोंमें जो कलाकार थ या विशपत कवि थ वे अपनी प्राकृतिक सवेदन शीलताके कारण स्वभावत अिन घटनाओंसे बहुत अधिक प्रभावित हुअ और अुसके फलस्वरूप अिस युगमें अिन घटनाओंसे सम्बन्धित बहुत सा साहित्य लिखा गया। विभाजनका प्रभाव विशपत अुस भूभागपर पडा जिसकी भाषा सिन्धी अुर्दू तथा बगला थी। अिसलिअ (सिन्धी और बगलाका तो हमें पता नहीं है) अुर्दूमें गद्य और पद्यकी अनक प्रभावशाली तथा कलात्मक रचनाअें अिस ददभरे विषयको लेकर रची गयी। यह विशप रूपसे आशा तथा प्रसन्नताकी बात है साथ ही साहित्यिक समाजके लिअ गौरवकी भी कि अिन रचनाओंमें हमें अकता अिन्सानियत और अुच्चकोटिकी हार्दिक विशालताके दशन होते ह। अिसका अथ यही है कि जब लाखों मनुष्य साम्प्रदायिक विद्वेषकी आगमें जल रहे थ और हमारे अधिकाश राजनीतिक नता अुस विनाशकारी आगको जान या अनजान हवा दे रहे थ तब भी अुर्दूका कवि अपन पथसे विचलित नहीं हुआ था। क्या हिन्दू और क्या मुसलमान क्या भारतीय क्या पाकिस्तानी सभीने अपनी काव्यकलाका अुपयोग झुलसी हुअी मानवताके अुपचार और अुद्धारके हेतु ही किया। जब भारत और पाकिस्तानमें हिन्दू और मुसलमान अक दूसरेके खूनके प्यासे हो रहे थ और अक दूसरेको बरबस अपन-अपन वतनसे निकाल रहे थ जब कल तक अक मान गय देशकी छातीको दुधारासे काटकर अुन दो टुकडोंकी सरहदें तय की जा रही थीं तब पाकिस्तान निवासी अहमद रियाजन अपन हिन्दुस्तानी साथियोंको पुकारते हुअे कहा था —

'साथियो! हाथ बढाओ कि ह हम आजभी अक
कौन कर सकता ह तकसीम[1] अदबकी जागीर[2]।
कौन अफकार[3] की कन्दील[4] बुझा सकता ह
कौन कर सकता ह अहसास[5] की शिद्दत[6] को असीर[7]॥

× × ×

साथियो! आओ अधूरे ह हमारे सपन
साथियो! आओ अभी काम बहुत बाकी ह।
अपन बदार-तकाजो का फिर अेलान[8] करें,
जिन्दगी अब भी हमें सिफ हमें तकती ह।'

और अिस आमन्त्रणके साथ ही कविन तत्कालीन वतमान स्थितिका चित्र खींचते हुअ कहा था —

'शहर बाँट गय, तकसीम हुअीं गलियाँ भी
बुलबुल ओ गुल[10] की मुहब्बतका फसू[11] खत्म हुआ
कितन चेहरे ह जिन्हें देख न पाअगा कभी
कितनी आँखोंकी लताफत[12] का फुसू खत्म हुआ।

और नासिर काजमीन अपन पाकिस्तान प्रवासके पश्चात् जसे आँसुओंमें कलम भिगोकर लिखा —

'वो जिन्दगीके सहारे नजर नहीं आते,
कहाँ ह दोस्त हमारे नजर नहीं आते।

× × ×

हजूमे-यास[13] ह और मजिलों अँधरा ह
वो रात ह कि सितारे नजर नहीं आते।'

अक और स्थानपर अिन्हीं नासिर साहबन लिखा है —

जिन्हें हम देखकर जीते थ 'नासिर',
वो लोग आँखोंसे ओझल हो गय ह।

---

१ बाँट सकता है। २ साहित्यकी सम्पत्ति। ३ चिन्तन। ४ दीपक। ५ अनुभूति। ६ अुष्णता। ७ बन्दी। ८ जागृत अुत्तरदायित्व। ९ घोषणा। १० फूल और बुलबुलके प्रमका जादू। ११ सरसता। १२ निगाहोंका समूह।

राष्ट्रका विभाजन और अुसके कारण लाखो-लाख व्यक्तियोंपर अैसी भीषण आपत्तियाँ अुस समय आयीं, जब राष्ट्रको स्वाधीनता प्राप्त हुअी। गलत या सही, लाखो व्यक्ति आज भी यह विचार रखते हैं कि हमारे नेताओंने राष्ट्रके विभाजनकी शर्तके साथ स्वाधीनताको स्वीकार करके भारी गलती की और अिसीलिअे जो साम्प्रदायिक अुत्पात हुअे, अुनकी जिम्मेदारी भी अिन नताओंपर ही है। ये भावनाअें अिन दिनो अिस विषय-पर लिखी गयी अुर्दूकी कविताओंमें बडे ही सशक्त रूपमें प्रकट हुअी हैं। 'हफीज़ होशियारपुरीने अैसी स्वतन्त्रता और नेताओंकी ओर अिंगित करते हुअे कहा,

"कुछ अिस तरहसे बहार आयी है कि बुझने लगे
हवाअे-लाला-ओ-गुलसे चिरागे दीदा ओ दिल।

× × ×

य अिज्तराब ये शौके अुरूसे आजादी
अुठाके देख तो लेना था परदये महमिल।

अर्थात्, कैसी अजब बहार आयी कि फूलोंसे अैसी गन्ध निकलने लगी, जिसके स्पर्शसे नेत्र और हृदय प्रसन्न होनेकी अपेक्षा अुदास होने लगे।

नेताओ! तुम्हें स्वाधीनतारूपी दुलहनको पानेकी अैसी आतुरता, अैसी आसक्ति थी? अरे! पाल्कीके पर्देको तो अुठाकर जरा देखा होता कि वह दुल्हन वास्तवमें कैसी है? पाणिग्रहण हाथ पकडने योग्य है भी या नहीं।

अेक और कविने अिन दिनोका चित्रण करते हुअे लिखा है.—

शहर दर शहर खू बहाये गये,
यों भी जश्ने तरब[१४] मनाये गये।
क्या कहूँ किस तरह सरे बाजार,
अस्मतों[१५] के दिये बुझाये गये।
रहनुमाओं[१६] की गफलतों[१७]के तुफैल[१८],
काफ़िले राहमें लुटाये गये।
आह वो खिलवतों[१९] के सरमाये[२०],
मजमये—आम[२१] में लुटाये गये।

अेक तरफ़ झूम कर बहार आयी,
अेक तरफ़ आशियाँ[२२] जलाये गये।

श्री 'साहिर' लुधियानवीने, जिनको अुस समय पाकिस्तान चला जाना पडा था, विभाजनके लिअे आग्रह करनेवाले अपने सजातीय मुस्लिम नेताओंसे व्यग्य भरे स्वरमें पूछा था—

"मेरा जिहाद[२३] तो खैर अेक लानत[२४] था सो है अबतक,
मगर अिस आलमे-वहशत[२५]में ओमानों पै क्या गुजरी?

× × ×

चलो, वो कुफ्रके घरसे सलामत आ गये लेकिन
खुदाकी ममलकत[२६]में सोख्ता-जानों[२७] पै क्या गुजरी?

और भला कौन था, जो 'साहिर'की अिस बातका जवाब देता? अलबत्ता अुनको पाकिस्तान छोड देनेके लिअे अवश्य विवश कर दिया गया।

फिर अुर्दूका कवि अिस भयानक स्थितिमें निराश होकर नहीं बैठ गया, या अुसने केवल स्वतन्त्रता और नेताओंको कोसने तक ही अपनेको सीमित नहीं रखा, अुसने यह भी गाया कि—

'छोडो भी नफरतकी बातें आओ कोअी काम करें
मुल्कों मुल्को अम्नो-मुहब्बत[२८] के अफ़साने[२९] आम करें।
वक्तको जिन्दा कद्रें[३०] हमसे कुरबानी[३०]की तालिब[३१] हैं,
आज ये अपना काम नहीं है जिक्रे-मये-गुलफ़ाम[३२] करें।

वह अैसा अिसलिअे कह सका, क्यों कि अुसे आशा है कि—

'ये जुलमत[३३] भी छँट जाअेगी हैं दिलमें हमारे चन्द्रकिरन'
बदलेगा जमाना बदलेगा अुम्मीदका क्यों छोडें दामन[३४]।

और कौन नहीं चाहेगा कि हमारे अुर्दूके कवियोंकी यह आशा फलवती हो?

---

१४ आनन्दपूर्ण अुत्सव। १५. सतीत्व। १६ नेताओं। १७ भूला। १८ कारण। १९ अेकान्त। २० सम्पत्ति। २१ सर्व साधारणके समक्ष।

२२ घोंसले। २३ धार्मिक कट्टरताका विरोध। २४ घृणित। २५ अुन्मादके वातावरण। २६ राज। २७ घुलसे हुअे प्राण। २८ शान्ति और प्रेम। २९ कहानियाँ फैलायें। २९-३२ समयकी सजीव आवश्यकताअें हमसे बलिदान चाहती हैं, आज मदिरा और सुन्दरियोंकी चर्चा करना हमारा काम नहीं है। ३३ अँधेरा। ३४. आँचल।

[फीरोजाबाद

मेरे सपने थक गये

: श्री राजेन्द्र यादव, अेम. अे. :

मेरे सपने थक गये,
भटकती राहें आपसमें अुलझी-अुलझी
जीवन भूल-भुलैयां-सा रह गया
कि छूटी सारी सुधियाँ दूर
साध सब चूर
बुझा मन हारा-हारा पस्त,
त्रस्त मजबूर !

तुम अपनी बाँहोंकी कोमल सीमाओंमें घेर अिन्हें
वासन्ती चुम्बन अंकित कर दो दीप्त-मधुर
सच, ये बालकसे लहरा जाअँगे खिलकर !

मेरा मानस,
अुड़ते हंसोंकी अुज्ज्वल परछाओंके नीचे
मोतीकी फसल अुगाता जो
अब केवल विशाल रेतीला सागर
करवटें बदलता
छूता रहता दो छोर
'सहारा' हँसता है।
तुम अपने भावुक नत झबँती सजल—
नयनोंमें अिन्द्र-धनुष घोले,
बस, अेक अिशारा भर कर दो,
शत शत नखलिस्तान किलककर अंगड़ायी लें !
सच, मैं बहुत अकेला,
अिन संघर्षोंके कातर पंजोंमें बिधकर
दिन-रात छटपटाया करता हूँ !
जैसे मेरा अुल्लास
जवानीकी झरनों-सी निर्द्वन्द्व हँसी
मस्तीके सपने सतरंगी,
भावोंके जूड़ोंमें गुथे सजे, गीतोंके मुकुलित पारिजात
कल्पनाके पायलकी मदिर झनक
सब भीतर ही घुट घुटकर सिसक रहे चुपचाप !
किसी केकड़ेके पाशोंमें बँध गया विवश,
जो चूस-चूसकर मुझे सोखता जाता है।

बाहोंमें ताकत नहीं कि हिलतक सके तनिक
यों जीवनका नवनीत चुक रहा शनै शनैः
संगीत चुप रहा शनै. शनै. !

जो सीमासे अुमंग-अुमंगकर
सरिता-सा बह अुठे — गा अुठे
मैं अुफान था !
सत्यवान था !
लेकिन सब 'सत' चुका,
न पतझर रुका
भाग्यकी शाखें झुक न सकीं—
फिर भी केवल अेक अजाना मरता-सा विश्वास
कभी बल दे जाता झकझोर
किसी दिन 'सावित्री' की ज्योतिर्मय साँसें
अिस अन्धकारके कुंजोंमें आलोक बिखेरेंगी आकर,
मेरा अवसाद ओस बनकर चमकेगा,
मैं रक्षित हूँ अेक सुगन्धित अलक जालसे
जो यह साँपोंके जाल काट दे सकता है
स्नेहका सम्बल यमसे भी लौटा लाअेगा ! [आगरा

कविता :

मैं तो अुनको देख रहा था।

:श्री 'निशंक', अेम. अे., सा. र.:

मैं तो अुनको देख रहा था।
जीवनकी निधि खोकर भी मैं
जीवन-धनको देख रहा था।
मैं तो अुनको देख रहा था॥

कोयलने सदेश सुनाया—
"मधुरितु आयी, ऋतुपति आया",
किसने खोया किसने पाया ?
कौन रो पड़ा, किसने गाया ?
जान न पाया मैं तो अपने
पागलपनको देख रहा था।

अधरोंमें मृदु हास छिपाये,
नयनोंमें मधुमास छिपाये,
आये थे वह अिंगितमें ही
मेरा भाग्याकाश छिपाये,
तब मैं मौन खड़ा अपने ही
चंचल मनको देख रहा था।
मैं तो अुनको देख रहा था।

अुपन्यासकार श्री निराला

श्री आनन्द माधव मिश्र, बी अे, विशारद

निरालाजी कविके रूपमें ही अधिक प्रख्यात है। पर अुनका गद्य साहित्य भी अनुपमेय और निराले गुणोंकी खान है। जिस तेजीसे अुनका कवि अद्वैत और रहस्यवादसे मुड़कर प्रगतिकी ओर अुन्मुख हुआ है अुनका गद्यकार भी अप्रतिहत गतिसे गद्य साहित्यमें भी नूतन प्रयोग करनेमें अग्रसर रहा है। अुन्होंने अपनी चुटीली व्यंग्यात्मक भाव शैलीमें अपने समालोचनात्मक निबन्धों द्वारा रीति कालीन अभिवृत्तिके घूंघट पटमें अुलझी साहित्य धाराको जन सुलभ साहित्य छटा प्रदान की है। साप्ताहिक मतवाला कालमें चाबुक शीर्षकसे लिखी गयी अुनकी व्यंग्यात्मक टिप्पणियां साहित्य गगनमें छाये अुस समयके कुहासेको तितर बितर कर सकनेमें ही सफल नहीं हुआी बल्कि तत्कालीन तरुण-साहित्यकारोंके धुंधले पथको भी आलोकित करने और अुन्हें नयी दिशा नयी सूझ और नयी प्रेरणा देनेका भी अुन्होंने काम किया है। साथही अुन्होंने साहित्यकारोंकी तत्कालीन कूप मंडूकतापर भी कसकर प्रहार किया है। सामाजिक प्रश्नोंके महत्वको भी अुनके कलाकारने प्रारम्भसे ही महत्वकी दृष्टिसे देखा है। अुन्होंने स्पष्ट घोषित किया कि– 'भोजन वस्त्रकी समस्या किसी अेकके लिअ नहीं है अनेकोंको अुसके हल करनेकी आवश्यकता है।'

निरालाजीका जीवन संघर्षोंकी अटूट शृंखला है। पद-पदपर अुन्होंने दर्दभरे तूफानी द्वन्द्वोंको झेला है। अनवरत आफतों जीवन-आवर्त्तों और हलचलोंके साथ अुन्होंने होड़ ली है। पर अुनका सौंदर्य शिल्पी सदैव दर्शी कलाकार न कहीं झिझका है न थका है न झुका है। अेक अपूर्व वेगसे अुसने चलना शुरू किया और अुसी निराली शानसे आज भी चुनौती देता बढ़ता चला जा रहा है। डा० रामविलास शर्माने निराला विषयक अपनी पुस्तकमें लिखा है— अुनका (निराला जीका) जीवन प्रत्येक सहृदय व्यक्तिके लिअ अेक चुनौती है कि वह अिस सड़ी गली व्यवस्थाका अन्त करके अेक नये समाजका निर्माण करे। स्वयं निरालाजी अिस अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअ सतत साहित्य सृजन करते रहे हैं और विषम परिस्थितियोंमें भी युग प्रेरणाके अविचल केन्द्र रहे हैं।

निरालाजीका पहला अुपन्यास अप्सरा सन १९३१ अी० में प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात वे अेक नियमित गतिसे अलका निरुपमा प्रभावती चतुरी चमार (रेखाचित्र) कुल्ली भाट और बिल्लेसुर बकरिहा आदिका सृजन करनेमें लग रहे हैं। आध दर्जनसे अधिक अुपन्यास और दर्जनों कहानियों (रेखाचित्रों) का अुन्होंने प्रणयन किया है। काव्य और निबंधोंके क्षेत्रमें जिस बौद्धिक तर्कशीलता और ज्ञान पटुतासे अुन्होंने सिंहासनासीन साहित्यकारोंको हिला दिया था अुनके कथा साहित्यने अुनके परोक्ष तलेकी भूमिकाको ही खिसका दिया। अपने पहले ही अुपन्यासमें अेक वेश्या नर्तकीकी कन्याको नायिकाकी भूमिकामें अवतरित करके पूरे रोमैंटिक दल बलके साथ अुन्होंने अुपन्यास जगतमें अेक क्रान्तिकारक हलचल अुत्पन्न कर दी। प्रेमचन्दने यदि गांवोंकी गोदसे धूल भरे पात्र अुठाकर अुन्हें अूंचा अुठाया तो निरालाने समाजकी परम अुपेक्षित शोषित नारीका अुसके पदपर आसीन करनेका तुमुल प्रयास प्रारंभ किया। 'अप्सरा' से 'अलका' 'निरुपमा' और 'प्रभावती' तक अुनका यही क्रम जारी है। काल्पनिक पात्रोंकी आदर्शोन्मुख रचना कर लेखक सतत ही आगे बढ़ता चलता है। अुसने अपने अिस प्रयासमें भारतीयताकी पूरी वगस रक्षा की है। नारीको पाश्चात्य रंगमें रंगकर अुद्दत-अुच्छृंखल आधुनिकताकी वेश भूषा प्रदानकर अमर्यादित विशृंखलताको अुसने जन्म नहीं दिया है। वरन भारतीय संस्कृतिकी गौरव सतीके सतीत्व और ममतामयी, त्यागव्रती साध्वी नारीको अुसने पग-पगपर प्रतिष्ठित

करनेका प्रयास किया है। 'अप्सरा', 'अलका', 'निरुपमा' यदि अुनकी प्रारम्भिक रचनाअें हैं तो 'प्रभावती' अुनके सक्रमण-कालीन भावोकी थाती है और अन्य कृतियाँ कुल्लीभाट, चतुरीचमार और बिल्लेसुर बकरिहा अुनके स्वस्थ, प्रौढ यथार्थवादी कलाकारके दृढ रचना-चिह्न हैं।

निरालाजीने अपनी प्रारम्भिक रचनाओंमें काल्पनिक आदर्शोन्मुख पात्रोका चित्रणकर समाजमें भव्य आदर्शोकी प्रधान भूमिकाको जहाँ अेक ओर सुलभ बनानेका सफल प्रयास किया है, वहीं नवयुवक स्वस्थ चेतनावाले तरुण-वर्गको सामाजिक प्रगतिके लिअे असीम वेगसे अुभाडा है। निश्चय ही, समाजकी वीभत्स समस्याओंके हल का यह प्रयास नही है, फिर भी प्रेरणा और अुत्साहका क्षेत्र तो है ही। अिससे अिनकार करनेका अर्थ कलाकारकी भावनाको न समझना ही होगा। यहाँ केवल देखना यह है कि कलाकार अिन काल्पनिक अुडानोमें अुड तो नही जाता, भूमिका आधार तो नही छोड बैठता, जन-जीवनसे कट तो नही जाता। और फिर किसी कलाकारकी प्रारम्भिक रचनाओंमें ही क्रान्ति अथवा प्रगतिका अुच्चतम स्वर ढूंढना भी तो श्लाघ्य नही है। अुसकी कृतियोमें गतिके कणोकी अुपलब्धि आवश्यक है, जो अुसे अेक दिन सही पथपर ले ही आअेंगे। अैसा ही कुछ निरालाके कथाकारका है। वह आदर्शसे-कल्पनासे चलता है और फिर अपनी भूमिपर, अपने यथार्थको देखने लगता है। यही, अुसकी महानताका, चिर प्रगतिका द्योतक है।

अिस प्रकार हम निरालाजीके कथा-साहित्यको पूर्व और अुत्तर-कालीन रचनाओंमें बाँटकर देख सकते है। निश्चय ही अपनी पूर्व कृतियोमें अुनका कलाकार युगकी समस्याओंको पूर्ण-वेगसे आत्मसात नही कर पाया है। पर अुनमें सतत बढनेकी अुत्कठा है, वेग है जो कि अुनकी अुत्तर-कालीन कृतियो (कुल्लीभाट और बकरिहा)में अुभडकर सामने आ गया है। यह भी सही है कि अुनकी पूर्वकालीन रचनाओंमें किसान-मजूरकी सही शक्तिके मूल्यांकन-चित्रणका भी अभाव है, और अुनका कलाकार अेक सही पथका निर्देशन करनेमें भी सफल नही हो पाया है। पर छायावादी कलाकार जो अभी अपने भीतर ही द्वद्व कर रहा है, जो अभीतक रोमासमें ही झाँक रहा है, अुससे अिस कालमें अिससे अधिककी आशा भी नही रखी जा सकती। हमारे लिअे गौरवकी जो बात है वह यह कि निरालाका कलाकार अिन छायावादी मदिर रगीनियोको छिन्न भिन्नकर तीव्र वेगसे यथार्थ पथकी ओर सक्रमण करनेमें लगा है। वह यह अनुभव करने लगा है कि—"कलाके विकासके लिअे जनताके दुख-दर्दकी तसवीरे खीचना जरूरी ही नही, अनिवार्य है।"

निरालाजीकी पूर्ववर्त्ती रचनाओंमें पात्रोंको खुलकर विकसित होनेका अवसर भी नही मिल सका है। कथानकोमें अुपकथानकोकी सूत्रबद्धता भी कहीं-कहीं नही निभ पायी है। अिस सबमें कविके अूपर छाये हुअे अद्वैत और रामकृष्ण-मिशनकी तत्कालीन छाप है। परन्तु अपनी अिन रचनाओंमें कलाकार अप्रतिम शैली, शब्द-विन्यास, भावोकी ग्रहणशीलता और अद्भुत दृढतामें अपराजेय है, अद्वितीय है। हास्य और व्यंग्यके साथ विषय वस्तुकी रसमयता सर्वत्र व्याप्त है जो सहज ही पाठकका मन मोह लेती है और अपनी छाप बिना लगाये नही छोडती। ये कवि-कलाकारकी सहज अनुभूत रचनाअें हैं। ये पूरे वेगसे चलती हैं और हृदयपर छा जाती हैं। 'अप्सरा' में कलकत्तेकी कहानी है। 'अलका' और 'निरुपमा' में लखनअू और गढाकोला (कलाकारकी पितृ-भूमि) के अनुभव गुम्फित हैं। 'अप्सरा' और 'प्रभावती' अुनके कवि-सुलभ सौंदर्यमिश्रित प्रेम-परिणितिके चरम बिन्दु हैं। अिन सभी कृतियोमें अुनकी भाषा, अुनके काव्यकी भाँति ही अेक सरगम-लयका बोध कराती चलती है। भावोकी गुत्थियोमें भी भाषाकी यह गेयता पाठककी गुदगुदीको चेतन बनाये रखती है। और अुसे 'बोर' नही अनुभव करने देती। अुनके शब्द सहज ही हृदयको बेधते चलते हैं और अेक अैसे रसोद्रेकको अुद्वेलित करते रहते हैं जिसकी मिठासका अनुभव भीतर ही भीतर पाठक करता रहता है। यही अुनकी सफलताकी कुंजी है। यही नहीं, अुनकी अिन प्राथमिक कृतियोमें मिलेमाका-सा दृश्य-विधान तना रहता है। रोमासके साथ देश सेवाका पुट, पढा-लिखा

नायक, अुपेक्षित नारी वर्गकी नायिका और कभी ग्राति वाली युवक नायक और धनी नायिका, अुनके त्यागमय पूत जीवनका चित्रण सिनेमा जैसे मनहर, हृदयहारी दृश्य ला अुपस्थित करते हैं जो पूरे वेगसे जन-मानसपर छा जानेकी सफल शक्ति रखते हैं।

निरालाजीकी अुत्तरकालीन रचनाअें ग्रामीण जीवनकी चित्र-रेखायें हैं। ये अुनके सतत जागरूक कलाकारको हिन्दी साहित्यके लिअे बजाड देते हैं। कलाकारने अपने अुत्तरदायित्वको पूरी क्षमतासे अिनमें ओढ लिया है। जीवनकी विविधताको 'चतुरी चमार' में रेखकका समारोपित करनेवा प्रेमचदके गोदानमें होरीकी भाँति, अेक अभिनव प्रयास है। चतुरी गाँवमें पैदा हुआ है। वह अपने बेटेके लिअे आशायें रखता है। अुसे पढाना लिखाना चाहता है। सन् ३०-३२ के किसान आन्दोलनके दिन है। चतुरी आदिपर जमीदारका प्रकोप होता है। मुकदमें होते हैं। हारकर भी चतुरी खुश है कि अुसने जान लिया—"जूता और पुरवाली बात अब्दुल अर्जमें दर्ज नही है"— अुसे ज्ञान हुआ कि जमीदारको जबरदस्ती दो जोडे लेनेका अधिकार नही है। वैसे यह घटना अपनेमें अेक साधारण घटना है। पर सूद्रत्वका अन्त कैसे होता है निरालाजी चतुरीके जीवनसे यह समझानेमें सफल हुअे हैं। यही अिस कृतिका मूल प्राण है। अिसी प्रकार, 'कुल्ली भाट' के रूपमें किया गया व्यग्य अेक पूरे युगपर व्यग्य है। पात्राकी सजीवता, सधी हुअी, सरल भाषा, व्यग्य और हास्य अिसमें देखतेही बनते हैं।

'बिल्लेसुर बकरिहा' निरालाजीका सर्व सफल ग्रामीण चित्र है। अवधके किसानाकी अेक भरी-पूरी तसवीर लेखकने खीची है। बिल्लेसुरके पास निरुपमाके नायककी भाँति विलायती अूची डिग्री नहीं है। पर वह व्यवहारिक जीवनमें अुससे अधिक सफल अुतरे हैं। वे तीन भाअी हैं—मन्नी ललअी और दुलारे। वे स्वय बकरी पालते हैं, अिसलिअे अुनका नाम बकरिहा पड गया। सामाजिक जीवनपर अैसा तीखा व्यग्य चित्र निरालाजीने खीचा है कि सामाजिक अहमन्यता सारा ढाँचाही चरमरा गया है। बकरिहा तराके सुकुल हैं। फलत छोटे ब्राह्मण होनेसे ब्याहकी समस्या सामने है। अेक भाअी अेक विधवाकी अबोध कन्याको सगाअी फँसाते हैं। दूसरे गुजरातके अेक ब्राह्मणके यहा नौकरी करते हुअे अुसके मरनेपर अुसकी पत्नी-पुत्री समेत माल असबाब समेट लाते हैं। समाज स्वीकार नही करता। तीसरा भाअी सुकुल परिवारमें विधवा विवाह कर आयी नारी-रत्नसे अपना घर आबाद करते हैं। बिल्लेसुरका वर्णन सबसे रोचक है। वे बगाल जाते है। जमादार सत्तीदीन सुकुलके यहाँ ठहरते हैं। अुनका बाबाकी छेद छाड़कर कंठी माला पटककर घर लौटते और बकरियाँ पालते हैं। सारा गाँव अुनकी अुन्नतिसे ओर्ष्या करता है। अेक विवाहका प्रस्ताव आता है। राता रात वे स्वप्न देखते हैं—'बहुत गोरी है। सोलह सालकी है। बडी बडी आँखें होगी, जैसी पुखराजबाअीकी लडकी हुसीनाकी है।' बिल्लेसुर नयी पोशाक बनवाते हैं और मंगतूके घरकी ओर चलते हैं। प्रस्तावका भेद खुल जाता है तो निराश न होकर अपने भाअीकी ससुराल चले जाते हैं और सासजीसे विवाहका वर प्राप्त करते हैं।

अिस प्रकार, अिस चित्रणके द्वारा समाजकी जिस वीभत्स, सडी-गली व्यवस्थाका निरालाजीने पर्दाफाश किया है लाचारी और लोभका जो मर्मान्तकभरा-दर्दनाक चित्र खीचा है वह समाजकी छातीपर अगदके जैसा भीषण पदाघात है। अन्तमें खेतिहर मजदूरके रूपमें बिल्लेसुरके जीवन-सग्रामका जो चित्र निरालाजीने खीचा है—साधन न होनेपर भी रोटीके लिअे लडनेवाले किसानकी जो रण-गाथा निरालाजीने कहायी है वह हिन्दुस्तानी किसानको अपराजेय, पौरुषेय शक्ति है। हिन्दीके यथार्थवादी साहित्यको 'बिल्लेसुर बकरिहा' निरालाजीकी अैसी अमर देन है जैसे कि प्रेमचदका अमर किसान-काव्य (अुपन्यास) 'गोदान'।

[वर्धा

यमुने !

(राजघाटकी समाधिके समीप)

: श्री गुरुनाथ जोशी :

यमुने,

युग-युग पूर्व द्वापरमें, तुम्हारे तीरपर कुरुक्षेत्रमें अर्जुनको गीताका अुपदेश देनेवाले श्यामसुन्दर मोहनने अपने बाल्य-कालमें अहीरके बालकोंके साथ न जाने कितने सलोने खेल खेले थे। कालियका फन कुचलकर अुसपर वह खडा हो गया था, तुम्हारी गोदमें क्रीडा करके तुम्हें हँसाया था, गोपिकाओंके साथ राम-क्रीडा की थी। जनताका मन आनद-प्रवाहमें आलोडित किया था, नचाया था। अुन दिनों जो खेल अुसने खेले थे, अुनका स्मरण कर अुसकी वसीकी रसीली वाणी कर्णोंमें भरके कल तक जनता आनदसे विभोर होती, पुलकित हो आनदाश्रु बहाती, जनताके आनदमें तुम भी साथ देती, कलकल निनादसे सर्व जनोंके मनको आनद-रस-भोग कल तक कराती आयीं। पर क्या जनताका तथा तुम्हारा वह आनद शायद अुस परम पिता महादेवको न भाया? तुम्हारा आनद लूटना तथा औरोंको लूटने देना अुस परमेश्वरको अच्छा नहीं लगा क्या? मानवको अितना सुख और आनद मिलना अुचित नहीं जानकर या अितने सुख-आनदमें अपनेको भूल गया है, यह जानकर शायद अुसने तुम्हारे और हमारे सुखका, आनदका अपहरण किया क्या कालिंदी!

यमुने,

युगयुगोंसे मानव-मनको आनद देती आयी हुअी तुमको आज हमें अपार शोक-सागरमें ढकेलनेका दुर्भाग्य क्यों प्राप्त हुआ? तुम्हारे बूढे प्यारे मोहनका दाह-संस्कार तुम्हारे ही तीरपर देखनेका दुर्भाग्य क्यों तुम्हारे और हमारे सिरपर आकर अचानक अनभ्र वज्रपातकी तरह गिरा? आनन्दाश्रुओंको बहाती हुअी तुम्हारी और हमारी आंखोंको आज क्यों दुखाश्रु बहाना पड़ रहा है माँ! तुम अकेली अपने प्यारे मोहनकी अमानवी हत्यासे शोक नहीं कर रही हो, पर, देखो, देखो तो, सारी दुनिया ही आँसू बहा रही है। तुम्हारे पिताके आंसुओंको शायद बहना पसद नहीं आया, अिसीलिअे वे वहीं जमकर नगाधिराज हिमालयके अडिग खडे हैं। तुम्हारा प्रियतम सागर ससारके कोने-कोनेसे वह आये नयन-नीर अपनेमें अेकत्रित कर, अपने सर्वश्रेष्ठ, ससारके प्रिय, महात्माकी अुपाधि प्राप्त, अमर कीर्तियुक्त पुत्रका अंत्य-सस्कार कैसे देखूं, यह सोचते हुअे हृदयविदारक स्वरसे रोते हुअे जहांका तहाँ खडा है! जाओ कालिंदी जाओ, अपने अश्रुप्रवाहको दिखा, अुसके आँसूमें अपने आँसू मिलाकर अपने प्रीतमका दुख हलका करो, धीरज बधाओ। यह कहने जाओ कि बाकी पुत्रोंकी आयु चिर रखनेकी प्रार्थना हम परमात्मासे करें।

देवि,

तुम और तुम्हारी बहन गगा दोनों मिलकर बूढे भारतके बापू-मोहनकी अस्थिपर लगे रक्तको धोकर क्या यह दिखाना चाहती हो कि अुसकी अस्थि भी परिशुभ्र है, राख भी परिशुभ्र है तो अुनकी आत्मा तो परिशुभ्रताकी प्रतिमूर्ति ही थी या क्या तुम यह दुनियाको बताना चाहती हो कि अुसकी आत्मा सत्य और अहिंसा तथा प्रेमके रूपमें करोडो लोगोंके हृदयोंमें प्रवाहित त्रिवेणी तीर्थराज होकर अमर है।

कालिंदी,

आज भारतमें द्वेष, असूया, सकीर्ण साम्प्र-दायिकता, नास्तिकताका ताडव हो रहा है। तुम अिनको अपने प्रबल-प्रवाहसे तहस-नहस करोगी कि नहीं? क्या युग-युगतक अिसी तरह तुम रोती हुअी,

हमें भी रुलाती हुअी रहोगी ? क्या तुमको अपने भक्तोंकी जीभपर नाचना, आनंदगीत सुनना पसंद नहीं है ? क्या हमेशा शोकगीत सुनते रहना ही पसंद है ? न मां ! न ! पाश्चात्य संसारसे और पश्चिमी सभ्यतासे हमारा संबंध जबसे शुरू हुआ है तबसे हमने बहुत कष्ट भोग हैं। तुम्हारे और अपने प्यारे बापू मोहनके अवसानसे तो हमारे दुखकी सीमा ही नहीं रही। तुम अपने और पुत्र रत्नोंकी सहायतासे हमारा दुख दूर करके हमें हँसाकर स्वयं भी हँसोगी कि नहीं ? कहो यमुना मैया कहो। हम तो अुस पिताके अवसानसे हुअे दुखोंको सहते अुसके बताये हुअे मार्गपर चलते आनंदके दिनोंकी प्रतीक्षा करेंगे कालिंदी ! हम तुमसे यही प्रार्थना करते है कि तुम परमात्मासे प्रार्थना करो कि बापूके द्वारा प्राप्त स्वातंत्र्यकी रक्षा करनेकी शक्ति हममें वह भर दे और मुल्कमें अमन चैनके दिन देखनेका भाग्य प्रदान कर दे। तुम्हारी प्रार्थनाके सुरमें हम भी अपना सुर मिलाते हैं यमुने !

[यह श्रद्धांजलि मैंने १९४८ की ३१ वी जनवरीकी सायंकालके समय लिखकर हिंदी प्रचार सभाकी शोक सभामें पढ़ी थी।—लेखक]

[धारवाड़

अेक मलयालम कविताका भाव

कवि का पुष्पहार

: श्री चुड्टम्पुपै कृष्णपिल्ले .

[नवीन कालके मलयालम कवियोंमें स्व. श्री कृष्णपिल्लै अेक बहुत अुच्च स्थान पा चुके हैं। सैकड़ों भावात्मक और कलापूर्ण कवितायें लिखकर अुन्होंने मलयालमके पद्य साहित्यकी श्री वृद्धि की। समाजकी भयानक क्रूरताओंको देखकर अुनके दिलमें जो निस्सीम दर्द पैदा हुआ, अुसका दिल पिघलानेवाला आविष्करण अुनकी कविताओंमें हुआ है। यह छोटीसी कविता अुनकी "कवियुडे पूमाला" का अनुवाद है।]

मुग्ध मनोहर भावनाओंको गूँथकर
कविने आँखोंको लुभा देनेवाला अेक हार बनाया।
प्रतिक्षण अुससे अनुभूतिका सौरभ बह रहा था,
मृदुल भावनाओंकी तरगें अुसे अूर्मिल बनाती थीं।।
कवि अुस हारको हाथमें लेकर गली गली भटकने लगा,
दयाकी अेक बूंद पानेके लिअे
अुसने धनियोंके गृहद्वारोंसे प्रार्थना की।।
लेकिन—
अुपहास भरी नजरोंके सिवा
अुसे किसीसे और कुछ नहीं मिला।
पेटमें आग लगी;
आँखें अश्रुधारामें निमग्न हुईं।।

अेक ओर—
स्वर्ण-मुद्राओंके कटोरोंके अूपर नाचनेवाले मधुकुंभको कांतिमान कर
संसार रँगरेलियोंमें नृत्य करता है।
अेक ओर—
अुच्च देशभूषाकी मरीची फैलाकर गंभीर भावसे खड़ा रहता है
और अुसकी छायामें मग्न होकर दुनिया सुन्दर स्वप्न देखती है
अेक ओर धनमदमत्तता लगातार दिप मुस्का रही है
और मात्रान्धतृष्णाके मारनेमें समारम्भी अुद्दाम चल रहा है।
वह अनश्वर पुष्पहार हाथमें लेकर
हाय!
कलाकार परमनिराशामें, शून्य अुदरके साथ, सीधा कादवमें गली-गली घूम रहा है।
अुस हारकी महिमाको जाननेवाला कोअी नहीं था।
कविका गला सूख गया,
अुसकी शिराअें दर्दीली बनीं।
अुसी श्मशानको वह धरतीपर गिर पड़ा और
फिर न दिखा।

+ + +

बहुत दिन बीत गये,
संग्राम-क्षेत्रोंमें शांति फैल गयी,
कभी पहाड़ छिन्न-भिन्न हुअे,
कभी अन्धे कुअें भर गये,
और मनतलमें फूल विकसित होकर जगमगाने लगे।
लगातार फूल बरसानेवाले अुस अुपवनके मध्य
अविकल शांतिका चिह्न जैसा जो कब्र है
वह किसका है?
विश्वके अभिनन्दन गुलाबजल बनकर
अुस जमीनपर जो बरस पड़ता है,
वहाँ कौन हृदय सुखसुषुप्तिमें मग्न है?
अेक सदी पहले,
धूपकी आगमें जिस भिखारीके हाथ झिलमिलाकर निर्जीव
बन गये थे, अुसकी रस भावनाओंको गूंथकर बनाया हुआ
वह पुष्पहार—
बिना तिलभर भी मुरझाये
सुन्दरतामें नहाकर
आज भी प्रशोभित रहता है।
अुसके सामने
समादर अजस्र आराधना करता है।

[अनुवादक- श्री मोहनकुमार]

[दक्षिण भारत

पंजाब

: श्री दिआंनचंद मिगलाणी :

वेसां विचों वेस सुणींदा सोहणा देस पंजाब
जोबन जिस दा डल्हकां मारे, कोई न झल्ले ताब
अर्शां दे नाल गल्लां करदा अेथे शोख शबाब
लॅठां वरगे गभरू जिस दे दिल दे डाढी, नवाब
विच मैदानां चमके जिसदे, सूरमिआं दी आब
सतलुज, बिआसा माली जिस दे खिड़िआ बाग गुलाब
लहि-लहि करदे खेतां विचों मोती मिलण नायाब
धरती ते सुरगां दा टुकड़ा, वसदा रहे पंजाब

[सुना जाता है कि देशोंमें सुन्दर देश पंजाब है। जिसका योवन अैसा चमकता है कि कोअी अुसकी ताव नहीं सह सकता। यहाँकी शोख-तरुणाअी आकाशसे बात करती है। यहाँके जवान लट्ठोंके समान हैं, दिलके बड़े ही अुदार। जिसके मैदानोंमें वीरोंकी चमक चमकती है। सतलुज तथा व्यास नद जिसके माली हैं। यह गुलाबकी तरह खिला हुआ है। जिसके लहलहाते हुअे खेतोंमेंसे नायाब मोतियोंकी प्राप्ति होती है। यह पृथ्वीपर स्वर्गका टुकड़ा है। यह पंजाब बसा रहे।]

बीत गयी हुण रात दुखां दी, सूरज नैण अुघाड़े
बन्ह बिस्तरा टुर गये अेथों, जिन्हां बाग अुजाड़े
लॅक बन्हके अुठ खलोते, अेह पंजाबी लाड़े
तगड़े कदी न चूँ चूँ करदे, रोंदे रहिंदे माड़े

: अनु०—श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन :

सूरमिआं दियां वारां गाअोंदा जावण विच अखाड़े
पलट गेआ किसमत दा पासा, मुक गये तरले हाड़े
पूरा होवेगा हुण छेती आजादी दा ख्वाब
धरती अुते सुरग नमूना वसदा रहे पंजाब

[अब दुखोंकी रात बीत गयी है। अब सूरजने आँखें खोली हैं। जिन्होंने कभी यह बाग अुजाड़े थे, वे अब बिस्तर बाँध चले गये हैं। ये पंजाबी लाड़ले अब कमर कसकर खड़े हो गये हैं। शक्ति-सम्पन्न लोग कभी 'चूँ', 'चूँ' नहीं करते। कमजोर ही रोते रहते हैं। वीरोंके गीत गाकर ये अखाड़ोंमें अुतर रहे हैं। किस्मतका पासा पलट गया है और मिन्नत-चिरौरी करना समाप्त हो गया है। अब शीघ्रही आजादीका स्वप्न पूरा होगा। पृथ्वीपर स्वर्गका नमूना—यह पंजाब बसता रहे।]

लाल सोने दी धरती, जिड़न गीआं गुलजारां
नवें शगूफे, नवीआं कलीआं, नवीआं अैण बहारां,
नवें शोक बीजा नवीआं नहिरां, भरसन अॅन भण्डारां
सरगोधे ते लॅलपुरे दीआं भुल जाण गीआं बारां
कोठिआं दी थां महिल बणनगे, गडिआं दी थां कारां
नवां जनम शहिरांदा होवा, रौणक गली-बजारां
सूरज वांगू रोशन होवे अेह चढ़दा पंजाब
जनत वी पई रीस करे, जिदे वसे अेह पंजाब।

[पृथ्वी सोनेकी खान बन गयी है। अब गुलजार खिलेंगे। नये शगूफे, नयी कलियाँ और नयी बहारें होंगी। नये बाँध और नयी नहरें होंगी। अन्नके भण्डार भरे जायेंगे। सरगोध और लायलपुरकी बारें (नहरोंसे सींची गयी भूमि) भूल जायेंगे। कोठड़ियोंकी जगह महल बनेंगे और गाडियोंकी जगह मोटरकार लगीं। शहरोंका नया जन्म हो गया है। गली-बाजारोंमें रौनक है। यह चढ़ता हुआ पंजाब सूरजकी तरह रोशन हो। स्वर्ग भी जिसकी रीस करे—यह पंजाब जिस तरह बसता रहे।]

[कालिम्पोङ

पंजाबी कविता

खेतोंकी भरपूर जवानी

: सुश्री अमृता प्रीतम :

(पंजाबी)

भरपूर जवानी खेतां दी, भरपूर जवानी हो !
खेत जो गोड बीजे वाहे—भर सरोवर ते पानी लयाओ,
अिक अिक कोह ते माजर छनकी, बेल जो लीते जोन।
गिट्टे गिट्टे खेत होअे हो गोडे-गोडे खेत होअे,
मोनियां करधा पया जो दाना, स्ट्टि गये खलो ॥
भरपूर जवानी हो !

लम्बडा दे विच वाहर पओ, 'हो कावा' दी वाज पओ
भरिया बन्न बन्नके म हारी, बूल ता ले गय सो।
कच्चा कोठा लिम्बके रखया, झाड पूजके, लिम्बके रखया,
सखम सखना कोठा मेरा, मूह वले झाके ओह ॥
भरपूर जवानी हो !

आर गयी हां, पांर, गयी हां, ढूड-ढूडके हार गयी हां,
पक्के महलें बडे जो दान, मुड निकली न सो।
हाडी बीजी, सावणी बीजी, दूनी बीजी चूनी बीजी,
सडदा-बलदा हाड गया, ते ठण्डा कक्कर पो।
भरपूर जवानी हो !

खेतां दी भरपूर जवानी, मेरी भुख दी करे कहानी,
मेरी मुख दे गीत सुनाते, पवे कलेजे खो।
धुप गुबारा अन्द घडियां, मैं खेतां दी वट ते खडियां,
सूरज डुब्बा चन्द न चडया, न तारे दी लो ॥
भरपूर जवानी हो !

सत्ता आओया, सत्ता गजिया, अैसे वटते दुर्दो रओया,
धुड पओ मेरे पव्वा मुल, राह न दिस्या को।
गोहे न धुखदे, कनक न गुजदी, ये नहीं सडा सार्यो पुजदी,
न चन पकावे रोटियाँ, न तारा करे रसो ॥
भरपूर जवानी हो !

अनुवाद :

(हिन्दी)

खेतोंका भरपूर यौवन, भरपूर यौवन !
खेतोंको जो जोता, बीजा तो तालाबके पानीसे सींचा,
हर कुअेंपर आवाजें गूंज अुठीं, जब बेलोंको जोत लिया।
खेत फिर टखने-टखने तक हुअे, फिर घुटने-घुटने तक बढ़ गये,
जब मोती जैसे दाने पड़ गये तो सिट्टे भारी-भारी हो गये।
भरपूर जवानी खेतोंकी !

जब लवन करनेका समय आया, 'तो अुड जा कौवे' की आवाजोंसे खेत गूंज अुठे,
मैं तो गट्ठे बान्ध बान्ध कर थक गयी, परन्तु (अनाजका) ढेर तो वह अुठाकर ले गये।
लीप कर और झाड़ पोंछ कर, मैंने अनाज रखनेके कोठेको निखार दिया था।
मेरा खाली और अुदास कोठा, रह-रह कर मेरा मुंह देख रहा है।
भरपूर जवानी खेतोंकी !

अनाजके दानोंकी तलाशमें मैं मारी मारी फिरी,
पर अेक बार पक्के महलों (के कोठों) में जाकर दाने फिर बाहर न निकले,
सावन और असाढ़की फसल, दुगुनी-दुगुनी और फिर चौगुनी-चौगुनी बोयी,
जलता-जलता अगाढ़ गया है, और ठंडा जमा देनेवाला पोह।
खेतोंकी भरपूर जवानी !

खेतोंका यह भरपूर यौवन, मेरी भूखकी कथा कह रहा है,
मेरी भूखके नाले गुना रहा है, हृदयमें अेक हूक-सी अुठती है।
खेतोंके अन्दर धुन्धलका-सा छाया हुआ है और मैं खेतोंके किनारे पर खड़ी हूं,
सूर्यास्त हो गया है, और चन्द्रमा अभी निकला नहीं है।
खेतोंकी भरपूर जवानी !

ऋतुअें आयी भी, और चली भी गयी, पर मैं किसी प्रकार चलती आयी हूं,
धूलमें पंजे अटे हैं, और राह सुझायी नहीं देती है।
अुपले जलते नहीं हैं, और आटा गुन्धीता नहीं है—खन मुझे भान नहीं है,
(परन्तु) न चन्द भोजन पकाअेगा, न तारा रसोअी करेगा (और मुझे किसी
प्रकार चलते रहना होगा।)

(अनुवादक :—श्री घनश्याम सेठी)

[काश्मीर

---

१. राष्ट्रभाषाका स्वरूप

[पं० जवाहरलाल नेहरूका भाषण]

[दिनाक ५ जनवरीको सायंकाल ४–२१ पर, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलनके हिन्दी भवनका शुभ-शिलान्यास करते हुअे नागपुरके अैतिहासिक अेवं अनूठे साहित्यिक-समारोहमें भारतके प्रधान मंत्री प्रियदर्शी पंडित जवाहरलालजी नेहरूने जो महत्वपूर्ण भाषण दिया अुसको हम संक्षिप्त रूपमें नीचे दे रहे हैं। पंडितजीने राष्ट्रभाषा हिन्दीकी योग्यता और अुसके स्वरूपके सम्बन्धमें अपना लोकप्रिय मत व्यक्त किया कि राष्ट्रभाषा अुस व्यापक और सार्वजनिक भाषाको कह सकते हैं जो राष्ट्रमें बोली और समझी जा सके और जिसके द्वारा हमारे राष्ट्रीय कार्य बेरुकावट चल सके, वह सरल हो, सबल हो, अुस भाषाके द्वारा देशके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार चल सके और जो सारे देशकी सभ्यता और संस्कृतिकी प्रतिनिधि हो। लीजिअे, आगे पढिअे— सम्पादक]

"कोअी भाषा सिर्फ दफ्तरोंके अन्दर ही नहीं गढी और मढ़ी जाती है। कोअी साहित्य केवल दरबारी साहित्य नहीं रह सकता। लेखक या साहित्यिक सिर्फ कविता और कहानीकी रचनाअे करके ही संतोष मानकर न बैठ जाअें। वे देशके अुन हजारों सवालोंपर भी लिखें जिनसे आजकी दुनियाको हमें समझनेमें मदद मिले। अिसलिअे दुनियाको समझनेमें सहायक साहित्यका सृजन आवश्यक है। फूलकी तरह खिलना ही भाषाका मूल स्वभाव है। अैसी भाषा और अुसका साहित्य मुझे प्यारा है। हर देशके लिअे साहित्यका सम्बन्ध जीवनके साथ बँधा हुआ है। दुर्बल देशका साहित्य दुर्बल होता है, अुसी प्रकार दुर्बल साहित्य देशको दुर्बल बना देता है। किसी देशके साहित्यसे यह जाना जा सकता है कि वह देश कैसा है। साहित्यका सवाल बुनियादी सवाल है। साहित्यके आअिने (दर्पण) में देशको देखा जा सकता है।

राष्ट्रभाषाका प्रश्न विवाद रहित

अब राष्ट्रभाषाके सवालपर बहसकी कोअी गुंजाअिश नहीं। श्री वियाणीजीके कथनका अुल्लेख करते हुअे अुन्होंने कहा कि हिन्दी किसी दूसरी भाषाके मार्गमें बाधक नहीं होगी। भाषाके क्षेत्रमें अेक भाषाके बढनेसे दूसरी भाषा कभी घटती नहीं बल्कि विचार-विनिमयके माध्यमसे अुसका विकास होता है। साहित्यकी भाषा और बोलचालकी भाषामें कमसे कम दूरी रखना चाहिअे। यों साहित्यकी भाषा और बोलचालकी भाषामें कुछ फर्क तो रहता ही है। अगर यह फर्क बहुत ज्यादा हो जाअे तो फिर साहित्य कमजोर हो जाता है। वह दुर्बल साहित्य दरबारी साहित्यकी शक्ल अख्तियार कर लेता है या फिर वह अैसा साहित्य बन जाता है जिसे चंद लोग ही आपसमें पढ़-सुन लिया करें। प्रजातन्त्रीय व्यवस्थामें बोलचालकी भाषा और साहित्यकी भाषा अेक दूसरेके निकट होनी चाहिअे।

तुर्कीके कमालपाशा अतातुर्कके जमानेमें यह तय किया गया कि तुर्की भाषासे अरबीके जटिल शब्द निकाले जाअें, आप जानते हैं, अुस समय टर्कीमें क्या किया गया ? शब्दोंके लिअे लोग दफ्तरों या साहित्यिकोंके पास नहीं पहुँचे। वे शब्दोंकी पूर्तिके लिअे

(निकाले गये शब्दोंकी खाली जगह भरनेके लिअे) गावोंमें गये। अुन्होंने वहाँसे हजारों शब्द ले लिये-- अैसे शब्द जो चालू थे, जानदार थे। हमें शब्दोंके ग्रहण करनेमें अुदार नीति अपनानी होगी। अंग्रेजीमें प्रतिवर्ष हजारों नये शब्द मिल जाते हैं। कोअी सरकार भाषाके मार्गकी कठिनाअियाँ भले ही दूर कर दे, पर किसी सरकारके हुक्मसे भाषाको गढ़ा-मढ़ा नहीं जा सकता। भाषा अेक पुष्पके समान है। क्या किसीके हुक्मसे फूल खिल या निकल सकता है? हम बीज डाल सकते हैं, पर फूल तो आहिस्ते-आहिस्ते ही निकलेगा और खिलेगा। भाषा बड़ी नाजुक चीज है। अुसे तोड़-मरोड़कर नहीं बढ़ाया जा सकता। अगर हालत यही रही तो भय है कि कहीं हिन्दी केवल दफ्तरोंकी भाषा न रह जावे। मैंने हिन्दीका अेक कोष देखा तो मेरा सिर चकरा गया। अगर अैसे शब्दोंको चलानेकी कोशिश की गयी तो कहीं अैसा न हो कि सरकार ही ठप हो जाये। कविता और कहानियोंके अलावा हिन्दीके लेखकोंको अुन हजारों सवालोंपर लिखना चाहिअे जो कि रोज अुठा करते हैं। अैसी रचनाअें होनी चाहिअे जिससे आजकी दुनियाको समझनेमें सहायता मिले।

साहित्य-सम्मेलनोंको चाहिअे कि वे लेखकोंकी हालतकी ओर भी ध्यान दें। मैं प्रकाशकोंका दुश्मन हूँ, (मजाकिया ढंगमें) ये प्रकाशक लेखकोंका गला दबाते हैं। सौ-पचास रुपये देकर लेखकोंसे कापी-राअिट ले लेते हैं और खुद हजारों रुपये कमाते हैं। साहित्य-सम्मेलनको चाहिअे कि होनहार साहित्यिकोंकी सहायता करे और अिस बातका ध्यान रखे कि अुनके साथ अन्याय न हो।

× × ×

हिन्दीके पीछे शक्ति है। अुसे संस्कृतका स्रोत प्राप्त है। अुसके दायें-बायें दूसरी-दूसरी भाषाअें हैं।..."

२. हिन्दी नवयुगकी देहलीपर

मध्यप्रदेश-हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके अध्यक्ष श्री ब्रिजलाल बियाणीके श्री मोर हिन्दी-भवन नागपुरके शिलान्यास-समारोहके अवसरपर दिया हुआ भाषण।—

आदरणीय नेहरूजी, बहिनो और भाअियो—

प्रांतीय हिन्दी-साहित्यके अितिहासमें आजका दिन अवश्य अेक घटना बनकर रहेगा। अिससे बड़ा हमारा और सौभाग्य क्या हो सकता है कि जिस अींट, पत्थर और भाव-भाषा-अैतीका भवन हम निर्माण करने जा रहे हैं अुसकी नींवकी शिला आजके अतिथि-श्रेष्ठके कर-कमलों द्वारा रखी जाये? सौभाग्य केवल अिसलिअे नहीं, कि यह संस्कार भारतके प्रधान मंत्री द्वारा सम्पन्न होने जा रहा है। अपने बीच साहित्यके वरद पुत्र, भारतीय आत्माके प्रतीक, शब्दोंके अेस अनोखे जादूगर, प्रणेता और सृजनकारको पा कौन साहित्य सम्मानित न होगा? हम अुनका कैसा स्वागत शिष्टाचार करें जो सारे देशकी पूर्ण प्रेरणा बन गये हों और हमारे जीवनमें अिस तरह भीतर-बाहर समाये हुअे हों? हम तो यही कह सकते हैं कि मध्यप्रदेश-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके अितिहासमें यह सबसे गौरवशाली दिवस होगा।

हिन्दीके अितिहासमें भी यह अेक महत्त्वपूर्ण घड़ी है। हिन्दी आज अेक नये युगकी देहलीपर खड़ी है। प्रादेशिक भाषासे राजभाषाका स्थान अुसने प्राप्त कर लिया है और अब राष्ट्रभाषामें विकसित होने जा रही है। यह अुसके लिअे अेक नवनिर्माण काल है। राजभाषा घोषित होनेके बाद यकायक अिसपर अेक महान् अुत्तरदायित्व आ पड़ा है। देशके अेक छोरसे दूसरेतक, भावों और विचारोंके आदान-प्रदानका अुसे माध्यम बन जाना है। राजनीति, शासन तंत्र और विज्ञानकी नित नयी आवश्यकताओंके लिअे अुसे भरपूर अुतरना है। अुसे अितनी सर्वसुगम, लचीली और गुणग्राही होना है कि देशभरकी नाना बोलियों और अर्थात् हर नये परदाको

आश्रय दे सके। यह सब होते हुअे, अेक क्षण भी यह भ्रम न हो कि अुसकी अन्य प्रादेशिक भाषाओंसे किसी तरहकी स्पर्धा है। हिन्दीकी ये सब सहोदरा है, न कोअी श्रेष्ठ न कोअी हीन। अुनमेंसे बगाली, गुजराती, मराठी, तेलुगु, तमिल जैसी भाषाओंका तो अपना महान समृद्धिशील साहित्य है, जिनसे हम कुछ पा ही सकते है। हमारी यही कामना हो सकती है कि अपनी-अपनी जगह यह सब फूले-फले और मिलकर देशका अुत्कर्ष करे। किन्तु अन्य भाषा-भाषियोंके मनमें अकारण बसे अिस सदेहको हमें दूर कर देना होगा कि हिन्दी किसी तरह अुनकी भाषाके विनासके मार्गमें बाधक होगी। दोनोमें कोअी वास्तविक विरोध नही, क्योंकि दोनोंके क्षेत्र भिन्न है। हिन्दीकी तो आकाक्षा केवल अिसके सिवा और कुछ नही कि वह सही अर्थोमें राष्ट्रके विभिन्न टुकडोंके बीचकी मजबूत सुनहरी कडी बन जाअे।

हम जानते है कि अिस आदर्श तक पहुँचनेके लिअे अभी कठोर तपकी आवश्यकता होगी। भाषा पूरे समाज और परम्पराकी देन होती है, अेक दिनकी अुपज नही। फिर भी यदि हम चाहते है कि हिन्दी अपना अुचित स्थान ग्रहण करे और अपने अुत्तरदायित्वका ठीक-ठीक निर्वाह करे, तो अुसी प्रमाणमें हमें यत्न करना होगा। अग्रेजीसे हमारा विद्वेष नही, अुनके तो हम अनेक तरहसे ऋणी रहेगे। किन्तु यह बात मानी हुअी है कि सच्चा प्रजातत्र तभी हो सकता है जब कि अुसका सारा कारबार जनताकीही भाषामें हो, न कि किसी विदेशी भाषामें। और यह जितना शीघ्र हो सके अुतनाही अच्छा। अिस स्थितिसे हम बच नही सकते, कभी न कभी यह करना होगा। अिसलिअे हिन्दी और मराठीको अिस प्रदेशमें राज-कार्यकी भाषा बनानेमें मध्यप्रदेश शासनने निस्सदेह अेक सामयिक, सूझबूझका और साहसका कदम अुठाया है। अिसी प्रदेशमें यह प्रथम प्रयोग हो रहा है और थोडेही दिनोमें अिसने जो प्रतिष्ठा पायी है वह अेक अुज्ज्वल भविष्यकी सूचक है।

लेकिन भाषाका प्रश्न अितनी सरलतासे हल नही हो पाता। अिसके अनेक व्यावहारिक पहलू है जिनका ध्यान रखना पडता है। सबसे पहिले तो परिवर्तन-कालकी कठिनाअियाँ होती हैं। शासन कार्यको बिना क्षति पहुँचाये ये प्रादेशिक भाषाअें कैसे और कब अँग्रेजीका स्थान ले, यह मुख्य प्रश्न है। अिन भाषाओंका पारस्परिक सबध दूसरा प्रश्न है और अतिम तथा सबसे महत्वपूर्ण है—भाषाके स्वरूपका प्रश्न।

अिस प्रदेशमें हिन्दी और मराठीने तो अब अपना स्थान ले लिया है। यह प्रक्रिया अभी पूरी नही हुअी, फिर भी सेक्रेटरियटसे लेकर गाँव-गाँव तक अब जनताकीही भाषामें कार्य होने लगा है। अनजानेही अेक मनोवैज्ञानिक क्रातिका अुदय हुआ है। शासन और जनताके बीच अब अग्रेजी भेदकी दीवार बनकर खडी नही। जैसे-जैसे समय बीतता है, यह सत्य और भी स्पष्ट होता जाता है।

प्रादेशिक भाषाओंका परस्पर सबध भी समय पाकर यहाँ आपसे आप सुलझ गया है। अिस राज्यकी प्रादेशिक भाषाओं—हिन्दी और मराठी—दोनोको यहाँ समान स्थान प्राप्त है और आज हम गर्वसे कह सकते है कि अिनके आपसी सबधोमें जरा भी कटुता नही है। अिस सबधमें मराठी-भाषी बंधुओंके सहयोगके लिअे हम आभारी हैं। अपने कार्योमें हमें सदा अुनका बल मिला है। हजारोकी सख्यामें हिन्दीकी परीक्षाओंमें बैठ अुन्होने हिन्दीको अपनाया है और अुसके लिअे अनुकूल वातावरण तैयार किया है। प्रधानत मराठी केन्द्रहीमें मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य-सम्मेलनका पहला भवन बने यही अुनकी अुदार वृत्तिका परिचायक है। साथ ही, सडककी दूसरी ओर विदर्भ साहित्य सघका भवन खडा है। जो हिन्दी और मराठीके बीचकी बहनापेकी भावनाका सबूत दे रहा है। भाषा और सस्कृतियोकी मिलन-भूमि अिस मध्यप्रदेशमें सामाजिक शास्त्रकी दृष्टिसे यह अेक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रयोग है। हमें विश्वास है कि देशके सामने सास्कृतिक मेल-मिलाप और भाषा-सहिष्णुताका हम अेक अुदाहरण रख सकेंगे।

भाषाके स्वरूपका प्रश्न अवश्य सबसे जटिल है। अिस सबधमें अुदार और स्वस्थ नीति अपनाना आवश्यक

है। भाषा शब्दकोशकारोंके या सरकारी आफिसोंमें गढ़ी जानेवाली कोअी कृत्रिम वस्तु नहीं। असे तो जनता ही — अुसके बाद लेखक, शायर, कलाकार और विचारक निर्मित करेंगे। शासनका काम होगा कि अिस भाषाको मान्यता और जहाँ आवश्यकता हो प्रोत्साहन दे।

अिस दिशामें सबसे प्रथम आवश्यकता है अेक अधिकृत शास्त्रीय वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दोंके हिन्दी शब्दकोशकी। राज्य सरकारने अिस सम्बन्धमें सराहनीय प्रयास किया है जो राष्ट्रभाषाका मार्ग प्रशस्त करेगा। पर स्पष्टतः यह अेक अखिल भारतीय *स्तरका कार्य है। केन्द्रीय शासनसे हमारा निवेदन है कि* कार्यकी महत्ता देखते हुअे विभिन्न भाषाओंके विद्वानों और राज्य शासनके सहयोगसे कोअी असी योजना तैयार करे कि यह शीघ्र सम्पन्न हो सके।

लेखकोंको अुत्तम रचनाओंके लिअे पुरस्कृत करने और विभिन्न प्रादेशिक भाषाओंके ग्रंथोंका हिन्दी मराठीमें *अनुवाद करनेकी* राज्य सरकारकी योजनाका हम स्वागत करते हैं। भाषाको समृद्ध करने और साहित्यिक समन्वय स्थापित करनेमें अनुवादोंका महत्त्वपूर्ण हाथ होता है। मुझे सन्देह नहीं कि अिन योजनाओंको सफल बनानेमें हमारे साहित्यिक पूरा पूरा सहयोग देंगे।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन भी अिस दिशामें अपने कर्तव्योंसे अनभिज्ञ नहीं। हमारे साहित्यिकोंके लिअे यह अेक महान निर्माण-युग है। हिन्दीपर जो अुत्तरदायित्व आ पड़ा है असे अुसके अनुरूप बनाना है ताकि वह अंग्रेजी जानेके बाद रिक्त स्थानकी हर तरहसे पूर्ति करनेके योग्य हो जाअे। मैं अपने कवि, लेखक, साहित्यिक मित्रोंको आमंत्रित करता हूँ। आजतक हमने हिन्दीके लिअे जो माँग की थी वह पूरी हो गयी। अब हमारी परीक्षाका समय है। हमारे विचारक व लेखक हिन्दीमें सोचें और हिन्दीमें लिखें। हिन्दीको हम *अितनी समृद्धिशाली बना दें कि वह जन जनके आदरका* सम पात्र और सबकी गलहार बन जाअे।

बर्षोंसे प्रान्तमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अपने असे भवनकी कमी महसूस हो रही थी कि जहाँ अनवरत साहित्य साधना हो सके। सम्मेलन तुमसर निवासी सेठ नरसिंगदासजी मोर, श्री गोवीन्दरामजी अग्रवाल और श्री दुर्गाप्रसादजी सराफका आभारी है जिनकी दानशीलतासे असे भवनका स्वप्न यथार्थ होने जा रहा है। डेढ़ लाखकी लागतसे बननेवाले अिस भवनमें अेक मिला जुला रंगमंच और सभा-स्थल रहेगा। अेक पुस्तकालय तथा अनुसंधान शाला होगी और साथ ही अतिथिगृह होगा। हमें आशा है यह साहित्यिकोंका क्रीडा स्थल होगा।

३. देशकी अेकताके लिअे हिन्दी

अुत्तर प्रदेशके परमश्रेष्ठ राज्यपाल और गुजरातके सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार श्री क० मा० मुन्शीने हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित अेक स्वागत समारोहमें राष्ट्रभाषा हिन्दीके सम्बन्धमें कहा —

हिन्दीके बिना हमारे देशकी अेकता सम्भव नहीं। जो लोग कालेजों तथा अुच्च स्तरके राज-काज व्यवहारमें हिन्दीका माध्यम स्वीकार नहीं करना चाहते वे अिस अेकताके मार्गमें बाधा ही अुपस्थित कर रहे हैं। हमारे देशकी अेकताके लिअे हिन्दी वरदानके रूपमें हमें मिली है और अिस वरदानके महत्त्वको हम समझना चाहिअे।

हम लोगोंने अपने सामाजिक जीवनमें छुआछूत और भेदभावको काफी आश्रय दिया है किन्तु भाषाके सम्बन्धमें अिस प्रकारकी छुआछूतसे बड़ी हानि होगी। हमें यह नहीं सोचना चाहिअे कि कौन-सा शब्द किस भाषाका है बल्कि अिस बातकी कोशिश करनी चाहिअे कि जिस भाव या वस्तुके लिअे हमारे पास शब्द नहीं हैं अुनके लिअे हम अपनी सभी भाषाओंसे अुपयुक्त

निर्देशके अनुसार ढली हुअी अिन पद्धतियों और रीति-रिवाजोंमें अितिहासकी घटनाओंमें समय-समयपर परिवर्तन होते रहते हैं। किसी समय हम लोग कबीलोंमें बँटे हुअे थे। अब अतिशीघ्र अेक अैसा भी समय आनेवाला है जब कि सारे विश्वके लोगोंके अेक कुटुम्ब या विश्व-समाज (वर्ल्ड सोसाअिटी) के रूपमें परिणत होना अवश्यम्भावी है। जिस तरह हमारे समाजकी प्राचीन व्यवस्थासे लेकर आज तककी व्यवस्थाका विकास सदियोंके निरन्तर संघर्ष और समन्वयका फल है।

भारतीय विचार-धारा

भारतीय समाजकी व्यवस्था बिलकुल सुसंगठित है। अिस व्यवस्थाके अन्तर्गत विधि निषेधोंको लिये हुअे भारतीय धर्म मनुष्यको अपने जीवनकी प्रत्येक दशामें पुरुषार्थके अुच्च, अुच्चतर तथा अुच्चतम स्तर तक पहुँचानेमें सक्षम है। अिस धर्मके अनुष्ठानसे मानव-सहज दुर्बलताअें प्रत्येक दशामें न्यून, न्यूनतर और न्यूनतम होकर सर्वथा लुप्त हो जाती हैं। अिससे मनुष्य-जीवन प्रत्येक दशामें पवित्र रहता है। यह संगठन प्राचीन ऋषि-महर्षियों और अर्वाचीन साधकोंकी सतत साधना और अनुशीलनके द्वारा निष्पन्न सर्वोत्तम विचारोंका चिरमिलित रूप है। "सत्यं वद, धर्मं चर" ही अिसका मूल-मन्त्र है। अिसीलिअे हमारा धर्म सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक है। मनुष्यकी सर्वोत्तम शक्तियोंके विकास तथा पोषणके द्वारा व्यक्तिका और तद्द्वारा व्यक्तियोंकी समष्टि या समाजके विकासकी व्यवस्था ही हमारे मानुष-सन्ताका लक्ष्य रही है। भारतीय आदर्श सम्पूर्णतया सत्यकी गहरी नींवपर स्थित होनेके कारण नित्य है। यही सत्य भारतीयोंके भौतिक तथा आध्यात्मिक जीवनका ताना बाना है। पश्चिमी समाजोंमें आज जीवनके प्रति पर्याप्त मात्रामें अतृप्तिकी भावना दिखायी पड़ती है। क्योंकि अुनके आचार और विचारोंमें पार्थक्य है। आचार तथा विचारोंका सामंजस्य भारतीय सामाजिक जीवनकी विशेषता है। अतः यह पश्चिमी समाजके लिअे आदर्श बना हुआ है।

समाजकी वर्तमान स्थिति

अितना सब होते हुअ भी यह जानी हुअी बात है कि आज न पूर्वी देशोंकी सामाजिक स्थिति ही तृप्तिकर है, न पश्चिमी देशों की ही। क्योंकि वर्तमान दशामें समाजकी आवश्यक भलाअी तथा योग-क्षेम सध नहीं रहा है। अमरीकाकी अतुल सम्पत्ति, औद्योगिक कार्योंकी कभी न थमनेवाली हलचलें और संगठनकी असाधारण क्षमता या जिंग्लैंडकी सुसमृद्ध और विशिष्ट सांस्कृतिक परम्परा—अिन सबके होते हुअे भी ये दोनों राष्ट्र विश्व-भरमें अत्यन्त हीन अपराधोंके केन्द्र बननेसे बच नहीं पाये हैं।

डाक्टर अेलेक्सिज़ कैरेल महोदयकी चेतावनी

सुप्रसिद्ध नोबेल-पुरस्कारके विजेता समाज-दर्शन शास्त्रके निष्णात विद्वान् डाक्टर अलेक्सिज कैरेल (Dr. Alexis Carrel) महोदयके विचार अिस अवसर-पर ध्यान देने योग्य हैं। आपने पश्चिमी समाजकी वर्तमान दशाका विवरण संक्षेपमें यों दिया है —

"देशके मनीषियोंके मनमें यह सन्देह अुत्पन्न हो गया है कि वर्तमान सामाजिक दुर्दशाका निदान ठीक है या नहीं। क्या अिस दुर्दशाके कारण केवल आर्थिक या वित्तीय हैं? हम अपने अर्थशास्त्रज्ञोंको अुनकी मृगतृष्णा अब अज्ञान और राजनीतिज्ञ तथा धनाधिपतियोंको अुनकी मूर्खता तथा अवैध धन लिप्साके कारण दोषी ठहराये बिना कैसे रह सकते हैं? क्या आधुनिक जीवन-पद्धतिने समूचे राष्ट्रके बौद्धिक तथा नैतिक बलको घटा नहीं दिया है? तरह-तरहके गुंडोंका दमन करने और अपराधियोंसे लड़नेके लिअे प्रति वर्ष अरबों डालरोंका अपव्यय हम क्या करें? आज दिन भी गुंडे लोग दल बाँधकर बैंकोंको दिन दहाड़े सफलताके साथ लूटते हैं, पुलिसवालोंको मार डालते हैं, बच्चोंको बेचकर धन कमाते हैं या फिरौती ग्राहकोंके न मिलनेपर खिलाने-पिलानेके व्यय बचानेके लिअे अुन्हें मार भी डालते हैं। अिन बातोंको रोकनेके लिअे किये जानेवाले अपार व्ययके होते हुअे भी यह सब क्यों हो रहे हैं? सभ्य लोगोंमेंसे बुद्धि-भ्रष्ट और निर्बल-मनके

व्यक्ति अितनी सख्यामें कहाँसे निकल आये ? सारे ससारमें आज अशाति अपनी चरम-सीमाको पहुँच गयी है। क्या अिसके कारण केवल आर्थिक हैं या वैयक्तिक और सामाजिक भी हैं ? आशा है कि हमारी सभ्यतामें दीखनेवाले पतनके ये प्रारंभिक लक्षण हमें अिस बात-पर गभीरताके साथ विचार करनेको बाध्य करेंगे कि अिसमें हमारा अपना या हमारी सामाजिक सस्थाओंका कहाँतक हाथ है। समाजकी अिस दुर्दशाको दूर करके सामाजिक व्यवस्थाको सशक्त बनानेकी आवश्यकताको क्या हम अब भी अनुभव नहीं करेंगे ?"

[अज्ञात मानव (मॅन, दी अननोन) तेरहवाँ सस्करण, १९४८, पृष्ठ सख्या २५८]

यह चेतावनी पश्चिमी सभ्यताके अन्धानुकरणसे पूर्वी देशोंको बचानेके लिअे पर्याप्त है।

प्राच्य देशोंकी दशा

हम आज चीन और जापान जैसे पूर्वी देशोंकी सामाजिक स्थितिको बिलकुल ही अस्थिर पाते हैं।

विदेशी शासन अेव परतन्त्रताकी लंबी अवधिके बाद हम भारतीय अभी-अभी स्वतन्त्र हुअे हैं। आज भारतीय समाज-सुधारकों पर बड़ा भारी अुत्तरदायित्व आ पड़ा है। अुनको दूरदर्शिता, श्रद्धा तथा विवेकबुद्धिसे काम लेना चाहिअे। अिस तरह त्याग अेव सेवाकी मनोवृत्तिसे अुनको आगे बढ़कर विनयके साथ समाजकी सेवा करनी होगी। मेरा पूरा विश्वास है कि अिस महान् अेव पवित्र कार्यके निर्वाहके लिअे हम अपनेको हर तरहसे योग्य पाअेंगे।

समस्याकी व्याप्ति

डाक्टर रेकलैंज महाशयने अिस समस्याकी व्याप्तिके सम्बन्धमें बड़ी दक्षताके साथ निम्नलिखित मार्गभित बातें कही हैं —

"भारतकी सामाजिक अुन्नतिके लिअे हमें चाहिअे कि अेसी अेक वैज्ञानिक-समाज-सुधार-योजना तैयार करें जो हमारे देशके दार्शनिक लक्ष्यको लिये हुअे हो और जिसको लागू करनेमें सुविधा हो। आज प्रत्येक देशमें आवश्यक यह है कि आरक्षकी-विभाग (पुलिस-विभाग), अपराधियोंको सुधारनेवाली (बोर्स्टल-स्कूल जैसी) सस्थाओं और धारा-सभाओंके कार्योंमें अैसा सामञ्जस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो जिससे अेकका कार्य दूसरेका पूरक हो।"

डॉ रेकलैंज साहबके अिस कथनका प्रत्येक शब्द ध्यान देने योग्य है।

मुख्य सिद्धांत

समाज-व्यवस्थामें शिथिलता लानेवाली बातें समाजके भीतर भी होती हैं और बाहर भी। अन्दरकी बातको लीजिअे। निरन्तर "अपराध अेव कर्तव्य-भ्रष्टताके" लिअे बार-बार दड भोगनेवाले बच्चों और बालिग लोगोंको सुधारनेकी बातपर आज जोर दिया जा रहा है। अिस समस्यामें दो मुख्य बातें अन्तर्निहित हैं। बालिगोंमें बार-बार अपराध करनेकी प्रवृत्तिको दूर करना और बच्चोंमें कर्तव्य-भ्रष्टताकी प्रवृत्तिका निवारण करना—भारतीय दृष्टिसे सामाजिक जीवनमें फिरसे पवित्रता लाना अिसीको कहते हैं। यह बात हमारे देशके लिअे कुछ नयी नहीं है। अपने प्रतिदिनके आचरणसे सामाजिक जीवनको शुद्ध बनाये रखना सदियोंसे हमारा ध्येय रहा है। पाठशाला तथा मठ जैसी सास्कृतिक सस्थाओंकी सहायतासे छोटी अुम्रके बच्चोंके आचार-विचारपर नियन्त्रण किया जाता है। अिससे बाल्यकालमें ही अिस प्रकारकी सस्थाओंमें शिक्षित होनेपर बच्चे क्रमश: नौजवान और बूढ़े होनेपर भी शिस्तके पाबन्द होनेके कारण सदाचार अेव शुद्ध आचार-विचारके सहज ही अभ्यस्त हो जाते हैं। अुनका मन कभी कुपथपर पाँव नहीं रखता। अिससे लोगोंके मनमें भिक्षु, श्रमण, साधु, सन्यासी, जगम, यति, हरिदास और शिव-शरण जैसे चलते-फिरते महात्माओंके प्रति आदर-बुद्धि अुत्पन्न होती है और अभी तक होती आयी है। अैसे लोग समाजमें कभी बोझ बनकर नहीं रहे। अुनका समाजमें हर कहीं आदर-सत्कार होता आया है और अुनकी सेवाओंके हम सदासे ऋणी हैं। ध्यानकी देनेकी बात है कि पाँचवीं और सातवीं सदियोंके चीनी यात्री और पन्द्रहवीं और सोलहवीं सदियोंके पुर्तगाली यात्रियोंने हमारी सुव्यवस्थापूर्ण सामाजिक-व्यवस्थाकी प्रशसा की थी।

कार्यकी योजना

पिछले सम्मेलनके अवसरपर अेक नौसूत्री-कार्य योजना स्वीकृत हुआी थी। अुसका सार निम्नलिखित है —

(अ) साधारण

१ भिन्न भिन्न राज्योंमें अपराधोंकी रोकथाम और कर्तव्य च्युत व्यक्तियोंकी संख्या कम करनेके उपायों तथा साधनोंमें आवश्यक सलाह और परस्पर सहायता देनेवाली अेक केन्द्रीय योजना।

२ न्यायालयोंसे राज्यके सभी बंदी अेक विशेष कारागारमें साथ भेजे जाअें जहां अनके अपराधोंके कारणोंका निदान किया जाअे। अैसे कारागारमें अपराध निदान विज्ञानके ज्ञाता मनोवैज्ञानिक विश्लेषणके द्वारा मानसिक रोगोंकी चिकित्सा करनेवाले समाज दर्शन वेत्ता मनःशास्त्री समाज-सुधारक और दूसरे लोग अपराधियोंके सुधारके लिअे नियुक्त रहें।

३ सामाजिक प्रतिरक्षा-योजनाके अनुसार काम करनेवाले अधिकारी तथा हर तरहके कार्यकर्ताओंको तैयार करनेके लिअे स्नातकोत्तर-काल-स्तरकी शिक्षाकी व्यवस्था।

(आ) बालक

१ केन्द्रीय सरकारकी तरफसे बालकोंसे सम्बन्ध रखनेवाली आधुनिक विधि (A Central Modern Children Act) का निर्माण।

२ कर्तव्य च्युत बालकों (या बाल-अपराधियों) का सुधार कर अुन्हें सभ्य समाजमें रहने योग्य बनानेके लिअे कुछ अुपाय अेवं सिखानेवाली संस्थाओंकी योजना और बाल-अपराधियोंके विरुद्ध शिकायतोंकी छान बीन करनेमें पुलिसवालोंकी सहायता करनेवाली संस्थाओंका निर्माण।

३ बाल अपराधियोंके अपराधोंपर विचार करनेवाले विशेष न्यायालयोंकी योजनाके साथ-साथ प्रत्येक जिलेमें अपराधियोंको सुधारनेवाली शिक्षण-संस्थाओंकी स्थापना।

४ बाल अपराधियोंके न्याय विचार करनेवाले न्यायालयोंमें स्त्री मैजिस्ट्रेटोंकी नियुक्ति।

(अि) नौजवान

अपराधियोंके अपराधोंपर अन्तिम निर्णय करनेके पूर्व अुनकी स्थितिको नियन्त्रित करनेवाली राज्यव्यापी विधि (Probation Act) की व्यवस्था और अपराधियोंके परखनेके-कालमें अनकी देखरेख करनेवाले विशेष प्रकारके निरीक्षकोंकी सभी जिलोंमें नियुक्ति।

(अी) वयस्क (बालिग)

अपराधियोंकी सजाकी मियादके अन्दर अपराध वृत्तियोंको सम्पूर्णतया मिटानेके द्वारा अन्हें सुधारकर सभ्य समाजमें रहने योग्य नागरिक बनाकर भेज सकनेवाले प्रमाणानुकूल कारागार स्थापित करनेकी योजना।

ये सिफारिशें साधारण हैं पर जिस स्थितिमें सुधार-कार्यका श्रीगणेश करनेके लिअे ये तात्कालिक रूपमें पर्याप्त हैं। अपराधियोंको सुधारनेके लिअे योग्य कार्यकर्ताओंवाली बुनियादी शिक्षण-संस्थाओंको हमारे देशमें स्थापित करनेके अुद्देश्यसे ये सिफारिशें की गयी हैं। जिन सिफारिशोंमें अेक कमी है। वह है केन्द्र तथा राज्योंमें योग्य समाज-सुधारकोंको लिये हुअे समाज सुधार विभागकी स्थापना और अुसका नियन्त्रण अेवं पथ प्रदर्शन करनेवाले समाज सुधार-सचिवालय अेवं मन्त्रीकी नियुक्तिका अभाव। अिन सिफारिशोंके अन्तर्गत अिस बातका अुल्लेख न होना खटकता है। अिस कमीके कारण शायद जिन सिफारिशोंपर अमल करनेमें कठिनाअियां पेश आती हों। अिन सालोंमें गत दो वर्षोंमें कार्यकी जो प्रगति हुआी है अुसका सिंहावलोकन करनेपर हमको वास्तविक स्थितिका पता चलता है। तब कहीं हम अगले वर्षकी कार्य योजनापर समुचित विचार कर सकेंगे।

कुछ आवश्यक कार्य

बालकोंके साथ समुचित व्यवहार करनेकी आवश्यकता सब विदित है। अपराधियोंको सुधारने योग्य शिक्षा दो प्रकारकी है। अेक विधियों द्वारा सद्वृत्तियोंकी तरफ आगे बढ़नेके लिअे प्रेरित करना है। दूसरी शिक्षा द्वारा अपराधोंका नियन्त्रण करना है।

हमारा प्रस्तुत अुद्देश्य अपराधियोंकी वृत्तियोंको अपराध करनेकी तरफसे मोड देना है । पश्चिमके बालकोंको निम्नलिखित बातोंसे कडाअीके साथ रोक दिया जाता है। अिसपर हमें भी तुरत ध्यान देना चाहिअे ।

(१) तमाखूका अुपयोग
(२) होटल जानेका अभ्यास
(३) सिनेमा-घरोंमें प्रवेश

बालकोंकी बीडी सिगरेट पीनेकी बुरी लतको रोकनेके लिअे जो प्रयत्न किये जा रहे हैं वे अत्यन्त अपर्याप्त हैं। हमें और अधिक जागरूकताके साथ अिस कार्यमें लग जाना चाहिअे । सोलह वर्षसे कम अुम्रवाले बालकोंका अपने मां-बापके साथके बिना स्वयं ही काफी-होटल या सिनेमा-घर जाना आस्ट्रियामें विधि-द्वारा निरोध किया गया है। वहाँ अिस विधिका कडाअीके साथ पालन किया जा रहा है। हमारे देशमें भी यही करना होगा। हमें क्या-क्या करना है, अुनकी लबी सूची यहाँ मैं देना नहीं चाहता । केवल अुदाहरणार्थ मैंने अूपरकी दो-चार बातें कही हैं।

[मैसोर

६. हिन्दी व्यापक बने-समृद्ध बने !

: डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल :

गत मासमें आगरा विश्व-विद्यालयके अन्तर्गत संस्थापित हिन्दी विद्यापीठकी व्याख्यान-मालाका प्रारंभ करते हुअे सुप्रसिद्ध पुरातत्त्व-विद्वान डॉ. वासुदेवशरणजी अग्रवालने कहा —

राष्ट्रभाषा हिन्दीको व्यापक व समृद्धिशाली बनानेके लिअे प्रान्तीय भाषाओंका हमें आदर करना होगा। अुन भाषाओंके शब्दों, लोकोक्तियों, मुहावरों और भाषा सम्बन्धी विशेषताओंको अपनाना होगा और अुनमें जो अनेक प्रकारका अलभ्य साहित्य अुपलब्ध है, अुसे भी हिन्दी भाषामें अनूदित करके हमें अपनी राष्ट्र-भाषाके भडारको पूर्ण करना होगा। जब हिन्दीके साधक यह सब कर सकेंगे तभी वह अेक विशाल राष्ट्रके अनुरूप, सच्चे अर्थोंमें भारतकी राष्ट्रभाषा कहलानेकी अधिकारिणी हो सकेगी।

भारत सदासे विभिन्न धर्मों और विविध भाषा-भाषियोंका देश रहा है। आज भी यहाँ अलग-अलग प्रान्तोंमें, जिनकी अलग-अलग भाषाअें—बोलियाँ—हैं, अैसे विविध धर्मावलम्बी जन रहते हैं। अिन प्रान्तीय भाषाओंका अपने-अपने क्षेत्रमें महत्त्वपूर्ण स्थान है। हिन्दीही अेक अैसी भाषा है, जिसके बोलनेवालोंकी और समझनेवालोंकी सख्या सबसे अधिक है। अिसीलिअे अिसको राष्ट्रभाषा होनेका गौरव मिला। पन्द्रह वर्षकी अवधिमें अिसे अँग्रेजीका स्थान लेना है। अिस १५ वर्षकी अवधिमें अिस राष्ट्रभाषाको अेक व्यापक, शक्ति-शाली और समृद्धिशाली भाषा बनाना है। प्रान्तीय भाषाओंसे अिसका कोअी विरोध नहीं। प्रांतीय भाषाअें अपने क्षेत्रमें विकसित होंगी, अुनकी विशेषताओंको अपनाकर अपना भडार बढाना हिन्दीका काम होगा। सत्य सकल्प चाहिअे तभी साहित्यका निर्माण होगा।

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

साहित्य, शिक्षा और संस्कृतिः

(लेखक —श्री डॉ. राजेन्द्रप्रसाद)

[प्रकाशकः आत्माराम अेण्ड सन्स दिल्ली। मूल्य ५), पृष्ठ संख्या १८८]

अिस पुस्तकमें राष्ट्रपति डॉ राजेन्द्रप्रसादके समय-समयपर दिये गये भाषणोंका सुसम्पादित-संग्रह है। अिनके सम्पादनमें आचार्य शिवपूजन सहाय और डा नगेन्द्रका योगदान है। लेखकके नाते डा. राजेन्द्रप्रसादका स्थान हिन्दी-साहित्यमें बहुत ही अुच्च अेवं महत्वपूर्ण है। अेक गम्भीर चिन्तन, प्रगाढ विद्वत्ता और स्पष्ट अभिव्यक्ति अुनकी अपनी विशेषता है। अुनके विचार केवल हिन्दी साहित्यकी ही वस्तु नहीं, वरन् विश्व साहित्यकी वस्तु हैं। भारतीय जीवन, संस्कृति और दर्शन अुनके व्यक्तित्वके प्रत्येक पहलूमें स्पष्ट झलक आते हैं। आज हिन्दीको अैसी कोटिके अनेक लेखकोंकी आवश्यकता है। हिन्दी साहित्यकी बहुमुखी वृद्धिके लिअे डा राजेन्द्रप्रसादकी कोटिके विद्वानोंकी आवश्यकता है जो अध्ययन, अनुभव और गंभीर चिंतन द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दीको प्रेरणात्मक-साहित्य (Literature for inspiration) प्रदान कर सके तभी वह सही अर्थोंमें राष्ट्रीय-साहित्यवाली राष्ट्र-भाषा बन सकेगी।

अस्तु, प्रस्तुत पुस्तकमें शिक्षा, साहित्य और संस्कृति अिन तीन विषयोंपर निबन्ध हैं। राष्ट्रपतिने अपनी भूमिकामें स्वयं लिखा है—'साहित्य शिक्षा और संस्कृति ये तीन व्यापक शब्द और विषय हैं। जाति-धर्म और देश अिनमें निहित है।" जिस पृष्ठभूमिसे यदि हम अिस पुस्तकका अध्ययन करें तो हमें भारतकी शिक्षा, साहित्य और संस्कृतिका यों कहिअे कि वर्तमान भारतकी सभी ज्वलन्त समस्याओंपर निष्पक्ष विवेचन अुपलब्ध होता है।

डा० राजेन्द्रप्रसादके विचारोंमें बहुमुखी सामञ्जस्य है। जैसे कि अुनका व्यक्तित्व भिन्न भिन्न रूपों और नामोंमें मूलतः अक्षुण्ण हो प्रकृतिमें शुद्ध भारतीय है। भारतकी परम्परागत सांस्कृतिक अुदारताकी दृष्टिसे वे साहित्यको देखते हैं और भाषाकी समस्याओंपर विचार करते हैं। साहित्यमें संचित आदर्शों द्वारा वे शिक्षा और संस्कृतिकी समीक्षा करते हैं।

साहित्यकी चर्चा करते हुअे अुन्होंने अुसके अैतिहासिक विकास और राजनैतिक प्रभावोंका अुल्लेख किया है। अिस सम्बन्धमें अुन्होंने विश्वके सभी महान राष्ट्रोंके साहित्य और अुसपर पड़े अैतिहासिक, राजनैतिक प्रभावोंका विवेचन किया है और समाजके विकासमें भाषा कितना महत्वपूर्ण साधन बनती है अिसके तुलनात्मक अुदाहरण दिये हैं। हिन्दीके विषयमें, अुसके राष्ट्रभाषा बनानेके अधिकारके विषयमें अुन्हें लेश मात्र भी संदिग्धताका अनुभव नहीं हुआ। अुन्हें अिस बातका खेद है कि ("यदि देशी भाषाओं द्वारा राजनीतिक क्षेत्रमें काम किया गया होता तो आज देशकी परिस्थिति कुछ और ही होती।") आज जब हमारे सामने हिन्दीके अधिकाधिक विकासका प्रश्न अुपस्थित

है तो हमारे अितिहासकी देन अुर्दूके प्रति डॉ० राजेन्द्र-प्रसादके विचार अत्यन्त मननीय हैं। अुनका विचार है —"हिन्दी और अुर्दू चाहे अुनकी अुत्पत्ति और विकास जिस क्रम और रीतिसे हुआ हो—दो भिन्न भाषाअें नहीं हैं।" अुर्दूके कोष "फरहंगे आसफिया" से यह बात सिद्ध हो जाती है। अिसमें ५४ हजार शब्दोंमेंसे लग-भग ३२ हजार हिन्दीके हैं। भाषाओंकी जटिलता और क्लिष्टताकी प्रवृत्तिके डॉ० प्रसाद विरोधी हैं। संस्कृत और फारसीके शब्दोंकी भरमारने ही अुर्दू हिंदीमें भेद अुत्पन्न किया है। अुनका कहना है 'अुर्दूके अच्छे लेखक अपनी भाषाको जटिल बनानेके पक्षपाती नहीं हैं। सभी भाषाओंके सुलेखक अिस सम्बन्धमें अेक ही मत रखते हैं कि साहित्यकी अुत्तमता सरलता और प्रसाद गुणमें ही है।'

साहित्यके अनेक अुदाहरणोंसे अुन्होंने अपने विचारोंकी पुष्टि की है। हिन्दीकी व्यापकताके विषयमें चर्चा करते हुअे डॉ प्रसाद कहते हैं कि—"हिन्दी भी यदि जीती-जागती भाषा होना चाहती हैं तो अुसे अपने शब्द-भंडारको बढ़ाना होगा .. बहिष्कारकी नीतिको कदापि स्वीकार नहीं कर सकती और न विदेशी शब्दोंको बाहर रखकर वह अपनी अुन्नति कर सकती हैं।"— भाषाका शास्त्रीय विवेचन करते हुअे अुन्होंने सूर, तुलसी बिहारी आदिके अुदाहरण देते हुअे हिन्दीके अनुचित संस्कारके कट्टरपन्थी आन्दोलनके प्रति स्वाभाविक चिंता व्यक्त की है और देहाती बोलियोंकी शक्ति और समृद्धिसे लाभ अुठानेकी ओर मार्गनिर्देश किया है।

हिन्दीके विकासके लिअे अुसके साहित्यकी बहु-मुखी अभिवृद्धि परम आवश्यक है। अिसे विस्तृत क्षेत्र और विषय तथा अनुवादकी ओर हिन्दी-लेखकोंको प्रेरित कर पूरा किया जा सकता है। लेखकके सुझाव अिस सम्बन्धमें बहुमूल्य हैं। ललित-साहित्यके दायरेमें ही हिन्दी-साहित्यको देखना अब अुपयुक्त नहीं है। अब अन्वेषण और चिन्तनके अनेक विषय-सम्बन्धी ग्रन्थोंकी आवश्यकता है। राष्ट्रभाषामें राष्ट्र-जीवनके सभी पहलुओंपर अुत्तम साहित्य लिखा जाअे तभी हिन्दी अपना पद सम्मानपूर्वक स्थायी रख सकेगी।

अिन विचारोंके अतिरिक्त लेखकोंके दायित्व, ब्रज साहित्य और संस्कृत-साहित्यपर भी अुन्होंने बहु-मूल्य विचार व्यक्त किये हैं।

डॉ. राजेन्द्र प्रसादके शिक्षा सम्बन्धी विचार विख्यात हैं। वे आजकी शिक्षाको सच्चे मानेमें विकासका साधन नहीं मानते। गांधी-दर्शन अुनकी आत्मामें रमा है अिसीलिअे वे शिक्षाका देशकी संस्कृति और सामाजिक अपेक्षाओंसे समन्वय करनेके पक्षपाती हैं। विश्व-विद्यालयोंमें देशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा देनाही अुचित समझते हैं। "बुनियादी तालीम" अुनकी दृष्टिसे आजके भारतमें बहुत लाभदायक सिद्ध होगी। विश्व विद्यालयोंकी शिक्षाकी चर्चा करते हुअे वे कहते हैं—'देशमें केवल बौद्धिक शिक्षाको महत्त्व न देकर कुछ नया ढंग निकालना है जिससे वह भेद जो आज शहरी और ग्रामजीवनमें पैदा हो गया है— दूर हो जाअे।" समाजके विभिन्न क्षेत्रोंकी आवश्यकताओंसे विश्व विद्यालयका सम्बन्ध स्थापित करनेसे शिक्षामें अपव्यय कम हो जानेकी सम्भावनाकी ओर अुन्होंने हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। डॉ. प्रसादका अध्यात्म-प्रेम सहज-भारतीय है। भारतीय संस्कृतिकी चर्चामें अुन्होंने 'नैतिक-चेतना'का अुल्लेख किया है जिससे भारत सदियोंसे प्रेरित होता आ रहा है। 'विक्रम कीर्ति-मंदिर' और 'सोमनाथमें महादेव प्रतिष्ठा' अिन दोनों लेखोंमें डॉ. प्रसाद 'भारतीय राजधर्म' और 'धार्मिक सहिष्णुता'का विशद् विवेचन करते हुअे भारतकी प्राचीन संस्कृति-परंपरा और दृष्टिकोणकी अुपादेयताकी ओर हमारी पश्चिम-प्रभावित दृष्टिको बार-बार बलसे खींचते हैं। यह पुस्तक निस्संदेह हिन्दी-साहित्यके लिअे अमूल्य देन है। यदि हिन्दीके पाठक अिस तरहकी पुस्तकोंको खरीदकर अपने पढ़नेका दायरा बढ़ा सकें तो हिन्दीके लिअे यह परम सौभाग्यकी बात होगी। अितिहास, भाषा और शिक्षाके विद्यार्थियोंके लिअे यह पुस्तक भारतकी वर्तमान विचार-धाराकी सच्ची परिचायक है। अैसी चिन्तनपूर्ण ग्रन्थ भारतके नवयुवकोंके हाथ पहुँचना और पहुँचाना आवश्यक है।

अिस पुस्तकके प्रकाशक अुन अिनेगिने भारतीय हिन्दी प्रकाशकोंमेंसे अेक प्रतीत होते हैं जो साहस और धैर्यसे गंभीर साहित्य मुद्रित करते जा रहे हैं। पुस्तककी छपाअी बहुत सुन्दर है और गेट-अप कलापूर्ण। अच्छे पेपरपर छपी होते हुअे भी अिसकी कीमत केवल ५) है। फिर भी अिसका अेक और सस्ता संस्करण निकला जाअे तो अच्छा हो।

—गोपाल शर्मा, अेम. अे.

सम्मेलन-भवनका शिलान्यास :

अब मध्यप्रदेशकी अेक मात्र हिन्दी साहित्यिक संस्था प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलनका अपना भवन शीघ्र ही बनकर तैयार होगा। अिस प्रान्तके हिन्दी-प्रेमियोंकी चिर-कालीन अभिलाषा पूरी होगी। यह भवन सचमुच भव्य भवन होगा। अिसकी विशेष अैतिहासिक भव्यता तो यही है कि आधुनिक भारतके और दुनियाके अेक सबसे बडे भव्य साहित्यिक पुरुष हमारे प्रधान-मंत्री प्रियदर्शी पंडित जवाहरलाल नेहरूने गत जनवरीकी दिनांक पंचमीको अिस भवनकी आधार-शिलाकी प्रस्थापना की। शिलान्यासका यह अुत्सव-समारोह अपने आपमें बड़ा भव्य था। प्रान्तके साहित्य, कला और संस्कृतिके प्रेमी और साधक श्री ब्रिजलालजी बियाणीका यह संकल्प भी कि अुनके सभापतित्वमें प्रादेशिक साहित्य-सम्मेलनका अपना अेक अैसा भवन हो जहां प्रान्तकी दो बडी हिन्दी-मराठी भाषा परम्पराअें अपनी समृद्धिसे साहित्यके भाण्डारको भरती रहें और आपसमें सत्य शिव-सुन्दरका अच्छी तरह आदान-प्रदान करें, यह संकल्प भी भव्य है। लक्ष्मीके जिस पूतने लाख-डेढ़ लाखका सम्पत्तिदान अिस भवनके लिअे दिया, धनका वह अंश भी भव्य है। यह हिन्दी-भवन शीघ्र बनकर तैयार हो। यहां अितना ही हमारा नम्र निवेदन है, सुझाव है--कि अिस भवनका विशुद्ध नाम "हिन्दी-भवन" ही रहे। अिसीमें अिस भव्य भवनकी शोभा है अिसकी भव्यता है। राष्ट्रकी, देशकी अेक मात्र राष्ट्रभाषाकी यह संस्था है। यह कोअी धर्मशालाकी अिमारत तो नहीं है। दानधर्मकी, धर्मादेकी संस्था भी नहीं है। लक्ष्मीके अुस लाडले सुपुत्रका नाम स्वर्णाक्षरोंमें और अेक भव्य तैलचित्र जिसने बड़ी धनराशि अिस भवन निर्माणके लिअे दी हैं, भवनके सभागृह (हॉल) में अंकित किया जाअे। यही अुस व्यक्तिका सबसे बडा सम्मान हैं। अुसके सामने ही अत्यन्त समीप, मराठीके विदर्भ-साहित्य-मन्दिरका भव्य भवन है।

हिन्दी साहित्य-सम्मेलनका यह भवन अेक पवित्र जीवित संस्था हो। राष्ट्रभाषा हिन्दीको सशक्त, समर्थ बनानेकी, क्रियाशील निर्माणकी प्रवृत्तियां यहांसे चलें, जिससे पन्द्रह वर्षकी अवधिसे पूर्व ही हिन्दी और देवनागरी दोनों राष्ट्रकी भव्य भाषा और भव्य-लिपि बन जाअें। यह संस्था निराधार गरीब निराश्रय लेखकों और साहित्य-सेवियोंकी सहायता करे। दलबन्दीके दल-दल और तू तू मैं मैं, मिथ्या प्रशंसा, पक्षपात और राजनीतिक दावपेंचों तथा हथकंडोंसे अिस साहित्य संस्थाकी सदैव रक्षा की जाअे और अिसे स्वच्छ, स्वस्थ साहित्यिक, सांस्कृतिक संस्था ही रहने दिया जाअे।

मध्य प्रदेश शासन साहित्य परिषद :

केन्द्रीय सरकारके साथ भारतके विभिन्न राज्योंकी सरकारोंने अपने-अपने राज्यमें लोक-

प्रिय साहित्य-सृजन और साहित्यकारोंके प्रोत्साहनके लिअे कुछ योजनाअें कार्यरूपमें परिणत कर दी हैं। बिहार और अुत्तर-प्रदेशकी सरकारोंने अिस दिशामें आगे कदम बढाया है। साहित्यकारोंका राजकीय अेवं आर्थिक स्वागत-सत्कार होना भी प्रारंभ हो गया है। अिस योजनामें मध्यप्रदेशका शासन क्यों पीछे रहता। यह बहुत पहले हो जाना चाहिअे था। खैर, 'देर आयद दुरुस्त आयद'। हिन्दी और मराठीका संगम-स्थल है मध्यप्रदेश। प्रान्तीय सरकार दोनों-हिन्दी और मराठीका समदृष्टिसे विकास करना चाहती है। अेकका राष्ट्रभाषाके और दूसरीका प्रान्तीय भाषाके रूपमें। अुत्तम साहित्यके लेखकोंको प्रोत्साहन देनेके लिअे, १ लाख रु० मेंसे १०—१० हजार रु० की निधि अुसने घोषित की है। और ८० हजार रुपया साहित्य-निर्माणके लिअे, अुत्तर-दक्षिणकी प्रादेशिक भाषाओंसे अभिजात हिन्दीमें और मराठीमें अनुवादों अेवं मौलिक हिन्दी-मराठी ग्रन्थ रचनाके प्रकाशनके लिअे सुरक्षित रखा गया है। अिसे शीघ्रही कार्यान्वित करनेके लिअे मध्यप्रदेशकी सरकार समुत्सुक प्रतीत होती है। अुसने अिस योजनाका संचालन करनेके अुद्देश्यसे "मध्यप्रदेश-शासन साहित्य-परिषद" की स्थापना की है। अिसके संगठनमें शासनके मुख्यमंत्री सभापति, शिक्षामंत्री, अिन दोनोंके दो अुपमंत्री, चार साहित्यकार, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलनके सभापति, विदर्भ-साहित्य-संघके सभापति, सागर-विश्वविद्यालयके अुपकुलपति, नागपुर विश्वविद्यालयके अुपकुलपति, ये सदस्य होंगे और राज्यके शिक्षासचिव अिस परिषदके मंत्री, भाषा-विभागके संचालक 'कोषाधिकारी' तथा अुपसंचालक अिस परिषदके अुपमंत्री होंगे।

अबतक लक्षण तो अच्छे ही दीख पड़ रहे हैं।

हम तो अिस संगठनमें मध्यप्रदेश शासनको अेक सुझाव देना चाहेंगे कि वह राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धाको भी अपने संगठनमें अेक प्रतिनिधित्व देवे, जो भारतके कअी हिन्दीतर राज्योंमें राष्ट्रभाषा हिन्दीका पिछले १६ वर्षोंसे काम कर रही है और भारतकी विभिन्न प्रान्तीय भाषाओंका सम्मानपूर्वक आदान-प्रदान करती है।

"स्वर्गीय वैशंपायन-स्मृति-अंक":

अपना पद आप निर्माण करनेवाले और जीवनकी अन्तिम श्वास छोडने तक राष्ट्रभाषा हिन्दीकाही सक्रिय, सेवामय, मंगल-चिन्तन करनेवाले मराठी और महाराष्ट्रके देशभक्त श्री ग. र. वैशंपायनजी अब अिस संसारमें नहीं हैं। गत् अक्टूबरमें दिनांक ९ को ६१ वर्षकी अुम्रमें, लम्बी बीमारीके बाद आपका निधन हो गया। जबसे स्वर्गीय वैशंपायनजीने होश सँभाला था, वे राष्ट्रसेवाके व्रती, महा देशभक्त और कठोर कारावासके निर्भीक प्रवासी थे। पूनाकी लब्ध-कीर्ति प्रमुख हिन्दी-प्रचार संस्था "हिन्दी प्रचार संघ"के वे संस्थापक थे। अपने सभी स्नेही मित्रों और साथियोंको असमयमें वियोग-दुखमें डुबोकर वे स्वर्गवासी हुअे। अुनकी राष्ट्रभाषा-सेवा सदैव अैतिहासिक स्वर्णाक्षरोंमें अंकित रहेगी। हमारी सहयोगिनी 'जय-भारती'ने अुनका 'स्मृति-अंक' प्रकाशितकर श्रद्धांजलि अर्पित की है। स्व० वैशंपायनजीकी हिन्दी-सेवाका सच्चा स्मारक अुनका 'हिन्दी-प्रचार-संघ' है, अुसको स्थाअी अेवं परिपुष्ट बनाया जाअे। सभी राष्ट्रभाषाके कर्मी अिस 'स्मारक'में अपनी-अपनी श्रद्धांजलि प्रदान करें।

अपनी-अपनी सराहना !

हमारा यह मतलब नही कि हम 'अपने मुंह मियाँ मिठ्ठू' बने । 'राष्ट्रभारती' की भारतीय साहित्यके क्षेत्रमें की गयी सेवाओंकी, अुसकी लोक-प्रियताकी, समय-समयपर अपने आप सराहना होनी ही रहती है । अिसका सच्चा और समस्त श्रेय तो अुन लेखकोको है जो 'राष्ट्रभारती' पर कृपा करते रहते है । बडे-बडे लब्ध-प्रतिष्ठ लेखक तो सदैव हमारे श्रद्धा-आदरके पात्र हैं ही, साथ ही हम कृतसकल्प—निस्सशय हैं कि 'राष्ट्रभारती' में अुठती हुअी पीढीको, नयी पौधके, अुदीयमान लेखकोको भी सर-आँखोपर रखेंगे । शर्त अितनी ही कि अुनकी कृतियोम स्तर, विषय और शैलीकी दृष्टिस वे हमें पट जाअें, फिर वे रचनाअें चाहे महलोसे आअें या किसानो मजदूरोकी कुटियासे आयी हुअी हो। जहाँ धन्यवादपूर्वक लौटानेका सम्पादकका अधिकार है वहाँ अपने लेखकोसे हाथ पसारकर माँगनेका भी हक है सम्पादकको । राष्ट्रभारतीमे कभी-कभी अच्छी चीजें जो छप जाती है तो अुनकी प्रशसा की जाती है,अुन चीजोका अुल्लेख किया जाता है । सुप्रसिद्ध साहित्यिक सम्पादक प्रवर श्री देवेन्द्र सत्यार्थीजीने "आजकल" मे, प्रयागकी हमारी बुजुर्ग मासिक श्रद्धास्पद "सरस्वती" मे भी अिसी (जनवरी १९५४ का अक देखें और पिछले अकोमें भी) समय-समयपर 'राष्ट्रभारती' मे प्रकाशित सामग्रीकी सराहना—सम्यक् अर्हणा की जाती है। सहयोगी लेखक बन्धु पत्र भेजकर अुस चीजकी तहेदिलसे दाद देते हैं । 'राष्ट्रभारती' के पिछले जुलाअी ५३ के अकमें हिन्दीके अुदीयमान कहानी लेखक श्री नन्दकुमार पाठकको अेक मार्मिक कहानी "अिन्सानका बच्चा" प्रकाशित हुअी थी । वह पसन्द की गयी । महान कहानीकार कलाकार यशपालजीने, पटनाकी "अवन्तिका" के यशस्वी सम्पादक साहित्याचार्य श्री लक्ष्मीनारायण 'सुधाशु' जीने, कानपुरकी श्रेष्ठ सचित्र "सुमित्रा" के विवेकशील सम्पादक विट्ठल शर्माजीने और अकोलाके साहित्य सस्कृतिके नव प्रवाह रूप "प्रवाह" के नवनीत सम सुकोमल सम्पादक सुकवि श्री शिवचन्द नागरने "अिन्सानका बच्चा"—कहानीकी भावना, मार्मिकता, प्रभाव, लेखन, मनोविश्लेषण और दुनियाकी मान्यताओंको मिटा देनेका भीषण सकल्प, माताके वात्सल्यका चित्रण, कहानी साहित्यका अेक नया प्रयोग, कल्पनाका नया कूचा, जीवनकी समाजगत विषमताओका सजीव चित्रण आदि-आदिको भलीभाँति सराहा है, दिलखोल प्रोत्साहित किया है ।

—ह० श०

× × ×

राष्ट्रभाषा हिन्दीका राजनैतिक पहलू :

अिसमें सदेह नही कि अब राष्ट्रभाषा-हिन्दीका प्रश्न राजनैतिक प्रश्न बन गया है। विधानमें हिन्दीको भारतीय सघकी भाषाके रूपमे स्वीकार किया गया है, अिसलिअे अुसका राजनैतिक पहलू सबकी दृष्टिमें आया है। भारतकी अेक राष्ट्रीयताके सबधमें जिनका आग्रह रहा, वे, हिन्दीको राष्ट्रभाषाके नामसे ही जानते हैं और अुसे सच्ची राष्ट्रभाषा अर्थात् भारतकी जनताकी सास्कृतिक तथा परस्परके व्यवहारकी भाषा बनानेके प्रयत्नमें ही लगे हुअे हैं। अुनके प्रयत्नोंके कारण राष्ट्रभाषाका प्रचार तथा प्रसार भी अच्छा हो रहा है । परन्तु अिधर कुछ वर्षोमे प्रान्तीय भावनाअें प्रबल हो रही है, अुसके कारण तथा

जिस काल्पनिक भयके कारण भी कि भारतीय-संघकी भाषा हिन्दी बननेपर, अन्य प्रान्तवालोंको राज्यकी सेवामें हिन्दीभाषी प्रजाके साथ स्पर्धा करनेमें असुविधा होगी कहीं-कहीं हिन्दीका सख्त विरोध किया जा रहा है। विरोध करनेवाले अनेक प्रकारकी दलीलें पेश करते हैं। अुनकी सबसे बडी दलील यह है कि "हिन्दीको ही राष्ट्रभाषा क्यों कहा जाअे, क्या दूसरी भारतीय भाषाअें अराष्ट्रीय हैं? प्रत्येक प्रान्तकी अपनी भाषा ही अुस प्रान्तकी राष्ट्रभाषा हो सकती है"। अैसी दलील देकर वे यह भूल जाते हैं कि अिस तर्कमें तो वे प्रत्येक प्रान्त को अलग 'राष्ट्रका' रूप दे रहे हैं। हिंदुस्तानमें पाकिस्तान अलग हुआ, अुसका अनुभव कैसा दुखद तथा करुणाजनक रहा— यह तो हम सभी जानते हैं। भारतके टुकडे अब नहीं किये जा सकते और न करने ही चाहिअे। भारत अेक राष्ट्र बना रहे और अुसके निर्माणमें राष्ट्रभाषा सहायक हो, अिसीलिअे तो सारे भारतके लिअे अेक राष्ट्रभाषाकी आवश्यकता है। यही राष्ट्रभाषाका सबसे महत्वपूर्ण राजनैतिक पहलू है। हम अुसे कभी भुला नहीं सकते। यदि हमने अुसे भुला दिया, तो वह राष्ट्रके प्रति द्रोह होगा और अुससे पनपते हुअे राष्ट्रको हम हानि ही पहुँचाअेंगे।

हमारी मर्यादा:

परन्तु राष्ट्रभाषाके कार्यकर्ताओंकी अपनी मर्यादा है। राजर्षि टंडनजीने अभी ग्वालियरमें भाषण करते हुअे कहा कि हिन्दीका भी अेक (राजकीय) दल तैयार करना होगा। सम्भवतः अिससे अुनका अभिप्राय राष्ट्रभाषाके राजनैतिक पहलूपर लोगोंका ध्यान आकर्षित करनेका था। जो लोग राजकीय क्षेत्रमें कार्य करते हैं, राष्ट्र-भाषा हिन्दीके राजकीय पहलूको महत्ता समझते हैं, अुसके प्रति केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारोंकी अुदासीन वृत्तिको जानते हैं, और प्रान्तीय भावना या दूसरे कारणोंसे अुसके प्रति कुछ लोगोंका विरोध भी देखते हैं, अुन्हें वे सावध जाग्रत करना चाहते हैं। श्री टण्डनजी चाहते हैं कि यदि आवश्यकता हो तो वे सब अेक होकर राष्ट्रभाषाके प्रश्नमें योग दें। अितना ही नहीं, अवसर आनेपर दूसरे प्रश्नोंको छोडकर भी सिर्फ महत्वके प्रश्नपर अपने राजकीय जीवनकी बाजी लगा दें। सम्भवतः वे यह भी मानते हैं कि अैसा अवसर आज अुपस्थित है अथवा शीघ्र ही आनेवाला है। जब कि अुन्हें अिस प्रश्नको ही सब प्रश्नोंके आगे लाना होगा। अिसीलिअे अुन्होंने समय रहते यह चेतावनी दी है।

श्री टंडनजीकी अिस चेतावनीसे थोडी गलतफहमी भी हो सकती है। हिन्दीका कार्य करनेवाली, राष्ट्रभाषा-निर्माण तथा अुसके प्रचार-प्रसारका रचनात्मक कार्य करनेवाली संस्थाअें अैसी परिस्थितिमें क्या करेंगी—यह प्रश्न अुपस्थित होता है। हमारे विचारमें श्रद्धेय टण्डनजीका यह अभिप्राय कभी नहीं हो सकता, कि अैसी संस्थाअें अपना कार्यक्षेत्र छोडकर राजनैतिक क्षेत्रमें आअें। रचनात्मक कार्य करनेवाली संस्थाअें राजनैतिक क्षेत्रके कार्यकर्ताओंके सम्पर्कमें तो अवश्य रहेंगी परन्तु वे अपने कार्यको ही अधिक महत्व देंगी और अपनी मर्यादाके बाहर कभी भी नहीं जाअेंगी। अपनी मर्यादासे बाहर जाना न संस्थाओंके लिअे हितकर होगा, न राष्ट्रभाषाके लिअे। रचनात्मक कार्यक्षेत्रमें कार्य करनेवाले कार्यकर्ताओंका बल राजनैतिक क्षेत्रमें कार्यकरनेवालोंको मिलेगा और राजनैतिक क्षेत्रमें

राष्ट्रभाषाका कार्य करनेवालोंके कार्यका बल रचनात्मक कार्य करनेवालोंको, जिस प्रकार "परस्पर भावयन्तः श्रेयम् परमवाप्स्यथ"।

शिक्षाके माध्यमका प्रश्न :

श्रद्धेय टंडनजीने दूसरा प्रश्न महाविद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम क्या हो? —जिस विषयको लेकर छेडा है। यह प्रश्न बडे ही महत्त्वका है और विकट भी है। श्रद्धेय टंडनजीका आग्रह है कि विश्व-विद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम हिन्दी ही होना चाहिअे। अैसा होनेपर ही हमारी राष्ट्रीय अेकता कायम रहेगी और शिक्षाका स्तर तथा अुसकी अुपयोगिता भी राष्ट्रीय दृष्टिसे समान रह सकेगी।

बडे-बडे शिक्षाशास्त्रियोंका तथा गांधीजी अेवं दूसरे महापुरुषोंका कहना है कि शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही दी जानी चाहिअे, और अुच्च-से-अुच्च शिक्षा भी मातृभाषा द्वाराही दी जाअे। साथ ही हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताओंको देखते हुअे अुच्च स्तरपर तमाम शिक्षा राष्ट्रभाषा द्वारा देना भी आवश्यक प्रतीत होता है। विज्ञान, कानून, अिंजीनियरिंग आदि विषयोंके पारिभाषिक शब्द यदि सब प्रान्तोंकी भाषाओंमें अेक ही हों, तो जिन विषयोंकी शिक्षाकी अेक बडी समस्या आसानीसे हल हो सकती है। फिर यदि मातृभाषा या राष्ट्रभाषा द्वारा शिक्षा देनेका निर्णय विश्व-विद्यालय अपनी स्वेच्छा तथा सुविधानुसार कर, तो अुसमें कोअी हानि नहीं दिखायी देती। गुजरात तथा बडौदा विश्व-विद्यालयोंने तो गुजराती अथवा राष्ट्रभाषाका पर्यायसे माध्यम स्वीकार कर ही लिया है। हम आजकी परिस्थितिमें अिसे बहुत ही अच्छा मानते हैं।

अंकोंका प्रश्न :

श्रद्धेय टंडनजीने तीसरा प्रश्न अंकोंके सबधमें भी अुठाया है। १९४९ में विधान सभाने अंकोंके सबधमें जो निर्णय किया था, अुस श्रद्धेय टंडनजीने कभी स्वीकार नहीं किया। विधानमें नागरी लिपिको तो स्वीकार किया गया, परन्तु नागरी अंकोंको स्वीकार नहीं—यह बात अुन्हें हमेशा अखरी है, और अुसका विरोध करनेका अपना अधिकार अुन्होंने कायम रखा है। आज अुन्होंने जिस प्रश्नको अुठाया है, यह शायद अुपयुक्त अवसर समझकर ही अुठाया है। विधानमें जिस समय हिन्दीको स्वीकार किया गया, अुसी समय पाँच साल बाद सरकारी कार्योंमें हिन्दीकी प्रगतिकी जाँचके लिअे अेक कमीशन नियुक्त करनेकी बात कही गयी थी। १९५४ में पाँच साल पूरे हो रहे हैं और संभवतः हिन्दीके लिअे अेक कमीशनकी नियुक्ति होगी अुससे पहले विधानमें जो कमी रह गयी है, अुसके प्रति जनताका ध्यान खींचना, आन्दोलन करना तथा आवश्यक कार्य करनेके लिअे आज ही से तैयारी करना चाहिअे,—जिसमें संदेह नहीं। श्रद्धेय टंडनजीने ठीक ही कहा है कि हिन्दीको विधानमें स्वीकार करानेमें जो सफलता मिली है, वह आंशिक है। जब तक अंकोंका प्रश्न हल नहीं होता, यह सफलता अधूरी ही रहेगी। फिर भी हम मानते हैं कि यदि आज यह प्रश्न अुठाया न जाता, तो अच्छा होता। अिससे हिन्दीका जो विरोध आज हो रहा है, वह घटेगा ही, घटेगा नहीं।

यह ठीक है कि विधानमें नागरी अंकोंको स्वीकार नहीं किया गया। परन्तु राष्ट्रपतिको तो यह अधिकार दिया ही गया है कि वे चाहे तो

नागरी अंकोंके अुपयोगकी अनुमति दे सकते हैं। अुन्होंने अैसी अनुमति दी है, और आज केन्द्र तथा भिन्न-भिन्न राज्योंके सरकारी प्रकाशनोंमें भी नागरी अंकोंका अुपयोग किया जा रहा है। अर्थात व्यवहारिक दृष्टिसे तो नागरी अंकोंका अुपयोग करनेकी स्वतंत्रता और सुविधा है। हाँ, जो लोग चाहे वे अंग्रेजी अंकोंका भी अुपयोग कर सकते हैं, और दक्षिणके प्रान्तोंमें अुसका अुपयोग किया भी जा रहा है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार-सभा तक अंग्रेजी अंकोंका ही आग्रहपूर्वक अुपयोग करती है, दक्षिण भारतकी तमिल आदि भाषाओंके प्रकाशनोंमें भी अंग्रेजी अंकोंका अुपयोग किया जाता है, अर्थात् दक्षिणकी भाषाओंने अंग्रेजी अंकोंको अपना लिया है। अिसलिअे अुन्हें अुन अंकोंको अुपयोग करनेमें सम्भवतः अधिक सुविधा भी होगी। अिसलिअे अुन्हें अैसा करनेका अधिकार भी दिया जाअे, तो वह हमारी पारस्परिक अैक्य भावना तथा प्रेम भावनाके अनुकूल ही बात होगी। हम जानते हैं कि श्रद्धेय टंडनजी हमारे अिस तर्कको कभी स्वीकार नहीं करेंगे। सिद्धान्ततः नागरीलिपिके साथ नागरी अंकोंको स्वीकार करना चाहिअे—अुनका यह आग्रह हम समझते हैं और अुसका आदर भी करते हैं। हम भी मानते हैं, कि सिद्धान्तकी दृष्टिसे अुनकी बात ठीक है परन्तु अंकोंका आग्रह छोड देनेमें हम सिद्धान्तको ही छोड देते हैं—यह बात नहीं है। तत्वतः हमारे कार्यके लिअे राष्ट्रपतिकी अनुमतिने बहुत कुछ सुविधा कर दी है और हमें विश्वास है कि श्री रामदास स्वामीके कथनके अनुसार- "मानत मानत मानावे।" दूसरेकी बातको मानकर फिर अुनसे अपनी बात मनानी चाहिअे—हम भी यदि अपने दक्षिण भारतके भाअियोंकी बात मान लेंगे तो आगे चलकर अुन्हें हमारी लिपिके साथ नागरी अंकोंको न स्वीकार करनेकी अपनी भूल प्रतीत होगी और वे नागरी अंकोंका अुपयोग सरलतासे करने लगेंगे।

—मो० भ०

वार्षिक चन्दा ६) सनाआरम्भे अर्धवार्षिक ३॥) अेक अंकका मूल्य १० आना

पता —राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

'राष्ट्रभारती' आपसे कुछ कहना चाहती है !

१. यही कि, ता १ जनवरी १९५८ से, वह अपने जीवनके चौथे वर्षमें प्रवेश कर चुकी है। भारतके प्राय सभी प्रमुख साहित्यकारों, विद्वानों और पत्र-पत्रिकाओंने 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की अुसे सराहा, अपनाया, अपनी शुभकामना दी, सहयोग दिया और अुत्साह बढाया। अुन सबकी कृपाको किन शब्दोंमें व्यक्त किया जाअे !

२ यही कि, वह निश्चित समयपर, हर महीनेकी पहली तारीखको, अपने प्रेमी पाठकोंके हाथोंमें श्रेष्ठ, सुरुचिपूर्ण, स्वस्थ और सरल-सुन्दर, विविध-विषयक गंभीर लेख, कविता, कहानी, समालोचना आदि पाठ्य-सामग्री अर्पण करती है।

३. यही कि फिर भी वह सबसे सस्ती मासिक-सुघरी पत्रिका है। वार्षिक मूल्य कहिअे या सालाना चंदा कहिअे ज्यादा नहीं, सिर्फ ६ रुपया और अर्ध-वार्षिक (छह माही) ३ रु ८ आना और अेक अंकका १० आना।

४ यही कि, राष्ट्रभाषा-प्रचार समितिके प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकोंको और विद्यालयों तथा महाविद्यालयोंको 'राष्ट्रभारती' अेक रुपया कम करके रियायती मूल्य ५ रु वार्षिक चन्देमें और अर्धवार्षिक चन्दा ३ रु में दी जाअेगी।

५ यही कि, अिस महान् पवित्र साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक राष्ट्रभाषा-प्रचार कार्यमें आप 'राष्ट्रभारती' का हाथ बटाअें। अुसकी सहायता करें। स्वयं ग्राहक बनें और अपने मित्रोंको भी बनाअें।

६ यही कि "राष्ट्रभारती" आपकी अैसी सहायताका सहर्ष आभारपूर्वक स्वागत करेगी।

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ-सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी कापी भेजनी चाहिअे। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और बहुत लंबी नहीं होनी चाहिअे।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें। 'राष्ट्रभारती' अपने लेखकोंको "पत्रपुष्प-पुरस्कार" भी भेंट करती है।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें, तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना सम्पादकीय आदि सारा पत्र-व्यवहार अिस पतेपर करें —

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशक.— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस.— राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

राष्ट्र भारती

मार्च, १९५४

वर्ष ४] राष्ट्रभारती, मार्च–१९५४ [अंक ३

–: विषय सूची :–

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे : : अर्धवार्षिक ३॥) : : अेक अंकका मूल्य १० आना

पताः—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

राष्ट्रभारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट : हृषीकेश शर्मा

* वर्ष ४ * वर्धा, मार्च १९५४ * अंक ३ *

गीत

: श्री 'निराला' :

फेर दी आँख, जी आया,
जैसे रसाल बौराया ।

रहकर दबते मेरे मन,
फूटे सौ-सौ मधु-गुञ्जन,

तनकी छबियाँ नतलोचन
अुमड़ी, मानस लहराया ।

सूखी समीर नव-गन्धित
बह चली छन्दसे नन्दित,

अुग आया सलिल कमलसित,
कोमल सुगन्ध नभ छाया ।

———

भारतीय समन्वय

: डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या :

क्या भारतके और क्या विदेशके, भारतीय संस्कृतिका विवेचन करनेवाले सभी समर्थ विद्वान् यह अेक बात स्वीकार करते हैं कि अिस संस्कृतिके बुनियादी लक्षणका वर्णन विरोधोंमें सुमेल अथवा विविधतामेंसे अेकता पैदा करनेवाले समन्वयके रूपमें किया जा सकता है। अन्य किसी संस्कृतिकी परम्पराकी अपेक्षा यह अधिक बृहत्, विशाल और सर्वग्राही है,—जीवनके समान ही—और अिसने समझने तथा स्वीकार करनेकी अेक अैसी अुदार वृत्तिका निर्माण किया है, जो ज्ञान और अनुभवके किसी अेक ही प्रकारमें बंधना और शेष सबका वर्जन करना नहीं चाहती।

हमारी अिस समन्वयकी प्रवृत्तिने विविध भौतिक सभ्यताओं, धार्मिक और सामाजिक सम्प्रदायों, रूढ़ियों तथा विचारों और सिद्धान्तोंका जो अद्भुत सम्मिश्रण किया है, अुसकी अुच्च बौद्धिक और आदर्शगत भूमिका निम्नलिखित तत्त्वोंपर आश्रित है; अेक अदृष्ट सत् तत्त्वकी, जो विश्वसे परे है और अुसमें ओतप्रोत भी है (दैवी तत्त्वके लिअे पुराना तमिल शब्द 'कट-व-अुळ' है), अनिर्वचनीयके रूपमें समग्र जीवनकी अेकताका विचार, जीवन तथा आखिरकार अनुभवके विच्छिन्न और विसंवादी अंगोंको तात्त्विक अेकताके भीतर यथास्थान संयोजित करनेके लिअे प्रयत्नशील समन्वयकी आकांक्षा; बुद्धिका दृढ़ अनुसरण और साथ ही अुच्चतर स्तरपर भावना, स्वयं स्फुरित ज्ञान और गूढ़ दर्शन (Mystic perception) के साथ अुसका मेल साधनेका यत्न; जीवनकी कठिनाअियों तथा दुःखका भान और अिन दुःख-कष्टोंके मूल कारण तक जाकर अुन्हें निवारण करनेका प्रयत्न, यह भावना कि समग्र जीवन पवित्र है; और सबसे विशेष तो दूसरे तमाम दृष्टिकोण और विश्वासोंके प्रति विशाल सहिष्णुता। अिस परम सत्यका साक्षात्कार जीवनका सार-सर्वस्व है और अुसके साक्षात्कारके मार्ग भी वैयक्तिक शिक्षा, स्वभाव और वृत्तिके अनुसार अनेक प्रकारके माने गये हैं— ज्ञानका या प्रेमका (जिसकी पृष्ठभूमिमें कृपा है), आत्मसंयमका या सत्कर्मका, अिस प्रकार ये मार्ग अुतने ही विविध हैं, जितनी कि मनुष्यकी दृष्टि और अभिरुचिके सन्मुख कुछ परम सत्यकी अभिव्यक्तियाँ। भौतिक जगत्‌की अुसकी कल्पना देश-कालसे परे है और पदार्थ तथा शक्ति अेक ही पार्थिव तत्त्वके रूप हैं, जो अिस अदृष्ट सत्यका बाह्य आविर्भाव है।

भारतमें बहुत प्राचीन कालसे भिन्न-भिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और अुसी प्रकार जीवन तथा विचारकी रीतियोंवाली भिन्न-भिन्न प्रजा अिस भूमिपर मौजूद रही है, अिस सत्यसे अिस समग्र समन्वयकी वृत्तिको प्रेरणा मिली है और अिसका विकास सरल बना है। ये सब अनिवार्य रूपमें अेक-दूसरेकी ओर अेक साथ आकर्षित हुअे और अेक सुग्रथित सर्वग्राही सभ्यतामें सबका समावेश हुआ। अिस सभ्यतामें रंग और जाति-भेदकी स्थापनाके लिअे कोअी अवकाश नहीं था, क्योंकि जाति-सम्मिलन अिसके अपने अेक हमेशाके लक्षणके रूपमें बिलकुल आरम्भसे ही शुरू हुआ था।...... अेफ. डब्ल्यू. टॉमसके कथनानुसार वैदिक या आर्ययुग (अी. स. पूर्व १२०० से ५००) भारतीय मानवके सर्जनका साक्षी था।

भारतीय मानव अुत्तर भारतमें प्रवर्तमान अिन चार तत्त्वोंके मेलसे सरजा गया था; ऑस्ट्रीक अथवा ऑस्ट्रो— अेशियाअी, मंगोल अथवा चीनी-तिब्बती, द्राविडी, आर्य; अिनके भारतीय, प्राचीन और अर्वाचीन नाम देने हों, तो अनुक्रमानुसार निषाद (अथवा नाग, भील-कोल) किरात, द्रविड़, शुरूके दास-दस्यु तथा शूद्र, और आर्य दिये जा सकते हैं।

सत्य क्या कहता है ?

: महात्मा भगवानदीन :

सत्य आदमीका गुण है। हमेशासे अुसके साथ है, हमेशातक बना रहेगा।

सत्य आदमीसे अलग होकर कुछ भी नहीं। अुसके साथ रहकर सब कुछ है। गुणके गुणीसे अलग होनेकी कल्पना की जा सकती है, अलग किया नहीं जा सकता।

सत्य जब हमेशासे साथ है, फिर अुसकी खोज क्यों? और अितना भी पता क्यों नहीं कि वह क्या है?

आदमी अपनी आंखको नहीं देख सकता। वह जन्मसे साथ है, मरनेतक साथ रहेगी। अुसे देखनेके लिअे दर्पणकी जरूरत पडती है।

सत्य हमेशासे साथ है; अगर दिखायी नहीं देता तो घबरानेकी बात नहीं। अुसकी सुनो, अुसके देखनेकी धुनमें न लगो। वह तुम्हें दिखायी देनेके लिअे अितनाही अुत्सुक है, जितने तुम अुसे देखनेके लिअे।

सत्य गुण है, गुणमें समझ और ज्ञान नहीं होती। गुण अपने आप कुछ नहीं कर सकता। सत्य गुणकी हैसियतसे कुछ नहीं चाह सकता। सत्य तुम्हारे साथ अेकमेक होनेसे तुम्हारी भलाअी अैसेही चाहने लगता है जैसे तुम अपना भला चाहते हो।

सत्य तुम्हारा साथी बनकर तुम्हारी भलाअीके लिअे वैसे ही तडपता है जैसे तुम तडपते हो। अुसके लिअे मुश्किल यही है कि वह यह चाहता है कि तुम्हे दिखायी दे जाअे, पर अिस विषयमें वह कुछ कर नहीं सकता। अुसके और तुम्हारे बीचमें जो पर्दा है अुसे तुम ही तोडोगे; कोअी दूसरा नहीं तोडेगा। लोहेके अन्दरकी चमक जिस तरह तुम्हारे मांजनेसे तुम्हें दिखायी देती है, अुसी तरह सत्यको मांजनेसे सत्यकी चमक तुम्हें दिखायी देगी।

सत्य यही चाहता है कि तुम अपनी आंख खुली रखो, दोनों कान खडे रखो, और अपनी सारी अिन्द्रि- [illegible] रखो।

तुम यह कहोगे, हम तो अपने आंख कान हमेशा खुले रखते हैं, अब और किस तरह खोले?

तुम्हारा सवाल ठीक है, पर अिसका जवाब तुम्हारे पास है। देखो, जब तुम छोटे थे तब भी तुम्हारी आंखें खुली थी, कान चौकन्ने थे, पर अिन दिनों अिन खुली आंखों और अिन चौकन्ने कानोंसे जो देखते-सुनते थे, क्या आज भी अुसी तरह देखते-सुनते हो?

तुम जब छोटे थे, फूलको देखते थे। खुश होते थे। अुसे तोडते थे। अुसे मुंहमें रख लेते थे। जरा बडे हुअे, मसलकर फेंकने लगे। जरा और बडे हुअे पेडके सारे फूलोंको लकडी मार-मारकर गिराने लगे। यह भी देखना देखना था।

अब तुम बडे हो। अब भी फूलोंको देखते हो, अब भी खुश होते हो। अगर तुम बहुत समझदार हो तो अुसे नहीं तोडते, क्योंकि अुसकी खुशबू तुम्हारी नाकतक अपने आप पहुंच जाती है। अगर तुम अितने समझदार नहीं, और अपने दिमाग तथा मनपर काबू नहीं है तो तुम पेडपरसे अेक दो फूल तोड लेते हो, अुसको न मसलते हो, न मुंहमें रखते हो, न फेंकते हो, रूमालमें रखकर सूंघते हो। यह भी अेक देखना है।

दोनों देखनेमें अन्तर है। पहले देखनेसे दूसरे देखनेतक पहुंचनेमें तुममें सत्यके अूपरसे कअी पर्दोंको रगड डाला है और यह देखकर तुम्हारे अन्दरका सत्य बहुत खुश हो रहा है। सत्य यही चाहता है कि और आंखें खोलो, और भी कानोंको चौकन्ना करो, और भी सारी अिन्द्रियोंमें चेतना लाओ और मनपर धीरे-धीरे काबू पाते जाओ।

दुनियामें सत्यसे बढकर तुम्हें चाहनेवाला कोअी दूसरा नहीं है। मां बाप भी नहीं। अगर अन्य कोअी [illegible]

रखा है वह तुमको कभी अितना प्यार नहीं कर सकता जितना सत्य ! अिसका कारण है ।

सत्य तुमको कितना प्यार करता है । अिस बातको समझानेके लिअे सत्यभक्तोंने बड़ी-बड़ी कहानियाँ लिख डाली हैं और सीतारामकी कथा अैसी ही अेक है ।

जैसे सीता बनवासमें साथ रहनेके लिअे मचल अुठी, वैसे ही सत्य अेक क्षणके लिअे अलग नहीं रहना चाहता ।

सीताकी जो लगन कवियोंने रामके लिअे दिखायी है, अगर अुस लगनको हम अेक बूंद भी पा लें तो सत्यकी लगन तुम्हारे साथ रहने और तुम्हारे देखनेकी सागर जितनी समझी जाअेगी । अब तुम अन्दाजा लगाओ कि सत्यका प्रेम तुम्हारे लिअे कितना है । अैसा क्यों है ?

जो ओश्वर, जो राम तुम्हारे अन्दर है वही तो सत्य है। अब अगर तुम चोर हो तो वह चोर है । अगर तुम हिंसक हो वह हिंसक है । तुम जो हो, वह वह है ।

राम राजकुमार थे, सीता राजकुमारी थी । राम वनवासी थे, सीता वनवासिनी थीं । सीता महलमें सोलह शृंगार करके भी रहती वनवासिनी तो कहलाती ही, अुससे भी ज्यादा कहलाती, वियोगिनी । वियोगिनी न बनकर अुसने वनवासिनी बनना ठीक समझा । राम विजयी हुअे, वह अपने आप विजयन्ती कहलाने लगी । राम राजा हुअे वह रानी बन गयी ।

सत्य अेक शक्ति है और शक्तिके नाते वह सीता है । सत्यको पहचाने हुअे तुम शक्तिधारी हो । शक्तिधारीके नाते तुम राम हो ।

तुम्हारी बढ़वारीमें सत्यकी बढ़वारी है । रामके राजा होनेमें सीताके रानी बननेकी बात छिपी हुअी है। फिर कौन हो सकता है जो सत्यसे ज्यादा तुम्हें प्यार करेगा ?

सीताकी यह अिच्छा कि राम विजयी हों, अयोध्याके राजा बनें, यदि अैसा माना जाअे तो सत्यकी यह अिच्छा कि तुम भगवान बनो, लाख और करोड रुपयोंसे भी [illegible] बड़ी आअेगी ।

सत्यके समीप होना यानी सत्यके आमने-सामने आना ही हो तो भगवान बनना है । जिससे आप सत्यकी तड़पका अन्दाजा लगा सकते हैं ।

सत्य न अपने आपको मैंज सकता है, न माजता है, वह तो तड़पना भर जानता है । और चौबीसों घंटे तड़पते रहता है । तुम अुसी तड़पनको अनुभव नहीं करते । जब तुम अनुभव करने लगोगे तो अपने सारे अनुभवोंसे मदद लेना सीख लोगे । और दूसरोंके अनुभवोंको रेगमाल बनाकर अुस मैलको मांज डालोगे जो सत्यपर मुद्दतोंसे चढ़ा हुआ है और आये दिन चढ़ता रहता है ।

दांत रोज मांजने पड़ते हैं । मुंह रोज धोना पड़ता है । आंखोंमें सुर्मा रोज आजना पड़ता है । तब कहीं दांत, मुंह और आंख साफ रहते हैं । यही हाल सत्यका है । अुसके अूपर रोज धूल चढ़ती रहती है, अुसे तो रोज साफ करते रहना ही चाहिअे । और पुराने मैलको माजनेके लिअे भी कुछ वक्त निकालना चाहिअे ।

बालपनकी आंखसे जवानीकी आंख कम देखती है । पर ज्यादे ठीक देखती है । जवानीकी आंखसे बुढ़ापेकी आंख और भी कम देखती है पर बहुत ज्यादा ठीक देखती है । और अनुभवोंसे हुअी अन्धी आंख बिल्कुल न देखकर बहुत ज़्यादा देखती है । यही हाल मनुष्य समाजकी बालपनेकी आंखका और आजकी आंखका है । मनुष्य-समाज बालपनेमें बहुत देखता था, पर कुछ-का-कुछ देखता था । आज वह कम देखता है पर पहलेसे ठीक देखता है ।

सत्य यह चाहता है कि तुम बाहर किसी ताकतको ढूंढ़कर टोटेमें रहोगे । तुम्हारा नफा अिसीमें है कि मेरे अूपर लगी काअीको मांज डालो, मेरे अूपर अेक मिनिट भी धूल न रहने दो । पर तुम हो कि अुसकी न सुनकर ताकतके लिअे न जाने कहाँ-कहाँ भागे फिरते हो । तुम्हारी यह हालत देखकर सत्य घबरा अुठता है ।

सत्य यह चाहता है कि जो कुछ आंख देखती है या जो कान सुनते हैं, वह वही नहीं होता जो दिखायी देता या सुनायी पड़ता है । आंखको जो दिखायी देता है, सबके मोक्ष असा होता है । आदमी देखने समय पर

कहता है कि मैं किताबका पन्ना देख रहा हूँ, लेकिन अुसका मन न जाने क्या देख रहा होता है। यही कारण है कि पन्नेपर लिखे किसी खास शब्दको देखनेके लिअ कितनी ही बार निगाह डालनी पडती है। तब पन्ना देखनेकी बात कैसे ठीक मानी जा सकती है ?

सत्य यह चाहता है कि तुम आँख नाककी न सुनकर मनकी सुनो, पर वहीं न रुक जाओ।

सत्य यह चाहता है कि मनकी सोची हुअी बातोंको ज्यों-का-त्यों न मान लो अुसे अनुभवकी कसौटीपर कसो। अगर वह कसौटीपर ठीक न अुतरे तो अुसे अैसा ही रद्दी समझ लो जैसे आँखका देखा हुआ और कानका सुना हुआ।

सत्य यह चाहता है कि कार्य कारणके मामलेमें सतर्क रहो।

किसी कार्यका अैसा कारण न मानो जिस कारणसे अुस तरहका कार्य तुम खुद न कर सको।

या अगर तुम अुस कारणसे वैसा कार्य नहीं कर सकते तो यह देखो कि अुस कारणसे वैसा कार्य कोअी कर सकता है ?

अगर अैसा भी न हो, तो यह देखो कि क्या तुम्हारे अनुभवोंका भंडार अिस बातमें कुछ भी मदद देता है कि अुस कारणसे अिस तरहका कार्य हो सकता है।

अगर अैसा भी न हो और तुम्हारा अनुभव भंडार अिसमें जरा भी मदद न करे तब दूसरोंके अनुभवोंसे मदद लो, जिनको तुमने अपने अनुभवोंकी कसौटीपर कसकर ठीक मान लिया है। अगर अुन अनुभवोंकी मददसे यह बात समझमें आ जाअ कि हाँ अुस कारणसे वैसा कार्य हो सकता है तब मान लो और अगर न हो सकता हो तो न मानो।

दूसरोंके अनुभव या अपने अनुभवोंके आधारपर माना हुआ कार्य-कारण अैसा नहीं है जो यों ही पड़ा रहने दिया जाअ। हाँ, यह ठीक है कि जैसे और खोटी बात धूल तो नहीं फैलाअगी पर मार्गमें सहायक नहीं हो सके तो किसी काम नहीं आ सकती।

सत्य यह चाहता है कि कोअी कार्यकारण जिसे तुमने खुद नहीं किया और तुम्हारे पास पड़ा हुआ है वह कभी भी बीचके पर्देको न तोड सकेगा और कभी मुझमें और तुममें मेल नहीं होने देगा।

सत्य यह चाहता है कि जब तुम यह देखो कि कोअी आदमी या औरत यह शोर मचा रहा है कि कोअी मुझे मार रहा है जब कि वहाँ कोअी आदमी नहीं है, तब अेकदम कोअी बात तय न कर बैठो और न किसीकी तय की हुअी बातको मान बैठो। अपने अनुभवोंका भंडार टटोलो और देखो किन-किन हालतोंमें आदमी अैसी बेतुकी बात करने लगता है। अैसा करनेपर तुम्हारे अनुभव अुस घटनाके कअी कारण बता सकते हैं। अब देखो कि अुनमेंसे कौनसा ठीक बैठता है। जो ठीक बैठता है अुसीके अनुसार अुस आदमीको समझाओ या अुपचार करो।

सत्य यह कहता है कि जब जब तुम अपने अनुभवोंके बलपर किसी अगले अनुभवके लिअ जान दे देते हो, तब-तब तुम मुझे अपने बहुत करीब पाते हो। यही कारण है कि तुम्हें जल्दी सफलता मिलती है और अगर मौत भी हो जाती है तो अपने साथियोंके लिअ अैसी चीज छोड जाते हो जिसके कारण वह तुम्हें मरने नहीं देते।

लेकिन अगर तुम दूसरोंके अनुभवपर अपनी जान खतरेमें डालते हो तो मैं तुमसे बहुत दूर जा पड़ता हूँ— और अैसे वक्त तुम्हारी मौत हो जाअ तो तुम कोअी चीज अपने पीछे नहीं छोड सकते और अगर कोअी चीज तुम छोड ही गये तो वह अैसी नहीं होगी जिससे कोअी फायदा अुठा सके। क्योंकि वह वही चीज हो सकती है जो जानवरोंमें ज्यादा मिलती है और आदमियोंमें कम।

सत्य यह नहीं चाहता कि कोअी आदमी दूसरोंके अनुभवोंके खातिर मरकी सी बहादुरी दिखाकर अपनी

और अुसके अंदर रहनेवाले सत्यको कोअी फायदा न पहुँच सकेगा।

सत्य यह नही चाहता कि कोअी आदमी दूसरोंके अनुभवके लिअे हदसे ज्यादा अुदार बन जाअे। क्योंकि अुस अुदारतासे अुसके अदर रहनेवाले सत्यको कोअी लाभ न पहुँचेगा।

सत्य यह चाहता है कि तुम किसीकी बातको सिर्फ अिस वजहसे न मान लो कि वह आदमी बहुत बडा विद्वान है।

किसीकी बातको अिस वजहसे न मान लो कि वह बहुत बडा त्यागी है। अिस वजहसे न मान लो कि वह किसी पुराने शास्त्रमें लिखी है। किसी बातको किसी अैसी वजहसे न मानो जो अुसका कारण न हो।

सत्य यह चाहता है कि जबतक तुम्हारा अपना अनुभव किसी बातको ठीक-ठीक न बता दे तबतक अुन बातोंको अपने अदर अेक अैसे खानेमें डाल रखो जो तुम्हारे और मेरे बीचमें आडे न आने पाअे। तुम्हारी सारी जानकारी मेरे अूपर धूलका काम करती है। अगर वह तुम्हारे अनुभवोंपर ठीक नही अुतरती और फिर भी तुम अुसे ठीक समझे हुअे हो।

अिसीका नाम अंधविश्वास है। अिसीका नाम मिथ्या विश्वास है। यही वह जबर्दस्त पर्दा है, जिसे दूर करनेके लिअे सत्य तडप-तडपकर मौन रहते हुअे अिशारा करता है।

सत्यका कहना है, मैं आत्मासे अलग होकर कोअी चीज नहीं हूँ। मैं आत्मासे अलग हो ही नहीं सकता। मैं और आत्मा अेकमेव हैं। कहने और समझनेके लिअे हम दो हो सकते हैं। वैसेही अंतर आत्मा, बुद्धि, समझ, विश्वास, ज्ञान, आत्मा, सत्य यह सब अेकही चीज है, नामके लिअे अलग-अलग हैं।

प्रकाशका जो रंग है, वह है। पर वह हरे शीशेमें हरा, लाल शीशेमें लाल और नीले शीशेमें नीला दिखायी देता है। ठीक अिसी तरह मैं यानी सत्य अपना प्रकाश लिये हुअे हूँ। मेरे अूपर धूल जमी हुअी है। और जिस प्रकाशसे आदमी सारा काम चलाता है अिसीका नाम बुद्धि है। बुद्धि अेक चन्द्रमा है जिसे मुझ सत्यरूपी सूरजसे चमक मिलती है। अुसकी चमक और मेरी चमकमें अन्तर होगा ही। जैसे-जैसे अन्धविश्वास-परसे मिथ्या विश्वासके बादल हटते जाअेंगे, वैसे-वैसे बुद्धिकी चमक बढती जाअेगी। अेक दिन अैसा हो सकता है कि बुद्धि और मैं, सत्य, अेक बन जाअें आदमीका जन्म अिस बातकी कोशिश करनेके लिअे हुआ है।

सत्यका कहना है बुद्धि मेरी है, अुसकी मेरी तरह कद्र करो, अिस विषयमें कभी धोखा न खाओ और अगर तुम अिस धोखेसे बचे रहे तो बहुत जल्दी अपने अदरकी सचाअियाँ जान लोगे और मेरे दर्शन पा सकोगे। मैं तुम्हें समझ लूंगा, तुम मुझे समझ लोगे।

सत्यका कहना है, यह बात बिलकुल गलत है कि छोटा बच्चा बुद्धिमान नही होता। बडे-बडे ज्ञानियोंमें और बालकमें कोअी अन्तर नहीं होता। चींटी और हाथीमें कोअी अन्तर नहीं है। देहके छोटे बडेका अतर है। ध्यानसे देखा जाअे तो चींटी जितना बोझ अुठाकर ले जाती है, हाथी अुसी अनुपातसे नहीं ले जा सकता। यही हाल दूध-पीते बच्चेका है। जितनी छोटी अुसे देह मिली हुअी है, जितने छोटे काम अुसके सुपुर्द हैं, अुन सबसे काम लेनेके लिअे जितनी बुद्धि अुसके पास है, वह कहीं ज्यादा है, अुन ज्ञानियोंकी बुद्धिसे जिनको बहुत बडी देह और बहुत बडा काम मिला हुआ है।

सत्यका कहना है, दूध पीते बालकको न धोखा देकर हिन्दू हिन्दू बना सकते हैं, न मुसलमान मुसलमान, न अीसाअी अीसाअी, बडा आदमी बहकाया जा सकता है, दूध-पीते बालकको बहकाना मुश्किलही नहीं, असम्भव है। धर्मवाले दुनियाको बहका सकते हैं।

सत्यका कहना है, यह कहकर कि जो सच्चा होता है अुसे आग नहीं जलाती, सीता देवीको धोखा दिया जा सकता है और वह धोखेमें आकर आगमें घुस सकती है, पर किसी बच्चेको यह कहकर धोखा नहीं दिया जा सकता कि जो सच्चा होता है वह आगमें नहीं जलता। बालकको अच्छी तरह मालूम है कि वह बिल-

अपनी अगुली आगमें दी थी और वह जलन लगी थी। अुस बालकका ज्ञान सब धर्मशास्त्रियोसे कही सच्चा ज्ञान है क्योंकि अुसका अनुभव है कि सच्चे आदमीकी अुगली भी आग जला देती है। फिर अुसकी देह क्यो नही जला देगी।

सत्यका कहना है कि आगका काम जलाना है पर हाँ आग जैसी चमकती हुअी चीजें और भी हो सकती है जो ठडी हो और आग जैसी समझी जाअ अुनमें बैठकर सच्चे और झूठ दोनो ही जलनसे बच सकते है और आज भी यह तमाशा किसने नही देखा कि दहकते हुअे कोयलोंपर झूठ और सच्चे सभी नगे पॉव निकल जाते हैं और यह भी किसने नही सुना कि दूधका जला छाछको फूक फूककर पीता है। छाछको गरम दूध समझकर अगर कोअी अपनी अुंगली डाल दे तो वह जलेगी नही लोग भले ही यह समझें और यह कहा करे कि अुस आदमीने गरम दूधमें अुगली डाली थी और वह जली नही क्योकि वह सच्चा आदमी था।

सत्यका कहना है कि बुद्धिके सिवा और कौन है जो हर वक्त तुम्हारे साथ रह सकता है और आड वक्तपर तुम्हारे काम आ सकता है।

जो तुम्हे बुद्धिसे काम न लेनेकी बात कहते हैं वे खुद बुद्धिसे काम ले रहे हैं फिर वे कैसे हकदार हो सकते हैं कि यह कहे कि तुम बुद्धिसे काम नही ले सकते।

सत्यका कहना है कि मुझे पहचाननेके लिअ या मेरे अूपरसे धूलको हटानेके लिअ जितनी बुद्धिकी जरूरत है अुतनी सबको मिली हुअी है। फिर चाहे बच्चा हो या बूढ़ा पढ़ा लिखा हो या अपढ़ा जगली हो या शहरी। हाँ झूठ बोलनेके लिअ और सत्यको असत्यका रूप देनेके लिअ लोगोको लूटने और लोगोका विनाश करनेके लिअ आविष्कारोको सोचनेके लिअ खास बुद्धिकी जरूरत होती है। यह किसीसे छिपा हुआ नही है कि छोटे बच्चे अपनी माँके सामने जब किसी झगडेका फैसला करानेके लिअ पहुँचते है तो वकीलोकी जरूरत नही होती लेकिन जब अेक डाकू यह साबित करना चाहता है कि अुसने डाका डालकर भी डाका नही डाला तब वह होशियारसे होशियार वकीलको अपने साथ लेकर अदालतके सामने पहुँचता है।

सत्यका कहना है कि झूठ बोलनेमें बुद्धिपर जितना जोर पड़ता है अुतना सत्य बोलनेमें नही। झूठ बोलनेमें बोलनेवालेको डर लगता है दुख होता है। सच बोलनेमें आदमी निर्भीक रहता है और आनन्द मानता है।

सत्यका कहना है यह किसको मालूम नही कि आदमीकी परछाअी कअी कारणोसे कभी कभी आदमीसे कअी गुना लबी हो जाती है कअी गुना मोटी हो जाती है आदमी नही कॉपता पर परछाअी कॉपने लग जाती है आदमी ठडा नही होता परछाअी ठडी हो जाती है। ठीक अिसी तरह बुद्धि मुझ सत्यकी परछाअी है पर धर्मशास्त्री वकीलोंकी तरह मिथ्या विश्वासोंको सिद्ध करनेके लिअ अुसको मुझसे लबी चौडी भारी मोटी साबित बना देता है।

सत्यका कहना है आदमीके जीवनका अुद्देश्य आदमीके साथ आया है। अुसे बाहर ढूढनेकी कहाँ जरूरत है? अुसके जीवनका अुद्देश्य अिसके सिवा क्या हो सकता है कि वह अपनेको पहचाने और अपनेको पहचाननेमे अुसके लिअ मुश्किल नही हो सकती न होना चाहिअ और न है। आदमीको किसी अैसे कामके लिअ पैदा होनेका कोअी मतलब ही नही जिसे वह आसानीसे अपने जीवनमें न कर सके। अगर आदमीसे कोअी काम नही हो पाता तो वह अुसके लिअ पैदा ही नही हुआ। आदमी खुद जो मशीन तैयार करता है वह अुस कामको आसानीसे कर लेती है जिसके लिअ बनी है। अगर किसी कामके करनेमें मुश्किल हो तो यही समझना चाहिअ कि मशीनको वह काम दिया गया है जिसके लिअ वह नही बनी है। प्रकृतिका बना हुआ आदमी कभी अैसा नही हो सकता कि वह अपनेको आसानीसे पहचान न सके क्योकि वह अिसी कामके लिअे पैदा हुआ है।

सत्यका कहना है कि कम बुद्धिवालोको बिलकुल नही घबराना चाहिअ सत्य अुनकी समझमें आअेगा पर अेक शर्त है कि अुनको अपनी बुद्धिपरसे मिथ्या विश्वास और अन्धविश्वासकी चर्बी निकाल फेकनी होगी।

गुजरातके लोकप्रिय कहानीकार पन्नालाल पटेल

: श्री गौरीशंकर जोशी :

कलाकार होना केवल पढे-लिखे शिक्षित लोगों और डिग्रीधारियोंकी ही बपौती नहीं, यह चुनौती देनेवाले गुजरातके कहानीकार श्री पन्नालाल पटेल आज गुजराती साहित्यमें तरुण पीढीके सर्वश्रेष्ठ कहानीकार माने जाते है। आधुनिक युगमें, जब कि शहरी तथा कथित सभ्य, संस्कृतिका बोल बाला है, यह सचमुच बडे आश्चर्यकी बात मानी जाअेगी कि अेक मामूली अपढ जैसे परिवारमें पैदा होनेवाला, जिसे ठीकसे पूरी-पूरी शिक्षा-दीक्षा भी न मिली हो, और शहरी समाजसे दूर देहातके किसी अेकान्त कोनेमें बैठकर सरस्वतीकी आराधना करनेवाला व्यक्ति अपने जीवनके १०-१२ वर्षके अल्प सृजन-कालमें ही कभी अितना बडा कलाकार सिद्ध होगा।

श्री पन्नालाल पटेलका जन्म ७ मअी, १९१२ को गुजरातकी पूर्व सरहदपर बसे हुअे डूँगरपुर राज्यके अेक छोटेसे देहात माडलीमें आजणा नामक पाटीदार (गुजरातकी अेक किसान जाति) के अेक गरीब परिवारमें हुआ। स्कूली शिक्षाके नामपर अिस गुदडीके लालको केवल चार कक्षा तक पढाअी हुअी। लेकिन प्रतिभाके अिस धनीको अपने छोटेसे विद्यार्थी-जीवनमें भी तीन रुपया प्रतिमास वजीफा मिलता था। नियतिका चक्र कठोर होता है। शायद अुसे यही अिष्ट लगा हो। आर्थिक कठिनाअियोंके कारण आपको विवश होकर अपना पढना-लिखना यहीं समाप्त कर देना पडा। कहा जाता है कि अितना भी ये जयशंकरानन्द नामक अेक साधुके प्रोत्साहनसे पढ सके।

आपका किशोर जीवन अभी नन्हें और कमजोर कन्धोंपर असमयमें ही आ पडी पारिवारिक जिम्मेदारियोंके बोझको ढोने और पेटकी आग बुझानेकी फिराकमें दर-दर भटकनेमें बीता। नौकरी-धंधेके लिअे आपको काफी कशमकश करनी पडी। आपको कहाँ-कहाँ और किन-किन जगहोंपर काम करना पडा, यह कहनेके बजाय यह कहना अधिक अुपयुक्त होगा कि आपने कहाँ नहीं काम किया। शराबकी भट्ठीसे लेकर सनवालेके गोदाम, पानीकी टंकी, अिलेक्ट्रिक कम्पनीके ऑअील मैन आदिके रूपमें भिन्न-भिन्न स्थानोंपर नौकरी करनेसे जीवनके विविध पहलुओंको निकटसे देखने और अनुभव प्राप्त करनेका आपको मौका मिला। श्रमजीवी, किसान और मजदूरोंके समाजके बीच रहकर आपने अुनके सुख-दुखको समझनेकी सूक्ष्म दृष्टि पायी। आपकी वाणी मेहनतकशों और मजदूरोंकी वाणी कही जाअेगी। आपकी सारी कृतियोंमें अिन्हींकी आवाज प्रधान है।

सन् १९४० में आपकी सर्वप्रथम कृतिके रूपमें 'वळामणा' नामक कहानी प्रकाशित हुअी। अुसमें प्रयोग की गयी ग्रामीण लोक-बोलीकी ताकत, देहाती समाजका चित्रण और सजीव पात्रोंकी सृष्टि देखकर गुजरातके राष्ट्रीय कवि स्व. झवेरचन्द मेघाणीने अिस पुस्तककी बारबार प्रशंसा की थी। बादमें आप धीरे-धीरे अुत्तरोत्तर अिस ओर प्रगति करते गये और अिन पिछले दस-बारह वर्षोंमें गुजरातके साहित्यके चरणोंमें लगभग अेक दर्जनसे अधिक पुस्तकें समर्पित की है। अुपन्यासोंमें 'मळेला जीव', 'भीरुसाथी-भाग १, २', 'यौवन-भाग १, २', 'सुरभि' और 'मानवीनी भवाअी' तथा 'सुख-दु:खना साथी', 'जिन्दगीना खेल', 'जिवो दाड', 'पानेतरना रंग', 'लख चोरासी', 'अजब मानवी', 'पाछले बारणे', 'साचा शमणां' आदि कहानी-संग्रह है। अिनमें 'मानवीनी भवाअी' और 'मळेला जीव' तो आपके सर्वश्रेष्ठ अुपन्यास कहे जा सकते है, जो विश्वकी किसी भी भाषाके अुपन्यासोंसे टक्कर ले सकते है। 'मानवीनी भवाअी' में ग्रामीण समाजका हूबहू चित्रण और जगह जगह ऋतुओंके सजीव

वर्णन भरे पड़े हैं। सामान्य किसान-परिवारकी कहानीको लेकर और समग्र समाजकी पृष्ठभूमिमें रखकर लेखकने जिसमें जो वातावरण खड़ा किया है, वह अेक कुशल कलाकारका ही काम हो सकता है। हमारे साहित्यमें स्व. श्री शरद्‌बाबूने नारीको जो गौरव-गरिमा प्रदान की, वह विश्वसाहित्यमें क्वचित् ही और कहीं मिलेगी। श्री पन्नालाल पटेलकी शैलीपर श्री शरद् बाबूका काफी असर मालूम होता है। आपके अुपन्यासोंके नारी-पात्र राजु और जीवी शरद्‌बाबूकी अलका, पारु, राजलक्ष्मी, भैरवी और अन्नदासे किसी भी रूपमें कम नहीं मालूम होते।

'मळेलाजीव' और 'मळेला जीव' ये प्राण जीवनको स्पर्श करनेवाली कहानियां हैं। 'वळामणां' में लेखकने नायिका द्वारा बड़ी कुशलतासे विशुद्ध नैसर्गिक प्रेमका चित्रण किया है। 'मळेला जीव' में भिन्न-भिन्न युवक-युवतियोंके बीच हुअे प्रेमकी गाथा है। लगभग तमाम रचनाओंमें अुदात्त भावनावाले प्रेम-प्रसंग और गांवोंके सुन्दर सौन्दर्यके बीच पात्रोंको खड़ा करनेकी कला लेखक द्वारा हस्तगत की हुअी मालूम होती है। देहाती समाजकी विचार-सृष्टि और अुसके जीवन-प्रवाहको पकाकर विविध प्रसंगों द्वारा वातावरणको जमाने और अुसे प्राणवान बनाकर अपनी कहानीको अुठाव देनेकी कलाका आपमें खूब विकास हुआ है। अिसलिअे आपकी कहानियां टेकनिककी दृष्टिसे बड़ी लोकप्रिय हुअीं और थोड़े ही समयमें अुन्होंने गुजराती साहित्यमें स्थान पा लिया। अिसका अेक मजेदार परिणाम यह हुआ कि गुजरातके आलोचक वर्गमें श्री पन्नालाल पटेलकी दिन-ब-दिन बढ़ती हुअी लोकप्रियता और प्रसिद्धिके कारण अेक प्रकारका कुतूहल जाग अुठा और वे अुनके व्यक्तिगत जीवनके बारेमें जाननेके लिअे अुत्सुक हुअे। अिस सम्बन्धमें गुजरातके कवि श्री. अुमाशंकर जोशीके अेक पत्रका अुद्धरण देना अधिक दिलचस्प होगा, जो अुन्होंने स्व॰ मेघाणीको लिखा था.—

"जब पन्नालाल पटेल जैसे लेखक पैदा होते हैं, तब हमें अिनके प्रति जो आकर्षण पैदा होता है, वह अुनकी कृतियोंके कारण ही होता है। लेकिन हम अिस बातको आसानीसे भूल जाते हैं और अिन कृतियोंकी अपेक्षा अुनके व्यक्तिगत जीवनमें ही अधिक रस लेने लगते हैं।

'हमारे पन्नालालकी ही बात लें तो अुनके अपने आजतकके जीवनमें जो घटनाअें घटीं वे कभी कहानीके रूपमें परिणत होंगी, अैसा शायद ही किसीको महसूस हुआ होगा। 'देखिअे, अैसा अपढ़, दबा पिसा, संस्कार-हीन व्यक्ति कैसी बढ़िया चीजें कहानियोंके रूपमें हमें देता है।' यह कहकर चमत्कारप्रिय लोगोंका ध्यान खींचनेका लोभ छोड़कर मेरा बस चले, तो मैं यह खोजने और समझनेकी कोशिश करूंगा कि अितना सब होनेके बावजूद अिस व्यक्तिने अपने हृदयको कब संस्कार-सम्पन्न बनाया, अपने जीवनको किस प्रकार सरकार दिये? जो पन्नालाल केवल मजदूरी करना जानता है, अुस कले-वरमेंसे यह 'पन्नालाल पटेल' किस तरह पैदा हुआ? मैं अपनी बात कहूं तो मेरे लिअे मानवीय सम्बन्धकी दृष्टिसे 'पन्नालाल' नामक व्यक्तिकी कीमत शेक्सपीयरके नाटकोंसे कोअी कम न होगी, फिर भी कलाकार 'पन्नालाल पटेल' की बात करते हुअे तो मुझे अिस 'पन्नालाल' नामके व्यक्तिकी जीवन सम्बन्धी असाधारण जरूरी और रसपूर्ण बातें ही करनी चाहिअें। . . ."

"अिसता हूं कि यह बात पन्नलाल पटेल जैसेके अुदाहरणमें बहुत साफ रूपमें सामने आती है। बाकी मुझे तो करीबन यह सभी लेखकोंके बारेमें सच होता सम्भव लगता है। प्रत्येक कलाकार अिसी प्रकार हैतके भारके नीचे ही दबकर काम करता होता है।"

यह सयोगकी बात ही कहिअे कि श्री पन्नालाल पटेलको बचपनसे ही गुजरातके लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिक श्री अुमाशंकर जोशीका स्नेह और सत्संग मिला। अेक तरहसे यह भी कह सकते हैं कि श्री जोशीजीने ही अपनी सूक्ष्म दृष्टिसे श्री पन्नालाल पटेलमें गुप्त पड़ी हुअी निसर्गदत्त सौन्दर्य-दृष्टिको ढूंढ निकाला और अुसे समय-समयपर अुचित प्रोत्साहन तथा प्रेरणा देकर विक-सित किया। निःसन्देह अेक मामूली मजदूरको सफल कहानीकार बनानेमें श्री अुमाशंकरजी जोशीका बड़ा हाथ माना जायेगा।

मानवताकी अुपासना अिस साहित्यकारका मुख्य ध्येय है। महाभारत आपका प्रिय ग्रंथ है। अुपन्यास-लेखन प्रिय विषय है। ग्राम-जीवनका स्वाभाविक चित्रण आपकी मुख्य विशेषता है। समाजके शोषित और पीडित वर्गके प्रति आपको गहरी सहानुभूति है। और अपने अुपन्यास तथा कहानियोंमें आपने अुन्हींकी आवाज बुलन्द की है।

पिछले वर्ष गुजरात साहित्य सभाकी ओरसे "रणजित राय सुवर्ण चन्द्रक" नामक सुवर्ण पदक देकर गुजरातने आपका योग्य सम्मान किया। अुक्त अवसर-पर गुजरातीके लब्धप्रतिष्ठ लेखक श्री किशनसिंह चावडाने आपके बारेमें मराठी 'नवभारत' मासिकके संपादकके नाम अपने पत्रमें निम्नलिखित अुद्‌गार प्रकट किये थे :

"गुजराती साहित्यमें 'रणजितराय सुवर्ण चन्द्रक' का बडा महत्त्व है। अिसलिअे जिस किसीको वह मिलता है, अुसके बारेमें सहज ही कुछ जाननेकी अिच्छा पैदा होती है। अिस वर्ष यह पदक गुजरातके लोकप्रिय लेखक श्री पन्नालाल पटेलको दिया गया है। गुजराती साहित्यमें अुनका नाम केवल परिचित ही नहीं है, बल्कि वह बहु-जन-प्रिय भी बन गया है। गुजरात और राजस्थानका सरहदी गाँव 'माडली' अुनका जन्मस्थान है। श्री अुमाशंकर जोशीके शब्दोंमें कहें, तो 'माडली' सही रूपमें विशुद्ध देहात है। अिस बारेमें गलती नहीं हो सकती। यही अुक्ति अिस तरह भी कही जा सकती है कि श्री पन्नालाल वास्तवमें कथाकार हैं, अिस बारेमें भी किसी प्रकारकी गलती नहीं हो सकती।

"'मळेला जीव' और 'मानवीनी भवाअी' अुनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। ये अुपन्यास जब प्रकाशित हुअे तो अैसा लगा कि गुजराती साहित्यके वातावरणमें पहली वर्षासे फैलनेवाली सुगन्ध यहाँ-वहाँ फैल गयी। अुनके अुपन्यास और कहानियोंमें विशेष खूबी मालूम होती है। अुनमें धरतीका तेज, वीर्य और मानवता भरपूर मात्रामें पायी जाती है। श्री पन्नालालके साहित्य-क्षेत्रमें पदार्पण करनेसे पूर्व ग्रामीण बोलीकी शक्ति और अुसकी तेज-स्विताके प्रति लोगोंमें अुपेक्षा भाव था। लेकिन श्री पन्नालालने अुसका अिस कलात्मक ढंगसे अुपयोग किया कि अुससे अेक बलिष्ठ शैलीका जन्म हुआ है। ××× अिन सब कृतियोंमें सृजन-शीलताकी कुछ अैसी स्वाभाविक सुन्दरता है कि पाठकके अंतःकरणमें मनुष्यके लिअे करुणा पैदा होती है।

गुजरातीके अुपन्यास-लेखकोंमें 'सरस्वतीचन्द्र' के लेखक श्री गोवर्धनराम त्रिपाठीके बाद 'गुजरातके नाथ' के लेखक श्री कन्हैयालाल मुंशीका नाम आता है। और अुसके बाद निःसंकोच रूपसे 'भारेला अग्नि' के लेखक श्री रमणलाल वसन्तलाल देसाअीका नाम लिया जा सकता है। अिसी प्रकार श्री रमणलाल देसाअीके बाद अब किसका नाम लिया जाअे यह हमें नहीं सूझ रहा था। लेकिन आज अिसके लिअे गुजरातके पास श्री पन्नालाल पटेलका नाम है।"

दरअसल श्री पन्नालाल पटेल आजन्म कहानीकार हैं। गुजरातकी पाटीदार, गरासिया, बाळद आदि जातियोंके रीति-रिवाज, रहन-सहन तथा अुनकी भाषाकी खूबियोंका आपको बडा अच्छा अध्ययन है। कथाका सूत्र, टेक्नीककी पकड, सुघटित संकलन, अुसका विकास और अन्त सारी बातें बडे सहज ढंगसे साधकर अपनी प्रतिभाके बलपर आप अुसमें कुछ अैसा सौन्दर्य भर देते हैं कि सारी वस्तु नखसे शिख तक संपूर्ण मालूम होती है। श्री पन्नालाल पटेलकी सृजन-शक्ति, संवेदन-शक्ति और सौन्दर्य-दृष्टि अितनी व्यापक और विशाल है कि निकट भविष्यमें ही वे बहुत सम्भव है, गुजराती साहित्यके अितिहासमें सर्वश्रेष्ठ अुपन्यासकार सिद्ध हों।

कहते हैं श्री पटेल अभी-अभी लम्बी बीमारीसे अुठे हैं। अब भी वे बडे कमजोर हैं। फिर भी अपने थके-मांदे शरीरको लेकर ज्यों-त्यों गाडी चला रहे हैं। गुजराती समाजसे, जो अपनी दानवीरताके लिअे देश-विदेशमें मशहूर है, हमारा निवेदन है कि वह अपने अिस लाडले लेखकको आर्थिक चिन्ताओंके बोझसे मुक्त करके लम्बे आरामकी सुविधा कर दे और प्रभुसे हमारी प्रार्थना है कि वह अुन्हें जल्दीसे-जल्दी स्वस्थ और सबल बनाकर सरस्वतीकी सेवामें लगा दे।

मध्यभारतके पुरस्कृत कुछ प्रमुख साहित्यकार

प्रो रामचरण महेन्द्र, अेम अे

अत्यन्त हर्षका विषय है कि सरकार अपने अपने प्रान्तके प्रमुख साहित्यकारोंको प्रतिवर्ष पुरस्कृत करने लगी है। कवि तथा साहित्यकार अैसा आश्रय चाहता है जिसके सहारे वह आर्थिक चिन्ता मुक्त हो निरन्तर शान्तिपूर्वक साहित्य सृजन करता रहे। जनताकी सरकार यदि युगके प्रहरी साहित्यकारोंको प्रोत्साहन संरक्षण न देगी तो कौन देगा! अिस ओर प्रगति हो रही है यह देखकर संतोष होता है।

मध्यभारत शासनने अपनी साहित्य तथा कलाओंकी अेकेडमी मध्य भारत-कला-परिषद को ओरसे साहित्य जगतके वयोवृद्ध तथा प्रतिष्ठित विद्वान निर्णायकोंके निर्णयानुसार ३८०५ रुपयेका पुरस्कार मध्यभारतके सर्वश्री जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द हरिकृष्ण प्रेमी दुर्गाशंकर नागर महेन्द्र भटनागर विश्वामित्र वर्मा नटवरलाल स्नेही आनन्द मिश्र शंकरराव जोशी श्यामसुन्दर व्यास कमलाकान्त पाठक विष्णुप्रसाद व्यास स्वरूप कुमार गांगेय रामचन्द्र श्रीवास्तव तथा जानकीप्रसाद पुरोहितको मिला है। ये सभी साहित्यकार बधाअीके पात्र हैं। अिनमें कुछपर यहाँ विस्तारसे चर्चा प्रस्तुत की जा रही है जिससे अिनके द्वारा की हुअी साहित्य-सेवापर प्रकाश पड सके।

श्री जगन्नाथप्रसाद "मिलिन्द"

मध्यभारतके साहित्यकारोंमें मिलिन्द जीका स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मिलिन्द जी प्रान्तके सबसे पुराने बहुमुखी साहित्यकार हैं। मिलिन्द जी अनुभूति प्रधान प्रतिभाशाली कवि और कुशल नाटककार हैं। आपके आठ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं—१ जीवन संगीत २ नवयुगके गान, ३ बलिपथके गीत ४ भूमिकी अनुभूति अित्यादि काव्य संग्रह तथा सामाजिक नाटक समर्पण अैतिहासिक नाटक प्रताप प्रतिज्ञा और गौतमानन्द चिन्तनकण निबंध संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। जिस बार आपको भूमिकी अनुभूति' और गौतमानन्द पर तीसरी बार मध्यभारतके साहित्यकारोंमें सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया गया है।

मिलिन्द जीका जन्म कार्तिकी पूर्णिमा संवत १९६४ वि को हुआ मुरार हाओस्कूलमें प्रारम्भिक तिलक राष्ट्रीय विद्यालय अकोलामें मैट्रिक तक तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ पूनासे मैट्रिक अुसके बाद साहित्य और समाज विज्ञानकी अुच्च शिक्षा काशी विद्यापीठ बनारसके राष्ट्रीय कालेजमें हुअी। आपको हिन्दी संस्कृत और अंग्रेजीके अतिरिक्त मराठी अुर्दू बंगला और गुजराती भाषाका अच्छा ज्ञान है।

'मिलिन्द जीका प्रताप प्रतिज्ञा अमर नाटक है। हिन्दीका प्रत्येक विद्यार्थी अिस कृतिसे भली भाँति परिचित है। पढकर या अभिनय किसी न किसी रूपमें जिससे परिचय प्राप्त किया है। अिस नाटकसे ही नाटककारोंकी अुच्चतम पंक्तिमें आपको आसन मिल गया था। तदुपरान्त विचार और कला दोनोंहीका पर्याप्त विकास हुआ है। 'समर्पण का ओज और भाषा सौष्ठव दर्शनीय है। नवीनतम नाटक गौतमानन्द बहुत हृदयस्पर्शी है। अभिनयकी दृष्टिसे भी अुत्कृष्ट है। प्रगतिशीलता अव कलात्मकता दोनोंका पूर्ण सामंजस्य अिस नाटकमें हो गया है।

काव्यके क्षेत्रमें मिलिन्द जीका स्थान सर्वश्रेष्ठ है। 'अुनकी कविताकी वेदना और भावना केवल मनको छूतीही नहीं, अुसमें अेक आलोडन भी अुत्पन्न करती है। अुनमें आजका वह स्वर और चिन्तन भी है जिसमें अेक श्रेष्ठ सुखी और समृद्ध मानव समाजकी आशा है, अेक सच्चे साधनाकी छाप और मानवीय वेदनाकी अेक कसक है। मध्यभारत शासनके शिक्षा विभाग द्वारा नियुक्त साहित्य मनीषियोंकी समितिने आपके काव्य संग्रह बलिपथके गीत को १०००) रु के प्रथम पुरस्कारके योग्य ठहराया था। अुत्तर प्रदेश आपके

"समर्पण" तथा 'बलिपथके गीत"पर ८००) रु का पुरस्कार मिला था, जो मध्यभारतके साहित्यकारोंमें सर्वाधिक था। "भूमिकी अनुभूति" और "गीतमानन्द" पर सन् १९५३ में ७००)का प्रथम पुरस्कार आपको प्राप्त हुआ है। मिलिन्दजीको हार्दिक बधाओ।

श्री हरिकृष्ण "प्रेमी"

कवि अेव नाटचकार "प्रेमी" जीने काव्य तया नाटक दोना ही क्षेत्रोंमें अच्छी ही ख्याति अर्जित की है। काव्य-क्षेत्रमें आपकी "आँखोंमें", "जादूगरनी", "अनन्तके पथपर" "रूप-दर्शन", "वन्दनाके बोल" अित्यादि काव्य-सग्रह प्रकाशित होकर सर्वत्र प्रशसित हुअे हैं। प्रेमीजीकी कवितामें विभिन्न घारायें हैं—१ राष्ट्रीय क्रान्ति, २ गाधीवादी दर्शन, ३ वेदना मिश्रित प्रेम सगीत, ४ आध्यात्मिक आदर्शवाद। रोमाटिक कविताओंमें आपकी "आंखोंमें", "जादूगरनी" और "रूपदर्शन" बहुत मर्मस्पर्शी हैं। "अनन्तके पथपर" दार्शनिक विचार प्रधान खण्डकाव्य है। अिसमें प्रेमीजीने आत्माको अेक स्त्रीका रूप दिया है, जो अपने प्रियतमको नही जानता, अुसके हृदयमें प्रेमकी वेदना अुत्पन्न होती है, वह परमेश्वरको ढूँढती है, पर सर्वत्र भटकनेके अुपरान्त वह अुसे अपने हृदयमें ही मिलता है। अद्वैतके सिद्धान्तपर अिसकी समाप्ति होती है। "प्रतिमा" और "अग्निगान" आपके फुटकर काव्य-सग्रह है। "प्रतिमा" में प्रेमजन्य अनुभूतियाँ हैं। 'रूपदर्शन" में सौंदर्य, प्रेम, और यौवनके विविध चित्र खीचे गये हैं। हिन्दीके गीत और अुर्दूके गजल दोनोको सम्मिश्रित कर "प्रेमी" जीने अेक नयी चीज हिन्दीको दी है।

नाटकोंके क्षेत्रमें 'प्रेमी' जीके १—"विषपान" २—"रक्षाबन्धन", ३—'शिवासाधना", ४—'प्रतिशोध" ५—"आहुति", ६—'स्वप्नभग", ७—' मित्र', ८—"अुद्धार", ९—' शपथ' अित्यादि अुत्कृष्ट नाटक प्रकाशित हो चुके हैं। ये अैतिहासिक, राष्ट्रीय और सामाजिक तीनों प्रकारके हैं। 'विषपान" में सामन्तवादकी त्रुटियाँ, स्वार्थान्धता तथा अेकताके नष्ट होनेसे अुत्पन्न कमजोरियोका चित्रण है, तो 'रक्षाबन्धन में हिन्दू-मुस्लिम अेकता, व्यक्तिगत स्वार्थोंके अूपर अुठकर देश और राष्ट्रके हितके लिअे स्वार्थत्याग करनेका चित्रण हुआ है। "शिवासाधना" में शिवाजीकी राष्ट्र-भावनाका चित्रण है। "प्रतिशोध" में छत्रसालका राष्ट्रवाद, 'आहुति" में धार्मिक अेकता, "स्वप्नभग" में आदर्श पुरुषके रूपमें दाराका चित्रण हुआ है। 'मित्र" में मित्रका आदर्श अुपस्थित हुआ है। "अुद्धार" में राष्ट्रीय विचारधाराकी अभिव्यजना है। "शपथ" में प्रजातन्त्रके पक्ष तथा राजतन्त्रके विरुद्ध बडा सुदर विवेचन हुआ है। अभिनयकी दृष्टिसे ये नाटक सफल रहे हैं।

'प्रेमी" जी मध्यभारतके पुराने साहित्यकार हैं। सम्पादनके क्षेत्रमें भी आपकी सेवायें श्लाघनीय हैं। "त्यागभूमि" का १९२७ से ३० तक, 'कर्मवीर" का १९३०-३१ तक, "भारती लाहौर" का १९३२ से १९३३ तक और "रेखा" का १९३५-३७ तक सम्पादन किया है। "रूपदर्शन" पर यू पी से पुरस्कार मिला था। अब "वन्दनाके बोल", "बादलोंके पार" (अेकाकी) तथा "शपथ" नाटकपर ५५०) रु० का पुरस्कार आपको प्रदान किया गया है। "प्रेमी" जीकी जीवन भरकी साहित्य साधनाको देखते हुअे यह राशि स्वल्प है।

डॉ. दुर्गाशंकरजी नागर

योग, आध्यात्म तथा मनःविज्ञानके क्षेत्रोंमें कार्य करनेवाले सुप्रसिध्द आध्यात्म वेत्ता मानस चिकित्सक तथा अुज्जैन-निवासी "कल्पवृक्ष" के सम्पादक स्व० डाक्टर दुर्गाशकरजी नागर आध्यात्मिक साहित्यके निर्माण तथा क्रियात्मक कार्य कर प्रसिध्दि प्राप्त कर चुके हैं। ३० वर्ष तक आप आध्यात्म विद्याके मासिक-पत्र 'कल्पवृक्ष" का सम्पादन करते रहे। दुर्भाग्यसे नागरजी अब हमारे बीचमें नही है, किन्तु अुन्होंने जो रोगोपचार, आध्यात्म जीवनका प्रसार, प्रचार तथा साहित्य सृजन किया है, वह दीर्घकाल तक हमें प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। १—"प्राण चिकित्सा', २—'प्रार्थना-कल्पद्रुम", ३—"आध्यात्म शिक्षा-पध्दति", ४—"स्वर्ण-सूत्र", ५—"विशाल जीवन" आदि पुस्तकें नागरजीकी स्थायी कृतियाँ हैं। अिनके अतिरिक्त मानसिक आध्यात्मिक अुन्नतिकी दृष्टिसे किये गये आपके भाषण बडे ओजस्वी होते थे। नागरजीके सम्पादकीय लेखोंका अेक सग्रह 'विशाल जीवन" नामसे प्रकाशित हुआ है। स्व०

नागरजीको अुनकी पुस्तक स्वर्ण सूत्र पर २५०)रु० का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। भय चिन्ता क्लेश निरुत्साह आदि मनोविकारोंको दूर करने तथा जीवन पथपर अुत्साहसे अग्रसर करनेकी दृष्टिसे यह पुस्तक अमूतपूर्व है। अिसमें सत नागरके विचारोंका निचोड़ा गया है।

श्री महेन्द्र भटनागर, अेम. अे

कवि तथा कहानीकार धार निवासी महेन्द्र भटनागर अेम अे काव्य जगतमें अपने प्रगतिशील दृष्टिकोण तथा यथार्थवादी चित्रणकी दृष्टिसे नवयुवक कवियोंकी पीढीमें प्रसिद्धि पा रहे हैं। १-तारोंके गीत २-टूटती शृंखलायें ३-बदलता-युग तीनों काव्य-संग्रह जनवादी प्रगतिशील चेतनाको मुखरित करते हैं। शोषक वर्गके प्रति अुनके हृदयमें घृणा है। शोषित समाज तथा पूंजीवादी वर्गके संघर्षके अनेक सजीव चित्र अुन्होंने अुपस्थित किये हैं जिनमें शोषणके प्रति घृणा और अेकता अेवं साम्यवादके प्रति रुचि स्पष्ट मिलती है। हिंसा अुत्पीडन पददलित श्रमिक कृषक आदिकी भावनाओं आपने अूची की हैं। आपकी कविताओं मानव मात्रको अेक ही धरातलपर खड़ा करके प्यार करना सिखाती हैं। भटनागरजी देशव्यापी राजनैतिक अुथल पुथलसे प्रभावित हुअे बिना नहीं रह सके हैं और राजनैतिक घटनाओंपर भी आपने पर्याप्त लिखा है।

बदलता युग में भटनागरजीने भारतीय जीवन समाज और मानवमें युग परिवर्तनके कारण आनेवाले परिवर्तनोंको अेक जागरूक द्रष्टाके रूपमें देखा है। जिस संक्रान्तिकालमें अिन भावनाओंको मूर्त किया गया है अुसकी महत्वपूर्ण घटनाओंका क्रमिक संक्षिप्त अितिहास भी अुपलब्ध हो जाता है। यह वह साहित्य है जो व्यक्तिको जीर्ण संस्कारों और राष्ट्रको अब दासताम मुक्त देखना चाहता है। देशकी राजनीति अेवं समाजमें जो परिवर्तन हुअे हैं अुनका प्रतिबिम्ब अिन कविताओंपर स्पष्ट है। अिसमें काव्यमें नवीन प्रयोग भी हैं जो हृदयकी रागात्मक प्रवृत्तिसे परिपूर्ण हैं। जनवादी विचारधाराको स्पष्ट करनेके लिअे कविने नवीन प्रतीक, अभिव्यंजनाओं छन्द और अलंकारोंका प्रचुर प्रयोग किया है। टूटती शृंखलाअें में प्रयोगवादी ढंगकी भी कुछ कविताअें हैं।

श्री भटनागरजीको अुनकी लड़खड़ाते कदम पुस्तकपर पुरस्कार घोषित हुआ है। अिसमें अुनकी यथार्थवादी कहानियोंका संग्रह है। विचारोंमें अुग्रता और क्रान्तिका स्वर अिनमें प्रकट हो गया है।

श्री विश्वामित्र वर्मा

अुज्जैनके श्री विश्वामित्र वर्माकी कअी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। १-प्राकृतिक चिकित्सा विधान २-प्राकृतिक स्वास्थ्य साधन ३-जीवनके दिव्य साधन ४-दिव्य सम्पत्ति आदि विशेष सुन्दर बन पड़ी हैं। वर्माजी मननशील विद्वान हैं। योग आध्यात्म तथा व्यवहारिक मनोविज्ञानके अभ्यासी हैं। आजकल आप कल्पवृक्ष मासिकके सहायक सम्पादकके रूपमें भी कार्य कर रहे हैं। वर्माजीका सम्पूर्ण साहित्य दो भागोंमें विभाजित किया जा सकता है १-स्वास्थ्य तथा प्राकृतिक जीवन सम्बन्धी साहित्य — अिस वर्गमें वर्माजी प्रान्तमें सर्वश्रेष्ठ विचारक माने गये हैं और आपकी यौगिक स्वास्थ्य साधन पुस्तकपर पुरस्कार घोषित किया गया है। दूसरे वर्गमें वर्माजीको आध्यात्म मनोविज्ञान दिव्यज्ञान सम्बन्धी दर्शन ग्रंथ हैं। यह बड़ा ठोस और प्रेरणात्मक साहित्य है। जिस वर्गमें १-जीवनके दिव्य साधन २-तथा दिव्य सम्पत्ति पुस्तकें दुखों थके अुलझनमें फँसे भ्रान्तनिराश व्यक्तियोंके लिअे जादू जैसा प्रभाव डालती हैं। वर्माजीकी दिव्य सम्पत्ति पुस्तक भी पुरस्कृत करने योग्य है। अिसका जितना प्रचार हो थोड़ा है। अिस प्रकार सृजनकर वर्माजी अमर हो गये हैं।

अिन विद्वानोंके अतिरिक्त मध्यभारत प्रान्तके अन्य विद्वानोंको जिस प्रकार पुरस्कार प्राप्त हुअे हैं — श्री नटवरलाल स्नेहीको नागरण और गांधी मानस' पर ३५० रु आनन्द मिश्र ग्वालियर को साधना पर २५० रु श्री नरहरराव जोशीको फसलके शत्रु' पर २०० रु श्री श्यामसुन्दर व्यासको गिलटके झुमके पर २०० रु श्री कमलाकान्त पाठकको आधुनिक हिन्दी काव्य पर २०० रु श्री विष्णुप्रसाद व्यासको आत्म निर्माण पर १०१ रु श्री स्वरूपकुमार गांगयको रोटियों और नंगोंका जुलूस पर १०१ रु श्रीरामचन्द्र श्रीवास्तवको काव्यकी परिभाषा पर १०१ रु तथा श्री जानकीप्रसाद पुरोहितको दामनगीर पर १०१ रु के पुरस्कार प्राप्त हुअे हैं। ये सभी साहित्यसाधक बधाओंके पात्र हैं।

विचित्र बीन

· श्री "अनाम" :

अेक समयकी बात है। भगवान चिंतामें डूबे थे। मारे चिंताके अुन्हें नींद नहीं आती थी। रातों जागते, पर सोच न पाते क्या करें। निदान अुदास रहने लगे।

"लुप्लुप" तारे चमकते, चांद हँसता रहता पर भगवानका दुख न भूलता। पृथ्वीपरसे दुख-दर्दकी कराहें अुठा करतीं और भगवानके कानोंसे टकरातीं। पृथ्वीपर हरअेक दूसरेसे लड़ता। झगडेका शोर अुठता। वह दूर-दूर तक फैल जाता।

झगडा क्यों होता? अुसका अितना शोर क्यों होता? अुस शोरगुलमें भगवान अुदास क्यों होते? भगवान भी न समझ पाते। फिर झगडा होता क्यों? क्या बिना कारण झगडा होता था।

बात ही कुछ अैसी थी।

कुत्तेने बिल्लीका पीछा किया। बिल्ली पेड़पर चढ़ गयी। कुत्तेने सौगन्ध ली। बिल्लीको पेड़से कभी न अुतरने दूँगा। कुछ देर बाद बिल्लीको भूख लगी। बिल्ली गुर्राने लगी। पर कुत्ता टस-से-मस न हुआ। कुत्तेका पेट भरा था। वह बिल्लीकी भूख क्या जाने?

रीछने पहाड़परसे चट्टान लुढका दी। लुढकते-लुढकते चट्टान घाटीमें आ गिरी। हरिनका बच्चा चट्टानके नीचे दब गया। रीछने अैसा क्यों किया?

कबूतरने घोसला बनानेके लिअे तिनके जमा किये। अुनको गीध ले भागा। कबूतर चिल्लाता रह गया।

सेवारने अपनी शाखें नालेके आरपार पसार दीं। शाखें फैलकर जाल बन गयीं। जालमें नालेकी सब मछलियाँ फँस गयीं।

केंचुअेने जमीनके अूपर सिर निकाल लिया। वह अपने सीधेपनके लिअे बदनाम था। बदनामी अुसे अच्छी न लगी। अुसने गिरगिटको ललकारा। मेरे साथ दौड सकेगा? होड लग गयी। हार गये तो गिर-गिट दुश्मन हो गया! वाह-वाह!!

चूहे-चिड़ियाँ, मगर-मछली, पेड-पहाड़के, घास-पात सब अेक दूसरेके दुश्मन! अेक दूसरेसे लड़ा करते। जमीनके अन्दर और जमीनके अूपर रहनेवाले सारे जीव-जन्तु झगडा करते। आदमी भी था और वही सबमें ज्यादा हो-हल्ला मचाया करता। झगडा-फसाद खडा करता! मार-पीट करता। अैसी सफाअीसे अपने ही भाअियोंकी हत्या करता— देखते-देखते बहुतोंका सफाया हो जाता। लाशोंके अंबार लग जाते।

अैसी हालतमें भगवानको नींद न आती तो और क्या होता? अुसीने सारी दुनिया बनायी। तमाम जीवधारी बनाये। बेजान चीजें बनायीं पर आज वे सब तो अेक दूसरेका नाश करनेपर तुले हैं।

"मैं क्या करूँ?" भगवान बार-बार सोचते; पर कुछ निश्चय न कर पाते। अन्तमें हवाको बुला भेजा। हवा दुनियाके हर कोनेमें जा सकती है। अुसे हर जगहकी खबर रहती है। हवाके झोंकेके झोंके आ गये। अुत्तरी हवा, दक्षिणी हवा, पूर्वी हवा, पश्चिमी हवा।

भगवानने कहा— दुनियामें घनघोर अशांति है। बडा हाहाकार मचा है। अिसे कैसे रोकूँ? मैंने सबको खानेकी चीजें दीं। पीनेको पानी दिया। गरमीके लिअे सूरज दिया। रोशनी और खुशीके लिअे चांद दिया। सबको साथी दिये ताकि कोअी अकेला न रह जाअे। प्रेमसे रहनेके बदले वे लड़ते हैं। बताओ क्या करूँ?

हवा चुपचाप सुनती रही। आपसमें धीरे-धीरे अुसने सलाह की। फिर भगवानके कानमें कुछ कहकर जाने लगी।

भगवानने खुश होकर अुसको धन्यवाद दिया। फिर दुनियावालोंको तुरन्त अेक सन्देश भेजा। सब

गोवरधन पहाड़पर जमा हों। हरअेक अपनी बढ़ियासे बढ़िया भेंट लेकर आये।

दुनियाके कोने-कोनेसे तमाम जीवधारी और बेजान चीजें पहाड़पर अिकट्ठी हुअीं। पर आदमी न आया। अुसे बुलाया ही नहीं था तो कैसे आता? पहाड़पर बड़ा गुल-गपाड़ा मच गया। किसीको ख्याल ही न रहा कि वे भगवानके मेहमान बनकर आये हैं। सब चिल्ला रहे थे रास्ता छोड़ो "हमें यहां क्यों बुलाया गया" सब जुड़नेवाले अेक-दूसरेको धक्का देते रहे।

अितनेमें भगवानकी वाणी अुनके कानोंमें पड़ी और सब शांत हो गये। चारों ओर सन्नाटा छा गया। भगवान कह रहे थे—

"मैंने तुम सबको यहां क्यों बुलाया? तुम सुखसे रह सको अिसका अुपाय बतानेके लिअे। मैंने तुम्हें प्रेमसे जीवन बितानेके लिअे मित्र दिये, अनाज, पानी और वस्त्र दिये। जो तुमने चाहा सब तुम्हें मिला। पर सोचो क्या तुम सुखी हो। क्या तुम्हारा जीवन प्रेमसे बीत रहा है? मैं जानता हूँ। तुम आपसमें लड़ते हो। अेक दूसरेको नापसन्द करते हो। घृणा करते हो। अिसका मुझे बड़ा दुख है। मैं बेचैन हूँ। हैरान हूँ। परेशान हूँ।

सब खड़े रहे। चुपचाप सुनते रहे। बहुतोंके सिर शर्मसे झुक गये। अुस सन्नाटेमें सबने सुना— पेड़ोंसे झरकर कोमल धरतीमें पानीकी बूँदें समाती जा रही थीं—टप् टप् टप्।

चुपचाप-अेकके बाद अेक-सबने अपनी भेंट भगवानके चरणोंमें रख दी।

कुत्तेने पंजा दिया। गीधने पंख, बरगदने शाखोंका गट्ठर। गिलहरीने सफेद धब्बोंवाली पूँछ। अिसी तरह सबने कुछ-न-कुछ भेंट दी। जब यह काम पूरा हो चुका तो भगवान बोले—"अब मैं तुम्हें अपनी भेंट दूँगा" और अैसा कहकर ढेरपरसे अेक तूंबी अुठा ली, अुसमें मधुमक्खीके मोमसे अेक टहनी लगा दी। गीधका पंख जोड़ दिया। बैलके चमड़ेका तांत लगा दिया। जितनी चीजें अुपहारमें मिलीं सबको जोड़ जोड़कर अेक विचित्र बीन बना डाली। बीनको अिन्द्र धनुषके रंगोंसे रंग दिया।

फिर—?

भगवानने बीनको छू दिया। बीन झनझना अुठी। भगवानने अुसे बजाया। भगवानकी आज्ञा हुअी। बारी बारीसे सबने शान्तिका गीत बजाया। गीत गूँजने लगा। गीतके प्रभावमें सब अपना वैर-विरोध भूल गये। बीन बजती रही। गीत गूँजता रहा।

सब हाथोंमें घूमकर बीन फिर भगवानके हाथोंमें आयी। भगवानने कहा, यह शान्तिकी बीन है। अिसे सबकी मददसे बनाया है। ये तुम्हारे मेल जोलका असर है।

अब तुम सब कोशिश करो कि तुम्हारे वैर-विरोधकी आवाज अिस विचित्र बीनके शांतिके गीतमें डूब जाअे।

सब चुपचाप सुनते रहे। पर तोतेसे न रहा गया। बोल ही अुठा। सबसे झगड़ालू तो आदमी है। हम तो फिर भी लड़झगड़कर अेक हो जाते हैं। आदमी तो हमेशा लड़ता झगड़ता रहता है। लड़ना ही अुसका काम हो गया है ..

तोतेकी बात बढ़ती जा रही थी। अुसे आपेसे बाहर देखकर भगवानने हाथ अुठाया। शांत होनेका अिशारा किया।

फिर बोले—

मैं जानता हूँ। आदमी अिसी कारण यहाँ नहीं बुलाया गया। शायद तुम अुसे सही रास्ता बता सको। पृथ्वीपर जाकर मैंने जैसा बताया वैसा करना। शायद वह तुमसे सबक ले सके।

सबने भगवानकी बात ध्यानसे सुनी। अुसका ठीक-ठीक मतलब समझ पाये। भगवानकी आज्ञा पाकर सब अपने-अपने स्थानको लौट पड़े। लड़ते-झगड़ते आये थे। गाते बजाते लौटे। देखना है जानवरोंसे आदमी क्या सीखता है।

महिरावण

: श्री 'श्रीरंग' :

[लेखक "श्रीरंग" यह श्रेष्ठ कन्नड नाटककार श्री आद्य रंगाचार्यका आधुनिक साहित्यिक अुपनाम है। आप लंदन विश्वविद्यालयके अेम्० अे० हैं। १८ वर्षतक धारवाडके कर्नाटक कालेजमें संस्कृतके प्राध्यापक रहे। आपने कन्नड साहित्यकी साधनाके क्षेत्रमें अेकांकी नाटक-लेखक और समालोचकके रूपमें पदार्पण किया। सामाजिक कुरीतियोंपर व्यंग कसनेमें आपकी समता करनेवाले कर्नाटकमें गिने गिने ही हैं। फब्तियाँ कसनेमें बेमुरव्वती होती है, पर औचित्यका भंग नहीं होने पाता। तीखे व्यंगोंमें समाजके लिअे मार्गदर्शनकी ओर संकेत भी रहता है अिसलिअे आपकी रचनाअें लोकप्रिय हुअी हैं। आपने कन्नड अुपन्यास क्षेत्रमें भी अपना हाथ बढाया है। आपने केवल अेकांकी नाटक ही नहीं लिखे हैं; बल्कि बडे नाटक तीन अंकोंके नाटक भी लिखे हैं। आपके नाटकोंमें हरिजनवार संध्याकाल, प्रपंच पाणिपत, जरासंधि, नरकमें नरसिंह आदि प्रसिद्ध नाटक हैं, तो अुपन्यासोंमें विश्वामित्रकी सृष्टि, पुरुषार्थ, कुमारसंभव, अनादि, अनंत आदि अुपन्यास भी मशहूर हैं। अिसके अलावा आपका गीता-गांभीर्य भगवद्गीतापर आलोचनात्मक ग्रंथ पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। भाषाशास्त्रपर भी आपने लिखा है। आपकी प्रतिभा बहुमुखी है। आप कअी साहित्यिक संस्थाओं और सभा-सम्मेलनोंके अध्यक्ष भी रह चुके हैं। अच्छे वक्ता अेवं अभिनेता भी हैं। धारवाड़में अपनी पंचवटीमें निवास करते हुअे केवल साहित्य-सेवीका जीवन बिता रहे हैं। आधुनिक कर्नाटक-युवकोंके बडे प्यारे हैं।

भारतीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करनेवाली 'राष्ट्रभारती' के अिस अंकमें जो महिरावण अेकांकी प्रस्तुत किया जा रहा है वह व्यंग शैलीमें राजनैतिक चुनाव-क्षेत्रकी झांकी करानेवाला है। अुसके पात्रके नामोंमें भी कुछ अर्थ है। सरळण्ण-सरलभाअी, चदुरप्प-चतुरजी, गुबज्ज छिपे रुस्तम या गुप्तदादा, हुचय्य-बुद्धूलाल है। पात्रोंके नाम भी अुनके गुण-दोषोंके परिचायक हैं जो अिस 'अेकांकी' के पठनसे विदित हो जाअेंगे :

श्रीरंगजीने अपनी आत्मकहानी भी बिलकुल संक्षेपमें लिखी है। अुसे हम तैयार करवा रहे हैं। वह भी 'राष्ट्रभारती' के किसी आगामी अंकमें पाठकोंको भेंट की जाअेगी।—संपादक]

(सरळण्णाके घरकी अटारीपरके कमरेका अन्तःकक्ष (प्रेक्षकोंके) बायीं ओरकी दीवारकी दो खिड़कियोंके बीचमें, दीवारसे लगकर कुर्सी, सामने मेज, अुसपर मतदाताओंकी सूचीके कागज बिखरे पड़े हैं। सामनेकी दीवारके बीचमें नीचेसे अूपरकी ओर जानेका दरवाजा; सामने जंगल दिखता है। (प्रेक्षकोंके) दाहिनी ओरकी दीवारसे कुछ दूरपर सोफा-कुर्सियाँ हैं। मेज और दरवाजेके मध्यके कोनेपर अेक-दो शेल्फ है, अुनपर भी मतदाताओंकी सूचीके कागजात करीनेसे रखे हुअे हैं। दीवारोंके पलस्तर छोटे छोटे कागजके टुकड़े चिपकाये गये हैं जिनपर लिखा हुआ है—पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, अुत्तर। कुर्सीके दाहिनी ओर—रंगमंचके सामनेकी ओर—घरमेंसे अटारीपर जानेका मार्ग है। अिस मार्ग और कुर्सीके बीचके कोनेमें दीवारसे लगाकर टेलिफोन रखा हुआ है। समय सुबहके नौ बजे हैं। परदा अुठता है। सरळण्ण अकेला रंगमंचपर है। अुसको देखनेसे अैसा लगता है कि मानो वह अभी कुर्सीपरसे अुठ खड़ा हुआ है। मुँहपर व्यग्रता है। कलाअीकी घड़ीकी ओर बार बार देखता है। दाहिनी ओर मुँह करके अैसा अभिनय करता है कि मानो कुछ सुन रहा है। अेक मिनटमें अंदरकी ओर जानेवाली सीढ़ियोंके किनारेपर खड़ा होकर नीचे देखते हुअे—

"क्या रहा? हाँ...जरा ठहरो अभी कोओी आया नहीं है" कहकर फिर कुर्सीकी तरफ बढता है। अपनी घडी देखता है। बाहरसे आवाज सुनायी पडती है, बाहरकी सीढियोंके किनारेतक जाकर, जगलेपर हाथ रख नीचे देखते हुअे—)

सरळण्णा :—कौन? ...क्या चाहिअे आपको? .. सरळण्णाजीका घर? क्यों? मैं ही हूँ सकट, क्या कहा? ...आगे बढकर पूछिअे...हाँ.. वह नीमका पेड दीखता है न (घूमकर भीतर कदम रखते हुअे बाहरवालोंके लिअे कुछ अूँची आवाजसे) हाँ, हाँ...(भीतर आते हुअे अुसास छोडकर मुस्कराहटको लिये खिले मुँहसे) 'चुनावके लिअे खडे हुअे सरळण्णा' वाह! चुनावके लिअे खडा होना मानो माथेपर पडी निशानीकी तरह पीठपरकी ग्रथिकी तरह पहचाननेका चिन्ह जैसा हुआ है! हूँ। (मेजके पास आकर, अभीतक किसीके न आनेके कारण तनिक निराश सा या अूबा-सा भाव प्रकट करनेकी मुख मुद्रासे) खैर किसीके आ जानेतक अिसे जरा जोरसे पढ तो लें (कहकर मेजपरसे कागज अुठाके अैनक नाकपर चढाकर अपने आप जोरसे पढने लगता है।) "आपका देश आजाद, आप भी आजाद हैं, आपके अुम्मीदवार भी आजाद हैं। अगर ये तीनों आजाद अेक तरफ मिल जाअें, तो तीनसे मुक्ति या तीन तेरह जैसे कहते हैं न वैसे, गरीबी और अकालसे आपको मुक्ति जरूर मिलेगी। मैं भी नागरिक हूँ, आप भी नागरिक हैं, तो आपमें और हममें क्या फर्क है? कुछ भी नहीं, कहा कि कुछ भी नहीं है।" (अचानक रुककर, घरके भीतर जानेकी ओरकी सीढियोंकी तरफ देखकर) क्या कहा? कुछ नहीं-कहा? क्या? कौन है पूछती हो? कोओी नहीं है-कह तो दिया। (पर, अिसके पढने लगते ही, ठीक अुसी समय, अेक व्यक्ति बाहरकी सीढियाँ चढकर द्वारपर आ खडा होता है। अुस ओर पीठ होनेके कारण सरळण्णाको दीख नहीं पडा था। जब सरळण्णाने कहा था 'कोओी नहीं है कह तो दिया' तब अुस व्यक्तिका बन्द मुँह मुस्कुराहटसे खिलता है।) (खीजे हुअे स्वरसे) क्या है वह? कोओी नहीं हो तो क्या बोलना न चाहिअे? क्यों? क्या कहती हो कि मेरी पहचान मुझे ही नहीं है, जब अकेला रहूँ तब चुप रहूँ! (दरवाजेके पासका व्यक्ति जब हँसा तो तुरन्त घूमकर) कौन? (हँसते हुअे) अरी—तुम हो? (अन्दरकी सीढियोंके पास आकर) अरी, छोड दो, या ही दिल्लगीके लिअे कहा। क्या मुझपर सनक सवार हुअी है—अपने आप बातचीत करनेके लिअे? चदुरप्पा है, यहाँ वह और मैं दोनों बात कर रहे हैं। क्या कहा? न-न नहीं चाहिअे, कह तो दिया कि नहीं चाहिअे (कहते हुअे मेजके पास आकर, दायाँ हाथ अुसपर रख चदुरप्पाको देखता है।)

चदुरप्पा :—(हँसते हुअे) कुछ नहीं चाहिअे कहा न तुमने? (कहते हुअे अन्दर आता है।)

सरळण्णा :—'चदुरप्पा आया है' कहते ही पूछा कि चाय बनाअूं? मैंने कहा—नहीं चाहिअे।

चदुरप्पा :—(अेक कुर्सी अुठाकर मेजके पास रखते हुअे) नहीं चाहिअे कहा! बनानेवाली जब कहती है कि बनाअूं तो तुमने क्यों कहा कि नहीं चाहिअे?

सरळण्णा :—वह मेरा तत्त्व है, सिद्धान्त है। क्या यह तुम नहीं जानते?

चदुरप्पा :—(बैठकर, सहसा चकित हो अुसकी ओर देखते हुअे) तत्त्व? सिद्धान्त? यानी कल जो तुमने कहा अुसे दिल्लगीसे नहीं कहा, क्या तुम कहते हो कि तुमने कल तत्त्व ही मानकर कहा?

सरळण्णा :—(बायाँ पैर नीचे रख, मेजपर बैठकर) हाँ, चदुरप्पा, मेरा स्वभाव जानते हुअे भी पूछते हो? क्या तुम अैसा समझते हो कि तुमको चाय देना बद करवानेके लिअे अैसा किया है मैंने?

चदुरप्पा :—(बडप्पनके स्वरमें) पागलोंकी तरह मत बोलो। क्या मैंने वैसा कहा? कल तुमने मुझे भी चाय न दूँगा, कहा। मैंने अुसे दिल्लगी समझा।

सरळण्णा :—तुमको भी, कहा तो क्या? किसीको चाय दी तो दी के समान ही हुआ न?

चतुरप्पा —भाओी सरळण्णा, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्रपर सन्निपात* के चढनेकी भाँति तुमपर भी अुसने चढना शुरू कर दिया ! जैसे मतदाताओंको मोटर नहीं देनी चाहिअे, वाहन नहीं देना चाहिअे, रिश्वत नहीं देनी चाहिअे, कह दिया तो तुम कहते हो कि घरपर आनेवालोंको चाय भी नहीं देनी चाहिअे।

सरळण्णा —यानी ? रिश्वत माने क्या ? सिर्फ नकद रुपया ही रिश्वत नहीं है, केवल अपने मनसे, मुझे अच्छा मानकर अुनको मुझे अपना मत देना चाहिअे, अुसके लिअे सूद लानेवाली कोओी भी बात हो तो वह रिश्वत है। अभी देखो न ? तुम तो मेरे मित्र हो। अिस चुनावमें मेरे लिअे दौड़-धूप करते हो। मान लो कि मैंने तुम्हें घरमें चाय-नाश्ता दिया। कल चुनावके दिन तुम विचार करते हो "सरळण्णा मेरा मित्र है, अिसलिअे मैंने अुसके लिअे दौड-धूप की। भले आदमीने रोज चाय-नाश्ता दिया। अिसलिअे मैंने अुसीको वोट देना अुचित समझा "...अैसे प्रसंगमें, मौकेपर तुम क्या कहते हो ?

चतुरप्पा —(माथा ठोककर) कहता हूँ— कठिन है, कठिन ! अरे, तुमने यह समझा है कि मैं तुम्हारे लिअे यों ही दौड धूप करता हूँ तुमको वोट नहीं दूँगा, अगर तुमने चाय-नाश्ता दिया तो अुसके वास्ते तुमको वोट दूँगा ?

सरळण्णा :— क्यों न समझूँ ?

चतुरप्पा —मैं तुम्हारा दोस्त हूँ ! चुनावमें तुम्हारा Agent (अेजंट) मैं हूँ। मुझपर विश्वास नहीं है ?

सरळण्णा —विश्वास तो पूरा है। यह तो तुम भी जानते हो कि मेरा विश्वास तुमपर पूरा-पूरा है।

चतुरप्पा :—तो फिर—?

सरळण्णा —अिसीलिअे दूसरोंको अपना मत देना बिल्कुल आसान है।

चतुरप्पा —(झटपट अुठकर) क्या कहा ?

सरळण्णा —(पास आकर) बैठो जी, बैठो। अनुभवसे मैं यह बात कह रहा हूँ। 'मुझपर जितना विश्वास है अुसका, मैं किसीको वोट दूँ तो वह बुद्धू समझता है कि मैंने अुसीको वोट दिया" मनमें यों समझकर किसीको वोट देना आसान है कि नहीं ? ठहरो तुमको जो योग्य जँचे अुन्हींको तुम वोट दोगे तो मुझे आनंद होगा। अिसलिअे मैं कहता हूँ, बीचमें अिस चाय-नाश्तेका दाक्षिण्य नहीं चाहिअे। तत्त्व माने तत्त्व, दोस्त !

चतुरप्पा —(घृणाके स्वरमें) भाड़में जाअे तुम्हारा तत्त्व ! कल चुनावके दिन तुम्हारे पड़ोसीके घर कोओी मर जाअे तो तत्त्व कहकर, तुम मालूम होता है कि कन्धा नहीं दोगे। (अुठते हुअे) जाने दो, तुम्हारा तत्त्व तुम्हारे लिअे रहे। चुनावकी नाकमें अपने तत्त्वकी सलाओी न घुसेड़ देना।...हाँ...जब मैं आया था तब कुछ पढ़ते थे न ? वह क्या है ?

सरळण्णा :—वह तो अभी कच्ची प्रति है। तुमने कहा था न कि वोटरोंको अेक विनती-पत्र जहाँ-तक हो सके शीघ्र भेजना चाहिअे !

चतुरप्पा :—ठीक है तो। वह सब शीघ्रसे शीघ्र समाप्त कर लेना चाहिअे। पर अभीतक गुबज्जा और हुच्चय्या अिनमेंसे कोओी नहीं आया ? (द्वारकी ओर जाता है। अेक-दो मिनट बाहर देख, अंदर आते वक्त शेल्फोंकी ओर ध्यान जाता है। झट जिसपर 'दक्षिण' लिखा हुआ है अुस शेल्फपर रखे हुअे कागज-पत्र अुठाकर अचरज भरी मुद्रामें अपना मुँह सरळण्णाकी ओर घुमाता है।)

सरळण्णा —मैंने ही वह सब देख रखा है। अिधर अुधरके, दूसरोंमेंके मिले हुअे थे—

चतुरप्पा —कौनसे मिले थे ? अेक-अेक दिशाके अनुसार मतदाताओंके नाम अेकत्र कर रखे थे, यहाँ अितने कम कैसे हुअे ?

सरळण्णा —अुसमें कुछ नाम दक्षिणके नहीं थे—

चतुरप्पा :—(बीचमें ही) अजी, महाशय, यह सब व्यवस्था हमारे जिम्मे छोड़ दो, कहा था न ? कुल,

* सन् (सन्दर्भ)-निपात।

अेक बार सबसे मिलकर आना तुम्हारा काम.. (कागज अुठाकर देखते हुअे) मैंने सब लगाके रखा था—(बडबडाता है)।

सरळण्णा —(हठसे) अुसमें कभी दक्षिणके नहीं थे, कहा था न मैंने, चदुरप्पा—

चदुरप्पा —(खीजकर) तुमसे किसने कहा? वे सब दक्षिणाके ही थे। (बडबडाते हुअे) सभी कमरमें चढानेवाले ही हैं।

सरळण्णा :—(बिना समझे) कमरमें?

चदुरप्पा —(झटसे) वह तो हमारा दिल्लगीका शब्द है। नीचेकी दिशा दक्षिणादिक नीचे कमरकी ओर रहती है—

सरळण्णा —(अूपरकी तरफ) दक्षिणा? दक्षिणा क्यों कहते हो?

चदुरप्पा —(नाराज होकर) क्यों? वह सस्कृत शब्द है। सस्कृतमें 'दक्षिणा दिक्' कहते हैं। वही मुँहमें बैठा है।

सरळण्णा —हाँ—(झट अंदरकी सीढियोंकी ओर) आया। (चदुरप्पासे) अच्छा—तो तुम्हीं देख लो, मैं तो हाथ नहीं लगाअूँगा ··अभी आया (नीचे अुतरनेके लिअे चलता है।)

चदुरप्पा —क्यों? कहाँ चले?

सरळण्णा —चाय पीकर आता हूँ।

चदुरप्पा —हाँ, जरा ठहरो। (सरळण्णा रुक जाता है) यह देखो, क्या है। (जेबमेंसे सिक्का निकाल-कर दिखाता है।)

सरळण्णा —(अचरजसे) क्या है? अेक आना है।

चदुरप्पा —ठीक है न? अिसे लो। यह मेरा है—यानी मेरा बनाया हुआ नहीं है, मेरा कमाया हुआ है। अिसे लेकर नीचे जाओ, मेरे लिअे भी अेक कप् चाय लेते आना।

सरळण्णा —आँ? (मुँह खोल खडा रहता है।)

चदुरप्पा —आँ करके मुँह खोलकर क्या दिखाते हो? वैसे पूछोगे तो—(अुसके स्वरकी नकल करते) आँ—(कहकर मुँह खोलके दिखाकर) देखा तो? मेरी भी जीभ सूखी है···अिसीलिअे अिसे लो। अेक आना रिश्वत मैं देता हूँ, अेक कप् चायकी रिश्वत तुम दो—

सरळण्णा —(दग रहकर) अरे—

चदुरप्पा —अरे क्या? घडी घडी चायके लिअे बाहर जाअें तो काम कैसे हो? मेरा भी तत्त्व है यह। अेक ही आना समझ अिसे छोटा तत्त्व न समझना—(दे देता है।)

सरळण्णा —(लेकर) चारा ही नहीं है।

चदुरप्पा —चारा नहीं कि दारम नहीं? जाओ जी, जाओ, पहले चाय लाओ। (सरळण्णा अदरकी सीढियोंतक आकर कुछ कहनेके अिरादेसे रुक जाता है और अुसे चदुरप्पा आँखें फाडकर देखता है। तब वह बिना कुछ कहे नीचे अुतर जाता है। चदुरप्पा अुसी तरफ देखता रहता है और अचरज तथा निराशासे युक्त अपना मुँह बनाकर सिर हिलाना ही चाहता है कि सरळण्णा गडबडीसे अूपर आकर—)

सरळण्णा —(अचरजके स्वरमें) चदुरप्पा चदुरप्पा—

चदुरप्पा —(आश्चर्यसे) क्या—अितनेमें—? (सहसा अुसका खाली हाथ देख) चाय कहाँ?

सरळण्णा —लाता हूँ, लाया...तुमसे कुछ कहना था, भूल गया, नीचे जाते ही याद आया, क्या मजाक रहा वह, तुम्हारे आनेके पहले कोअी किसीका घर खोजने आया और कहा "चुनावमें खडे हुअे—सरळण्णाजीके पास है, कहते हैं'—(हसते) अजी है न मजाक, दिल्लगी?—चुनावमें खडे हुअे सरळण्णा"—हाँ—चुनावमें खडा होना अेक अद्भुत बात हुअी है—हाँ—"चुनावमें खडा हुआ सरळण्णा"—ह ह ह! (जाता है।)

चदुरप्पा :—(अूपरकी तरफ सिर हिलाते हुअे 'हूँ' कहते हुअे अुसास छोडनेपर सरळण्णा घूमकर खडा हो जाता है। (अुसको देखकर) सच, मजाक, दिल्लगी—

हां ? अच्छी दिल्लगी ! "चुनावमें खड़ा हुआ सरळण्णा"--हों--ह ह ह !

सरळण्णा --ह ह ह !

दोनों :--ह ह ह ! (जोरसे हँसते हैं। सरळण्णा हँसते, सिर हिलाते अन्दर जाता है।)

चदुरप्पा :--(शैल्फोपरके कागज अपनी अिच्छाके अनुसार अुठाकर रखके) क्या कुछ आवाज सुनायी पडती है ? (दरवाजेके पास आकर नीचे देखते हुअे) क्यों रे ? कब आया ? अे हुबय्या, कहता हूँ कि देर हुअी है, फिर भी तू हँसते आता है !

हुंबय्या :--(पहले अूपर आकर नीचे देखते हुअे) मैंने कहा था न गुंबज्जा, कि चदुरप्पा मुझपर ही नाराज होगा ? (चदुरप्पासे) गुंबज्जासे ही पूछो कि क्या हम यों ही वक्त बिता रहे हैं ?

गुबज्जा --(अूपर आकर) दर्जीकी दूकानपर गये थे, देर हुअी।

चदुरप्पा --(अंदर आते हुअे) दर्जीकी दूकानमें क्या था ? चुनावमें खडे होनेवाले तुम अेक हो तो त्योहारके लिअे कपडा तुमको ?

हुबय्या :--(गुबज्जासे, दोनो अभी द्वारके बाहर ही हैं, चिढानेवालेकी तरह धीमी-ध्वनिमें) कहें क्या दादा ?

चदुरप्पा --(मालूम न रहनेसे गुस्सेके साथ) और क्या चलाया है जी ?

गुबज्जा :--(अब अंदर आया है) सुनाते हैं सुनाअेंगे, क्यों जल्दी ?

हुंबय्या :--(स्वयं भीतर आकर) क्या दिखा ही दें? हां? गुबज्जा?

चदुरप्पा :--(हुबय्याको ताकते हुअे) अ र र र! क्या बढ़िया भेष बना लिया है ? सरपर साफा, लंबा लबादा, नीचे--छि छि छि छि !-नीचे पतलून-(झट) अरे ! पैरोंमें चप्पल ही पहना है तो ?

हुबय्या :--हमारा आगामी स्वतंत्र अुम्मीदवार है न ?

चदुरप्पा :--यानी ?

हुंबय्या :--गुबज्जाको देखता है। (वह अिशारेसे 'सब्र करो, ठहरो' सूचित करता है।)

चदुरप्पा :--(झट) ठहरो। हां, ठहरो। (जेबमें हाथ डालकर, बाहर निकालके) अर र !

हुंबय्या --(अचरजसे) क्या है वह ?

चदुरप्पा :--(भीतरकी सीढियोंकी ओर जाते हुअे) बेचारा ! कैसे पूछा, बिना देखे ना कह दिया मैंने !

हुंबय्या :--(आग्रहसे) वह क्या है ? नीचे घरमें जाने क्यों निकले ?

चदुरप्पा :--देखो, नीचे कुछ जरूरत थी, पूछा सरळण्णाने-अेक फुटकर 'अिकन्नी' है ? 'ना' कह दिया। नीचे अूपर ढूंढने लगा बेचारा ! अब जेबमें हाथ डाला, फुटकर अेक आना मिला ! ठहरो, हां, ठहरो ! अभी दे आया ! अभी आया !- (कहते तेजीसे नीचे अुतर जाता है।)

(दोनो अेक दूसरेका मुँह ताकते हैं। 'नहीं समझा, जाने दो' सूचित करके दोनो चलकर जाते हैं और सोफापर बैठते हैं।)

हुबय्या :--गुंबज्जा, कुल आपको कैसे लगता है?

गुंबज्जा :--चुनावमें लगना झूठ है और जो होगा वह सच है।

हुबय्या :--अिस चुनावमें कुल परिणाम क्या होगा ? वैसे तो हमारे सरळण्णाकी जितनी अक्लमंदी किसी अुम्मीदवारमें नहीं है- (गुबज्जाकी मुस्कुराहट देख, रोकके) है कि नहीं !

गुंबज्जा --चुनावमें जरूरत बुद्धिकी अक्लकी नहीं; जरूरत है वोट (Vote)की। (ठीक है गुबज्जा, कहते हुअे चदुरप्पा नीचेसे अूपर आता है।)

चदुरप्पा --ठीक है गुबज्जा तुम्हारा कहना। हां, अब अुठो, काम शुरू कर दें, हूं !

हुंबय्या :--अर र र ! यहे सुन्दर दीख रहे हो जी ?

चदुरप्पा :—हूँ, पकडो यह सोफा (सोफा अुठाकर रगमचके वीचमें रखते), पंद्रह आने लाभ अगर हो जावे तो खुशी हो जानी चाहिअे न ? हाँ, यह अेक कुर्सी भी लो ।)

हुवप्पा :—(विना समझे) पद्रह आने लाभ ?

चदुरप्पा —अेक आना देनेपर पद्रह आनेकी खुशी हो जाअे तो पद्रह आनेका लाभ हुआ कि नहीं ?

(अितनेमें सोफा और अेक दो कुर्सियाँ रगमचके बीच आमने-सामने रखी गयी । सोफाकी पीठ मेजकी ओर है । मेजपरके कागज सोफापर फेंकते हुअे कहता है 'अेक छोटा स्टूल भी रखो बीचमें' । गुबज्जा स्टूल कुर्सी और सोफाके बीचमें रखकर खुद अेक कुर्सीपर बैठता है । अुसके अुपरात तीनो सोफापर पडे हुअे कागज स्टूलपर रखते है । खाली सोफेपर चदुरप्पा बैठकर नीचेकी ओर जानेवाली सीढियाँ अेक बार देखकर—)

चदुरप्पा —(धीमे स्वरमें) गुबज्जा क्या कहा? (गुबज्जा सिर हिलाता है) क्योंकि यह तो समझता ही नही कि चुनावमें कैसे बरतना चाहिअे, समझनेपर भी मानता नही ।

हुवप्पा —(धीमे स्वरमें) क्यो जी, पैसे खर्च करनेके लिअे तैयार नहीं है ?

चदुरप्पा :—(अुसी स्वरमें) खर्च करनेके लिअे अिनकार तो नही करता वह । पर, अिधर अुधर देना पडता है, अिसकी सिधाअीके लिअे वह नहीं रुकता ।

हुवप्पा :—(अधैर्यसे, फिर भी धीमे स्वरमें) वो आगे क्या हाल ? चारा !

चदुरप्पा :—अिसीलिअे मैंने तथा गुबज्जाने अेक तदबीर की । अिससे कह दिया कि मतदाताओंके नामपर अेक प्रार्थना-पत्र लिखो । छपाअीके लिअे दस हजारका बिल बनानेके लिअे छापखानेवालेसे भी कहके रखा है ।.. ठहरोजी ! घबराओ मत । पैसे हमारे हाथमें आ जानेपर, यह प्रबध करेंगे देखकर कि कहाँ-कहाँ कितना खर्च करनेसे कितने मत (वोट) मिलते हैं । फिर प्रामाणिकतापर अिसके व्याख्यानकी जरूरत ही नही पडेगी ।

गुबज्जा —(हुवप्पासे) देखा कि नहीं ? नेहरूजीने कह दिया है कि हमें अीमानदार लोगोंको ही चुनना चाहिअे और बैठ गये । अब अैसे लोगोंको चुननेकी जिम्मेदारी हमपर पडी ।

('चदुरप्पा गुबज्जा आया है क्या ?'—कहते हुअे सरळण्णा हडबडाहटके साथ अूपर आकर गुबज्जाको ही देखते हुअे समाधानसे—)

सरळण्णा —हाँ, आया है गुबज्जा...सुनोजी, किसने कहा कि मैं कांग्रेस पार्टीमें मिल जाअूँ ?

गुबज्जा —मैंने ही कहा है । क्यो ?

सरळण्णा :—अरे, कैसे आदमी हो जी तुम ! जानबूझकर मैं स्वतंत्र अुम्मीदवारके तौरपर खडा हूँ । हमने तुमने मिलकर ही विचार किया है—

गुबज्जा —(बीचमें ही) ना किसने कहा ?

सरळण्णा —फिर तुमने ही—

गुबज्जा —(आगे बोलने न देकर) ठहरोजी सरळण्णा ! मैंने तुमसे कभी बार यह नही कहा कि हम पर विश्वास रखकर तुम चुप बैठ जाओ ?

सरळण्णा —पर, फिर तुम ही 'अब मैं कांग्रेसमें मिल जाता हूँ' कहकर—

गुबज्जा —तुम्हारे लिअे किसने कहा ? (सरळण्णा 'आँ' कहकर मुँह खोलता है ।) क्या तुमने अपने मुहसे कहा है कि कांग्रेसमें मैं मिल जाअूंगा ? (सरळण्णा-नहीं ।) नहीं, न ? तो काम समाप्त ! तुम मिल जाओ, या छोड दो । मुझे अैसा लगा कि तुम कांग्रेसमें मिल ही जाओगे—

सरळण्णा —(चकित होकर) तुमको अैसा लगा था ?

गुबज्जा :—(हँसकर) पागल हो तुम ! मैं तुम्हारा दोस्त हूँ कि नहीं ? अगर मैं कहूँ तो लोगोंको विश्वास होगा कि नहीं ? अिसलिअे मैंने खबर फैला दी थी कि तुम कांग्रेसमें मिल जाओगे—अैसा मुझे लगा ।

हाँ, ठहरो। क्यों पूछते हो? तुम्हारे जैसे काँग्रेसमें मिल जाते हैं कह तो दूसरी पार्टीके लोग डर जाअँगे, अिसमें शक नहीं है। अुसके बाद और पार्टीवाले भी अपनी पार्टीमें तुम्हें मिलानेके लिअे कोशिश करने तुम्हारे पास आवेंगे।

सरळण्णा —हाँ अितना कष्ट अुठाकर यह झूठा व्यवहार क्यों ?—

चदुरप्पा —कहा था न कि यह तुम्हारी समझमें आनेवाली बात नहीं ? तुमको झूठ तो न बोलना पड़ा ? तुम अपने मार्ग पर चलो, हमें अपनी राह चलने दो न ?

हुबय्या —(सहसा हँसकर) हाँ हाँ ! अब समझमें आया। अिसीलिअे यह झगडा हो रहा है क्या ?

सरळण्णा —(बिना समझे) झगडा ? क्या ? कहा ? (कहते हुअे सोफापर बैठता है।)

हुबय्या —अुस बड़ी पार्टीमें। सरळण्णा हमारी तरफ हो जाअे तो, जो चुना गया है अुससे शायद कहा गया है कि तुमको छोड देना पडेगा, अिसपर वह अकडके बैठ गया है और कह रहा है कि मैं भी स्वतन्त्र अुम्मीदवारके तौरपर खडा हो जाअूँगा।—

गुबज्जा —हुबय्या, दूसरोंसे हमारा वास्ता क्या? हमारा काम हमारे लिअे।

सरळण्णा —मैं भी वही कहता हूँ। हाँ, यह अेक अपील (Appeal) लिख रखा है। अुसे देख लो न ? अुसके पहले और अेक बात। मैं अुसमें अेक वाक्य जोड देना चाहता हूँ— कि 'संयुक्त कर्नाटक राज्यका निर्माण ही मेरा अुद्देश्य है।'

गुबज्जा —(सिर हिलाते) अुहूँ। किसीके लिअे अितनी जल्दी नहीं करनी चाहिअे, अितना खुल्लम खुल्ला नहीं रहना चाहिअे। अब मान लो कि चुनाव समाप्त होनेके लिअे अभी चार छह महीने और चाहिअे, अुस अवधिमें लोगोंको संयुक्त कर्नाटक राज्यकी आवश्यकता प्रतीत न हो तो—

सरळण्णा —(हँसकर) छि ! कितनी भद्दी कल्पना है ! "

गुबज्जा —जैसे लोग वैसी कल्पना। अिसीलिअे कहता हूँ। कैसा प्रसंग आ जाअे, कौन जाने ? तुम अकेले हाथ फँसाकर मत बैठो। अैसा जोड दो 'मेरी पक्की राय है कि जिसके बिना कर्नाटकका अुद्धार नहीं होगा।' फिलहाल अिससे यह होगा कि तुम्हारे मनमें जो था अुसे कह दिया, और आगे चलकर कैसा प्रसंग आता है देखें। क्यों जी ?

चदुरप्पा, हुबय्या —बस, यही योग्य है।

सरळण्णा —फिर भी—

गुबज्जा —(बीचमें ही) तुम यही गल्ती करते हो, देखो सरळण्णा। अभीसे आदत डालो। चार आदमी बैठे हैं, विचार किया, तीन आदमियोंका बहुमत हुआ, तुमको मान लेना चाहिअे।

सरळण्णा —(हँसकर) अच्छा-वैसा ही सही। मगर कहीं शब्दोंमें कमी-बेशी हो जाअे, तत्वमें भेद हो जाअे तो मैं माननेवाला नहीं।

(सहसा टेलिफोनकी घंटी बजती है। झट गुबज्जा अुठकर जाता है और अुसे अुठाकर बोलने लगता है।)

गुबज्जा —हलो, ?...जी, आपको कौन चाहिअे? हाँ...हाँ. क्या कहा ?.. पेपर ? कौन पेपर ? .. आँ ? क्या ? . किसका पति कहा ? . हाँ हाँ...आपके पेपर का नाम 'शोपकाका पति' है न ? हाँ...हाँ हाँ...आप पहिले कहिअे–आपको जो कुछ कहना है .. हाँ हाँ ..क्या ? . हो सकता है किसके साथ ? रावसाहबके साथ ? अभी वे काममें लगे हुअे हैं। क्या कहा आपने ? अच्छा काम है !...गाँवभरमें अुडी खबरके लिअे व क्या करें ? क्या कहा ? पेपर चलाते हैं, खबरकी जिम्मेदारी आपकी है नहीं नहीं वे और हम मिलकर ही काममें व्यस्त हैं. प्रणाम...क्षमा कर प्रणाम कहा। (कहकर रख देता है।)

गुबज्जा —(आगे आकर अपनी ओर देखनेवाले चदुरप्पासे) सुना कि नहीं ?

सरळण्णाः—कौन है वह ?

गुंबज्जा — (पहली कुर्सीपर बैठते हुअे) वही सोशियालिस्ट पार्टीका पेपरवाला।

हुबय्या —अुसको क्या चाहिअे था ?

गुबज्जा—कैसे पेपर चलाते है, क्या करते हैं, खुदा जाने! पेपर चलानेवाले आप, खबर सच है कि झूठ, कहना चाहिअे हमें!

सरळण्णा —(कुतूहलसे) कौन-सी खबर ?

गुंबज्जा —खबर यह कि सरळण्णा सोशालिस्ट पार्टीमें शामिल होंगे।

सरळण्णा —(चकित होकर) क्या कहा ?

हुबय्याः—(मजा लगनेसे) क्या ? औं ? ह ह ह! अब यह खबर अुठी ? ह ह ह! ह ह ह ह!

सरळण्णा —(नाराज होकर, हुबय्यासे) अरे, जरा ठहरो तो! [गुबज्जासे] क्या वह ? मैं और सोशियालिस्ट पार्टी—

चदुरप्पा —(बीचमें ही) अजी सरळण्णा, तुम चुप-चाप अपना काम करोगे या गाँवमें अुठी खबरसे मुरक्काबाजी करोगे ?

सरळण्णा —(गुस्सेसे) छि! यह क्या ? क्या मुझे अुन्होंने तृणवत् समझा है कि जैसी हवा बहे अुस ओर झुक जाअूँ ? सोशालिस्ट पार्टी! कौन है वह! (अुठकर) वहाँ, ऑफिसमें है क्या वह ? पूछ लूँ अुससे—

(फिर टेलिफोनकी घंटी बजती है। सरळण्णा झट चकित हो, रुकता है। बाकी तीनों अेक दूसरेका मुँह मुस्कुराते हुअे देखते हैं। अुसे देखकर गुस्सेसे सरळण्णा टेलिफोनकी ओर जाकर, और रिसीवर अुठा कर—)

सरळण्णा —(गुस्सेकी आवाजसे टेलिफोनमें) औं. क्या ? कौन ? हाँ...मैं ही हूँ...आप कौन हैं ?.. कौन ? भूत ? क्या कहा ? हँसिया हथौड़ेका भूत?...यानी ?...क्या है वह ? क्या ?...क्या क्या? कम्युनिस्ट पार्टी!...क्या है यह ? हाँ.. हाँ—(टेलिफोन झाडते हुअे) यह देखिअे—अरे!—बन्द कर दिया ? अे—

सरळण्णा —मैं अेक बयान ही निकालता हूँ।

गुबज्जा —कौनसा बयान निकालते हो ?

सरळण्णा —मैं तो स्वतंत्र अुम्मीदवार ही रहूँगा, किसी पार्टीमें शामिल नहीं होना।

चदुरप्पा —किसी पार्टीमें शामिल होनेका तुम्हारा विचार है ?

सरळण्णा —कभी नहीं।

गुबज्जा —फिर क्यों चिल्ला रहे हो? वे कोअी भी खबर क्यों न अुडावे ?

हुबय्या —मेरी युक्ति ही अिन सबकी दवा है।

चदुरप्पा —(चकित होकर) क्या युक्ति निकाली है तुमने ?
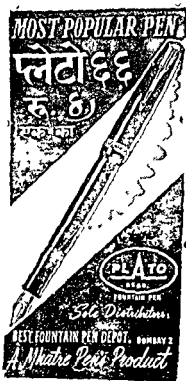
(टेलिफोनकी घंटी फिर बजती है ।)

सरळण्णा —(नाराज होकर) अबकी बार वहके ही छोडता हूँ।

गुबज्जा —(अुसे रोककर) तुम बैठो। तभी तुमने 'हाँ हाँ' कहके गडबड कर दिया। तुम बैठो, मैं देख लेता हूँ। (टेलिफोनके पास जाकर अुसे अुठाकर) हलो...हाँ ठीक है सरळण्णाजीका घर यही है। क्या कहा आपने? मैं-कौन हूँ? आप पहले कहिये कि आप कौन हैं? (सरळण्णाको अुठते देख अुसे रोकने आगे आता है। टेलिफोन कानसे लगाकर सरळण्णाको हाथसे अिशारा करते, चलते, मेजके पास तक आकर सरळण्णाको सोफापर बिठाते हुअे, टेलिफोनमें) हाँ .. क्या?...क्या कहा?...सान कौन—

सरळण्णा :—(आवेशमें अुठके) लाओ, अेक बार अिन सबकी खबर लूं।

गुबज्जा —(अुसको हाथसे रोकते हुअे, टेलिफोनमें) हाँ, या साफ बात कीजिये न? (दूसरोंको) किसान...!

हुबय्या .—ह ह ह! यह पार्टी क्या?— (गुबज्जाके अिशारेसे रुकता है)

गुबज्जा —(टेलिफोनमें) क्या कहा?...हो सकता है। खुल्लमखुल्ला स्वतंत्र हैं, जैसा चाहें वैसा कर सकते हैं .पूछिये अुन्हींसे—(सरळण्णा अुठना चाहता है, अुसे रोककर) हाँ हाँ, पूछिये तो?...क्या कहा? .अभी पूछना चाहते हैं? अभी वे बम्बअीमें हैं, वहाँका टेलिफोन नम्बर मालूम नहीं है।.. प्रणाम। (रख आता है।)

(अेक मिनट कोअी नहीं बोलता।)

सरळण्णा —क्या? खबर अुडी है कि मैं किसान-मजदूर पार्टीमें शामिल हूँगा?

हुबय्या .—(अुठकर) गुबज्जा, अपनी युक्तिका प्रदर्शन कर ही दें।

चदुरप्पा —(कुतूहलतासे) क्या है यह? लगातार, बार-बार कह रहे हो।

सरळण्णा —(दुखी-सा) अे गुबज्जा, यह तर खबर तुम्हींने फैलायी?

(टेलीफोनकी घंटी बजती है।)

चदुरप्पा —(जाकर और अुठाकर) हाँ— क्या?— कौन?— हिन्दूमहासभा? ..कौन चाहिये आपको? . हाँ! यह प्रधान मंत्रीजीका घर है...नम्बर सही नहीं निकला...प्रणाम। (रख देता है।)

चदुरप्पा —(हुबय्यासे) अब बताओ तुम्हारी युक्ति?

सरळण्णा —(पहलेकी तरह) यह तो बिल्कुल असहनीय है!

हुबय्या —यहाँ देखो सरळण्णा, अगर सहनीय असहनीय कहते बैठोगे तो चुनावकी आशा छोड देना ही बेहतर होगा। चुनावमें सफलता चाहते हो तो काम हमें सौंप दो। खबर अुडानेवालोंको अुडाने दो। अुनका मुकाबला करनेके लिअे हम मजबूत हैं। यह देखो, क्या देखा? चदुरप्पाने पूछा कि मैंने क्यों अैसा भेष बना लिया है। कहता हूँ सुनो · क्या करूँ? अेक पाठ ही पढाता हूँ (कहते हुअे मेजके पीछेकी कुर्सीके पास जाकर खडा होता है) अुठो सब, मेरी ओर मुँह करके सामने बैठो। (चदुरप्पा हँसते, सरळण्णा चकित हो खडे हो जाते हैं और सामने जाकर बैठ जाते हैं।) यह देखो मेरा "अनेक रूप रूपाय" भेष। पूछते हो कि यह भेष क्या? मैं स्वतंत्र हूँ। जैसा चाहूँ, वैसा भेष बना सकता हूँ। देखा? ठहरो (अपना फग और कोट भी अुतारता है। सामने नीचे गांधी टोपी और कोटके नीचे नेहरू शर्ट) देखो। जरा और ठहरा (मेजके पीछे पैंट अुतारकर फेंकता है और अंदरसे खद्दरकी धोती निकलती है।) देखा? पूछते हो क्यों? कुछ लोग तो अिसे देखकर ही वोट (मत) देते हैं। अितनेसे सन्तुष्ट होते हैं तो हमारा क्या जाता है?

सरळण्णा —छि छि! यह क्या? खिलवाड करते...

हुबय्या —ठहरो जी, अभी समाप्त नहीं हुआ है महिरावणके वेषकी महिमा। तुमको यह भेष

खिलवाड़ लगा ? अच्छा, अिसीको देखो अब (सिरपरकी टोपी निकालता है। सिरपर अिधर-अुधर बिखरे हुअे लंबे सफेद बाल है, पहनी हुअी धोती भी अुतार फेंकता है, अुसके नीचे सफेद पायजामा है।) देखा ? (गुबज्जसे) किसी मनचलीका शौहर कहा न ?

गुबज्जा —शोषकाका शौहर—

हुबय्या —हाँ—शोषकोंका शौहर यानी प्रचंड समाजवादी हूँ मैं—(चदुरप्पाके हसनेपर गंभीरतासे) कौन है हसनेवाले ? ओह ! यह भेष देख तुम घृणासे हंसते हो न ? समझा तुम्हारा स्वरूप, ठहरो। (नेहरू शर्ट अुतारता है। नीचे लाल रंगका आधे आस्तीनका छोटा कुरता है जो कमरतक लटक रहा है। पायजामा भी अुतार देता है। अुसके नीचे लाल रंगका हाफ-पैंट है।)

चदुरप्पा —(हँसते हुअे) वाह ! वाह ! ह ह ह ! (और भी हँसी बढ़ती है।) ह ह ह ! डिमोक्रसीका वस्त्रापहरण ! ह ह ह !

सरळण्णा —(अशुचि हो जानेपर अुठनेकी तरह अुठकर) समाप्त हुअी कि नहीं यह तुम्हारी वानर-लीला ?

हुबय्या —(बनावटी क्रोधसे) क्या कहा ? वानर-लीला ? तुमको यह वानर खिलवाड़ लगा ? हमारे देशकी समस्या तुम्हारे लिअे वानर खिलवाड़ ? ठहरो, (कहते हुअे वह छोटा शर्ट भी अुतारकर नंग धड़ंगे कंधेपर अुसे डालकर, ताल ठोककर) तुमने क्या समझा है मुझे ?

सरळण्णा —(अचरजसे) क्या है यह ?

हुबय्या —(थकावट भरे हुअे स्वरमें) किसान हे ह—(मवेशियोंको हाँकनेवालेके जैसा करता है।)

चदुरप्पा —वाह ! ह ह ह !

हुबय्या :—(धीमे स्वरसे) मजदूर (कहकर कुर्सी अुठाकर सिरपर रख लेता है।)

चदुरप्पा —वाह ! वाह !!

हुबय्या —(रोदन स्वरसे) प्रजा (कहकर असहाय, शक्तिहीनका-सा बैठता है।)

सरळण्णा :—(अुसकी ओर अेक मिनटतक देखकर, अच्छा, कहकर टेलिफोनकी ओर जाता है।)

चदुरप्पा —(भयके स्वरमें) अजी यह क्या ? क्या करते हो ?

सरळण्णा —टेलिफोन करता हूँ।

चदुरप्पा —किसको ?

गुबज्जा —क्या कहोगे ?

हुबय्या —अभी क्यों ?

सरळण्णा —(चदुरप्पासे) किसको ? अिर्वेंडको। (गुबज्जासे) क्या कहूँगा ? मैं यही कहूँगा कि तुम्हारी डैमोक्रसी नहीं चाहिअे। (हुबय्यासे) अभी क्यों ? अगर रुकूँ तो डर है कि बुद्धिभ्रष्ट हो जाअें।

गुबज्जा —(अुसको रोककर) समझ गया, छोड़ दो। (बाकी दोनोंसे) अिसको क्या हुआ है, आप कहते हैं ?

दोनों —(पाठ सुनानेवाले बालकोंकी भांति) चुनावका बुखार चढ़ गया है—जी। (तुरत तीनों हँस पड़ते हैं। अेक मिनट अुनके मुँह ताकनेवाले सरळण्णाके मुँहपर भी मुस्कुराहट अंकुरित होती है)। *

परदा गिरता है।

---

* अिस अेकांकीके सभी अधिकार लेखकके स्वाधीन हैं। लेखककी अनुमतिके बिना अिसका अभिनय न किया जाअे।

(अनुवादक :—श्री गुरुनाथ जोशी, धारवाड़)

ऋतुराज

· श्री गोपाल शर्मा, अेम. अे. ·

अरी मिट्टी ! ये रंगत किन तहोंमें तू छुपाये थी ?
हजारों रूपके नक्शे अभी तक क्यूँ दबाये थी ?
अचानक किसने सीनेपर तेरे सिर रख दिया रानी,
कि झरने तेज हैं तेरी रगोंमें, गर्म हैं पानी !
समाती ही नहीं है आपमें तेरी मलय-सी साँस,
अुठे हैं रोम श्यामल दूबके पहले जहाँ थी काँस।
पिया वह कौन जिसकी किरन जुल्फें भर गयी सिहरन,
ये मोती माँगमें ! सतरँग चुनरिया ! ! अै नयी दुलहन !
तुझे यूँ देख, है हालत अजब, मालिक विधाता है,
अरे, हर पेड़ बाँहें खोल, बेलोंको बुलाता है।
मगर बेलोंकी जैसी जात, कितने ढँग बताती है,
लपक खुद पेड तक आती, हिला सिर लौट जाती है !
कि पंछी डोलते बेहाल, गाते गा न पाते हैं,
न भूपर चैन पाते हैं, न अम्बरमें समाते हैं।
बटी ज्यों-ज्यों कुहू त्यों-त्यों वहाँ वो आम बौराया,
निमट शरमाके अमराअीकी गोदीमें छुपी छाया।
लपेटें हो रहीं टीली, करे तो क्या करे बदली,
पकड़िअे अुसको जिसने सबकी हालत अिस तरह बदली !
लहर झकझोर कमलोंको, नशेसे जो जगाती है,
लिपट अुठने हुअे भौंरेसे केसर झूम जाती है !
ये कच्ची कोंपलें ! मनलबने मुसकानेकी कलियोंकी !
ये बढ़ते हौसले ! तितलीका चलना गैल अलियोंकी !
मुगधोंकी ये झीनी तह, ये रंगोंकी घनी अुलझन,
ये पानीकी लहरियादार झाँअीका तरल-कंपन,
हिलोरें दूर तक भरते हुअे मैदान चितकबरे !
पहाड़ीके गले बगलोंकी पाँतोंके धवल गजरे !

अरे अिस ब्रह्मचारी समयकी गति और जैसी हो,
जो दिल है, अुसकी झाँकी ये न हो तो और कैसी हो!
कि रविकी अधखुली पलकों पे कोअी स्वप्न छाया है,
वही ऋतुराज है! रे प्यारका त्योहार आया है।
न अिसने बाल-तृण देखा, न बूढ़े गिरिको छोड़ा है,
ये जादू है!–जि हाँ! सबके सिरपर चढ़के बोला है!
मुझे भी क्या हुआ, आँखोंसे मैं सुनने लगा कैसे?
स्वरोंको सूंघता हूँ! गन्ध तन छूने लगा कैसे?
गली रेखा, घुला स्वर, सुरभि पिघली! अेक अनुभव है,
बुझी पहचान जैसे,– मन लबालब है, लबालब है!

जिधर देखता हूँ अुधर तू ही तू है!

क्या महात्मा गांधी अकेले थे? लाखों चर्खोंपर सूत कातनेवाले लोग अुस सूतके द्वारा अुनसे हमेशाके लिअे बँध गये थे। ग्राम सेवा करनेवाले हजारों लोग गांधीजीके साथ जुड़ गये थे। हरिजनोंकी सेवा करनेवाले सैकड़ों भाअी गांधीजीके साथ अेक हो गये थे। हिन्दीका प्रचार प्रसार करनेवाले हजारों लोग गान्धीजीके साथ हो गये थे। हिन्दू-मुस्लिम अेकता स्थापित करनेवाले–– साम्प्रदायिक झगड़े मिटानेवाले, शराब बन्दी करनेवाले, सब लोग गान्धीजीके साथ जुड़ गये थे। अिन करोड़ों लोगोंकी, अिस जनता-जनार्दनकी सुदर्शन शक्ति गान्धीजीके आसपास घूमती थी। और क्या जवाहरलालजी अकेले हैं? पद-दलितोंका पक्ष लेनेवाले, मदान्ध अैश विलासी लोगोंका नशा अुतारनेवाले किसान मजदूरोंके लिअे बलिदान करनेवाले, अुनका सगठन करनेवाले श्रमका महत्व पहचाननेवाले, सच्चे मानवधर्मको पहचाननेवाले और सारे दंभोंको दूर हटा देनेवाले हजारों लोग जवाहरलालके आसपास खड़े हैं। और जिनके लिअे जवाहरलाल व्याकुल हैं तड़प रहे हैं, वे करोड़ों हिन्दू-मुसलमान भाअी अुनके साथ जुड़े हुअे है। अिसीलिअे जवाहरलालके शब्दोंमें तेज है वाणीमें ओज है और दृष्टिमें तेजस्विता है।

महात्मा या महापुरुषका अर्थ है–– पुंजीभूत विराट जनता।

––स्व० साने गुरुजी

अुर्वशी

: श्री ग. त्र्यं. माडखोलकर :

"सुकुमार प्रहरण महेंद्रस्य। अलकार स्वर्गस्य।"
—कालिदास

"अुर्वशी" शब्दका अुच्चारण करते ही हमारे मनमें अनेक रमणीय कल्पनाअें जाग अुठती हैं। यथार्थमें अुर्वशीका चरित्र कल्पनाकी कोमलताको भी लजानेवाला है। आदि कालसे आधुनिक कालतक चचल कालकी बदलती छटाओंपर यदि किसीके अकरुण सौंदर्यकी अनिवर्चनीय सुषुमा छायी होगी तो वह है केवल अुर्वशी। अितना ही नही, अिन्द्रसभाकी अिस नर्तकीके रूपने कविकुलगुरु कालिदाससे लेकर कविसम्राटतक अनेक कवियोको अपनी प्रतिभासे मोहित किया है। अत अुर्वशी लक्ष्मीके समान सागरोंमिसे अुत्पन्न नहीं हुअी और न पार्वतीके समान हिमालयके अुच्च शिखरोंसे ही प्रकट हुअी है। यह भी निर्विवाद है कि विधाताने ससारके सारे सौंदर्यके समन्वयसे तिलोत्तमाके समान अुसका निर्माण नही किया। यथार्थमें तपोभग करनेके अुद्देश्यसे भेजी हुअी अप्सराओंके समूहको देखकर नारायणके समान ऋषिने क्रोधावेगमें अपनी तपस्याके प्रभावसे अुर्वशीका निर्माण किया है। यही कारण है कि अुसके अनुपम लावण्यको देखकर पुररवाने कहा था कि "वेदाभ्यासके कारण जिसकी बुद्धि कुठित हो गयी है, अैसा वह बूढा ऋषि अितना मनोहर रूप कैसे निर्माण कर सकता है? चन्द्र, मदन अथवा वसन्तके समान ही किसी कामदेवताने अिसका निर्माण किया होगा?" तपस्याके कारण अेकाग्र और अुन्ननिशील ऋषिकी प्रतिभा ही अिस प्रकारकी अनन्य सुन्दर कृतिको जन्म दे सकती है, यह वह कामुक क्या जाने? सौंदर्य और कठोरताका जो विचित्र मल अुर्वशीमें दिखायी दिया, अुसकी जड़में अुत्पत्ति तो कारण नहीं?

अुर्वशी केवल अप्सरा नही है। वह अेक अुत्तरोत्तर परिणत होने हुअे सौंदर्यका प्रतीक है। ऋग्वेदसे विक्रमोर्वशीतक हजारो वर्षोंकी विकसित होती हुअी अुर्वशी सबधी कल्पनाओंका विचार किया जाअे तो अुसका युगसापेक्ष प्रतीक हमारे मनपर अेक स्पष्ट प्रतिबिंब डालता है। अितना ही नहीं, ऋग्वेदके अैति-हासिककालके पूर्वसे लेकर अिस बीसवीं शताब्दी तक कविके अटल प्रभावके लिअे अुसके सौंदर्यका प्रतीक ही मूल कारण है। स्त्री ससारके सौंदर्यमें श्रेष्ठ, प्रेमका प्रतीक और सारी मगलताकी मूर्ति है। जब ससारकी बाल्यावस्थामें मनुष्य जातिकी सख्या अत्यत अल्प थी, अुस समय मनोरजन करनेवाली रमणीकी दृष्टिसे ही नहीं, बल्कि सतति निर्माण करके ससारको सतत प्रवाह प्रदान करनेवाली जननीके नातेसे भी स्त्रीका महत्त्व अनन्य है। मानव जातिकी अल्पसख्यक परिस्थितिमें स्त्रीने, विशेषत सुदर स्त्रीने सौंदर्य और सततिके लिअे व्याकुल पुरुष जातिको अपने सकेतोंपर नचाया हो तो अिसमें क्या आश्चर्य? ऋग्वेदमें की गयी अुर्वशीकी करुणाहीन कल्पनाअें और पुररवाके गाये हुअे दैन्य भरे-स्तोत्र अिसी परिस्थितिमें अुपजे हैं। मैक्समूलरके समान कुछ अन्वेषणकर्ताओंकी यह धारणा है कि अुर्वशी मानव अथवा अमानव न होते हुअे, केवल अुषाका अेक रमणीय रूपक है। अुनकी अिस धारणाका कारण भी हमें अुर्वशी द्वारा पुररवाको लक्ष्य कर कहे गये वैदिक सूक्तोंमें मिलता है कि "हे पुररवा, मै तुमसे अुषाके समान दूर भाग चुकी हूँ। तू अब घर लौट जा। वायुके समान चचल होनेके कारण मेरा पीछा करना तेरे लिअे असभव है" लेकिन अुर्वशीके स्वयको अुषाकी अुपमा देनेपर भी यह सिद्ध नहीं होता कि वह अुषा ही है। क्षण-क्षणमें रग बदलनेवाली और क्षितिजकी नीलभूमिपर नर्तन करने-वाली अुषा, सूर्योदय होते ही जिस प्रकार अपने अस्तित्वको क्षणभरमें मिटा देती है, अुसी प्रकार पुररवाके प्राणोंकी अपने लावण्यसे पागल करके अुससे दूर

भागनवाली अुर्वशी है पुरूरवा विवस्त्र था तो अुर्वशी वस्त्रविभूषित थी वह कामुक था तो वह कठोर थी वह अतृप्त था तो वह अनंत यौवना थी। असकी और अपनी स्थितियोंकी विषमता देखकर अुर्वशीको सची हुअी अुषाकी अुपमा अुसके करुणाहीन सौंदर्यका प्रतीक है। अुस अुपमाको रूपक मानकर अुसकी सत्यताको कसौटीपर रखना भी क्या वेदाभ्यासकी जड़ताका द्योतक नहीं है?

जब अुर्वशी स्वर्गलोक छोड़कर पुरूरवाके पास रहने आयी थी अुस समय दोनोंके बीच केवल अेक शर्तका अुल्लेख वैदिक सूक्तोंमें मिलता है। शर्त यह थी कि पुरूरवा शयनगृह छोड़कर अन्यत्र कहीं भी अुसे विवस्त्र नहीं दिखायी देना चाहिअे। अिस शर्तकी पार्श्वभूमिमें भी अुर्वशीकी सौंदर्याभिरुचि दिखायी देती है। अुर्वशीकी यह साधारण शर्त सुनकर पुरूरवाको हँसी आयी होगी। लेकिन अुस शर्तमें निहित सौन्दर्याभिरुचि अुनके सहजीवनकी अन्तिम रेखा सिद्ध हुअी। पुरूरवाकी प्राप्तिके लिअे अुस कामिनीने अपनी दिव्यताका त्याग किया, लेकिन अपनी सौंदर्याभिरुचिसे विमुख नहीं हुअी। वृद्धावस्थामें मृत्युद्वारपर पहुँचे हुअे पुरूरवाको अुर्वशी जैसी सुरांगनाका जिसका यौवन पुष्प मुरझाना सर्वथा असंभव था शयनकक्षके सिवाय अन्यत्र नग्नावस्थामें देखना अस्वीकार करना कितना स्वाभाविक था? पुरूरवा कितना ही सुंदर क्यों न हो लेकिन वह मानव था। नंदनवनकी कल्पलताओंके कोमलपुष्प मंदाकिनीके परागसे आर्द्र वायु अथवा चन्द्र किरणोंके कोमल तंतुओंसे बुने हुअे वस्त्रोंके सिवाय अन्य वस्तुओंके स्पर्शका जिसे अनुभव न हो और देवेन्द्रको भी जिसके स्पर्श करनेका प्रसंग न आये अुस अुर्वशीको पुरूरवाको नग्नावस्थामें देखकर ग्लानि हो और वह असह्य लगे तो अिसमें आश्चर्यकी क्या बात है? लेकिन शायद शर्तका मर्म न समझनेके कारण अुसने पुत्रवत प्रेमसे पाली हुअी भेड़ोंको गन्धर्वों द्वारा भगा ले जानेपर, पुकार सुनते ही अुन्हें छुड़ानेके हेतु विवस्त्र स्थितिमें ही पुरूरवा शयन-गृहसे दौड़ पड़ा। तात्पर्य यह कि गन्धर्वों द्वारा किये कृत्रिम प्रकाशमें अुसका नग्न शरीर दिखायी देते ही अुर्वशी अुसी क्षण अदृश्य हो गयी। अुर्वशी अुसके प्रेमसे अुद्विग्न नहीं हुअी थी। यदि अुर्वशीको अुसके साथ रहना खटकता तो वह पुरूरवाको पुनर्मिलनका अुपाय क्या बताती? अुसे पुरूरवाकी निर्लज्ज नग्नताने वंचन किया था। नग्नता द्वारा प्रदर्शित अुसके मानवीय शरीरकी मलिनताने अुसे अधीर कर दिया। शृंगारासक्त कालिदासने नग्नदर्शनके अिस प्रसंगको अपने विक्रमोर्वशीमें टाल दिया है। लेकिन ऋग्वेद शतपथ ब्राह्मण और कुछ पुराणोंमें नग्नताकी शर्तके कारण ही वियोग होनेका अुल्लेख मिलता है। यदि अुर्वशी अुषा और पुरूरवा सूर्य होता तो अुनके बीच नग्नताका प्रश्न निर्माण होनेका कोअी कारण नहीं था और अपने प्रियकरके गलेमें अुसे 'मन्यु' कहकर अपमानित करनेका दुस्साहस भी अुषा नहीं कर सकती थी। पुरूरवाने अुर्वशीका वर्णन करते हुअे अुसे अपनी प्रभासे अन्तरिक्ष प्रकाशित करनेवाली कहा है। विद्वानोंने अुर्वशीको अुषाका रूपक देनेमें अिस वर्णनका आधार तो नहीं लिया होगा? लेकिन पुरूरवा अुल्लिखित अन्तरिक्षसे शायद स्वयंके प्रेमपूर्ण अन्तःकरणका तात्पर्य है।

अुर्वशी अुषाका रूपक न हो लेकिन अुसकी स्वयंकी दी हुअी अुषाकी अुपमा अत्यंत समानार्थी है। वह अुषा जैसी अनंत यौवना अनेक रूपिणी और अमानव थी। असे अमानव अिसलिअे नहीं कहते कि वह देवांगना थी—अपितु मानवीय दृष्टिके किसी भी साँचेमें अुसका चरित्र नहीं बैठता। अिस तापमें खोज करते हुअे वनमें भटकनेवाले पुरूरवाने अुसे पहिली बार ही कठोर हृदया संबोधित किया है। लेकिन क्या वह सचमुच कठोर हृदया थी। राजाओं और राजपुत्रों योद्धाओं और युवकोंको अपनी मोहिनीसे पराजित करनेवाली प्रेमभंगसे रक्तहीन अुनके स्पर्श और चुम्बनके अिच्छुक ओठोंको देखकर स्वयंको धन्य समझनेवाली अुर्वशी क्या कीट्सके वर्णनानुसार गर्व नारीकी रूपगर्विता सुंदरी थी? अथवा ग्रीक साहित्यकी चपला अटलांटाके समान अपने प्रेमियोंको तड़पते हुअे मरते देखना ही अुसका स्वभाव था? पुरूरवा जब प्रणय विवश हो प्राण देनेकी धमकी देता है तब अुर्वशीका यह अुत्तर कि अरे स्त्रियोंका प्रेम केवल प्रेम ही नहीं अुनका हृदय भी भेड़िया जैसा कठोर होता है। [शेष

स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता] हमें यह विचार करनेसे नहीं रोकता कि नारायणकी यह मानस कन्या भी अॅटलाटाके समान भेडके दूधसे ही पली होगी और पुरुरवाके प्रति मनमें सहानुभूति अुत्पन्न होकर कीटस्की भग्न-हृदया प्रेमिकाके समान अपनेको भी कहनेकी अिच्छा होनी है कि "अरे! अरे!! अुस हृदयहीन सुन्दरीने तुझे अपने प्रेमपाशमें फसाया है।" लेकिन क्या अुर्वशी निर्दय थी? अुसके कथनानुसार अुसका हृदय यथार्थमें कठोर होता तो वह पुरुरवाको अपना स्वर्गीय सुख क्यों लूटने देती? पुरुरवाको सान्त्वना देते हुअे अुसने कहा था कि "राजन, मेरे दिव्य शरीरका त्याग करके मैं तुम्हारे पास चार शरद रही। जब जब तुम मेरी अिच्छा करते, तब तब मैं ससुरके गृहसे निकलकर तुम्हारे मन्दिरमें आती थी। मैंने अपने शरीरपर तुम्हारा यथेच्छ प्रभुत्व रहने दिया।" संसारकी कोअी भी युवती अपने प्रियतमके लिअे अिससे अधिक क्या अुत्सर्ग कर सकती है?

यदि अुर्वशीको पुरुरवाके प्रति अितनी अुत्कट आसक्ति थी, तो अुसने अुसका त्याग क्यों किया? क्योंकि वह अप्सरा थी। शतपथ ब्राह्मणकी कथामें अपनी पुनः प्राप्तिका अुपाय सुझाते हुअे अुस सुरांगनाने पुरुरवाको स्पष्ट ही बताया है कि 'तेरे मनुष्य देहका त्याग करके गंधर्व हुअे बिना तू मेरा पूरा लाभ नहीं अुठा सकता।" वस्तुतः अुर्वशी रंभा अथवा मेनकाके समान जन्मसे ही अप्सरा नहीं थी। लेकिन अुसके पिताने जिस समय अुसे अिन्द्रको अर्पण किया, अुसी समयसे अप्सराका जीवन-क्रम अुसके मत्थे पडा। जिस गंधर्व लोकमें अप्सराओंको रहना पडता था, वहांका यह रिवाज था कि अप्सराओंका अविवाहित रहकर ही केवल सौंदर्य साधन (साज सिंगार)में अपना जीवन व्यतीत करना चाहिअे। कलाविलास अुनके जीवनका अुद्देश्य और वीरोंका मनोरंजन करना अुनका परम कर्तव्य समझा गया। जिसप्रकार प्राचीन कालमें ग्रीस देशकी परम सुन्दरी स्त्रियां समाजके श्रेष्ठ पुरुषोंका मनोरंजन करनेके लिअे अविवाहित रहती थीं, अुसी प्रकारकी मिलती-जुलती व्यवस्था गंधर्व-समाजमें भी रही होगी। देवेन्द्र द्वारा अप्सराका अेक अुपयोग और भी किया जाता था। कालिदासके "विक्रमोर्वशी" में रंभा पुरुरवासे अुर्वशीका वर्णन करती है 'या तपोविशेषपरिशंकितस्य सुकुमारं प्रहरणं महेन्द्रस्य। प्रत्यादेशः रूपगर्वितायाः श्रियः। अलंकारः स्वर्गस्य। सा न प्रिय सखी अुर्वशी"। अर्थात् जिस प्रकार अप्सरा देवेन्द्रके दरबारकी भूषण थी अुसी प्रकार वह अुसके शस्त्रागारका नाजुक हथियार भी थी। क्या आज भी राजनीतिके रहस्योंको ज्ञात करनेके लिअे सुन्दर स्त्रियोंका अुपयोग नहीं किया जाता है? अप्सरा विवाहके बन्धनसे भले ही मुक्त हो, लेकिन अुसका जीवन अन्य अनेक बन्धनोंसे जकड़ा रहता है। वह दूसरोंको मोहित कर सकती है, लेकिन स्वयं मोहका शिकार नहीं बन सकती। वह दूसरोंको प्रियतम बना सकती है, लेकिन स्वयं प्रेम नहीं कर सकती। अनिर्बंध और सर्वथा बंधन-रहित जीवनही अुसके जीवनका महान् बन्धन है। पति प्रेम और सन्तान-प्रेमके जिन प्रबल पाशोंसे स्त्री-जातिका जीवन बद्ध है, अप्सराको अुन पाशोंसे सर्वथा अलिप्त और निर्मुक्त जीवन व्यतीत करना पडता है। अुर्वशीको बन्धन मुक्त रहनेसे ही पुरुरवाके प्रेमपाशको तोडकर देवेन्द्रके दरबारमें वापस जाना पड़ा था। अुर्वशीने पुरुरवाको सान्त्वना करते हुअे भाव व्यक्त किये थे कि 'स्त्रियोंका प्रेम वास्तवमें प्रेम ही नहीं है।" ये अुद्गार अुसके मनकी कठोरता प्रगट नहीं करते अपितु नैराश्यके सूचक हैं। जिस प्रकार मनुष्य जीवन दुःसह होनेपर संसारको दोष देता है, अुसी प्रकार अनिर्बंध स्त्रीत्व असह्य होनेपर अुस देवरमणीने स्त्री-जातिपर अभियोगका टीका लगाया है।

तात्पर्य यह कि अुर्वशीका अकरुण चरित्र भी संसारके साहित्यकी अेक अत्यन्त करुणाजनक प्रेम-कथा है। ऋग्वेदके सूक्तोंमें, शतपथके संवादोंमें, मत्स्यपुराणकी कथाओंमें और विक्रमोर्वशी नाटकमें अुर्वशीके समय-समयपर बदलते हुअे चरित्रसे करुणाका प्रवाह अनन्त सूक्ष्मताके साथ बहता हुआ दिखायी देता है। अुर्वशीके समान देवेन्द्रकी प्रिय अप्सराका भूतलपरके अेक मानव राजाके प्रणयपाशमें फसना ही अुसके अधःपतनका सूचक है। लेकिन क्या वह यथार्थमें अधःपतन था? पुरुरवा

द्वारा अुर्वशीको स्वीकार कर लेनेपर जब अुसकी सहेली चित्रलेखा अुसे स्वर्गका स्मरण न आ पानेके ढंगसे अुर्वशीके साथ व्यवहार करनेकी प्रार्थना करती है तब पुरुरवाका सचिव माणवक चित्रलेखाकी विनतीका अुपहासात्मक अुत्तर देता है कि "तुम्हारे अुस स्वर्गमें मनको आकर्षित करने योग्य अैसा क्या है? खाना नहीं, पीना नहीं। वहाँ तो केवल पलकें न झुकनेवाले नेत्रोंसे मछलियोंको निहारकर समय नष्ट करना पड़ता है। [किंवा स्वर्गे स्मर्तव्यम्। न खाद्यते न वा पीयते। केवल मनिमिषैर्नयनैर्मीना विडम्ब्यन्ते।] कालिदासका मूर्ख समझा जानेवाला विदूषक कभी-कभी कितना मार्मिक बोलता है, अिसका यह अत्यन्त सुन्दर अुदाहरण है। सचमुच स्वर्गलोकमें मनको अच्छी लगने योग्य कौनसी बात हो सकती है? जिन नाना प्रकारकी सवेदनाओंसे माया मोह और सुख-दुखके प्रसंग निर्माण होकर मानवीय जीवनमें विचित्रता और मधुरता आती है, अुनका तो अुस अमर लोकमें पूर्ण अभाव ही है। फिर वहाँ आकर्षण क्या होगा? स्त्रीत्वके विकासके लिअे तो वह सर्वथा निरर्थक है। स्वर्गमें देवताओंका राज्य हो अथवा दैत्योंका, स्त्रियोंको केवल अमृत पीने और नृत्य करनेके अलावा अन्य कोअी काम नहीं होता। अैसी स्थितिमें, सहस्र नेत्रोंसे दीप्त देवेन्द्रके दिव्य शरीरको प्रतिदिन देख-देखकर त्रस्त और नंदनवनके निरन्तर और नियमित बाह्य सुखविलाससे अूबकर, यदि पृथ्वीके अेक मनुष्यसे अुर्वशीका प्रेम हो जाअे तो क्या आश्चर्य है? प्रेमानुभूतिका आनन्द लेनेके लिअे वह आतुर थी और अैसी मन स्थितिमें देवेन्द्रके सामने खेले गये "लक्ष्मी स्वयंवर" नाटकमें लक्ष्मीकी भूमिका करते समय "पुरुषोत्तम"के बदले 'पुरुरवा' शब्द अुसके मुँहसे निकल जानेपर अुसे नाट्याचार्य भरतके अभिशापका पात्र होना पड़ा और अुस प्रेमोन्मादके कारण अुसे स्वर्ग छोड़नेकी बारी आयी। लेकिन प्रणय-पीड़ित अुर्वशीको वह अभिशाप न होकर वरदान ही लगा होगा क्योंकि अुससे अुसे असह्य और विफल स्वर्गीय जीवनमें परिवर्तन होकर मानवीय जीवनकी अनुभूति लेनेका सुखद प्रसंग मिला।

लेकिन देवताओंको अुर्वशी जैसा स्वर्गका अलंकार और देवेन्द्रको अप्सराका वियोग कैसे सहन हो सकता था? जब भरतमुनिने अुर्वशीको शाप दिया था, अुसी समय देवेन्द्रने अुसे अैसा प्रतिशाप दे रखा था कि "तुमसे अुत्पन्न सन्तान पुरूरवाको दिखायी देने तक ही तुझे अुसके साथ रहनेका सुख मिलेगा"। अिस प्रतिशाप जैसा मार्मिक अुदाहरण अन्यत्र कहीं न मिलेगा। अुर्वशी जबतक स्वर्गमें थी तबतक अुसके सन्तान होना असम्भव था, क्यों कि अप्सरा जैसी अमर होती है, वैसी ही निसन्तान भी होती है, मानो अुसका यौवन अनन्त होनेके कारण ही विफल होता है। अिसके अलावा जो पत्नी नहीं हो सकती वह जननी कैसे हो सकती है? पिताके आश्रमसे देवलोकमें आनेपर अेक बार सूर्योपासनाके लिअे जाते समय अुर्वशी जब पुरुरवाके प्रेमका विषय बनी, तब अुसके प्रत्यक्ष स्पर्श होनेका प्रसंग न आनेपर भी अुसे पुत्रलाभ हुआ। लेकिन पुरुरवाकी पत्नी बनकर मर्त्य लोकमें रहनेपर अुसे मातृपदके लिअे सभी आवश्यक परिस्थितियोंसे गुजरना पड़ा। अिसलिअे देवेन्द्रने अुसकी मातृपद-प्राप्तिमें ही अुसके सांसारिक जीवनकी समाप्तिका क्षण सीमित कर दिया। मानो स्वर्ग-लोकका अैसा नियम हो कि अप्सराका जन्म केवल मानवीय सुखोपभोगके लिअे ही है—सन्ततिसुख भोगनेके लिअे नहीं। अिसी कारण पुत्र-जन्म होते ही पुरुरवाको पता लगे बिना च्यवनाश्रमकी अेक तपस्विनीको सुपुर्द किये हुअे अपने पुत्रको जब राजाने अचानक देखा, तब अिस पुत्र-दर्शनसे अुर्वशीको आनन्द नहीं हुआ, अपितु पुन स्वर्गलोक जानेकी कल्पनासे वह रो पड़ी। भरतके शापसे अुस अभागिन अप्सराको पति सुखका अुपभोग भले ही मिला हो लेकिन देवेन्द्रके प्रतिशापके कारण अुसे पुत्र-सुखका आनन्द यत्किंचित् भी नहीं मिला। अुर्वशीकी प्रणय-कथामें करुणाकी परमसीमाको कोअी प्रसंग हो सकता है तो वह है पति और पुत्र छोड़कर स्वर्गलोक जानेका। अुसपर आयी हुअी आपत्ति टलकर अुसे अपने प्रियतमके सहवासका सुख पुन प्राप्त हुआ, यह केवल अुसके अत्यधिक प्रेमका प्रभाव है। लेकिन अिसलिअे अुसके प्रेमजीवनके दारुणताकी तीव्रता तिलमात्र भी कम नहीं

(शेषांश पृष्ठ सख्या १७७ पर)

भारतका राष्ट्रपति और मंत्रिमंडल

: प्रो. जगदीशप्रसाद व्यास :

भारतके सविधानमें दो बातें अेकदम ध्यान आकृष्ट करती हैं। अेक तो है भारतका राष्ट्रपति और दूसरा है भारतीय मन्त्रिमंडल। राष्ट्रपतिकी मिसाल अमरीकी सविधानसे ली गयी है, किन्तु मंत्रिमडलका निर्माण ब्रिटिश सविधानके अनुरूप है। अिन दो विभिन्न प्रणालियोको किस तरह भारतीय सविधानमें सयुक्त किया गया है?

यह राजनीतिके विद्यार्थियोके लिअे अध्ययनीय है। अध्ययनीय अिसलिअे है कि अिन दोनोमें अेक बहुत बडा विरोध है, अमरीकी राष्ट्रपतिका अुत्तरदायित्व अेकातिक है, व्यक्तिगत है, किन्तु ब्रिटिश मन्त्रिमडलका अुत्तरदायित्व सामूहिक है और यह सामूहिक अुत्तरदायित्व अिस प्रणालीका मौलिक अधार है। किस तरह अिन दो विरोधी आधारोंके बीच राज्य अेव प्रशासनकी कार्यवाहियाँ चलेगी यह विचारणीय होगा। भारतका सवैधानिक प्रधान कार्यकारी तो राष्ट्रपति है, परन्तु प्रधान सत्ताधिकारी है प्रधानमत्री, और अिसमें अेक अुलझन और भी है, वह यह कि राष्ट्रपति मन्त्रिमडलके सदस्योंमें स्वतत्र और प्रत्यक्ष भी सत्रय रस सकता है। प्रस्तुत निबधमें हमारे संविधानकी अिसी परिस्थितिपर तथा राष्ट्रपतिकी पदसत्ताओपर विचार करना अुद्देश्य है। अिस स्थितिके दो पार्श्व हैं। पहला राष्ट्रपति पदके लिअे वोटरोंके समूहोंपर मन्त्रियोका प्रभाव और तदभूत तानेबाने तथा, दूसरा मन्त्रिपदपर नियुक्त हो सकनेके मामलेमें राष्ट्रपतिका हाथ।

अध्ययन करनेपर भासित होता है कि यद्यपि राष्ट्रका सवैधानिक कार्यकारी जरूर राष्ट्रपति है परन्तु असल सत्ताधारी प्रधानमत्री ही है। अतः जब यह कहा जावे कि सवैधानिक दृष्टिसे प्रधानमत्री तभीतक पदारूढ रह सकता है जबतक कि राष्ट्रपतिकी मर्जीको वह पसन्द हो तब अुसका मतलब यही होता है कि राष्ट्रपतिकी मर्जी अिस समय लोक-सभाकी मर्जीका ही दूसरा नाम है। असलमें विधान कारिणी प्रत्येक कार्यकारिणीसे अूपर पदपर आसीन है। व्यवहार रूपमें सविधानके अिस वाक्यका यही स्वरूप पेश होना चाहिअे और अुसीके अनुरूप परम्पराओका निर्माण भी होना चाहिअे, अिसके अतिरिक्त प्रधान मत्रीके हाथोंमें और भी महत्वपूर्ण सत्ता है। अन्य मन्त्रियोकी नियुक्ति राष्ट्रपति प्रधान मत्रीकी सलाहसे ही करेगे। यहाँपर ध्यान देने योग्य शब्द-समूह है "प्रधान मंत्रीकी सलाह अैसे राज्यके प्रधान कानूनी अधिकारीकी हैसियतसे राष्ट्रपति निःसदेह अिस नियुक्तिपर कुछ न कुछ असर डालेंगे ही। कभी वे किसी खास व्यक्तिको मन्त्रिमडलमें शरीक करनेपर जोर देंगे तो कभी किसीका नाम अलग करनेपर, परन्तु आमतौरसे अुसमें अतिम निर्णय प्रधान मत्रीकाही होगा। अगर भारतीय सविधान अिस बातको स्पष्ट कहता है कि प्रधान मत्री राष्ट्रपतिको राष्ट्रके शासनमें मदद करेंगे, डिक्टेट नहीं करेंगे। अतः अिस स्थितिमें दोनोंके अधिकारकी सीमाअें अस्पष्ट अेव अनिर्दिष्ट हैं।

अनायास हमारा ध्यान अन्य देशोके प्रधान मत्री और राष्ट्रके प्रधान सवैधानिक कार्याधिकारीकी ओर जावेगा। अिंग्लेंडका प्रधान मत्री बराबरीवालोंमें पहला आदमी गिना जाता है। भारतमें अभी अुसने यह पोझीशन हासिल नही की है। जिन परिस्थितियोंने मिलाकर हमारे प्रधान मत्री प. जवाहरलाल नेहरूको अेक देवता, अेक किस्मका 'हीरो' बना दिया है, अुनका लालन-पालन भी कुछ अैसे ढगका है, कि अुनकी अनेक कमजोरियोंके बावजूदभी वे जनताके लाडले हैं। और अपनी अिस लोकप्रियताको वे खूब जानते तथा महसूस करते हैं। नतीजा यह हुआ कि सरदार पटेलको छोडकर बाकी लगभग सब मत्री बहुत नगण्य पडे। यदि आत्म-सम्मानवाले व्यक्ति हुअे तो अपने सिद्धान्तकी

बाद वहकर मन्त्रि मंडलमे सहर्ष रुखसत होना पसंद करते रहे। जिस ढंगसे ९ अप्रैल १९५० के पाक भारत समझौतेको लेकर प्रधान मंत्री और नियोगी तथा श्यामाप्रसाद मुखर्जीके बीच मतभेद हुआ और अिन दोनोंन मंत्रि मंडलके बाहर जाना ज्यादा श्रेयस्कर समझा वह बड़ी खतरनाक घटना थी। पंडित नेहरूजीका बालभी बाका न हो सका। अैसी परिस्थितिका मतलब या तो यह हुआ कि भारतवर्षका प्रधान मंत्री, अमरीकी प्रेसीडेंटकी नाओ अपने अन्य सहयोगियोंको अपनी मर्जीका कठपुतली समझता है या यह कि भारतके प्रधान मंत्रीका मंत्रि-मंडल अैसे लोगोंसे भरा हुआ है कि जिनके आने जानेसे न तो पार्टीमें कोओ हलचल होती है और न पार्टी अुन्हें महत्व ही देती है। साथ ही जिस परिस्थितिमें हमारा संविधान जिस सामूहिक जिम्मेदारीका दम भरता है वह भी बरकरार नहीं रहती। जिस ढंगसे ये दो मंत्री रुखसत हुअे अुससे सामूहिक जिम्मेदारीका सिद्धान्त बहुत खटाओमें पड़ता है।

मंत्रि मंडलकी सामूहिक जिम्मेदारीके प्रसंगमें हमें अपने संविधानकी अेक और बातका ध्यान रखना आवश्यक है, भारतीय राष्ट्रपतिको संसदके अवकाश कालमें आर्डिनेंस जारी करनेका अधिकार है। अैसा समझना चाहिअे कि वह आर्डिनेंस राष्ट्रपति अपने प्रधान मंत्रीकी सलाहपर जारी करेगा। परन्तु यह भी तो संभव हो सकता है कि वह अुसे किसी भी अन्य मंत्रीकी सलाहसे जारी कर दे? राष्ट्रपति सीधे बिना प्रधान मंत्रीके मध्यस्थ हुअे किसी भी मंत्रीको अपने पास सरकारी कामसे बुला और विचार विनिमय कर सकते हैं। अिंग्लैंडमें सम्राटका सम्बंध प्रधान मंत्रीके सिवा किसी अन्य मंत्रीसे राजकीय मामलोंमें सीधा और प्रत्यक्ष नहीं होता। जो कुछ भी होता है वह प्रधान मंत्रीसे ही। भारतीय संविधानकी धारा संख्या ७८ स के अनुसार हमारे देशमें अैसा कोओ बंधन नहीं। मंत्रि-मंडलकी सामूहिक जिम्मेदारीके प्रसंगमें हमारे संविधानकी यह धारा बड़ी असाधारण है, क्योंकि अिससे गड़बड़की गुंजाअिश है। राजकीय कार्योंमें अिस तरहसे राष्ट्रपतिका हाथ बड़ा सबल और प्रभावशाली होगा। संयुक्त मंत्रिमंडलके साथ तो यह सम्बंध गड़बड़ी ढा सकता है और राष्ट्रपति लगभग स्वयही प्रधान मंत्रीके भाग्यविधाता बन सकते हैं। यह प्रणाली अँग्रेजी कैबिनेट प्रणालीके विरुद्ध है तथा मंत्रियोंकी स्थितिको भलही मजबूत कर दे, प्रधान मंत्रीको तो वह कमजोरही बनाती है। अिस तरह संविधानने अेक कठिनाओकी अुलझन उत्पन्न की है। अगर प्रधान मंत्री अपने सहयोगियोंके साथ कुछ सख्ती करे तो मंत्री राष्ट्रपतिके साथ धुरी कायम करके प्रधान मंत्रीको अुलझनमें डाल सकेंगे। अिधर प्रधान मंत्रीको अुलझनमें डालकर स्वतंत्र अथवा अपनेही चंगुलमें फँसे रहनेका प्रलोभन राष्ट्रपतिके लिअे बहुत अधिक है।

बात यह है कि राजनीतिमें सत्ताधिकारके पीछे पार्टियों-पार्टियोंमें, पार्टीके गुट्ट गुट्टोंमें और गुट्टोंके व्यक्ति व्यक्तिमें— कशमकश चलाही करती है। अिसलिअे भारतीय राष्ट्रपतिका भविष्यमें क्या स्वरूप होगा, यह यद्यपि परिस्थितियोंपर अवलंबित है तथापि आज विचारणीय है। भारतके प्रधान मंत्री और राष्ट्रपतिके बीच कशमकशकी परिस्थितियाँ अवश्यही आवेंगी। राष्ट्रपति प्रधान मंत्रीकी सलाहसे बाध्य रहें अथवा न रहें यह प्रश्न अितना कानूनका नहीं जितना कि अुचित परंपराओं और रूढ़ियोंके निर्माणका है। हमें यह निर्माण करना होगा, आज कानून चाहे जो कह रहा हो। यह कशमकश तब और भी गंभीर होगी जब राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री विभिन्न पार्टियोंके व्यक्ति होंगे। अिन परिस्थितियोंमें राष्ट्रपति अिस्तीफेकी धमकीका अवश्य ही अुपयोग करेंगे। यदि राष्ट्रपतिने अिस्तीफेकी धमकी दी तो संविधान अुस परिस्थितिका क्या अिलाज करता है, यह भी विचारणीय है।

भारतका राष्ट्रपति फिरसे जितनी बार चाहे अुतनी बार चुनावके लिअे खड़ा हो सकता है। अिसमें कोओ संवैधानिक आपत्ति नहीं अुठती। फिर भी अुसका स्थान रिक्त ही रहता है। संविधानको देखनेपर अुसकी चार हालतें जाहिर होती हैं—पहली तो है पंचवर्षीय अवधिकी समाप्ति, दूसरी है मृत्यु अथवा

कोओी निकम्मा बना देनेवाली घोर बीमारी, तीसरी अुसका अिस्तीफा, और चौथी अिम्पीचमेंट-महाभियोग। अिस तरह जगह खाली होनेके छह महीनोके भीतर अुसका दूसरा चुनाव होना आवश्यक है। अमेरीकामें अिन हालतोमें वाअिस प्रेसीडेंट प्रेसीडेंट बन जाता है। परन्तु भारतवर्षमें अुपराष्ट्रपतिके रहते हुअे भी नवीन चुनावके बिना स्थायी राष्ट्रपति नही हो सकता। अुप-राष्ट्रपति केवल अतरिम कालमात्रके लिअे स्थानापन्न राष्ट्रपति हो सकेगा। हमारे सविधानकी यह धारा मुख्य गडबडकी है। होना तो अमरीका जैसा ही था, क्योकि मान लीजिअे कि कोअी राष्ट्रपति थोडा कम अीमानदार है। दूसरा चुनाव जीतनेकी अुम्मीद नही दिखती? परन्तु अिसमे पदलोलुपता विद्यमान है? तब वह कुछ समयके लिअे तो अपनी कार्यावधि अवश्य ही हिकमतके साथ बढा सकता है। वह या तो ससद भग कर देगा या किसी राज्यकी विधान-सभा भग कर देगा, और जब तक पूरा निर्वाचक-मडल फिरसे चुनकर नही आ जाता तबतक शानसे गद्दीपर बना रहेगा। हमारे सविधानका कहना है कि जबतक दूसरा राष्ट्रपति पदासीन नही हो जाता (मौतकी बात छोड दीजिअे क्यो कि अुसमें अुपराष्ट्रपति स्थानापन्न हो ही जाता है) तबतक पुराना राष्ट्रपति अपनी गद्दीपर बना रहेगा। अत, कतिपय सविधान पडितोका सुझाव है कि जो बात राष्ट्रपतिकी मृत्युपर लागू होकर अुप-राष्ट्रपतिको पदारूढ करा देती है, वही बात अन्य तादृश परिस्थितियोमें समव होनी चाहिअे।

साधारणत राष्ट्रपतिका स्थान खाली तो नही होगा, अैसी अुम्मीद हमें करनी चाहिये, परन्तु यदि मानलो किन्ही कारणोसे राष्ट्रपतिको जानबूझकर पद खाली करनेके लिअे मजबूर होना पडे तो अुस अवसरपर अुपरोक्त सुझाव काम आवेगा। खाली होनेके कारणोमें अिस्तीफा सबसे महत्वपूर्ण है, परन्तु अिस्तीफेकी हालतमें अुपराष्ट्रपति पदारूढ हो जाअे अैसी व्यवस्था सविधानने नही दी। सविधानमें यही कहा गया है कि दूसरे राष्ट्रपतिके चुनाव तक पुराने राष्ट्रपति ही पदारूढ रहेंगे। यह दोष होगा। यदि वे पदारूढ होनेके लायक ही होते तो अिस्तीफेकी नौबत ही क्यो आती। कहनेका तात्पर्य है कि अिस्तीफेके कारण बहुत जबरदस्त होने चाहिअे। अेक कारण यही बीमारी हो सकती है। अष्टम अेडवर्डके पदत्यागकी जैसी कोअी परिस्थिति भी आ सकती है जब सवैधानिक सकट खडा करनेके बजाय, राष्ट्रपति स्वय मन्त्रिमन्डलके सामने आत्मसमर्पण कर अिस्तीफा देकर चला जाना चाहे। अैसी ही किसी परिस्थितिमें अुसकी पार्टी ही अुसे अिस्तीफा दे देनेके लिअे आदेश दे सकती है। तीसरी यह भी हालत हो सकती है कि आनेवाले अिंपीचमेंटसे बचनेके लिअे वह खुद बाहर चला जावे। चौथी यह है कि राष्ट्रपति प्रधान मंत्री अेव मन्त्रिमडलको धमकी देना चाहता है। धमकीके जरिये लोकसभाके बहुमतको किसी गभीर विषयपर भिन्न मत हो नसीहत देना चाहता है कि वे अपनी स्थितिका नाजायज फायदा अुठा रहे हैं, अिसलिअे लोक सभाको भग करनेके बजाय अुनकी पोल खोलनेके लिअे सविधानके अभिभावककी नाअी वह खुद अिस्तीफा दे।

राष्ट्रपतिका त्याग पत्र

सक्रिय राजनीतिमें सबसे महत्वपूर्ण घटना राष्ट्र-पतिका त्यागपत्र है। क्योकि अिस तरह राष्ट्रपति किसी सवैधानिक विवादको सामान्य नागरिकोके दृष्टि-केन्द्रमें लाना चाहता है और साथ ही यह भी चाहता है कि प्रधानमत्री, मन्त्रिमडल और अुसके बीचके अिस सैद्धान्तिक प्रश्नका निबटारा लोक सभा करे। वह समझ सकता है कि अमुक ममलेमें अुसका मत ठीक है और मंत्रिमडलका गलत, परन्तु अितना गलत नही कि वह सदन-भगका कदम अुठावे। यह भी हो सकता है कि प्रधानमत्रीका व्यवहार ठीक न हो, और अुसकी पार्टीके बहुमतका स्वामी होनेके कारण राष्ट्रपति अुसे डिसमिस करके खामख्वाह पूरी लोक-सभाकी ही दुश्मनी और ओर्ष्या तथा कोपका भाजन बन रहा हो। कहनेका मतलब यह कि राष्ट्रपतिके पास जब अपनी शिकायत पेश करनेका कोअी भी अन्य साधन न हो तब वह अवश्य ही अिस्तीफेकी धमकीका आश्रय ले सकता है। अिधर अदालतोको भी अिन मामलोमें हस्तक्षेप करनेका हक हासिल न होनेसे

राष्ट्रपति केवल अपना अिस्तीफा ही पेश कर सकता है। कहा जाता है महारानी विक्टोरिया जिस धमकीका कारी लाभ अुठाकर विरोधी मंत्रिमण्डलसे भी अपना काम करा लिया करती थीं। अतः यदि अैसा अवसर आ जाअे तो राष्ट्रपतिके सामने अिस्तीफा पेश करनेके अतिरिक्त और कोअी अुपाय नहीं। अेक दफा अिस्तीफा दे देनेपर संविधानने अिस्तीफेके वापिस होनेकी कोअी गुंजाअिश नहीं है जो होनी चाहिअे थी।

राष्ट्रपतिको अपने मतभेद संसदके सामने रखने और संसदका मत लेनेकी गुंजाअिश दी जानी चाहिअे थी ताकि वह अपनी विजयके प्रसंगमें मंत्रिमंडलको डिसमिस करे अेवं पराजयके प्रसंगमें खुद बाहर चला जाअे और निर्वाचक-दलको दूसरा राष्ट्रपति चुननेका मौका दे। कमसे कम अिस्तीफा मंजूर या मंसूख होनेके बीचकी अवधिमें अुसे पदपर नहीं रहना चाहिअे। राष्ट्रपतिका अिस्तीफा पेश होते ही अुपराष्ट्रपतिको पदासीन करा देनेकी सुविधा संविधानमें होनी चाहिअे थी।

जिस तरह राष्ट्रपतिके अधिकारोंके संवर्धनकी बात करनेपर जिज्ञासा अुठती है कि भारतीय राष्ट्रपतिके डिक्टेटर होनेकी संभावनाअें क्या न बढ़ जाअेंगी? यों ही अल्पसंख्यक, पिछड़ी तथा आदिम जातियोंके कल्याणकी विशेष जिम्मेदारीके कारण अुसे विशेषाधिकार प्राप्त हैं संवैधानिक गुरुताअें हासिल हैं तथा प्रतिनिधियोंको संसदमें नामजद करनेका भी अधिकार है। संसदमें अपना संदेश भेजनेका भी अधिकार है। यह अधिकार अंग्रेजी सम्राटको भी नहीं। अिंग्लैंडमें संवैधानिक स्थितिके मुताबिक सारे मंत्री और प्रधानमंत्री पार्लिमेंटमें बहैसियत सम्राटके नौकराके हैं और अुसकी आज्ञाका पालन करते हैं। अगर सम्राट कोअी विधेयक (बिल) अपने संदेशके साथ फिरसे पार्लमेंटके पास भेजे तो अुसका मतलब यह होगा कि अुसे अपने मंत्रिमंडलमें विश्वास नहीं। यही हाल हमारे राष्ट्रपतिका भी समझिअे। अिंग्लैंडमें विधेयक (बिल) वापिस भेजनेका अधिकार दूसरे सदनको है, सम्राटको तो सीधा अुसपर दस्तखत करनेका अधिकार है। यदि वह अुससे असहमत है तो पहले अिसी ... डिसमिस कर दूसरा प्राअिममिनिस्टर खोजना पड़ता है। यदि वह नहीं मिलता तो सदन भंग करना पड़ता है और अिस परिस्थितिकी पुनरावृत्तिका महत्त्व पड़ता है *जिससे स्टुअर्ट सम्राट चार्ल्स प्रथमके मस्तक छेदनकी बलि जनताको चढ़ानी पड़ी थी।*

हमारे देशमें भी यही होता था, विधेयक (बिल) वापिस भेजना तो बेकार है। कोअी संसद और कोअी प्रधानमंत्री अपनी सत्ताको दी गयी अैसी चुनौती बर्दाश्त नहीं करेंगे आत्मसमर्पण करना तो दूरकी बात है। यदि राष्ट्रपति किसी विधेयक (बिल) पर अपनी स्वीकृति नहीं देना चाहते तो वे मंत्रियोंको समझा-बुझा सकते हैं। अिसपर भी यदि वे नहीं मानते और राष्ट्रपति *अैसा समझते हैं कि वे सही हैं और मंत्रिमंडल गलत मार्गपर* तो अिन्हें डिसमिस करना ही अेक मात्र मार्ग है। राष्ट्रपतिको विशेषाधिकारका ही अुपयोग करना होगा।

कतिपय राजनीति-पंडितोंका कथन है कि राष्ट्रपतिको शासन करना है तो प्रधानमंत्रीकी मदद और सलाह आवश्यक है। मदद लेने तथा सलाह लेनेके अभावमें राष्ट्रपतिकी सारी शासकीय कार्यवाही अवैधानिक हो जायगी। मतलब यह है कि राष्ट्रपति अपने विशेषाधिकारका अुपयोग भी बिना प्रधानमंत्रीकी सलाह और मददके नहीं कर सकता क्योंकि वह अवैधानिक हो जावेगा। यह प्रसंग संविधानके शब्दोंको अुद्धृत किये और अुनका भाष्य किये बिना स्पष्ट नहीं हो सकेगा। अुपरोक्त भाष्य अथवा विवादका सारा आधार संविधानकी ७४ वीं धारा (१) और (२) है। धारा ७४ (१)में लिखा है—There Shall be a Council of Ministers with the Prime Minister at the head to aid and advise the President in the exercise of his function.— राष्ट्रपति द्वारा अपने कर्तव्यका निर्वाह करानेके लिअे, राष्ट्रपतिको सलाह तथा सहायताके हेतु प्रधानमंत्रीके नेतृत्वमें अेक मंत्रिमंडल रहेगा। अिसमें अंग्रेजीके Shall शब्दपर सारा दारमदार है। जिसका अर्थ लगाया जाता है कि राष्ट्रपतिको अपना कर्तव्य पूरा करनेके लिअे प्रधानमंत्री ...

तात्पर्य यह भी हुआ कि राष्ट्रपति बिना मंत्रि-मंडलकी सलाह और सहायताके अपना कर्तव्य निभानेका अधिकारी नहीं। यदि वह अैसा करता है तो संविधानकी अवहेलना करता है। अुसका अिंपीचमेंट भी (जुर्ममें लपेटा) हो सकता है।

अब धारा ७४ (२) को देखिये—The question whether any and if so what advice was tendered by ministers to the President shall not be inquired into any Court—मंत्रियोंने राष्ट्रपतिको कोअी सलाह दी अथवा नहीं, और दी तो कौनसी सलाह दी अैसे प्रश्न देशकी किसी भी अदालतको पूछनेका अधिकार नहीं रहेगा। —अिस धारामें जिस बातपर अदालतोंको प्रश्न करनेका अधिकार नहीं है वह है केवल 'सलाह' परंतु कोअी मदद मंत्रियोंने राष्ट्रपतिको दी अथवा कौनसी नहीं दी अैसा प्रश्न पूछनेका हर अधिकारी अदालतको अधिकार रहेगा। अिसका मतलब यह होगा कि यह बंधन केवल सलाह-पर लगा है, मददपर नहीं। अर्थात् राष्ट्रपतिको प्रधान-मंत्रीने कौनसी मदद दी और कौनसी नहीं अिस प्रश्नपर सुप्रीमकोर्टको राष्ट्रपतिसे जवाबतलब करनेका अधिकार है। फिर यह अधिकार सिर्फ अदालतोंका है, लोकसभाका नहीं, लोकसभा कमसे कम प्रधानमंत्री अथवा अुसकी सरकारसे, अवश्य ही यह प्रश्न पूछनेका अधिकार रखती है कि राष्ट्रपतिने कौनसी सलाह या मदद ली और कौनसी सलाह या मदद अुन्होंने नहीं ली? जबतक संविधान स्पष्ट रूपसे अुसका निषेध नहीं करता विधान-कारिणी अवश्य ही अुस प्रश्नको अुठा सकती है क्योंकि अुसमें संविधानकी अेक धाराके अर्थका प्रश्न भी तो निहित है। संविधानकी ५३ (२) वीं और ७५ (१) और (४) धाराओंने अिस प्रकारके निषेध प्रस्तुत भी किये हैं जहां राष्ट्रपति बिना किसी सलाह और मंत्रि-मंडलीय मददके अपना कर्तव्य निभानेके अधिकारी हैं।

कहा जाता है कि चूंकि राष्ट्रपति अपनी स्वतंत्र-तासे बिना मंत्रिमंडलकी मदद या सलाहके कर्तव्य निभानेके अधिकारी हैं, अिसलिअे अिस अधिकारके [illegible] परिस्थितियों भी संविधानने अितजाम किया है। यदि अुन्हें यह स्वतंत्र अधिकार न होता तो अुनके 'अिंपीचमेंट' की जरूरत ही क्यों पड़ती जिसका संविधानमें साफ-साफ निर्देश है। अिंपीचमेंटका दंड अिसीलिअे है कि राष्ट्रपतिको अुस प्रकारका अेक स्वतंत्र अधिकार है, जिसमें अतिक्रमणकी संभावना है और संभावना होनेके कारण अुसपर अंकुश जरूरी है। यदि अुसके हाथोंमें यह स्वतंत्र अधिकार न होता तो अुसके दुरुपयोगकी संभावना ही कैसे अुत्पन्न होती और 'अिंपीचमेंट' की दफाओंकी भी जरूरत क्यों पड़ती? यदि राष्ट्रपतिको प्रत्येक कदम प्रधानमंत्रीकी सलाह और मददसे अुठाना अनिवार्य होता तो फिर अुनके 'अिंपीचमेंटकी' गुंजाअिश और विधानकी जरूरत ही क्यों आती? वह अपने त्यागपत्रकी धमकी देकर भले मंत्रिमंडलको झुका ले; परन्तु वह अुनके मतके विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता। अिस सबका मतलब यही है कि भारतीय राष्ट्रपति यह सलाह और मदद लेनेको बाध्य नहीं और अिसीलिअे अुसे संविधानकी अभिभावकता निभानेके लिअे 'अिंपीचमेंट'का डर रखना पड़ा।

अिसके विरुद्ध अुत्तर दिया जाता है कि 'अिंपीचमेंट' का अस्त्र संविधानने मौजूद है परन्तु जिस ढंगसे अुसने अिसे संचालित करनेकी प्रणालियां और बारीकियां निर्धारित की हैं अुनसे यह स्पष्ट है कि अुस अस्त्रका प्रयोग क्वचित् ही किया जा सकता है। अन्य देशोंका अनुभव भी अिसी तथ्यका समर्थक है कि लाखमें अेक दफा कोअी भी महान् राष्ट्र अपने सर्वोच्च राज्याधिकारीको अिंपीच करने (जुर्म लगाने) की लाचारी स्वीकार करेगा। अन बड़ी किसी संगीन अवहेलना और संवैधानिक अपराधपर ही अिस अस्त्रका अुपयोग होगा।

यदि राष्ट्रपति बहुत ही अिस सलाह और मददका अुल्लंघन कर रहा है तो भारतीय संविधानकी ५३ (२) व धारामें अुसका अितजाम है। 'अिंपीचमेंट' की नौबत बिना लाये भी संसदको अधिकार दिया गया है कि वह राष्ट्रपतिको अुसके सारे या अंशतः अधिकारोंसे वंचित कर अुन अधिकारोंके अुपयोग किसी अन्य व्यक्ति या अधिकारीको दे दे। अिस दशाकी मातहतीमें संसदको

राष्ट्रपतिके 'अपीच' करनेकी जरूरत नहीं। शायद ही कोओी अैसा राष्ट्रपति होगा जो खामख्वाह समदका विरोध मोल ले। परन्तु प्रश्न यह है कि अमरीकी सविधानकी यह नियत्रण (Checks) और तुलन (Balances) की प्रणाली अधिकारोंकी सुस्पष्टता और सुनिर्दिष्टताको घटाअीमें न डाल दे? यह समझना कठिन होगा कि सर्वोच्च और अंतिम अधिकार विधान-कारिणीको है या राष्ट्रपतिको अथवा प्रधान-मत्रीको? यह कहना कि सर्वोच्च अधिकार नागरिक-वर्गको है व्यवहारकी राजनीतिमें कोरी बकवास है। आजकी दुनियामें ससारके किसी भी राज्यमें प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र सफलतापूर्वक न तो चल सकता है और न चलाया जाना अभीष्ट ही है।

अिन शकाओंको अुठानेका अुद्देश्य केवल अितना ही है कि अन्य राजनीति शास्त्री अेव राजनीतिके पडित अिनसे सबधित विवेचनको सागोपाग रूपमें राष्ट्रभाषामे प्रस्तुत करे। हमारा सविधान अभी बिल्कुल बच्चा है अुसे प्रौढ होना है। अिसीलिअे अिन तमाम झझटोसे गुजरना होगा। सविधानके राष्ट्रपतिका फ्रेंच-प्रेसीडेंट जैसा भविष्य होगा, अथवा अग्रेजी सम्राट जैसा, अमरीकी प्रेसीडेंट जैसा, या अग्रेजी वाअिसराय जैसा, कुछ भी अभी निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि ये तमाम बात भावी राष्ट्रपतियोंकी प्रतिभा, व्यक्तित्व और अुनकी महानतापर निर्भर हैं। हमारे सविधान निर्माताओंने ससारके सभी सविधानों अेव राज्याधिकारियोंकी श्रेष्ठ विशेषताओंके तत्वोंको समवेत करनेका असभव प्रयास और महत्वाकाक्षाको सामने रखा है।

(पृष्ठ सख्या १७१ का शेषाश)

होती। कालिदासने कुशलतापूर्वक ऋग्वेदकी करुणान्त मूलकथाको दोनोके पुर्नमिलन द्वारा सुखान्त बना दिया है।

लेकिन अिस कवि कल्पनाकी योजनासे अुर्वशीके हृदयका काटा नहीं निकला। पुरुरवाका सहवास बीचमें ही छोडकर स्वर्गीय जीवनसे भ्रष्ट सुरसुदरीका मानवीय जीवनके प्रति वही आकर्षण बना रहा और सहस्रो वर्षोंके पश्चात् जब पुरुरवाका पराक्रमी वशज अर्जुन अस्त्र प्राप्तिके लिअे देवलोक गया, तब देवेन्द्रकी सूचनानुसार अुर्वशीने अुसकी तरफ अुत्कठा भरी नजरासे देखा। लेकिन मानव समाजकी नैतिक कल्पनाओंमें डूबे अर्जुनने अुसे अपनी कुलजननी समझकर अुसके प्रेमको अस्वीकार किया। अप्सराअें काल और नीतिकी मर्यादा से परे होती हैं, अिसके सत्यको अर्जुन नहीं समझ सका। प्रणयपीडित अुर्वशीको यह प्रेम-भग सहन नहीं हुआ और "तू वर्षभर नपुसक रहेगा" यह कठोर शाप अुसके सामने विनम्रतासे खडे अर्जुनको स्वीकार करना पडा। अुर्वशीके नैराश्यपूर्ण जीवनका यही अन्तिम सस्मरणीय प्रसग है।

रवीन्द्रने सत्य ही कहा है—

"नहमाता, नहकन्या नहवधु,
सुन्दरीरूपसी हे नवनवासिनो अुर्वशी।"

अिसीलिअे लगता है कि अुर्वशी अुत्तरोत्तर परिणत होती हुअी सौदर्य-कल्पनाओंका प्रतीक है। वह न स्त्री है, और न अप्सरा है।

था कि अमे अवसरपर ही नौकर हाथ साफ करते ह। मियाँ अशफाकके दोस्त भी अपनी चाउवाजीमे न चूकते ! अिसलिअ वगम और मियाँमे अुस पतगवाजी पर प्राय झगडा होता। मनमुटाव होता। कभी कभी दिनोतक बोलना बन्द रहता। अिसका परिणाम यह होता कि प्राय छोटी मोटी पतगवाजिया चुपचाप ही हो जाती। अुनका वगमको पता भी न चलने दिया जाता। किन्तु वगमकी जो पुरानी लौडी थी वह बाहरकी सभी खबरे वगमको सुना देती। वह नित्य बता देती कि आज अशफाकमियाँने कितन पतग काट अुनके कितन कट ! और स्वय अशफाकमियाँका मत यह था कि पतग जब आकाशमें अुडती है अूची जाती है तो निगाहे भी अूची होती ह। दिमागमें अक अजीव प्रकारकी थिरकन और सिहरन पदा होती है। प्रतिद्वन्दीका पतग किस पेंचसे काटा जाअ और कितनी ढीली रखी जाअ और कितनी सरत अिसे पतगवाज ही जानता है। अिस बाजीका खेलनेवाला दुनियाके जीवन-सघर्षमे अन्य खेलनेवाली बाजियोसे भी अपना सम्बन्ध रखता है। अुनमें विजयी बनता है।

जो हो अिस गर्वोक्तिका कोओ और पतगबाज प्रमाण दे सके या नही पर तु स्वय मिया अशफाक अपनको पेश कर सकते थ। और वे अिस बातको बताते कि म हूँ अक सफल पतगबाज — जीवनका अक निपुण खिलाडी — न हारा न पीछ हटा ! चला तो चलता गया। दौडा तो दौडता गया। मेरा भाग्य खुला तो खुलता गया।

अिस प्रकार जीवनके खलमें *पतगबाजोके खलमें* सिद्धहस्त मियाँ अशफाक अली जब विजयपर विजय पाते गय, तो वे जल्दी ही सामन्तवादके सप क बन गय। जीवनके भोग भोगन लग। चादी और सोनकी चमकमें चौंधिया गय। यद्यपि अशफाकमियाकी शिक्षा दीक्षा अधिक नही थी परन्तु अनुभव ज्ञानमे वे माना स्वय सिद्ध हो चुके थ। चूकि बचपन गरीबीमें बीता यौवन भी गरीबीक थपेड खाकर विचलित हुआ तो तब वह अपन साथियोसे प्राय अिस बातकी शिकायत करते वे कहते कि गरीबोका जीवन जीवन नही अिस जीवनमें शान्ति और चन नही। मानो मौत। दु सह पीडा। अिस प्रकार अशफाकमिया न केवल साथियोमे कहते अपितु वे नवाबकी अुस रियासतम बसकर भी नवाबके विरुद्ध जनसमाजको भडकाते ! वह विद्रोह खडा करते ! गाँवो कस्बोकी सभाओमे भाषण देते और चिल्लाकर लोगोको सुनाते, मजदूर मर रहा है किसान मर रहा है ! अिनके जीवनका परिश्रम बेकार जा रहा है। अिनका शोषण हो रहा है ! नवाब मोटा हो रहा है। अश्वयके भोग भोग रहा है ! वह गुर्रा रहा है ! कदाचित यही कारण था कि मिया अशफाक अलीको अक बार रियासतकी पुलिसन पकडा और बगावतके लिअ जलम ब द कर दिया। अुस जलमें रहते हुअ अशफाकमियाँने जब कदियोका सम्पर्क पाया चोर डकतोको निकटसे देखा तो अुहोन समझा कि हाँ, चोर चोर नही। डाकू डाकू नही। गुण्डा गुण्डा नही। य सब पूजीवादके पथरीले महलोमे निर्मित किय गय ह क्षुधातुरके पेटपर लात मारी गयी तो वह मचला गया ! लकिन जब वह निर तरके अत्याचारसे पिसन लगा तो अुसमें भी प्रतिरोध पदा हुआ ! पूजीवादन जिस चालाकीसे अुसका शोषण किया तो डाकू गुण्ड और चोरन अुसी निर्म मताके साथ सचित धनको पाया अुसके मालिकका खून किया ! क्योकि मियाँ अशफाकन अुन दिनो अपन मनमें अिस विचारका भी सृजन किया कि पसा समाजका है — प्रत्यक व्यक्तिको अुसे भोगन और पानका अधिकार है ! पसा और श्रम विभक्त नही। अतअव जो श्रम करता है पहिले अुसका अधिकार है। जो श्रम नही करता वह अधिकार नही रखता। वह क्रूर बनता है। मदा ध भडिया ! बबर हिंस्र बना हुआ वठ विठाय ठगी करता है शोषण करता है। त्रस्त और दुखी समाजको देखकर ही हीं करता है दाँत निपोरता है मूख !

किन्तु विद्रोही अशफाकके समान नवाब भी चतुर था। वह मूख नही था। जब अशफाकमियाँकी जल अवधि पूण हुओ तो अुसन बाहर आकर दखा कि घरकी अवस्था खराब है ! पहिलसे भी बदतर है ! बूढा बाप

मर गया, बुढ़िया माँ है। अुसके पास भी रोटियोंका आधार नहीं। अिसलिअे, अशफाकने पहिले माँकी ओर देखा। जीविकाके हेतु प्रयत्न किया और वह नवाबके यहाँ मुन्शी हो गया। नवाबने देखा और मुसक्रा दिया। अुसने अनायास समझ लिया कि कुत्तेके सामने टुकड़ा डाला और वह पूँछ हिलाने लगा।

किन्तु अिस प्रकारका अुपालम्भ पाकर भी, मियाँ अशफाकके मनका विद्रोह अभी गरम था। वह शांत नहीं हुआ। वह किसी न किसी रूपमें नवाबशाही, सामन्तशाहीके विरुद्ध जहर अुगलता रहा। अशफाक मियाँ कहते रहे, यह क्रांतिका युग है.. विद्रोह करना ही, आजके जन-जनकी वाणी है। अुस वाणीमें आग है। टीस है! तड़प है! क्यों? किसलिअे? अिसी-लिअे न कि मानव त्रपित है, पीड़ित है। अधिकारोंसे वंचित है। धरती तो सबकी माँ है। सभीके लिअे अपने अुदरसे अशीष देती है। अन्न प्रदान करती है। यह विराट-प्रकृतिका स्वरूप, जो शोभायमान है, दिख रहा है, आखिर क्यों? क्या किसी अेकके लिअे! किसी नवाब राजाके लिअे? न, सभीके लिअे! आसमान सभीके लिअे! सूर्य चन्द्रमा सभीके लिअे! अिनमेंसे किसीका भी बँटवारा नहीं! किसीके पास अुपेक्षा या दुराव नहीं! प्रकृति मुसकराती है और सभीको जीवन देती है। नव-जागरणका पाठ देती है! गरीबकी झोपड़ीमें भी चाँद झाँकता है, सूर्य प्रकाश देता है। फिर यह अवरोह क्यों! अिन्सानकी अिन्सानके प्रति अुपेक्षा क्यों! अिन्सान गर्वित क्यों! शोषित क्यों! बेअीमान क्यों!

परन्तु नवाबका पैसा, वैभव, जब मियाँ अशफाकने समीपसे देखा, अुस जगमगाहटमें अपनेको विपन्न पाया, हीन पाया, तो निःसन्देह, अशफाकके मनमें भी यह भाव आया कि वह भी अैसा होता तो? वैभवशाली बनता तो! और मानो अशफाक मियाँका भाग्य अिस भावनाको समझ रहा था। वह स्वयं आँख-मिचौनी करनेके लिअे अुद्यत था। निःसन्देह, वह भाग्य अपने अशफाकके प्रति सहृदय और दयालु बनना ही पसन्द करता। फलस्वरूप, नवाबके दरबारमें अशफाक मियाँको अेक-के-बाद दूसरी तरक्की मिलती चली। आमदनीके अन्य जरिये भी खुलने चले। वह अशफाक, जो अेक दिन खुले स्वरमें समाजकी चोरी और लूटका विरोध करता, वह स्वयं मानवके अभावमें खेलने लगा। जिसे राज-दरबारमें काम कराना होता, अशफाक अुसकी जेब देखता। अुस जेबके पैसोंको परखना चाहता। वह यह समझनेके लिअे अुद्यत होता कि जो काम अुससे कराया जा रहा है, अुसका मोल क्या है,—अुसे क्या मिल सकता है। अिस प्रकार मानो पैसेकी मोहकताने जो अुच्चाटन-मन्त्र अशफाक मियाँको पढ़नेके लिअे विवश किया, निश्चय ही, वह स्वयं अपने-आपमें अितना हलका नहीं था जो आसानीसे भुलाया जा सकता, मन या दृष्टिसे ओझल किया जा सकता! क्योंकि अुस मन्त्रके द्वारा ही तो पैसा आता! और पैसेका अर्थ था, शरीर और मनकी अिन्द्रियोंका भोग! समूचे जीवनका भोग! जिह्वाका भोग! आँखोंका भोग! शरीरका भोग! और अुस भोगकी तृप्तिके हेतु जब अशफाकमियाँ पैसा प्राप्त करने लगे, वह पैसा अविरल धाराके समान बहता हुआ अुनकी तरफ आने लगा, तो तब, मियाँजीने समझा कि हाँ, यही है जीवन-साफल्यका परम और श्रेष्ठ सोपान जो अब पाया है, अब मिला है।

किन्तु कहावत है कि जब आदमी तरक्कीकी ओर आता है, अुसे सफलता मिलती है, तो वह अूँचाअीकी ओर ही देखता है। नीचे नहीं देखता। मुड़कर नहीं देखता। तब वह अनुभव नहीं करता कि अेक दिन वह भी भूखा था, नंगा था। झोपड़ीका वासी था। क्योंकि कामनाओंकी अुस भीड़में, अरमानोंके दहकते हुअे अुन अंगारोंपर चलते हुअे, भला अितनी चेतना कहाँ कि आदमी सोचे, हाय! विवशताओंका अेक दिन वह भी शिकार था। वह भी विषमताओंका दास बना था! अतअेव, मियाँ अशफाकअलीको जब सफलतायें मिलती चलीं, दृष्टि अूपर होती चली, कामनायें बढ़ती चलीं तो अुन्होंने पीछे छूटे हुअे साथी-संगियोंको तो भुलाया ही, अपनी गत स्थितिको भी भुला दिया। कदाचित् अिसीका यह परिणाम था कि अशफाक मियाँके अन्तरमें दम्भ जाग गया। मानव-कल्पनाका भाव भी मर गया।

किसान और मजदूरका किस प्रकार शोषण किया जाता है, वह सूर्यकी खुली धूपके नीचे किस प्रकार ठगा जाता है, यह भी, अुस व्यक्तिके मन लोकमें तिरोहित हो गया। सचमुच, मियाँ अशफाकने भुला दिया कि किसान और मजदूरके श्रमपर ही अिस विश्वका सौन्दर्य जीवित है! मजदूरकी छातीपर ही राज-महलोंका निर्माण हुआ है। अपितु, हुआ यह कि मियाँ अशफाकअलीने धीरे-धीरे जब अपनी वाणीका पलटा, तो अुससे अेक और ही विपरीत ध्वनि प्रसारित हुआी—जनता मूर्ख है भेडोंके समान, जिन्हें सहस्रोंकी संख्यामें अेक ही व्यक्ति संचालित करता है! वह कहते, संसारका निर्माण भले ही मजदूरोंने किया, किसानने अन्न पैदा करके पेट भरनेका कार्य सम्पादित किया, परन्तु, अिस सबका परिष्कार और परियोजन श्रेष्ठ रियोंसे नहीं, मस्तिष्कसे हुआ। बुद्धिजीवीके द्वारा ही, अिस संसारका अुदय हुआ.. अिन्सानका जन्म हुआ. अभ्युदय हुआ ...

—तो, अशफाक मियाँ चले और आगे बढ़े। वे मुन्शीसे वजीर बन गये। रियासतके सिरमौर! वैभवका साम्राज्य अुनके चारों ओर फैल गया। वे अुसके स्वामी बन गये। जिन्दगीके मौजके दरियामें वे जितने बहे, अैसे बहे कि जैसे समूचे डूब गये। अुनका अस्तित्व बदल गया। रूप बदल गया। जबान बदल गयी। स्वर बदल गया। जब पैसा आया, तो निगाह भी बदल गयी। स्वत्वकी भावना अुनके मन प्रदेशमें अिस प्रकार जागरित हुआी कि मानो वह वहींपर थी। समय पाते ही, पनप गयी। सिर अुठाकर खडी हो गयी। अुसकी वाणी भी घोषित हो गयी।

जनतामें सर्वत्र कहा जाता कि अशफाक दूरन्देश हैं, कुशल नीतिज्ञ! ये राज्यकी दरिद्रता दूर करेंगे। सामन्तशाहीको मार देंगे। परन्तु जब अुन्हींको लोगोंने अुसी बहते हुअे दरियामें तैरता पाया, तो जैसे लोगोंकी साँस रुक गयी...मानव तिलस्मी और बहुरूपिया होनेके अतिरिक्त और कुछ न दिखायी दिया। क्योंकि, लोग तो सोचते थे कि अशफाक मियाँकी वाणीमें बल है, बुद्धिमें बल है, तो क्यों न अपने समाजको अुठायेंगे। ये क्या अपनी कही हुआी बातोंको भूल जायेंगे! अब क्या अपने दिमागसे निकाल देंगे कि आदमी अिसीलिअे चोरी करता है कि वह भूखा और नंगा होता है। अिसीलिअे डाकू गुण्डा! खूनी। निःसन्देह, लोगोंकी धारणा थी कि मियाँ अशफाकअली अपने अुस अमर वाक्यको कभी भी दिमागसे दूर न करेंगे कि खून चोरी और लूट करनेवाले वे कारखानेदार, सरमायेदार और जमींदार हैं, जो वैभवकी जिन्दगी बितानेके लिअे भ्रूण-हत्यायें करते हैं, अिन्सानका दमन करते हैं।

परन्तु आह! वे वाक्य मानो पीछे छूट गये, दूर! वे पिछले अशफाक मियाँकी मौतके साथ कब्रमें सो गये! अब वजीरे आजम अशफाक मियाँ हैं। जिनके विशाल भवनमें दास दासियाँ हैं। अस्तबलमें घोडे-बग्घियाँ हैं। मोटरें हैं। हाथी हैं। वे अब नंगी धरतीपर पैर नहीं रखते। छोटे आदमीसे बात नहीं करते। वह अुनतक पहुँच भी नहीं सकता। अमीर-अुमरा अुनकी महफिलके पात्र हैं! अब वे ही साज बजते हैं, बोलते हैं। पुराने तराने अब गायब हो गये। नये तराने हैं, नयी हवा है। नया साजोसामान! जिसका प्रभाव यह हुआ कि अशफाक मियाँकी दुलहन बेगम अशफाक . . . हीरे जवाहरातोंके जेवरोंसे तो अवश्य लद गयी, सेवाके लिअे दास-दासियाँ भी अेकत्र हो गयीं, परन्तु अुस नारीके मनका सन्तोष जैसे तिरोहित हो गया! अुसका मियाँ जैसे अुससे जुदा हो गया। वह किसी और दुलहनका खाविंद बन गया। और अुसकी दुलहन थी—पैसा! जीवनका आनन्द! जीवनका भोग! जिसका परिणाम यह हुआ कि बेगम रात-दिन अिस बातको जाननेके लिअे बेचैन रहती कि मियाँजी आके, सोये, या जागे। क्योंकि अब अशफाक-मियाँ अन्दर हरममें कम आते। अब अुन्हें अिस बातकी जरूरत नहीं थी कि बीवीके पास बैठकर पैसे-पैसेका हिसाब करते...जीवनकी समस्यापर विचार विनिमय करते! अब पैसेका अभाव नहीं! चूल्हेपर कोअी समा बना है या नहीं, सुबह तो मिली थी रोटी, अब शामको मिलेगी या नहीं,—आदि बातोंको समझने या मालूम करनेकी न आवश्यकता थी, न अवसर था।

यह काम अब नौकरोंका था। बीबीका भी नहीं था। वह तो अब बेगम थी। वजीरे-आजमकी दुल्हन! अब सभी काम नौकरोंके अूपर था। अुनकी अलग-अलग ड्यूटियाँ थी। राज्यसे सभीको वेतन मिलता। किन्तु यह सब तो था, दुल्हनको 'बेगम'का पद भी मिल गया, लेकिन अुस नारीको कुछ और भी चाहिअे था। सब कुछ पाकर भी अुसे पति चाहिअे था। वह पति वजीर हो, या भिखारी, अुस चाहसे जिसका सम्बन्ध नहीं था। बेगमको सुन्दर वस्त्र मिले, कीमती आभूषण मिले, महल मिला, बाग-बगीचे मिले, लेकिन पति नहीं मिला! अिन चीजोंने पति अुससे ले लिया। वह ही दूर गया। वह व्यस्त बन गया। मानो वह अेकसे अनेक बीवियोंका खाविन्द बन गया।

कदाचित, जिनीका यह परिणाम था कि बेगम अशफाक रात-दिन अुदास रहती। चिन्तित रहती। वह रानी बनी हुअी थी, मनसे भिखारिन रहती। चूँकि अशफाक मियाँ फुरसतके समय पतंगबाजी करते, तो तब भी, वह बेगम अपनी अटारीपर चढ़ी, दूरसे, पतिकी अूपर चढ़ी पतंगको निहारती। वह अुस पतंगको कटती देखती, काटती देखती। वह यह भी सुनती कि जब अशफाकमियाँ प्रतिद्वंदीकी पतंग काट देते, तो स्वयं खुशीका शोर मचाते, अुनके साथी भी चिल्लाते। किन्तु जब अुनकी पतंग कटती, तो तब, मानो मौतके समान सभी मौन-के-मौन ठगे रह जाते। अैसे समय बेगमका मन अैंठता। अुस मनमें जैसे जहरीला धुआँ चक्कर काटता। वह अन्तःप्रदेशमें चारों ओर फैल जाता। बेगमको कुंठित और परेशान कर देता। जैसे अुसका दम घोटने लगता। अुस समय बेगमके मनमें आया, वजीरे आजमको जीत प्यारी है...हार नहीं! वह कहती, तो हार किसे प्यारी है! सभी जीत चाहते हैं जीवनका आनन्द पाना ही, मानों सब अपना अधिकार मानते हैं। वह कहती, और यह आनन्द, यह जीवनका भोग क्या स्थिर है! अिन्सान अमर है! अिन चटाअीका कहीं अन्त है.. अिन अूँचाअीका कोअी छोर है! वह देखती कि सचमुच, अुनके पतिकी महत्वाकांक्षा बढ़ रही है! अिच्छा बढ़ रही है! मानो जीवनमें आँधी आयी है। वह अुड़ा रही है। अूँचाअीपर ले जा रही है...

राज्यमें, अवस्था यह बन गयी थी कि नवाबका अस्तित्व न होनेके बराबर रह गया था। मियाँ अशफाककी प्रभुता सर्वोपरि थी, परिस्थिति यह बनी कि नवाब मौन! मानो अज्ञात! जनतामें त्राहि-त्राहि थी। लूट थी। पीड़ा थी। दरिद्रता और बेरोजगारी सर्वत्र फैल रही थी। आर्थिक व्यवस्था प्रायः नष्ट हो चुकी थी। खजाना खाली। अधिकारी वर्गमें सर्वत्र लूट मची थी। अुन्हीं दिनों कि बात है कि मियाँ अशफाकने पतंगबाजीकी अेक बड़ी बाजी लड़ी। तैयारियाँ पूरी हुअीं। किन्तु जिस दिन वह बाजी लड़ी जानेको थी, अुससे अेक दिन पूर्व प्रातः ही, अेकाअेक जनता चौंक गयी। हतप्रभ रह गयी। अुस समय सर्वत्र अेक ही आवाज गूँज गयी— मियाँ अशफाकअलीने दूसरे नवाबसे सुलह की। सौदा किया। अपनी रियासत अुसे देनेकी बात की और आधीका स्वयं नवाब बनना पसन्द किया। अपने देशके साथ विद्रोह किया! गद्दारी की! परन्तु नवाबको यह राज पहिले ही मालूम हो गया। अुसने चतुराअी की। बिना किसी खून-खराबीके, तलवारोंके साथ, देशके स्वत्वकी रक्षाके हेतु मियाँ अशफाकअलीको गिरफ्तार कर लिया ... ..।

नयी हिन्दी कविता और प्रकृति

· श्री सिद्धनाथकुमार :

वर्ड्सवर्थने कहा था- 'प्रेरणा और अभिव्यक्ति देनेमें प्रकृति कभी नहीं चूकती।' सचमुच अति प्राचीन कालसे प्रकृति मनुष्यकी प्रेरणाका स्रोत रही है। उषाकी मधुमय मुस्कान, फूलोंकी हँसी, तरु-लता-गुल्मोंकी हरियाली आदिने युग-युगसे मनुष्यकी सौंदर्य-चेतनाको गुदगुदाया है, और विभिन्न युगोंके कवि अपनी कला-कृतियोंमें प्रकृतिके अनेक रूपोंको अंकित करते रहे हैं। आज भी प्रकृतिका आकर्षण निःशेष नहीं हुआ है। स्वयं कविके शब्दोंमें—

> **फूलोंके तनमें हास, हासमें सुरभि-रेख अवशेष अभी,**
> **नव रूप और रस, गंध, स्पर्शकी मनमें चाह अशेष अभी।**
>
> —नगेन्द्र

आज भी कवि प्रकृतिके सौंदर्यको देखता है, उससे प्रभावित होता है और अपने काव्यमें स्थान देता है, किंतु आजका कवि प्रकृतिको उसी रूपमें नहीं देखता, जिस रूपमें पिछले युगोंके कवि देखते आये हैं। ऐसा संभव भी नहीं, क्योंकि प्रत्येक युगका प्रकृति काव्य अपने पिछले युगोंके प्रकृति-काव्यसे भिन्न होता आया है। बात यह है कि प्रत्येक युगकी अपनी सौंदर्य चेतना होती है, जिसका जन्म युगकी परिस्थितियोंसे होता है। कलाकार युगकी परिस्थितियोंमें उद्भूत नवीन भावनाओंके भीतरसे ही प्रकृतिको देखता है। कलाकारके लिये प्रकृतिके वस्तुगत रूपका कोई मूल्य नहीं, अपने संस्कारोंसे आबद्ध होनेके कारण वह उसे देख ही नहीं सकता। अत्याधुनिक युगके हिंदी कवियोंने भी प्रकृतिको अपनी दृष्टिसे देखा है। प्रस्तुत निबंधमें यही दिखलानेका प्रयत्न किया जा रहा है कि हिंदीकी नयी कवितामें प्रकृतिका उपयोग किस रूपमें हो रहा है। 'नयी कवितासे' मेरा तात्पर्य छायावाद-युगके बादकी कवितासे है, जिसे दो खंडोंमें विभाजित कर प्रगतिशील और प्रयोगशील कविता कहा जाता है, पर अपने संपूर्ण रूपमें यह अत्याधुनिक या नयी कविता ही है।

आजका युग अस्तव्यस्तताका है। जीवनका संघर्ष बहुत तीव्र हो गया है। मनुष्यके जीवनमें इतना अवकाश नहीं कि वह शांतचित्त हो दो क्षण कहीं बैठ सके। संसारमें चारों ओर हलचल ही हलचल दीख रही है। दुख, कटुता, शोषण, उत्पीड़न एवं युद्धकी आशंका आदिसे मानव मन त्रस्त है। इनसे मुक्ति पानेके लिये सब लोग उत्सुक हैं। आजका कवि भी इस मुक्ति-संघर्षमें भाग लेना अपना कर्तव्य समझता है, वह कहता भी है—"जन्म, जीवन, जागरण, संघर्षमें हम गर्व-गौरव भाजन हैं।" ऐसी स्थितिमें प्रकृतिके प्रति कवियोंका क्या दृष्टिकोण रहे, यह एक कठिन समस्या है। क्या जीवन संघर्षको छोड़कर कवि प्रकृतिकी गोदमें बैठकर बाँसुरी बजाये? पर क्या यह पलायन नहीं है? 'प्रसाद' जीने लिखा था—'ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे-धीरे' इसके लिये उन्हें पलायनवादी कहा जाता है। 'ग्राम्यामें' पंतजी कहते हैं—

> **वहीं कहीं जी करता, मैं जाकर छिप जाऊँ!**
> **मानव जगके क्रंदनसे छुटकारा पाऊँ!**
> **प्रकृति-नीडमें व्योम खगोंके गाने गाऊँ!**
> **अपने चिर स्नेहातुर उरकी व्यथा सुनाऊँ!**

जीवनकी दारुण हलचलसे दूर हटकर कुछ क्षणोंके लिये विश्रांतिकी आकांक्षा स्वाभाविक ही है। अत्याधुनिक कविके मनमें भी यह भावना उठती है, किन्तु उसे भय बना रहता है कि ऐसा करना कहीं पलायन न समझ लिया जाये। संभवतः इसीलिये 'अज्ञेय'जी कहते हैं—

> **क्षण भर भुला सकें हम**
> **नगरीकी बेचैन बुदकती गड्डमड्ड अकुलाहट—**
> **और न मानें उसे**
> **पलायन;**

क्षण भर देख सके
आकाश, धरा,
दूर्वा, मेघाली,
पौधे,
लता डोलती,
फूल,
झरे पत्ते,
तितली-भुनगे,
फुनगी पर पूँछ अुठाकर अितराती छोटी-सी चिड़िया
और न सहसा चोर कह अुठे मन में
प्रकृति वाद हैं स्खलन
क्योंकि युग जनवादी है।

कविके मनमें आशंका बनी रहती है, फिर भी वह प्रकृतिको देखता है, क्योंकि, जैसा अूपर कहा गया, अभी भी अुसके लिअे प्रकृतिका आकर्षण निःशेष नहीं हुआ है। वह प्रकृतिके अुस सौदर्यको देखता है, जो सहज है, काल्पनिक न होकर हमारे यथार्थ जीवनका है। वह शीशपर छोटे गुलाबी फूलका मुरैठा बाँधे हो ठिगने चनेको देखता है, पीले हाथोंवाली सयानी सरसोंको देखता है, अुसे खेतोंमें स्वयंवरका मनहर दृश्य दिखायी पड़ता है। पर कभी-कभी वह अपनी युग-भावनाका प्रतिबिंब भी प्रकृतिमें देखता है। कली और बबूलके रूपमें अुसे समाजके दो वर्ग दिखायी पड़ते हैं। बबूलको देखकर तो युगायुग संतप्त प्रपीड़ित जनताके चित्र अुभरकर अुसकी आँखोंके सामने आ जाते हैं—

वह बबूल भी
दुबला, धूल भरा, अप्रिय सा, सहज अुपेक्षित
श्याम वक्र अस्तित्व लिये वह रंक तिरस्कृत,
अपमानोंको मौन झेलता चिर अपमानित,
पथके अेक ओर चुपचाप खड़ा है।
फटे हाल जीवनकी नंगी कठिन दीनता साजे गर्हित
वह बबूल है।

—'मुक्तिबोध'

अपने युगकी धरतीपर खड़ा होकर अिस प्रकार प्रकृतिको देखना नये कविके लिअे पूर्णत अुचित अेव स्वाभाविक है। कवि अपने युगका प्राणी होता है, अुसे अपने युगकी परिस्थितियोंका साहसके साथ सामना करना चाहिअे, युग-भावनाओंके साथ तारतम्य करना चाहिअे। अैसा करना ही अुसकी शक्तिका परिचायक है। फ्रांसिस स्कार्फने सत्य ही कहा है— "The poet must be of his age, however bad the age may appear if he is not 'modern' when he lives, if he is never comtemporary when he is alive, he never will be contemporary, He will be still-born (Auden and after) अिस दृष्टिसे यह अुचित ही है कि नयी कवितामें युग भावनाकी झलक दिखायी पड़े। नये कवि अिस दिशामें जागरूक हैं, यद्यपि कभी-कभी कोअी स्वर अिसके विरोधमें भी सुनायी पड़ जाता है। अुदाहरणके लिअे नरेशकुमार मेहता कहते हैं— 'हम मनुष्यके आदिकालके काव्यसे भावोंकी विराटता ग्रहण करके सुंदर कल्पना प्रधान साहित्य रच सकते हैं।' यह प्रवृत्ति प्रशंसनीय नहीं कही जा सकती। आजके कविको आदिकालके काव्यसे नहीं, युग-जीवनके काव्यसे प्रेरणा ग्रहण करनी है। नयी कविता अिस ओर अग्रसर है। अिसे समझनेके लिअे द्विवेदी काल, छायावाद-काल तथा अत्याधुनिक कालकी प्रतिनिधि कविताओंसे अेक-अेक अुद्धरण देखे जा सकते हैं—

तरल-तोयधि-तुंग-तरंगसे।
निविड़-नीरद थे घिर घूमते।
प्रबल हो जिनकी बढ़ती रही।
असितता-घनता-रवकारिता।

—'हरिऔध'

गर्जनमें मधु-लय भर बोले,
झंझा पर निधियाँ धर डोले,
आँसू बन अुतरे तृण-कणने
मुस्कानोंमें पाले।
कहाँसे आये बादल काले ?
कजरारे मतवाले ?

—महादेवी वर्मा

अचानक अेक-सा है रंग
मानों सैकड़ों ग्रामीण मिलकर

अेक दिन त्योहारके हुरदंगमें हैं दंग
पीकर भंग।
बजती खजड़ी अभ्यस्त
मचती बेढ़ंगी मस्ती,
कि ढोलकपर किसीकी मस्त
पड़ती तालसे ठनकार,
वैसे ही गगनमें गरजते कुछ मेघ।

—प्रभाकर माचवे

तीनों अुद्धरण स्पष्ट रूपसे तीन युगोंका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं— भावना और अभिव्यंजना, दोनोंकी दृष्टियोंसे। यहाँ हमारा प्रयोजन विषय-वस्तुकी दृष्टिसे अिनपर विचार करनेका है। तीनों अुद्धरण जानबूझकर मेघ सम्बन्धी दिये गये हैं, जिससे स्पष्टतः ज्ञात हो सके कि युगका प्रभाव अिनपर कितना गहरा है। प्रथम अुद्धरणमें मेघका सामान्य अेवं यथातथ्य चित्र देनेका प्रयत्न किया गया है, दूसरेमें बादल मानव अन्तरकी तरल भावनाओंसे भीग-सा गया है, और तीसरेमें वह ग्रामीण-जीवनके अत्यन्त निकट आ गया है। आजके जनवादी युगमें मेघोंको जिस रूपमें देखना कविकी जागरूकताका परिचायक है। यों, ये अुदाहरण मेघ सम्बन्धी हैं, पर प्रकृतिके विभिन्न दृश्योंसे सम्बन्धित अन्य अुदाहरण भी अिस तथ्यकी पुष्टि करेंगे। रात्रिके सम्बन्धमें गुप्तजीने लिखा था—'शुक्राम्बरा रजनी-वधू अभिसारिका-सी जा रही' आजका कवि लिखता है— 'कोयलेकी खानकी मजदूरिनी सी रात।' अिसी प्रकार प्रकृतिके दूसरे चित्रोंमें भी सामयिकताकी झलक देखी जा सकती है।

नयी कविताके प्रकृति चित्रोंमें सामयिकताके अतिरिक्त जो दूसरी बात दिखायी पड़ती है, वह है वैयक्तिकता। यह युग ही वैयक्तिकताका है। आजका जागरूक कवि असामान्य सा दीखना चाहता है वह हमारे सामने कुछ अैसे असाधारण चित्र अुपस्थित करना चाहता है, जो अपनी नवीनताके कारण हमारी चेतनाको झकझोर दें। पहलेके लगभग सभी कवि 'चरण' को 'कमल' मानकर सतोषका अनुभव कर सकते थे, पर आजका कवि अपने किसी समकालीनके ही चित्रको दुहराना अपनी प्रतिभाकी पराजय समझता है। अिसीलिअे प्रकृतिके किसी अेक ही दृश्यका विभिन्न कवि विभिन्न रूपोंमें अुपस्थित करते हैं। अुदाहरणके लिअे सध्याके कुछ चित्र देखिअे —

सोनेकी वह मेघ चील
अपने चमकीले पखोंमें ले अंधकार
अब बैठ गयी दिन अंड पर।

— नरेशकुमार महता

खिंचा चला जाता है दिनका सोनेका रथ
अूँचो-नीची भूमि पारकर।

—रघुवीर सहाय

अिस दुनियाँपर
थककर आधी बेहोश हुअी अिस दुनियापर
छोहरेकी पाँखें फैलाती
मँडराती
चमकी चिड़िया-सी
धीमे धीमे
अुतरी आती
यह जाड़ेकी मनहूस शाम।

— धर्मवीर भारती

नहीं
साँझ अेक असभ्य आदमीकी जँभाअी है!

—केसरीकुमार

औंधे पड़े हुअे नीले टेबुलपर रक्खा
वह चमकीला गोला सरका और गिर गया।

—श्रीहरि

और, अिस तरहके कितने अुद्धरण बड़ी आसानीसे दिये जा सकते हैं। विभिन्न कवियोंके प्रकृति चित्रोंमें ही विभिन्नता नहीं, स्वयं अेक कवि भी अपने अनुभवको दुहराना नहीं चाहता। वास्तवमें कोअी अनुभव दुहराया जा भी नहीं सकता। अेक क्षण दूसरेसे भिन्न होते हैं, अेक अनुभव दूसरेसे पृथक्। चूँकि आजका कवि अपनी सूक्ष्म अनुभूतियोंकी सफल अभिव्यक्तिके प्रति सतर्क है, प्रकृतिका अेक ही दृश्य अुसे विभिन्न

कवियोंमें विभिन्न प्रकारका दिखलायी पड़ता है। अुदाहरणके लिअे श्री गिरिजाकुमार माथुरको ले लें। जिनके लिअे रात कभी 'घुमैली' है, कभी 'शरमीली' है कभी 'जवान' है, कभी 'सीपीके छाने पर्वतों' है, कभी 'हल्की-हल्की' है, कभी 'ठिठुरन भरी' कभी 'रुक कर जाती हुअी'। मैं नहीं कहता कि जितनी सतर्कता नये कवियोंमें है, पर यह नयी कविताकी अेक प्रवृत्ति है अवश्य।

अुद्दीपन-विभावके रूपमें प्रकृति आदि-कालसे ही चित्रित होती आयी है। अत्याधुनिक कालमें भी प्रकृतिका यह रूप देखा जा सकता है। जिसके लिअे अेक अुदाहरण पर्याप्त होगा—

> घिर गया नभ, अुमड़ आये मेघ काले
> भूमिके कम्पित अुरोजोंपर झुका-सा
> विशद, श्वासाहत, चिरातुर
> छा गया अिन्द्रका नील वक्ष—
> वज्र-सा, यदि तड़ित्से झुलसा हुआ-सा।
> आह, मेरा श्वास है अुत्तप्त -
> धमनियोंमें अुमड़ आयी है लहूकी धार—
> प्यार है अभिशप्त—
> तुम कहाँ हो नारि?

—'अज्ञेय'

नयी कविताके प्रकृति-चित्रणमें जो अेक बात और दिखायी देती है, वह है प्रकृतिके क्षेत्रका विस्तार। छायावाद-युग तकके प्रकृति-चित्रोंमें केवल पृथ्वी आकाश, नद-निर्झर, गिरि-अुपत्यका, सांध्य-प्रात, लता-कुसुम आदिका ही अंकन होता था, पर आजका कवि अुनके साथ-साथ दृष्टि-पथमें आये हुअे मीनार, लैम्पपोस्ट आदिको भी चित्रित कर जाता है। वास्तवमें, ये प्रकृतिसे पृथक् हैं भी नहीं। कार्डवेलने लिखा है—'To separate in this way natural things from artificial is to make as dangerous a distinction as that between environmental and affective elements in the conscious field or between mental and material qualities-Society itself is a part of nature, and hence all artificial products are natural.' आजका कवि जिस कथनकी मान्यता स्वीकार करता है और तथाकथित कृत्रिम वस्तुओंका भी चित्रांकन बड़ी सरलतासे कर जाता है। द्विवेदी-युगीन कविके सम्मुख 'कमलिनी कुल-वल्लभकी प्रभा' तरु-शिखापर ही रहती थी, पर अत्याधुनिक युगका कवि देखता है—

> हैं ताम्रवर्ण पश्चिम जिसने
> पहना है घुंघराला अुजियाला दूर दूर,
> निर्जीव चमकते आसमानमें अुठे हुअे,
> सारे भवनों, मिलशिखरों, खम्भों पेड़ोंपर।

—गिरिजाकुमार माथुर

अतमें कहा जा सकता है कि प्रकृति अभी भी कविताका अेक प्रधान विषय है, पर नयी कवितामें प्रकृति विगत युगोंसे भिन्न रूपोंमें चित्रित हो रही है। नयी कविताका प्रकृति-काव्य अितना विशिष्ट अेवं स्वतंत्र है कि अिसे द्विवेदी अेवं छायावाद-युगके भी प्रकृति-काव्यसे सहज ही अलग कर सकते हैं। नयी हिंदी-कविताने अितनी कम अवधिमें अपनी अभिनव वैयक्तिकता स्थापित कर ली है, यह अिसकी शक्तिका द्योतक है।

रानी गाअी डाल्ू

श्री जितेन्द्रचन्द्र चोधुरी

नागा पहाड़ हमारे असम प्रान्तका अेक पार्वत्य जिला है। हमारे नागाभाजी अिस जिलेके अधिवासी हैं। ये लोग बड़े सरल सच्चे परिश्रमी तथा स्वाधीनता-प्रिय हैं। जब प्रबल प्रतापी आहोम राजा अिस देशमें राज्य कर रहे थे, अुस समय नागा लोगोंने अपनी स्वाधीनताको सुरक्षित बनाये रखनेके लिअ आहोम राजघरानेके साथ प्रबल युद्ध किया था। यद्यपि ये अशिक्षित हैं, फिर भी शिक्षा प्राप्त करनेके लिअ विशेष प्रयत्न कर रहे हैं। नागाओंके बीच यदि शिक्षाका आलोक भली भाँति पहुँच जाअे तो निस्सन्देह किसी न किसी दिन ये असमिया जातिका मुँह अुज्ज्वल करेंगे।

मोकचंग नागा पहाड़ जिलेका अेक अिलाका है। जिसके अेक अज्ञात तथा अगम्य गाँवमें अेक नागा कन्याका जन्म हुआ था जिसने अपने स्वदेश प्रेम और असीम साहस द्वारा ब्रिटिश सिंहके सिंहासनको जिस तरहसे हिला दिया था कि तत्कालिन सभी स्वतन्त्रता प्रेमी भारतीयोंकी दृष्टि अिस महाशक्ति रूपिणी नागा कन्याके अूपर पड़ी थी। वह यह समय था जब सारे भारतमें राष्ट्रपिता गांधीका अमोघ अहिंसा आन्दोलन तथा बंगालका वैप्लविक तूफान आसमुद्र हिमाचल नौकरशाही शासक मंडलीको यही पाठ पढ़ा रहा था कि भाअी अब सम्हलो हम जाग गये हैं तुम्हें हम नहीं टिकने देंगे। आधुनिक शिक्षाका आलोक न होनेपर भी अिस कोमलमति प्रकृतिकी गोदमें पली सरला बालिकाके प्राण कैसे स्वदेश-प्रेमकी अुमंगसे अुद्वेलित हो अुठे थे—यह किसीको कल्पनामें भी असम्भव सा लगता है। ब्रिटिश शासनके समय नागा पहाड़ अेक सुरक्षित अिलाका समझा जाता था और औसाअी मिशनरीके सिवाय किसी भी अन्यका सहज प्रवेशाधिकार वहाँ न था। भारतके अन्य प्रान्तोंमें क्या-क्या विचार भारतीय जीवनमें हलचल मचा रहे हैं अुसका अुन्हें क्या पता? मिशनरी तो साम्राज्यवादी शासन सदाके लिअ कायम रखनेका संकल्प लेकर, शिक्षाके बहाने, अुन निरीह पहाड़ी जातीय मस्तिष्क नष्ट करनेके लिअ तत्पर थे। अिस प्रकारकी परिस्थितिमें भी रानी गाअी डाल्ू जैसा अपवाद देखकर यह कहना अनुचित नहीं होगा कि यह नागा जाति ही हमारे पवित्र ग्रन्थ महाभारतमें वर्णित वीरांगना प्रमीला(?) नागा जाति है जिसकी वीर कन्या अुलूपीका पाणिग्रहण करके वीर अर्जुनने अपनेको धन्य माना था।

रानी गाअी डाल्ू जब किशोरी ही थी कि वह अपनी जातिकी गयी बीती दशा और समस्याओंकी ओर ध्यान देने लगी। यह अनुचित नहीं है कि जातीय मेरुदण्डको तोड़नेवाली औसाअी मिशनरी शिक्षाने ही रानीकी आँखें सदाके लिअे खोल दीं। रानी सदा ही अेकान्तमें बैठकर अपनी जातिका मंगल कैसे हो सोचती रहती थी। अिस प्रकारका अेकान्तवास और सदाही कुछ स्वाअी गंभीर चिन्ताअें अुपमन्यु(?) रानीकी तपस्या थी। किशोरी गाअी डाल्ू हमें और अेक अपने जैसा देश भक्त फ्रांसीसी किशोरीकी याद दिलाती है जिनके नाम और कामसे सारा संसार परिचित है। जान आफ आर्क और रानी गाअी डाल्ूमें भिन्नता केवल अिस बातकी है कि जहाँ 'जोन' दैवी आह्वान द्वारा अपने देशकी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिअे अुठ खड़ी हुअी वहाँ हमारी यह वीर भारत पुत्री गाअी डाल्ू साम्य, मैत्री और स्वाधीनताको सुप्रतिष्ठित करनेके लिअ भारतीय सनातन प्रथाके अनुसार अमोघ वैष्णवास्त्र अहिंसा, असहयोग सत्याग्रह आरम्भ किया। वास्तवमें गाअी डाल्ू जैसी देश प्रेमिका संसारके किसी भी देशमें मिलना मुश्किल है।

जब महात्मा गांधी सारे भारतमें अहिंसा, असहयोग आन्दोलनके द्वारा सुसुप्तिके प्रगाढ़ आलिंगनमें निद्रित भारतीयोंमें प्राण संचार कर रहे थे, तब गाअी डाल्ू भारतसे विच्छिन्न अज्ञता, अन्धकार तथा अनुशासन रूपी प्राचीराबद्ध नागा पर्वतकी प्रकृति माताकी अंचलाश्रिता सुकुमारी तापस कन्या थी। न जाने कैसे बापूकी अमृतमयी स्वाधीनताकी वाणी अिस तापस कन्याकी हृदय-तन्त्रीमें लगकर झंकृत होने लगी। जिस प्र—

अुपनिषदके ऋषि ममस्याके अुपरात महादर्शन लाभ करके अपने आसपासके सभी जीवोंको पुकारकर अमृत मयी वाणी जगद्हिताय सुनाने लगे थ ' श्रृण्वन्तु सव अमृतस्य पुत्रा '"—अुसी प्रकार यह नागा तरुणी गाअी डालू स्वजाति भाअी-बहनोंको पुकारकर स्वाधीनताकी अमृतमयी वाणी सुनाने लगी । 'स्वाधीनता सबका जन्मसिद्ध अधिकार है", विदेशी शासकोंके हाथ अपना अधिकार छोडकर लांछित, अपमानित एवं अत्याचारित होना मृत्युके समान है । अुठो, जागो और विदेशी शासनके विरुद्ध अपना प्रतिवाद प्रकट करो। नागा जातिके मृतप्राय प्राणोंमें नव जीवनका संचार हुआ। अुमन गाअी डालूकी वाणीका प्रतिध्वनित करके नागा जातिके भिन्न भिन्न भाषा भाषी लोगोंको संगठित किया। अब नागा जाति ब्रिटिश शासनके विरुद्ध तनकर खड़ी हो गयी । शासकके होश अुड गये। नागा भाअी-बहनें गाअी डालूको देवी समझने लगे । अिन्होंने देवीको अपनी रानी बनाया और वे रानीकी प्रजाकी भाँति शासकोंसे अहिंसाकी लडाअी लडने लगे ।

नागाओंके अिस नव जागरणकी खबर ब्रिटिश सिंहके कानों तक पहुँची तो झट अुन फ्रांसीसी कन्या जोन ऑफ आर्ककी याद आ गयी । व नागा रानीको फँसानेके लिअे बाजी लगाकर कोशिशें करने लगे। अिस व्यापारमें मिशनरियोंका असीम अुत्साह था। कौन यह नहीं जानता कि साम्राज्यवादके अग्रदूत वाअिबल रूपी अस्त्रसे सुसज्जित पादरी ही होते हैं। अैसा नव जागरण अुनको बाधक प्रतीत हुआ । अक्लान्त परिश्रमके बाद भारतके स्वाधीनता अिच्छुक युवकोंके समान नागा रानी को भी शासकोंका आतिथ्य ग्रहण करना पड़ा । किंतु हाय! मनुष्य दृष्टिके बाहर कितने पुष्प प्रस्फुटित होकर मुरझा जाते हैं—अुसकी खबर कौन ले। अग्रज कविका यह आक्षेप क्या निराधार है ? सभा समिति करके हमने तो शासकों द्वारा अत्याचारित अपने अुन युवक रत्नोंके प्रति समवेदना प्रकट की थी प्रतिवाद व निंदासूचक प्रस्ताव भी स्वीकृत किये थे, किंतु अपनी रानीके लिअे कुछ नहीं कर सके। नेताओंको अिस बातकी खबर ही थी कि हमारी अेक रानी असामके कैदखानेमें बंदिनी जीवन बिता रही है। ब्रिटिश सरकार अिनके विषयमें अेकदम चुप। अिनका कारावास अनिर्दिष्ट कालके लिये था। किस जेलमें वह रहती थीं कैसे रहती थी – राज-कर्मचारी भी नहीं जानते थे। नागा रानीके विषयमें जो अज्ञानता जो चुप्पी, शासकोंकी नीतिमें, व्यवहारमें रही सो भारतके और किसी भी राजनैतिक बन्दीके विषयमें शायद ही थी। सो क्यों ? समझना कठिन नहीं कि नागा रानीके भीतर स्वाधीनताकी जो ज्वाला, चरित्रका जो बल अपने जनोंको आदर्शके प्रति खींचनेकी जो शक्ति दिखायी देती थी अुससे शासक डर गये। शासकोंके मनमें रानीका नाम भयंकर भीतिको अुत्पन्न कर रहा था। समय-समयपर राजनैतिक बंदी बिना शर्त कारामुक्ति पाते थे, किंतु नागा रानीके भाग्यमें कारामुक्ति असंभव हो थी। अिस प्रकार रानीके जीवनका अमूल्य समय कैदखानेमें ही व्यतीत हुआ ।

विगत महायुद्धके आरम्भ होनेसे पहले हमारे प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलालजी असम प्रान्तमें पधारे थे। गाअी डालूकी चर्चा अुन्होंने सुनी और व सभी बातें सुनकर अैसे प्रभावित हुअे कि नागा रानीकी प्रशंसामें पंचमुख हो गये थे। भाषणोंमें तथा अपने लेखोंमें श्री जवाहरलालजीने आन्तरिक सहानुभूति तथा श्रद्धा प्रकट की । अुसकी मुक्तिके हेतु यत्न किया गया था। भारतमें स्वाधीनताका सूर्य अुदय होनेके पश्चात् अुन्हें मुक्ति मिली, किंतु यौवनके प्रारम्भमें जिनको स्वाधीनता प्राप्तिके लिअे कारा-राक्षसीकी तृष्णा अपने रक्त बिन्दुओंसे बुझानी पडी, वह अब किस प्रकार स्वस्थ रह सकती । नागा रानीको देखनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त नहीं हुआ, किन्तु सुननेमें आया है कि अब वे अपना जरा जीर्ण और क्लान्त जीवन अपने गाँवमें ही काट रही हैं।

स्वाधीनता संग्राममें जिन जिन महात्माओंने अपना सब कुछ न्यौछावर किया है और हमारे प्रति स्मरणीय बने है, अुनमें नागा रानी गाअी डालूका स्थान प्रमुख है। अपने अपूर्व त्याग स्वीकारके लिअे अेवं सत्यानुरागिताके लिअे नागा रानी असमकी अितिहास प्रसिद्ध रानी जन मनीके और स्वाधीनता तथा स्वदेशके लिये व 'जोन आफ आर्क' के समकक्ष है।

मिट्टीकी कहानी

डॉ सुधीन्द्र

सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी—
म सुनाता हू सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

(१)

क्यो युगोके बाद कविके कण्ठम यह
जागकर यो आज मिट्टी बोलती ह ?
जो न खोला था किसीन आज तक भी
भद कविकी लेखनी वह खोलती ह।
दूर मिट्टीके परे देखा कि जिसन
कह दिया ससार मिट्टी ह कि जिसन
आज अुसकी भूलको पहिचान कर यो
यह हृदयकी मम गाँठ टटोलती ह—
फिर नयी कुछ चेतना लेकर जगी है—
आज मिट्टीकी वही गाथा पुरानी !
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी
म सुनाता हू सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

(२)

जल रहे ह दीप जो आकाश क ये
प्रति निशा दीवावली सी लग रही ह
जानते हो कौन अिनम जल रहा ह ?
और वह क्या ह कि मिट्टी जग रही ह ?
कोटि सूरज चद्र ग्रह नक्षत्र सारे—
म कहूगा अक मिट्टी के सवारे
अिद्रधनुषी मेघ जो सु दर घिरे ह—
अक मिट्टी ही अुन्हे यों रग रही ह।
अक मिट्टीके लिअ अूषा मधुर ह—
अक मिट्टीके लिअ स ध्या सुहानी
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी
म सुनाता हू सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी

(३)

वायु मिट्टीकी कि चलती साँस देखो
जल कि मिट्टीका लहू जो बह रहा ह
अग्नि क्या ह ? प्राणकी अुसकी लपट ह
[illegible] क्यो आकाश ? यह मिट्टी कहाँ ह ?
ज[illegible] कि पशु नर द[illegible] दानव देवता ह
अक मिट्टीकी कि वह विद्रूपता ह !
और जिस पल पूण अतिमानस जगा ह—
खिल गया बस फूल मिट्टीका वहाँ ह
कितु मिट्टी ही अमर ह मूल अुसकी—
भूल कर भी ह न वह हमको भुलानी !
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी
म सुनाता हू सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

(४)

अठ गयी मिट्टी हिमालय नाम अुसका
भर अुठी मिट्टी—वही सागर कहाया।
बह नदी जब मन कि मिट्टीका गला था
खेत मिट्टीका हिया हो लहलहाया।
घर बसे अुस पर कहो तुम देश आय
और घर अुजड़ा कि फिर वीरान छाय।
फट पड ज्वालामुखी मिट्टी कुपित यो
हिल गयी मिट्टी वहाँ भूकम्प आया
अक मिट्टीकी यहाँ सब चाल हलचल
ह अचल मिट्टी किसीने पर न जानी।
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी
म सुनाता हू सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

(५)

छत्र-सिंहासन बने नरपाल आये
सज गये ये मुकुट मिट्टीने कि चाहा,
चक्रवर्ती राज—ये सुखसाज सारे—
दुर्ग-गढ प्राकार मिट्टीने निबाहा।
किन्तु मिट्टीके खिलौने, रूप भूले
खेल मिट्टीके रहे, ये भूप भूले।
डगमगाये और चकनाचूर हैं वे—
अेक पल ही जब कि मिट्टीने कराहा
यह प्रलय या भ्रांति थी यह कौन जाने ?
तुम सुनो यह आज मिट्टीकी जबानी।
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी-
मैं सुनाता हूँ सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

(६)

'मनुज,' मिट्टीकी यही तो चेतना है;
'सभ्यता' क्या है कि मिट्टीके चरण हों—
यह 'कला'—शृंगार मिट्टीने किया है,
और यह 'साहित्य' मिट्टीके वचन हों।
'कर्म' है शासित कि मिट्टीके नियमसे,
'धर्म' मिट्टीके कि संयम और शमसे।
काल क्या है यह कि मिट्टीकी प्रगति हो,
और युग क्या? अेक मिट्टीके कि क्षण हों,
तुम कहो 'भूगोल' मिट्टीकी प्रकृति है
और यह 'अितिहास' मिट्टीकी निशानी!
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी-
मैं सुनाता हूँ सुनो तुम आज,मिट्टीकी कहानी।

(७)

वर्ण या श्रेणी न जिसकी गोदमें है—
कौन फिर अुसमें बड़ा है कौन छोटा?
खण्ड ये अपने न मिट्टी मानती है—
कौन फिर अुसमें खरा है, कौन खोटा?
जो विकट सम्राट आये—क्रांति आयी,
किन्तु मिट्टी ही यहाँपर शान्ति लायी।
यह नहीं है सूक्ष्म तत्वज्ञान-दर्शन,
यह किसी संसारका सिद्धान्त मोटा —
'जो कि मिट्टीको झुकाकर सिर चलेंगे-
हार निज अुनको नहीं होगी बुलानी।'
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी-
मैं सुनाता हूँ, सुनो तुम आज, मिट्टीकी कहानी।

(८)

यह, अमित आलोक आतमाका खिला जो,
अन्धतम जिसने दिशाओंका जलाया—
खिल सका है प्राणकी लौको जलाये—
जब अुसे है स्नेह मिट्टीने पिलाया।
प्रेम प्राणोंमें तभी हँसकर खिलेगा,
रूप जब अुसको कि मिट्टीमें मिलेगा।
दीपका जलना सभी हम जानते हैं—
किन्तु मिट्टीने अुसे जलना सिखाया
स्वर्ग या आकाशका सब प्रेम झूठा
है हमें अब प्रीति मिट्टीकी जगानी।
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी-
मैं सुनाता हूँ, सुनो तुम आज, मिट्टीकी कहानी।

(९)

है जिया जगमें वही जिसने निरन्तर
रस बनाकर प्राण मिट्टीका पिया है,
दूर रहकर कौन मिट्टीसे बताओ—
अिस जगतमें अेक पलको भी जिया है।
मृत्यु मिट्टीकी भला कब कौन पायी?
वह कि मिट्टीमें स्वयं ही आ समायी।
चर अचर हो या कि जड़ जंगम, जगतमें—
क्या न सबको मृत्युको जीवन दिया है?
अेक मिट्टीसे बंधे रहकर जियेंगी—
देव-मानवता कि अीश्वरता अजानी,
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी-
मैं सुनाता हूँ, सुनो तुम आज, मिट्टीकी कहानी।

(१०)

हूं न मिट्टी तुच्छ, वह नश्वर नहीं है
यह प्रलयसे भी न पलभर हारती है।
कौन मिट्टीको दबाकर जी सका है
यह अमर है—मृत्युको भी मारती है।
जो न मिट्टीमें बसा है या पला है
जो न मिट्टीमें रमा है या ढला है—
चक्रवर्ती हो कि वह जगका विजेता—
आज ओीश्वरको वही ललकारती है,
कौन मिट्टीका भला तूफान रोके,
कौन मिट्टीकी भला रोके जवानी!
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी·
मैं सुनाता हूँ सुनो तुम आज, मिट्टीकी कहानी।

(११)

और मिट्टीका बताओ मोल क्या है?
क्योंकि मिट्टीपर सहज अधिकार सबका
जिसलिअे यह सृष्टि मिट्टीपर बनी जो
सब जनोंकी है कि है संसार सबका।
देवता? होगा—कि ओीश्वर? कौन जाने।
किधरसे अुतरा? कहाँसे कौन माने?
जो न अुतरे, किन्तु मिट्टीसे अुठे जो—
अेक अुसमें ही रहेगा प्यार सबका!
जो तुम्हें मिट्टी सुनाअेगी किसी दिन—
वो मुझे यह बात मिट्टीकी सुनानी!
सुन चुके हो देवताओंकी कहानी,
सुन चुके हो तुम मनुष्योंकी कहानी
मैं सुनाता हूँ सुनो तुम आज मिट्टीकी कहानी।

कविता:

यह सीमान्तकी रेत

: श्री 'हृषीकेश':

नहीं यहाँ जनरव है,
नहीं यहाँ कुछ भी कोलाहल
ओप चढ़ रहा फूट रहा बादल,
हो रहा विकास क्षितिजका है—
और यही है नारंगी रंगकी शान्त शाम।
यही छटा है तनकी, मनकी 'औ जन जीवनकी—
अनिर्वचनीय शाश्वत भावोंकी।
यहीं रुकें क्या? नहीं,
अरे चलें और आगे भी देखें
क्या धरा यहाँ है
जो लगे प्रीतिकर, सम्मोहन।
यह सन्ध्या ले रही अुबासी अलसाओसी,
ज्यों कोओ बाला कसमस कर अुठती
अपने ही यौवनमें अुमड़ घुमड़कर।

लो! पहुँच गये हम।
यह सीमान्तकी रेत यहाँ है।
यह सरल, तरल, मखमल-सी
कोमल रेत,
बनी लहरियों सी अुभर अुभरकर
ज्यों अुभर रहा मानव जीवन,
हाँ प्रिय आओ!
यहीं बैठकर मनका ताप मिटाअें,
अघाअें और अुड़ाअें,
पाअें सब कुछ जीव, प्रकृति, सत्य
और सौन्दर्य। नहीं नग्य कुछ
जिससे होगा, यही प्रकृति है
जो जीवन है।

भावना भागीरथीके रजकण !

गुजराती

: श्री "धूमकेतु :

१ हजारा दिवसमाथी अेकज दिवम याद छे. प्रकाशनो अने प्रेमनो ।

२ रोवु होय त्यारे हु अेकात शोधु छु' हसवु होय त्यारे मित्रो ।

३. समुद्रने किनारे तारो पगरव केम सभळाय छे ? बधेज तु छे अेटला माटे, के बीजे क्याय तु नथी, अेटला माटे ?

४ कोअी नाम माटे जीवे छे, कोअी लक्ष्मी माटे जीवे छे, कोअी स्त्री माटे जीवे छे नीलाछम टेकराओ अूपर काओ पण हेतु विना रखडवा माटे तो, हु अेकलोज जीवु छु ।

५ घणी वखत रात्रि गभीर होय छे, अने चळकता तारा तेने वधारे गभीर बनावे छे, त्यारे अेकज अनुत्तर्यो सवाल हैयामा आवे छे 'आ बधु कोणे कर्यो अने शामाटे ?'

६ अूचामा अूचा शिखर अूपर बेसवा माटे हु अेक हजार ने अेक जिदगी गुमाववा तैयार छु पण शरत अेटलीज के ते अूचामा अूचु हावु जोअीये ।

७ मधरातना सुमसाम अंधकारमा कोअी वखत जरा जेटलो शब्द थअी जतो साभळ्यो छे ? आमानो अवाज अेटलोज शात होय छे, ने अेटलोज वेधक ।

हिन्दी

: अनु०-श्री शंकरदेव विद्यालंकार :

हजारो दिनोंमेंसे अेक ही दिन याद है' प्रकाशका और प्रेमका ।

रोना होता है तब अेकात खोजता हूँ और हँसना होता है तब मित्रोंको ।

समुद्रके तटपर तेरी पद-ध्वनि क्यों सुनायी देती है ? सर्वत्र ही तू विद्यमान है अिस कारण या अन्यत्र कहीं भी तू नहीं, अिस कारण ?

कोअी नामके लिअे जीता है, कोअी लक्ष्मीके लिअे जीता है, कोअी स्त्रीके लिअे जीता है, हरीभरी पहाडी चोटियोपर, बिना कारण भटकनेके लिअे तो अकेला मैं ही जीता हूँ ।

अनेक बार रात गभीर होती है और चमकते हुअे तारे अुसको और भी अधिक गभीर बनाते हैं, तब अेक ही अनुत्तरित (बेजवाब सवाल) दिलमें अुठता है—" यह सब किसने बनाया और किसलिअे ?

अूँचेसे अूँचे शिखरके अूपर बैठनेके लिअे तैयार हूँ—पर शर्त अितनी ही कि वह शिखर अूँचेसे अूँचा होना चाहिअे ।

मध्य-रात्रिके सुनसान अधकारमें कभी जरा-सा हो जानेवाला शब्द सुना है ? आत्माकी आवाज भी अुतनी शात होती है और अुतनी ही वेधक !

८. घणा प्रकारनी मीठाश दुनियामा छे छाना दर्दनी तोले आवे अेवी मजा अेके नथी।

दुनियामें कअी प्रकारकी मिठासे है लेकिन छिपे दर्दका मुकाबला करनवाली अेक भी मिठास नही।

९ अेणे कह्यु के तमे दुःखथी हार्या छो में कह्यु के तमे विश्वासभग अनुभव्या नथी।

अुसने कहा—तुम दुखमे हार गये हो। मैंने कहा—तुमने विश्वास भगका अनुभव नहीं किया है।

१० स्वर्गमा ने पृथ्वीमा बहु फर नथी। श्रमने प्रेम वे साथे होय त्या स्वर्ग अने वे जुदा अलग पृथ्वी।

स्वगमें और पृथ्वीमें बहुत अन्तर नही है। श्रम और प्रम दोना जहाँ साथ साथ होते हैं वहाँ स्वग है य दोना जहाँ अलग हो जाअें वहाँ पृथ्वी।

११ वियोगना आसुने चूमनार बालक छे त्या सुधी फिलसुफीना थोथा काण अुघाडे ?

वियोगके आसुओंको चूमनेवाला बालक (जब तक) विद्यमान है तबतक दर्शनशास्त्रके पोथोको कौन खोले ?

१२ नीरस सयम अे आपघात छ। धर्मना अचळामा अे छुपायेलो छे अेटलुज।

नीरस सयम अपघात है। भद अितना ही कि वह धमके अचलमें छिपा हुआ है।

१३ आवेश ज्यारे अुल्लासनो झभ्भो पहेरे छे त्यारे, अने पुराणी ज्यारे अकज सूरे कथा वाचे छे त्यारे अेक अदृश्य मूर्ति धीमे-धीमे त्या सतोष थी हस छ, अने ते मूर्ति सेताननी छे।

आवेश जब अुल्लासका चोगा (पोशाक) पहनता है और कथावाचक जब अेक ही स्वरमे कथा बाँचता है, तब अेक अदृश्य मूर्ति सतोषके साथ मन्द मन्द हँसती है और वह मूर्ति शैतानकी है।

१४ निराशाना समुद्र जेवा मोटा रणमा तने सभारी सभारीने रडवानो जे मजा मळे, ते मजानी खातर, हुँ धोळा फूल, रुपेरी चाँदनी अने कोयलनो सूर जतो करुँ।

निराशाके समुद्रके समान बडे रेगिस्तानमें तुझको याद कर-करके रोनेमें जो मजा आता है, अुस मजेके लिअे मे सफद पुष्प, रुपहली चाँदनी और कोयलका स्वर, अिन तीनोको बारनेके लिअे तैयार हूँ।

१५ दुनियानु मोटामा मोटु करुण नाटक माणसना हृदयमा हरेक पळे भजवाअी रह्यु छे।

ससारका बडसे बडा करुण नाटक मानवके हृदयमें प्रतिपल अभिनीत हो रहा है।

१६ मने बे चीज सौथी वधु वहाली छे श्रम अने दुःख। दुःख विना हृदय निमल थतु नथी श्रम विना मनुष्यत्व समजातु नथी।

मुझे दो चीजें सबसे ज्यादा प्रिय हैं—श्रम और दुःख! दुःखके बिना हृदय निर्मल नहीं होता और श्रमके बिना मनुष्यत्व नही समझा जा सकता।

१७ अेणे कह्यु के तमे निराशावादी छो। में कह्यु के साथ बेसीने घडेलु स्वप्न छिन्न भिन्न करनार कोअी मित्र तमने मळ्या नथी।

अुसने कहा—तुम निराशावादी हो! मैंने कहा—साथमें बैठकर गढे हुअे स्वप्नको छिन्न भिन्न करनेवाला कोअी मित्र तुमको मिला नहीं है।

१८ हु निराश थयो छु ? पराजय थी हाफी गयो छु ? ना, ना, अेवु काअीज नथी! विश्वासना समुद्रमा पडेलु, झेरनु अेक बिन्दु धोवा माट, आटली जहेमत अुठावी रह्यो छु।

मै निराश हुआ हूँ ? पराजयसे हाँफ गया हूँ ? न, न, अैसा कुछ भी नही! विश्वासके समुद्रमें पडे हुअे विषकी अेक बूँदको धोनेके लिअे अितनी जहमत (मुसीबत) अुठा रहा हूँ।

[सूचना —'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

'रजवाड़ा'— लेखक —श्री देवेशदास आय सी अेस । प्रकाशक—आत्माराम अेण्ड सन्स दिल्ली ६। पृष्ठ संख्या-१४९, मूल्य-५)रु.।

यद्यपि विलीनीकरणके बादसे भारतके रजवाडोंका वह राजनैतिक पुराना महत्व नहीं रह गया फिर भी अुनका अपना सांस्कृतिक अेवं अैतिहासिक महत्व तो तबतक बना रहेगा जबतक लोग अितिहास पढते रहेंगे। भारतीय वीरताके अितिहासमें राजपूतानाका निस्सन्देह अपना अेक विशिष्ट गौरवपूर्ण स्थान है।

पुस्तकके रजवाडा नामसे लेखकका संकेत राजस्थानकी ओर ही है और लेखकने भूमिकामें 'राजस्थानसे अपने परिचय' की बातका जिक्र करते हुअे अिसका अुल्लेख भी किया है।

राजदरबारोंमें अधिकांशतः सर्वत्र ही विलासताके दर्शन होते हैं और राजस्थानके दरबार भी अिससे अछूते न थे फिर भी राजस्थानका गौरव 'सुन्दर, राजपूतोंकी वीरतापूर्ण कहानियोंमें ही निहित है, अिससे प्रभावित होकर लेखकको कहना पडा कि 'रजवाडा तो वीरतापूर्ण कहानियोंका देश है। राजस्थानने शृंगारके अुन्नत रूपको भी निखारनेका खूब मौका दिया है। लेखक द्वारा राजदरबारोंकी वर्णित घटनाओंसे हमें अिस सम्बन्धमें पर्याप्त जानकारी मिलती है।

'हल्दीघाटीका युद्ध' यहांकी अत्यन्त प्रसिद्ध आत्म-सम्मान-दर्शक वीर गाथा है, मीराका अवतार यहांकी भक्तिका चरम अुत्कर्ष है और पद्मिनी राजस्थानी सौन्दर्यकी अप्रतिम प्रतीक ! लेखकने अिन सभीके सम्बन्धमें अैतिहासिक दृष्टिको सामने रखकर काफी प्रकाश डाला है। अुनके वर्णनकी भाषा अत्यन्त प्रौढ अेवं प्रवाहपूर्ण है। लेखककी अैतिहासिक दृष्टि तथा तत्सम्बन्धी अुसके गम्भीर अध्ययनकी छाप हमें पूरे पुस्तकमें देखनेको मिलती है।

अभिसारकी झलक, हवाअी यात्रा, रसिक जीवन, दरबारी नृत्य, रूप-सी रानी पद्मिनी, प्रेम-योगिनी मीरा आदि सत्रह विभिन्न शीर्षकोंके अन्तर्गत पुस्तक बँटी हुअी है और ये सभी शीर्षक अपने नामसे ही राजस्थानकी प्राचीन गौरव-गाथाके पूर्ण द्योतक हैं।

राजस्थानसे विदाअीके समय "नमस्कार चारण-कवि ! नमस्कार वीर-गाथा ! नमस्कार रस-कथाका रजवाड़ा !" अिन तीन अुद्गारोंमें ही लेखकने राजस्थानके अितिहासके तत्वको भली भाँति निहित कर दिया है।

पुस्तकमें राजस्थानके प्रमुख-प्रमुख दर्शनीय स्थलों, नृत्यों, चित्र कलाके प्राचीन नमूनों तथा वेशभूषाओंके चित्र दे देनेके कारण पुस्तक अधिक आकर्षक अेवं अुपयोगी हो गयी है।

छपाअी साफ-सुथरी तथा आवरण आकर्षक है।

—मदन मोहन शर्मा, अेम अे, सा.र.

कविता — [अुडिया भाषा तथा अुडिया लिपिमें प्रकाशित द्विमासिक पत्रिका कविता । प्राप्तिस्थान व्यवस्थापक— अग्रणी प्रकाशनी ४ अ ब्राअुन लेन कलकत्ता—१२]

अिस द्वैमासिकका अेक सकलन नामसे निकाला जाता है । आलोच्य अकका नाम शरत सकलन है (गत सितम्बर-अक्टूबर १९५३ के लिअ) । सपादकोके नीचे दो सज्जनोके नाम है श्री दुर्गाचरण परिडा और श्री कृष्णचरण बेहेरा । श्री हृदानन्द मिश्र ठक जिसके सचालक है । प्रतिअकका मूल्य ६ आना और वार्षिक मूल्य २ रुपया । अिस पत्रिकामें केवल कविता या पद्य रचनाओकी आलोचना की जाती है ।

प्रस्तुत अकमें हिन्दीके दो परिचित प्रसिद्ध कवि निरालाजी अेव पतजी की कविताके दो अनुवाद अुडिया भाषामें दिये गये हैं । ये निराला की 'भिक्षुक' शीर्षक कविता तथा पन्तजीके गीत' के अश विशेषके अनुवाद है ।

विश्वभारती' शान्ति निकेतनके हिन्दी अध्यापक श्री शिवनाथ अेम अ द्वारा लिखित वर्तमान हिन्दी कविता शीर्षक अेक छोटा सा आलोचनात्मक लेख भी अिसी अकमें प्रकाशित हुआ है । शिवनाथजीने थोडेमें वर्तमान हिन्दी कवितापर अपने विचार प्रकट किये है । *अिससे अुडिया भाषी पाठकोको वर्तमान हिन्दी कविताकी* गति विधिका कुछ परिचय प्राप्त हो सकेगा । आलोचकके शब्दोमें अुडिया भाषामें ही पढिअ

वर्तमान हिन्दी कविता सम्बन्धरे जाणिबा पूर्वरु आमर अतिकि बुझि रखिवार अछि आधुनिक हिन्दी साहित्य ओ काव्य सबुदा समय ओ समाज सहित गतिशील । भारतीय जीवन ओ समाजर सुखदुःख ह्रास अुल्लास अेवा आकाक्षा समस्त आधुनिक साहित्यरे अभिव्यक्त होअिचालिछि अछि । आधुनिक हिन्दी साहित्य कतेवले जन जीवन विमुख होअि नाहि । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र मैथिलीशरण गुप्त प्रेमचन्दङ्क साहित्य अहार अुज्वल प्रमाण । अित्यादि ।

—लो प्र पा

साभार प्राप्त

(निम्नाकित पुस्तकें और मासिक पत्र राष्ट्रभारती में समीक्षार्थ प्राप्त हुअे है । अिनकी समीक्षाअें समीक्षकोके द्वारा प्राप्त होते ही प्रकाशित की जायगी ।)

पुस्तकालय सन्देश (मासिक पत्र) सपादक श्री श्रीकृष्ण खडेलवाल । प्रका०—पुस्तकालय सन्देश कार्यालय पो०—पटना विश्वविद्यालय पटना (बिहार) । पृ स ऋाअुन २८ मू य ।)

भारतीय राष्ट्रीयता (लेख सग्रह) -श्री ऐनुल विद्यार्थी । प्रका०—साहित्य रत्न भण्डार आगरा । पृष्ठ स ऋाअुन १७० मूल्य २)

भारती (मासिक पत्र) जनवरी ५४ वर्ष १ अक १ —सपादकद्वय-श्री विट्ठल शर्मा चतुर्वेदी श्री बालकृष्ण बलदुवा । प्रका० स्थान—२५ २९ बिरहाना रोड कानपुर । पृष्ठ स ऋाअुन ६८ मूल्य ॥)

सयुक्त राजस्थान (मासिक पत्र) —प्र सपा०—श्री श्यामकरण । प्रका०— सार्वजनिक सम्पर्क कार्यालय राजस्थान सरकार जयपुर । पृष्ठ स डमी ८८ मूल्य)

प्रदीप (मासिक पत्र) नव दिसबर ५३ का चड गढ विशेषाक —प्र सपादक श्री देवचन्द वर्मा । प्रका० प्रदीप कार्यालय शिमला २ । पृष्ठ स डमी ३० मूल्य ।)

मरुवाणी (मासिक पत्र) —सपा — श्री रावत सारस्वत । प्रका०—राजस्थान भाषा प्रचार सभा जयपुर । पृष्ठ सख्या ऋाअुन ६६ मूल्य १)

संपादकीय

"अेक अक्षम्य अपराध!" :

अभी अुस दिन, लखनअूसे हमारे अुत्तर प्रदेशके परमश्रेष्ठ राज्यपाल, और निस्सन्देह जो भारतीय साहित्य और संस्कृतिके क्षेत्रमें अपना सर्वोच्च स्थान रखते हैं अुन श्रीमान् क० मा० मुन्शीजीने आकाशवाणी द्वारा भारतकी लोक-कल्याण भावनासे प्रेरित होकर अपना सन्देश प्रसारित किया कि—'अँग्रेजी अपनी भाषा है, सबसे महत्वपूर्ण भाषा है वह, और जिस देशमें अुसकी अुपेक्षा करना अेक अक्षम्य अपराध होगा!'

और श्री मुन्शीजीके अिस आकाश-भाषणके पश्चात् ही बंबअी प्रादेशिक काँग्रेस कमेटीके सर्वस्व, जो स्वयं किसी भी राज्यपालसे कम नहीं है, स० का० पाटील साहबने भी फरमा दिया कि—'कोअी भाषा परकीय नहीं है। जिस देशमें अैक्यकी निर्मिति और स्थापनाका काम अँग्रेजोंने किया है अत वह विदेशी कदापि नहीं है।'

लीजिये, अँग्रेजी भाषाके बिना जिस देशमें अेकता नहीं हो सकती और भारतका अुद्धार नहीं हो सकता! अेकताका भाव समस्त देशमें अुत्पन्न करनेके लिअे और अुसे मजबूत बनाये रखनेके लिअे अब अंग्रेजीका ही चतुर्दिक् समर्थन किया जा रहा है। और अभी-अभी १९४७ से पहले, बड़े महापुरुष हमारे बीचमें, भारतीय जनताके बीचमें, मंचपर आ-आकर अुद्घोषित करते थे कि भावनासे भाषाका बहुत अन्योन्याश्रयी सम्बन्ध है। यदि अंग्रेजीको अपनाओगे तो पराधीन बने रहोगे और हममें अँग्रेजी भाव ही पैदा होंगे। हमारी बोली, खाना-पीना, अुठना-बैठना, सोचना आदि सभी अँग्रेजों सरीखे होंगे। हममें भारतीयताका स्वाभिमान बिल्कुल न रहेगा।

और जिस 'आकाशवाणी' भाषणको जब हम मन ही मन गुन रहे थे तब अंग्रेजोंके पुरखा स्व. मैकाले महाराजकी गहरी चतुराअी हमारी समझमें आ गयी और झट रोमन साम्राज्यवादके अेक छोटेसे अितिहासकी घटना हमारे नेत्रोंके सामने खड़ी हो गयी। रोमने ब्रिटेनिया देश-पर आक्रमणकर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। रोमन पार्लमेंटने अेक चतुर चाणक्य सिसरो नामक शासकको वहाँ राज्य करनेके लिअे भेजा। सिसरो ब्रिटेनियाका गवर्नर बनकर गया। बड़ा चतुर था वह। अुसने जाते ही सारे ब्रिटेनियामें लगभग १५० विद्यालय स्थापित कर दिये। अितना ही काम करके सिसरो अपना राज्यकाल समाप्त कर अपने देशको वापस चला आया। रोमकी पार्लमेंटमें, पार्लमेंटके सदस्योंने सिसरोपर दोषारोपण किया कि अुसने रोमन साम्राज्यकी वहाँ जड़ जमानेके लिये कुछ भी नहीं किया, अुनपर अत्याचार करके अुनकी प्राचीन सभ्यता और संस्कृतिको

मटियामेट क्यो नही कर डाला जिससे वे हमारे हमेशाके लिअे गुलाम बन जाते। रोम साम्राज्यकी जड जमानेके लिअे तुमने वहाँ क्या किया? लेखा-जोखा मागा गया तो सिसरोने अपनी सफाअी देते हुअे क्या कहा, अितिहासविज्ञ मुन्शीजी, पाटीलजी, हम अच्छी तरह जानते है और जानते है ससारके सभी समझदार कि सिसरोन अपनी सफाअी पेश करते हुअे कहा, 'मैने रोम साम्राज्यकी लैटिन भाषाके १४० या १५० विद्यालय स्थापित कर अपने साम्राज्यकी बहुत बडी सेवा की है। मैने सिलेशिया देशकी भावी पीढीको, सिलेशियन लोगोकी भावी सतानोको हमेशाके लिअे रोमन बना लिया है। वे लोग लैटिन भाषा अपने स्कूलो-कालेजोम सीखेंगे, रोमन पोशाक पहनेंगे, रोमन सभ्यता सीखेंगे, अिस तरह अुनकी रग-रगमें रोमन सभ्यता समा जाअेगी। अुन लोगोमें अपनापन कुछ भी न रहेगा।"

अेक छोटासा यह दृष्टान्त है, जो काफी है। अंग्रेजी भाषासे तथा विश्वकी किसी और भाषासे फ्रेंच, जर्मन या रशियन और अमेरिकन भाषासे हमारा विरोध नही है। देशकी अुन्नतिके लिअे किसी भी भाषासे आवश्यक अेव अुपयोगी ज्ञान-विज्ञान प्राप्तकर देशको हम आगे बढाअें। किन्तु यह तो सर्व निश्चित है कि जर्मनीकी, जापानकी या रशियाकी और नव जागृत चीनकी अुन्नति वहाँ अंग्रेजी भाषाके कारण नही हुअी निजभाषाके ही कारण हुअी है। आधुनिक भारतके महात्मा हमारी आँखे खोल गये थे और स्वदेशीश और स्वभाषाका महत्व समझा गये थे कि अिस विशाल देशमें भारतीय सभ्यता और भारतीय भावनामें अेकताकी स्थापना करनी हो, अिस देशमें नाना जाति और नाना धर्मके लोग अेकय भावसे रहे तो अंग्रेजी शिक्षाका जो अधा मोह हममें आ गया है अुसे छोड देना होगा।

राष्ट्रपिता गाधीने वर्तमान अँग्रेजी शिक्षाको अेक ढगकी बुराअी बतलाया था और अुन्होंने कअी बार कहा भी कि वे अपनी तमाम ताकत अँग्रेजी-शिक्षाके नाश करनेमें लगा रहे है। और वे कहा करते थे कि अगर अँग्रेज भारतमे न होते तो यह देश ससारके अन्य देशोके साथ-साथ बहुत आगे बढ जाता। अँग्रेजी शिक्षाके साथ अँग्रेजी साहित्यके विवेकपूर्ण अध्ययनके लिअे महात्माजी प्रेरणा करते थे। वे अपने रहते अँग्रजी राज्य नष्ट कर गये और कही कुछ वर्ष, हमारे सौभाग्यसे वे हमारे बीच कुछ थोडा और रह जाते, तो अँग्रेजी शिक्षाको भी नष्ट कर डालते।

यह अुर्दूका आन्दोलन:

जितना खतरनाक और अवाछनीय यह पाकिस्तान अमेरीकाके बीचका सैनिक सहायता समझौता है, अुतना ही खतरनाक और अवाछनीय है यह गडे मुर्दे अुखाडने जैसा अुर्दूका आदोलन।

देश जब स्वतत्र हुआ अुसका नया सविधान बना। अुसे अुन लोगोने बनाया जो अिस विशाल देशके दूरन्देश, दिल व दिमाग वाले सच्चे प्रतिनिधि थे। अुस विधानके अनुसार भारतके सभी जन्मसिद्ध अधिकार मान्य होकर दुनियाके सामने आये। हमारे सविधानने अपने देशके लिअे जिन चौदह भाषाओंको ग्रहण किया, ये है —सस्कृत, असमिया, ओडिया, बगला, पजाबी, मराठी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम, काश्मीरी, अुर्दू और हिन्दी। देवनागरीमें लिखी जानेवाली हिन्दीको राष्ट्रभाषाका पद मिला। हिन्दीको सविधानमें अेक अँग्री

व्यापक भाषा मान लिया गया जिसमें अुसकी बोलियो और अुपबोलियोका अन्तर्भाव हो जाता है। काश, अुर्दू भी तब कही दाखिल-दफ्तर कर दी गयी होती!

किन्तु हमारे धर्म या सम्प्रदाय निरपेक्ष (सिक्युलियर) सविधानने अुन सारी सकीर्णताओ, दोषो और बुराअियोको दूर रख अुर्दूको भारतीय भाषाओके बीचमे अुदारतापूर्वक स्वतत्र रूपमें रखा। विधानने साफ साफ निर्देश भी कर दिया कि हमारी राष्ट्रभाषा सब प्रातीय भाषाओसे कुछ-न-कुछ नये सस्कार ग्रहण करेगी, अुसका तब स्वतत्र विकास होगा और अुसका बेहद शब्द-भडार भी बढेगा और तब वह मालामाल हो जाअेगी। हिन्दीने अपने राष्ट्रीय रूपमें, हजार-बारह सौ वर्षोसे चली आती परम्परामें, हमेशा अपनी समन्वयात्मक अुदारता ही कार्य-रूपमें बतलायी है। चद बरदाअी, खुसरो, कबीर, तुलसी, सूर, जायसी, रहीम, रसखानसे लेकर, भारतेन्दु, महावीरप्रसाद और आधुनिक युगके प्रतिनिधि—मैथिलीशरण गुप्त और प्रेमचद तक हिन्दीने अरबी, फारसी, तुर्की, अग्रेजी आदि अनेक भाषाओके हजारो शब्द अपने कुटुम्ब-परिवारमें शामिल कर लिये कि हम अुन्हे पराया नही समझते। अुर्दूको हमने बाहरकी भाषा कभी नही माना। अुर्दू हिन्दीका अेक विशेष रूप मात्र है, अेक स्टाअिल या शैली, जो फारसी लिखावटमें बाअी ओरसे दाहिनी तरफ लिखी जाती है, सीधी नही चलती, जरा नाज-नखरेके साथ चलती है। यदि कठिन सस्कृत और अरबी-फारसीके शब्द अुसमें बहुतायतसे काममें न लाये जाअें और सर्वसुलभ अेक लिपि नागरीमें लिखी जाअे तो हिन्दू और मुसलमान ही क्यो, सभी अुसे समझेंगे और अिस्तेमाल करेंगे। सदा सस्कृतके अत्यत निकट रहनेवाली बगला, मराठी, गुजराती, अुडिया, तेलुगु, मलयालम् आदि प्रादेशिक भाषाओंके साथ हिन्दीका भी सम्बन्ध है। अुन अुन प्रान्तोंमें भी प्रादेशिक भाषाओमें अरबी-फारसीके अनेक शब्द सस्कृत शब्दोके साथ जा बैठे है। तब बगला, मराठी, अुडिया, तेलुगु आदि भाषाअें अपनी ही मातृ-भाषाके समान बोलनेवाले तत्-तत् प्रान्तवासी मुसलमान अुन भाषाओंमेंसे प्रचलित सस्कृत शब्द चुन-चुनकर अुनका बायकाट थोडे ही करते है? और जो करते होंगे तो वह अुनकी मनहूस ना-समझी ही होगी। बबअी, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रासमें हम अैसे मुसाफिरो और सौदागरोंसे मिले है जिन्होने बताया कि मध्य अेशियामें भी दूर-दूर तक यह हिन्दी जबान या सरल अुर्दू कह लीजिअे अुसे, समझी जाती है।

हमें काफिर और म्लेच्छ, अिन दो दुर्भावनाओको अब छोडना होगा। मजहबी सनकसे दूर रहकर भारतके मुसलमान समझदारीसे काम ले, और हर बातमें मजहब खतरेमें और कुफ्रका फतवा देना बन्द करे। हिन्दी अुर्दूको मुल्कके नामपर झगडेके रूपमें ला-खडाकर हम अपनी नालायकी, नादानी, बेहूदगी, बेवकूफी और बेवफादारीको दुनियाके आगे न रखें। आजकल हमारे कुछ बडे और भले आदमी हिन्दी अुर्दूका झगडा लेकर अुत्तर प्रदेशमें अुल्टी गगा बहाने जा रहे हैं। कृपया गगाको अुल्टा मत बहाअिअे। भाषा-गगाका साफ-सुथरा, स्वास्थ्यवर्धक नीर स्वतत्र रूपसे बहने दीजिअे, अिसीमें अुर्दूका कल्याण है।

—ह० गु०

कुम्भकी दुर्घटना •

कहते है १२ वप वाद प्रयागका पूण कुम्भ पव आता ह । यह भी कहा जाता ह कि अिस वप ग्रहोका कुछ असा योग बना था कि गत सौ वर्षोंमे अैसा योग कभी नही आया था। कुछ भी हो अिसम सदेह नही कि अिस वप कुम्भके अवसरपर प्रयागम यात्रियोकी अत्यधिक भीड रही। अैसी भीड पहले कभी किसी भी कुम्भके अवसरपर प्रयागम नही हुअी—लगभग ५० लाख। अधिकारी तथा मेलेके प्रब धक भी अिस कुम्भके अवसरपर बहुत वडी भीडकी अपेक्षा करते थ। अुसके लिअ अुन्होन अचित प्रब ध भी किया था। यात्रियोकी सुविधा सफाअी भीडका प्रबन्ध और आन जानके मार्गोके निर्माणपर अुन्होन लाखो रुपय खच किय। परन्तु होनहार कहिअ प्रबन्धकी अकल्पित त्रुटि कहिअ भीडको काबूमें रखनकी पुलिस तथा स्वय-सेवकोकी असमथता कहिअ अधश्रद्धालु स्त्री पुरुपोकी मूखता कहिअ प्रकृतिका कोप कहिअ अथवा वड वड केन्द्रीय अधिकारियोके आगमनके कारण पुलिस अधिकारियोका ध्यान वट जाना या कुछ अशम अुनका बौखला जाना कहिअ कुछ भी कहिअ मुख्य पव मौनी-अमावस्याके दिन सुबह जहां अक तरफ हमारे राष्ट्रपति तथा प्रधान मन्त्री त्रिवेणी सगमपर गय और दूसरी तरफसे नागा साधुओका जलूस स्नान करन आया अुस समय अक हृदय विदारक असी बडी दुघटना हो गयी जैसी पहल कभी सुनी भी नही गयी थी। यह दुघटना ३ फरवरीके प्रात काल ९ या ९ ३० बजके लगभग घटी थी और ४ फरवरीके प्रातको हम जब प्रयाग पहुचे हमन देखा कि अिस दुघटनाकी काली छाया सारे प्रयागपर छायी हुअी ह। प्रत्यकके दिलम अिसका दुख था और मन ग्लानिपूण और खिन्न था। हमन अुस गढको भी देखा जिसम अनको स्त्री पुरुपोके प्राण गय और लाशावे ढर लग और अिस कारण अिसन खूनी गढका नाम कमाया। आज तक हमारी समझम यह बात नही आ रही ह कि लोगोके आनके रास्तेसे लगकर जो गढा पानीसे भरा था अुसे जसाका तसा प्रबन्धकोन क्यो रहन दिया? अुसे पाट देनकी अन्हे क्यो न सूझी।

मतकोकी सख्याके सम्बन्धम काफी मतभद दिखायी देता ह। सरकारी आकडोम अुसे ५०० से अधिक नही बताया गया ह। परन्तु कअी प्रत्यक्ष दखन सुननवालोकी यह राय ह कि वह १००० से अधिक ही हागी—कम नही। अिस दुघटनाके लिअ किसको दोप दिया जाअ अिसकी चर्चाम हम यहा अुतरना नही चाहते। सरकारन अिसके लिअ अक जाच-समिति नियुक्त की ह। जबतक समितिकी रिपोट प्रकाशित नही होती तब तक अिसकी चर्चा न करना ही हित कर प्रतीत होता ह। परन्तु अिस दुघटनाके अनक पहलू ह अुनम कुम्भका मेला स्वय अक ह। अुसपर कअी दृष्टियोसे चर्चा की जा सकती ह और होनी भी चाहिअ। प्रयागम ५० लाख स्नानार्थी प्रवासक सब प्रकारके सकट झेलकर और गाँठके पसे खच करके अिकट्ठ हुअ थ व क्यो आय? प्राणोका सकट अुठाकर भी वे वहाँ क्यो पहुचे यह प्रश्न ह। हमारा सदियोंका धार्मिक सस्कार भावना तथा तीथ तथा पवके प्रति हमारी श्रद्धा ही अिसका कारण था। हो सकता ह कि यह श्रद्धा अन्धश्रद्धा ही हो। परन्तु अससे क्या? आज भी हमारी धार्मिक श्रद्धा हम

प्रेरणा दे रही है। कुम्भमें जानेकी प्रेरणा हमारी दृष्टिसे गलत हो सकती है और यह भी हो सकता है जैसा कि श्रद्धेय टण्डनजी कहते है, हमारी मूर्खता प्रयागम कुम्भके अवसरपर केन्द्रित हुअी थी। यह मान भी लिया जाअे कि कुम्भमें जाना मूर्खता थी तो भी यह तो मानना ही होगा कि वहाँ जो ४०–५० लाख जनता अेकत्र हुअी अुसमें सब मूर्ख नही थे । अर्थात् हमारे सदियोंके धार्मिक-सास्कृतिक सस्कारोमें अितना प्रेरणा-बल है कि बुद्धिमान स्त्री-पुरुषोंसे भी यह मूर्खताका कार्य करवाते है। अिन सस्कारोमें जो बल है, अुसे देखकर अुसमें यदि कोअी दोष आ गया हो तो अुसे हमें परिमार्जित करना होगा। आज वह सस्कार अन्धश्रद्धाका रूप ले रहा है तो अुसे शुद्ध करके हमें सच्ची श्रद्धाका रूप देना होगा। अुसकी खिल्ली अुडानेसे काम न चलेगा। और अभी भारतीय ससदमें कुम्भ घटनापर जो चर्चा हुअी, अुसमें प जवाहरलाल नेहरूने भी तो कहा है कि अन्धश्रद्धा अवश्य बुरी है परन्तु वह कहाँ नही है, राजकीय क्षेत्रमें भी अन्धश्रद्धा देखी जाती है। अवश्य हमें अन्धश्रद्धाको दूर करना होगा। परन्तु श्रद्धाको तो हम छोड नही सकते। मनुष्यका या समाजका किसीका भी जीवन श्रद्धासे रहित होकर रह नही सकता और अुसकी अुन्नति या प्रगति तो कभी हो ही नही सकती। गीतामें भी कहा है कि "श्रद्धामयोऽयम् पुरुष ।"

हम लोग भारतीय सस्कृतिकी बाते करते रहते है। प्राचीन सस्कृतिकी प्रशसा करते हुअे, हम गौरवका भी अनुभव करते है। परन्तु हम यह भूल जाते है कि जिसी प्राचीन सस्कृतिमेंसे जो मग्न धार्मिक सस्कृति थी, हमने अेक मरतबा सच्ची श्रद्धाका बल पाया था, परन्तु आज वह अन्धश्रद्धाका रूप ले चुका है। अुसे सुसस्कृत बनानेका क्या हम कुछ प्रयत्न कर रहे है? हमारा ख्याल है कि जब हम भारतीय सस्कृतिकी बाते करते है तब सम्भवत लोगोंमें भ्रम ही फैलाते है। सब लोग सस्कृतिकी अलग-अलग व्याख्या करते है और देखा जाअे तो "सस्कृति" शब्द स्वय ही भ्रामक है। हमें सस्कृतिकी नहीं, सस्कारोकी बात करनी चाहिअे। लोगोको हमें सस्कार देना है, विद्यार्थियोंको हमें सस्कार देना है महिलाओंको सस्कार देना है, और वह सस्कार कैसा हो यदि अिसका विचार किया जाअे तो यह आवश्यक तथा हितकर कार्य होगा। लोग अिसको अच्छी तरह समझ भी सकेगे और समझानेवाले अिसे समझा भी सकेंगे। प्राचीन कालके ऋषि-मुनि तथा समाजके नेतागण हमेशा सस्कारकी ही बात करते थे और अुसके सम्बन्धमें ही निर्णय देते थे, सस्कृतिके सम्बन्धमें नही। यदि प्रयत्न किया जाअे तो हमारा मानना है कि कुम्भका पर्व भी अेक अच्छा सस्कार देनेवाला मेला बन सकता है । अुसमें सामूहिक-सफाअी, सामूहिक व्यवस्था, नियमन, गमनागमन तथा पारस्परिक सेवा, मिलन-परिचय, विचार-विनिमय आदिके अच्छे सस्कार दिये जा सकते हैं। गाधीजी हरद्वार कुम्भमें जब गये थे तब सफाअी सम्बन्धी भावना लेकर ही गये थे और अुनके प्रयत्नका अच्छा परिणाम भी तब हुआ था, यह हम जानते है। आगे होनेवाले कुम्भके बारेमें यदि सरकार तथा जनता दोनो अिस प्रकार विचार करने लगे तो हमारा दावा है कि कुम्भकी यह दुर्घटना कितनी भी दुखद क्यो न हो प्रकारान्तरसे आशीर्वादरूप बन सकती है।

हिन्दुस्तानी अेकेडेमी, प्रयाग :

फरवरीके प्रथम सप्ताहमें अिस संस्थाकी रजत-जयन्ती मनायी गयी। अिस संस्थाकी स्थापना १९२७ अी में हुअी थी और तबसे अबतक यह सरकारी अनुदानसे ही चलनेवाली संस्था रही है। हिन्दी तथा अुर्दू साहित्यका संरक्षण तथा अभिवृद्धि अुसके अुद्देश्य रहे हैं। अिस संस्थाने अबतक १२२ पुस्तकें प्रकाशित की हैं–जिनमें हिन्दीकी ७७ और अुर्दूकी ४५ पुस्तकें हैं। अिन पुस्तकोंमें 'हिन्दीके कवि तथा काव्य' (३ खंडोंमें) और 'जवाहर सगुन' (४ खंडोंमें) और अभी हाल ही में प्रकाशित अेक वृहद् "तुलसी शब्द-सागर" जैसे ग्रंथ भी हैं। कुछ ग्रंथ छप रहे हैं और जो प्रेसमें हैं अुनमें आचार्य नरेन्द्रदेवजी द्वारा अनूदित वसुबंधुका "अभिधर्म-कोष" भी अत्यन्त महत्वका ग्रंथ है।

अिसमें संदेह नहीं कि अेकेडेमी अच्छा काम कर रही है, परन्तु १९५३ से अुसके सामने आर्थिक कठिनाअीका बहुत बड़ा प्रश्न अुपस्थित हुआ है। अुत्तर प्रदेशकी सरकारसे अुसे जो वार्षिक अनुदान मिलता था, वह बंद कर दिया गया है। अब अेकेडेमीको अपने ही पैरोंपर खड़ा रहनेका प्रयत्न करना होगा। जनतासे अुसे कितनी साहायता मिल सकती है यह भी अुसके सामने अेक प्रश्न है। सच तो यह है कि सरकारी अनुदानपर ही निर्वाह करनेवाली संस्थाका अब अिस जमानेमें कोअी स्थान नहीं हो सकता। 'हिन्दुस्तानी अेकेडेमी' अिस संस्थाका नाम १९२७ अी में रखा गया था, अुस समय अिस नाममें कुछ आकर्षण रहा भी हो, पर आज तो अुस नाममें कुछ विशेषता नहीं दिखायी देती। यही नहीं, कअी लोगोंको यह नाम खटकता भी है। अिसे बदलना अति आवश्यक होनेपर भी जब तक वह सरकारसे बंधी हुअी थी वैसा परिवर्तन नहीं कर सकती थी। आज भी वह नाम परिवर्तन कर सकेगी कि नहीं यह हम नहीं कह सकते। परन्तु कानूनकी कोअी बाधा अुपस्थित न हो तो वह अब वैसा प्रयत्न अवश्य कर सकेगी। हम जानते हैं कि अहमदाबादकी गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी भी रजिस्टर्ड संस्था थी, फिर भी स्वतन्त्रताके नये वातावरणमें यह नाम अुसके लिअे अनुपयुक्त था, अिसलिअे श्री मावलंकर (संसदके स्पीकर) के, जो अिसके अध्यक्ष थे, प्रयत्नसे अुसका नाम बदलकर "गुजरात विद्या सभा" रखा गया है जो अब लोकप्रिय बन गया है। अिसी प्रकार अिस अेकेडेमीके नाममें भी शीघ्र परिवर्तन करनेकी आवश्यकता है।

सरकारी अनुदान बंद हो जानेसे संस्थाको आर्थिक कठिनाअीका तो सामना करना ही होगा, परन्तु हम मानते हैं कि अिससे संस्थाको अंततोगत्वा लाभ ही होगा। अब तो वह स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी कार्य योजना बना सकेगी और राष्ट्रभाषा तथा अुसके पाठकों तथा प्रेमियोंकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखकर योजनाबद्ध कार्य करनेपर सहज ही अुसे जनताका समर्थन प्राप्त होगा। हमें जो जानकारी प्राप्त हुअी है अुसके अनुसार संस्थान अेक अुपसमिति नियुक्त करके सरकारी अनुदान बंद हो जानेपर भी अब कार्य किस प्रकार किया जाअे अिसकी योजना बनानेका काम अुसे सौंपा है और सरकारी अनुदानके बिना भी संस्थाको कायम रखनेका निर्णय किया है। हम अिस निर्णयका स्वागत करते हैं और संस्थाके पदाधिकारियोंका तथा नियामकोंका अिस निर्णयके लिअे अभिनन्दन करते हैं।

सस्थाके अिस 'रजत जयती-महोत्सव'के समय सस्थाकी ओरसे 'राष्ट्रभाषा और अुसका साहित्य' अिस विषयपर अेक चर्चा रखी गयी थी। स्पष्टदर्शी तथा स्पष्टवक्ता विद्ववर्य श्री अमरनाथ झा अुसके अध्यक्ष थे और कअी विद्वानोने चर्चामें भाग लेकर राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किये थे। जितने भी वक्ता अुस मचपरसे बोले अुनके विचारका दृष्टिकोण पृथक् पृथक् था। राष्ट्रभाषा तथा अुसके साहित्यका कोअी स्पष्ट रूप तो श्रोताओके सामने आ न सका, परन्तु अिस प्रकारकी चर्चाका जो लाभ होना चाहिअे वह लाभ अवश्य हुआ। अिस सम्बन्धमें विचारके कितने दृष्टिकोण है, यह हम समझ सके, कि यह कोअी अल्प लाभ नही। हम चाहते है कि अैसी चर्चा और भी अधिक व्यापक दृष्टिसे की जाअे और जब हम राष्ट्रभाषाकी बात करे अुस समय हमारे सामने केवल हिन्दी और हिन्दीके साहित्यका ही प्रश्न न हो परन्तु राष्ट्रनिर्माण तथा राष्ट्रीय अेकताके लिअे आवश्यक भारतकी दूसरी भाषाओका भी अुपयोगी साहित्य हमारी दृष्टिके सामने रहे। राष्ट्रभाषा तथा अुसके साहित्यका प्रश्न अति महत्वका प्रश्न बन गया है। राष्ट्रभाषाका प्रचार खूब हुआ है, हो रहा है और होगा। परन्तु अुसके साहित्यका प्रश्न-राष्ट्रव्यापी दृष्टिकोणसे हल करनेका प्रयत्न अभीतक किसी भी सस्थाने नही किया है। केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारे भी अिसके प्रति अुदासीन रही है। सरकार अिसके लिअे रुपया खर्च करती है, परन्तु अधिकतर रुपया तो दिखावेके लिअे ही खर्च किया जाता है। साहित्यिकोकी कृतियोपर पुरस्कार देकर अुनका सम्मान करना अच्छा है, परन्तु अिससे साहित्यके सर्जनका कोअी ठोस कार्य हो सकता है, यह हम नही मानते। हिन्दुस्तानी अेकेडेमी जैसी सस्था यदि कोअी योजना साहित्य निर्माणकी बनाये और अिस भूमिदान, श्रमदान, सपत्तिदान आदि त्याग तथा सेवाके आदोलनोंके युगमें अेकेडेमीके सब सदस्य अपना कुछ समय अुस योजनाको सफल बनानेमें अपनी साहित्यिक प्रतिभाका अुपयोग करे तो राष्ट्रभाषा तथा अुसके साहित्यकी वे बहुत बड़ी सेवा कर सकेगे। फिर हमारा ख्याल है कि अेकेडेमीको पैसोकी भी चिन्ता न करनी होगी। परन्तु वह लगन, वह श्रद्धा और वह सेवा-भाव अुसके सदस्योमें होना चाहिअे जो बरबस कार्य करनेकी प्रेरणा देते है और अुसे सफल बनानेके तमाम साधन और सामग्री खुदबखुद जुटा देते है।

—मो० भ०

आवश्यक सूचना

राष्ट्रभारती राज्योंके शिक्षा-विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत है। 'राष्ट्रभारती' का चौथा वर्ष आरंभ हो चुका है। राष्ट्रभारती समग्र भारतीय— अन्तर-प्रान्तीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करती है। अिसने हिन्दीकी मासिक पत्रिकाओंमें अपना अेक प्रतिष्ठित अेवं महत्वका स्थान बना लिया है। प्रेमी पाठकोंसे निवेदन है कि अेक अेक नया ग्राहक बनाकर अिस पत्रिकाकी ग्राहक संख्यामें वृद्धि करें और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अुत्साहको बढ़ावें। विशारद और 'राष्ट्रभाषा-रत्न' परीक्षोपयोगी अुच्च आलोचनात्मक–परिचयात्मक लेख भी प्रतिमास अिसमें छपेंगे। कृपया अिस बातको ध्यानमें रखें कि हमारी लिखित अनुमति लिये बिना कोअी सज्जन या प्रकाशक 'राष्ट्रभारती' के पिछले अंकोंमें या आगामी अंकोंमें प्रकाशित प्रांतीय साहित्यके लेखों कहानियों और अेकांकी नाटकों आदिको न छापें।

मोहनलाल भट्ट.
मंत्री, रा भा प्र स वर्धा

'राष्ट्रभारती' आपसे कुछ कहना चाहती है !

१ यही कि ता '१ जनवरी १९५४ में वह अपने जीवनके चौथे वर्षमें प्रवेश कर चुकी है। भारतके प्राय सभी प्रमुख साहित्यकारों विद्वानों और पत्र पत्रिकाओंने 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की अुसे सराहा अपनाया अपनी शुभकामना दी सहयोग दिया और उत्साह बढ़ाया। अुन सबकी कृपाको किन शब्दोंमें व्यक्त किया जाय !

२ यही कि वह निश्चित समयपर हर महानकी पहली तारीखको अपने प्रेमी पाठकोंके हाथोंमें श्रेष्ठ सुरुचिपूर्ण स्वस्थ और सरस-सुन्दर, विविध विषयक गंभीर लेख कविता कहानी, समालोचना आदि पाठ्य-सामग्री अर्पण करती है।

३ यही कि फिर भी वह सबसे सस्ती माफ-सुथरी पत्रिका है। वार्षिक मूल्य कहिये या मासिक चन्दा कहिये ज्यादा नहीं सिर्फ ६ रुपया और अर्ध वार्षिक (छह माही) रु ८ आना और अेक अंकका १० आना।

४ यही कि राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके प्रमाणित प्रचारकों केन्द्र-व्यवस्थापकों और विद्यालयों तथा महाविद्यालयोंको राष्ट्रभारती' अेक रुपया कम करके रियायती मूल्य ५ रु वार्षिक चन्देमें और अर्धवार्षिक चन्दा ३ रु में दी जायगी।

५ यही कि अिस महान पवित्र साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक राष्ट्रभाषा प्रचार कार्यमें आप राष्ट्रभारती' का हाथ बटाअें। अुसकी सहायता करें। स्वयं ग्राहक बनें और अपने मित्रोंको भी बनाअें।

६ यही कि राष्ट्रभारती आपकी असी सहायताका सहर्ष आभारपूर्वक स्वागत करेगी।

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ-सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छा टाअिप की हुआ साफ भेजनी चाहिये। प्रकाशनार्थ सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और बहुत लम्बी नहीं होनी चाहिये।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुआ आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो और जो कुछ सामग्री भेजें वह राष्ट्रभारती के लिये ही भेजें। राष्ट्रभारती अपने लेखकोंको पत्रपुष्प-पुरस्कार' भी भेंट करती है।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेसे पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें तभी अनूदित रचना हमारे यहाँ भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना सर्वथा सूचना लेखकको द्वारा आपको दी जायगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मँगानेके लिये डाक टिकट अवश्य भेज अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख रचना सम्पादकीय आदि सारा पत्र-व्यवहार अिस पतेपर करें —

सम्पादक 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा मध्यप्रदेश)

मुद्रक तथा प्रकाशक — मोहनलाल भट्ट राष्ट्रभाषा प्रेस — राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा

भारती

—: विषय सूची :—

वार्षिक चन्दा ६) मनीआर्डरसे   अर्धवार्षिक ३॥)   एक अंकका मूल्य १० आना

पता:—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दीनगर, वर्धा (म० प्र०)

राष्ट्रभारती

[भारतीय साहित्य और संस्कृतिकी मासिक पत्रिका]

—: सम्पादक :—

मोहनलाल भट्ट . हृषीकेश शर्मा

वर्ष ४ * वर्धा, अप्रैल १९५४ * अंक ४ *

श्री सुमित्रानन्दन पन्त :—

हमें हिन्दी-अुर्दूको अेक ही भाषाके दो रूप मानने चाहिअे। दोनों अेक ही जगह फूले-फले हैं। दोनोंके व्याकरणमें, वाक्योंके गठन, सन्तुलन तथा प्रवाह आदिमें पर्याप्त साम्य है—यद्यपि अुनके ध्वनि-सौन्दर्यमें विभिन्नता भी है। साहित्यिक हिन्दी तथा साहित्यिक अुर्दू अेक ही भाषाकी दो चोटियाँ हैं, जिनमेंसे अेक अपने निखारमें संस्कृत प्रधान हो गयी है, दूसरी अरबी-फारसी प्रधान। और अुनका बीचका बोल-चालका स्तर अैसा है जिसमें दोनों भाषाओंका प्रवाह मिलकर अेक हो जाता है। हिन्दी अुर्दूके अेक होनेमें बाधक वे शक्तियाँ हैं जो आज हमारी धार्मिक, साम्प्रदायिक, नैतिक आदि संकीर्णताओंके रूपमें हमें विच्छिन्न कर रही हैं। भविष्यमें हमारे राष्ट्रीय निर्माणमें जो सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक शक्तियाँ काम करेंगी, वह बहुत हदतक अिन विरोधोंको मिटाकर दोनों सम्प्रदायोंको अधिक अुन्नत और व्यापक मनुष्यत्वमें बाँध देंगी।

रहा है। अुड़िया साहित्य ताड़पत्रोंपर लिखित अब भी गांवोंके अन्दर पुस्तकालयोंमें बड़े विशाल परिमाणमें छिपा पड़ा है। प्रान्तके सभी हिस्सोंमें अैसे विशाल परिवार बिखरे पड़े हैं जिनमें हरअेकके पास ताम्रपत्रकी पाण्डुलिपियोंका अेक-अेक पुस्तकालय है, जिनकी देख रेख भार अुस परिवारके पुरोहितपर है। अुड़ीसाके लगभग सभी गांवोंमें अिस प्रकारके ताड़पत्री पुस्तकालय हैं। अुड़ीसाकी जनता और साहित्यकोंकी अिससे बढ़कर सफलताकी कसौटी और क्या हो सकती है, कि राज्यकी सहायतासे वंचित संस्कृत अध्ययन अध्यापनके ठेकेदार अर्थात् ब्राह्मणोंसे अपहृत साहित्य, तथा अभिजात पंडित वर्गकी सरपरस्ती बिलीन होकर भी अुड़िया साहित्य अितनी वृद्धिको प्राप्त हुआ है, और जो सामान्य जनसमूहको अपनी कविताके जादूसे साक्षर और शिक्षित करता रहा है।

अितना कुछ कहनेका तात्पर्य यह है कि अुड़िया साहित्य मुख्यतया सर्वजनीन साहित्य है। धरतीके पुत्रोंके लिअे धरतीके पुत्रोंसे अुत्पन्न हुआ साहित्य है। अुदाहरणके तौरपर लीजिअे—

कवि सरलादास व अुनका अुड़िया महाभारत

अुड़िया साहित्यके क्षितिजपर औसाकी १४ वीं सदीमें सबसे पहले सरलादासका अुदय हुआ। यह अुड़िया महाभारतका प्रथम कवि है। अुड़िया साहित्यकी सबसे बड़ी पहली पुस्तक यही है। यह अिंग्लैंडके प्रसिद्ध कवि चॉसरका समसामयिक है और अुसीके जैसे अखण्ड और जीवित गुणोंसे लिये हुअे तथा वैसी ही सत्यान्वेषी और गंभीर आँखें और वर्णन तथा चित्रणकी वही अनूठी प्रवृत्ति अिसमें पायी गयी है। अिसके वंशधर आज भी कटक जिलेमें मौजूद हैं। अुसकी जन्मभूमि और समाधि आज पवित्र तीर्थ बन गयी है। यह निर्विवाद है कि यह कृषक कवि संस्कृत ज्ञानसे सर्वथा शून्य था और स्काटलैण्डके कवि बर्नसकी भाँति अिसे भी खलोंमें हल चलाते समय कुदरतसे ही कविता करनेकी प्रेरणा मिलती थी। ब्राह्मण पंडितोंके मुखसे सुनी-सुनायी कथाओंको अेक साथ मिला कर अिस अर्धशिक्षित किसानने अेक अैसी भाषामें महाभारतकी रचना आरंभ की जिसकी पूंजी तबतक कुछ लोकगीतोंतक ही सीमित थी और जिसे अुस समय तक राजा और बुद्धिजीवी घृणा पूर्ण दृष्टिसे देखा करते थे।

यह सरलादासका महाभारत अेक विशाल रचना है। अिसे मूलका अनुवाद अिसलिअे नहीं कहा जा सकता कि यह कवि संस्कृत ज्ञानसे कोरा था। अिसलिअे यह न्यूनाधिक मात्रामें मौलिक रचना ही है। कविने मूल पुस्तकके क्रम और प्रवाहको अुलट पुलटकर कथा वर्णनमें अपनी अप्रतिहत कल्पनासे काम लिया है। पुरानोंकी जगह नयी कथाओं और परिस्थितियोंका निर्माण किया है—जान अनजान मूलकी अनेक घटनाओं और कथाओंकी अुपेक्षा की है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि कविने अपने सीमित अनुभवोंके आधारपर ही अपनी रचनाओंको तत्कालीन अुड़ीसाके जन जीवनका दर्पण बना दिया है।

सरलादासकी रामायण

सरलादासने महाभारत पूरा करनेके बाद अुड़ियामें रामायणकी रचना भी करनी चाही। वाल्मीकि रामायणके कथानक अुसको अक्खड़ अल्हड़ कृषक प्रवृत्तिको प्रभावित करनेमें असमर्थ रहे जिसे महाभारतके पात्र अपनी असंस्कृत अुद्दाम तेजस्वितासे आजीवन आकृष्ट करते आ रहे थे। कविने जीवनके प्रति अपने कृषक-सुलभ वस्तुवादी दृष्टिकोणके कारण संस्कृत महाभारतके देव सन्तानोंको अुनके काल्पनिक अुच्चासनसे अुतारकर सामान्य नर-नारियोंकी पंक्तिमें ला खड़ा किया है जो क्षुद्र स्वार्थोंके लिअे लड़ते झगड़ते हैं, सामान्य प्रलोभनोंके समक्ष घुटने टेक देते हैं। अिसलिअे सरलादासने राम और सीताके आदर्शवादी चरित्रकी सर्वथा अुपेक्षा करके अपने महाभारतके अूपर अेक नयी रामायणकी रचना कर डाली। जब कि वाल्मीकिने रावणको लंकाका राजा बताया है सरलादासने विलंका का। और रावणके दस मुखोंकी जगह हजार मुखोंका वर्णन किया है। यह हजार मुखवाला रावण रामको अुसके भाअी और सेनापतियोंके साथ बार-बार पराजित करता है और अन्तमें सीताके पतिव्रतके बलसे मारा जाता है।

पूरी रामायणकी रचना की है जिसमें प्रत्येक सर्गके लिअे नये छदका प्रयोग किया गया। अिस आश्चर्यजनक काव्यमें केवल प्रथम पक्तिही 'बा' अक्षरसे आरम्भ होती नहीं, बल्कि प्रत्येक सर्गमें अैसी अनेक कवितायें हैं जिनका आरम्भ 'बा' वर्णसे होता है। अिस ग्रन्थकी समाप्ति बारह महीनेमें हुअी थी। ऋतुओंका वर्णन पद्य-बद्ध रूपमें अिस प्रकारसे किया गया है कि यदि अुसका प्रथम अक्षर पृथक कर दिया जाअे तो अुसमे ग्रीष्म ऋतुका अर्थ निकलेगा, और द्वितीय अक्षर अलग करनेसे वर्षा ऋतुका। और अिसी प्रकार अन्य ऋतुओंका भी। अिन सब तथ्योंपर विचारनेसे यह कहा जा सकता है कि अुपेन्द्र 'शब्द-शिल्प-कला'के अुच्चतम शिखरपर पहुँचा हुआ था, जिसकी अुपमा किसी अन्य साहित्यमें मिलना कठिन है। अिसने अपने समयमें प्रचलित सरल और जटिल सभी प्रकारके छन्दोंका बडी छटाके साथ प्रयोग किया है, और कुछ नये छन्दोंका आविष्कार भी। विलासी रोमाचक रचनाओंमें भी यह अपना सानी नहीं रखता। अपनी असाधारण शब्द-शिल्पिताके सहयोगसे अिसने जिस अुद्दाम रति-प्रेमके चित्रणमें असाधारण प्रतिभा दिखायी, अुसने सभी वर्गोंकी जनताको विमुग्ध-विभोर कर दिया है।

किन्तु, जब हम अुपेन्द्रको और अुसकी कृत्रिमताको साहित्यके क्षेत्रसे अलग कर दें, तो अिस युगमें भी अनेक स्थानोंमें हमें सच्ची कविताओंकी निर्मल निर्झरिणीका दर्शन होता है। अिस युगके बडे-बडे कवियोंमें अभिमन्यु सामन्त, सिन्हार दीनकृष्णदास तथा कविसुरीय बलदेव हैं, जिनकी कविताओंमें शब्दाडंबर और शास्त्रीय मर्यादाओंके बावजूद सगीतकी सुन्दरता अुडीसाके जनगण-मनको अुद्वेलित करती है। अिस युगमें अुडिया भाषाको सस्कृत-निष्ठ बनानेका अुत्साह अिस सीमा तक पहुँच चुका था कि कवि बलदेवने अपने प्रसिद्ध "किशोर-चन्द्रानन्द चपू" को आधी सस्कृत और आधी अुडियामें लिखा। अिस नाटकका विषय राधा-कृष्णका मिलन है। अुसका क्रमिक विकास सगीतोंमें होता है और अिन सगीतोंका अर्थ वर्ण-पक्ति मात्रा अेक अेक अक्षरसे होता है। प्रत्येक सगीतकी प्रत्येक पक्ति अेक ही अक्षरसे प्रारम्भ होती है। अिन मर्यादाओंके बावजूद बलदेवके सगीत अनुपम हैं; जिसके स्वर-सन्दोहको अुडिया-सगीत-विशारद आज भी प्रमाण मानते हैं। सगीतकी अुत्कृष्टताके साथ-साथ नायिका श्री राधा और दूती ललिताका- चरित्र चित्रण अितना छटापूर्ण है कि अिसी विषयको लेकर लिखे गये सुकवि जयदेवके "गीत-गोविन्द" की अपेक्षा भी अिसमें अधिक सौष्ठव, माधुर्य और वास्तविकताका परिदर्शन होता है।

व्रजनाथ बड़जेना :

समर-तरगके रचयिता व्रजनाथ बडजेनाका स्थान केवल अुसी युगके साहित्यमें ही नहीं, बल्कि सर्वयुगीन साहित्यमें सुरक्षित रहेगा, और अिस श्रेणीके अखिल भारतीय साहित्यमें भी बहुत कमको यह स्थान प्राप्त हो सकेगा। व्रजनाथ ढेंकानल राज्यका निवासी था, और सभवत अपने राज्यके विरुद्ध मराठा आक्रमणको विफल करनेमें अुसने हाथ भी बटाया था। अिसी विषयको लेकर अुसने युद्धोत्तेजक कविताओंकी रचना की। काव्यमें विभिन्न वीर-छन्दोंका प्रयोग किया और जहाँ अुडिया भाषा भावोंको अभिव्यक्त करनेमें असमर्थ रही वहाँ कविने खुलकर हिन्दी और मराठी शब्दोंका भी प्रयोग किया।

रीति-काव्यकी प्रतिक्रिया :

१८ वी सदीके अन्तमें अुडिया-साहित्यके मचपर महान सन्त कवि गोपालकृष्णका आविर्भाव हुआ, जिसकी स्मृतियाँ आज भी बडी पूजा और प्रेमके साथ जन मनमें मौजूद हैं। अिसी समय काव्यमेंसे कृत्रिमताका ह्रास होने लगा। कृष्णकी कथा और अुपदेश अिनके काव्यके विषय थे। अुनके छोटे छोटे मुक्तकोंमें हमें अेक साथ अीश्वर और मानव तथा नर और नारीके प्रेमकी रगीनियाँ अेव गभीरता और अुद्दामताका परि-दर्शन होता है। वैष्णव-गीतों और मुक्तकोंके लेखक होनेके नाते गोपालकृष्ण विद्यापति और चडीदासकी श्रेणीमें आते हैं। प्रेमकी सूक्ष्मता और महानताको अभिव्यक्त करनेके लिअे कथोपकथनकी अुत्कृष्टता अुन जैसे प्रतिभाशालीकी निजी विशेषता है।

आधुनिक युग

गोपालकृष्णकी मृत्युके समय तक अंग्रेजी शिक्षाका प्रसार हो चुका था, यद्यपि वे स्वयं पश्चिमी शिक्षासे सर्वथा अछूते रहे। नवयुगकी अुषाका आविर्भाव हो चुका था, परन्तु अिस अन्तिम मध्ययुगीन महाकविको अुसका आभास नहीं था। नये सुशिक्षित पंछी चहचहाने लगे थे, किन्तु खेद है कि नये और पुराने कवि न मिल सके।

अंग्रेजी शासन कालमें सभी भारतीय भाषाओंका अितिहास लगभग अेक जैसा ही है। यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि साधारण रूपसे स्वतंत्र अेवं सम्पन्न अंग्रेजी साहित्यके सम्पर्कसे भारतीय भाषाओंमें वास्तवमें अेक नया जीवन आ गया। कविताओंमें अभिव्यक्तिके लिअे नये आलम्बनोंका आश्रय लिया गया। व्यवहारिक रूपमें गद्यका जन्म हुआ। नाटक और अुपन्यासमें जीवनके चित्र खींचे जाने लगे और पत्र-पत्रिकाअें धारावाहिक विचारोंकी अभिव्यक्तिका माध्यम बनीं। किन्तु अिस नये साहित्यको अपनी खपतके लिअे अभिजात वर्गीय जनतापर निर्भर रहना पड़ा। अिससे पूर्व पुस्तक निर्माणमें कवि या लिपिकके परिश्रमके अतिरिक्त और कुछ व्यय नहीं होता था। लेकिन अब अिसके अुत्पादनमें अुत्पादक और विक्रेता अुभय पक्षके लिअे नकद पूंजीकी जरूरत होती है जब कि पुराने समयमें मन्दिरों, ग्राम-अुत्सवों और यात्रा दलोंके प्रवचनों अेवं धनियोंके घर नृत्य-गीत-समारोहोंके अवसरपर लोग मुफ्तमें ही अिसका आनन्द लेते थे। मां सरस्वतीकी परिधिमें छापाखानेके प्रवेशके साथ ही यह सब लुप्त हो गया। परिणामतः साहित्य खर्चीला बन गया है, धनी और विलासी मध्यवर्गीय जनताकी पृष्ठभूमिपर यह अेक व्यापारिक वस्तु बन गयी है।

अुड़िया साहित्यके तीन चमकते तारे

कुछ गिनतीके सरस्वतीके वरद पुत्रोंकी कठोर लगनके परिणाम स्वरूप पाश्चात्य विचारोंका प्रवाह अुड़ियामें कुछ देरसे पहुंचा। अंग्रेजी शासनमें अुड़ीसाके खंड खंड कर दिये गये थे। अुड़िया भाषाका स्थान पड़ोसी प्रान्तोंकी भाषाओंने लेना आरम्भ कर दिया था। अिसी समय अुड़िया साहित्यके आकाशमें तीन चमकते तारोंका अुदय हुआ। अिनके नाम थे फकीर मोहन, राधानाथ और मधुसूदन। अिन तीन प्रतिभाओं द्वारा रचित साहित्यने ही खंड खंड होकर जहां तहां बिखरी पड़ी अुड़िया जातिको अेक सूत्रमें बांधनेकी प्रेरणा दी।

फकीरमोहन सेनापति

फकीरमोहन सेनापति अेक अच्छे बड़े अुपन्यासकार होनेके साथ साथ सेनापति नाम धर्मके अनुसार जन्मजात नेता भी थे। आधुनिक भारतीय साहित्यमें अिनकी गणना अत्यन्त असाधारणोंमें की जा सकती है। वे गरीबीमें पैदा हुअे थे। आजीवन बीमार रहे। आरम्भिक शिक्षाकी सीमाको लांघ भी नहीं पाये। किन्तु अिन समस्त न्यूनताओंके बावजूद अुनकी सफलता अद्भुत आश्चर्यजनक है। अेक प्राअिमरी स्कूलके शिक्षकसे बढ़ते-बढ़ते अेक बहुत बड़ी रियासतके दीवान पदपर पहुंच गये। अुड़िया, बंगाली, हिन्दी और संस्कृतकी जानकारी और विद्वत्ताके कारण बड़े बड़े विद्वान अंग्रेज अधिकारी अुनके मित्र थे। साहित्यिक क्षेत्रमें अिनकी सफलता तो अिससे भी अधिक आश्चर्यजनक है। अकेले ही अिन्होंने रामायण और महाभारत जैसे विशाल ग्रंथोंका अनुवाद कर डाला। अितिहास और गणितकी पुस्तकें लिखीं, व्यंग्यात्मक छंद और अुनके अुत्कृष्ट मुक्तक लिखे। अुड़ियामें सर्वप्रथम अुच्चकोटिकी छोटी-छोटी कहानियां लिखीं, अुच्चकोटिके चार अुपन्यास लिखे जिनकी गणना अन्य भारतीय भाषाओंके कथा साहित्यमें भी सम्मानके साथ की जायेगी और अन्तमें भगवान बुद्धको लेकर अेक अुत्तम काव्य ग्रंथ लिखा। यह अेक प्रकारसे बहुत बड़ा वरदान ही था कि अुड़ीसाकी अिस प्रतिभापर पाश्चात्य शिक्षाका रंग नहीं चढ़ पाया था। वह सामान्य जन गणमें पैदा हुआ था और अनेक भाषाओंकी गंभीर विद्वत्ताके रहते भी अुसके सोचने और लिखनेका माध्यम सामान्य जन गणकी भाषा ही थी। वस्तुतः अिसे भारतीय दलित वर्गका सर्वप्रथम साहित्यकार कहा जाना चाहिअे। यदि अिसने अपनी रचनाओंमें ग्रामीणोंकी भाषा और

मुहावरोंको अितनी कुशलताके साथ प्रयोग न किया होता तो अब भी यह भाषा साहित्यिक अभिव्यक्तिके अयोग्य ही समझी जाती। किन्तु आजकल अुड़िया कथाकार फकीर मोहनका अनुकरण करनेमें अपना गौरव समझते हैं। किन्तु अुसके कथोपकथन और मुहावरे जिनसे अुडीसाकी धरती, ग्राम, खेत और किसानोंकी झोपड़ियोंकी सुगन्धि निकलती है, आज भी अपना सानी नहीं रखते। ५० वर्षोंका भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलनका अितिहास फकीरमोहनके पृष्ठोंमें विद्यमान है।

राधानाथः

राधानाथने रामायण, महाभारत और भागवतके पौराणिक जगतपर कविताओं लिखी। अुसने स्काट और बाअिरनकी शैलीपर छन्दोबद्ध रोमांसोंकी रचना की। अैन्द्रजालिक और स्वर्गिक वातावरणको लिये हुअे अुसके पात्र अर्ध-अैतिहासिक हैं। अिनकी कविताओंमें मुख्य तत्व है; वह पृष्ठ भूमि जिसमें वे अपने नायक और नायिकाओंको समक्ष रखते हैं और है अुडीसाका सुन्दर स्वर्गिक प्राकृतिक दृश्य। जिस प्रकार प्राचीन भारतका भूगोल कालिदासकी रचनाओंमें अमरत्वको प्राप्त हुआ है अुसी प्रकार अुडीसाका भूगोल राधानाथकी पंक्तियोंमें। सबसे प्रथम राधानाथने ही अुड़िया साहित्यमें हमारे सरोवरों, झरनों, नदियों, वनों और पर्वतोंके सौंदर्यसे हमें परिचित कराया। अिस प्रकृतिके पुराहितकी सर्वोत्कृष्ट अभिव्यंजना चिलका झीलपर लिखी गयी स्तुतिपूर्ण मनमोहक कविताओंमें परलक्षित होती है। राधानाथने अुड़िया साहित्यमें स्थानीय रंग चढ़ानेके लिअे शब्दविन्यासमें क्रांतिकारी परिवर्तन किया। अुन्होंने मध्ययुगीन अलंकारिकताको त्यागकर अपनी रचनाओंमें सरल, सुन्दर अनुप्रासात्मक और अुपयुक्त शब्दोंका प्रयोग किया। अिनकी कविताओंको बार-बार पढ़कर भी जी नहीं अघाता।

मधुसूदनः

मधुसूदन कट्टर धार्मिक थे। समाजके अुत्साही सदस्य और महान शिक्षा-शास्त्री थे। अिनकी रचनाओंमें रहस्यवादकी धारा पुनः प्रकट होती है जोकि अुड़िया समाजमें अन्तःसलिलाकी तरह सदा प्रवाहित होता रहकर लौकिक साहित्यमें अभिव्यक्त होती रही है। अिस गंभीर प्रवाहका मूल स्रोत ८ वीं सदीकी बुद्धगान तथा दोहा नामक पुस्तक थी, जो बौद्ध-योगिनियोंमें पाया जाता है और यही अंतःप्रवाह आगे चलकर जगन्नाथदास और अुनके शिष्योंकी रचनाओंमें अेकाअेक प्रकट होता है। और यही तत्व १८ वीं सदीके प्रच्छन्न बौद्ध अन्ध कवि भीम भोअीके अेकेश्वरवादी भजनोंमें देखा जाता है, और फिर यही वाद आधुनिक ब्राह्मधर्मका चोगा पहनकर मधुसूदनके भजनों और मुक्तकोंमें अभिव्यक्त हुआ। मधुसूदनने जो कुछ भी लिखा अुससे विशुद्धता और वादिताका आदर्श अुच्छाम प्रवाहित होता है। अिन्होंने क्या मनुष्य और क्या प्रकृति, सर्वत्र अीश्वरीय सत्ताका अनुभव किया और अपनी स्वर्गिक बुभुक्षाको अैसे अुत्कृष्ट भजनों और मुक्तकों द्वारा अुडेला है जो किसी भी साहित्यकी बहुमूल्य निधि हो सकते हैं। अिनके भजन और गीत अुड़ियाके प्रत्येक स्कूलमें गाये जाते हैं।

मेहर और नन्दकिशोर :

अुपरोक्त तीनों साहित्य-रत्नोंके अनेक अनुयायी और अनुकर्ता हुअे हैं जिसमें गंगाधर मेहर और नन्दकिशोर विशेषत अुल्लेख योग्य हैं। सबलपुरके जुलाहा-कवि गंगाधरने तो अपने गुरुओंसे भी कहीं अधिक ख्याति प्राप्त कर ली। अुनकी शैलीमें संस्कृतकी अुत्कृष्टता और विशुद्धता तथा मध्य युगीन अुड़िया कविताओंके संगीतमय छन्दोंका समिश्रण है। दृष्टिकी स्वच्छता और अभिव्यक्तिकी सूक्ष्मतामें तो अिसने अपने गुरुओं और साहित्यकारोंको भी मात कर दिया है। वह अुडीसाके दरिद्र कवियों और कलाकारोंकी श्रेणीका था। अपनी जीविकाके लिअे अेक हाथमें अपने पैतृक व्यवसायका आधार करघा और दूसरे हाथमें स्वर्गिक प्रवृत्तियोंकी परितृप्तिके लिअे सदा लेखनी लिये रहता। वह दरिद्र था और अपनी कविताओंमें अुन्हीं अुत्तमताओंको अनुस्यूत किया है, जिसके लिअे सबलपुरके कपडे प्रख्यात हैं। अिस गरीब जुलाहेका चित्र भी अुड़िया भूमिके दिवंगत महापुरुषोंके साथ लटकाकर अुडीसा धन्यवादका पात्र है।

दूसरे कवि नन्दकिशोरने तो भाषामें अेक बिलकुल मौलिक प्रवृत्ति चलायी। अिसने पौराणिक और अैतिहासिक संसारके नायकों और राजकुमारोंकी बिलकुल अपेक्षा कर अपने वर्णनका विषय अुडीसाके दरिद्र ग्रामोंको बनाया। अुड़िया-साहित्यमें यह पहला ही अवसर था कि ग्रामीण सस्था ग्राम पाठशालाओं, गाँवका

गाँवों, गाँवकी स्मशान-भूमि, गाँवका मंदिर और गाँवके बाजारमें कलाकी अमरता प्राप्त की सर्वप्रथम नन्दकिशोरने ही अुडियाके लोक-गीतोंको आधार बनाकर आधुनिक मुक्तकोंकी रचना की और सर्वप्रथम बाल-गीतोंकी भी। अिसके 'ग्राम चित्र' अुनका अुत्कृष्ट कल्पयना और पुराने गाँवोंके प्रति आकर्षकताके लिअ सर्वदा श्रेष्ठ कृति माने जाअेंगे।

पंडित गोपबन्धुदास :

सेनापति राधानाथ और मधुसूदनके बाद जिसने जाने-अनजाने अुडिया साहित्यको सबसे अधिक प्रभावित किया है, वह हैं प्रातःस्मरणीय गोपबन्धुदास। अिस आधुनिक युगमें अुडीसाने अिनसे बढकर मानवता-प्रेमी, परोपकारी, सर्वोच्चश्रवना राजनीतिक-सामाजिक नेता और शिक्षा-शास्त्रीको पैदा नहीं किया। प॰ गोपबन्धुका नवनीत जैसा कोमल हृदय मानवीय दुर्दशासे अभिभूत होने ही कविता, गद्य और वक्तृताके रूपमें सहस्रधार होकर अुठा करता था, न-भूतो न भविष्यतिकी भाँति अुडीसाके जन-गण मनको बच्चोंकी तरह गीत देता है। अुन्होंने अेक कविके रूपमें अपना जीवन-क्रम आरम्भ किया, किन्तु मानवता प्रेमीके नाते अेक राजनीतिक कार्योंमें लग जानेके कारण साहित्य-सेवामें समय और ध्यान देना अुनके लिअे सम्भव नहीं था। किन्तु अवकाशके क्षणोंमें जब वे जेलमें होते अथवा भावुकताके वशीभूत हो जाते तब आत्मिक शान्तिके लिअे अुनका हृदय कविता बनकर बहने लगता, पवित्र आत्माके आँसूसे हृदय अुद्वेलित हो अुठता, दो प्रेमियोंके मिलनकी तरह वह कविता पाठकोंका हृदय स्पर्श करती। अुडिया जनताके राजनीतिक और सामाजिक अुन्नतिके लिअे वे अेक मासिक और साप्ताहिक पत्रका संपादन करते थे जिनके स्तंभोंमें ध्वनि और प्रभावयुक्त गद्यका विन्यास देखते ही बनता। पांडित्यकी अुत्कृष्टता और योल्चालकी अभिव्यक्तिको लिये हुअे अुनकी भाषा-अुडिया गद्यमें अेक नया रमणीय आविष्कार था।

राधानाथके बादका काल :

यह काल महात्मा गांधीके नेतृत्वमें राष्ट्रीय आन्दोलनका था। गोपबन्धु केवल राजनीतिक नेता ही नहीं थे, अपितु स्वयं अपने आपमें अेक महान राष्ट्रीय संस्था थे। अपनी जातिकी राष्ट्रीय आशा आकांक्षाओंकी अभिव्यक्तिके केन्द्र थे। पुरीके निकट सत्यवादीमें अुन्होंने जंगलों और गाँवोंसे घिरा हुआ अेक विहार स्थापित किया। अुस समयके सुयोग्य बुद्धिजीवियों अव सर्वोच्च अुपाधिधारियोंका समूह अुनके व्यक्तित्वके आगे पीछे सिमट आया। ये लोग केवल पेटपर स्कूल शिक्षक बननेको तैयार थे। यह केवल गोपबन्धुकी प्रतिभा और व्यक्तित्वके लिअे ही संभव था। अिनसे प्रेरित होकर पंडित नीलकण्ठदास, प॰ गोदावरी मिश्र प॰ कृपासिन्धु मिश्र जैसे बुद्धिजीवियोंका गिरोह "सत्यवादी" में आ जुटा और जनजागृतिके निमित्त साहित्य सेवामें अपनेको लगा दिया। नाटक, अितिहास तथा भारतीय आदर्श और देशभक्तिकी भावनासे ओतप्रोत छोटी छोटी कवितायें और मुक्तक रचे गये। किन्तु बडे खेदकी बात है कि अुडीसाका यह सांस्कृतिक विश्वविद्यालय अल्पायु ही में रहा। महात्मा गांधीके असहयोग आन्दोलनकी तूफानी लहरमें वह भी बह गया।

गोपबन्धुके अनुयायियोंके तिरोहित हो जानेपर धारावाहिक परंपरामें अेक आकस्मिक विच्छेद आ गया। अब कालेजके छात्रोंके अेक दलपर रवीन्द्रनाथकी आदर्श शैलीका असर हुआ। फलतः अुडिया साहित्यमें अिसकी अभिव्यक्ति होने लगी। अिस दलके नेता अन्नदा सरकार राय थे। जिस दलके आदर्शकी जडें अुडीसासे बाहर थीं, फिर भी अन्नदा सरकार और वैकुण्ठनाथ पटनायककी कुछ कवितायें और कालिन्दीचरण पाणिग्राहीकी कुछ कहानियाँ और अेक अुपन्यास समालोचकोंकी दृष्टिमें अुडिया साहित्यकोषकी मूल्यवान वस्तु मानी गयीं।

समाजवादी और मुक्त छन्द-काल :

जिस अुपरोक्त दलका अनुगमन करते हुअे साहित्य क्षेत्रमें समाजवादियोंका आगमन हुआ। अब सारा संसार अेक परिवारमें परिणित हो गया है। अुसी मात्रामें साहित्य भी अन्तर राष्ट्रीयताकी ओर अधिकाधिक अग्रसर हो रहा है। अंग्रेजी भाषाके माध्यमसे विश्वसाहित्यमें प्रवेश सुगम हो जानेके कारण सामने किसी भी देशमें किये गये नवीन साहित्यिक प्रयोगका प्रभाव बहुत जल्दी विश्वकी अेक क्षुद्र भाषापर पडता है। अुडियामें भी समाजवादी कवितायें आधुनिक अंग्रेजी कविताओंका अनुकरण मात्र हैं।

जीवित कवियों और धारावाहिक साहित्यपर निर्णय देना जल्दबाजी कही जाअेगी। काल ही कलाका सर्वोच्च निर्णायक होता है। *

---

* लेखका सर्वाधिकार पूर्ण सुरक्षित। —प्रका॰

'छह अप्रैल'

: आचार्य दादा धर्माधिकारी :

[सन् १९१९की छह अप्रैल ! पराधीन भारतकी आत्मशुद्धि और विमुक्तिका प्रख्यात पवित्र दिन। भारत भाग्य विधाता गांधीके महान अहिंसात्मक सत्याग्रह-संग्रामका श्रीगणेश ! और तब ९ अप्रैलको श्रीरामनवमी पड़ी थी और १३ अप्रैलको सन्धी अकाल सिखोंकी पुनीत तीर्थपुरी अमृतसरके जलियानवाला बागमें स्वेच्छाचारी अंग्रेजोंकी नौकरशाहीके तानाशाह डायर और ओडायरका वह भीषण नर संहार, हत्याकांड, जगप्रसिद्ध नृशंस अत्याचार ! और जब गांधीजीने अत्यन्त धैर्य, सहिष्णुता और आत्मविश्वासके साथ अंग्रेजोंसे न्यायकी प्रतीक्षा की। किन्तु ? —अिसे गांधी सिद्धांतोंके आचार्य धर्माधिकारीके लेखमें पढ़िअे। – सम्पादक]

छह अप्रैलका दिन अर्वाचीन भारतके अितिहासमें अेक पुण्य पर्वका दिन है। कोअी ३४ साल पहले छह अप्रैलको हमारे राष्ट्रपिताने अिस अुदयोन्मुख राष्ट्रका व्रतबन्ध किया था और अुसे अेक नये राष्ट्रधर्मकी दीक्षा दी थी। अुस दिन अिस भारतीय राष्ट्रके पुनर्जन्मका आरम्भ हुआ, अुसे अेक अपूर्व अर्थमें 'द्विजत्व' प्राप्त हुआ था। छह अप्रैलने जो राष्ट्रीय भावनाके अनुष्ठानका सप्ताह प्रारम्भ हुआ अुसकी परिसमाप्ति 'जलियानवाला बाग' की 'रुधिर-स्नान' में हुअी। अिस पवित्र रक्तस्नानमेंसे ही यह भारतीय राष्ट्र पुनर्जीवित होकर फिरसे अनुप्राणित हुआ। अिसी दृष्टिसे अेक विशेष अर्थमें यह छह अप्रैल का दिन प्राणदाअी पुण्य पर्व है।

सन् १९१८ ओ० में अंग्रेज-नौकरशाह सरकारने दमनके बेलनसे अिस देशके पौरुषको पूरी तरह कुचल डालनेके लिअे 'दो काले कानून'— 'रौलट अेक्ट' गढ़ डाले। अिस दमनका सक्रिय विरोध करना भारतवासियोंके लिअे आवश्यक था। भारतकी जनता अपमानित हुअी थी। वह अपनी स्वत्व-रक्षा कैसे करती? भूखी, नंगी, अपढ़ और निहत्थी जनता अपनी 'मान-रक्षा' किस अुपायसे करती ? वह सन्तप्त और प्रक्षुब्ध थी, किन्तु किंकर्तव्यमूढ़ भी थी।

अैसे अवसरपर बापू आअे। वे भारतीय जनताके बापू थे। भारत माताकी मिट्टीमें जो विशिष्ट गुण हैं अुनसे अुनका पिंड बना हुआ था। मानों भारतकी विशेषताअें अुनमें मूर्तिमती हो अुठी थीं। वे बापूही थे जो भारतीय जनताकी विशिष्ट शक्तिका ध्यान, आवाहन, और आराधन कर सकते थे। अुन्होंने संकल्प किया, 'मैं भूखमेंसे अुपवासकी शक्ति जाग्रत करूँगा, जनतामेंसे जनार्दन अुत्पन्न करूँगा, आसक्तिमेंसे अनासक्ति—निःस्पृहताका विकास करूँगा, निरक्षरतामेंसे साक्षरता पैदा करूँगा और निःशस्त्रतामेंसे आत्मबलका निर्माण करूँगा।' अिसलिअे 'सत्याग्रह आन्दोलन' का सूत्रपात देशव्यापी अुपवाससे हुआ।

जिस देशमें भूखने जनताको क्षीण और हताश बना दिया था, अुस देशमें किसी भी महान् अनुष्ठानका आरम्भ सहभोजनसे नहीं हो सकता था। अिसलिअे सामुदायिक अुपवास ही अुपयुक्त समझा गया। छह अप्रैलके दिन अिस देशके करोड़ों लोगोंने केवल अुपवासका व्रत रखा। देखनेमें यह अेक

बहुतही मामूली सी बात थी। परन्तु असके पीछे अेक समूचे राष्ट्रके त्यागकी तत्परता, तितिक्षा–सहनशीलता और क्षमा– का निश्चय और अन्तर्गत सहयोगका संकल्प था। असलिअे वह साधारण सा अुपवास भी प्राणवान और तेजपुंज हो अुठा। राष्ट्रके सारे शरीरमें, अुसके रोम-रोममें, विद्युत्की गतिसे अेक नये अुत्साह और नयी आशाकी लहर दौड़ गयी।

तप, त्याग और तितिक्षा, अिस नयी प्रतिकार प्रणालीकी तत्त्वत्रयी थी। व्यक्तिगत मोक्षके लिअे तप, त्याग और तितिक्षाका आचरण करनेकी परम्परा अिस देशमें बहुत शताब्दियोंसे प्रचलित और प्रतिष्ठित रही है। परन्तु सार्वजनिक हित-साधनके लिअे सार्वजनिक और सामूहिक रूपके तप, त्याग और तितिक्षाके आयोजनोंका व्यवस्थित अुपक्रम अर्वाचीन संसारके अितिहासमें हमारे राष्ट्रपिता गान्धीने किया। अेकादशी शिवरात्रि आदि व्रतोंमें जो पवित्रता और आत्मशुद्धिकी भावना है, वही पवित्रता और आत्मशुद्धिकी भावना छह अप्रैलके पुण्य-दिवसमें भी है। तथापि अेकादशी और शिवरात्रिसे छह अप्रैलकी भूमिका अधिक व्यापक और अपूर्व है।

अेकादशी वैष्णवोंका हरिदिन है और शिवरात्रि शैवोंका रुद्रार्चनका दिन है। आगे चलकर शैव अेकादशी रखने लगे और वैष्णव शिवरात्रिके दिन अुपवास करने लगे। अिस समन्वय-वृत्तिका परिपाक 'वैकुंठ चतुर्दशी' में हुआ। 'वैकुंठ-चतुर्दशी' वह पवित्र दिन है जब विष्णु शिवजीकी पूजा करते हैं और शिवजी विष्णुका पूजन करते हैं। वैकुंठ-चतुर्दशीमें शिवरात्रि और अेकादशीका मधुर संगम हुआ। परन्तु छह अप्रैलके अपूर्व पुण्यपर्वमें वैकुंठ-चतुर्दशीका संगम रोज़ेके साथ हुआ। अिस देशमें रहनेवाले सभी सम्प्रदायों, मत-मतान्तरों और धर्मपन्थोंके अनुयायिओंने बड़े भक्ति-भावके साथ और असीम श्रद्धासे छह अप्रैलको व्रत रखा और देशमें विधायक रूपमें जनता-व्यापी संयुक्तराष्ट्र-भावनाकी प्राणप्रतिष्ठा की। अिस दृष्टिसे धार्मिक व्रतोंकी अपेक्षा छह अप्रैलके राष्ट्रीय-व्रतकी भूमिका अधिक व्यापक और अधिक अुन्नत मानी गयी।

छह अप्रैलके दिन जिस सामुदायिक प्रतिकारका आरम्भ हुआ वह संसारके राजनीतिक अितिहासमें अद्भुत और अभूतपूर्व था। निःशस्त्र प्रतिकारके प्रवर्तक और समर्थक कहते थे, 'हम अपने प्रतिपक्षीकी नाकमें दम कर देंगे, अुसकी नींद हराम कर देंगे, कदम-कदमपर अुसे टोकेंगे, रोकेंगे, अुसके कामोंमें अड़चन लगायेंगे, अुसका सारा काम बंद कर अुसे झुकाकर रहेंगे।' सत्याग्रहके आद्य प्रवर्तकने कहा, 'हम स्वयं कष्ट सहेंगे, हम सारे सुखोंका त्याग करेंगे और अपने तपसिद्ध अधिकारसे अपने प्रतिपक्षीको स्वपक्षी बना लेंगे। हमारे असहयोगके कारण अुसके दुष्कर्ममें बाधा पहुँचेगी, हमारे प्रतिकारसे अुसकी असत्प्रवृत्तिमें ही परिवर्तन होगा'। अिस प्रकार चाहे बाह्य स्वरूपमें निःशस्त्र प्रतिकार और सत्याग्रहमें समानता भले ही प्रतीत हुअी हो परन्तु वस्तुतः अुन दोनोंके मूल तत्त्वोंमें और अुद्देश्यमें बहुत बड़ा अन्तर था। अिसी कारण सत्याग्रहका आरम्भ अुपवास व्रतसे हुआ। छह अप्रैलके अिस रहस्यको यदि हम भूलेंगे तो धीरे-धीरे जैसे-जैसे निःशस्त्र प्रतिकार और 'विघ्ननीति' अपनी अुपयोगिताकी सीमाको पहुँच जायेगी, हमारे लिअे शस्त्र शरणताके सिवा दूसरा कोअी चारा नहीं रह जायेगा।

छह अप्रैलसे तेरह अप्रैलतकका सप्ताह जिस प्रान्तके कारण विश्वविख्यात और अितिहास प्रसिद्ध समझा गया वह पंजाब अब खंडित–विच्छिन्न–हो गया है। सत्याग्रहके अुपक्रमकी कल्याणकारिता सूचित करनेवाली घटना पंजाबमें ही घटित हुअी। हिन्दू, सिख और मुसलमानोंके पवित्र रक्तकी गंगा यमुना सरस्वतीके संगमका तीर्थराज '[illegible],' की भूमि [illegible] हमारे लिअे यह सन्देश है कि हम भारतीय कम से कम अपने अन्तर्गत व्यवहारमें त्याग, तप और तितिक्षाके प्रयोगसे अेक दूसरेका स्नेह, विश्वास तथा सहयोग प्राप्त करें और भारतीय लोकराज्यकी नींव पुख्ता और मजबूत बनायें। हर व्रतोत्सव और पर्वको मनानेमें हमें अपनी मौजूदा परिस्थितिका भी ध्यान नित्य रखना चाहिअे। तभी हमारे व्रतोत्सव और पर्व प्राणवान् होंगे।

प्रजापति

: श्री शिवनाथ :

संस्कृतिके परिवर्तनके साथ साथ वैदिक कालसे लेकर आधुनिक कालतक 'प्रजापति' शब्दका प्रयोग भारतीय साहित्यमें अनेक अर्थोंमें हुआ है[1]। परंतु अुन (अर्थों)में अिसका सर्वप्रमुख अर्थ है—'सृष्टिकर्ता ब्रह्मा'। वस्तुतः अिसी अर्थ द्वारा अिसके यथाप्रसंग अनेक वर्णिक अर्थ निकाल लिये गये हैं। मूलतः 'प्राणियोंका स्वामी' ही 'प्रजापति'का अभिधेयार्थ है। यहाँ जिस 'प्रजापति' के दर्शन करने हम जा रहे हैं अुसका संबंध 'प्राणियोंके स्वामी, सृष्टिकर्ता'से अुतना अधिक नहीं है जितना कि अुसकी प्राणमयी सृष्टिसे। हम अुस सत्ताकी झांकी लेंगे जो सृष्ट होकर भी, प्रजा होकर भी स्रष्टाका, प्रजापतिका, नाम धरे बैठा है। संसारमें अुलट-पलट लगा ही है, किमाश्चर्यमतः परम्।

बात यह है कि अुडिया और बँगला भाषाओंमें 'प्रजापति' तितलीको कहते हैं—विशेषकर बँगला भाषामें, और अिस अर्थमें प्रयुक्त 'प्रजापति'से वंग प्रदेशकी संस्कृतिका घनिष्ट संबंध है, जिसकी चर्चा यथाप्रसंग होगी। अेक विद्वान्का कथन है कि अुडियामें अिस अर्थमें 'प्रजापति' शब्द व्यवहृत नहीं है[2]। परन्तु अुडिया मित्रों द्वारा ज्ञात हुआ है कि अुडिया भाषामें भी अिसका प्रयोग तितलीके अर्थमें होता है।

वंग प्रदेशमें ग्रामीण लोग 'प्रजापति'का अुच्चारण 'पेजापति' करते हैं, वैसे ही जैसे वे 'प्रणाम'को 'पेनाम, पन्नाम और परणाम' बोलते हैं। बंगालमें पहले तितलीको 'पिगवनी' कहते थे और बादमें 'प्रजापति' शब्द प्रचलित हुआ। 'पिगवनी' संभवतः अिसीलिअे कहा गया कि अुसका रंग पीला होता है, परन्तु रंगीनी पीलेपन तक ही सीमित नहीं है, यह हम जानते हैं। जी हाँ, मराठीमें भी अिसे 'पिपणी' कहते हैं। वंग प्रदेशके ग्राम्यजन अिसे 'पखी' भी कहते हैं, परन्तु यह प्रयोग अतिविरल ही है। हाँ, असमियामें अिसे 'पखिला' ही बोलते हैं। यह अिसी कारण कि तितलीमें आकार और चित्र-विचित्रताकी दृष्टिसे पक्ष, पंख या पंखकी ही सर्वाधिक प्रधानता है।[3]

संस्कृतके अभिधान-ग्रन्थोंमें कीट पतंगके अर्थमें 'प्रजापति' का अुल्लेख मिलता है। जैसे—'स्वनामख्यात कीट विशेषश्च'[4], 'स्वनामख्याते कीट भेदे'[5], 'अेसिसीज ऑव् अिंसेक्ट'[6] आदि। परन्तु अिसके आकार-प्रकार, स्वरूप अित्यादिका कोअी वर्णन नहीं मिलता। अतः अुनमें यह 'स्वनाम प्रसिद्ध अेक कीट विशेष', 'स्वनाम ख्यात कीटका अेक भेद', 'कीटकी अेक जाति' ही रह जाता है। अुनमें अभिव्यक्त अर्थ द्वारा यह 'तितली' के रूपमें गृहीत नहीं हो पाता, जैसाकि बँगला और अुडियामें होता है। पालि और प्राकृतके अभिधानोंमें तो अेसा जान पड़ता है कि 'प्रजापति' का पालि प्राकृत रूप 'पजापति' 'पयावअि' बनाकर अिसके अर्थ संस्कृतके अभिधानोंसे ले लिये गये हैं[7]। अतः शुद्ध 'कीट'—वाला अर्थ अुनमें भी मिलता है।

१ सर मोनियर मानियर विलियम्स कृत 'अे संस्कृत-अिंग्लिश डिक्शनरी', १८९९ अी०

२ योगेश चंद्रराम, अेम अ, विद्यानिधि कृत बांगला शब्द-कोश, कलकत्ता, बंगाब्द १३२०।

३ वही।

४ शब्द कल्पद्रुम।

५ वाचस्पत्य।

६ सर मोनियर मानियर विलियम्स कृत अे संस्कृत-अिंग्लिश डिक्शनरी, सन् १८९९ अी०।

७ (क) टी० डब्ल्यू० रीज डेविड्स तथा विलियम स्टीड कृत पालि डिक्शनरी, दि पालि टेक्स्ट सोसायटी, चिप्स्टेड, सरे, सन् १९२१ अी०।

(ख) हर गोविंददास टी० सेठ कृत पाअिअसद्दमहण्णवो, कलकत्ता, सन् १९२८ अी०

संस्कृत, पालि, प्राकृतके अभिधान-ग्रंथोंमें 'प्रजापति' का अेक अर्थ 'कीट' अवश्य मिलता है, परन्तु अिस अर्थमें अिसका प्रयोग न तो वैदिक संस्कृतमें अबतक देखा गया है और न लौकिक संस्कृतमें ही, पालि प्राकृतमें भी नहीं। 'सुश्रुत' आदि वैद्यक ग्रंथोंमें, जिनमें कीट पतंगोंका अुल्लेख मिलता है, अुनमें भी 'प्रजापति'का प्रयोग नहीं है। अैसी हालतमें यह जान पड़ता है कि कीट-पतंगके अर्थमें 'प्रजापति' शब्द केवल अभिधानोंमें ही स्थान पा सका। अिसका अभिधानोंमें स्थान पानेका भी कोअी कारण अवश्य रहा होगा। और अिस सबंधमें अनुमान यह किया जा सकता है कि 'कीट-पतंग' के अर्थमें 'प्रजापति' शब्दका प्रयोग लोककी भाषा-जनताकी भाषा-में प्रभूत रूपसे होता रहा होगा और कोशकारोंने अिसके प्रचलनकी बहुलताके कारण वहींसे अिसे ग्रहण किया। यह भी अनुमान किया जा सकता है कि कीटके अर्थमें अिस शब्दके प्रयोगकी बहुलता लौकिक संस्कृत-कालमें हुअी होगी, क्योंकि वेदोंमें अिस अर्थमें अिसका प्रयोग नहीं है।

भाषा-साहित्य (वर्नाक्यूलर लिटरेचर) में, बँगलामें, अिसका प्रयोग तितलीके अर्थमें साहित्यकारोंने किया है, और लोकमें भी अिस अर्थमें अिसका प्रयोग चलता है। यह निवेदन पहले ही कर चुका हूँ। अेक अुदाहरण लीजिअे—

'प्रजापति आवि कत शत पतंगम।'[८]

यह पंक्ति हरिश्चंद्र मित्रकी है, जिनका रचना-काल अीसवी सन् १८६२ और १८७२ के मध्य है। यह सम्भवतः प्राचीनतम प्रयोग है। अिस अर्थमें 'प्रजापति'का प्रयोग रवीन्द्रनाथने भी खूब किया है। बंग-प्रदेशके 'कवि-गानों' (आशु कविताओं) और लोक-साहित्यमें भी अिसका प्रयोग प्रभूत रूपसे प्राप्त होता है।

अूपर हमने देखा है कि अुड़िया और बँगला-भाषाओंमें 'प्रजापति'का प्रयोग 'तितली'के अर्थमें होता है। यह 'तितली' शब्द हिन्दीके 'तीतर' शब्दके आधारपर बना है, जिस पक्षीको लोग प्रायः खेलने और लड़ानेके लिअे पालते हैं। 'तीतर' संस्कृतके 'तित्तिर' शब्दका तद्भव रूप है, जिसका मतलब है 'तित्ति' शब्द करनेवाला पक्षी। अिस प्रकार यह ध्वन्यानुकारी शब्द है। 'तीतर' के आधारपर 'तितली' अिसलिअे बना कि तीतरके पंखोंपरके दागों और तितलीके पंखोंपरके दागोंमें अनुहारिता होती है। वैसे तितलीकी अनेक जातियाँ हैं, अुनके पंखोंपर पड़े दागोंमें भी विभिन्नता होती है, जो कभी कभी 'तीतर'के पंखोंके दागोंसे मेल नहीं भी खाती। जो हो, 'तितली'का सम्बन्ध है 'तीतर' से ही। यदि संस्कृतके 'तित्तिर' शब्दसे विशेषण रूप बनाया जाअे तो वह होगा—'तित्तिरीक'; अिसका अर्थ होगा-जिसपर अथवा जिसमें तीतरके पंखोंके दागोंकी भाँति दाग हैं। अैसी हालतमें स्वरूपात्मक अर्थकी दृष्टिसे 'तितली' शब्द 'तित्तिरीक' से सुविधापूर्वक बन सकता है—तित्तिरीक—(तित्तिरीअ) तित्तिरी–तित्तिली–तितिली–तितली।

अब 'तितली' के 'प्रजापति' बन जानेकी सांस्कृतिक कथापर आअें। बंगालमें विवाहके जो निमंत्रण-पत्र छापे जाते हैं अुनपर सबसे अूपर मध्यमें ब्रह्माकी मूर्ति अवश्य छपती है, वैसे ही जैसे अुत्तर भारतमें गणेशकी मूर्ति छपती है। और, वहाँ ॐ नमः प्रजापतये, प्रजापतये नमः अथवा "श्री श्रीप्रजापतये नमः" लिखा रहता है। प्राचीन नियम तो यह है कि विवाहके निमंत्रण-पत्रपर ब्राह्मण-वर्ग ॐ नमः प्रजापतये अथवा प्रजापतये नमः लिखे और ब्राह्मणेतर वर्ग श्रीश्री प्रजापतये नमः' लिखे। परंतु अिस युगमें ब्राह्मण-वर्ग द्वारा लिखा जानेवाला यह सिरनामा ब्राह्मणेतर लोग भी लिखते हैं, अब कोअी भेद-भाव नहीं है।

लगभग सौ वर्ष पूर्व, जब आजकी भाँति छपाअीकी सुव्यवस्था नहीं थी तब विवाहके निमंत्रण-पत्र पुष्प, लता, तितली आदिके चित्र आँक कर अलंकृत किये जाते थे। होता यह रहा कि शोभाके लिअे 'तितली' का चित्र विशेषकर मध्यमें, अवश्य आँकते थे। परिणाम यह हुआ कि कालान्तरमें शोभाके लिअे आँकी गयी तितली प्रजापतिको पदच्युति देकर स्वयं प्रजापति बन बैठी।

---

८ हरिचरण वंद्योपाध्याय कृत बंगीय शब्दकोश, बँगला संवत् १३४८।

वंग-प्रदेशमें आज भी विवाहके निमंत्रण पत्रोंमें ब्रह्मा-प्रजापतिके चित्रकी जगह तितली रानी ही कभी कभी विराजमान दिखायी पड़ती है। फिर तो तितली, जो अब प्रजापति हो गयी विवाहका प्रतीक हो गयी। बंगालमें यह विश्वास भी प्रचलित है कि यदि किसी विवाहके योग्य वयस्वाली कुँआरी अथवा कुँआरेपर तितली बैठ जाअे तो अुसका विवाह शीघ्र ही होगा। तितलीके प्रजापति (ब्रह्मा) बन जानेकी यह कहानी है।

प्रजापति और विवाहका प्रसंग आ गया है, तो दो शब्द और कहूँ। प्रजापति सृष्टिके प्रतीक हैं, और अुनका रंग लाल माना गया है। अिसी प्रकार सर्जन अथवा अिसकी शक्तिका रंग भी लाल ही स्वीकृत है। वैसे प्रलय, नाश, खतरेका रंग भी लाल ही है। पहले जिसे फाँसी दी जाती थी, अुसे लाल वस्त्र ही पहनाया जाता था और जपा कुसुमकी लाल माला भी अुसके गलेमें डाली जाती थी। आजकल अैसे व्यक्तिको काले कपड़े पहनाये जाते हैं। आज भी खतरेका सूचक रंग लाल ही है। अस्तु। विवाहके अवसरपर अब भी कन्याको सिंदूर (जिसका रंग लाल होता है), लाल सिंधोरा, लाल चूड़ी, लाल साड़ी, लाल ओढ़नी आदि दी जाती है। तात्पर्य यह कि सृष्टि-प्रजननके प्रतीक लाल रंगकी ही सभी सामग्री अुसे समर्पित की जाती है। अिस प्रकार प्रजननके प्रतीक लाल रंगकी सामग्री भेंट कर अुसे भी सृष्टि-प्रजननके अुपयुक्त स्वीकार कर लिया जाता है अिसके अतिरिक्त ऋतुमती हो चुकनेपर ही कन्या सृष्टि करने योग्य मानी जाती है, और अुसका ऋतुमती होना भी लाल रंग (रक्त) से संबद्ध है। राग (प्रेम)—अनुरागका रंग भी लाल माना जाता है, अिसका संबंध भी अनंत प्रजनन अथवा सृष्टिसे ही है।

स्व० अिकबाल :—

नशा़अे दौलतका बद अतवारको जिस आन चढ़ा,
सर पे शैतानके अेक और भी शैतान चढ़ा॥
[नशाअ-नशा, बद अतवार—बुरी चाल चलनवाला]

★

नशा पिलाके गिराना तो सबको आता है,
मज़ा तो जब है कि गिरतोंको थामले साक़ी!

★

वतनकी फ़िक्र कर नादाँ! मुसीबत आनेवाली है,
तेरी बरबादियोंके मशविरे हैं आसमानोंमें।

★

फिरा करते नहीं मजरूहे-अुल्फ़त फ़िक्रे-दरमाँमें।
ये ज़ख्मी आप कर लेते हैं पैदा अपनी मरहमको॥
[मजरूहे-अुल्फत—प्रेमके घायल, फ़िक्रे-दरमाँमें—अिलाजकी चिन्तामें]

★

अुठाकर फेंक दो बाहर गलीमें।
नयी तहज़ीबके अंडे हैं गन्दे॥
अिलेक्शन, मेंबरी, कौंसिल, सदारत।
बनाये खूब आज़ादीने फन्दे॥
[तहज़ीब—सभ्यता, सदारत—सभापतित्व, अध्यक्षता]

मंजुला

: श्री पन्नालाल पटेल :

पंखी अपने कलरवसे ग्रीष्मके बाल रविका स्वागत भी नहीं कर पाये थे कि मनोहरकी आँख खुल गयी। अेक क्षणके लिअे वह कुछ सोचमें पड गया। *'स्वप्न सच्चा है या मैं यहाँ सोया हूँ, यह बात सच्ची है!'* और थोडा होश ठीक होनेपर अभी-अभी अुसे जो स्वप्न आया था, वह याद करने लगा।

मंजुला और वह दोनों घूमने जा रहे हैं। बातोंकी धुनमें-और वे बातें क्या थीं अिसे याद करनेका निष्फल प्रयत्न किया गया—वे करीब अेक मील दूर स्थित पुलतक निकल आये। अेकाअेक मंजुला रुकी और बोली, *'अजी महाशय, हम तो बहुत दूर निकल आये।'* मनोहरको अपनी स्वप्नवाली बात याद हो आयी। अुसने कहा, 'चलो, मंजु, हम लौट चलें।'

'आपने खूब कही। वापस कितनी दूर जाना है, अिसका भी कुछ खयाल है?' मंजुके चेहरेपर थकान थी। वह अुसी जगह धमसे बैठ गयी।

'अरे, चाहे जितनी दूर हो, मगर वापस गये बिना कोअी चारा है?' मनोहर बोला। लेकिन मंजु तो बिलकुल लापरवाहीसे कहे जा रही थी, 'माअि गॉड! कितनी दूर निकल आये? यहाँ तो कोअी गाडी-वाडी भी शायद नहीं मिलेगी?'

'चलो मंजु अुठो। हम अभी बातकी बातमें पहुँच जाते हैं। अिस प्रकार क्यों घबराती हो?'

'आप चाहे तो खुशीसे जा सकते हैं। मगर अपने रामसे तो अब नहीं चला जा सकता।'

मनोहरको फिर अपनी स्वप्नवाली बात याद आयी। अैसा कहते हुअे मंजुका चेहरा अेकदम गंभीर हो गया था। बादमें अुसने अुसे बहुतेरा समझाया भी, लेकिन जब वह किसी भी प्रकार टससे मस न हुअी, तो वह बडा व्याकुल हो अुठा और अिसी बीच अुसकी आँख खुल गयी।

कौन जाने क्यों, लेकिन मनोहरको आज अिस स्वप्नने गंभीर विचारमें जरूर डाल दिया। वह सोचने लगा *'मंजु अेक अमीरकी लडकी है। अबतक मोटरमें* ही घूमी फिरी है। वह भला अुसके साथ अूबड खाबड मार्गमें पैदल किस तरह चल सकेगी? भले आज वह अपने माता-पिताका रोष सहकर विवाह करनेकी हिम्मत कर ले, लेकिन आखिर तो वह अैश-आराममें ही पली है न? कौन जाने वह जीवन भर मुसीबतोंसे टक्कर ले सकेगी या नहीं?'—और अिस प्रकारके अनेक विचार *अुसके दिमागमें घूम गये।*

मंजुने देखा कि मनोहर आज जबसे कॉलेज आया है तभीसे कुछ चिन्तित सा लग रहा है। लेकिन अब तो शामको ही पता चलेगा, अभी पूछा भी कैसे जा सकता है?

मनोहर जब शामको घूमने निकला तो अुसे लगा कि वह आज थोडा जल्दी आया है। लेकिन जब अुसने अपने रोजके निश्चित स्थानपर मंजुको पहलेसे खडी देखा तो वह स्तब्ध हो गया।

'अरे, आज तुम अितनी जल्दी कैसे आ गयीं? रोज तो मुझे अिन्तजार करते-करते थका देती थीं, और—'

'लेकिन पहले यह बताअिअे कि आप कैसे आ गये?' मोहक आँखोंवाली मंजुने पूछा। अुसने देखा कि मनोहरकी आँखोंकी गहराअीमें अब भी थोडी बहुत चिन्ताकी छाया है। थोडा आगे चलकर अुसने पूछा, 'आज जनाबके मुँहपर अिस तरह स्याही क्यों पुती है?'

'तुम्हारी आँखोंको तो हमेशा कुछ न कुछ दीखता ही रहता है।' कहकर मंजुकी ओर ताकते हुअे मनोहर हँसा।

'देखिअे न, आप अैसा हँस रहे हैं जैसे कोअी बीमार हँस रहा हो।' फिर थोडी गंभीर होकर बोली, 'आप मानें या न मानें, मगर आज आप चिन्तित जरूर हैं।'

अेक क्षणके लिअे मनोहरको अपने स्वप्नकी बात कहनेकी अिच्छा हुअी। लेकिन अुसका नतीजा वह जानता था। मंजु सिवा पेट पकडकर हँसनेके और कुछ न करेगी। अिसलिअे और कोअी बात अेकाअेक न सूझनेपर अन्तमें अुसने सीधी ही बात शुरू की।

'तो यह तय रहा कि हम अपनी शादी अिसी गर्मीमें कर ले।'

मंजुका चेहरा अुतर गया। जैसे वह मनोहरके हृदयसे दूर फेंक दी गयी हो। अुसने पूछा, अेक बार तय हो जानेपर फिर यह सवाल क्यों अुठा ?

नही नही अैसी कोअी बात नही। यह तो मैंने योंही पूछ लिया।'

'अकारण ?' शब्दोंके बजाय मंजुकी आँखोंने मनोहर पर ज्यादा असर किया।

अुसने गभीर होकर कहा, देखो मंजु ! शादी अेक अैसा महत्त्वका प्रश्न है कि अुसके लिअे हमें अवश्य ही गहरा सोच विचारकर लेना चाहिअे। अिसीलिअे–' लेकिन आगे अब क्या और कैसे कहा जाअे, यह वह नही सोच पाया। फिर भी वाक्य तो पूरा करनाही था, अिसलिअे बोला, 'यह तो योंही।'

'लेकिन आखिर आप कहना क्या चाहते हैं ? बिना साफ साफ कहे कोअी क्या समझेगा ?' मीठा अुलाहना देती हुअी मंजुकी आँखोंने मनोहरको थोडी हिम्मत बँधायी।

'मुझे तो कुछ भी नहीं सोचना है। लेकिन मैं तुम्हे कहता हूँ कि तुम्ह अपना, अपने माता पिताका और साथही हमारी आर्थिक परिस्थितिके बारेमें खूब अच्छी तरहसे विचार कर लेना चाहिअे। मनोहरने स्पष्टीकरण किया।

मनोहरने मंजुको सोचनेके लिअे कह तो दिया, लेकिन बादमें अुसे यह डर भी लगा कि मंजु कहीं शादीके लिअे अिनकार कर दे।

. परन्तु मंजु तो यह सब मजाकके रूपमें चुपचाप सुन रही थी। मनमें अेक विचार यह भी आया कि कहीं मनोहर मुझे छोड देनेके लिअे तो यह सब नहीं कह रहा है। लेकिन दिलमें कहीं अिस विचारके लिअे स्थान नही था। वह मजाकमें लेकिन गंभीरताके साथ बोली, 'देखिअे, मैं जानती हूँ कि मुझे – मनोहरकी ओर अुंगली करते हुअे– अिनके हाथमें अपना जीवन सौंपना है, (अिस वक्त मनोहरकी छाती फट पडनेको कर रही थी) दूसरे, मुझे अपने माता-पिताके साथ जिन्दगी भरके लिअे मौन लेना है, और तीसरा, जिसका अपना अिस ससारमें कोअी नही है, और होगा भी तो केवल बी॰ अे की डिग्री और थोडे-बहुत पहननेके लायक कपडे, अैसी स्थितिवाले पुरुषके साथ मुझे भी ठीक अिसी स्थितिमें रहना होगा। अिसके सिवा, मैंने तो यहाँतक सोच रखा है कि सुबह जल्दी अुठना होगा, अिन महाशयको दातुन देना पडेगा और अिनके लिअे चाय भी बनानी पडेगी'–

अच्छा-अच्छा, अब बहुत हुआ।' मनोहर हँसते-हँसते लोट पोट हो गया।

अेक पलके बाद मंजु गभीर होकर बोली, 'पागल तो नही हो मनोहर ! आप दुख अुठा सकेंगे और मैं न अुठा सकूँगी ? और ' वह सहज थोडी सकपकायी– 'मुझे नहीं लगता कि हम केवल विषय वासनाकी तृप्तिके लिअेही शादी कर रहे हैं।'

'बेशक, अिसमें क्या सन्देह !' मनोहर बीचमेंही बोल अुठा। मंजुके अिस वाक्यको वह गोद जैसा चिपक गया। मनमें सोचा– सही बात है। विवाह यानी दो आत्माओंका मिलन, शारीरिक मिलन तो गौण चीज है। और मंजुके अिन विचारोंको जानकर अुसके प्रति अुसके मनमें कअी गुना आदर बढ गया।

हालाँकि बादमें अिस विषयपर चर्चा करनेकी अुसे कअी बार अिच्छा हुअी, मगर वह खुदही अिस विषयका कोअी बहुत बडा हिमायती नही था, अिसलिअे वह चुपही रहा। अितनेमें अुसे खयाल आया कि रोजकी अपेक्षा आज कुछ आगे निकल आये हैं। सायही अुसे यह भी लगा कि देखें स्वप्न जैसी बात तो नहीं होती है। लेकिन अुसे अिसपर अमल करना ठीक नहीं लगा। 'चल, लौट चलें न मंजु ?'

आप जैसा चाहे।' कहकर मजु रुक गयी।
मनोहर पूछ बैठा थक तो नही गयी ?

मजु कोओ बच्ची तो थी नही जो अिस तरहके कभी न पूछे गये प्रश्नसे और वह भी आजकी मन स्थितिमे समझ न पाती। बोली थक गयी हूँ कहिअ है अुठा ले जानकी शक्ति ?

मनोहरको सिवा हसनके और कोओ बात न सूझी। दोना प्रकृतिके विविध दश्य देखन और अुसपर चर्चा करते वापस लौट।

परीक्षा आयी और चली गयी। अक दिन परिणामकी प्रतीक्षामें बैठ मजु और मनोहरन जाना कि कालेजके पहले दो वर्षोंमें दो-दो वष निकालनेवाला मनोहर बड अच्छ नम्बरसे अुत्तीण हो गया है जब कि अत्यन्त होशियार मानी जानवाली मजु फल हो गयी है।

पर अिस बातपर दोनोमसे किसीको कोओ खास अफसोस नही हुआ। हाँ यदि अिससे अुलटा नतीजा निकलता तो जरूर बड दुखकी बात होती।

अग्रजीमें आनस होनके कारण मनोहरको बडी आसानीसे अक अग्रजी दैनिक पत्रम ६० रुपयकी नोकरी मिल गयी। अकाध महीन बाद अुसन किरायपर अक घर लिया और दो आदमियोकी जरूरतके हिसाबसे दूसरी चीजें भी खरीद ली।

जिस प्रकार कोओ यात्री अपनी यात्रा शुरु करनसे पहले अेक बार फिर अुसके बारेम विचार कर लेता है अुसी प्रकार मनोहरन भी विवाहके अगले दिन खूब अच्छी तरहसे सोच विचार कर लिया। मजुकी पढाओ आग जारी रखी जाअ और अुसे भरसक हर प्रकारका सुख दिया जाअ। अलबत्ता शारीरिक सम्बन्धसे बिलकुल दूर रहा जाअ। यह अन्तिम विचार अुसके दिमागमें अुसी दिनसे चक्कर काट रहा था और अुसपर अुसन अपन आप तक भी कर लिया था विवाहका अथ क्या है ? विवाह किया ही क्या जाअ ? आदि। लेकिन अिसका निराकरण गाधीजीके विचारोंने कर दिया था। हाँ यह सही है कि गाधीजीके विचारोंको वह कोओ बहुत आदरकी दृष्टिसे नही देखता था। लेकिन अुस दिन मजुन हम कोओ विषय वासनाकी तृप्तिके लिअ थोड ही विवाह कर रहे है वाली बात अिसी आशयसे तो कही थी। मनोहरन निश्चय किया कि किसी भी रूपमें मजुकी अिच्छाके खिलाफ न बरता जाअ विशषत अुससे प्रत्यक्ष सम्ब ध रखनवाली बातोमें तो हरगिज नही।

अिस विवाहके बारेमें वर कन्याके नाते रिश्तेदार भले अनभिज्ञ रहे हो पर मित्र लोग तो सब कुछ जानते थ। और अिस साहस भरे कायमें अुन लोगोन काफी बडी सख्याम हाजिरी भी दी। विवाह काय सम्पन्न होनपर सबन वर वधूको बधाअियाँ दी। अक दो सहेलियोन तो चलते चलते मजुसे कहा भी मज कही हमें भूल तो नही जाओगी ?' मजुकी लज्जाका लाभ अुठाकर दूसरी लडकी बोल अुठी बचारीका मन तो पहलेसे ही लूट लिया गया था, लेकिन आज तो पूरी पूरी लुट गयी'

अिस बीच मुहफट माधुरी बोली फिर भला वह लूटनवालेके साथ घूमगी या आप लोगाके ? और सारी टोलीम अक मधुर हसीकी आवाज गूज अुठी।

साथ ही वह माधुरी तो मित्राको विदा करके दरवाजपर खड मनोहरको भी कहती गयी देखना फूल जसी है!

मनोहर प्रगट तो नही मगर मनमें जरूर बोला 'अपनी जानके खातिर है। कुम्हलान क्यो दूगा ?

विवाह अक अैसा प्रसग है कि वह हर अक समझदार व्यक्तिको कम-ज्यादा रूपमें गभीर बना देता है। मनोहर भी आज कुछ गभीर था।

अक मित्रके यहाँ भोजन आदि करके देरसे रातको घर लौटनपर मनोहरन मजुसे पूछा, 'कहाँ सोओगी ? छज्जम या कमरेमें ?

मजुका चहरा शर्मकी गुलाबीसे रग गया। मनोहरके दिलमें अक जबरदस्त आन्दोलन हुआ। हँसनका प्रयत्न करके वह फिर बोला, 'रोज तुम कहाँ सोती थी छज्जमें या कमरेमें ? लेकिन मजुकी

आंखोंमें अुसे कोओ और ही भाव दीख रहा था। अिसलिओ वह पानी पीनेके बहाने कमरेमें चला गया।

मजु बोली, 'छज्जेमें और कहा? अैसी गर्मीमें क्या कोओ भीतर सोता है?' और वह कपड़े बदलने चली गयी। अितनेमें अुसके कानमें बिस्तरोंके पड़नेकी आवाज सुनायी दी। 'मनोहर, जल्दी क्यों करते हो? मैं आ तो रही हूँ!' मजुने कहा।

'तो आओ न? कौन तुम्हें रोकता है!' मनोहरने छज्जेमेंसे ही जवाब दिया।

मजु कपड़े बदलकर आयी और अुसने देखा कि छोटेसे छज्जेके दोनों बाजू दो बिस्तर लगे हैं। बीचमें अेक बिस्तर होने जितनी जगह खाली थी।

'देखो, तुम्हें और तकिया तो नहीं लगेगा? दो रखे हैं।' मनोहरने अपने बिस्तरपर लेटते हुअे दरवाजे पर खड़ी मजुसे पूछा।

'लेकिन आपको यह सब होशियारी दिखानेको किसने कहा था? मैं आ तो रही थी।'

'अच्छा-अच्छा, अब सो जाओ, बारह बज रहे हैं।'

'हाँ सोना तो है ही!' मजुने अेक छिपा निश्वास छोड़ते हुअे कहा। और वह थोड़े गुस्सेमें अपने बिस्तर पर आकर लेट गयी।

यह गुस्सा और बोलनेका ढंग (अलबत्ता असली कारण तो अप्रकट ही था) मनोहरसे कोओ छिपा न था। वह बोला, 'अरे, पर अिसमें अैसी कौन सी बड़ी बात हो गयी? चलो कलसे तुम बिस्तर करना, बस?'

मजुको अिच्छा तो हुआी कि कहे 'आपका सिर!' लेकिन वह मौन ही रही।

मनोहर अच्छी तरह जान गया कि मजु अुसपर चिढ़ गयी है। लेकिन अुसे तो वह काफी अर्सेसे जानता है। अुसे विश्वास था कि यही मजु कल अुसे दुगुने प्रेमसे बुलाओगी। और सच पूछो तो अैसी बातोंमें मनोहरको अेक प्रकारका मजा आता था। हालांकि अुसका दिल तो अब भी मजुको चिढ़ानेके लिओ तरस रहा था, लेकिन किसी अज्ञात भयके कारण वह चुपचाप करवट बदलकर सोनेकी कोशिश करने लगा।

बिस्तरपर पड़े-पड़े मजु बादलोंमें मुसकराते हुअे जेठके चांदको देखती रही। वह छोटा-सा छज्जा जब-जब कुछ अंधेरेमें डूबता, तब-तब वह सहज कनखियोंसे मनोहरकी ओर देखती, और जब चांदनी छिटक जाती, तब अेक दीर्घ श्वास लेकर वह अपनी आँखें मूंद लेती। काफी समय बाद जब अुसने देखा कि मनोहरका करवटें लेना बन्द हो गया है, तब अुसके मनमें केवल अेक ही प्रश्न अुठा, 'मनोहरने पूर्णिमाके दिन क्यों शादी पसन्द की?'. ...और वह खुद भी तो नहीं समझ पा रही थी कि आज वह अितनी बेचैन क्यों है? पिछली और आजकी रातमें क्या अन्तर है?..

सुबह जब वह अुठी तब भी अुसके मनमें यही प्रश्न घुट रहा था—

'मनोहरने पूर्णिमा क्यों पसन्द की?'

'लो चलो, चाय बनाओ मजु।' हँसते-हँसते मनोहरने कहा,

'नहीं तो फिर मेरी होशियारी निकालोगी।'

'क्यों न निकालूँगी? आप करते ही अैसा हैं।' मजुने स्टोव सुलगाते हुअे कहा। मनोहर भी पास ही बैठकर चाय शक्करके डिब्बे आदि देने लगा। अुसे आशा थी कि कुछ ही क्षणमें मजु हँसेगी। लेकिन जब अुसे अपनी आशा पूरी होनेके कोओ चिन्ह न दीखे, तो अुससे पूछे बगैर नहीं रहा गया, 'तुम्हारा आज मुँह क्यों चढ़ा है?'

'यों ही।' लेकिन जब मजुने देखा कि मनोहरका चेहरा अेकदम अुदास हो गया, तब अुसे दयाके कारण सहज हँसी भी आ गयी। 'देखिये, अबसे बिना मेरी अिजाजतके आपको किसी भी काममें हाथ न डालना चाहिये। कुछ आता तो है नहीं!' कहते हुअे मजुने मनोहरको चायका प्याला दिया और अुसकी ओर अिस तरह देखा कि वह पसीने पसीने हो गया।

'बहुत अच्छा! आजसे तुम जानो और तुम्हारा काम जाने, लेकिन कॉलेज शुरू होनेपर तो मदद लोगी न?'

'अभी शुरू तो हो।' मंजु चाय पीने लगी।

शामको बिस्तर करते वक्त मंजुको बड़ी देर तक सोचना पड़ा। अन्तमें थककर पिछले दिनकी भाँति ही बिस्तर लगाये और अुसी प्रकार करवटें बदलते रात बितायी।

थोड़े दिन बाद कॉलेज शुरू हुआ। बरतन आदि साफ करनेके लिअे अेक नौकरानी रख ली थी, असलिअे रसोअीके सिवा मंजुने सारा समय पढ़नेमें लगाया। फिर भी कभी कभी अुसकी आँखोंमें अितनी मस्ती और नशा छा जाता कि मनोहर भी अुस मूक निमंत्रणको जान जाता। लेकिन कभी तो वह अुसे अपनी गलतफहमी समझता या कभी मंजुकी कमजोरी मानता। वैसे भी अिस विषयमें जिम्मेदारी तो अुसीकी है, अैसा मानकर वह अपने मनको अधिक मजबूत बनाता। साथ ही यह आश्वासन भी देता—'बस, अेक बार परीक्षा हो जाअे।'

लेकिन अुसने देखा कि आजकल मंजु कुछ अुदास और अनमनी सी रहती है, दुबली भी हो गयी है, तो वह कारण ढूँढनेकी कोशिश करने लगा। यद्यपि वह अिस बारेमें मंजुसे सीधे भी पूछ सकता था, लेकिन अुसे लगा कि अैसी कोअी खास बात होगी तो मंजु अुसे कहे बगैर नहीं रहती।

दूसरे दिन शामको घरमें दाखिल होते ही अुसने देखा कि मंजु खिड़कीके सामने खड़ी है। चेहरा बहुत साफ न दीखनेपर भी वह समझ गया कि मंजु खिन्न मना है। तुरन्त ही अुसका ध्यान पड़ोसके मकानसे आते हुअे रेडियो संगीतपर गया। वह मंजुकी अुदासीका कारण जान गया। अुसे दुख हुआ। जो लड़की आज तक मोटरमें घूमी फिरी हो, आलीशान बंगलेमें रही हो और जिसने हारमोनियम, फोनोग्राफ सितार, रेडियो आदि साज सुने और बजाये हों, अुसे आखिर कभी न-कभी तो यह दरिद्र जीवन अुबा देगा न?

मनोहरने अपनी थोड़ी-सी जमा रकम, वेतन और अेक ट्यूशन पानेकी आशा रखकर हिसाब लगाया और अिस निर्णयपर पहुँचा कि कल ही अेक रेडियो खरीद लिया जाअे। थोड़े रुपये तो हैं ही। बाकी किस्तोंमें चुका दिये जायेंगे।

अेक दिन शामको कॉलेजसे लौटते हुअे मंजुने मनोहरको छतपर किसी आदमीके साथ दो बाँस खड़े करके कोअी रस्सी जैसी चीज बाँधते हुअे देखा। वह जल्दीसे सीढ़ियाँ चढ़कर कमरेमें पुस्तकें रखने गयी, तो वहाँ अुसकी दृष्टि टेबुलपर रखे हुअे रेडियोपर पड़ी। वह मन-ही मन बोली 'कहीं अिनका दिमाग तो नहीं फिर गया है।' ...

मंजुने सोचा तो यह था कि आज मनोहरकी अच्छी परेड ली जाअे। लेकिन वह अैसा न कर सकी। फिर भी अुसने गंभीर होकर पूछा 'किसका रेडियो है?'

'हमारा और किसका।'

'क्या खरीदा है? अितने पैसे कहाँ थे?'

'जो थे वही तो। थोड़े बाकी हैं। लेकिन अुन्हें तो किस्तोंमें देना है।'

'लेकिन अिस ६० रुपयेके वेतनमेंसे आप किस्त कहाँसे चुकायेंगे? क्या रेडियो बगैर . . ?'

'तुम अिसकी चिन्ता न करो। देखो, अेक पच्चीसकी ट्यूशन तो तय हो गयी है। अेक और मिलनेकी अुम्मीद है। बस, फिर क्या?'

मंजुको गुस्सा तो बहुत आया, पर वह अधिक कठोर न हो सकी। पासकी कुर्सीपर बैठते हुअे बोली, 'मैं तो यही सोचती हूँ कि आखिर आपको अेकाअेक यह रेडियोकी बात कहाँसे सूझी?'

'क्यों, क्या मैं आदमी नहीं हूँ? . तब फिर मुझे क्यों नहीं शौक हो सकता?'

मंजु जानती थी कि मनोहर अपने शौकके लिअे नहीं, बल्कि अुसीके लिअे सब कुछ करता है। तब अैसे आदमीसे ज्यादा क्या कहा जाअे? कहनेपर भी वह कहाँ माननेवाला था। नहीं तो बिना अुसे पूछे-ताछे क्या अितना अधिक खर्च कर सकता है? अुसे असह्य हो अुठा। स्विच बन्द करते हुअे अुसने कहा, 'मनोहर, क्या यह रेडियो वापस नहीं किया जा सकता? हमें

अिसकी क्या जरूरत है ?' अुसने थोडा रिझानेके स्वरमें कहा।

'तुम खामख्वाह चिन्ता करती हो मजु !' और अुसने खडे होकर कुर्सीपर बैठी हुअी मजुको कहा, 'चलो बजाओ, खडी हो।' लेकिन मजुको पूर्ववत स्थिर बैठे देखकर वह सामने आया और बोला, 'अुठनी हो या नही ? नही तो खीचकर खडी कर दूँगा।'

अुसे क्या पता कि अिस वाक्यसे तो मजु खडी होनेवाली होगी तो अुलटी नहीं होगी !

'मेरी कसम यदि तुमने न बजाया !' कहते हुअे अुसने हँसी दबाये यत्रवत बैठी हुअी मजुको हाथ पकडकर खीचा। मजुको रोमाञ्च होआया। अुसके लिअे यह प्रसग यह दिन और कारण-भूत रेडियो सभी धन्य हो अुठे। खिचती-खिचाती वह खडी हुअी और रेडियोका स्विच दबाकर अपने मदभरे नयनोसे मनोहरकी ओर अेकटक देखती रही।

'अच्छा, तुम बजाओ। मैं जरा प्रोग्राम बुक ले आता हूँ।' कहता हुआ मनोहर खूँटीकी ओर बढा और कुछ प्रश्न पूछनेके लहजेमें कमरपर हाथ रखकर तिरछी निगाहसे देखती हुअी मजुकी ओर देखकर जैसे कुछ जानता ही न हो अिस प्रकार कोट पहनते हुअे बोला, 'अभी आता हूँ। फिर हम साथ-साथ चाय पीअेंगे।' और चल दिया। पीछे अेक दीर्घ निश्वास निकल रहा था, अिसका तो अुसे कुछ भान ही नही था।

बादमें मनोहर बराबर अिस बातका ध्यान रखता कि मजु खुश रहती है या अुदास। अेक रोज सुबह जब वह अपनी दोनो टघूशन निपटाकर घर लौटा, तो अुसने सीढियोंसे ही रेडियोके साथ किसीके गानेकी आवाज सुनी। वह दबे पाँव धीरेसे कमरेमें झाँककर देखता है, तो मजु कपडोंकी तह करते-करते अपनी मधुर आवाजसे गा रही थी। मनोहरने अुसे कॉलिजके समारोहोके अवसरपर गरबे गाते सुना था। लेकिन बादमें अबतक अैसा कोअी मौका ही नही आया था। अलबत्ता कअी बार अुसे मजुसे गानेको कहनेकी अिच्छा जरूर होती थी। लेकिन फिर तुरन्त यह खयाल आता कि जोर-जबरदस्तीके बजाय अपनी मर्जीसे गाना ही ज्यादा अच्छा होता है। और वह खामोश रह जाता। किन्तु आज अचानक अुसकी मनोकामना पूर्ण हो गयी। अिसके सिवा, आज अुसे ज्यादा खुशी तो अिस बातकी हो रही थी कि मजु बडी प्रसन्न दीख रही थी। और अिस विचार मात्रसे कि अब तो वह आगे भी अिसी प्रकार रेडियोके साथ गुन-गुनाया करेगी, अुसे बडी निश्चिन्तता हुअी। छिपकर गाना सुननेकी अिच्छासे वह अेक ओर हटकर खडा हो जाता है, लेकिन अिसी बीच मजु गाती हुअी बाहर आ जाती है और मनोहरपर दृष्टि पडते ही कहती है, 'चोर ?'

'हाँ भाअी, चोर ही सही। लेकिन तुम गाओ न ? बद क्यो हो गयी ?'

'किसके आगे ?' मजु बोली। और वह तुरन्त ही रसोअीघरकी ओर चल दी।

अिन दो शब्दोने नहीं; लेकिन मजुके चेहरेने फिर मनोहरको चिन्तामें डाल दिया। 'मंजु अिस प्रकार अकारण बात-बातपर चिढती क्यो है ? अेकाअेक अुदास क्यो हो जाती है ? अुस दिन वह जब साडियाँ लाया था, तब भी अिसी प्रकार चिढ़ गयी थी ! लेकिन अिन प्रश्नोका जवाब भी अुसीने खुद दिया। चिढेगी क्यो नही ! केवल दो साड़ियाँ और वह भी दस-पन्द्रह रुपये-वाली ! अुसकी दृष्टिसे तो वे आखिर हलकी ही हुअी न ! और अितनी-सी बातमें मैं फूलकर कुप्पा हो रहा था। तब खीझेगी नही तो और क्या होगा। अिसके बाद अुसने अेक नयी मिलनेवाली टघूशनका हिसाब लगाया और मजुके लिअे अेक बढिया साडी, अेकाध अीयररिंगकी जोड आदि लाने और अुसे खुश करनेके मसूबे वह बाँधने लगा।

सच पूछो तो मजुकी चिढके असली कारणकी दवा तो मनोहरकी थी, मगर अुसे वह अपने ही मनकी दुष्टता मानकर अुस ओर तनिक भी ध्यान देनेकी कोशिश न करता।

गर्मीसे तग आकर दोनो खुली चाँदनीमें छज्जेमें बैठे थे। मनोहर अपनी नयी टघूशनकी बात कर रहा था। 'मंजु, कलसे अेक तीस रुपयेका और टघूशन करना

है।' मजुको चुप देखकर वह फिर बोला, 'मैंने कहा, अब हम यदि लॉजमें ही खाना मँगा लिया करें तो कैसा रहे? तुम्हें भी पढ़नेके लिअे काफी वक्त मिला करेगा?'

लेकिन मजुका ध्यान अिस वक्त और ही कहीं था। यद्यपि अुसे भी पूरा-पूरा यह विश्वास तो नहीं था कि आजका चन्द्रमा चौदसका है या पूनमका। फिर भी अुसकी दाहकता पूनमसे कोअी कम नहीं थी। अेकाअेक वह किसी निश्चयके साथ खड़ी होती हुअी बोली, 'मनोहर! आओ मुझे थोड़ा क्लीओपेट्रा समझाओ। मैं पुस्तक ले आती हूँ।' और वह कुछ दूर, फिर भी द्रुतगतिसे पुस्तक ले आयी।

वैसे भी मनोहरको अंग्रेजी विषय पढ़ानेमें मजा आता और दूसरे, क्लीओपेट्राका चरित्र चित्रण और वह भी मजुको, तब तो क्या कहने? वह बड़ी छटासे अेकके बाद अेक चुनिन्दे वाक्यों द्वारा समझाने लगा। मजु भी अुतना ही रसपूर्वक सुनने लगी।

लेकिन थोड़ी ही देर बाद मनोहरने देखा कि मजुका ध्यान कहीं दूसरी तरफ है। साथ ही बीच-बीचमें कभी कभी मजुकी आँखें भी विचित्र-सी हो जाती हैं। अेक बार तो अुसे मजुमें क्लीओपेट्रा ही दिखायी दी। वह चिढ़कर बोला, 'मजु, तुम्हारा ध्यान कहाँ है?

'क्लीओपेट्राके प्रियतममें और कहाँ?' कहते हुअे मजुने अपने नयनों द्वारा मनोहरपर मदभरा अमृत बरसाया। लेकिन जब अुसने देखा कि अुस अमृतको मनोहरने अेक भारी ज्वारके साथ पढ़नेमें लगाकर बिलकुल जहर बना दिया, तब वह बड़ी खिन्न हो गयी। मनमें यह भी लगा कि कैसा नीरस आदमी है!'

वह जोरसे तम-तमाकर खड़ी हुअी और 'बस, अब बहुत हुआ।' कहकर अपने कमरेमें चली गयी।

मनोहरने अन्दर जाकर देखा कि मजु अेक आराम कुर्सीपर अचलसे मुँह ढाँककर पड़ी है। नीचे-अूपर होनेवाली छाती और धीमी सिसकियोंसे वह अितना तो समझ गया कि मजु रो रही है। लेकिन रोनेका वास्तविक कारण वह नहीं जान पाया।

अुसने पूछा, 'मजु, रोती क्यों हो? अचानक तुम्हें क्या हो गया?' लेकिन मजु तो दुगुने वेगसे रोने लगी। अेक और थोड़ा झुककर मनोहर अुसके चेहरेसे अचल खींचने लगा। मुँहपरसे हाथ हटानेकी भी कोशिश की। साथ ही पूछ भी रहा था, 'लेकिन तुम रोती क्यों हो?'

मजु रोते रोते ही कह रही थी, 'मुझे रोने दीजिये। मेरे भाग्यमें रोना ही बदा है।' लेकिन अिन वाक्योंने मनोहरके दिलपर छुरीका काम किया। वह चुपचाप अुसके आँसू पोंछता रहा। दिमागमें अितना अधिक विषाद छाया हुआ था कि अुसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था। अेक ख्याल यह भी आया, बल्कि ठोक-पीटकर बैठाया कहना अधिक ठीक होगा, कि शायद क्लीओपेट्रासे मजुको भी अपने वैभवशाली जीवनकी याद आ गयी होगी।

मनोहर अिस समय मजुके लिये आकाश-पाताल अेक करनेको तैयार था। लेकिन वह बोला, तब तो कुछ समझमें आये न? अुसने शान्त होती हुअी मजुकी आँखोंको पोंछते हुअे फिर पूछा, 'क्या हुआ मजु? कुछ बोलो तो सही?' और अुसने सामने आकर कुर्सीके हाथे पकड़कर थोड़ा झुकते हुअे कहा, 'बोलो, तुम्हें क्या चाहिअे? तुम कहो तब ना समझ--'

मनोहरका झुका हुआ सुन्दर मुँह अपने मुँहके बिलकुल पास होते हुअे भी मजुको वह क्षितिज जितना दूर प्रतीत हुआ। अपना होते हुअे भी पराया-सा लगा। अुसके मुँहपर पसोपेशमें पड़े हुअे बालकका-सा भाव देखकर अुसे फिर गुस्सा आया, 'आप मुझे चुपचाप पड़ी रहने दीजिये। मेहरबानी करके आप यहाँसे चले जाअिये।' और अुसने अचलसे मुँह अचलमें छिपा लिया।

मनोहर थककर कुछ तंग आकर बिस्तर परके लेट गया। मजु भी सो गयी। लेकिन मनोहरकी आँखोंका और नींदका आज बारहवाँ चन्द्र था। बार-बार अुसके दिलमें अेक ही प्रश्न अुठता था 'मजु बात क्यों छिपाती है? अुसे क्या चाहिये?' अेक आशंका हुअी। 'यह सब विषय वासनाकी बेचैनी तो नहीं है? लेकिन अगर यह बात भी हो, तो वह छिपाती किसलिये है?' यद्यपि अुसके मनमें

तो कोअी कह ही रहा था कि वह कहाँ छिपाती है ? अुसके हाव-भाव, अुसके रग-ढग और आँखें क्या नहीं दीखती ? पर अिस बीच अुसे मंजुका वह वाक्य याद हो आया और अुसने विरोध किया 'नहीं, नहीं, अैसा नही हो सकता। शादीके पहले अुसीने तो मुझे सावधान किया था। और फिर अभी तो वह पढ भी रही है।' अुसने सिर हिलाया। 'अूं हूँ, अभी मेरी या अुसकी अिच्छा तो..... फिर भी कल पूछ देखूँगा।' अिस तरह निपटारा करके वह देरसे सो गया।

अुस ओर मजु अपने बिस्तरमें पडे-पडे कोअी दूसरे ही विचार कर रही थी। मनोहरके प्रति अुसे सन्देह पैदा हुआ। सहसा अुसका दिल काँप अुठा। अुसे अपने सामने भविष्यका मरुस्थल दिखायी दिया। लेकिन यह केवल पल भरके लिअे ही। अिस सन्देहके लिअे कही कोअी बाह्य कारण न था, और यदि मान ले कि अैसा हो भी तो क्या मनोहर अुससे यह बात छिपाता—किसीका जीवन बरबाद करता—नही अैसा आदमी वह नही है, अिसका अुसे पूरा-पूरा विश्वास था। तब फिर अिस प्रकार विरक्त रहनेका क्या कारण है ! जबसे वह मनोहरके सम्पर्कमें आयी, तबसे अेक-अेक करके वह सारी घटनाओंको याद कर गयी, लेकिन अुसे कही लेश मात्र भी अिसका चिह्न नही दीखा। बहुत सोचनेपर अन्तमें अुसे लगा कि शायद अुसके विद्यार्थी-जीवनके कारण ही वे अैसा करते होंगे। बहुत देर बाद वह अपने मनसे यह कहकर कि 'चलो, ठीक है।' सो गयी।

सुबह मनोहरने अपनेको जगाते हुअे मजुको विशेष खुश देखा। अिसलिअे रातको अुसने जो बात तय की थी वह 'अब तो बादमेंही पूछूँगा'—अैसा सोचकर नहा-धोकर ट्यूशनके लिअे चल दिया। दोनो ट्यूशन निपटाकर, लौटकर खा-पीकर दफ्तर जानेके लिअे तैयार हो गया।

मजुको पिछली रातवाली नयी ट्यूशनकी बातका स्मरण हो आया। अुसने पूछा, 'क्या तीनों ट्यूशन कर आये ?'

'अभी तीनो कैसे हो सकती हैं ? तीसरी तो शामको ही हो सकेगी।' मजुने कटाक्ष किया, 'अेकाध चौथी भी मिले तो कर लीजिअे।' जानेकी जल्दीमें मनोहर अिसका मर्म नही समझ सका। वह सीढियाँ अुतरते हुअे बोला, 'देखता हूँ, यदि कही मिल जाअे तो।'

अेकाकी मजु व्यग्र हो अुठी। लेकिन थोडी देर बाद न जाने क्यो अुसके अधर हास्यसे फडकने लगे।... भान आनेपर वह भी कपडे बदलकर कॉलेज चल दी।

अुसी रोज शामको ट्यूशनसे लौटते ही छज्जेमें बैठी हुअी मंजुको मनोहरने कहा, 'मंजु, घूमने चलोगी ? आओ चाँदनीमें थोडा मजा आअेगा।'

'चलिअे।'

'तो तुम कपडे बदल लो।'

'बिस्तर करके निश्चिन्त होकर ही चलें'— कहती हुअी मजु अुठी और 'आज बारिशकी कोअी सभावना नहीं है, छज्जेमें ही बिस्तर लगा देती हूँ'—कहकर वह अन्दर गयी। मनोहर भी अपना कोट निकालकर बिस्तर करनेमें मदद करने लगा। मजुको दीवारसे हाथ भर दूर बिस्तर करते देखकर वह बोला, 'थोडा और भीतकी ओर जाने दो न ? बीचमें आने-जानेका रास्ता—'

'अजी महाशय, दीवारकी ओर कोअी जन्तु आदि चढ आअेगा। अैसा ही रहने दीजिअे। यही ठीक है।'

बिस्तर हो जानेपर मनोहरने देखा कि दोनो बिस्तरोके बीच मुश्किलसे अेकआध बालिश्तका अन्तर होगा। अुसकी हृदतन्त्रीके सारे तार झनझना अुठे। खडे होते हुअे अुसने कहा, 'लो अब क्यो सो रही हो, क्या चलना नही है ?'

'आग लगे अिस घूमनेको ! मेरा तो सिर चढ गया है !' मजुने लेटे-लेटे ही जवाब दिया।

मनोहर कुछ समझ न सका। अितनी सी देरमें और सिर कहाँसे चढ गया ? लेकिन फिर अुसे तुरन्त ही खयाल आया। ठीक है। बिस्तर आदि अुठानेमें चढ गया होगा।

'लो मैं बाम मल देता हूँ।' कहकर वह 'अमृतांजन' की शीशी ले आया और अपने बिस्तरके अेक छोरपर बैठकर मजुके मस्तकपर मलने लगा।

'अरी......' बाल खींचते हैं।' मजुने दर्द भरी आवाजमें कहा। 'अच्छा, अब नहीं खींचूंगा।' कहकर वह मजुके कुछ अधिक निकट सरक गया और बाल ठीक करके फिर मलने लगा।

मजु आँखें मूंदकर चुपचाप पड़ी रही। बीच-बीचमें अुठनेवाली भारी श्वास दर्दकी थी या शांतिकी यह समझना कठिन था। कभी-कभी वह अपने सारे अंगोंको मरोड़ती और अंगड़ाअी सी लेती।

जिस तरह मलते-मलते जब काफी देर हो गयी, लेकिन मजुने मना न किया तो वह 'लो अब अुतर जाअेगा'—कहकर मलना बन्द करके शीशी रखने अन्दर गया।

लेकिन अुसने वापस लौटकर देखा तो मंजु अपने दोनों घुटनोंके बीच सिर रखकर बैठी थी। बेचारे मनोहरको क्या पता कि अुसके तो रोम-रोममें चन्द्रिकाका प्रसार हो चुका था? अुसने पास बैठते हुअे पूछा, अब भी दर्द हो रहा है मजु?' और मजुको चुप देखकर वह धीरेसे अुसका सिर अूपर अुठानेकी कोशिश करने लगा। प्रश्न तो कर ही रहा था, 'बोलो न? कुछ कहो तब तो समझ पड़े न?

तपाकसे मजुने अपना मुंह अूपर अुठाया और तड़ाकसे मनोहरके गालपर अेक तमाचा लगाते हुअे कहा, 'यह होता है। क्या बिल्कुल ही मूर्ख हो? कुछ समझते ही—'

बस खतम! मनोहरके रोम रोममें जैसे कोअी नशा छा गया। क्षणभरमें वह समझ गया कि अिस चपतके प्रभावके आगे संयम और विवेक बिल्कुल व्यर्थ हैं। अबतक रोके हुअे मनके बंधन टूट गये। और मनोहरके आवेशने पागल बनकर बहनेवाले पानीकी तरह अपनी मर्यादा छोड़ दी।

आकाशमें विहार करता चाँद जैसे किसीको कोअी बात कहनेके लिअे आतुर हो गया हो अिस प्रकार बादलोंमें दौड़ता हुआ मन्द मन्द मुसकरा रहा था।

—(गुजरातीसे अनुवादक: श्री गौरीशंकर जोशी)

कविता जीवनकी आलोचना है

"मानव-जीवनके साथ कविताका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यों कविताने समग्र जगत्‌के जड़-चेतनको अपने दायरेमें लपेट रखा है, फिर भी वह मानव-जीवनका निरूपण करती है। मनुष्यने कविताका निर्माण किया और अुसके अन्दर अपने समस्त जीवनको, विचारोंको और अनुभवोंको प्रतिष्ठित किया। कविता वास्तवमें जीवनका दर्पण है और अेक अंग्रेजी आलोचकका कथन है कि वह जीवनकी व्याख्या है—आलोचना है।"

रूसी लोकसाहित्यमें विलाप-गीत

: श्री वी. राजेन्द्र ऋषि :

[लिखक श्री राजेंद्र ऋषि अेम अे. 'प्रभाकर और रूसी भाषा तथा साहित्यमें अधिकृत रूपसे अुपाधि प्राप्त हैं। आप गत १९५०-५२ तक मास्कोके भारतीय दूतावासमें कार्यकर्ता रहे और रशियन भाषा तथा साहित्यका विशेष अनुशीलनकर डिप्लोमा प्राप्त कर चुके हैं। ऋषिजी अेक ५०००० शब्दोंका रूसी हिन्दी कोश बहुत शीघ्र भारतीय भाषा साहित्य भंडारको दे रहे हैं।—सं.]

विशेष ममत्व अेव कवित्वपूर्ण रुदन करके मृतकके लिअे शोक-व्यक्त करनेकी प्रथा संसारमें बहुत प्राचीन-कालसे चली आ रही है। अैसे मृतक-विलाप रूस, सीरिया, मिस्र, भारत यूनान, रोम और यूरोपके सब देशोंमें मिलते हैं। रूसमें अुनका जन्म मृतकके प्रति केवल अपना निजी शोक तथा दुख प्रकट करनेके लिअे ही नहीं हुआ। अिसके अन्य भी कअी कारण हैं। रूसी मृतक-विलापोंमें हमें महत्त्वके तत्व मिलते हैं।

प्राचीन रूसी पूर्वज यह अनुमान भी नहीं कर सकते थे कि मृत्यु प्राणीका पूर्ण नाश है। अुनका विश्वास था कि प्राणी मृत्युके बाद भी जीवित रहता है तथा अुनके परिवार या कबीलेकी रक्षा करता है अथवा अुसको दण्ड देनेकी क्षमता रखता है। अुनका यह भी विश्वास था कि मृतक अुसको सम्बोधित किये गये शब्द और प्रार्थना भी सुन सकता है। अिसी विश्वासके आधारपर मृतकका सम्मान करनेकी प्रथा चली। रुदन-विलाप करके मृतकके रिश्तेदार तथा अुसके कबीलेके लोग अुसकी प्रशंसा करते थे। अुनका विश्वास था कि अिस प्रेम अभिव्यक्ति द्वारा वे मृतकसे अपने कल्याणके लिअे प्रार्थना कर सकते हैं तथा भविष्यमें अुसके क्रोध और शापसे बच सकते हैं।

प्राचीन रूसी गाँवोंने अिन विलाप-गीतोंमें सुन्दर भावात्मक कृतियों, पूर्ण कलात्मक पात्रों तथा गम्भीर अनुभूतियों और अभिव्यक्तियोंका सृजन किया है।

अिन विलापोंकी महत्ता केवल अुनके कवितापूर्ण गुणोंमेंही नहीं है। बल्कि प्राचीन रूसके मृतक विलाप क्रान्तिपूर्व रूसी गाँवोंका दुखमय चित्र भी खींचते हैं। परिवारके पालक पिताकी मृत्यु हो गयी— अुसकी पत्नी और बच्चोंकी सहायता तथा पालन-पोषण करनेवाला कोअी नहीं रहा। विधवा अपने भाग्यपर फूट-फूटकर रोती थी। अब अुसकी तथा बाल-बच्चोंकी अधिकारी वर्ग, जमीदारों और पुलीससे रक्षा करनेवाला कोअी नहीं, खेती-बाड़ीके कामको सम्भालनेवाला कोअी नहीं। अब अुसकी छोटी-छोटी लड़कियोंको बुद्धि देनेवाला तथा अुनकी सहायता करनेवाला कोअी नहीं रहा। बड़े कष्टसे कमायी थोड़ीसी पूंजी तथा जायदाद कर्ज और टैक्स चुकानेमें चली गयी। कमसिन बच्चोंको भीख माँगने या पराये लोगोंकी दासता या सेवा करनेके सिवा और कोअी चारा नहीं रहा।

माँ मर जाती—अुनकी विवाह योग्य लड़की अुसके लिअे फूट-फूटकर रोती। अब दुष्ट पड़ोसी अुसका जीना दूभर कर देंगे। वे अब अुस अनाथ, बेचारीका मज़ाक अुड़ाअेंगे। अुसे गालियाँ देंगे और तरह-तरहकी तोहमतें लगाअेंगे।

जवान लड़का मर जाता— माता-पिता अपने बुढ़ापेके अेक मात्र सहारेको रोते। अब अुनकी किसीका आवश्यकता नहीं रही। अब अुनपर कोअी तरस नहीं खाअेगा। अुनकी परवरिश करनेवाला तथा बीमारीमें देख भाल करनेवाला अब कोअी नहीं रहा।

कलात्मक रूपमें किये गये ये रुदन और विलाप न केवल मृतकको दफनानेके समय अुपस्थित श्रोतागणोंके हृदयोंको कम्पायमान कर देते थे, परन्तु आज भी पुस्तकोंमें लिपिबद्ध होकर वे पाठकोंके दिलोंको हिलाकर पिघला देते हैं। यह सच है कि सभी रुदन करनेवाले

अिन विलापोंका अभिनय समान रूपसे सुन्दरता तथा स्पष्टतासे नहीं कर पाते थे। प्रत्येक विधवा या अनाथ अपनी अपनी क्षमताके अनुसार अपने ही ढंगसे विलाप किया करते थे। परन्तु प्राचीन रूसमें अिस कलामें निपुण बड़े बड़े अभिनेता भी थे जिनकी जीविकाका सहारा केवल दूसरोंके लिअ मृतक विलाप करना था। बहुतसी असी स्त्रियाँ थीं जिनका व्यवसायही मृतक विलाप करना था। वह घर घर घूमा करती थीं* और जो लोग स्वयं विलाप करनेमें असमर्थ होते थे वे अुनकी ओरसे विलाप किया करती थीं। असी विशेष प्रतिभा सम्पन्न कुछ स्त्रियोंका नाम रूसी लोक साहित्यके अितिहासमें सदा जीवित रहेगा। आजकल अुनके विलापोंका संग्रह किया जा चुका है और वे पुस्तक रूपमें अुपलब्ध हैं। अब वे विश्व लोकसाहित्यका अेक अमूल्य अंग बन चुके हैं।

अिस विषयमें अुत्तरी रूसके ओलोनेत्सकी गाँवकी किसान महिला अिरीना अन्द्रअेवना फ्दोसोवाका नाम विशेषकर अुल्लेखनीय है। अपनी युवावस्थामें स्वयं गोर्कीने अुसे विलाप करते सुना था और अुसकी स्मृतिमें अुन्होंने सुन्दरतम पाठ लिखे हैं। अिरीना अन्द्रअेवनाको तीस हजारसे भी अधिक विलाप मुँह जबानी याद थे।

प्राचीन रूसमें मृतक विलापोंका प्रयोग समाजके विभिन्न वर्गोंमें किया है। जारकी बोयारों (रओीसों)का सौदागरोंकी तथा बड़े बड़े जमींदारोंकी मृत्युपर विलाप किये जाते थे। सम्राटके महलमें तथा गाँवकी झोपड़ीमें समान रूपसे विश्वास किया जाता था कि मृतकके कमरेमें खिड़कीके पास साफ पानीसे भरा हुआ बर्तन रखना चाहिअ ताकि मृतक आत्मा अुसमें स्नान कर सके। मृतक शरीरको घरसे बाहर ले जाते समय बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिअ ताकि मृतक शरीर किवाड़की चौखटसे न छू जावे वरन् घरमें दूसरी मृत्युका होना अनिवार्य है। दुपहर और शामको खाना खाते समय मेजपर फालतू चीजें रखनी चाहिअं ताकि मृतक गुप्त रूपमें परिवारके साथ खाना खा सके अित्यादि।

प्राचीन रूस अिन रस्मोंको बड़ी सावधानीसे पालता था। अिनसे सम्बन्धित शकुना और अपशकुनों पर अुनका पूर्ण विश्वास था।

पीटर प्रथम द्वारा किये गये सुधारोंके परिणाम स्वरूप अुच्च वर्गके लोगोंका जीवन यूरोपीय ढंगपर तेजीसे बदलता गया। जार और बोयारों (रओीसों)के हरमोंसे विलाप गीत भी धीरे धीरे लुप्त होते गये। सौदागरोंके मध्य यह विलाप गीत चिरकाल तक प्रचलित रहे परन्तु बादमें अुन्होंने भी अिन गीतोंको भुला दिया। रूसमें क्रान्ति पूर्व अन्तिम वर्षोंमें मृतक विलापों और दफनानेकी प्राचीन रस्मोंका प्रयोग केवल गाँवोंमें ही किया जाता था।

मृतक विलापोंको लिपिबद्ध करनेका काय अत्यन्त कठिन है। अस समय जब मृतकके रिश्तेदार विलाप कर रहे हों लिपिबद्ध करना बिल्कुल असम्भव है। व्यवसाय रूपसे विलाप करनेवाली जो फुरसतके समय अपनी कृतियोंका संग्रहकर्ताके सामने दुहरा सकें अब रूसमें विरली ही मिलती हैं। फिर भी रूसमें विलाप गीतोंको संग्रह करनेका बड़ा सराहनीय कार्य हुआ है। रूसी महिला अन० कोवाकोवाने अपनी पुस्तक कुलीगा ओ हस्कोम फोकलोरय (रूसी लोक साहित्य)में कुछ असे विलापोंको अुद्धृत किया है।

अेक बार कोवाकोवा रूसी लोक साहित्य विषयक सामग्रीका संग्रह करने गाँवोंमें घूम रही थी। वहाँ अुसे अेक बुढ़िया मिली जिसका व्यवसाय क्रान्तिपूर्व रूसमें दूसरोंके लिअ विलाप करना था। कोवाकोवाने हठ करके तथा चालाकीसे अुस बुढ़ियाको विलाप-गीत सुनानेके लिअ राजी कर लिया। बुढ़िया अेक बेंचपर बैठ गयी और अपनी ठोढ़ी अपने हथेलीपर रखकर कहने लगी

* गुजरात, सौराष्ट्र पंजाब और राजस्थानमें भी अिस प्रकारकी प्राचीन प्रथा है। कओ मौके असे आये जब प्रौढ़ या बूढ़ी औरतों द्वारा छाती पीटने शोकगीत गानेके-और मातम मनानेके अनोखे दृश्य हमने देखे हैं। --स

"अब मैं तुम्हें ठीक अुसी प्रकार विलाप करके दिखाती हूँ जिस प्रकार मैंने अपनी बहिनके साथ मिलकर अपने पिताकी मृत्युपर विलाप किया था।"

बुढ़िया धीरे-धीरे परन्तु प्रिय और शोकजनक स्वरमें गाने लगी :—

कुदा ती, मोयो जाकोन्नोये सेम्येयूशको,
ओनप्रावल्यायशस्या ?
ओस्तावल्यायश्.ती मिन्या, पोबेदनूयू गोलोवूशकू,
स कयेम् या श्चिबूटू, पोबेदनाया गोलोवूशका ?
रासप्रोस्तीस् काक ती स खोरोमनोय पोस्त्रोयेन्नयेम,
ओ सो ओतोयेयो पान्नानोय बेलोकामेन्नोय,
ओ सो सेर्देचोनीमो रोझोनीमो देतूशकामो।
ओ रासप्रोस्तीस् काक ती सो ड्वोरोवोय मो स्कोनोनूशकोय,
ओ सो ओनोमो पोल्यामो खलेबोरोदनोमो,
ओ सो ओनोमो लूगामो सेनोकोस्नोमो।
ती पोस्लूखाओ-का, रोदोत्येल् मोय तानेन्का,
स कयेम् मी श्चिब् बूद्येम नोन्, पोबेदनोये गोलोवूशको ?
ओ काक मो बूदेम आपालोवाच् पोल्या दा खलेबोरोदनोये
ओ ओबकाशोवाच लूगा दा सेनोकोस्नोये ?
रोस्तोम-वज़रोस्तोम् वेद मी दा नोन् मालेद्येन्को,
ने ओबराबातोवाच नाम कॅम्न्यान्कोय राबोतूशको,
ओ ने आपालोवाच् पोल्येयी दा खलेवोरोदनोख,
ओ ने ओबकाशोवाच् लूगोव दा सेनोकोस्नोख......

[अर्थात्—
कहाँको तू, मेरे कानूनी परिवार, सिधार रहा है ?
छोड़ रहा है तू मुझे, बिचारी गरीबनको,
मैं किसके सग रहूँगी, गरीबन बिचारी ?
अिन महल बाडियोंसे तू कैसे विदा लेगा,
और सफेद पत्थरके बने अिस घरसे,
और अपने जाये प्यारे बच्चोंसे।
और डगरोंसे बाड़ोंसे कैसे विदा लेगा,
और अन्न-अुपजाअू अिन खेतोंसे,
और घाससे ढँपी अिन चरागाहोंसे।
तू, सुन मेरे प्यारे बापू,
अब हम किसके सग रहेंगे गरीब बेचारे ?
डंगरोंकी हम कैसे देख-भाल करेंगे,
और अन्न-अुपजाअू खेतोंकी कैसे जोताओ करेंगे
और घाससे ढँपी चरागाहोंको कैसे काटेंगे ?
बुद्धिसे तो हम सब बुद्धू हैं,
आयु व कदमें अभी बहुत छोटे हैं,
और अन्न-अुपजाअू खेतकी जोताओ नहीं कर सकेंगे,
और घाससे ढँपी चरागाहोंको नहीं काट सकेंगे......]

बुढ़िया विलाप करती-करती रुक गयी और कहने लगी :—

'नहीं, नहीं, यह काम बहुत कठिन है। आवाज भी नहीं अुठती। और मृतकोंको याद करना भी तो बहुत शोकजनक है। पिताकी मृत्युके पश्चात् हम अनाथ हो गये थे। माँ हमारा पालन-पोषण करनेमें असमर्थ थी। जीविकाका कोअी साधन नहीं था। माँ व्यवसाय-रूपसे लोगोंके लिअे विलाप किया करती थीं। भला आँसू बहाकर भी कहीं जीविका चलती है। हमारी झोंपड़ीपर दरिद्रताका राज्य था। जीवनमें मैंने बहुत दुख अुठाया है। यही कारण है कि ये शोकजनक शब्द अब मेरी हड्डी-हड्डीमें रच गये हैं......"

बुढ़िया चुप हो गयी। कोन्याकोवाने बुढ़ियाका ध्यान आकर्षित करनेके लिअे अुससे पूछा :—

"और तू बूढ़ी अम्मा, विवाहोंमें भी जाया करती थी ? विवाहिताके साथ रुदन करने ?"

"नहीं बेटी, विवाहोंपर तो मैं नहीं जाती थी। कभी-कभी रंगरूटोंके प्रति रुदन करने अवश्य जाया करती थी" बुढ़ियाने अुत्तर दिया।

"रंगरूटोंके प्रति रुदन-विलाप" यह कृतियाँ भी मृतक-विलापोंसे बहुत मिलती-जुलती हैं। स्वेच्छाचारी बादशाह जारोंके समय रूसमें फौजी रंगरूट कभी वर्षोंतक लौटकर नहीं आते थे। साधारणतः वे बूढ़े होकर ही वापस अपने गाँव आते। अिसलिअे अुनको भी मृतकोंकी भाँति ही रोया जाता था। विदाओ करते हुअे मृतकको ही तरह अुनपर विलाप किये जाते थे।

बुढ़िया फिर बोल अुठी —

'हमारे यहाँ पहिले रंगरूट वर्षोंके बाद लौटते थे। वहाँ सामने देखो, वह जहाजोंके ठहरनेका स्थान। बस

ठीक वहाँ ही अुनको--जानके टकडोको--विदा किया जाता था। वहाँसे अुनको पेत्रोजावोन्स्क और फिर पीतरबुग (लेनिनग्राद) ले जाया जाता था। वहाँसे सीधा रणक्षेत्रमें। मेरे तो कोअी लड़का नहीं था केवल लड़कियाँ ही थी। परन्तु मेरी बहनके दो लड़काको ले गये थे। तब मने अुनके लिअ विलाप किया था। अिस प्रकार।' बुढियान फिर शोकजनक रूसी तान निकाली —

ती पोस्लूखाअी-का सेर्देशनो मोयो दित्याटको
अुस काक वेवना कूचोसाया गोलोवूनका
काक या स्पजदीला जा ओनगुसको सप्राविसा
काक वस्तोदीला या व वोयन्नोयवो पोसुसवोय
काक स्तोअित मोयो सेर्देशनो रोशोनो दित्याटको
काक वो अतोम वो वोयन्नोम वो प्रीसुसवोअी
काक या ग्लयाम्यू स्मोत्र्यू कूचोसाया गोलोवूनका
काक स्ताला स्ताविच सेर्देशनो मायो दित्याटको
वा पोद अतूयू पोर्ग मेरू गोसुदारस्तवू।
जाप्रोशाली मेवो रेजवोय तुल नोझ को
पोद अतोय पोद मेरोय गोसुदारस्तवोय।
ताक अुस जानीलो यवो रेतलीयोय सेर्देचुशको
अुशोवला यवो तोस्का वलीकाया कूचोनशाका
ताक अुस अुनीव्रला मी या वेलीकाया कूचीनशारा
ताक अुस घदना पोवदनाया गोलोवनका
ओ काक सवोदीला ओ वो कुजनो सु झलेजनूय
ओ स्कोवाला ओ त्री ओवरुचा झलेजनोय
ओदोन ओवरुच वलाला या ना स्वोयो मलादुम
गोलोवशकू
दुगोय ओवरुच वलाला या ना स्वोयो रेतलीयोय
सेदचशको
त्रनी ओवरुच वलाला या ना रेजवा स्वोअी नोझको --
ताक अस अुक्रपीला या स्वोय रेतलीयोय मस्चास्तनोय
सेदचशको

[अर्थात् —
तू सुन तो मेरे लाडले बच्चे
कितनी गरीबन हू शोकग्रस्त विचारी
मैं किस प्रकार ओनगशका* के बारेमें पूछ ताछ करने
गयी।
कसे दाखिल हुअी म फौजी दफ्तरमे
किस तरह मेरा लाडला जाया खड़ा था
किस तरह फौजके अिस दफ्तरमे
किस तरह देखा निहारा मैं शोकग्रस्त विचारीने
किस प्रकार धरने लग मेरे लाडले व चको
सरकारके अिस हुक्मके अधीन
अुसकी पतली पतली सु दर टाँग काँप रही थी
सरकारके अिस हुक्मके अधीन।
अुसका धड़कता हुआ दिल मरझा चुका था
अुसको गहरे शोकने ग्रस लिया था
मुझ भी गहरे शोकने ग्रस लिया था
गरीबन विचारीको
मैं कसे लोहारके पास गयी
और लोहेके तीन पट्ट तयार करवाय
अक पट्टा मने जवानके सिरपर रखा।
दूसरा मने अपने धड़कते हुअ दिलपर रखा
और तीसरा पट्टा मने अपनी पतली टाँगोपर रखा
अिस प्रकार मने अपने धड़कते हुअ अभागे दिलको
मजबूत किया]

अिस प्रकार प्राचीन रूसमें स्त्रियाँ विलाप किया करती थी' दुपट्टके छोरसे अपने आँसू पोछते हुअ बढ़ियान कहा। यह आँसू विलाप करते करते छोटी छोटी बूँदोंके रूपमें असके झुर्रीदार गालोपर जमा हो गये थे।

मृतक विलापों और रंगरूटी गीतोंके अलावा अन्य गम्भीर और जटिल भावनाओंको व्यक्त करनेके लिअे कवितामें अिस साधारण प्रकारका प्रयोग करके विलाप गीतोंमें बहुत कुछ भर लिया जाता था।

वर्तमान सोवियत-युगमें अक विशेष प्रकारके विलापोका निर्माण हुआ है। वे हैं विलाप कथायें। ये विलाप सोवियत भूमिके प्रमुख कार्यकर्ताओं और वीरोंकी स्मृतिमें लिखे गये हैं। विलाप-कथाओंमें अभिव्यक्त भावनायें किसी अपने निजी शोकको नहीं प्रत्युत समस्त जनताके शोकको व्यक्त करती हैं।

* लड़केका नाम

डायरीका अेक पृष्ठ :

मा निषाद प्रतिष्ठांत्वम्

: श्री राजेन्द्र यादव :

१२ अक्टूबर, १९५०

"हाँ, आपसे मिलिअे, आप हैं श्री राजेन्द्र यादव, कहनेको प्रगतिशील लेकिन मांसाहारके विरुद्ध कहानियाँ लिखते हैं।" मटर चाँपकर अेक बड़ा-सा टुकड़ा काँटेमें अटकाकर मुँहमें रखनेके पहले मेरे अुन मित्रने अेक नवागन्तुकसे परिचय कराया। रेस्त्राका माहौल, बात हँसीमें अुड़ गयी।

प्रगतिशीलताकी बात छोड़ दीजिअे क्योंकि प्रगतिशील होना आसान नहीं है और न होना कम खतरनाक नहीं है। सही-सही प्रगतिशीलता क्या है, अिसपर चारों तरफके विद्वान् अपने दिमागका तेल निकाले दे रहे हैं। लेकिन मैं बड़ी देर तक सोचता रहा कि क्या मांस न खाना अैसा प्रतिक्रियावादी है? यह कटाक्ष मेरे अुन मित्रने मेरी अेक 'दि नरभक्षी' कहानीको लेकर किया था, और चूँकि मैंने अपने अुन मित्रकी कविताओंके सारे शब्द लेकर अुसमें मजाक अुड़ा डाला था—अिसलिअे अुनकी बातको विशेष महत्व नहीं दिया। लेकिन जब वह कहानी अेक अच्छे साहित्यिक पत्रमें छपी, और कुछ ही समय बाद जैनियोंके अेक पत्र तथा सनातनियोंके कुछ पत्रोंमें अुद्धृत हुअी—तो वास्तवमें मैं चौंक पड़ा। कहीं मैं अिन प्रतिक्रियावादियोंका हथियार तो नहीं बनाया जा रहा हूँ?

काफी दिन हो गये, भगवानसे मेरा विश्वास कुछ अैसा अुठा कि फिर जमता ही नहीं दिखायी देता। बड़े लोग कहते हैं, "सब जम जाअेगा, हमने बड़े-बड़े नास्तिक देखे हैं, बादमें सब मानने लगते हैं!" तो मैंने अुनकी बातको सच मानकर सोच लिया कि बुढ़ापेमें जम जाअेगा, तो देखा जाअेगा। अभी तो निश्चिन्त हो हूँ। सो भगवानके बोझको मैंने बुढ़ापेमें अुठानेके लिअे स्थगित कर दिया है।

भारतीय मनीषियों द्वारा किया गया सात्त्विक, राजसिक और तामसिक भोजनका विभाजन मुझे घोर अस्वाभाविक और अवैज्ञानिक लगता है। और मैं मानता हूँ कि मनुष्यके स्वास्थ्य और बुद्धिपर अिस भोजनका कोअी प्रभाव नहीं पड़ता—जो कुछ प्रभाव अिससे पड़ता दीखता है वह मनोवैज्ञानिक है। क्योंकि आपको अपने भौगोलिक कारणोंसे अैसी सुविधाअें प्राप्त हैं कि अपने यहाँ होनेवाले भोजनोंको आप तीन भागोंमें विभाजित कर डालते हैं—अुनमेंसे अेकको श्रेष्ठ बताते हैं शेषको निकृष्ट। मान लीजिअे अेक देश, या प्रान्तको ये सुविधाअें प्राप्त नहीं हैं और वहाँ केवल वही भोजन साधारणतया अुपलब्ध है (या कॉमन है) जिसे आपने तामसिक या राजसिकके घेरेमें डाल रखा है—जैसे समुद्रके तटवर्ती प्रदेशोंका साधारण भोजन मछली है—अब आपके लिहाजसे न तो वहाँके लोगोंका स्वास्थ्य ठीक है और न वहाँ प्रखर बुद्धि पायी जाती है, क्योंकि मांस मछली तामसिक भोजन है। और सीधा निष्कर्ष यह है कि चूँकि हिन्दुस्तानको छोड़कर—या कहें कट्टर हिन्दू धर्मको छोड़कर सारे संसारमें तामसिक और राजसिक भोजन किया जाता है। (व्यक्तिगत अुदाहरण छोड़ दीजिअे) अतः सारी बुद्धि प्रतिभाकी फसल हिन्दुस्तानमें ही होती है जब कि चिन्तन और बुद्धिके नामपर हिन्दुस्तानने जो कुछ दिया वह सब हवाअी है। प्रेक्टीकल और संसारको गति देनेवाला चिन्तन हमें अुन्हीं तामसिक और राजसिक देशोंमें मिलता है। और सच बात तो यह है कि भोजनोंसे बुद्धि तेज या मंद होती है यह विभाजन हमें अन्ततोगत्वा प्रान्तीयता, जातिवाद, अूँच-नीच और रक्तकी श्रेष्ठता (Racialism)

पर ला छोडता है— जिसका समर्थन केवल हिंलक ध्वसावशेष करत ह।

काफी सोचकर म पाता हूँ कि नही माम खानम कोअी बुराअी नहा है। लकिन कटत हुअ बकरकी आँखोंके दद और गोली खाय हुअ पक्षीकी तडपनका म क्या करू—जा मनपर आरकी तरह चल अुठती है! काश! सुअी चुभानपर मरे दद न होता चाकका घाव मुझ आनद द पाता तब तो शायद म अुस दृश्यसे अुदासिन हो सकता था। मन अक बार मुर्गी कटत देखी और मुझ तीन दिन न जान कसा-कसा लगता रहा। अब भी याद करता हूँ तो सिहरनस भर अुठता हूँ। जा आदमी काट रहा था— जितना प्रम न अपनी कार गुजारीपर वह था— अुतना म क्या नही हो पाता! म मानता हूँ कि मरी कमजोरी है म कच्चे दिलका आदमी हूँ, और वाधाको म सख्त प्रतिक्रियावादी मानता हूँ जिसने कहा है— विधिके बनाय जीव जते ह जहाँ तहाँ खलत फिरत तिन्ह खेलन फिरन देहु।

लकिन शिकारी प्रदेशका वह शैक्सपियर—?

अज यू लाअिक अिट'के दूसरे अकका पहला दृश्य अर्डेनका जगलम वनवासी—निर्वासित— ड्यूक अमीस और तीन लाड स।

ड्यूक कहता है, आओ चल अपन लिअ कुछ हिरन मार। लकिन यह चीज मुझ बडा ही कष्ट देता है कि अिस अकात स्थानम वास करनवाल य चित्तिअोदार खालवाले प्यारे पशु अपन घराम भी हमारे तीरो और भालासे बच जाअें?

पहला लाड अुत्तर देता है— सचमुच महाराज जकसको अिसीका अफसोस है। म और वह जगलम चुपचाप गय थ वहाँ—अक आकके नीच जिसकी पुरानी जड नालेके अूपर झाँकती है अपन दलसे बिछुडा हुआ बचारा अक बारहसिगा जो शिकारीके निशानम घायल हो गया था— मरन आया था— और म आपसे सच कहता हूँ महाराज कि वह बचारा अभागा पशु अितन जोरसे दुखपूण अुछवास छोड रहा था कि अुसके निकलनसे अुसकी खाल जैसे फटी पडती थी। और अकके बाद अक बड करुणोत्पादक ढगसे धार बाँध हुअ बड-बड आँसू अुसकी प्यारी नाकपर ढुलके पड रहे थ।

अिस प्रकार अुस वहन नालेके दूसरे किनारेपर खड हुअ रूअदार खालवाल अुस अभाग जानवरन जकसको बडा दुखी कर दिया है! और अिसी प्रकार वह बताता है कि जानवराको अुनके घरामें जाकर मारनवाल हम शहरी कम अत्याचारी और न ास ह!

बहुत कोशिश करनपर भी म सोशामाका कहानी प्रम नहा भूल पाता। जितन करुणापूण ढगस अुसन यह कहानी कही है। वह अपन चचेरे भाआ काल्के यहाँ शिकार खलन गया! व बदूक बाँधकर जगलम पहुँचे और सुबहकी फूटती रोशनीम हसा (डक) को मारन लग। दो कुत्त अुनक शिकारोका ला लाकर पास रखने जा रह थ। व लाग चलनको ही थ कि दो हस लम्बी गदन और फल पख सामनसे अुडकर गुजर। मन गोली चलायी और अुनमसे अक ठीक पराक पास आ गिरा—यह छाटा जानिका सफद रगकी छाती वाला हस था। तभी मन सिरपर फल नील आसमानम चिडियाका अक आवाज सुना—वह अक टूटी-फूटी दहरा

दुहराकर सुनायी जानेवाली-बडी हृदय विदारक चीत्कार थी। और वह छोटीसी चिडिया जो बच गयी थी, नीले आसमानमें अपने अुस मरे हुअे साथीको देखती, जिसे मैं हाथमें अुठाये था,—हम लोगोंके सिरोंके अूपर चक्कर लगाती मँडरा रही थी। कार्ल घुटनोंपर झुका कन्धेपर बन्दूक रखे, बडी अुत्सुकतासे देख रहा था कि वह बन्दूककी मारकी सीमामें आ जाअे। "तुमने हंसिनीको मार दिया है-अब हंस नहीं अुडेगा!" वह बोला।

सचमुच वह नहीं अुडा और चीत्कार करता हुआ लगातार हमारे सिरोंपर मँडराता रहा। शायद मुझे जिन्दगी भर कभी कष्ट-पूर्ण रुलाओको सुनकर अितना दुख नहीं हुआ जितना अुसकी अुन असहाय प्रार्थनाओंको सुनकर,—जितना अुस बचारी छोटी-सी चिडियाके करुण अभिशापोंको सुनकर, जो शून्यमें खो गये थे! वह बार-बार अुडता और अुसके साथीका मोह अुसे बार-बार अिधर खींच लाता।

"अुसे जमीनपर रख दो। कार्लने मुझसे कहा"—"धीरे धीरे वह बन्दूककी मारके भीतर आ जाअेगा। और सचमुच वह पास आ गया—जैसे खतरेकी अुसे कोअी चिन्ता ही नहीं हो—वह अपने अुस पशु-प्रेममें अपने साथीके मोहमें जिसे मैंने अभी मार दिया था—बेहोश था! कार्लने फायर किया और जैसे झटकेसे वह डोरा टूट गया जो अुसे अितनी देरसे अुलझाये था—फिर जैसे कोअी काली चीज जोरसे गिर पडी। कुत्ता-भागकर अुसे मेरे पास अुठा लाया! मैंने अुन्हें अुसी थैलीमें रख दिया—वे ठण्डे पड गये थे—और अुसी शाम पेरिस लौट आया।

अेण्टन चैखवकी कमजोरी भी कुछ अिसी प्रकारकी थी। जब वह मेलिखोवोमें था-तब अक्सर मिलनेवाले अुसके पास आया करते थे। अेक बार प्रसिद्ध चित्रकार लेविटन, अुसका मित्र भी दो-अेक दिनको आया और वे लोग शिकारको गये। लेविटनने अेक जंगली मुर्गेपर गोली चलायी। मुर्गा अेक खुली जगह गिर पडा। चैखवने अुसे अुठा लिया और देखा-लम्बी चोंच, बडी-बडी काली आँखें,—और बहुत सुन्दर पर। मुर्गा आश्चर्यसे अिन लोगोंकी ओर देख रहा था। चैखवकी समझमें नहीं आया कि अिस अभागे मुर्गेका क्या करे! लेविटनके चेहरेपर वेदना अुमड गयी थी। अुसने अपनी आँखें बन्द कर ली और काँपती आवाजमें बोला—"तुम बडे अच्छे हो, अिसके सिरको बन्दूकके पिछले हिस्सेसे तोड डालो।" चैखवने अुत्तर दिया कि "भाअी, मुझसे यह नहीं हो सकेगा।" लेविटनने दो बार कन्धे झटके—आँखें झपकी। *वह बडा नर्वस हो रहा था। अुसने फिर चैखवसे* पक्षीको मार डालनेकी प्रार्थना की। आखिर चैखवने ही वह काम पूरा किया।—"अिस प्रकार संसारसे अेक सुन्दर प्राणी कम हो गया—" चैखवने सुवेरिनको अेक पत्रमें घटनाका वर्णन करनेके बाद कहा है—" और *दोनों बेवकूफ चुपचाप सिर लटकाये घर लौट आये*—"

शिकारकी बात याद आते ही संसारके सबसे बडे क्रान्तिकारी लेनिनके जीवनकी घटना याद आती है। अेक बार वे भी अपने अेक मित्रके साथ शिकार खेलने गये, और अेक जगह छिपकर चुपचाप बन्दूक लिये बैठ गये। तभी सामनेसे अेक लोमडी गुजरी, मित्रने कोहनीसे अिशारा किया, लेकिन लेनिन चुप। मित्रने फिर झटका दिया— लेकिन लेनिन फिर चुप। लोमडी निकल गयी। मित्रने झुंझलाकर कहा—"अजब आदमी हो, गोली क्यों नहीं चलायी?" गहरी साँस लेकर लेनिनने कहा—" यार, वह अितनी सुन्दर थी कि अुसे मार डालनेको मेरा मन ही नहीं हुआ।"

मेरी वह कहानी 'प्रगतिशील' है या प्रतिक्रियावादी मुझे नहीं मालूम। लेकिन सचमुच मैं दिलसे नहीं चाहता कि अुससे प्रतिक्रियावादियोंका कोअी भी अुद्देश्य सधे। फिर भी भावुकताकी बात नहीं है, यह बात मेरे दिमागमें नहीं घुसती कि हम तो सिर्फ अेक बातसे अैसे घायल हो जायें कि महीनों अुसे पाले रहें—कोअी हमें नोच ले तो लपककर घूँसा मारें—लेकिन दूसरेकी गर्दन काटनेको अपना खेल समझें अुसकी मौतकी तडपनोंसे आनन्द ग्रहण करें—और घर आकर सूरज-चाँद-तारे और ओसमें प्राणोंका आरोप करके कविताअें लिखें। क्या यह "मैं ही सबसे अधिक ठीक हूँ" की डिक्टेटरी प्रवृत्ति नहीं है? और अुस समय जब ये अपने आपको वाल्मीकिका वंशज बताते हैं तो जी होता है मुँह नोंच लें।

ध्वनि-रूपक :

प्रेममें भगवान

'स्व. टालस्टाय

[प्रारंभिक संगीतके बाद मार्टिनका स्वर अुठता है।]

मार्टिन . (स्वगत दुखभरा स्वर) हे भगवान, मुझे भी अुठा लो, तुम कैसे हो कि मेरा अिकलौता नन्हीसी अुमरका जो मेरे प्यारका बच्चा था अुसे तो तुमने अुठा लिया और मुझ बूढेको छोड़ दिया, अब मैं तुम्हें कैसे याद करूँ, क्यों याद करूँ ? मैंने अपने जूत गाँठनेके काममें कभी कोताही नहीं की। कभी किसीको धोखा नहीं दिया, फिर भी तुमने मेरी बीबीको अुठा लिया। सब बालक छीन लिये, अेक बच्चा था, बेचारा बे-माँका बच्चा अुसे मैंने पाला पोसा, बारह वर्षका किया। अुम्मीद बधने लगी थी, कि बुढापेकी लकडी बनेगा, अुसे भी अुठा लिया।

[तभी आवाज आती है]

बूढा यात्री मार्टिन हो क्या ? अजी मार्टिन।

मार्टिन कौन हो ? आओ आजाओ. ओ हो आप हैं ? यात्रा कर आये ?

बूढा यात्री हाँ कर आया, आठ वर्षसे तीरथ ही घूम रहा था, बडी शान्ति मिली, कहो तुम कैसे हो ?

मार्टिन मेरी क्या पूछते हो ? अेक लडका था। तीन बरसकेको अुसकी माँ छोड गयी थी, अेक बार सोचा था कि अुसे देहातमें बहनके पास भेज दूँ, पर दूसरेके घर बालकको जाने क्या भुगतना पडे, क्या नहीं, यह सोचकर अुसे अपने पास रखा। नौकरी छोडकर अुसे पाला। अब बारह वर्षका हो चला था, कि भगवानने अुठा लिया।

बूढा यात्री ओ हो तुम्हारा बेटा चल बसा ?

मार्टिन चल नहीं बसा, अुसे भगवानने मार डाला। भगवान बडे....

बूढा यात्री हरे राम हरे राम, मार्टिन भगवान जो कुछ करते हैं अच्छा करते हैं, घबराओ नहीं व सब ठीक करेंगे।

मार्टिन क्या ठीक करेंगे ? अब तो भाओी मुझे जीनेकी भी चाह नहीं रह गयी बस भगवान करे मैं जल्दी यहाँसे अुठ जाअूं। तुम्हीं कहो जगमें अब कौन आशा मुझे बाकी है ?

बूढा यात्री अैसी बात मुँहसे नहीं निकालते मार्टिन ! *ओीश्वरकी लीला भला हम क्या जानें कोओी* हमारा चाहा यहाँ थोड़े ही होता है। ओीश्वरकी मर्जी ही चलती है, अुनकी अैसी मर्जी है कि बच्चा चला जाओ, और तुम जीओ। अिसीमें कोओी भलाओ होगी। तुम जो निराशाकी बात करते हो अुसकी वजह यह है कि तुम बस अपने ही सुखके लिअे रहना चाहते हो।

मार्टिन अपने सुखके लिअे नहीं तो भला किसके लिअे रहना चाहिअे ?

बूढा यात्री ओीश्वरके लिअे मार्टिन, अुसने हम जीवन दिया, सो अुसीके लिअे हमें रहना चाहिअे। अुसके लिअे रहना सीख जाओ तो फिर कोओी क्लेश न रहे।

(क्षणिक सन्नाटा)

मार्टिन . (जैसे सोचता हो) ओीश्वरके लिअे हमें रहना चाहिअे।

बू. या हाँ, अुसने हमें जीवन दिया है।

मा. (पूर्ववत) लेकिन ओीश्वरके लिअे रहना कैसे होगा ?

बू. या वह तो सन्त लोगोंके चरितसे पता लग सकता है। अच्छा तुम बाँच तो सकते हो न ?

मा . हां हां, बांच लेना हूं ।

बू या : तो बस अिजीलकी अेक पुस्तक ले आना, अुसे पढना, अुसमें सब लिखा है । अुससे पता लग जाअेगा, कि अीश्वरकी मर्जीके अनुसार रहना कैसा होता है ।

मा अच्छी बात है, मैं आज ही जाकर बडे छापेकी अिजील ले आअूंगा, और छुट्टीके दिन, सातवे रोज पढा करूंगा ।

(अन्तराल संगीत फिर मार्टिनका आशा भरा स्वर)

मा यह क्यासे क्या हो गया । पढनेमें अैसा मन लगता है कि बत्ती बुझ आती है तभी पोथी छूटती है । अब बच्चेकी याद करके भी दुख नहीं होता, दारू भी छूट गयी । जीवनमें जैसे शान्ति आ गयी । आनन्द रहने लगा । हे भगवान्, तू ही है, तू ही जगदाधार है, तेरीही चाहा हो, (अिजीलके पन्ने पलटता है) आज तो छठा अध्याय पढना है, "जो तुझे अेक गालपर थप्पड मारे तो तू दूसरा भी अुसके आगे कर दे। जो कोट अुतारना चाहे कुरता भी अुसे सौंप दे । जो मांगे सबको दे । और जो ले जाअे अुससे तू वापिस कुछ ना मांगे, और जो तू चाहता है कि लोग तुझसे अैसे बरतें वैसेही तू अुनसे बरत ।" (क्षणिक सन्नाटा, पन्नोंकी खड-खड) । 'तुम प्रभु तो पुकारते हो, पर मेरा कहा करते नहीं हो, जो मेरे पास आता है, मेरा कहा सुनता है, और फिर वैसाही करता है, वह अुस आदमीके समान है जिसने गहरा खोदकर अपने मकानकी नींव चट्टानपर रखी है बाढ आयी और लहरें टकरा-टकराकर हार गयी, पर मकान नहीं हिला पर जो सुनता है और करता नही, वह अुस आदमीके समान है, जिसने धरतीपर मकान खडा किया पर बुनियाद नहीं दी, आयी पानीकी बाढ और टकरायी कि मकान ढह पडा···" (फिर सन्नाटा) टकरायी कि मकान ढह पडा ! हूं, मेरा मकान चट्टानपर है, कि रेतपर ? चट्टानपर है तो ठीक है, यहां बैठे बैठे तो सब ठीक लगता है । जैसे अीश्वरकी मर्जीके मुताबिकही मैं चल रहा हूं । लेकिन और बातों कि मनमें विकार हो आता है । तो जतन मुझे नहीं छोडना चाहिअे । अच्छा अब सोअूं ··लेकिन मन नहीं करता । सो फिर सातवां अध्याय भी पढना शुरु करूं, (पन्ने पलटते हैं, पढता है, समय बीतता है, जोरसे पढने लगता है) तब प्रभु अुस स्त्रीकी ओर होकर साअिमनसे बोले अिस स्त्रीको देखा; मैं तुम्हारे घर अतिथि हूं, पर तुमने मेरे पैरोंपर पानी नहीं दिया, और यह है कि अपने आंसुओंसे अिसने मेरे पैर धोये और केशोंसे अुन्हें पोंछा है । तुम मुझसे बचे हो, और जबसे मैं आया हूं यह मेरे पैरोंको ही चूमती रही है, तुमने मेरे सिरपर भी तेल नहीं दिया और यह है कि मेरे पांव स्नेहसे भिगोती रही है.... ।" (सहसा रुककर सोचमें डूब जाता है) ... अुसने पैरोंपर पानी नहीं दिया, अुन्हें छूनेसे बचा, सिर तेल नहीं दिया, .. (अेक क्षण सन्नाटा, फिर बोलता है) वह आदमी मेरी तरहका रहा होगा, अपनी ही अपनी सोचता होगा । खुद अच्छा खा लेना और आरामसे रहना । बस अपना ही सोच, मेहमानकी चिन्ता नहीं, कुल अपना ही अपना अुसे ख्याल था, मेहमानकी तनिक परवाह नहीं थी । और मेहमान कौन ? स्वयं भगवान, जो कहीं वह मेरे घर पधार जावें तो क्या मैं भी वैसा ही करूं ?.....

(अैसे बोलते-बोलते स्वर धीमा पडता है, वह सो जाता है. रात्रिका संगीत अुठता है, फिर जैसे कोअी सूक्ष्म स्वरमें पुकारता हो ।)

स्वर मार्टिन,

मा. (चौंककर) कौन है ? (चलनेका स्वर) कौन है भाअी ?

स्वर. मार्टिन, कल गलीपर ध्यान रखना; मैं आअूंगा ।

मा. (चकित) यह कौन बोला, कौन हो तुम... ..अें . यहां तो कोअी नहीं ।" शायद मैं सपना देख रहा था, हां सपना ही होगा, नहीं तो अिस वक्त यहां कौन आता ? चलो सोअूं ।

(फिर सो जाता है, अन्तराल संगीत, फिर मार्टिनके जूते गांठनेका स्वर : अुसके बाद मार्टिन बोलने लगता है ।)

मा : (स्वगत) रात वह सपना था या सचमुच कोअी आया था, मुझे तो अैसा लगता है जैसे वह सचमुचकी आवाज थी, पहिले भी तो लोग वैसी

आवाजें सुनते रहे ह किसीके चलनकी आवाज कौन आ रहा है वही है क्या ? अरे यह तो वही है नय चमचमाने जूते पहन ह और यह कहार है और अब कौन ? (घिसे जूतोकी आवाज) ओह बूढा सिपाही स्टपान है किसीके घरमें रहता है। बचारा रात जो बरफ पड़ी थी अुसे हटान आया है (हस पडता है) म भी अुमरसे बूढा गया हूँ नही तो क्या ? देखो न कसे बहकन लगा हूँ, आया तो स्टपान है गली साफ करन और मुझ सूझा कि मसीह प्रभु ही आ गय ह। है न बात कि म सठिया गया हूँ (कहता हुआ जूते ठोकता रहता है कुछ क्षण केवल ठक ठक कर आवाज अुठती है) हूँ अब तो स्टपान बरफ हटा चुका होगा। देखू अरे यह तो दीवारके सहारे सुस्ता रहा है। बचारा बूढा भी तो बहुत हो गया है। कमर झुक गयी है। देहमें बल नही रहा। वह तो हाँफ सा रहा है। क्यो न बुलाकर अुसे चायके लिअ पूछू बनी हुभी तो है ही हाँ हाँ अुसे बुलाअ (खिडकी थपथपाकर पुकारता है) स्टपान भाअी स्टपान !

स्टपान० (दूरसे) कौन है ? क्या है जी ?

मा० आओ अन्दर आजाओ थोडा गरमा लो न तुम्हे ठड लग रही मालूम होती है लो दरवाजा खोलता हूँ (दरवाजा खोलनका स्वर) आजाओ अिधर।

स्टपान० भगवान तुम्हारा भला करे सचमुच मेरी देहमें सरदी बठ गयी है और जोड दद करते ह जरा पर झाड लू तो अन्दर आअू।

मा० अरे अरे गिर पडोग भाअी रहन भी दो फश झड जाअगा सफाअी तो रोज होती ही है कोअी बात नहा भाअी आजाओ, यहाँ बठो यहाँ बैठो और लो चाय पिओ।

स्टपान० (विनम्र स्वर) ह ह कसे धन्यवाद दू ? (दोनो चाय पीते ह) सचमुच गर्मी आ गयी आप कितन अच्छ ह ?

मा० लो अक गिलास और लो अरे लो भी (गिलास भरता है पीते ह) गरमी आअगी तो काम भी खूब होगा।

स्टपान० तुम तो भाअी सचमुच लेकिन तुम बार बार सडककी तरफ क्या देख रहे हो क्या किसीकी बाट जोहते हो ?

मा० बाट ? भाअी क्या बताअ ? कहते लाज आती है सच पूछो तो अिन्तजार तो नही है पर रात अक आवाज सुनी थी जो मनसे दूर नहा होती है। वह सचमुच कोअी था या सपना था। कह नही सकता कल रातकी बात है कि म अिजील बाच रहा था असमें प्रभु अीसाका वणन है न कि कसे अुन्होन दुख अुठाय और किस भाँति वह अिस धरतीपर प्रेम और भक्तिसे रहे सो तुमन भी जरूर सुना होगा।

स्टपान० सुना तो मन है पर म अपढ आदमी हूँ और समझना-बूझता कम हूँ।

मा० तो सुना भाअी अुनके जीवनके विषयकी बात है म पढ रहा था पढते-पढते वह प्रसग आया जहा मसीह अक धनवान आदमीके यहाँ जाते ह वह धनी आदमी मनसे अुनकी आवभगत नही करता।

स्टपान० फिर फिर क्या हुआ

मा० तुम्हे म क्या कह म सोचन लगा कि कही म होता तो जान क्या न करता पर देखो कि अुस आदमीन मामूली भी कुछ नही किया अिसी तरह सोचते सोचते मुझ नींद आ गयी फिर अकाअक जो जागकर अुठा तो असा लगा कि कोअी मुझ नाम लेकर धीमसे कह रहा है कि देखना अितजारम रहना म कल आअूगा।

स्टपान० सच असा हुआ ?

मा० असा दो बार हुआ सच कहूँ तो भाअी वह बात मेरे मनम बैठ गयी यो तो मुझ खुद शरम आती ह पर क्या बताअ मनम आशा लगी ही है कि खुद भगवान कही न आते हो।

स्टपान० बडी अजीब बात है शायद

मा० अरे लो तुम्हारा गिलास खाली हो गया बातोमें लगा रहा लो

स्टपान० नही-नही, अब नही।

मा० लो भाअी, पीओ भी (भरता है) हाँ म क्या कह रहा था हाँ म सोच रहा था कि अिस धरतीपर मसीह प्रभु कसे रहते थ। नफरत किसीसे नहा करते थ और मामूलीसे मामूली लोगोके बीच मिल जुलकर रहते थ हम जसे अधर्मी और पापी लोगोंको अुन्होन शरण देकर अुठाया था।

स्टे० सो तो है ही। वे प्रभु थे, प्रभु . ...

मा० . अुन्होंने कहा, जो तनेगा अुसका सिर नीचा होगा, जो झुकेगा वही अुठेगा, अुन्होंने कहा तुम मुझे बडा कहते हो, और मैं हूँ कि तुम्हारे पैर धोअूँगा, अुन्होंने कहा जो दीन है और दयावान है, और प्रीति रखता है वही धनी है।

स्टे० : (भावावेश) कितनी बढिया बात है, तुम कितने भाग्यवान हो मार्टिन्, जो प्रभुकी वाणी वाँच सकते हो, तुमने मुझे ये बाते सुनाकर धन्य कर दिया, धन्य कर दिया।

मा० अरे तुम तो रोने लगे, स्टेपाल लो अेक गिलास, बस अेक गिलास और लो।

स्टे नहीं-नहीं अब नहीं, मैं माफी चाहता हूँ, किस तरह तुम्हारा धन्यवाद अदा करूँ, तुम्हारा मुझपर बड़ा अेहसान हुआ, तुमने मेरे तन और मन दोनोको खूराक दी और सुख पहुँचाया, अब तो चलूँ . ...

मा० : अजी क्या कहते हो, कब तो अतिथि मिलते हैं। भाअी फिर भी अिधर आया करना। मुझे बडी खुशी होगी, (स्टेपान जाता है) गया, चलो मैं भी काम निबटा लूँ, (कुछ क्षण काम करता है फिर सिपाहीके जूतोंकी आवाज अुठती है) . कौन आया ? ओह सिपाही है। सरकारी जूते पहने हैं और वह मकान मालिक है, वह नानवाअी गया।...अरे हवा चल पडी है, खिडकी बन्द कर तू (कुछ चलता है) वह कौन दीवारके पास हवाकी ओर पीठ करके खडा है, अेक स्त्री हूँ, अुसकी गोदमें तो बच्चा है, अुसे ढकना चाहती है, पर कपडा तो अुसके पास है नहीं। जाडेमें गरमीके कपडे पहने हैं वे भी फटे हैं, (तभी बच्चा रो अुठता है, रोता रहता है, स्त्रीके चुपकारनेकी आवाज अुठती है, पर बच्चा नहीं चुपता, मार्टिन पुकारता है) सुनना भाअी अिधर सुना ?

स्त्री० मुझे बुलाया तुमने ?

मा० : हाँ, हाँ, मैंने बुलाया है, वहाँ सरदी में बच्चेको लेकर क्यों खडी है, अन्दर आ जाओ, यहाँ बच्चेको ठीक तरह अुढ़ा भी लेना, अिधर आओ, अिधर, (स्त्री आती है) वह खाट है, वहाँ बैठ जाओ, आग है ही, जरा गरमा लो, और बच्चेको भी दूध पिला लो।

स्त्री० दूध मेरे कहाँ है, सवेरेसे मैंने कुछ खाया ही नहीं है ?

मा० : तो फिर रोटी खा लो, शोरबा भी है, हाँ दलिया अभी नहीं हुआ, क्या हर्ज है रोटी-रसा ही लो, लो बैठ जाओ और शुरू करो, बच्चोको लाओ मुझे दो। देखती क्या हो ? मेरे भी बच्चे थे, देख लेना मैं बच्चोको खूब मना लेता हूँ।

स्त्री० : आप तो . क्या कहूँ ..... ?

मा० : कहती क्या हो ? बच्चा मुझे दे दो, हाँ आओ मुन्ना आजाओ, आजाओ, देखो अे, अे, मुन्ना राजा बेटा, (तरह-तरहकी आवाजें करता है पर बच्चा रोता रहता है) तुम तो भाअी, बडे बुरे हो, अच्छा हम तुम्हें गुद-गुदाअेंगे और हँसाअेंगे। अे हँसो, हँसो, यह देखो यह लो... (बच्चा चुप हो जाता है) देखो चुप हो गया है, पर हाँ तुमने यह तो बताया नहीं कि तुम कौन हो ?

स्त्री० : मेरा आदमी सिपाही था, कोअी आठ महीने हुअे जाने अुन्हें कहाँ भेज दिया गया तबसे कोअी खबर अुनकी नहीं मिली, नहीं मिली तो मैंने रोटी पकानेकी नौकरी कर ली। लेकिन जब यह होनेको हुआ तो काम छूट गया। अब तीन महीनेमें भटक रही हूँ। जो पास था सब बेच चुकी, सोचा धाय बन जाअूँ, लेकिन कोअी रखता ही नहीं,... ..

मा० रखे भी क्यों, कितनी दुबली दीखती हो। दूध कहाँसे अुतरेगा।

स्त्री० : सो तो है ही, अब अेक सेठानीके कहनेपर आयी थी, वहाँ हमारे गाँवकी अेक नौकरानी है, वहाँ गयी तो कहा--कि अगले हफ्ते तक फुर्सत नहीं है फिर आना, सो लौट रही थी, दूर जगह थी, आने जाने दम फूल गया, बच्चा बेचारा भूखा है, देखो कैसी आँखें हो गयी हैं।

मा० : (साँस भरकर) कोअी गरम कपड़ा पास नहीं है।

मा० : यह तो हम बड़ोंपर है न कि अपने अुदाहरणसे अुन्हें हम अच्छी राह दिखायें।

स्त्री : यही तो मैं कहती हूँ। मेरे खुद सात बच्चे हो चुके हैं। अुनमेंसे अब सिर्फ अेक लडकी है। अुनीके साथ रहती हूँ। कभी धेवती-धोवते हैं। बूढी हो गयी हूँ फिर भी अुनके लिअे काममें जुटी ही रहती हूँ। नन्हीं तो अब मुझे छोडकर किसीके पास जाती ही नहीं! (स्वर करुण) सो सच तो है अिस लडकेका बचपन या सेव अुठा लिया। अीश्वर अुसकी मदद करे। अच्छा चलूँ। जरा बोरा कमरपर रखवा दो, फिर टोकरी सिरपर ले लूंगी।

लड़का लाओ बोरा मैं ले चलूँ माँ। मैं अुधी तरफ जा रहा हूँ।

स्त्री हाँ, हाँ, ले चलो। तुम तो बडे अच्छे लड़के बन गये।

मा० : (हँसकर) सब अच्छे हैं, बुरा कौन है? अच्छा चलूँ, काम निबटा लूँ, वे तो गये! (चलता है)

मार्टिन . (ठक ठक होती है : अन्तराल) यह जूता पूरा कर ही डालूँ। (फिर ठक ठक, काँट छाँट, ठक ठक) हूँ अब दुरुस्त हो गया। ठीक है। आजका काम खतम हुआ। (औजार समेटता है) अब तो अिजील बाँचूँ। आज प्रभु आये तो नहीं। अच्छा अुनकी माया वे जाने। (पुस्तक अुतारने-रखने-पन्ने पलटनेका स्वर) आज तो यहाँसे पढ़ना है। अरे यह तो कलके सपनेवाला पन्ना है। (तभी जैसे कोअी चलता हो) कौन, कौन है? कोअी नहीं। पर वह अंधेरे कोनेमें कौन खडा है। (अिसी समय स्टेपानके स्वरमें कोअी बोलता है।)

स्टेपानका स्वर : मार्टिन मार्टिन, क्या तुम मुझे नहीं पहिचानते ?

मा० : (सन्देह) कौन? .

स्टेपान० (पास आकर) यह मैं हूँ!

स्त्रीका स्वर० : और यह मैं हूँ, (बच्चेकी हँसी)

सेववालीका स्वर : और यह मैं। (हर स्वरके बाद हर्षका संगीत)

लड़केका स्वर और यह मैं।

मा० (गदगद होकर) प्रभु प्रभु, तुमने क्या लीला दिखायी। तुमने किस किसको भेजा, प्रभु तुम धन्य हो। तुमने मुझे धन्य किया। (पन्ने पलटकर पढ़ता हुआ) *मैं भूखा था, और तूने मुझे खाना दिया, मैं प्यासा था तूने मुझे पानी दिया, मैं अजनबी था तूने मुझे ग्रहण किया, अिन भाअियोंमेंसे अेकके लिअे, अदनासे अदनाके लिअे जो तूने किया, वह मुझको किया समझ। जो दिया मुझे पहुँचा समझ।*

(पढ़ते-पढ़ते रुक जाता है) अहा यह तो मेरा सपना सच्चा हुआ, प्रभुने किसीको नहीं भेजा, वे स्वयं प्रभु मेरे घर सचमुच खुद पधारे थे, अुन्होंने ही मेरा आतिथ्य पाया था; खुद अुन्होंने। ओह प्रभु करुणा-निधान अब समझा। वह स्टेपान नहीं था, तुम थे। वह बच्चेवाली गरीब औरत नहीं थी, तुम खुद थे। वह सेववाली औरत और लड़का और कोअी नहीं थे, वह तुम ही थे। प्रभु, ओह प्रभु, आप मेरे घर पधारे, प्रभु मेरे घर पधारे (भावातिरेक और फिर शान्ति) : धन्य हो प्रभु, धन्य हो।*

---

* यह नाटक बडी सरलतासे रंगमंचपर खेला जा सकता है। अेक ही सैटकी आवश्यकता होगी। परिवर्तन, जो केवल समयके हैं— अधिकतर प्रकाशके अुतार-चढ़ावसे सूचित किये जा सकते हैं।

(रूपांतरकार:— विष्णु प्रभाकर)

औवैयार

: स्व० राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्य भारती :

सारे संसारमें स्त्रियोंके लिअे नीतिके नियम पुरुषोंके ही बनाये हुअे हैं। तमिल्नाडकी स्त्रियाँ भी राजनीतिके क्षेत्रमें छोटे दायरेके अंदर पुरुषोंकी निर्धारित नीतिके नियमोंको मानती थीं। तो भी आम तौरपर जन-समाज संबंधी आचार व्यवहारोंके संबंधमें तमिल्नाडमें हमेशा औवैयारके नीतिवाक्य तथा नीति-ग्रंथ ही प्रमाण माने जाते आ रहे हैं। पुरुषोंमें भी कुछ शिक्षित अल्प संख्यक लोग ही वळ्ळुवरका कुरल * 'नालडियार' आदिको प्रमाण मानते थे। अर्ध शिक्षित तथा अशिक्षित जनता स्त्री पुरुष सबके लिअे औवैयारके बनाये हुअे नीतिवाक्य ही पथ प्रदर्शक हैं। दो हजार सालोंसे औवैयारका नीतिशास्त्र ही तमिलनाड्-वासियोंमें बहुजनके लिअे प्रमाण रहा है।

आम जनता अुन्हें मानती है मानती थी। मेरा अैसा कहनेका मतलब यह नहीं है कि राजा तथा पंडित लोग अुन्हें अुपेक्षित समझते थे। पंडित, राजा पामर तथा जनता सब कुरल् नालडियार आदि ग्रंथोंसे अधिक औवैयारके ग्रंथोंको मानते और अुनपर गर्व करते आये हैं। (यहाँ यह भी स्मरण दिलाना चाहूँगा कि) हाँ अेक दल है जिसके लोग कहते हैं कि य नीतिग्रंथ दो हजार वर्ष पहले जो औवे जीवित थीं, अुनके बनाये नहीं हैं लेकिन अुस दूसरी औवेके बनाये हुअे हैं जो अक टी हजार सालके पहले जीवित थी। अस्तु।

औवैयार निरी साहित्यकर्त्री नहीं थीं। अुनके जीवनकालमें ही राजाओंने अुनके राजनीतिक ज्ञानको मानकर अुनको राजदूत बनाया था। यही नहीं, वे बड़ी दार्शनिक भी थीं। योग सिद्धिकी महिमासे अुन्होंने अपने शरीरको रोग व जरासे बचा लिया था और वे लंबी आयुतक जीवित रहीं।

> 'मासर्र कोळहै मनत्तमॅन्दक्काल्
> ओशनेक्का ट्टुम् अुडबु।'

(शब्दार्थ . मासर्र-दोषरहित कोळहै-सिद्धांत, मनत्तु-मनमें, अमॅन्दक्काल-रहें तो अुडबु-शरीर, ओशने-भगवानको, काट्टुम-दिखाअेगा।—अनुवादक)

अर्थात् हृदयमें पवित्र, निर्भय, कपटरहित, दोष-रहित, द्वेषहीन भावोंको स्थित कर त तो शरीरका दैवीपन यानी न मिटनेका भाव (अमरता) अुद्भासित होगा। यह कुरल' (दो पंक्तियोंवाला पद्य) औवेका है। ये स्वयं जिसमें प्रकटित अुपदेशके अनुसार अपना जीवन चला रही थीं यह बात अुनके जीवन चरित्रके अध्ययनसे स्पष्ट मालूम होती है।

अेक देशकी सभ्यताका अुस देशका साहित्य ही श्रेष्ठ प्रतीक है। अुदाहरणके तौरपर अंग्रेजी सभ्यताका शेक्सपियर प्रभृति कवियोंकी साहित्यिक कृतियाँ मानदण्ड समझी जाती हैं। मेकालेने अक बार कहा भी था कि हम चाहे भारतपर शासन करनेका अधिकार त्याग दें शेक्सपियरको छोड़नेको कभी तैयार नहीं होंगे।

अिस तरहकी गर्वोक्ति हम कम्बन्के नामपर कर सकते हैं। कुरलके रचयिता तिरुवळ्ळुवर, सिलप-धिकारके कर्ता अिळगोवडिगळ् और अैसे ही अन्य महानु-भावोंके नामपर कर सकते हैं। लेकिन अिन सबासे अधिक हम औवैयारपर गर्व कर सकते हैं जिनकी धाक स्वयं कम्बन तथा तिरुवळ्ळुवर आदिने भी मानी थी। अगर कोअी हमसे पूछ बैठे कि आप तमिल्नाडकी अन्य संपत्तिको खोने तैयार होंगे या औवैयारके रचित ग्रंथोंको? तो हम निःसंकोच कह सकते हैं कि अन्य संपत्तिसे वंचित रहना कोअी बड़ी बात नहीं है, अुनका फिर

* वळ्ळुवर— किसी लेखके अंदर पीछे अुनका जिक्र आता है। यू०अेन०ओ० ने अिनके ही कुरलका अंग्रेजी अनुवाद करानेकी योजना बनायी है।

अपने प्रयाससे तमिलनाड् निर्माण कर सकता है। लेकिन औवैयारके ग्रंथ ऐसे नहीं हैं। हम अुन्हें खोनेको कभी तैयार नहीं होंगे। वे दुबारा पैदा नहीं किये जा सकते। अुनके ग्रंथ हमारी सबसे श्रेष्ठ पुनः दुर्लभ संपत्ति हैं। क्या यह हमारी देवियोंके लिअे फख्रकी बात नहीं है कि तमिलनाड्की सम्पन्नताका अेक मात्र श्रेष्ठ प्रतीक अुसकी अितनी बड़ी दौलत, अितना अुज्वल अमर दीप अेक तमिल महिलाकी कृतियाँ हैं? हाँ, यह सिर्फ तमिल महिलाओंके लिअे कीर्तिवर्धक ही नहीं है, बल्कि ये कृतियाँ अुनके लिअे रक्षाके विधान भी हैं। अुस देशकी स्त्रियोंको, जिस देशमें औवैयार पैदा हुआी थीं, और चूंकि औवैयार भी स्वयं महिला थीं अुस वजहसे हमारे देशकी स्त्रियोंको किसी भी पुरुषसे कम समझवाली कह नहीं सकेगा, बेधड़क! अिस संबंधमें अिग्लैंडका अुदाहरण लीजिये।

वहाँ अेक दल है जो स्त्रियोंको पुरुषोंके समकक्ष मानने तथा अुनको पुरुषोंकी बराबरीके अधिकार देनेके विषयमें है। अुनकी दलील है कि स्त्रियाँ प्रकृतिसे ही पुरुषोंसे कम समझवाली हैं। अिसलिअे वे घरके अंदरके कामकाज करनेवाली सफल गृहिणी बन सकती हैं लेकिन बाहरके सार्वजनिक क्षेत्रोंमें बुद्धिके बलपर आधारित कार्य निबाह करनेकी शक्ति नहीं रखतीं। अिस दलीलकी पुष्टिमें वे कहते हैं कि पुरुषोंमें जैसे अेक कवि सम्राट शेक्सपियर पैदा हो सका वैसा क्या स्त्रियोंमें अेक कवियित्री पैदा हो सकी है? जो अुनकी बराबरीकी कविता कर सकी हो? पैदा नहीं हो सकी। क्यों? क्या अिस बातसे साफ साबित नहीं होता कि स्त्रियाँ प्रकृतिसेही पुरुषोंसे कम बुद्धि रखती हैं?

तमिलनाड्में यह दलील कारगर नहीं हो सकती, बल्कि अुसके विपरीत यहाँकी देवियाँ यह दावा कर सकती हैं कि औवैयारके समान ग्रंथ रचनेवाला कोअी पुरुष कवि यहाँ पैदा हो सका है? क्यों पैदा नहीं हो सका? क्या अिस बातसे यह स्पष्ट लक्षित नहीं होता कि पुरुष स्त्रियोंसे प्रकृतिसेही कम बुद्धि रखते हैं?

महिमाशालिनी दार्शनिक औवैयारका रचा हुआ 'औवैकुरळ' नामक ज्ञान ग्रंथ तमिलनाड्के योगी तथा सिद्धोंने अुपनिषद्वत् माना है। योगविद्या तथा मोक्ष शास्त्राध्ययनमें यह ग्रंथ आवश्यक शास्त्रोंमें अेक माना जाता है। अिसमें अेक और विशेषता है। साधारण तथा योगानुभूतिके संबंधमें लिखते वक्त लोग कठिन तथा अप्रचलित शब्दोंका प्रयोग करते हैं और दुरूह तथा जटिल वाक्योंमें भावोंको आबद्ध करना अनिवार्य तथा आवश्यक समझकर काम करते हैं। लेकिन औवैयारका ग्रंथ बहुत ही साफ, सुलझी हुआी रीतिसे लिखा गया है और सब लोग अुसे आसानीसे समझ सकते हैं। "कम शब्दोंमें पूर्णरूपसे भाव समझाना" कविताकी प्रमुख विशेषता है। अिस क्रियामें औवैयारको असाधारण दक्षता प्राप्त थी। अलावा अिसके, गंभीर विषयोंको सबके जानने योग्य सुलझाकर लिखना दैवदत्त प्रतिभासे ही हो सकता है, यह मामूली कवियोंके लिअे साध्य नहीं है।' अैसा स्वयं बड़े-बड़े विद्वान कवि भी मानते हैं। अिस अद्भुत क्रियामें भी औवैयार बेजोड़ थीं।

पुरुषार्थ यानी मनुष्य जन्मसे प्राप्य सर्वश्रेष्ठ फल चार हैं। वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष हैं। अिनमें मोक्ष मन और वाक्‌से परे है, अतः वर्णनातीत देखकर तिरुवळ्ळुवरने अुस पुरुषार्थका विस्तार अपने ग्रंथमें नहीं किया। बाकी तीन पुरुषार्थोंका ही विस्तार अुसमें पाया जाता है। चौथे पुरुषार्थका साधन जो भक्ति है, अुसपर ग्रंथके शुरूमें सिर्फ अेक अध्याय है। अिसी कारण वह ग्रंथ 'मुप्पाल'के नामसे (तीन पुरुषार्थवाला ग्रंथ) प्रसिद्ध है और स्वयं वळ्ळुवरको "मुप्पालिल् नार्पाल मोंविदान्" (तीन वर्गोंके अंदर चार वर्गोंका विस्तार देनेवाले) कहते हैं। अेक हजार तीन सौ तीस दो पंक्तियोंवाले पद्योंमें अुन्होंने तीनों पुरुषार्थोंका सम्यक् विस्तार बताया है। यह अद्भुत कार्य समझा जाता था। अिसको देखकर औवैयारने चारों पुरुषार्थोंको अेक ही वेण्बा (venba—चार पंक्तिवाला पद्य)के अंदर रखकर गाया है। वह अनोखा पद्य यों है —

ओदलरं, तीविनै विट्टीट्टल पोरुल, अन्‌ज्ञानृदम्
कादलिरवर् करुत्तोर मिन्—तादरव्
पट्ट दे अिन्बं, परनै निनैंदि म्मून्र
विट्ट दे पेरिन्बवीडु॥

शब्दार्थ यों हैं :—

औदल–दान करना। अर–धर्म है। तीविनै–अन्याय। विट्टु–छोड़कर। ओट्टल–धनार्जन करना। पोरुल्–अर्थ है। अेञ्ञान्ऱु–हमेशा। कादलिरुवर–प्रेमी युगलका। करुत्तोदमित्तु–अेक मन हो। आवरवु पट्टदु–आनन्दित रहना ही। अिन्ब–काम है। परने निनैन्दु–ब्रह्मका स्मरण कर। अिम्मूनरुं–अिन तीनोंका। विट्टदे–भुगतना ही। पेरिन्ब वीडु–परमानन्दधाम है। —अनु०

अिस वेण्बाका भावार्थ क्या है?

औदलका अर्थ कृपा करना या दान करना है यानी लोक हितार्थ अपना तन मन-धन अुत्सर्ग करना है। अपना धन खर्चकर, बाहुशक्तिको खर्चकर, अपने शरीरसे श्रम करके दूसरोंका कष्ट दूर करना और अुनको सुख पहुँचाना है। कुछ लोग धन देनेको ही दान करना समझते हैं। वह गलत है। दूसरोंके हित जान देना क्या दान नहीं है? किसी बीमारका अिलाज कर स्वस्थ करना भी दान ही है। किसीको विद्या देकर स्वयं अर्थ तथा अन्य आवश्यक स्वार्थोंको कमानेकी शक्ति पैदा करना क्या दान नहीं है? हाँ, प्रतिदानकी अिच्छा न कर दूसरोंका कष्टनिवारण करना हितपूर्ण कोओ सहायता करना भी दानके अन्तर्गत ही आअगा। यही मनुष्यका अिह लोकमें धर्म या कर्तव्य है। अस्तु।

बुरा रास्ता छोड़कर बुद्धिके परिश्रमसे हो चाहे शारीरिक परिश्रमसे जो खाना-कपड़ा आदि आवश्यक वस्तुअें, सवारियाँ आभूषण, बाज प्रतिमाअें आदि आरामकी या विनोदकी वस्तुअें और अिनके अुपभोगके लिअे साधनके रूपमें रहनेवाले घर, बाग वगैरह तथा अिनके अदल-बदलका साधारण माध्यम रुपया नोट, मोहरे आदि वस्तुअें हैं व सब धन या अर्थ है। सद्पथमें जाकर अर्जित अर्थ ही हितकारी है। बुरे रास्ते अख्त्यार कर कमाया हुआ धन अनर्थ हेतु है। अिसलिअे औवैने अपनी करुण वाणीसे बताया कि बुराअी छोड़कर पैदा किया हुआ धन ही अर्थ है। बुरे जरियेसे कमाअी दौलत बुराअियोंकी खान है।

अब "काम (अिन्ब सुख) की औवै देवीकी व्याख्या अनुपम श्रेष्ठता लिये हुअे है। प्रणय सुखको ही पूर्वजोंने 'सुख' शब्दसे निर्दिष्ट किया है क्योंकि अुसीको श्रेष्ठ सुख माना जाता है। अर्थार्जन तथा धर्मावलंबनके क्रिया-कलापोंमें ही यत्र-तत्र सुख प्राप्त हो सकते हैं। तो भी वे सब द्वन्द्व प्रणयके अुपांगवत् हैं, अतः वे कामके नामके योग्य नहीं हैं। मनुष्य गुरुचिपूर्ण पदार्थ खानेमें, सरस गाना सुननेमें तथा अच्छे फूलोंकी सुगंध सूंघनेमें जो अिंद्रिय सुख प्राप्त हो सकते हैं अुन्हें पानेके लिअे बहुत प्रयास करते हैं। कीर्तिका सुख, अधिकारका सुख आदि असंख्य सुखोंके संपादनके लिअे भी लोग दिन रात परिश्रम करते पाये जाते हैं। तो भी वटान अिन सबको गौण या अल्प सुख समझकर कामके अन्तर्गत अुनकी गणना नहीं की है। कीर्ति अधिकार यह सब अर्थके अंतर्गत दरसाया गया है। अिंद्रिय सुखोंमें मीठी तथा सुस्वादु वस्तुओंका चखना, फूलोंकी सुगंधका सूंघना आदिसे प्राप्त सुख अल्पायु होते हैं और वे सिर्फ शारीरिक रह जाते हैं। अुनसे आत्माको कोअी सुख नहीं मिलता। अिसी कारणसे वटान अुनको कामके अन्तर्गत नहीं लिया है।

कण्डु केट्टु अुण्डु अुयिर्तु अुर्रऱिव अिय्युंदु
ओण्डो डिळ् कण्णेयुळ यह तिरुवळ्ळुवरका कथन है।

यानी देखकर, सुनकर चाहकर, स्पर्शकर अिन पाचों क्रियाओंसे जो सुख प्राप्त किया जा सकता है वह अिस चमकदार कंकणवाली रमणीके पास है। यही अुसका मतलब है। शरीरकी सभी अिंद्रियोंको ही नहीं, मन तथा आत्माको भी यह द्वन्द्व प्रणय अेक साथ सुख समृद्ध कर सकता है। अिसी वजहसे यह प्रणय सुख सर्वश्रेष्ठ सुख माना गया। अतः जब हमारे पूर्वजोंने 'चार पुरुषार्थ' यानी मानवी जन्मके फलस्वरूप पाये जानेवाले प्रयोजनोंकी बात कही तब प्रणय सुखको 'काम' के नामसे पहचनवाया। औवै देवीयारने भी हमको अपनी अिस वाणीसे अनुगृहीत किया कि यही सुख सर्वश्रेष्ठ सुख है। अुसे अवश्यमेव भोगना है। देवीने अुसे कैसे भोगना है, अिसका विवरण भी अपनी मीठी वाणीमें सरस तमिळ् भाषामें व्यक्त किया है।

अुन्होंने कहा है—

नर अेक नारीपर तथा नारी नरपर मन, वाक् तथा शरीरसे प्रेम करे-प्रतीतिमय, अन्योन्याश्रित और अुत्तरोत्तर वर्धित होनेवाला प्रेम करे, दोनों मनने अेक होकर परस्पराश्रित सुख भोगें वही "काम" है, सच्चे अर्थमें सुख है। अस्तु।

अब मुक्ति क्या है?

औश्वरको हृदयमें स्थापितकर, अहंकार-ममकार त्यागकर, औशबोध प्राप्तकर, अुपर्युक्त तीनों पुरुषार्थोंमें स्वत्व छोडकर रहनेकी स्थिति ही मुक्ति है। अिस तरहकी "मुक्ति" प्राप्त करनेसे कोअी अन्य तीन पुरुषार्थके क्षमानेमें अपनी जिम्मेवारी छोडकर क्रियाहीन आलसी बन जाअेगा अैसा समझना गलत है। जबतक जानमें जान है तबतक प्रकृति किसीको चुप तथा निष्कर्मी होने नहीं देती। कोअी भी हो अुसे मनसे हो तनसे हो चाह वाकसे, काम किये बिना हाथपर हाथ धर बैठना अेक क्षणके लिअे भी संभव नहीं है। "सहजात गुणोंके कारण हर कोअी काम करनेको मजबूर है।" यह कृष्ण भगवानने स्वयं गीतामें कहा है।

और भी औवैदेवीके वर्णित कअी वाक्य या पद्य अुद्धृतकर अुनकी महिमा बतानी हो तो कअी पुस्तकें लिखनी पड जायेंगी। वह काम कभी बादको होगा।

तमिलनाडकी स्नेह तथा आदरकी पात्री बहनों! अिस तमिलनाडके गौरवको बनाये रखना आपके अुत्तम कार्यों तथा प्रयासोंपर ही निर्भर है। .....

आज मानव जात् प्रचंड पवनके समान बहनेवाली अुथल पुथल, परिवर्तन, क्रांति आदिके कारण प्रलयनर्तन करनेवाली लहरोंके मध्य फँसी हुअी नौकाकी भांति धक्के खा रहा है, थपेडे खा रहा है। अुलटपुलट होने जा रहा है, चक्कर खाकर छटपटा रहा है। औश्वर आप लोगोंको अपनी दिव्य-शक्तिसे तथा चरित्र बलसे अुसे बचानेकी सामर्थ्य प्रदान करे।

—(अनुवादक : श्री विद्वान् ति. शेषाद्रि. मदुरा)

अग्निसे तेजस्वी वैदिक प्रार्थना—

"मयि मेधा मयि प्रज्ञा मय्यग्निस्तेजो दधातु
मयि मेधा मयि प्रज्ञा मयीन्द्र अिंद्रिय दधातु,
मयि मेधा मयि प्रज्ञा मयि सूर्यो भ्राजो दधातु,
यत्ते अग्ने तेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम्,
यत्ते अग्ने वर्चस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासम्
यत्ते अग्ने हरस्तेनाहं हरस्वी भूयासम्!"

अर्थ

अग्नि मुझे बुद्धि, विचार-शक्ति दे। अिंद्र मुझे बुद्धि विचार शक्ति और सामर्थ्य दे। सूर्य मुझे बुद्धि विचार-शक्ति व तेज दे। हे अग्नि, मुझे अपने तेजसे तेजस्वी होने दे। अपने विजयी तेजसे मुझे महान बनने दे। अपने मलिनताको भस्म कर देनेवाले तेजसे मुझे भी अपनी मलिनताको भस्म करनेवाला बनने दे।

☆☆ तारे ☆☆

: श्री "भृग" तुपकरी :

ये तारे !
बेचारे तारे !
दिनके दूत रातकी दुनिया
में फिरते हैं मारे मारे !
ये तारे ।

गत वैभवकी याद संजोकर अपने दिलमें
और थके पथीसे, पथमें
बैठे हैं मन मारे !
तारे बेचारे !

अिनके पास ज्योति हैं लेकिन
अिनके पथपर अँधकार हैं ।
अिनका बल अिनका हित करनेमें निष्फल हैं ।
टिम् टिम् टिम् टिम् जलते जाते
मनही मन बेचारे तारे !
काली काली तमकी कारा
अिनको कैदी बना रही है !
किसने छलसे
अिनके बलके
टुकडे-टुकडे कर डाले हैं ?
अँधकारके काले पजेमें य आकुल
अलग अलग हैं !
लाचारीमें अंधकारसे हार चुके हैं !
ये बेचारे,
टिम् टिम् तारे !

\+ \+ \+

हाँ, सचमुच ये अंधकारसे
हार चुके हैं,
अिसीलिये है शायद अिनको
प्रतिभा खण्डित
बिखरी बिखरी,
टूटी-टूटी,
और नहीं है अिनके पथपर
हल्की सी प्रकाश रेखा भी !
हो सकता है,
अेक दिवस यो आये धरती
का आकर्षण
अिनके जगमग प्राण तोड़ ले
और गिरें ये
अूचाअीसे टूट टूटकर
नीचे, गहरे किसी समदरकी गोदीमें
या कि किसी अूचे पर्वतकी
कठिन क्रूर, निर्मम चट्टानोके सीनपर
अपने सिरको दे मारें ये,
मर जावे ये !
पट जायगी अिनके शवसे
कोअी छोटी मोटी खाअी,
और सदाको नीलाम्बरको
सूना करके चले जायें य !
अिनके प्राण
पखरू बनकर
नील गगनमें समा जायेंगे !
य धरतीके बुद्धिवादियोंके अगुआ ह,
विद्रहर अैसे ही तममें जल जलकर,
घुल घुलकर,
घुट घुटकर अिक दिन
मर जाते हैं अिस भारतके !
अिसी तरह तो लय हो जाते
हैं अुनके भी जगमग प्राण ! !

\+ \+ \+

किन्तु अेक दिन यह भी होगा !
चांद चाँदनी लिये अुगेगा !
जिसके लिअे अंधेरेमें ही
की हैं अिनने कठिन तपस्या।
अंधकार-साम्राज्य मिटेगा।
चांद अुगेगा।
काला पर्दा झिल्ली कागज बन जाअेगा।
स्निग्ध किरणकी शीतल अंगुली
पर्देका तन मन छेदेगी !
तब यह आहत अंधकार
भू-लुण्ठित होगा,
पग पगपर सर धर लोटेगा !
छोटे छोटे झाड़-झडूलों
तकके पैर पकड़कर,
रोकर,
शरण माँगनेको मचलेगा !
पत्ती-पत्तीसे करुणाकी
भीख माँगता हुआ फिरेगा !
पर हर पत्ती किरण-दूधमें नहा-नहाकर
झूम अुठेगी,
औ, जिसके हित नम्र चाँदनीकी मधु बूंदें
बाण बनेंगी।
जिनपर यह छाया रहता था,
अुनके चरण पखारेगा यह !
पछताअेगा,
रोअेगा,
आंसू ढालेगा।
अुस दिन जिन तारोंके मनकी शीतल ज्वाला
शुभ्र चाँदनी बन विकसेगी,
नयी ज्योत बनकर चमकेगी।

दान दो

: श्री प्रो. मित्तल :

भूमिका दान दो।

जग प्राणके लिअे,
शुभ दानके लिअे
सुख मानके लिअे
अिन्सानके लिअे
आज बलिदान दो।

युगकी पुकार है
स्वार्थकी हार है
मनुज अनुदार है
स्नेहकी धार है
प्रणयका गान दो।

मनुजता दीन है
मनुज सुख हीन है
घोर दुख लीन है
तड़पती मीन है
स्नेह-जल दान दो।

कोअी न दीन हो
मनुज न हीन हो
स्वार्थ न आसीन हो
जगत सुख लीन हो
मनुजको मान दो।

जगत बन जाअे नव
मधु-गीत गाअे नव
दुख दैन्य जाअे सब
मनुज बन जाअे नव
वह सुख दान दो।
भूमिका दान दो।

बेकसी

: श्री 'अंचल' :

अब तक मेरा समय न आया !
आकुलता ही रही, तृप्तिका मेरा समय न अब तक आया !

दिलमें अगणित आकाक्षाओं पर न अुन्हे पूरी कर पाता,
कॉटोकी नोकोपर जीवनके फूलोको जडता जाता,
आग वचनाकी तन-मनमें जिसको मैंने अब तक गाया !

मेरी भाग्य-क्रान्तिका सोया हूँ प्रतीक किस सूनेपनमें,
तम-अभिशप्त पन्थ जीवनका जा मिलता है भग्न विजनमें;
अब तक मैने पथ-दर्शक आदर्शजयी नक्षत्र न पाया !

तृषित, अतृप्त प्राणका पछी जब अुडनेको पर फैलाता,
चॉद कल्पनाका तब सहस्र दुखकी बदलीमें छिप जाता,
रह जाता असफलताका अवशेष क्षुब्ध जीवनपर छाया !

साथ चले थे जो साथी वे निकल गये सब कितने आगे,
पडा रह गया मैं छलनामें गतिके झझावात न जागे,
क्यों मेरी विश्वास-शिखाने सपनोका छल नही मिटाया ?

विद्ध अभावोकी पीडामें जलता है मेरा कटु जीवन,
बलका अैसा स्रोत नही जो अपराजित रहने दे तन-मन,
मूक विवश प्रतिहिंसा मेरी दग्ध अह मेरा भरमाया !

हँसते मुखके पीछे मेरा मुरझाया दिल रोता रहता,
मदमें भूले जगके हाथो अपमानोकी ज्वाला सहता,
लोहू अपने ही अरमानोका पीती रहती यह काया !
अब तक मेरा समय न आया !

पूर्ण हो पायी नहीं अुसकी कहानी !

• श्रीमती शांति मेहरोत्रा :

प्रात आया विश्वमें जीवन लुटाने
ताप आया शीतपर सौरभ बिछाने
वायु आयी कुंजका शृंगार करने
रश्मि आयी पथपर मृदु हास भरने
किन्तु कुछ ही दूरपर दृगहीन तारा टूटता बन रातकी अन्तिम निशानी !
पूर्ण हो पायी नहीं अुसकी कहानी !

हो गया मध्यान्ह गति थक-सी गयी कुछ
चर-अचरकी चेतना रुक-सी गयी कुछ
खिल-खिलाती ज्योतिकी कुछ रीति बदली
मुस्कराती प्रीतिकी कुछ नीति बदली
रख न अपनेमें सकी मकरंद मधुको डालने टूटे सुमनकी सावधानी !
पूर्ण हो पायी नहीं अुनकी कहानी !

सांझकी पायल बजी जब नीडपर आ
शांत कोकिल स्वर हुआ जब पींडपर आ
रात जागी पंख तमने फड़फड़ाये
चांद आया और तारे मुस्कुराये
दिव्य रविकी अग्नि-सी अुज्ज्वल शिखाने, रातकी धुधली प्रभासे हार मानी !
पूर्ण हो पायी नहीं अुनकी कहानी !

काश्मीरी

लल्लीश्वरीके वचन

[विश्वके सार्वभौम नन्दनवन काश्मीर देशकी राजनगरी श्रीनगरकी केशर-क्यारियोंसे सदा सुरभित पम्पुर नामक ग्रामकी पवित्रप्राण स्वर्गीया लल्लीका नाम ऐसा कौन काश्मीरी आबाल-वृद्ध हिन्दू मुसलमान है जो नहीं जानता ! जहाँ वह सन्तोंकी कोटिमें सिरमौर है वहाँ वेदान्तवेद्य रहस्यवादकी सर्वोच्च कवियित्री भी हो गयी है। अुनकी जीवनभरकी आध्यात्मिक साधनाने ही अुनके देशने अुन्हें "लल्लीश्वरी" के पदपर आसीन कर दिया। भक्तजन अुन्हें योगिनी, त्रिकालज्ञा, कहते हैं। दुर्भाग्यकी बात है कि अुनकी अुक्तियोंका संग्रह समग्र समुचित रूपसे अब तक किसी प्रकाशकने प्रकाशित नहीं किया। संत लल्लीश्वरीकी अुक्तियोंके भाव गांभीर्यमें और अर्थ-महत्तोंमें काश्मीरी भाषाके आधुनिक प्रकांड पंडित भी गहरे पानी पैठनेका प्रयास करते हैं, पर नहीं पहुँच पाते अन्तस्तलमें। नीचे लल्लाकी कुछ अुक्तियाँ दी जाती हैं। 'राष्ट्रभारती' के प्रेमी पाठक काश्मीरकी केशरका आध्यात्मिक सौरभ ग्रहण करें। —सम्पादक]

लल्ल ब्वह द्रायस लोलरे
छाडान लूस्तुम दान क्योह राथ।
वुछुम पण्डित् पननि गरे
सुय म्य रटुमस नक्षतुर साथ

शब्दार्थ—

लल्ल्-(लल्ला या ललेश्वरी) ब्वह द्रायस-मैं निकली लोलरे-अनुरागभरी, छाडान ढूंढने, लूस्तुम-अस्त हुआ दान क्योह राथ-दिन तथा रात, वुछुम-देखा, पण्डित्-वेदशास्त्र-पारंगत यहाँ ब्रह्मसे अभिप्राय है, पननि गरे-अपने घरमें सुय-वही म्य-मैंने रटुमस-पकड़ा, नक्षतुर साथ-नक्षत्र मुहूर्त।

भावार्थ—

लल्ला अपनेही अंतःकरणमें ब्रह्मके निवासके सम्बन्धमें बोलती हुअी कहती है कि मैं ब्रह्मानुराग भरी अुसकी तलाश घरसे निकली। दिनके बाद रात और रातोंके बाद दिन बीते पर वह न मिले। अंतको मैंने जब अपनेही हृदयमें देखा तो अुसीको शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्त समझकर अुसे प्राप्त किया।

ह्माहम कदमस दमन् हाले
प्रजल्योम दीप त ननेयम जाथ
अन्दर्युम प्रकाश न्यबर छटुम
गटिरटुम त कदमस थप

शब्दार्थ—

दमावम-श्वासोच्छ्वास कदमम्-किया, दमन हाले-धौंकनीसे प्रजल्योम दीप-दीपकका प्रकाश हुआ, ननेयम जाथ-जात मालूम हुअी। अन्दर्युम प्रकाश-अंदरका प्रकाश न्यबर छटुम-बाहर छाट लिया। गटिरटुम-घरमें पकड़ा, करमस थप-हाथमें पकड़ा।

भावार्थ—

योगाभ्यासकी विधिसे प्राणायामों द्वारा मेरे अन्दरका दीपक ज्योतिर्मय हुआ। अुससे अन्धकार दूर हुआ जिसके परिणामस्वरूप वह ब्रह्म मुझे अपनेमें ही मिला और अुसे मैं दृढ़तापूर्वक पकड़ बैठी।

(काश्मीरीसे अनुवादक— श्री प्रेमनाथ जाड्)

मराठी : **संध्याकाळ**

: श्री म. म. देशपांडे :

संध्येचा श्यामल हात कोवळा
पकडू पाहतो
नदीकांठचा अुडता बगळा!
पुसट पुसट क्षितिज-रेषा
मीलनामधली—
दोन जीवांची अस्फुट भाषा!
दिवस मिटतो हळूच पापणी
थकून भागून—
गालांत हासते शुक्राची चांदणी!
क्षणाक्षणानें दाटतो काळोख
जुनी एखादी—
मनात सारखी घोळते ओळख!

हिन्दी : **संधिकाल**

: अनुवादक— श्री अनिलकुमार :

हाथ साँझका मृदुल साँवला
छुआ चाहता
नदी किनारे अुड़ता बगुला!
धुँधली धुँधली रेख क्षितिजकी
मिलनपर्वकी—
अुन दोनोंकी अस्फुट भाषा!
दिन धीरेसे पलक मूँदता
थके पथिक-सा—
हँसती है गालोंमें गोरी शुभ्र तारिका!
घिरता जाता हरपल घना अँधेरा
अेक पुरानी—
गूंजा करती है मनमें पहचान!

मज कळतच नाहीं

: श्री आ. ना. पेडणेकर :

मी न राहिल्यें माझी
ती वेळ कोणती
मला न मुळि आठवते
काळास विसरतें
पाउल वळतां तेथें...
पाउल वळतें जेथें
तें स्थान कोणते
मला न ये ओळखता
तें पुसटुन जाते
त्याला पाहत बसतां...
ज्याला पाहत बसतें
तो कोण कोठला
मेईल कसें सांगाया?

मैं न समझ पाती हूँ

: अनुवादक— श्री अनिलकुमार :

मैं न रही अपनी ही
वह समय कौनसा
नहीं स्मरण है कुछ भी
काल भूलती
पाँव अुधर जब मुड़ते...
जिधर पाँव मुड़ जाते
वह स्थान कौनसा
पहचान नहीं पाती हूँ
वह मिट-सा जाता
अुसे देखते रहते...
जिसे देखती रहती
वह कौन कहाँका
कैसे तो बता सकूँगी?

२५ जेणे जीवनमा विरह अनुभव्यो नथी, अेणे जीवननी मीठाश पण क्यारे अनुभवी छे ?

२६ तमे कलानी वात करो छो का ? हा, हा, समज्यो। अेवी वस्तु, जेने लोको जीवनमाथी बहार काढे छे अने प्रदर्शनमा जोवा जाय छे। अेज कला के ?

२७ तु आवजे अेम मैं क्यारे कह्युं ? तु न आववानो संकल्प करी राखजे।

२८ जे मजा संग्राममा छे ते मजा खोअीने मूरखाओ विजय वाञ्छे छे ! वाञ्छवा दो विजयना जेवो महान पराजय जोअीने कोण नथी पस्ताय ?

२९ मारी वाट जोवानी धीरज पासे, तारी वाट जोवरावानी शक्ति नमे अे तो मारा जीवन-संग्रामनो पायो छे। तु आवजे अेम विनति करीने हुँ काअी जीवननो पायो खोदी नाखुं ? तु न आवती, न आवती, कलानी अधिष्ठात्री न आवती।

३० मैं तो अीश्वर पासे अेटलुज माग्युं हतुं. हमेशा आनन्दी– मोजीलु अेवु हृदय न आपवो, थोडु घणु विषादमय अन्तर पण आपजे। अीश्वरे स्पष्ट ना पाडी। 'अन्या तारे जीवननो अमूल्य रस 'विषाद' जोअीअे छीअे ? अे ते कयाय मंगानो हनो ?– अने वळी अे माग्ये मळे पण खरो ? अे तो तारा जीवनमथननुं रत्न छे। अने ते तुज शोधी लेजे। जेने जेने अे रत्न, आनद सागरने तलिअेथी मळ्युं छे, तेने जीवनभर बीजो काअी वाछना रही नथी: अेमने मन अन्तरनो घेरो अवाज अेज जीवनसर्वस्व बनी रहेल छे।

३१. विलासने कला मानो निष्क्रियपनाने आनन्द गणो, असमानताने गौरव लेखो व्यवहारने 'धर्म' समजो। क्रांतिना बीज नमे रोपी चूक्या हवे मात्र अेना फळनीज राह जुओ।

२५ जिसने जीवनमें विरहका अनुभव नहीं किया, वह जीवनकी मिठासको भी कब अनुभव कर सकेगा ?

२६ क्या तुम कलाकी बात कर रहे हो ? हाँ-हाँ समझ गया ! अैसी वस्तु, जिसे लोग जीवनमेंसे बाहर निकालते हैं और प्रदर्शनोंमें देखने जाते हैं। क्या यही कला है ?

२७ जो आनन्द संग्राममें है, अुसे खोकर मूर्ख-लोग विजय चाहते हैं। चाहने दो। विजय जैसी महान् पराजय देखकर कौन नहीं पछताया ?

२८ मेरी प्रतीक्षा करनेकी धीरताके आगे, तेरी प्रतीक्षा करवानेकी शक्ति झुक जाती है, यही तो मेरे जीवन-संग्रामकी आधार-शिला है ! तू आ जाना अैसी प्रार्थना करके मैं क्या अपने जीवनकी आधारशिला खोद डालूं ? तू मत आना, मत आना, हे कलाकी अधिष्ठात्री मत आना !!

३०. मैंने तो अीश्वरसे यही मांगा था— सदा आनन्दमय, अूर्मिमय हृदय मुझे मत देना, थोड़ा-सा विषादमय अन्तर भी प्रदान करना। अीश्वरने स्पष्ट नकार कर दिया— अरे मूर्ख, तुझे जीवनका अमूल्य रस "विषाद" चाहिअे ? क्या अुसे भी कोअी मांगता है ? और वह भी कहीं मांगनेसे मिल सकता है ? वह तो तेरे जीवनमथनका रत्न है। अुसे तू स्वयं खोज लेना। आनन्द-सागरके तलेसे जिन-जिनको भी वह रत्न प्राप्त हुआ है, अुन्हें जीवनभर अन्य कोअी आकांक्षा नहीं रही है। अुनकी दृष्टिमें अन्तरकी गंभीर आवाज ही जीवन-सर्वस्व बन जाती है।

३१. विलासको कला समझकर, निष्क्रियताको आनन्द मानकर, असमानताको गौरव समझकर और व्यावहारिकताको धर्म मानकर, क्रांतिके बीज तो तुम बो ही चुके हो। अब तो केवल तुम्हें अुसके फलकी प्रतीक्षा करनी होगी।

[सूचना—'राष्ट्रभारती' में समालोचनार्थ पुस्तकोंकी दो-दो प्रतियाँ ही सम्पादकके पास आनी चाहिये।]

हिमालय-परिचय : लेखक राहुल सांकृत्यायन, मुद्रक और प्रकाशक —लॉ जर्नल प्रेस, अिलाहाबाद। मूल्य छापा नहीं गया।

हिन्दीमें शायद भौगोलिक साहित्यकी कमी नहीं है परन्तु साहित्यिक भूगोलकी कमी सदा खटकती रहती है। राहुलजीकी नयी पुस्तक (अिसे पुस्तक-माला कहना अधिक सार्थक होगा क्योंकि अभी हिमालय-परिचय (२) कुमाऊ और हिमालय परिचय (३) .. नेपाल, प्रकाशित हो ही रही है अिस कमीकी पूर्तिमें अेक सराहनीय प्रयास है।

अिस पुस्तकमे गढ़वालके अितिहास, भूगोल अुसकी जातियाँ, प्रथायें, भूतत्व और खनिज, शासन, धर्म, जातियाँ, आकृति, वेशभूषा, आजीविका, यातायात सचार, तीर्थस्थान आदिका ज्ञानकोपात्मक चित्र खींचनेकी लेखकने पर्याप्त सफल कोशिश की है, परन्तु कैनवास बड़ा रखनेके कारण चित्र अुतना अच्छा नहीं अुभर सका है जितनी अुम्मीद की जाती थी। अिस कमीको लेखकने अपने प्राक्कथनमें स्वीकार भी किया है। और स्वीकार करते हुअे आनेवाली पीढ़ीको अिस दिशाकी ओर बढ़नेके लिअे चुनौती भी दी है, जो पर्याप्त स्वास्थ्यप्रद है।

अिसमें कोअी शक नहीं कि पुस्तक जिसके बावजूद भी अुपादेय है, सुन्दर है, विशिष्ट है पर अेक बात थोड़ी सी खटकती है, वह यह कि शैलीमें अुन्होंने अिसी विषयकी अंग्रेजीकी पुस्तकोंकी नकल की है और जिसका फल यह हुआ है कि भाषा कहीं कहीं टूटती सी है, अुसकी सुन्दर मवलाविशृखलित सी हो जाती है और राहुल भाषाका अपना निखार पूरी तरहसे सामने नहीं आता है। अिस कमीका भान अिस विषयकी योरोपीय भाषाओंमें लिखी पुस्तकोंके देखनेसे अधिक अच्छी तरह होता है।

तीसरी कमी लेखककी न होकर प्रकाशक या मुद्रककी है। जो चित्र अिसमें दिये गये हैं अुनके ब्लाक अच्छे नहीं बने। अिस विषयकी पुस्तकमें जहाँ प्राकृतिक सौंदर्यका विशद् वर्णन है जो चित्र दिये जाय वे साफ तरीकेसे प्रकाशित हों, यह परमावश्यक है।

अगले पाँच साल : लेखक आचार्य जी. अेस पथिक, प्रकाशक—मेसर्स आत्माराम अेण्ड सन्स कश्मीरी गेट, दिल्ली-६, मूल्य—पाँच रुपय।

प्रस्तुत पुस्तकको यदि मैं पूर्णतः पलायनवादी कहूँ तो शायद अयुक्ति नहीं। यह सामयिक राजनीतिक पत्रकारिताका पुस्तकरूप, सो भी श्री जी० अेस० पथिक जैसे अनुभवी लेखककी कलमसे, जिसने अबतक लगभग अेक दर्जन राजनीतिक पुस्तकें हिन्दीमें लिखी हों, कुछ अव्यवस्थित-सा लगता है।

सबसे पहली बात जो देखनेमें आती है वह यह कि अुनपर कम्यूनिज्म अेक भूतकी तरह सवार है। वे

जिसे अेक हौवा समझते हैं। जिससे डरते हैं। जिसके विरुद्ध हैं। भारतमें जिसकी प्रगति देखकर रुष्ट होते हैं परन्तु जिसके मुकाबिलेमें खडी किसी दूसरी आदर्शवादिताको भी वे सराह नहीं पाते हैं। वे यह तो कहते हैं कि यदि कम्युनिज्मकी भारतमें विजय हुआ तो देश तबाह हो जायेगा। गृहयुद्ध छिड जायेगा। पर यह नहीं जान पाते कि भारतमें साम्यवादी विचारधारा क्यों जोर पकड रही है? जिनकी जड कहां है? वे जिसे आकाशबेलकी तरह समझते हैं।

दूसरी बात यह देखनेमें आती है कि पूंजीवादके विनाशका अुन्हें बहुत दुख नहीं है। परन्तु भारतीय समाजमें जो थोडेसे आर्थिक और सामाजिक सुधार हुअे हैं, अुनसे वे अत्यधिक रुष्ट हैं, अुन्हें शक्तिवाली राजनीति पसद है। अुन्हें पंडित नेहरूकी परराष्ट्र-नीति खोखली दिखती है। अुन्हें अुसमें न तो कोअी तत्व दिखता है और ना अुसका कोअी विश्वकी राजनीतिपर असर ही। अिसलिअे कहना न होगा कि अगले पांच सालोंके लिअे अुनकी राजनीतिक भविष्यवाणी बहुत काली है। बहुत भयावह है, दाह और विनाशसे पूर्ण है। मैं स्वयं अितना निराशावादी नहीं हूँ।

अपने देशमें जो आज नयी जनजागृति, नयी जनचेतना, नयी जनकलाअें विकसित हो रही हैं अुनकी ओर पंडितजी आकृष्ट नहीं हो पाते हैं। अुन्हें भाषावार राज्य गलत लगते हैं। अुन्हें सांस्कृतिक विकासकी नयी सीढियाँ गलत लगती हैं। अुन्हें राष्ट्रका धर्मनिरपेक्ष होना गलत लगता है।

और फिर, कहींपर गभीर विचारके रूप नहीं दिखते हैं। सारी पुस्तक पढ जाअिअे, अैसा लगेगा कि किसी दैनिक अखबारमें अेक लेखमाला पढ रहे हों। यों पुस्तककी छपाअी सफाअी अच्छी है। यो २८८ पृष्ठोंके लिअे पाच रुपये दाम कुछ अधिक लगता है।

सब मिलाकर मैं यह नहीं कह सकता हूँ कि अिसने हमारे राजनीतिक साहित्यकी कोअी बडी श्रीवृद्धि की हो।

—"लोकचक्षु"

टूकके आंसू : लेखक — श्री पदमसिंह शर्मा 'कमलेश', अेम. अे., सा. र.। प्रकाशक — सुशील 'कमलेश', सहयोगी-प्रकाशन, गोकुलपुरा, आगरा। मूल्य २॥)

अिस पुस्तकमें अिकतीस गीत हैं। गीतोंमें वियोग-पक्षकी ही प्रधानता है। किन्तु कविके आंसुओंमें बडवानलकी दाहकता भी है जो कि विप्लवके लिअे व्याकुल है। कविका व्यक्तिगत प्रणय समाजगत प्रेममें परिवर्तित होना चाहता है। —

मुझे प्यारके बन्धनोंमें न बांधो।।
असीमित जलधिकी पिपासा लिये मैं
ससीमित सलिलके कणोंमें न बांधो। ....
सकल विश्वकी वेदनासे विकल मैं
अकेले हृदयके क्षणोंमें न बांधो।
मुझे प्यारके बन्धनोंमें न बांधो।। (पृष्ठ १३)

विलासके आंगनसे कविका पग विनाशकी ओर अग्रसर होता हुआ दिखाअी देता है —

अरी, ओ प्रणयकी बेहोश कोकिल
देख जगमें जल रही दावाग्नि पागल
मत अधिक मोह कीचडमें समा तू
मुक्तिके पथपर चरण मैं मोडता हूँ।।
लो सुराके सुखद प्याले तोड़ता हूँ (पृष्ठ ३६)

कुछ गीतोंमें प्रकृतिका मानवीकरण बहुत ही मौलिक हुआ है —

महाशून्यको आलिंगन कर
व्यथासिक्त अपने जीवन भर
शत-शत घाव हृदयमें लेकर
सोती है क्यों रात न जाने!
रोती है क्यों रात न जाने? (पृष्ठ १९)

कविके कुछ गीत बहुत सुन्दर हैं। गीतोंमें हृदयकी जो तरलता है, अुसका स्वागत भी अवश्य आवश्यक है। पुस्तककी छपाअी-सफाअी तथा बाहय-आवरण आकर्षक व सुंदर है।

—"अंकुर"

संपादकीय

स्वर्गीय पंडित रघुवरदयालु मिश्र :

अवम कोअी ३४ साल पहले १९२० म म० गा धीके आदेशानुसार कुछ हिन्दी तरुण दक्षिण भारतमें हिन्दीका प्रचार और प्रसार करनेके लिअ द भा हिन्दी प्रचार सभाके कमठ सेनानी अण्णा हरिहर शमाजाके पास यह दृढ व्रत लेकर पहुचे थे कि शरीर वा साधयय शरीर वा पातयय — हम वापस लौटनेवाले नहीं है, चाहें आप हम मद्रास तटपर गजन-तजन करनेवाले दृष्टिदेव वाचक गहरे समुद्रमें अुठाकर फेंक दीजिअ। श्री रघुवरदयालु मिश्रजी अुनमेंसे अेक कर्तव्यनिष्ठ और कमठ हिन्दी-सेवक थे जिनका गत २७ फरवरीको रातके साढे दस बजे मद्रासके स्टेनली अस्पतालमें बिलकुल लाअिलाज रोगीकी दुखद दयनीय दशामें शरीरान्त हो गया। अपने जीवनके सबसे अधिक महत्वपूर्ण ३४-३५ वर्ष मिश्रजीने हिन्दी प्रचार कायमें हिन्दीकी सेवामें अपण कर दिये। आडम्बर रहित, सब प्रकारकी प्रान्तीयता साम्प्रदायिकता और पक्षपातितासे दूर सरल साधु जीवन मधुर भाषण नम्र व्यवहार और अपने सभी संगी साथी सहयोगियोंको साथमें लेकर चलनेकी प्रसन्न मनोवृत्ति यह स्वर्गीय मिश्रजीका स्वच्छ अेव स्पृहणीय शील रहा। जिन्हें देखकर जिनसे भेंटकर जिनके सम्पकमें आकर जिनसे चन्द मिनट वार्तालापकर और जिनके साथ रहकर हिन्दीका काय करनेवाले सकडों सहयोगी लोग प्रसन्न होते थे अुन स्वर्गीय रघुवर दयालुजीने अपने जीवनकी अंतिम श्वासों तक भारतकी राष्ट्रभारती हिन्दीकी अीमानदारीके साथ बडी सेवा की। स्व० मिश्रजी बडी निर्भीकता समझदारी सज्जनता और गंभीरतापूर्वक अपने बडसे बड सहयोगियोंकी कमजोरियोंकी और गलतियोंकी आलोचना करते थे सचाअी और आत्म विश्वासके साथ। मिश्रजीका हमारे बीचसे असमयमें अुठ जाना दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभाकी अैसी भारी क्षति है कि वस्तुत जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। दक्षिण भारतके समस्त हिन्दी सेवकों भी मिश्रजीके अिस आकस्मिक निधनसे अेक भारी धक्का पहुचा है। पूरे छह महीनेतक मद्रासके स्टेनली अस्पतालमें मिश्रजीके जीवनके साथ अनिश्चित औषधोपचार सम्बन्धी अभाव धांधलियोंका नाटक होता रहा। अुन सहयोगी बन्धुओंका सौभाग्य कहिअ या दुर्भाग्य जो मिश्रजीके अंतिम समयमें अुनके पास पहुच सके थ जब अुनकी जीवन चेतना बुझ रही थी और वाणी बन्द हो रही थी। दुखकी काली रात्रिपूरी अुदासीको लेकर आयी और अुनकी जिन्दगीका खेल पूर्ण विभीषिकाके साथ खतम हुआ।

स्व मिश्रजी तो अिस दुनियासे हमेशाके लिअ रुखसत लेकर चले गये और अपने पीछे दुखिया धर्म पत्नी अेक पुत्र दो पुत्रियाँ और सकडों शोक-संविग्न मानस संतप्त सहयोगी सुहृदोंका अेक बहुत बडा समूह छोड गये है। परमात्मा अुस दिवंगत सात्विक आत्माको शान्ति दे।

प्रार्थनाके दो शब्द— (अिस नाते कि म भी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाका १९१८ से जिस समय बीजारोपण पूज्य बापूके हाथों हुआ—लगातार २० वर्ष तक अेकनिष्ठ सेवक रह चुका हू।) सभाके कर्णधारोंसे विशेषत समृद्ध-सम्पन्न सभाके वर्तमान सभापति मद्रासके प्रधान मन्त्री महोदय सत्यनारायणजीसे कि आप स्व मिश्रजीकी सेवाओंकी स्मृतिको सभा भवनमें सांस्कृतिक रूपमें सदाके लिअ सुरक्षित रख तथा अुनके असहाय निराश्रित दुखी परिवारकी सहायता करें। हम सब सहयोगी राष्ट्रभाषा हिन्दीके कायकर्ता और अुनका हाथ बटाव।

—हृ० श०

बम्बअी राज्य-सरकारको बधाअी :

राष्ट्रभाषा हिन्दीको अुसका अुचित स्थान प्राप्त हो, अिसके लिअे केन्द्रीय सरकार तथा अधिकतर राज्य सरकारों द्वारा बहुत कम प्रयत्न हो रहा है। कतिपय राज्य सरकारें, जो अिसके लिअे प्रयत्नशील हैं, अुनमें मध्य-प्रदेश तथा बम्बअी राज्य अुल्लेखनीय हैं। मध्य-प्रदेशकी सरकारने द्विभाषी प्रान्त होनेके कारण मराठी तथा हिन्दी द्वारा राजकाज चलानेका निर्णय करके राष्ट्रभाषा तथा प्रादेशिक भाषा दोनोंकी सेवा की है, अितना ही नहीं मध्य-प्रदेशकी जनताकी भी सेवा की है। बम्बअीकी राज्य-सरकार भी, अपने राज्यमें जिलोंके अूपरके तन्त्रमें हिन्दीका अुपयोग हो और अुसके नीचेके विभागोंमें प्रादेशिक भाषाका अुपयोग किया जाअे यह निर्णय करना चाहती थी। अिसके लिअे अुसने अेक विधेय भी तैयार किया था, जो राज्यकी विधान-सभामें रखा जानेवाला था, परन्तु अुसका बहुत विरोध हुआ, अिस कारण अुसे छोड दिया गया। अुसे विधान-सभामें भी नहीं रखा गया। अब बम्बअीकी राज्य सरकारने अेक दूसरा निर्णय किया है जो अति आवश्यक है और साथ ही समयानुकूल भी। बम्बअीके शिक्षा-विभागका निर्णय है कि १९५५ से *महाविद्यालयोंमें (कालेजोंमें)* हिन्दीके माध्यम द्वारा शिक्षा दी जाअेगी। शालाओंमें-हाअीस्कूलोंमें हिन्दीकी पढाअी अनिवार्य बनायी गयी है, परन्तु वहाँ शिक्षाका माध्यम प्रादेशिक-भाषा होगा—जो अनिवार्य है, अुचित भी है। परन्तु अुसके बाद, हमारे कितने ही गण्यमान्य नेताओंका अभिप्राय है कि महाविद्यालयोंमें राष्ट्रीय दृष्टिसे राष्ट्रभाषाके द्वारा शिक्षा देना अति आवश्यक है। बम्बअी सरकार भी यही मानती है और अुसने तदनुरूप निर्णय किया है। हम बम्बअीके शिक्षा-मन्त्रालयको अुसके अिस निर्णयके लिअे हार्दिक बधाअी देते हैं। हम जानते हैं कि अिसका बडा विरोध हो रहा है, और होगा। परन्तु हम आशा करते हैं बम्बअी सरकार अिस विरोधके बावजूद भी अपने निर्णयपर दृढ रहेगी। बम्बअी राज्यके मुख्य-मन्त्री श्री मोरारजीभाअी तथा शिक्षा-मन्त्री श्री दिनकर-भाअी देसाअी दोनों यदि यह मानते हैं कि अुन्होंने सही कदम अुठाया है और वह समयानुकूल है तो जनताके किस श्रद्धाके कारण कैसा भी विरोध क्यों न हो, अुसका सामना करनेकी वे शक्ति रखते हैं।

हमने भी समय-समयपर महाविद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमके प्रश्नपर चर्चा की है। महाविद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम राष्ट्रभाषा हिन्दी ही रहे, अिसके पक्षमें बहुत ही महत्वके तथ्य विशाल दृष्टिके कारण हैं। राष्ट्रीय-दृष्टिसे तो यह अति आवश्यक तथा अनिवार्य ही समझा जाना चाहिअे। परन्तु प्रादेशिक-भाषाका भी अपना महत्व है, अुसका महत्व कम न हो और मातृभाषाके द्वारा शिक्षाके मूलभूत सिद्धान्तकी रक्षा हो, अिस कारण हमने अुसे भी *वैकल्पिक रूपसे शिक्षाका माध्यम* बनानेकी बात कही है। गुजरात युनिवर्सिटी तथा बडौदा युनिवर्सिटीने हिन्दी तथा मातृभाषाके माध्यमकी स्वीकृतिका निर्णय किया है, अुसे हमने हमेशा बडा ही स्वागताई निर्णय माना है। परन्तु हमने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि मेडिकल, अेन्जिनियरिंग तथा कानून जैसे अखिल भारतीय महत्वके विषयोंको तो हिन्दीके द्वारा ही पढना होगा क्योंकि परिभाषाका भी प्रश्न अुसमें होगा और परस्पर लेन-देनके प्रश्नका भी अुसमें बडे महत्वका भाग होगा। सम्भव है अिसके परिणाममें महाविद्यालयोंमें दूसरे विषयोंको भी हिन्दी द्वारा पढाअी करनेमें सुविधा दिखायी देने लगे और अुन विषयोंको भी हिन्दीमें पढानेसे छात्रोंका तथा प्रजाका अधिक हित हो।

महाविद्यालयोंमें शिक्षाके माध्यमके प्रश्नपर बडा तीव्र मतभेद है, अिसमें सन्देह नहीं, परन्तु अिसका हमें विचार राष्ट्रीय-दृष्टिसे ही करना होगा। संसारकी आज जो परिस्थिति है अुसमें हमारे राष्ट्रकी सुगठित अेकता का होना-न होना ही हमारे जीवन-मरणका प्रश्न है, यह हमें भूलना नहीं चाहिअे। प्रान्तीय भावनाअें, स्वभाषा-अभिमानके जैसे विचारोंको, जो हमारी राष्ट्रीय अेकताके विरोधी हों, हमें त्याग देना होगा। राष्ट्रभाषाके माध्यमके विरुद्ध जो दलीलें की जाती हैं वे अधिकतर अैसी ही भावनाओं तथा अभिमानसे प्रेरित हैं। मातृभाषाके द्वारा ही विद्यार्थीको शिक्षा दी जानी चाहिअे, अिस मूलभूत सिद्धान्तको सभी मानते हैं, परन्तु अिस सिद्धान्तको

अनुचित खींचातानी करके विचित्र प्रकारके तर्क स्थगित किये जाते है तब बडा ही दुख होता है। यह कहना कि गुजराती मराठी-भाषी प्रदेशोमें अुतनी हिदी ही परकीय भाषा है जितनी कि अग्रजी केवल हास्यास्पद बात ही नहीं विकृत मनोवृत्तिकी भी द्योतक है। सैकडा वर्षोसे अिन प्रदेशोमें ही क्यो नीचेके दक्षिण प्रातोम भी हिदी समझी जाती रही है। साधुओन, धर्माचार्योने अिमीके द्वारा धम भावनाओका प्रचार किया है। अज्ञात जनतामें भी अिसीके द्वारा ज्ञानका प्रसरण (Percolation) होता रहा है और कही कोओ कठिनाओ नहा आयी। फिर भी यह तो कोओ नही कहता कि मातभाषाका अुपयोग ही न हो। मातृभाषाका अपना स्थान है गौरव युक्त स्वतत्र स्थान है। अपनी मातृभाषाके प्रति सभीको अभिमान होना चाहिये और वह गौरवका विषय होगा। जहाँ तक जनताके सम्ब ध है सारा व्यवहार मातृभाषा द्वारा ही होगा। हाँ शिक्षितोको राष्ट्रभाषामे अधिक काम पडगा और वे अुसम आसानीसे तैयार भी हो सकग। अुन्हें कोओ कठिनाओ न मालूम होगी। आज भी गुजराती तथा मराठी शिक्षा प्राप्त विद्वान बडी आसानीसे हिदीके ग्रथोका स्वय अध्ययन कर सकते ह और गभीर विषयोपर व्याख्यान देनमें भी अुह काओ असी विशष परेशानी नही होती। अिसका कारण है प्रादेशिक भाषाओ तथा हिदीका अति निकट सम्बन्ध। दोनो सहोदरा ह और कभी कभी तो अुनको अक दूसरेसे अलग करना भी कठिन प्रतीत होता है। भक्तकवि मीराबाओकी कवितापर हिन्दी भाषी तथा गुजराती भाषी दोनो दावा कर सकते ह असी प्रकार विद्यापतिको कवितापर भी हिदी भाषी तथा बगाली भी दावा कर सकते ह। हम मानते ह जो लोग बिना कारण आज हिदीका विरोध कर रहे हैं, वे केवल अग्रजी प्रचार-अवशषक प्रभावमें ह। हमें विश्वास है कि यह अनिष्ट प्रभाव अब दूर होनेवाला है और तब हमारे य बन्धुगण भी स्पष्ट रूपसे यह महसूस करेग कि राष्ट्रके लिअ राष्ट्रभाषा हिदीका माध्यम महाविद्यालयमें होना अति आवश्यक है। अिसस अुनकी स्वभाषाका भी हित ही होगा। प्रादेशिक भाषाओकी समृद्धि बढगी घटगी नही। आज जो भूल हम कर रहे ह और कभी कभी सकुचित दृष्टिका हम भूल जाते ह कि अभी हम सच्चे भारत राष्ट्रका निर्माण करना है। जो राजकीय अकता हमें प्राप्त है अस अक राष्ट्रीय भित्तिपर दृढ करना है और सबस अधिक आवश्यक तो यह है कि हमारी सास्कृतिक राष्ट्रीयताकी परम्पराको मूतरूप देकर अुसकी अक अविच्छिन्न सस्कार परम्परा जन जीवनमें की जाअ।

साहित्यिक-अकेडेमी :

केन्द्रीय शिक्षा विभागके प्रयत्नोसे अक साहित्यिक अकेडमीकी स्थापना की गयी है और अुसमें भारतकी तमाम भाषाओके साहित्यिकोके प्रतिनिधि लिय गय ह। वैसे देखा जाअ तो यह अक बहुत अच्छा और आवश्यक काय है। परन्तु अिसका नाम साहित्यिक अकेडमी क्यों रखा गया यह समझमें नही आता। क्या अकेडमीका भाव व्यक्त करनेके लिअ हिदी सस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओमे काओ शब्द नही लिया जा सकता था? और अक्सर अधिक शब्दोका अुपयोग करके भी अुसे भारतीय रूप दिया जाता तो अुसम क्या हानि होती? अकेडमी शब्दसे हमारा विरोध नही है। वसे कओी अग्रजी शब्द जो हिदीम चल गय ह अुनका अुपयोग करनके हम पक्षमें ह। अकेडमी अग्रजीका शब्द है अिसलिअ अुसका हम विरोध नही कर रहे ह। परन्तु अितना बडा महत्वका साहित्यिक मण्डल सरकार बनाय और अुसके नाममें विदेशियोके अनुकरणकी बू आय और अुसम भारतीय वातावरणका अभाव हो यह हमें खटकता है।

अब प्रश्न है यह अकेडमी क्या करेगी? भिन्न भिन्न भारतीय भाषाओके विद्वान साहित्यिक अकत्र हो और देशके साहित्यकी अभिवृद्धिके लिअ प्रय नशील हो—यह अवश्य स्वागतके योग्य बात होगी परन्तु क्या वे सब मिलकर हमें अच्छा साहित्य दे सकग? अुन्हें केन्द्रमसे या अन्य प्रकारसे अुसके लिअ प्ररणा मिल सकेगी? राष्ट्र निर्माणकी दृष्टिसे अुसकी क्या अुपयोगिता होगी? य सब प्रश्न विचारणीय ह।

कहा जाता है कि फ्रान्सकी साहित्यिक-अकेडेमीके अनुकरणमें जिस अकेडेमीकी कल्पना की गयी है। परन्तु फ्रान्सकी परिस्थिति भिन्न है। फ्रेंच वहांकी स्वीकृत 'लिंगुवा फ्रेन्का' है और अुसी भाषा द्वारा वहांके साहित्यिकोंको अपनी साहित्य-साधना करनी थी। परन्तु हमारे यहाँ यह परिस्थिति नहीं। विधानमें हिन्दीको राज्य भाषाके रूपमें स्वीकार कर लिया गया है परन्तु राष्ट्रभाषा अभी अुसे बनाना है और भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओंके सब साहित्यिक भी राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रति जैसा चाहिअे वैसा सद्भाव नहीं रखते। केन्द्रीय-शिक्षालय भी हिन्दीके प्रति अुदासीन है। अैसी स्थितिमें अकेडेमीके सदस्योंमें परस्पर साहित्यिक लेन-देनके लिअे किस अेक सामान्य भाषाका अुपयोग होगा—यह प्रश्न तो अुठता ही है। क्या अंग्रेजी द्वारा यह काम किया जाअेगा या हिन्दीके द्वारा? अगर अंग्रेजीका ही अधिकतर व्यवहार हुआ तो क्या वह हमारे राष्ट्रके हितमें होगा? और यह भी सम्भव है कि यदि राष्ट्रभाषा हिन्दीका आपसके व्यवहारमें अुपयोग न किया गया, तो भारतीय भाषाओंकी आपसकी खींचातानी भी अकेडेमीका अेक अंग बन जाअेगी। अिस प्रकार विचार करनेसे प्रतीत होता है कि शायद अिसकी स्थापना वह गाडी पीछे घोडा जोतनेके समान है। अिससे गाडी चलेगी नहीं। परन्तु क्या किया जाअे? शिक्षा-केन्द्रालयके द्वारा प्रायः अैसे ही निर्णय किये जाते हैं। पन्द्रह वर्षमें राष्ट्रभाषा हिन्दीको सक्षम बनाकर राजधानीमें अुसे अुसके अुचित स्थानपर प्रतिष्ठित करनेकी बात अति आवश्यक है, परन्तु अुसपर वह ध्यान नहीं दे रहा है।

हम यह नहीं कह रहे हैं कि अकेडेमीका कोअी अुपयोग नहीं या अुसकी आवश्यकता भी नहीं है। अुसकी आवश्यकता और अुपयोग दोनोंको हम स्वीकार करते हैं, परन्तु हम यह अवश्य मानते हैं कि पहले राष्ट्रभाषाके लिअे शिक्षालयोंकी ओरसे प्रयत्न होना चाहिअे या और फिर यदि अिस अकेडेमीकी स्थापना की जाती तो वह अधिक अुपयोगी कार्य होता।

अुपरान्त हम यह भी देखते हैं कि अुसके सामने जो कार्यक्रम है अुससे भी किसीको सन्तोष नहीं। हम यह नहीं मानते कि अिससे मौलिक तथा अुपयोगी साहित्यका निर्माण होगा। विभिन्न भारतीय भाषाओंकी कुछ पुस्तकोंको चुनकर अुनपर पुरस्कार देना अथवा कुछ साहित्यिकोंकी सहायता करनेसे कुछ साहित्यकारोंकी सेवा अवश्य होगी, परन्तु साहित्यकी सेवा अिससे अधिक न हो सकेगी। जिसके लिअे तो आवश्यक वातावरण चाहिअे, राष्ट्र-निर्माणकी दृष्टि चाहिअे और राष्ट्रके सघर्षोंकी अनुभूति चाहिअे। प्रजाकी भावनाओंके साथ तन्मय होकर यदि साहित्यिक अुसके सघर्षोंकी अनुभूति प्राप्त कर सकते हैं तो वे अच्छे मौलिक राष्ट्रीय परम्पराके साहित्यका निर्माण कर सकनेमें समर्थ होंगे। क्या अकेडेमी अिन साहित्यिकोंके लिअे अैसा वातावरण तथा साधन पैदा कर सकेगी? अिसमें हमें शंका है। यदि वह यह कर सके, तो अकेडेमी अवश्य अपनी सार्थकता सिद्ध करेगी, परन्तु यदि वह विभिन्न भाषा-भाषी साहित्यिकोंका, पुरस्कार तथा सहायता प्राप्त करनेके लिअे खींचातानी करनेका अखाडा बन गयी, तो देशके लिअे अेक शाप ही सिद्ध होगी।

केन्द्रमें राष्ट्रभाषाका अलग मंत्रणालय :

नागरी प्रचारिणी सभाके हीरक-जयन्ती-महोत्सवके समय बिहारके राज्यपाल श्री दिवाकरजीकी अध्यक्षतामें जो राष्ट्रभाषा-सम्मेलन हुआ अुसमें अेक प्रस्ताव द्वारा यह मांग की गयी है कि राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रचार, प्रसार, शिक्षा तथा अुसको अुचित स्थान दिलानेके लिअे तथा १९६४ में जब अंग्रेजीके स्थानपर राजकाज, न्याय-विभाग आदिमें अुसको प्रतिष्ठित करनेकी दृष्टिसे अुसको सक्षम बनाने तथा अुसका विकास करनेके लिअे केन्द्रमें अेक स्वतन्त्र मंत्रणालय स्थापित किया जाअे। हम अिस मांगका समर्थन करते हैं। केन्द्रीय शिक्षा-विभागने यदि हिन्दीके प्रति अुदासीनता न दिखायी होती और राष्ट्रभाषाके प्रति अपना कर्तव्य अदा किया होता तो अैसे अलग मंत्रणालयकी मांग करनेका प्रश्न ही अुपस्थित न होता। परन्तु केन्द्रीय शिक्षा विभागने अिस सम्बन्धमें बहुत त्रुटियाँ की हैं, अितना ही नहीं, अिस सम्बन्धमें अुसकी जैसी चल-विचल मनोदिशा आज है अुसे देखते हुअे वह योग्य निर्णय करनेमें असक्षम है। अंग्रेजीको जो पन्द्रह वर्षकी अवधि दी गयी थी, अुनमेंसे पाँच वर्ष तो बीत गये हैं, अब केवल दस वर्ष रह गये। अिन पाँच वर्षोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दीका

जो काम हुआ है वह अति निराशाजनक है। शीघ्र ही हिंदीकी प्रगतिकी जाँच करनेके लिये अक आयोग नियुक्त किया जायगा। वह आयोग जो रिपोर्ट देगा वह सन्तोषजनक नहीं हो सकती और केन्द्रीय शिक्षा विभागके दोषके कारण आयोग द्वारा जो असंतोषजनक रिपोर्ट दी जाअगी असुके बलपर अंग्रेजीकी अवधि बढ़ाये जानेका निर्णय करनेका प्रसंग अपस्थित हो तो जनता असुसे कभी सहन नहीं करेगी। असी स्थितिमें आज यह आवश्यक हो गया है कि सरकार द्वारा राष्ट्रभाषा हिंदीके लिये आवश्यक तमाम प्रयत्न प्रामाणिक रूपसे किये जायें। शिक्षा विभागसे यह आशा नहीं की जा सकती। अभी तक असुने तो हिंदीके कायम रोड़े अटकानेका ही काम किया है। अिसलिये अलग मंत्रणालय खोलनेके सिवा दूसरा कोअी अपाय नजर नहीं आता। आशा है सरकार अिसपर ध्यान देगी और संसद तथा विधान सभाके सदस्य वस्तुस्थितिको समझकर अिस माँगका दृढ़तापूर्वक समर्थन करेंगे। राष्ट्रके हितमें अिसकी आवश्यकता ही नहीं अनिवार्य आवश्यकता है जिसका जनताके प्रतिनिधियोंको अनुभव होना चाहिये।

हिन्दी भाषियोंकी ओरसे स्पष्टता :

नागरी प्रचारिणी सभाके अिस राष्ट्रभाषा सम्मेलनने और भी अक बड़े महत्त्वका प्रस्ताव पास किया है। यह प्रस्ताव श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीजीने रखा था। श्री दिनकरजीने असुका समर्थन करते हुये अपने प्रभावशाली भाषणमें स्थितिको बिलकुल ही स्पष्ट कर दिया। सब प्रकारकी शुभेच्छाओंके बावजूद हिंदीके समर्थकों हिंदी भाषियोंपर जो बिना कारण आक्षेप किये जाते हैं असुसे ये दोनों विद्वान बड़े दुखी प्रतीत होते थे। प्रस्तावमें स्पष्ट किया गया है कि अहिंदी भाषा भाषी क्षेत्रोंमें जो यह मिथ्या धारणा फैल गयी है कि हिंदीके समर्थक अन्य प्रादेशिक भाषाओंके विकासको अवरुद्ध करना चाहते हैं निराधार है। हिन्दीके समर्थकोंने कभी भी अिस प्रकारका कोअी विचार व्यक्त नहीं किया। प्रस्तावमें यह भी कहा गया है कि सम्मेलन सभी राज्य भाषाओंके विकासकी कामना करता है और निर्विवाद रूपसे अैसी कोअी मिथ्या धारणाका निवारण कर देना चाहता है कि हिंदीके समर्थक अन्य भाषाओंकी अुन्नति नहीं चाहते। सम्मेलन राष्ट्रभाषाके विकासपर राष्ट्रकी सुदृढ़ता और अन्य सभी भारतीय भाषाओंकी सामूहिक अुन्नतिकी दृष्टिसे ही जोर देता है।'

यह स्पष्टता नागरी प्रचारिणी सभाकी हीरक जयन्तीके अवसरपर राष्ट्रभाषा सम्मेलनमें अकत्रित हिंदीके विद्वानों तथा समर्थकों द्वारा की गयी है। नागरी प्रचारिणी सभाके अितिहासको जो लोग जानते हैं वे यह भी जानते हैं कि वह हिन्दीकी काम करनेवाली तमाम संस्थाओंकी मातामही है और करीब करीब सभी हिंदीके विद्वानोंका असके प्रति सन्मान जैसा आदर भाव है। हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग अिसीका अक अंग था जो स्वतन्त्र होकर अितना बढ़ गया कि दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा तथा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धाकी स्थापना की गयी और असका काम सारे भारत वर्षमें फैल गया। हिन्दी साहित्य सम्मेलनके वर्तमान तथा भूतपूर्व पदाधिकारी तथा समर्थक विद्वान भी अिस सम्मेलनमें अपस्थित थे। अिस कारण यह प्रस्ताव बड़े महत्वका प्रस्ताव बन गया है और आशा की जाती है कि अिससे हिंदीतर भाषा भाषी विद्वानों तथा जनताका समाधान होगा। हम मानते हैं कि असा प्रस्ताव करके अिस सम्मेलनने बहुत बड़ा काम किया है। सद्भावनाके समाधानके लिये अिससे अधिक कोअी कुछ कर भी क्या सकता है?

दुखकी बात तो यह है कि आये दिन हिंदीके साम्राज्यवादकी तथा हिंदीके समर्थकोंपर यहाँ तक कि राजर्षि टण्डनजीपर भी कीचड़ तथा दूसरे हीन प्रकारके आक्षेप करनेवाली बातें होती रहती हैं। और हमें अधिक दुख तो अिस बातका है कि असे गलत प्रचारमें विचारवान लोग भी बह जाते हैं। अिससे आक्षेप करनेवालोंकी देशकी राष्ट्रभाषाकी और प्रादेशिक भाषाओंकी सबकी हानि जो हो रही है असुपर कोअी विचार नहीं करता। जो लोग जानबूझकर असा झूठा प्रचार काम कर रहे हैं अुन्हें तो हम क्या कहें? परन्तु जो लोग विचारवान हैं जिन्हें राष्ट्रभाषासे प्रेम है जो अपनी मातृभाषाके प्रति प्रेम रखते हैं तथा राष्ट्र अेवं राष्ट्रकी जनताका हित चाहते हैं अनसे हम अवश्य अनुरोध करें। कि वे असी अगाअू बातोंके फेरमें न पड़ें खुद सोच समझें और वास्तविकताका ज्ञान प्राप्त करें और फिर जमा अुचित समझें निर्णय करें। हम विश्वास है कि अुन्हें यह अनुभव होगा कि राष्ट्रभाषाका निर्माण असुका प्रचार प्रसार हम सबका काम है केवल हिंदी भाषियोंका ही नहीं। राष्ट्रभाषा हमारी सबकी अपनी होगी किसी प्रदेश विशेषकी नहीं।

—मो० भ०

आवश्यक सूचना

राष्ट्रभारती राज्योंके शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों, कालेजों और वाचनालयोंके लिअे स्वीकृत है। राष्ट्रभारती का चौथा वर्ष चल रहा है। राष्ट्रभारती समग्र भारतीय—अन्तर प्रान्तीय साहित्यका प्रतिनिधित्व करती है। अिसने हिन्दीकी मासिक पत्रिकाओंमें अपना अेक प्रतिष्ठित अेवं महत्वका स्थान बना लिया है। प्रेमी पाठकोंसे निवेदन है कि अेक अेक नया ग्राहक बनाकर अिस पत्रिकाकी ग्राहक संख्यामें वृद्धि करें और राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अुत्साहको बढ़ावें। विशारद और 'राष्ट्रभाषा रत्न' परीक्षोपयोगी अुच्च आलोचनात्मक-परिचयात्मक लेख भी प्रतिमास अिसमें छपते हैं। कृपया अिस बातको ध्यानमें रखें कि हमारी लिखित अनुमति लिये बिना कोअी सज्जन या प्रकाशक 'राष्ट्रभारती' के पिछले अंकोंमें या आगामी अंकोंमें प्रकाशित प्रान्तीय साहित्यके लेखों, कहानियों और अेकांकी नाटकों आदिको न छापें।

मोहनलाल भट्ट,
मंत्री, रा. भा. प्र. स. वर्धा

राष्ट्रभारती-विज्ञापन दर

साधारण पृष्ठ	पूरा — ४०) प्रतिबार		तृतीय कवर पृष्ठ	पूरा — ८०) प्रतिबार	
,,	आधा — २५)			आधा — ४५)	,,
द्वितीय कवर पृष्ठ	पूरा — १००)		चतुर्थ कवर पृष्ठ	पूरा — १२०)	,,
	आधा — ५५)	,,		आधा — ७०)	,,

राष्ट्रभारतीकी साअिज—१० × ७

,, छपे पृष्ठकी साअिज—८ × ५½

तीनसे अधिक बार विज्ञापन देनेवालोंको विशेष सुविधा दी जाअगी।

'राष्ट्रभारती' में अपने व्यापारका विज्ञापन देकर लाभ अुठाअिअे। क्योंकि यह कश्मीरसे लेकर रामेश्वरतक और जगन्नाथपुरीसे द्वारकापुरीतक हजारों पाठकोंके हाथोंमें पहुंचती है।

राष्ट्रभारती अेजेन्सी

१ प्रतिमास कम से कम पांच प्रतियाँ लेनेपर ही अेजेन्सी दी जाअगी।
२ पांच प्रतियां लेनेपर २०) प्रतिशत कमीशन दिया जाअगा।
३ दससे अधिक प्रतियाँ लेनेपर २५) प्रतिशत कमीशन दिया जाअगा।
४ पाँचसे अधिक ग्राहक बना देनेवालोंको भी विशेष सुविधा दी जाअगी।

विशेष जानकारीके लिअे आज ही लिखिअे —

श्री प्रबन्धक, "राष्ट्रभारती" पो० हिन्दीनगर (वर्धा, म. प्र.)

'राष्ट्रभारती' आपसे कुछ कहना चाहती है !

१ गत जनवरी—१९५४ से, राष्ट्रभारती चौथे वर्षमें प्रवेश कर चुकी है। भारतके प्राय सभी प्रमुख साहित्यकारों, विद्वानों और पत्र-पत्रिकाओंने 'राष्ट्रभारती' की प्रशंसा की, उसे सराहा, अपनाया, अपनी शुभकामना दी, सहयोग दिया और उत्साह बढ़ाया। उन सबको कृपाको किन शब्दोंमें व्यक्त किया जाअे!

२ वह निश्चित समयपर हर महीनेकी पहली तारीखको, अपने प्रेमी पाठकोंके हाथोंमें राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा प्रांतीय भाषाओंकी श्रेष्ठ, सुरुचिपूर्ण, स्वस्थ और सरस-सुन्दर, विविध-विषयक गंभीर लेख, कविता, कहानी अेकांकी, समालोचना आदि पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत करती है।

३ फिर भी वह सबसे ज्यादा सस्ती, साफ-सुथरी मासिक पत्रिका है। वार्षिक मूल्य कहिअे या सालाना चंदा कहिअे, ज्यादा नहीं, सिर्फ ६ रुपया और अर्ध-वार्षिक (छह-माही) ३ रु ८ आना और अेक अंकका १० आना।

४ राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति अपने प्रमाणित प्रचारकों, केन्द्र-व्यवस्थापकोंको तथा विभिन्न प्रांतीय राज्य-सरकारोंके विद्यालयों तथा महाविद्यालयोंको, पुस्तकालयोंको 'राष्ट्रभारती' अेक रुपया कम करके रियायती वार्षिक मूल्य ५ रु और अर्ध-वार्षिक ३ रु चन्देमें देती है।

५ अिस महान् पवित्र भारतीय साहित्यिक अेवं सांस्कृतिक राष्ट्रभाषा-प्रचार कार्यमें आप 'राष्ट्रभारती' के प्रचारमें हाथ बटाअें। स्वयं ग्राहक बनें और अपने मित्रोंको भी बनाअें।

६ जो हिन्दी-प्रेमी "राष्ट्रभारती" के पांच ग्राहक बना देंगे अुन्हें अेक वर्षतक भेंट स्वरूप "राष्ट्रभारती" भेजी जाअेगी। अैसी सहायताका सहर्ष स्वागत किया जाअेगा। वार्षिक चंदा मनीऑर्डरसे ही आना चाहिअे। प्रतीक्षामें—

राष्ट्रभारतीके लेखकोंसे निवेदन

(१) 'राष्ट्रभारती' में प्रकाशनार्थ रचना आदि सामग्री स्वच्छ-सुवाच्य लिखावटमें अथवा अच्छी टाअिप की हुअी कापी भेजनी चाहिअे। प्रकाशन योग्य सामग्री जो कुछ भी आप भेजें वह बहुत भारी-बोझिल और बहुत लंबी नहीं होनी चाहिअे।

(२) यह अच्छी तरह ध्यानमें रहे कि राष्ट्रभारतीमें प्रकाशनार्थ भेजी हुअी आपकी रचना अिसके पूर्व किसी हिन्दी पत्र-पत्रिकामें प्रकाशित न हो चुकी हो; और जो कुछ सामग्री भेजें वह 'राष्ट्रभारती' के लिअे ही भेजें। 'राष्ट्रभारती' अपने लेखकोंको "पत्र-पुष्प-पुरस्कार" भी भेंट करती है।

(३) अनुवादक महाशय किसी अनूदित रचनाको भेजनेके पूर्व अुसके मूल-लेखकसे पत्र द्वारा अनुमति अवश्य प्राप्त कर लें, तभी अनूदित रचना हमारे यहां भेजें।

(४) आपकी स्वीकृत रचना संबंधी सूचना संपादक द्वारा आपको दी जाअेगी और छपनेतक आपको प्रतीक्षा करनी होगी।

(५) अपनी अस्वीकृत रचनाको वापस मंगानेके लिअे डाक-टिकट अवश्य भेजें अथवा आप अुसकी प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें।

(६) लेख, रचना सम्पादकीय आदि सारा पत्र-व्यवहार अिस पतेपर करें —

संपादक : 'राष्ट्रभारती'
पोस्ट—हिन्दीनगर (वर्धा, मध्यप्रदेश)

तथा प्रकाशक:— मोहनलाल भट्ट, राष्ट्रभाषा प्रेस — राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा